

15950

AD  
DEV

श्रीमज्जिनेश्वरोपज्ञागमानुसारितपोगच्छधुरंधरश्रीमद्देवेन्द्रसूरिप्रणीतम्  
श्रीदेववन्दन (चैत्यवन्दन) भाष्यम्

श्रीमद्देवेन्द्रसूर्यन्तिपत्श्रीमद्धर्मकीर्तिसूत्रितश्रीसंघाचारविद्याख्यवृत्तियुतम्



मुद्रयित्री—मालवदेशान्तर्गतश्रीरत्नपुरीयश्रीरूपभदेवकेशरीमलजी इत्यभिधाना श्वेताम्बरसंस्था

मुद्रकः—मोहनलाल भगनलाल वदामी. श्री 'जैनानन्द' प्रिन्टींग प्रेस, दरिया महेल-सुरत.

वीरसंवत् २४६४ }  
विक्रमसंवत् १९९४ }

पण्यम् रु. ५-०-०  
सर्वेऽधिकाराः १८७७ तमनियमानुमारेण स्थायतीकृताः

प्रतयः ५००  
क्राइष्टसन् १९३८

---

---

Printed by:—Mohanlal Maganlal Badami. at the Jainanand P. Press, Surat,



Published by:—Shree Rushabhdevaji Kesharimajji Jain Pedhi Ratlam

---

---

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ १ ॥

## श्रीचैत्यवंदनभाष्यमूलम्.

गाथांकःपत्रांकः

वंदितु वंदणिजे सन्वे चिइवंदणाइसुवियारं । बहु-वित्ति-भास-चुण्णी-सुयाणुसारेण वुच्छामि.	१	३
दहतिग१ अहिगमपणगं२ दुदिसि३ तिहुग्गह४ तिहा उ वंदणया५। पणिवाय६ नमुकारा७ वन्ना सोलसय सीयाला८	२	२६
इगसीइसयं तु पया९सगनउई संपयाओ १० पण दंडा११। वार अहिगार१२चउ वंदणिज्ज१३सरणिज्ज१४ चउह जिणा१५	३	॥
चउरो थुई१६ निमित्तट्ट१७वार हेऊ१८ अ सोल आगारा१९।गुणवीस दोस२० उस्सग्गमाण२१ थुत्तं२२ च सगवेला२३	४	॥
दसआसायणचाओ२४सन्वे चिइवंदणाइठाणाइं । चउवीसदुवारेहिं दुसहस्सा हुंति चउसयरा	५	॥
तिन्नि निसीही१ तिन्नि उ पयाहिणा२ तिन्नि चव य पणामा३ । तिविहा पूया४ य तहा अवत्थतियभावणं चव५	६	३३
तिदिसिनिरिक्खणविई६ पयभूमिपमज्जणं च तिक्खुत्तो७ वन्नाइतियं८ मुहातियं च ९ तिविहं च पणिहाणं१०	७	॥
घर-जिणहर-जिणपूयावावारचायओ निसीहितिगं । अग्ग-दारे मज्झे तइया चिइवंदणासमए	८	३५
अंजलिवद्धो अद्धोणओ अ पंचंगओ अ तिपणामा । सन्वत्थ वा तिवारं सिराइनमणे पणामतियं	९	५४
अंगग्गभावभेया पुप्फाहारत्थुइहिं पूयतिगं । पंचुवयारा अद्धोवयार सन्वोवयारा वा	१०	६१
भाविज्ज अवत्थतियं पिंडत्थपयत्थरूवरहियत्तं । छउमत्थ केवलित्तं सिद्धत्तं चव तस्सत्थो	११	८९
न्हवणच्चगेहिं छउमत्थवत्थ पडिहारगेहिं केवलियं । पलियंकुस्सग्गोहि य जिणस्स भाविज्ज सिद्धत्तं	१२	११०

भाष्यं

॥ १ ॥

श्री०  
पैल० श्री-  
धर्म० संया-  
गविधौ  
॥ २ ॥

उत्तदाहोतिरिआणं तिदिमाण निरिखणं चइलऽहया । पच्छिमदाहिणवामण जिणमुहन्नत्थदिट्टिजुओ  
 वनातियं वन्नत्थालंणमालंणं तु पडिमाई । जोगजिणमुत्तमुत्तीमुद्दामेएण मुद्दतियं  
 अनुत्तारिअगुलिदोमागारेहिं दोहिं हत्थेहि । पिट्टोत्तरिकुप्परसंठिएहिं तह जोगमुद्दत्ति  
 चचारि अगुलाइं पुरओ ऊणाइं जत्थ पच्छिमओ । पायाणं उस्सग्गो एसा पुण होइ जिणमुद्दा  
 मुत्तामुत्ती मुद्दा जत्थ ममा दोवि गन्धिआ हत्था । ते पुण निलाडदेसे लग्गा अन्ने अलग्गत्ति  
 पंचंगो पणिवाओ थयपागे होइ जोगमुद्दाए । वंदण जिणमुद्दाए पणिहाणं मुत्तमुत्तीए  
 पणिहाणत्तिग चेइअमुणिवंदणपत्थणामरुवं वा । मणयकाएगत्तं सेमतियत्थो य पयडुत्ति  
 मच्चित्तदव्वमुज्झणं१ मच्चित्तमणुज्झणं२ मणेगत्तं३ । इगसाडिउत्तरासंगं४ अजली सिरसि जिणदिट्ठे५  
 इअ पंचविहामिगमो अहया मुच्चंति रायचिण्हाड । रग्गं१ छत्तो२वाणह३ मउड४ चमरे५ अ पंचमए  
 वंदंति जिणे दाहिणदिसिट्ठिया पुरिम वामदिसि नारी । नवकर जहल्लु सट्टिकर जिट्ठ मज्झग्गहो सेसो  
 नवकारेण जहन्ना चिइंदण मज्झ दंडथुइजुअला । पणदंडथुइचउक्कगथयपणिहाणेहिं उकोसा  
 अन्ने विंति इगेणं सक्त्थएणं जहन्नवंदणया । तहुगतिगेण मज्झा उकोमा चउहि पंचहि वा  
 पणिवाओ पंचंगो दो जाणू करदुगुत्तमंगं च । सुमहत्थनमुक्कारा इग दुग तिग जाव अट्ठसयं  
 अडमट्ठि६८ अट्ठवीमा२८ नयनउयसयं१९९ च दुमयसगनउया२९७ ।

१३ ११५  
 १४ १३१  
 १५ ॥  
 १६ ॥  
 १७ ॥  
 १८ १३२  
 १९ १५१  
 २० १५२  
 २१ ॥  
 २२ १६६  
 २३ १७६  
 २४ १९४  
 २५ २०१

भाष्यं

॥ २ ॥



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ३ ॥

दोगुणतीस२२९ दुसट्टा२६० दुसोल२१६ अडनउयसय१९८ दुवन्नसयं१५२	२६	२०८
इअ नवकारखमासमणईरिअसक्तथआइदंडेसु । पणिहाणेसु अ अदुरुत्त वन्न सोलसय <sup>२५४०</sup> सीयाला	२७	॥
नव <sup>६</sup> वत्तीस <sup>३३</sup> तितीसा <sup>३३</sup> तिचत्त <sup>६३</sup> अडवीस <sup>२८</sup> सोल <sup>१६</sup> वीस <sup>२०</sup> पया । मंगलइरियासक्तथयाइसुं एगसीइसयं	२८	॥
अड्डु <sup>८</sup> नवड्डु <sup>६</sup> अड्डुवीस <sup>२८</sup> सोलस <sup>१६</sup> य वीस <sup>२०</sup> वीसामा । कमसो मंगलइरियासक्तथयाइसु सगनउई	२९	॥
वण्णट्टसट्टि <sup>६८</sup> नव <sup>६</sup> पय नवकारे अड्डु <sup>८</sup> संपया तत्थ । सग संपय पयतुल्ला सतरक्खर अड्डुमी दुपया	३०	२०९
पणिवाय अक्खराइं अड्डावीसं <sup>२८</sup> तहा य इरियाए । नवनउअ <sup>१६६</sup> मक्खरसयं दुतीस <sup>३२</sup> पय संपया अड्डु <sup>८</sup>	३१	२४८
दुग <sup>२</sup> दुग <sup>३</sup> इग <sup>१</sup> चउ <sup>४</sup> इग <sup>१</sup> पण <sup>५</sup> इगार <sup>११</sup> छग <sup>६</sup> इरियसंपयाइ पया । इच्छा <sup>१</sup> इरि <sup>२</sup> गम <sup>३</sup> पाणा <sup>४</sup> जे मे <sup>५</sup> एगिदि <sup>६</sup> अभि <sup>७</sup> तस्स <sup>८</sup>	३२	॥
अब्भुवगमो निमित्तं ओहेअरहेउ संगहे पंच । जीवविराहणपडिकमणभेयओ तिन्नि चूलाए	३३	२४९
दुरति <sup>३</sup> चउ <sup>४</sup> पण <sup>५</sup> पण <sup>५</sup> पण <sup>५</sup> दु <sup>२</sup> चउ <sup>४</sup> तिपय <sup>३</sup> सक्तथयसंपयाइ पया । नमु आइग पुरिसो लोगुअभयधम्म-प्प-जिण-सव्वं	३४	२८४
थोअव्वसंपया ओहइयरहेऊ-नओग-तद्वेऊ । सविसेसुवओग सरूवहेउ नियसमफलय मुक्खे	३५	॥
दो सगनउआ <sup>२६७</sup> वन्ना नव संपय <sup>६</sup> पय तितीस <sup>३३</sup> सक्तथए । चेइयथयट्टु <sup>८</sup> संपय तिचत्त <sup>५३</sup> पय वन्न दुसयगुणतीसा <sup>२२८</sup>	३६	॥
दु <sup>२</sup> छ <sup>६</sup> सग <sup>७</sup> नव <sup>६</sup> तिय <sup>३</sup> छ <sup>६</sup> चउ <sup>४</sup> छप्पय <sup>६</sup> चिइसंपयापया पढमा । अरिहं वंदण सद्धा अन्न सुहुम एव जा ताव	३७	३१२
अब्भुवगमो निमित्तं हेऊ इग-बहु-वयंत आगारा । आगंतुग आगारा उस्सग्गावहि सरूवट्ट	३८	॥
नामथयाइसु संपय पयसम अडवीस <sup>२८</sup> सोल <sup>१६</sup> वीस <sup>२०</sup> कमा । अदुरुत्त वन्न दोसट्टु <sup>२६०</sup> दुसयसोल <sup>२१६</sup> डुनउअसयं <sup>१९८</sup>	३९	३२

भाष्यं

॥ ३ ॥

धीदे०  
पैत्य० श्री-  
भर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ४ ॥

पणिहाणि दुन्नमयं २५२ कमेण सग७ति३ चउवीस२४ तिचीसा ।  
गुणतीम२९ अट्टवीसा२८ चउतीसि३४ गतीस३१ वार१२ गुरुवन्ना  
पणदंडा सक्कत्थय चेइअ नाम सुअ सिद्धत्थय इत्य । दो<sup>२</sup> इग<sup>१</sup> दो<sup>२</sup> दो<sup>२</sup> पंच<sup>५</sup> य अहिगारा वारस कमेण  
नमु<sup>१</sup> जे अइ<sup>२</sup> अरिहं<sup>३</sup> लोग<sup>४</sup> सब्ब<sup>५</sup> पुक्ख<sup>६</sup> तम<sup>७</sup> सिद्ध<sup>८</sup> जो देवा<sup>९</sup> । उज्जि<sup>१०</sup> चत्ता<sup>११</sup> वेआवच्चग<sup>१२</sup> अहिगार पढमपया  
पढमहिगारे वंदे भावजिणे वीयए उ दव्वजिणे । इगचेइयठवणजिणे तइय चउत्थंमि नामजिणे  
तिट्ठअणठवणजिणे पुण पंचमए विहरमाणजिण छट्ठे । सत्तमए सुयनाणं अट्टमए सब्बसिद्धधुई  
तित्थाहिक्खवीरधुई नवमे दसमे य उज्जयंतधुई । अट्ठावय थुइ इगदिसि सुदिट्ठिसुरसमरणा चरिमे  
नव अहिगारा इह ललित्थयित्थरावित्थिमाइअणुसारा । तिन्नि सुयपरंपरया वीओ दसमो इगारसमो  
आवस्सयचुण्णीए जं भणियं सेसया जहिच्छाए । तेणं उज्जिताइवि अहिगारा सुयमया चेव  
वीओ सुयत्थया इइ अत्थओ वन्निओ तहिं चेव । सक्कत्थयंते पढिओ दव्वारिहवसरि पयडत्थो  
असदाइन्नणवजं गीअत्थअवारिअंति मज्झत्था । आयरणाविहु आणत्तिवयणओ सुवहु मन्नंति  
चउवंदणिज्ज जिण<sup>१</sup> मुणि<sup>२</sup> सुय<sup>३</sup> सिद्धा<sup>४</sup> इह सुरा हु सरणिजा । चउह जिणा नाम<sup>१</sup> ठवण<sup>२</sup> दव्व<sup>३</sup> भाव<sup>४</sup> जिणभेएणं  
नामजिणा जिणनामा ठवणजिणा पुण जिणिदपडिमाओ । दव्वजिणा जिणजीवा भावजिणा समवसरणत्था  
अहिगयजिण पढमधुई वीया सब्बाण तइअ नाणस्स । वेयात्रच्चगराणं उवओगत्थं चउत्थधुई

४० ३४४  
४१ ३५७  
४२ ३५८  
४३ ३७५  
४४ ,,  
४५ ३७८  
४६ ,,  
४७ ,,  
४८ ३८८  
४९ ३९१  
५० ३९१  
५१ ३९३  
५२ ३९४

भाष्यं

॥ ४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५ ॥

पावखरणत्थ इरिआइ<sup>१</sup> वंदणयवत्तिआइ<sup>२</sup> छ निमित्ता । पवयणसुरसरणत्थं उस्सग्गो इअ नामत्तट्ट<sup>३</sup>  
चउ<sup>४</sup> तस्स उत्तरीकरणपमुह सद्दाइआ य पण<sup>५</sup> हेऊ । वेयावचगरत्ताइ<sup>६</sup> तिन्नि इअ हेउवारसगं<sup>७</sup>  
अन्नत्थयाइ वारस<sup>८</sup> आगारा एवमाइया चउरो । अगणि पणिदिच्छिदण वोहीखोभाहिडफो य  
घोडग<sup>१</sup> लय<sup>२</sup> खंभाई<sup>३</sup> मालु<sup>४</sup> द्वी<sup>५</sup> निअल<sup>६</sup> सवरि<sup>७</sup> खलिण<sup>८</sup> वहू<sup>९</sup> ।  
लंघुत्तर<sup>१०</sup> थण<sup>११</sup> संजइ<sup>१२</sup> भमुहंगुलि<sup>१३</sup> वायस<sup>१४</sup> कविट्टे<sup>१५</sup>  
सिरकंप<sup>१६</sup> मूअ<sup>१७</sup> वारुणि<sup>१८</sup> पेहत्ति<sup>१९</sup> चइअ दोस उस्सग्गो । लंघुत्तर थण संजइ न दोस समणीण सवहु सट्ठीणं  
इरिउस्सग्गपमाणं पणवीसुस्मास अट्ट सेसेसु । गंभीरमहुरसदं महत्थजुत्तं हवइ थुत्तं  
पडिकमणे<sup>१</sup> चेइय<sup>२</sup> जिमण<sup>३</sup> चरिम<sup>४</sup> पडिकमण<sup>५</sup> सुअण<sup>६</sup> पडिवोहे<sup>७</sup> । चिइवंदण इअ जइणो सत्त उ वेला अहोरत्ते  
पडिकमओ गिहिणोवि हु सगवेला पंचवेला इअरस्स । पूआसु तिसंज्ञासु अ होइ तिवेला जहन्नेणं  
तंबोल<sup>१</sup> पाण<sup>२</sup> भोयण<sup>३</sup> वाणह<sup>४</sup> मेहुन्न<sup>५</sup> सुअण<sup>६</sup> निट्टुहणं<sup>७</sup> मुत्तु<sup>८</sup> चारं<sup>९</sup> जूअं<sup>१०</sup> वजे जिणनाहजगईए  
इरि नमुकार नमुत्थुण अरिहं थुइ लोग सव्व थुइ पुक्ख । थुइ सिद्धा वेआ थुइ नमुत्थु जावंति थय जयवी  
सव्वोवाहिविसुद्धं एवं जो वंदए सया देवे । देविंदविंदमहिअं परमपयं पावइ लहुं सो

५३ ४००  
५४ ४०९  
५५ ४१३  
५६ ४१९  
५७ ,,  
५८ ४२८  
५९ ४३४  
६० ४३६  
६१ ४४२  
६२ ४५०  
६३ ४५३

प्रक्षिप्ताः काश्चिदत्र न चांकनियततोन्मुद्रणे इति मुद्रिता गाथाः, सोपयोगाश्च ।

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ६ ॥

टीकाकारमंगलादि	पत्राकः	२
मूलकारमंगलादि (गाथा १)		३
अर्हद्वंदनमंगले श्रीविजयकथा		५
अभिधेयादिः		१३
मृगापतीकथा		१६
चतुर्विंशतिद्वाराणि (गाथा २ तः ५)		२६
त्रिकदशकम् (गाथा ६ तः ७)		३३
नैपेधिकीत्रिकम् (गाथा ८)		३५
भुवनमल्लकथा		३६
प्रदक्षिणात्रिक		४७
हरिकूटमन्वन्धः		४७
निर्माल्यलक्षणम्		५३
प्रणामत्रिकम् (गाथा ९ प्र०)		५४

श्रीसंघाचारविधेः संक्षिप्तोऽनुक्रमः

विजयदेवकथा	पत्राकः	५५
पूजात्रिकं (गाथा १०)		६१
मृगब्राह्मणदृष्टान्तः		६८
सीमनगसम्बन्धः		८५
अपस्थात्रिकम् (गाथा ११)		८९
छत्रस्थाऽपस्थाभावना		९०
नमिविनमिकथा		९१
कैशल्यावस्था		९८
देवदत्तकथा		१००
सिद्धत्वावस्था (गाथा १२)		११०
सुमतिकथा		११०
त्रिदिग्निरीक्षणवर्जनम् (गाथा १३)		११५
गान्धारश्रावककथा		११५

प्रमार्जनात्रिकम्	पत्राकः	१२२
पुष्कलीश्रावककथा		१२५
गर्णादित्रिकम्		१२७
चंद्रनरेन्द्रकथा		१२८
मुद्रात्रिकम् (गाथा १४ तः १७)		१३१
प्रणामत्रिकम् (गाथा १८)		१३२
धर्मरुचिकथा		१३५
प्रणिधानत्रिकम्		१४१
नरवाहनकथा		१४२
शेषत्रिकातिदेशः (गाथा १९)		१५१
अभिगमपंचकम् (गाथा २० तः २१)		१५२
श्रीपेणनृपति श्रीपतिश्रेष्ठिकथा		१५३
इति प्रथमः प्रस्तावः		

लघुनु

॥ ६

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७ ॥

नरनार्यवस्थानदिशे	१५९	कुणालकथा	२०८	मरीचिकथा	३०४
श्रीदत्ताकथा	१६१	पंचपरमेष्ठ्यक्षरादिसंख्या(गा.३०)	२०९	चैत्यस्तवपदसंख्यादि (३७तः३८)	३१२
अवग्रहत्रिकम् (गाथा २२)	१६६	बंधुदत्तकथा	२१९	भानुश्रेष्ठिकथा	३१५
अमिततेजःकथा	१६७	प्रणिपाताक्षरादि	२४३	नामस्तवादिसंपदा (गाथा ३९)	३२०
चैत्यवंदनभेदाः (गाथा २३)	१७६	सोमशूरकथा	२४५	अशकटापिताकथा	३२९
दंडकपंचकम्	१८२	ईर्यापथिक्रयावर्णादि(गा.३१-३२)	२४८	महावीरनामकरणं	३३३
रत्नसारकथा	१८४	अभ्युपगमादयः (गाथा ३३)	२४९	धनश्रेष्ठिकथा	३३५
वन्दनाविषये मतभेदः(गाथा २४)	१९४	स्कन्दकथा	२५०	श्रीगौतमकथा	३३८
प्रणिपातस्वरूपम्	१९६	विक्रमसेनकथा	२७२	दर्दुराङ्ककथा	३४२
सुरेन्द्रदत्तकथा	१९७	चिलातीपुत्रकथा	२७९	प्रणिधानवर्णादि (गुरुवर्णाथि)	३४४
नमस्कारसंख्या (गाथा २५)	२०१	शक्रस्तवपदसंख्या(गाथा ३४-३५)	२८४	(गाथा ४०)	
विजयकुमरकथा	२०२	शक्रस्तववर्णसंपत्पदसंख्या (३६)	२८४	कुणालकथा	३४७
इति द्वितीय प्रस्तावः		अश्यावबोधकथा	२८७	दंडकपंचकम्	३५०
मंगलाद्यक्षरादिसंख्या(गाथा २६ तः २९)		गणधरवादः	२९१	गुणसागरकथा	३५१

लघ्वनुक्रमः

॥ ७ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सवा  
चारविधौ  
॥ ८ ॥

अधिकागः (गाथा ४१)	३५७
अधिकाराद्यपदानि (गाथा ४२)	३५८
ब्रह्मदत्तकथा	३५८
जिनादिचतुष्कस्य वन्दनीयता	३६६
सुमतिरुन्याकथा	३६६
सुराणा स्मरणीयता	३७०
सुदर्शनप्रियामनोरमाकथा	३७२
जिनचातुर्विध्य (गाथा ४३-४४)	३७५
द्रव्यजिनाराधनाया ईश्वरराजकथा	३७६
अधिकारेष्वर्थाधिकारा. (गाथा ४५-४७)	३७८
मरुदेवात्प्रतिमाकारकभरतः	३८०
चत्तारीति गाथाया अर्थविस्तारः	३८३
मथुराक्षपककथा	३८६

अधिकारप्रामाण्यम् (गाथा ४८)	३८८
उज्जयन्ताद्यधिकारप्रामाण्यम् (गाथा ४९)	३९१
शत्रुस्तवान्ते द्रव्यार्हद्वन्दनम् (गाथा ५०)	३९१
आचरणायाः आज्ञात् (गाथा ५१)	३९३
स्तुतिचतुष्कम् (गाथा ५२)	३९४
निमित्ताष्टकद्वारम् (गाथा ५३)	४००
श्रीगुप्तकथा	४०१
हेतुद्वादशकम् (गाथा ५४)	४०१
सुदर्शननृपकथा	४१०
आकारपोडशक (गाथा ५५)	४१३
नरसुन्दरकथा	४१४
कायोत्मर्गदोषा (गाथा ५६-५७)	४१९

रामनागदत्तकथा	४२०
कायोत्सर्गप्रमाण	४२३
शशिनृपकथा	४२४
स्तोत्रलक्षणम् (गाथा ५८)	४२८
विजयकुमारकथा	४२८
चैत्यवदनासप्तकम् (गाथा ५९)	४३४
गृहस्थचैत्यवदनसख्या (गाथा ६०)	४३६
कान्तिश्रीकथा	४३६
आशातनात्यागः (गाथा ६१)	४४२
प्रभावतीकथा	४४२
चैत्यमन्दनविधिः (गाथा ६२)	४५०
उपसहारः (गाथा ६३)	४५३
मेघरथकथा	४५४-४६२

सम्पूर्णा लघ्व्यनुक्रमणिका

—\*—

लघ्वनुक्रमः

॥ ८ ॥

तपोगच्छधुरंधरश्रीदेवेन्द्रसूरिसूत्रितस्य तत्रभवदन्तेवासिधर्मघोषसूर्युपज्ञवृत्तियुतस्य श्रीचैत्यवन्दनभाष्यस्य  
( श्रीसंघाचारविधेः ) बृहद् विषयानुक्रमः

मंगले वीरनमस्कारः आचारविधिकथनप्रतिज्ञा  
परोपकारधर्मस्य कर्त्तव्यता, देशनायाः भावो-  
पकारत्वं संघाचारविधेरुपदेश्यता  
वंदनीयवंदनादिना मंगलादि (१ गाथा)  
परमेष्ठिनमस्कारे हेतवः  
अर्हद्वंदनादिमंगलत्वे विजयनृपकथा, अभिनन्दनज-  
गन्नन्दनदेशना, जिनशेषप्रतीक्षा वासुदेवशुद्धिवर्णनं,  
प्रामादीनां लक्षणं, त्रिष्टुष्टेन स्वयंप्रभायाः विवाहः,  
श्रीविजयपुत्रः, २६-३१ ( श्रीविजयवर्णनं ) नैमि-  
त्तिकागमः, विजयसेनरोषः, जिनसमयनिमित्तसत्यता,  
निमित्तभेदाः, अवश्यभावे शिखिद्विजकथा, सप्तदिनी-

पत्र १ पौषधेन रक्षा, श्रेयांसनाथस्तुतिः (चतुष्क्रम् १९) मूर्त्ते-  
रुपरि विद्युत्, मणिमयी यक्षप्रतिमा, अमिततेजआगमः,  
२ परमेष्ठिकाव्यं १३  
४ चैत्यशब्दार्थः गुरुसाक्षिक्यपि चैत्यवंदना संक्षेपप्रयोजनं  
५ परापरफले, सूत्रादिलक्षणं, निर्युक्त्यादिप्रामाण्यं जीतप्रामाण्यं, १६  
परम्परायां मृगावतीदृष्टान्तः, कौशाम्ब्यां शतानीकः मृगा-  
वती, सभाकरणं, सोमेन चित्रणम्, साकेते सुरप्रियः, वरदानं  
चस्त्रपाविद्यम् यक्षपूजा आराधनक्षामणं संदंशच्छेदः पुन-  
र्वरः, प्रद्योतेन चित्रवर्णनं, दूतप्रेषणं, अयमानं, अतिसारेण  
शतानीकमरणं, मृगावतीमाया, उज्जयिनीष्टिकानयनं,  
आशादोषाः, वैराग्यं, श्रीवीराऽऽगमः, श्रीवीरस्तुतिः, यासा-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सधा-  
चारविधौ  
॥ १० ॥

सासादृष्टान्त', चपापामनङ्गसेनः, स्त्रीणा पञ्चशती, दर्प  
णेन घात', प्रथमा द्विजसुतः, सुपर्णकारो भगिनी, मप  
त्न्या घात', विषयनिन्दा, मृगागत्यादिदीक्षा, कौशाम्ब्या-  
मुदयनः  
पूर्वधरधर्मघोष यावत्परपरा  
इष्टिकादृष्टान्तोपनयन  
चैत्यवदनायाः मूलत्व  
चतुर्विंशतिद्वाराणि चतुःसप्तत्यधिकसहस्रद्वय स्थानानि च  
(२ तः ५ गाथाः)  
क्षमाश्रमणादिपदसंख्यानुक्तिः  
नामस्तनादिषु सपदसगतिः  
चूलिकास्तुतिसिद्धिः  
नमस्कारस्तुतिस्तोत्रभेदः  
आशातनासख्याविचारः

त्रिकदशकाऽक्षरार्थः ( ६-७ गाथे )  
नैपेधिकीत्रिकस्थानम्, भुवनमल्लनरेन्द्रकथा, नगरीनृपकु-  
मारवर्णनम् करभागमन, रत्नमालायै गमनं, सिद्धार्थपुरनृपा-  
गम', मूर्च्छा, अभयघोषदेशना, मदनरेखाया मूलदेवत्व,  
२५ रत्नसारस्य भुवनमल्लत्व, गुर्वनुशास्तिः, वरुणातीरे रूपभ-  
२५ भवन, वानरमाया, अमितगत्यसुरः, सुमतिकेगलिदेशना,  
२५ कृतमगलाया धनश्रेष्ठिसुता जयसुन्दरी, नैपेधिकीभङ्गः,  
२६ व्याघ्रचौ, नरके भ्रातृजाया शूरसुता, ननान्दा दुहिता,  
२६ योगिनयन, देवार्चनादिफलम्, पश्चादानयनं, वधूधर्माः,  
२८ विजयपताकायाः रत्नमालायाश्च विवाहः, स्वयंवरमण्डपः  
२८ गोलकपातेन वेधक्रमः, आस्थाने धर्मचर्चा, क्षुलकोक्तं  
३० गोलकद्वय, श्रावकधर्मः, दीक्षा, सामाचारीतत्परत्वम्  
३२ प्रदक्षिणासिद्धिः हरिकृटपर्वतसम्बन्धः, चित्रविचित्रवेगौ,  
३२ विमलगुप्तोपदेशः, भृतरुक्था, देवतुष्टिः, चिन्तामणिप्राप्तिः

३५

४६

बृहद् विप-  
यानुक्रमः



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ११ ॥

सागरे स्नानपातः, द्रव्यभावार्चनस्वरूपं, विमलपुत्रदेशना,  
विचित्रवेगाराधना, शोकनिवारणं, चित्रवेगमुनिप्रतिमा,  
बहिःपूजा, वार्षिकोत्सवः, वसुदेवेनोद्घाटनं, युगादिदेव-  
स्तुतिः, कपाटार्चनं

निर्माल्यलक्षणं

प्रणामत्रिकस्वरूपं, (९ गाथा प्र०) विजयदेवकथा, राज-  
धानी, प्रासादावतंसकादिस्वरूपं, प्रतिमायाः मानं स्वरूपञ्च,  
पुस्तकरत्नं, पूजाविधिः, चित्रस्तुतिचतुष्कं, सकृत्पूजा  
पूजात्रिकं (९ गाथा)

पुष्पस्योपलक्षणता, मूलचिन्तित्वसिद्धिः, मृत्तिकाप्रतिमायाः  
पुष्पादिपूजा, अशनादिना बलिः, प्रदीपारात्रिकसिद्धिः,  
श्रावकाणां कायोत्सर्गस्तुत्यादिसिद्धिः, बलीप्रदीपपूजासि-  
द्धिः, यथाच्छंदकल्पनानिषेधः, मृगब्राह्मणकथा, गगन-  
वल्लभं, विद्युदंष्ट्रः, प्रतिमाप्रतिपन्नापहारः धरणेन्द्रोपः,

विद्यापहारः वीतशोकपुरं, वैजयन्तसत्यश्रियो, संजयन्त-  
जयन्तौ, स्वयंभूर्जिनः, उपदेशः, आवश्यकाद्युक्तो बलि-  
विधिः, जयन्तस्य धरणेन्द्रता, संजयन्तस्य जिनकल्प-  
परिकर्मः, केवलं, सिंहपुरं, सिंहसेनः, रामकृष्णा, सुबुद्धिः  
५४ सचिवः, श्रीभूतिः पुरोहितः, भव्यमित्रसार्थवाहः, न्यासा-  
र्पणं, पोतभङ्गः, नकुलानर्पणं, प्रत्रज्याविचारः, व्याघ्रया  
भक्षणं, सिंहचन्द्रकुमारः, अगन्धनदासः, हीमत्युपदेशः,  
६१ रामकृष्णाकेवल्युपदेशः, कोशलायां मृगः, मदिरा प्रिया,  
६१ वारुणी दुहिता, नैवेद्यकरणं, दानं, पञ्चन्नार्पणात्स्त्रीत्वं, वा-  
रुण्याः पूर्णचन्द्रत्वं, मदिरायाः हीमतीत्वं, अशनिवेगो हस्ती,  
सिंहस्य हस्तित्वं, पुरोहितस्य वृषधरत्वं, मुत्यूपसर्गः जा-  
तिस्मरणं, सिंहचंद्रोपदेशः, गजस्य धर्मिता, सर्पदंशः  
आराधना, शुक्रे देवः, सर्पः पञ्चम्यां, सिंहचंद्रः ग्रैवेयके,  
पूर्णचंद्रस्य श्राद्धता, नित्यालोके यशोधरा, जिनस्तुति-

बृहद् विप  
यानुक्रमः

॥ ११ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १२ ॥

चतुष्कं, गुणवती आर्या, यशोधरायाः सुरत्वं, रश्मिवेग-  
श्रावकत्वं, हरिमुनिचंद्रदेशना रश्मिवेगसाधुः, पुरोहितोऽ-  
जगरः मुनिर्लान्तके, धूमायामजगरः सिंहसेनो वज्रायुधः,  
पूर्णचन्द्रो रत्नायुधः, वज्रायुधदेशना, वज्रायुधकायोत्सर्गः,  
पुरोहितजीवोऽतिकष्टः, वज्रायुधः सर्वार्थे, अतिकष्टोऽप्र-  
तिग्राने, रत्नायुधकृता पूजा, रत्नायुधरत्नमाले अच्युते,  
वीतभयविभीषणौ बलविष्णू, विभीषणः शर्करायां, वीत-  
भयो लान्तके, विभीषणोऽयोध्यायां श्रीदाम, दीक्षा,  
बलदेवलोकः, पुरोहितो मल्लशृङ्गः, निदानात् विद्युदंष्टः,  
वज्रायुधः संजयन्तः, श्रीदामो जयन्तः, धरणेन्द्रः, वीतभ-  
यसुतधरणभवाः, वारुणीभवाः, रत्नमालाभवाः, सिंहसेन-  
भवाः, संजयन्तचैत्यं, खेचरव्यवस्था, ह्रीमती वसुदेवः,  
धरणोद्भेदचैत्यं, नाभेयाचलचैत्यानि, अनिलयशावि-  
वाहः, वर्षमहः, चैत्ये रात्रिदीपसिद्धिः, नाट्यं च, स्तुति-

चतुष्कं  
पिण्डस्थादिछद्मस्थादित्रिके, (११ गाथा) ध्यानविवरणं,  
जन्मराज्यश्रामण्यानि,  
नमिविनमिवृत्तान्तः, कोशलावर्णनं, श्रीऋषभवर्णनं, रा-  
ज्यार्पणं, लोकान्तिकागमः, वार्षिकदानं, दीक्षाभिषेकः,  
कच्छादीनां तापसत्वं, नमिविनमिग्रार्थना, त्रिसंध्यं सेवा,  
धरणेन्द्रागमः निश्चलता, इष्टकग्राहिदृष्टान्तः गौर्यादि-  
दानं, वैताडये चैत्यानि, श्रीऋषभस्तुतिः, गजपुरे श्रेयां-  
सतः पारणं, निर्नामिकासम्बन्धः, धरणेन्द्रस्थापना, पु-  
ण्डरीके मोक्षः,  
प्रातिहार्यवर्णनं, पुष्पवृष्टौ मतभेदः,  
देवदत्तकथा, भरतवर्णनं, चंपायां जितारिः, शिवदत्तवस-  
न्तसेने, निरपत्यता, देव्याराधनं, दरिद्रपुत्रप्रार्थना, कारागृहे-  
मन्त्री, मन्त्रितत्पत्नीसंलापः विदेशगमनं, मुनिसमागमः,

८८  
८९  
९०  
९८  
१००

वृहद् विप-  
यातुक्रमः

॥ १२ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १३ ॥

नंदसुन्दरीस्कन्दशीलवत्यः, सार्थवाहमीलनं, नन्दीपुरे नि-  
धानलाभः, वञ्चना, प्रतिभवं दारिद्र्यं, कुणालायां जन्म,  
समवसरणप्रकरणं, राजसन्मानादि, प्रव्रज्या, सनत्कुमारे  
देवः, क्षितिप्रतिष्ठिते सोमः पार्श्वगणधरः ११०  
सिद्धावस्था, आसनद्वयम् (गाथा १२) सुमतिकथा, भदिले  
चक्रायुधः, सुमतिपुत्रो व्याधिमान्, पार्श्वजिनागमः,  
देशना, नीरोगस्य सुदर्शनामिधा, पार्श्वनिर्वाणादुद्वेगः,  
सिद्धशिला, सिद्धध्यानं, स्तुतिचतुष्कं, ज्ञानभानुमुनिः,  
देशना, सुमतेर्दीक्षा, सिद्धिश्च ११५  
त्रिदिग्निरीक्षणविरतिः (गाथा १३) गान्धारश्रावककथा,  
गन्धममृद्धे गान्धारः, जिनजन्मादिभूमिवंदनं, चतुर्विंश-  
तिस्तुतिः, (चतुष्कम्) अष्टशतगुटिकाऽर्पणं, सुवर्णगुलिका-  
ऽधिकारः, उदायनप्रद्योतयुद्धं, पर्युपणाक्षामणा, दशपुर-  
निवेशः, संवत्सरसंख्या, भाइलपूजा, त्रिः प्रमार्जनम्,

ईर्यापथिकीसिद्धिः, पुष्कलीश्रावकसम्बन्धः १२३  
नमस्काराद्यध्ययनक्रमः, पाक्षिकपौषधः, साधर्मिकवात्सल्यं,  
शुद्धादिजागरिका, वर्णादित्रिकम्, चन्द्रनरेन्द्रकथा, कन-  
कपुरे चन्द्रनृपः, कुसुमपुरे सुलभनृपः, वैराग्यं, (देहादेः  
कारागारादित्वं) दाहशान्तिः दीक्षा, चन्द्रनृपस्य भावि-  
मल्लितीर्थे मोक्षः मल्लिजिनायतनं, चन्द्रनृपदीक्षा, देवत्वं,  
मिथिलायामानन्दः, दीक्षा, ध्यानं, केवलं, योगनिरोधः,  
मुद्रात्रिकं (गाथा १४ तः १७) १२१  
मुद्राविषयविभागः (गाथा १८) १२२  
मुद्रात्रिकव्यवस्था, (प्रणिपाते क्षितिनिहितजानुषुगलत्वं)  
मुनिमतवैचित्र्यं, धर्मरुचिकथा, चम्पायां, सोमादयो विप्राः,  
कडुतुम्बकदानं, धर्मरुचेराराधना, सर्वार्थे गमनं, नागश्रिया  
निर्वासनं, षोडश रोगाः, पृथ्यां नारकः, सुकुमालिका,  
गोपालिकाशिष्या, स्वच्छन्दता, निदानं, द्रौपदी, जिनपूजा,

बृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ १३ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सधा  
चारविधौ  
॥ १४ ॥

नारदद्वेषः, दीक्षा, विमलाचलेऽनशन, दृष्टान्तोपनयः १४०  
प्रणिधानत्रिकं, विदिशि नरवाहन, प्रियदर्शना, अमोघरथः,  
सुप्रताचार्यः, प्रतिमापूज्यता, देवगुरुधर्मसिद्धिः, धर्मकथा  
निषेधः, गजलक्षणम्, विन्ध्ये गमन, सुधर्मगुरुपदेशः, स-  
म्यक्त्व, सुधर्माऽऽगमन मोहयुद्ध, (उपमितिपत्) नरवाह-  
नदीक्षा देवत्व ॥ शेषत्रिकार्थातिदेशः (गाथा १९) १५१  
अभिगमपचक (गाथा २०) १५२  
स्त्रिया भेदः, राजचिह्नपञ्चक (गाथा २१) १५३  
वसन्तपुरे श्रीपेणः, श्रीपतिश्रेष्ठी, विक्रमध्वजागमः, सैन्ये  
उपद्रवः, केयूराब्धान्तिः, देवोक्तिः, हेमपुरे विजयः, रथ्याज्ञा,  
जलार्पण, परमेष्ठिस्मरण, देवत्वं, श्रीपेणजयः, युगादिद्वय-  
चैत्ये महद्भ्यां गमनं, आरुवेपाभिमरैर्घातः भुवनभानो-  
रागमः, उपदेशः ॥ इति प्रथमः प्रस्तावः १५८  
नरनारीदिरुस्थाननियम, विधिसिद्धिः श्रीदत्ताकथा, शि-

वमन्दिरे कीर्तिधरः, दमितारिः वासुदेवः, कनकश्रीपुत्री,  
नर्त्तकानपनाज्ञा, कनकश्रियोऽपहारः, दमितारिपथः, चैत्य-  
पूजा, कीर्तिधरोपदेशः. शंखपुरे श्रीदत्ता, श्रीपर्वते मुनिः,  
उपदेशः, चैत्यवदन्दनदेशना, सुप्रतसाधुपारणं, सर्वयशोमु-  
निपन्दना, दोषवर्जन, अग्रहभेदाः (गाथा २२) १६६  
अमिततेजः, ज्योतिष्प्रभा, कुरङ्गेनापहारः, देवीमृत्युदर्श-  
नम्, अशनिघोषपराजयः, धरणजयन्तप्रतिमापुरतो विद्या  
साधनं, युद्धं, अमितेजसा मारणं, सीमनगे ऋषभमन्दिर,  
अचलकेवलं, अचलमुनेरुपदेशः, रत्नपुरे सत्यभामा, अश-  
निघोषदीक्षा, रत्नपुरे श्रीपेणाभिनन्दिते, कपिलोऽचला च,  
सत्यभामा, कपिलरूपापूरता, श्रीशान्तिस्तुतिः चरणोप-  
देश, अष्टाह्निकात्रयनियमः, विपुलमृत्युपदेशः, पादपो-  
पगमनं, प्राणते, दिव्यचूलमणिचूला,  
चैत्यवन्दनभेदाः, (चूलिकास्तुतिमिद्धिः) (गाथा २३) १७६

वृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ १४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १५ ॥

प्रवृत्तिसिद्धिः, उत्कृष्टचैत्यवन्दनालक्षणं  
रत्नसारकथा, हस्तिनापुरे श्रीपेणश्रीमत्यौ, रत्नसारः,  
सुमतिमिश्रम्, संगमस्ररिदेशना, सौवीरे प्रतापशूरमद-  
नरेखे, सुरशर्मकापालिकेनापहारः, कलिङ्गप्रभुसिंहसेनेन  
युद्धम्, संग्रामादपक्रमणं, रत्नसारगमनं, देवेन रथार्पणं,  
मदनरेखाप्रत्यानयनं, अनेककन्याविवाहः, विमलबोधा-  
चार्यागमनं, देशना, विरोधहेतुपृच्छा, पुण्डरीकिण्यां  
आनन्दपद्मावत्यौ, शीलवती पुत्री, अनन्तसिंहेनापहारः,  
बालाविलापः, कृतजिनप्रतिमावन्दनं देशावकाशिकञ्च,  
अजगरग्रसनं, प्रहारनिवारणं, सामानिकदेवत्वं, रत्नसारः,  
अनङ्गसिंहस्य सिंहसेनत्वं, खचरस्य प्रतापशूरत्वं, अज-  
गरदेवकृतं साहाय्यं, प्रतापशूरमदनरेखादीक्षा, शत्रुञ्जय-  
वर्णनं, सिद्धगण्डिका, चतुर्विंशतिः स्तुतिः, वैतादये  
नयनं, विजयवर्मक्षोभः, श्रीपुरे कनकमालाविवाहः, पुरे

१८२

प्रवेशः, अरुलंकसूर्यागमनं, दीक्षा मोक्षश्च,  
चैत्यवन्दने मतान्तराणां व्याख्या (गाथा २४)  
पञ्चाङ्गानि, पञ्चाङ्गप्रणामे सुरेन्द्रदत्तकथा, मथुरायां सम-  
रसिंहललिते, सुरेन्द्रदत्तः गुणंधराचार्यः, देशना, पञ्चाङ्गा-  
मिग्रहः, हरिवाहनपुण्यष्टकपरिणयनं, देशना, पालिमद्रे  
सिंहकुलपुत्रः, रोहणे रत्नप्राप्तिः मर्कटहरणं, योगिसमा-  
गमः, रसापहारः, प्रभासमुनिदेशना, मलयपुरे ऋषभप्रणि-  
पातः, इष्टप्राप्तिः अमरनरभवाः  
नमस्कारसंख्या (गाथा २५)  
विजयकुमारकथा, हस्तिनागपुरे विजयबलः, सौभाग्य-  
तिलकसुन्दर्यौ, पद्मविजयौ, तिलकसुन्दर्या जलोदरम्,  
कुलदंवी, पद्मखण्डे अभयकुमारशान्तिमत्यौ, विरसान्न-  
दानं, पर्यन्तानशनं, वडुकुमारी, आराधना, कालसेन-  
जयः, विजयस्य युवराजत्वं, कार्मणं, पत्रालये शक्रावतार-

१९४

२०१

२०२

बृहद् विष-  
यानुक्रमः

॥ १५ ॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० सपा-  
चारविधौ  
॥ १६ ॥

चैत्यं, चतुर्विंशतिस्तुतिः, मणिचूलखेचरागमः, पाटवीये  
राज्यं, पञ्चमृत्युः, शोकनिवारणं, सोभाग्यसुन्दरीपापप्रका-  
शनं, विजयस्य राज्यार्पणं, दीक्षा, सौधर्मे देवः, पार्श्व-  
जिनसोमगणधरः ॥ इति द्वितीयः प्रस्तावः २०८  
कुणालकुमारकथा, नमस्कारे वर्णपदसंपटः, (गाथा २६)  
(पृथक् पृथक् वर्णादिदर्शिका गाथाः चतस्रः) हवइ इति  
पाठसिद्धिः, पंचपरमेष्ठ्यर्थः, महासार्थवाहादित्व, २१८  
बन्धुदत्तकथा, नागपुर्यां सूरतेजाः धनपतिसुन्दर्यौ, बन्धु-  
दत्तः, सर्पदंशेन चन्द्रलेखामरण, अन्यस्याः विमुचिकया,  
विलापः, देशान्तराटनगुणाः, सिंहले धनार्जन, प्रग्रहण-  
भङ्गः, नेमिप्रतिमानन्दन, मुनिदेशना, चित्राङ्गदवात्सल्य,  
अङ्गदसुतागमन, कौशाम्ब्या मानभङ्गनृपः, जिनदत्त-  
वसुमत्यौ, ज्ञानदृष्टवचनं, पार्श्वनाथचैत्यपवित्रिता कौशा-  
म्बी, पूजन, श्रीपार्श्वस्तुतिः, विचिप्रशमा, रात्सल्यमहिमा,

श्रावककृत्यानि, रथयात्राविधिः, पुत्रीशिक्षा, पद्माटवी,  
प्रियदर्शनानयन, पश्चात्तापः, चौरपतिमूर्च्छा, स्वरक्षाक-  
थनम्, बन्धुदत्तान्वेषण, सुतजन्म, पद्मावतीवलिः, मातु-  
लगृहजिगमिषा, धनदत्तदारिद्र्यं, रत्नकरण्डकग्रहणं, बन्दि-  
गृहः, कारागृहे क्षेपः, परित्राजकग्रहणं, मुपितद्रव्यार्पणं,  
पुण्ड्रवर्ने नारायणः, श्रेपलोकोक्तिः, गञ्जनपुरे चन्द्रदे-  
वः, योगात्मा परित्राद्, मालिकेन वीरमत्या गमनं, अ-  
लीकं, योगात्मप्रथः, जिह्वाच्छेदः, गुरुदत्ता विद्या, मृपोक्ती  
जापः, इष्टविरहस्य कथनं, सागरश्रेष्ठिचौर्यं, विद्याविस्मृतिः,  
मातुलभागिनेयमोक्षः, ईर्यापथिक्रयाः पृथक् मते सिद्धिः २४२  
क्षमाश्रमणस्य अक्षराणि, अर्थश्च, सोमशूरकथा, रत्नपुरे  
सोमशूरौ, अटव्या चारणश्रमणदर्शनं, निधानलाभे युद्धं,  
कौशाम्ब्या विजयधनौ, रोहणरत्नग्रन्थये युद्धं, धनस्ताम्र-  
लियां जयः, विजयो हरिः, धनः कुलपुत्रः वानतोऽन्यः,

बृहद् विप-  
यानुकमः

॥ १६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १७ ॥

वराहहरिणी, रोरद्विजपुत्रौ, जातिस्मरणं, शिखण्डिनौ,  
जातिस्मरौ, विद्याधरपुत्रौ, दीक्षा मोक्षश्च  
ईर्यापथिक्या अक्षराणि (गाथा ३१) २४८  
संपदादिपदानि, (गाथा ३२) २४८  
अभ्युपगमाद्यष्ट निमित्तानि, जिनविद्यस्याचार्यत्वमपि, २५०  
स्कन्दकमुनिकथा, कृतार्गलानगर्यां स्कन्दाऽऽगमः, श्राव-  
स्त्यां पिह्ललरुप्रश्नाः, पर्यदनिर्गमनं, श्रामण्यप्रश्नः, स्वाग-  
तकरणं, श्रीवीरवर्णनं, चिन्तितार्थकथनं, द्रव्यादिभिर्लोक-  
सिद्धिसिद्धमरणव्याख्यानं, निर्ग्रन्थप्रवचनप्रतीत्यादि, भा-  
ण्डोपमया आत्मनिस्त्वारविज्ञप्तिः, स्वयं प्रव्राजनादिः, मि-  
क्षुप्रतिमा, गुणरत्नं, विपुले अनशनं, आराधना, अच्युते  
देवः, ईर्यापथिक्या नव्यव्याख्या २६२  
ईर्यापथिक्या न दैवसिकादित्वं २६४  
संपदन्यमतं (गाथा ३३) ईर्यापथिकीव्याख्या, विक्रमसेनकथा

सुरपदे चक्रायुधनर्मदे, विजयसेनः, निर्वासनं, पल्लिपतित्वं,  
सार्यः समन्तभद्राचार्यः वर्धनवचनेन गुरुरक्षा, केवलं, महि-  
मा, आश्रयः; मन्तभद्रदेशना, मिथ्यादुष्कृतप्रभावः, सत्संग-  
प्रार्थना, वर्द्धनप्रशंसा, मनोरथाः, सुरपुरे गमनं, गुरुस्तुतिः,  
देशना, (नामाचारी) प्रवज्या, प्राणते देवः, मिथिलायां  
नारिपेणः, पार्थगणधरः, तस्योत्तरीयत्रस्यार्थः, प्रायश्चित्तनि-  
रुक्तिः, चिलातिपुत्रचरित्रं, राजगृहे मुंसुमा, चिलातेनिष्का-  
शनं, पल्लिपतित्वं, मुंसुमाहरणं, शिरःछेदः, धनविलापः,  
श्रीवीरागमनं, क्षितिप्रतिष्ठिते यज्ञदेवः, सर्वज्ञसिद्धिः प्रव-  
ज्या, स्त्रीकृतं कार्मणं, यज्ञदेवधिलातिः, दयिता मुंसुमा,  
चारणमुनिदर्शनं, उपशमादिपदार्थः, कीटिकोपद्रवः, देवत्वं,  
कायोत्सर्गस्यार्थः २८३  
शक्रस्तनपदसंपदादिपदानि (गाथा ३४) २८४  
वर्णसंपत्पदादिसंख्या, शक्रस्तवार्थः, अर्हत्पदविशेषार्थः,

बृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ १७ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १८ ॥

अश्वायबोधः, निशि पष्टियोजनी, जितशत्रुमाहस्य जाति-  
स्मरणं, सागरदत्तो माहेश्वरः, शिवायतनकरणं, जिनमन्दिरं  
प्रतिमा च, लिङ्गपुरणे विराधना, तिरस्कारः, धर्मबान्धवता,  
सहस्रारे, देवः, तीर्थपूजा, स्तूपप्रतिमे, अश्वायबोधतीर्थं,  
गणधराणां वादाः २९१ थी ३००  
द्रव्यजिनवन्दनं भरतचक्रिकथा, अयोध्या, चक्रिकृद्धिः,  
श्रीरूपभागमनं, अर्धत्रयोदशसुवर्णं प्रीतिदानं, महर्द्ध्या  
निर्गमः, श्रीरूपभदेशना, भाविजिनचक्रिबलहरिप्रतिहरीणां  
नामपुरादि, पर्यदि भाविजिनः, वन्दनस्तुत्यादिः, द्रव्यव-  
न्दनगाथायाः शक्रस्तमान्तर्गतत्वं, चैत्यस्तवे संपदादि,  
(गाथा ३७) ३१२  
वंदनादिपदानामर्थः, साधोः कारणानुमतिसिद्धिः, आधि-  
क्यार्थं श्राद्धस्य ३१४  
भानुश्रेष्ठिकथा, चंपायां भानुश्रेष्ठी, भद्रा भार्या निरपत्या,

दीपप्रज्वालनं, चारुमुन्यागमनं, नमिप्रपन्धः, श्रावस्त्यां  
सिद्धार्थः, प्राणते देवः, शिथिलायां नमिः, भविष्यत्पुत्र-  
कथनं, चारुदत्तनाम, अंगमन्दिरे महिमा, पुष्पार्चनं,  
स्तवनं, धर्मरत्नवृत्त्यतिदेशः, भानुदीक्षा  
सन्मानादिपदार्थः ३१७  
कायोत्सर्गसुत्रार्थः ३१८  
कायोत्सर्गदोषाः ३१९  
स्तुत्युच्चारणविधिः ३२०  
नामस्तवादेः संपत्पदाक्षराणि (गाथा ३९) ३२०  
वरसमाधौ जिनदत्तकथा, वैशाल्यां जिनदत्तः, कायो-  
त्सर्गस्थश्रीवीरसेवा, मनोरथश्रेणिः, अभिनमगेहे पारणं,  
केवलिकथिता जीर्णभावना । त्रैलोक्यचैत्यप्रतिमासंख्या ३२७  
श्रुतस्तवार्थः ३२८  
अशकटापिताकथा, भ्रात्रोरेकः सूरिः मूर्खगुणविचारः,

वृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ १८ ॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ १९ ॥

पण्डितगुणाः, आमीरः, नगरगमनं, शकटभङ्गः, दीक्षा,  
योगरुचिः, सर्वश्रुतपारगः, ३३१  
सिद्धस्तवार्थः ३३२  
आमलक्रीडा। गजपुरे धनः, धर्मजागरिका, संधमेलापरुः,  
वीरदेवालयः, चैत्यपूजा, मुनिगन्दनं, वात्सल्यं, दानं, श-  
त्रुञ्जये अष्टाह्निका, उजयन्ते नेमिदर्शनं, अष्टमंगलान्ता  
पूजा, चन्द्रोदयदानं, महाराष्ट्रीयवरुणबोटिकेन विवादः,  
उजयन्तादिगाथा, अपाठे जमालिसमानता ३३७  
अष्टापदतीर्थसम्बन्धः, ३३८  
शालादीनां केवलं, अष्टापदवन्दनमनोरथः, सम्मवादिजि-  
नवन्दनं, सायं निर्गमः, पुण्डरीकाध्ययनधारकः सामानिकः,  
पञ्चदशशततापसकेवलं, पैयाष्टयकारकायोत्सर्गस्तुतिः, चै-  
त्यप्रणिधानप्रार्थः, त्रिलोकचैत्यप्रतिमासंख्या, माधुप्रणि-  
धानप्रार्थः, प्रार्थनाप्रणिधानप्रार्थः, सर्वजननिन्दादीनि

लोकविरुद्धानि सप्रणिधानोत्कृष्टा वंदना ३४२  
दर्दुरांककथा, राजगृहे श्रीवीरः, दर्दुरांकागमनं नाट्यं, रा-  
जगृहे नन्दः, अष्टमभक्तं, जलचरानुमोदना, वाप्यादिक-  
रणं, दर्दुरः, जातिस्मरणं, पश्चात्तापः, पष्ठाभिग्रहः, वन्द-  
नाय गमनं, श्रेणिऋथेन मृत्युः, देवत्वं, ३४४  
प्रणिधानेषु दंडकेषु च वर्णगुरुवर्णसंख्या (गाथा ४०) ३४४  
(श्रीहरिभद्रकृतपञ्चस्थानकगाथाः)  
कुणालकुमारकथा, पाटलिपुत्रे अशोकश्रीः उजयिन्यां कु-  
णालस्थानं, अध्ययनादेशः, अन्धत्वं, पाटलिपुत्रे गानं,  
सम्प्रतेर्नृपत्वं, रथयात्रा, रथरूपणं, सुहस्तिदर्शनात् जा-  
तिस्मृतिः, सामायिकफलकथनं, पूर्वभवोदन्तकथनं, दूरि-  
स्तुतिः, रथयात्रादि,  
दण्डकपञ्चकं ३५१  
गुणसागरकथा, वीरपुरे रणवीरः, गुणसागरकुमारः धरणी

वृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ १९ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ २० ॥

मित्रं, गुणधरमुनिदेशना, पुष्करणीदृष्टान्त, सम्यक्त्वमहिमा  
चैत्यवन्दना, अपहारः रत्नावलीपरिणयनं, अमरचन्द्रसूर्या-  
गमनं, देशना, प्रत्यङ्गिराविद्यासिद्धिः, हारार्पणं, धरणेन  
अनीतौ वादः, अपरो मन्त्री, प्रव्रज्या मोक्षश्च, ३५७  
द्वादश अधिकाराः (गा. ४१) अधिकाराद्यपदानि, (गा. ४२) ३५८  
ब्रह्मदत्तकथा, तात्रलिप्यां जिनदत्तभद्रे, ब्रह्मदत्तः पुत्रः,  
धनभ्रंशः, केवलिपृच्छा, सिद्धदेवकुमारः धर्मयशोमित्रं,  
दानस्य सारता, देशान्तरं गमनं, कुशाग्रे विजयदेवपुत्री-  
परिणयनं, करेणुदत्तनिग्रहः, युवराजत्वं, नृपशिक्षा, वीत-  
भये धर्माभिलाषः, प्रभागाचार्यागमः, देशना, अप्रमादः  
सिद्धदेवः, धर्मयशाः सप्रमादः नृपशिक्षा, निर्भावनं  
चैत्यवन्दनं, विधिप्राधान्यं, सुरदेवदृष्टान्तः, कुणा-  
लायां सुरदेवः, वसुमित्रस्वरिपार्थे वाहुमुवाहोः दीक्षा,  
विकृत्यभिग्रहः, विकृतिदोषाः, मुनेरनशनं, नृपच्युद्ग्रहः,

पुत्रस्य सर्पदंशः, निर्विपयाज्ञा, वाहुना स्तम्भनं, क्षामणं,  
सर्वाङ्गामर्शः, मुनेः सनत्कुमारगमनं, सावचिकलत्वात्  
न मुवाहोर्लब्धयः, ब्रह्मदत्तस्य दीक्षा मोक्षश्च,  
जिनमुनिश्रुतसिद्धानां वन्द्यता ३६६  
सुमतिकन्याकथा, सुभगायां बलविष्णू, सुमतिकन्या, पा-  
रणे वरदत्तप्रतिलाभनं, स्वयंवरः, देव्यागमनं, नन्दनघने  
महेन्द्रः, कनकश्रीधनश्रियौ, नन्दनगिरिमुनिदेशना, वीरा-  
ङ्गदेनापहारः, नद्यां पातः, आराधना, इन्द्रवैश्रमणाग्रम-  
हिष्यौ, संकेतादागमनं, जिनमहिमादिस्मारणं, सुव्रताऽऽर्या-  
पार्थे पञ्चशत्या व्रतं, सिद्धिः,  
सुराणां स्मरणीयता ३७०  
गुणोत्कीर्तनस्मारणसारणादिसिद्धिः ३७१  
मनोरमाकथा, चंपायां ऋषभदासः, महिषीचारकः सुभगः,  
नमोऽरिहंताणंपठनं, नमस्कारेण आराधना, सुदर्शनश्रेष्ठित्वं,

वृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ २० ॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
घर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ २१ ॥

मनोरमा पत्नी, कपिलाया रक्षा, अभयोपहासः, रमणप्रति-  
ज्ञा, अन्तःपुरे आनयनं, अक्षोभः, पूत्कारः, वध्याज्ञा,  
मनोरमाकायोत्सर्गः, शूलायाः स्वर्णकमलता, नृपक्षामणं,  
अभयाया मरणं, कुसुमपुरे पण्डिता, देवदत्तागृहे प्रवेशनं,  
अक्षोभः, व्यन्तर्युपद्रवः, केवलं,  
नामादिमिश्रतुर्विधा जिनाः, गाथा (४३-४४) ३७५  
ईश्वरराजकथा, राजकुले ईश्वरराजः, पार्श्वजिनदर्शनं, मूर्च्छा,  
जातिस्मरणं, दत्तः कुष्ठीः चारणश्रमणोपदेशः, गुणसागर-  
केवलपृच्छा, सम्यक्तवमहिमा, कर्माविचलता, कुकुटः,  
ईश्वरजन्मनि बोधिः, रोगापगमः, कुकुटेश्वरचैत्यं, सर्वद्वया  
गमनं पूजनञ्च,  
अधिकारस्तवनीयाः, (गाथा ४१-४७) ३७८  
सिद्धप्रतिमापूजासिद्धिः ३७९  
मरुदेवाप्रबन्धः, पुरिमताले केवलं, चक्री, गमनं, मरुदेवा-

सिद्धिः, देवपूजा, प्रभुदेशना, पुण्डरीकादीनां दीक्षादिः,  
अष्टापदे मोक्षः, चितामूर्तिस्तूपकरणं, द्रव्यार्हदादिवन्दनं,  
उज्जयन्तगाथापाठसिद्धिः, चत्वारिअष्टप्रकरणं, सुरप्रशंसा-  
दि, औचित्यसिद्धिः ३८६

मथुराक्षपककथा, कुसुमपुरे द्दरथः, अनित्यताज्ञानं, दीक्षा,  
मथुरायामागमः, देवीप्रार्थना, सुमेरुवन्दनेच्छा, स्तूपवि-  
निर्माणं, सुदर्शनक्षपकः, प्रार्थना, अनुचितज्ञता, स्तूपवि-  
वादः, श्वेतपताका, शासनजयः,  
अधिकारेषु प्रमाणनिर्देशः, वैयावृत्यसूत्रस्य पाठनेयत्यं,  
देवसाक्षिता, आचरणानिषेधे जिनाशातना, उज्जयन्तादीनां  
श्रुतमतत्वं (गाथा ४९) ३९१  
शक्रस्तवान्ते द्रव्यार्हद्वन्दनं, ३९१  
जीतसिद्धिः ३९२  
आचरणावहुमानः, (गाथा ५०) ३९३

बृहद् विष-  
यानुक्रमः

॥ २१ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥ २२ ॥

स्तुतिचतुष्कसिद्धिः विविधदेवकायोत्सर्गाः स्तुतिचतुर्विंशतिः ३९५  
निमित्ताष्टकं (गाथा ५३) ४००  
सुरस्मरणसिद्धिः श्रीगुप्तश्रेणीकथा ४००  
विजयायां नलनृपः, महीधरश्रेणी, श्रीगुप्तस्य व्यसनिता,  
खात्रदानं, द्रव्यार्पणं, धीञ्जकरणं, शिरोग्रहः, मन्त्रेण स्त-  
म्भः, शुद्धशुद्धोपणा, कुशलशुद्ध्यागमनं, धीजे पाणिदाहः,  
निर्विषयता, गजपुरे योगिघातः, उल्लंघनं, पाशत्रुटिः, स्वा-  
ध्यायश्रवणं, पूर्वभवपृच्छा, जयपुरे वरुणः पडावश्यकमू-  
लानि, प्रच्छन्नवैपरीत्यं, कीरत्वं, पुण्डरीकगिरिमहिमा,  
(शत्रुञ्जयकल्पः) श्रीगुप्तकृता प्रशंसा, निमित्तशुद्धशुपदेशः,  
नगरे नयनं, अभिभवोत्सर्गः, कीरसुरागमनं, विमलबोध-  
दीक्षा द्वयोर्विदेहेषु मोक्षः,  
हेतुद्वादशकं, (गाथा ५४) उत्तरकरणाद्यर्थः, मुदर्शनकथा ४०९  
आकारपोडकं (गाथा ५५) ४१३

नरसुन्दरकथा, काञ्च्यां नरसुन्दरः, सुमतिर्मन्त्री, चन्द्रसेनेन  
नृपघातकारणं, दिव्यशक्तिप्रश्नः, रात्र्यादिपरावर्तादिकथनं,  
विप्र्यानयनं, पवनधारणा, विपदानं, श्मशाने नयनं,  
नरपतिप्रश्नः, मुनिपवनप्रभावः, शशिप्रभाचार्यः, आत्म-  
सिद्धिः, नृपपश्चात्तापः, क्रमागतात्यागे लोहग्राहकदृष्टान्तः,  
पूर्वभवाः, अर्जनकुलपुत्रः, शुभंकरश्चाद्दः सुधर्मगुरुदेशना,  
शुभंकरदीक्षा, अर्जुनस्य छगलत्वादि, मुन्युपदेशः, नर-  
सुन्दरदीक्षा, आगमाराधनं, सर्वार्थसिद्धे  
कायोत्सर्गदोषाः (व्यवस्था च) (गाथा ५६) ४१९  
रामनागदत्तकथा, शीलंघ्रशैले गमनं, महाबलकायोत्सर्गः,  
सर्पापराभवः, कायोत्सर्गभेदाः, कायोत्सर्गफलं, साकेते  
चन्द्रावतंसकः, प्रदीपाभिग्रहः, देवत्वं, दीक्षांमहिमा, अ-  
भिभवकायोत्सर्गकरणं, नागदत्तस्य प्रमादः, देवो, जय-  
विजयौ, अनन्तकेवली, जयस्य दीक्षा, कायोत्सर्गप्रमाणं ४२३

वृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ २२ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २३ ॥

ध्येयस्यानियमः, शशिनृपकथा, सिद्धपुरे सुरप्रभः, शशि-  
कुमारः, बहुरूपो वराहः, मुनेर्गृहिधर्मग्रहणं, मुनिदेशना,  
(कायोत्सर्गमानफले) उदितोदयः, श्रीकान्ता, धर्मरुचि-  
याञ्जा ससैन्यस्यागमः, नृपभावना, अभिभवकायोत्सर्गः,  
वैश्रमणागमः, पीडानिषेधनं, ससैन्यपरावृत्तिः, सुरप्रभस्य  
निर्वासनं, तापसदीक्षा, व्यन्तरः, लीनं दृष्ट्वाऽनुमोदनं  
स्तोत्रस्वरूपं (गाथा ५८)

४२८

विजयकुमारकथा, चक्रपुर्यां बलभद्रः, श्रीगुप्तः कृपणः,  
विजयः सुतः, निधिखननं, जीर्णोद्धारचिन्ता, जयन्त्यां भू-  
तिलः, श्रीपतिव्यन्तरपराभवः, राज्ञे निवेदनं, राजनिध्य-  
धिष्ठायकाः, शान्तिजिनचैत्योद्धारः, चौररक्षा, युगन्धर-  
योगी अदृश्यांजनं, शान्तिस्तुतिः (अन्त्येयुगमं) स्व-  
चस्त्रिनिवेदनं, शान्तिचैत्योद्धारः, दशग्रामार्पणं, चारुतो  
दीक्षा, मिथुनरागाद्भूतता, स्वयंभूदत्तः, निर्वासनं, काम-

रूपे योगित्वं, कथननिषेधः, दीक्षा, शासनदर्शनात् प्रती-  
तिः, स्वयंभूदचोपदेशः, नृपस्य देशविरतिः, ग्रामदशका-  
र्पणं, सम्मेते मोक्षः, विजयः सौधर्मे

चैत्यवन्दनसप्तकं (गाथा ५९)

४३५

चैत्यवन्दनस्यावश्यकता

४३५

चैत्यावंदने प्रायश्चित्तं

४३५

गृहचैत्यवंदनसंख्या (गाथा ६०)

४३६

चैत्यवंदनत्रयनियमः, कान्तिश्रीकथा, शत्रुञ्जयवर्णनं, पुण्ड-  
रीकस्वाम्यागमः, सपुत्रिकायाः स्त्रिया आगमः, दुष्कृतप्रश्नः,  
धनावहः श्रेष्ठो, चंद्रश्रीमित्रश्रियौ, मर्यादाभङ्गे पतिशिक्षा,  
कार्मणं, दौर्भाग्यार्जनं, कान्तिश्रीपुत्रीत्वं, पुत्रीदुःखं, पाश-  
निवारणं, प्रव्रज्याऽनशनामिलापः, व्यन्तरस्थितिपृच्छा,  
निर्धनो धनः दीक्षा, रोपादयो दुर्गुणाः, विनयफलं, युगपत्सं-  
लेखनाऽनशने, व्यन्तरत्वं, पश्चात्तापः, वैयावृत्त्यं, पुण्ड-

वृहद् विष-  
यानुक्रमः

॥ २३ ॥

दे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सपा  
चाविधौ  
॥ २४ ॥

रीकरणधरस्तुतिः, सोपक्रमनिरुपक्रमकर्मणी चैत्यवदना-  
नियमः, पुण्डरीकमोक्षः, तीर्थोत्पत्तिः, कान्तिश्रिया मोक्षः,  
आशातनात्यागः (गाथा ६१)

४४२

प्रभावतीकथा, चम्पाया कुमारनन्दी, हासाप्रहासागमनं,  
भारण्डेन पञ्चशैले, चम्पोघाने मोचन, अग्निसाधनारम्भः,  
नागिलोपदेशः, नागिलप्रज्या अच्युतदेवः, पटहलगन,  
कायोत्सर्गस्थवीरप्रतिमा, वीतभये पेटार्पणं, परशुवहना-  
भावः, प्रभावत्या गमन, देवतायतन, रात्रौ नाटयं, आ-  
शातनाश्वतुरशीतिः, मरणभयाभावः, वस्त्ररक्तेश्चणं, प्रज-  
ज्या, सौवर्मे देवः, तापसव्यथा, मुन्याश्वासनं, प्रति-  
बोधः, गान्धारश्रावकः, चैताढ्ये प्रतिमावन्दन, स्तवस्तुति  
भिरहोरात्र, अष्टशतगुटिकार्पण, वीतभये ग्लानता, गुटि-  
कार्पणं, सुवर्णगुटिकाप्रसिद्धिः, प्रद्योतनेच्छा, सुवर्णगुलि-  
काहरणं, प्रतिज्ञालोप, प्रद्योतपराजयः, भाविपाशूपद्रवः,

दशपुर, रसवतीपृच्छा, क्षामणं, पट्टबंधः उदायनधर्मजा-  
गरिका, जामेयाय राज्यदान, दधिग्रहणं, त्रिविपापहारः,  
मोक्षः, कुलालः कुम्भकारकटे,

चैत्यवन्दनकरणविधिः (गाथा ६२)

४५०

चैत्यवन्दनं, स्तुतिविधिः,

उपसंहारः (गाथा ६३)

४५३

चैत्यवदनाफलं, मेघरथकथा, पुण्डरीकिण्यां घनरथः,  
मेघरथकुमारः, कुकुटयुद्धं, धनप्रसुदत्तौ, एकद्रव्याभिलापः,  
विद्याधराधिष्ठितौ, चन्द्रसरकुमारौ, सागरचन्द्रः, पूर्वभव-  
प्रश्नः अभयघोषविजयवैजयन्ताः, अनन्तजिनागमः, प्रज-  
ज्या, जिनत्व, अच्युते, अभयघोषस्य घनरथता, विजय-  
वैजयन्तौ विद्याधरौ, जातिस्मरणं, भूतप्रभू, जगदाभोग-  
प्रार्थना, कनकगिर्यादिचैत्याना वन्दनं, प्रेक्षणके भूतम-  
हिमा, युग्मप्रश्न, विद्युद्रथदीक्षा, सिंहरथस्य देशनाभि-

बृहद् विप-  
यानुक्रमः

॥ २४ ॥

श्रीदे०  
चेत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २५ ॥

लापा, अमितवाहनजिनात् श्रवणं, विमानस्वलनं, वामक-  
राक्रमणं, करुणा, नाटयं, रज्जुगुप्तशंखिके, सर्वगुप्तमुनिः,  
द्वात्रिंशत्कल्याणतपः, धृतिधरप्रतिलाभनं, आचामाम्लव-  
र्द्धमानतपः, ब्रह्मलोके देवः, निर्वाणगामिनौ, पौषधः,  
पारापत्तागमः, श्येनशिक्षा, श्येनप्रार्थनादि, स्वमांसार्पणं,

मन्त्रिवचः, देवप्रादुर्भावः, प्रशंसाऽसहनं, पथी, देवपूर्व-  
भवः, सागरदत्तविजयसेने, धनप्रभनन्दनौ, रत्नार्थे युद्धं  
श्येनपारापत्तौ, सुभगायां अपराजिताऽनन्तवीर्यौ, अष्टापदे  
सुरूपः, देवः, जातिस्मरणं, भवनपतिषु, घनरथागमः,  
प्रव्रज्या, जिनत्वं, सिंहनिक्रीडिततपः, सर्वार्थे, शांतिजिनः ४६२

इति श्रीसंघाचारविधेर्वृहद्विषयानुक्रमः

### श्रीसंघाचारदृष्टान्ताः

अर्हद्वंदनादेर्मंगलत्वे श्रीविजयनृप- कथा	पत्रांकः ५	फलबलिनैवेद्यपूजायां मृगब्राह्मण- दृष्टान्तः	६८	सिद्धावस्थायां सुमतिकथा	११०
परम्परायां मृगावतीदृष्टान्तः	१६	हरिकूटपर्वतसम्बन्धः	८५	त्रिदिग्निरीक्षणविरतौ गान्धार- श्रावककथा	११५
नैपेधिक्यां भुवनमल्लकथा	३६	नमिबिनमिदृष्टान्तः	९१	गमनागमनालोचने पुष्कलीश्रावक- कथा	१२३
प्रणामे विजयदेवकथा	५५	प्रातिहार्ये देवदत्तकथा	१००		

क्रम-  
दृष्टान्ताः

॥ २५ ॥

श्रीदे०  
चंत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २६ ॥

वर्णादित्रिके चन्द्रनरेन्द्रकथा	१२७
मुद्रायां धर्मरुचिकथा	१३५
प्रणिधानत्रिके नरवाहनकथा	१४२
अभिगमे श्रीपेणश्रीपतिकथा	१५४
दिग्निगमे श्रीदत्ताकथा	१६०
अवग्रहे अमिततेजःकथा	१६७
चैत्यवंदने रत्नसारकथा	१८४
पञ्चाङ्गप्रणामे सुरेन्द्रदत्तकथा	१९७
द्रव्यजिनवंदने विजयकुमारकथा	२०२
अधिकाक्षरदोषे कुणालकुमारकथा	२०८
परमेष्ठिफले बन्धुदत्तकथा	२१९
प्रणिपाते सोमसुरकथा	२४५
जिनाचार्यत्वे स्कन्दकमुनिकथा	२५०
प्रणिपाते विक्रमसेनकथा	२७२

कायोत्सर्गे विलातिपुत्रकथा	२७९
अष्टापदे भरतचक्रिकथा	३०४
प्रदीपफलनैवेद्यपूजायां भानुश्रेष्ठि- कथा	३१४
समाधौ जिनदत्तकथा	३२५
प्रमादे अशकटापिताकथा	३२९
महावीरत्वे आमलकीक्रीडा	३३३
उज्जयन्तगाथायां धनश्रेष्ठिकथा	३३५
अष्टापदवन्दनप्रबन्धः	३३८
प्रणिधाने दर्दुरांककथा	३४२
अधिकाक्षरदोषे कुणालकुमारकथा	३४७
दण्डकैर्वन्दने गुणसागरकथा	३५१
पुष्करणीदृष्टान्तः	३५१
अधिकारिपु बलिदत्तकथा	३५८

सुरदेवदृष्टान्तः	३६३
निनादीनां वन्द्यत्वे सुमतिकन्याकथा	३६६
देवानुशास्ती मनोरमाकथा	३७२
द्रव्यजिनाराधने ईश्वरराजकथा	३७६
औचित्ये मथुराक्षपककथा	३८६
सुरस्मरणे श्रीगुप्तश्रेष्ठिकथा	४००
निमित्तेषु सुदर्शनकथा	४१०
आकारेषु नरसुन्दरकथा	४१४
कायोत्सर्गे रामनागदत्तकथा	४२०
कायोत्सर्गमाने शशिनृपकथा	४२४
स्तोत्रे विजयकुमारकथा	४२८
त्रिकालचैत्यवंदने कान्तिश्रीकथा	४३६
आशावनात्यागे प्रभावतीकथा	४४३
चैत्यवन्दनफले भैरवकथा	४५८

—\*—

दृष्टान्ता-  
सुक्रमः

॥ २६ ॥



स्तुतिस्थानानि

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २७ ॥

श्रीश्रेयांसनाथस्तुतिचतुष्कम्	पत्र १९	समवसरणप्रकरणम्	१०५	नेमिजिनस्तुतिः	२२२
पंचपरमेष्ठिस्तुतिः	१२	श्रीपार्श्वस्तुतिः	११३	श्रीपार्श्वस्तुतिः	२२५
श्रीवीरस्तुतिः	२२	चतुर्विंशतिस्तुतिः	११६	गुरुस्तुतिः	२७६
श्रीऋषभस्तुतिः (अर्घसंस्कृते)	३९	मल्लीजिनस्तुतिः	१२९	सूरिस्तुतिः	३५०
युगादिदेवस्तुतिः	५१	श्रीशान्तिस्तुतिः	१७२	स्तुतिचतुर्विंशतिः	३९५
चित्रस्तुतिः (चतुष्कम्)	५९	शत्रुञ्जयवर्णनं	१९०	शान्तिनाथस्तुतिः	४३१
जिनस्तुतिः (चतुष्कम्)	८०	स्तुतिचतुर्विंशतिका	१९१	शत्रुञ्जयवर्णनं	४३६
स्तुतिचतुष्कम्	८८	चतुर्विंशतिस्तुतिः	२०५	पुण्डरीकगणधरस्तुतिः	४००
श्रीऋषभस्तुतिः	९५				



श्रीदे०  
वैल्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ २८ ॥

## देवगुरुस्तुतयः

अस्सेयदेविं दलियं वमुची, सेजं समेयं सुयधम्मकित्तिं । करिसुमेयं जमिहं अविजाणंदोलगिण्हंपि तमज्ज ! कुज्जा ॥ ८८ ॥ जे धम्मकित्तिसिवसंतिविमुत्तिविजाणंदप्पयाणप्पणिहाणविहाणसज्जा । देविंदविंदपरिविंदपयारविंदा, ते मुत्तिजुत्तिमिहं दित्तु जिणिंदचंदा ८९ । तेसिं सप्पुस धम्मकीत्तियमिणं देविंदचक्कित्तणं, संपुण्णेरियाहसाहणगुणं लोगुत्तमुत्तित्तणं । विजाणंदपहाणमुत्तियवीसंपायणं सव्वया, ज्ञायंतीह जिणिंदचंदवयणं जे सव्वया सव्वया ॥ ९० ॥ निच्चं देविंदसूरी जियमइविहवा जे सुयंगीइ नामं, ज्ञायंता हुंति सत्ता तमतिमिरभिया धम्मकित्तिल्लयं तं । जं पारीणत्तणं भोधि विय अहरा सव्वसत्थुत्तमाण, विजाणंदे व एसा जिणवरवयणे भत्तिराणं नराणं ॥ ९१ ॥ पत्र ११

देवेन्द्रादिनमस्कृतानथ नृपः स्तौत्यर्हतः सिद्धमद्विद्यानंदसुखाद्यनंतकविधान् सिद्धान् समृद्धान् शुभैः । आचार्यान् श्रुतधर्मधोषणगुणान् स्वाचारचारून् सदोपाध्यायान् यतधर्मकीर्तितविधेः साधून् समासाधकान् ॥ १११ ॥ पत्र १२

जयश्रीसर्पसिद्धार्थ !, सिद्धार्थनृपनंदन ! । सुमेरुधीरगंभीर !, महावीरजिनेश्वर ! । ११७ ॥ योऽप्रमेयप्रमाणोऽपि, सप्तहस्तप्रमोमतः । पूर्णेन्दुवर्णवर्णोऽपि, स्वर्णवर्णः सुवर्णकः ॥ ११७ ॥ सदृशं कौशिके शक्रे, सर्पे च क्रमसंस्पृशि । पीयूषवृष्टिसृष्ट्या यं, दृष्ट्या दिष्ट्या विदुर्बुधाः ॥ ११८ ॥ विष्टपत्रितयोत्संगरंगदुत्तुंगकीर्तिना । सनाथं येन नाथेन, विश्वं विश्वंभरातलम् ॥ ११९ ॥ यस्मै चक्रे नमः सेवाहेवाकोत्सुकमानसैः । वीराय गतवैराय, मर्त्यामर्त्यासुरेश्वरैः ॥ १२० ॥ यस्माद् विपादयो दोषाः, क्षिप्रं क्षीणाः क्षमाखनेः ।

स्तुतयः

॥ २८ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ २९ ॥

दोषापूपमयुखेभ्यः, इह हर्यक्षलक्षणात् ॥ १०१ ॥ यद्देहद्युतिसन्दोहे, संदेहितपुर्दधौ । रविः स्वद्योतपोतद्युत्याडंबरविडंबनाम्  
॥१०२॥ भविनां यत्र चित्तस्थे, स्युर्धीश्रीवृद्धिसिद्धयः । तं वर्धमानमानौमि, त्वां वर्धमानभावनः ॥ १०३ ॥ इति यस्तव स्तवं  
पठति वीरजिनचंद्र ! जातरोमांचः । सोऽर्च्यपवर्गमखर्वगर्वसर्वारिवर्गजयी ॥१०४॥ पत्र २२

विश्वत्रयैकदर्शन ! सहस्रदर्शननतक्रमजिनेन्द्र ! । सवणंतपत्तदंसण ! अणंतदंमण चिरं जयसु ॥२३॥ पूर्वाकृतसुकृतानां पूर्वा-  
शीलितविशुद्धशीलानाम् । अविहितवाण पुन्वि न होइ तुह दंसणं चेव ॥५४॥ भवशतकृतमपि पापं त्वदर्शनतो विलीयते नाथ ! ।  
पिंडीभूअंपिघ घयं दुअं जहा जलिरजलणाओ ॥५५॥ समयोऽयमेव शस्यः सलक्षणोऽसौ क्षणस्तदहरनघम् । पक्खोऽवि सो सपक्खो  
जयबंधव ! दीससे जत्थ ॥५६॥ द्रष्टुमदृष्टे वांछा दृष्टे त्वयि नाथ ! विरहजं दुःखम् । इय जइ दुहावि न सुहं तहावि तुह दंसणं  
होउ ॥५७॥ पूर्वार्जितसुकृतकृतं भाविशुभनिबंधनं हरति चैनः । इय कालचयसुहयं जियाण तुह दंसणं दुलहं ॥५८॥ स्वामिन् !  
स्वदर्शनं कुरु तथा यथा स्यात् पुनर्न तदभावः । जचंधवेयणाओ चक्खुक्खयवेयणा दुसहा ॥५९॥ नामापि नाथ ! यस्ते वरमंत्र-  
सधर्मं कीर्त्तयति तस्य । मिच्छादंसणदोसो लहु नासइ किं परं भणिमो ? ॥ ६० ॥ य इति जिन ! त्वामन्यूनदर्शनं न्यूनदर्शनो  
नौति । स विशुद्धदर्शनः श्रयति सत्वरं सर्वदर्शित्वम् ॥६१॥ पत्र ३९

सज्ज्ञानलक्ष्याः सुनिवेशनार्थं, सन्मंडपत्याशु समा(दा)गमोत्था । लसद्यदंसोपरि केशवल्ली, सदा मुदे वः स युगादिदेवः  
॥७१॥ त्रैलोक्यलक्ष्म्या वृतये स्वयं या, सन्मंडपत्यार्हतचैत्यराजी । साऽनित्यनित्या नमतां नृणां स्यादनित्यनित्याय सुखाय नित्यम्  
॥७२॥ अनित्या-कृत्रिमा नित्या-शाश्वता अनित्यं सुखं स्वर्गान्तं नित्यं मुक्तिसंभवं । सत्तीर्थलक्ष्म्या विशतौ हि रंगात्, श्रीमंड-

स्तवस्तुतयः

॥ २९ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३० ॥

पत्यास्तृतस्रत्रितं यत् । तदस्तु मे जैनीवचः प्रपंचि, सुवाचनं प्रावचनं सुवाचौ ॥७३॥ श्रीसंधलक्ष्म्या सुचिरं सदा ये, समंडपंतीह  
सुरासुरीभिः । संख्यावृतव्यावृतभावभावाः, सुदृष्टयः संतु सुदृष्टये ते ॥७४॥ पत्र ५२

श्रस्ताशमष्टितसुमहिमात्रीरितस्वांतजन्मावाधासिंधुप्रतरणसहावासनावस्थितानाम् । अप्येको द्वौ किमुत बहवो वाऽनिशं ध्येयभावं,  
गाते येषां जिनवरवृषा वृद्धये किं न तेषां ? ॥ १ ॥ दूरापास्तसमस्तकुत्सनतमावीताखिलांतारजावामोह्लासविलासशोभनमहावृद्ध्य-  
ग्रिमौकावरम् । स्फूर्जद्भावपभाभिरामनयनिर्दग्धाशुभैधावरं, गातामेक उभौ समे जिनवृषा वृद्धं प्रसादं मम ॥२॥ संप्राप्तश्रद्धसीमाव-  
तनुसुमुखमावर्यमद्वैतधामावीक्ष्यातीतासहेमाविततदुरितहावृष्टमासावितारं । एको द्वौ वाऽपि सर्वे प्रतिदिनमरिहा वाञ्छितश्रेयसे द्राक्,  
प्रज्ञासश्रीललामावरमिह भविनामीशतान्नम्रकाणां ॥३॥ इत्येको द्वौ समे वा त्रिभिरभियतिभिः काव्यराजैः क्रियादिश्लेषैः श्रीधर्म-  
घोषैरभिनुतमहिमावर्यभावप्रकाशैः । त्रिञ्छ्रीदंडकैर्वांतररिपुविजयन्यस्तविश्वत्रयांतः, कीर्तिस्तंभैरिव श्रीजिनवरवृषभावीक्षयाध्या-  
सतां मां ॥ ४ ॥ पत्र ५९

सिरिविज्ञाणंदपरा सेवंति जणंपि सेविणं जस्स । तमहं सधम्मकीत्तिं देविंदणयं थुणामि जिणं ॥ २०० ॥ सुयधम्मकीत्ति-  
नयमयविज्ञाणं देसए सया विसए । वंदे विंदेण सुराण वंदिए सव्वजिणचंदे ॥२०१॥ देविंदाइपयं तिणसधम्मकित्तियमिमस्स जो  
निचं । ज्ञायइ जिणिंदवयणं वरविज्ञाणंदपयकरणं ॥२०२॥ समरह सुयदेविं देहि मोहहरधम्मकित्तियं जीए । नामंपि ठाणमागम-  
विज्ञाणं देइ सन्नाणं ॥२०३॥ देवेन्द्रवन्द्यो जिनसर्वविद्यानंदं विधत्ते त्वयि वीक्षते यः । सदा समासादितधर्मकीर्तिः, शिवं श्रये-  
ताशिवशासनेऽसौ ॥ १ ॥ ते सर्वदेवेन्द्रगुरोः सविद्या, नंदन्ति नूनं सुमनःसमासु । ये दर्शितार्थं श्रुतधर्मकीर्तान् !, नमन्ति देवान्

स्तवस्तुतयः

॥ ३० ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३१ ॥

परमात्ममूर्तीन् ॥ २ ॥ यद्भक्तितः श्रीरपि सार्वविद्यानंदस्थितं पुंसि सधर्मकीर्त्तौ । ससंपदेवेन्द्रवति प्रकामं, तस्मै नमो जैनवराग-  
माय ॥ ३ ॥ तेषां मुदेऽवेन्द्रसधर्मकीर्त्ते, वलक्षमूर्त्ते श्रुतदेवते त्वम् । ये ते गुणानस्तविसार्यविद्यानंदोलयंति स्तवनेन नित्यम्  
॥ ४ ॥ पत्र ८८

सुइकसिणचउत्थीए उचरसाढाहिं जो सुरिंदेहिं । कहिओ मरुदेवीए ओयरिओ भावितिजयपहू ॥८३॥ चित्तकसिणट्टमीए  
जं जम्मणमज्जणकखणे सव्वे । सुरसेले भत्तीए ष्हविंसु पइंसु देविंदा ॥८५॥ जेण हरिविहियरजाभिसेयविहिणा अहेसि जयपहुणो ।  
इह वसुमई वसुमई सुनयसणाहा मणाहा य ॥ ८५ ॥ रजावसरे चिरधरियनलिणिपत्ताभिसेयसलिलेहिं । मिहुणेहिं न्हवणगेहि व  
जप्पयपउमा य अभिरुइया ॥८६॥ नाणं वरविज्जाणं कलाउ सकला जओ पहुत्तंसा । रजं पहुत्तसज्जं पावेसि जणो य सयणो य  
॥८७॥ लोयंति मग्गणा इव नमज्जणा सज्जणा न के हुज्जा ? । संवच्छरियमयुच्छं किमिच्छियं जस्स दिंतस्स ॥८८॥ चित्ताइमट्ट-  
मीए महया महयामि गिण्हिरे जंमि । के के न बुहा विबुहा महिमं महिमंडले कासी ? ॥८९॥ सो जयउ दुविहमोणो अज्जो अज्जे  
जणंतुणजेवि । कइया पुण दच्छामो तं तिजइदं तिजयभाणुं ? ॥ ९० ॥ तेण अदेवावि जणा देवाविय दिव्वरिद्धिणो विहिया ।  
होउ तया य सयाविहु नमो नमो नमिरअमराय ॥ ९१ ॥ तत्तो तत्तवाओ हुत्था सत्थावि अत्थसुकयत्था । तस्सेव किंकरा मो  
दासा पेसा य मिचा य ॥९२॥ तंमि छउमत्थवत्थे विहरंते महियलं पवित्तंते । वरधम्मकित्तिपत्ता होउ सुभत्ती सया अम्ह ॥९३॥  
इय सत्तविभत्तिविभत्तिविभत्तिभत्तीइ संथुओ रिसहो । वियरउ संपइ संपइ सया विभत्तिं गयविभत्तिं ॥९४॥ पत्र ९५

युणिमो केवल्लिऽवत्थं वरविज्जाणंदधम्मकित्तित्थं । देविंदनयपयत्थं तित्थयरं समवसरणत्थं ॥१॥ पयडियसमत्तभावो केव-

स्तवस्तुतयः

॥ ३१ ॥

दि०  
चैत्य० श्री-  
मर्म० सघा-  
चारविधौ  
॥ ३२ ॥

लिभायो जिणाण जत्थ भवे । सोहिंति सव्वओ तहिं महिमाजोयणमनिलकुमरा ॥२॥ वरिसंति मेहकुमरा सुरहिजलं उउसुरा कुमुम-  
पसर । विरयंति वणा मणि१ कणय२ रयण३ चित्त महियलं तो ॥३॥ अन्भितर१ मज्झ२ वहिं३ तिउप्प मणि१ रयण२ ऋणय३-  
कविसीसा । रयणज्जुणरुप्पमया वेमाणियजोडभवणऊया ॥४॥ वडुंमि दुतीसंगुल तिचीसधणुपिहुलपणमयधणुचा । धणुसयइग-  
कोसंतरालरयणमयचउदारा ॥५॥ चउरसे इगधणुसयपिहुवप्पा पढमवीय अतरयं ( सडुकोसअतरिया प्र० ) । कोसद्वं विइ तइए  
( पढमवियाविपतइया प्र० ) कोसंतर पुव्वमिव सेसं ॥६॥ सोवाण सहस्मदसररपिहुच गंतुं भुवो पढमवप्पो । तो पन्नाधणुपयरो तओ  
य सोवाणपणसहसा ॥७॥ तो वियवप्पो पन्नाधणुपयरु सोवाणसहस्सपण ततो । तइओ वप्पो छमहस्सधणु इगकोसेहिं तो पीढं  
॥८॥ चउदारतिसोवाणं मज्जे मणिपेढियं जिणतणुचं । दो धणुसयपिहु दीहं सडुदुकोसेहिं धरणियला ॥९॥ जिणतणुचारगुणुचो  
समहियजोयणपिहु असोगतरु । तहिं होइ देउछंदे चउ सीहामण सपयपीढा ॥१०॥ तदुवरि चउछत्तिया पडिरुवतिगं तइडुचम-  
रधरा । पुरओ कणयकुसेसयडियफालियधम्मचक्कऊ ॥११॥ झयछत्तमयरमंगलपंचालीदामवेइवरकलसे । पडदार मणितोरणतिय  
धूवचडी कुणति वणा ॥१२॥ जोयणसहस्सदंडा चउज्झया धम्ममाणगयसीहा । ककुभाइजुआ सव्वं माणमिणं जिण ( निय प्र० )  
निअरुरेण ॥१३॥ पविसिय पुव्वाइ प्ह पयाहिणं पुव्वआसणनिविट्ठो । पयपीढ ठविअ पाओ पणमियतित्थो कइइ धम्मं ॥१४॥  
मुणि १ वेमाणिणि २ समणी ३ सभवण १ जोइ २ वण ३ टेव ३ देवितियं ३ । कप्पसुर १ नरित्थि ३ तियं ठंतिऽग्गेयाइ-  
विदिसासु ॥१५॥ चउदेरि समणि उद्धट्ठिया ५ निविट्ठा नरित्थि सुरममणा ७ । इय पण सग परिस सुणंति देसणं पढमवप्पंतो  
॥१६॥ इय आवस्सवुत्तीवुत्तं चुत्तीइ पुण मुणि निविट्ठा । वेमाणिणि समणी दो उद्धा सेमा ठिआ उ नय ॥१७॥ वीयंतो तिरि

स्तनस्तुतयः

॥ ३२ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३३ ॥

ईसाणी देवच्छंदो य जाण तइयंतो । तह चउरंसे दुदुवावि कोणेसु उ वट्टि इक्किा ॥१८॥ पीयसियरत्तसामा मुरवणजोइभवणा  
रयणवप्पे । धणुदंडपासगयहत्थसोमजमवरुणधणदक्खा ॥१९॥ जयविजयाजियअवराजियत्ति सियअरुणपीयनीलाभा । बीए देवी-  
जुअला अभयंकुसपासमगरकरा ॥ २० ॥ तहय बहि सुरा तुंबरु ? खग्गं(कुं)गि २ क्वाल ३ जडमउडधरा ४ । पुब्बाइदारवाला  
तुंबरुदेवो य पडिहारो ॥२१॥ सामन्नसमोसरणे एस विही एइ जइ महिद्धिसुरो । सव्वमिणं एगोऽविहु स कुणइ भयणेपरमुरेसुं  
॥२२॥ पुब्बमजायं जत्थ उ जत्थेइ सुरो महिद्धिमघवाई । तत्थोसरणं नियमा सययं पुण पाडिहेराइं ॥२३॥ दुत्थियजणपत्थिय-  
अत्थसत्थसाहणपच्चलसुसमत्थो । इत्थं थुओ लहु जणं तित्थयरो कुणउ सपयत्थं ॥२४॥ समवसरणस्त्वन्नं समाप्तम्

विध्वस्ताखिलकर्मजालममलज्ञानं लसद्दशनं, ज्योतीरूपमरूपगंधमरसं स्पर्शादिभिर्वर्जितम् । सिद्धावस्थमवस्थितातुलसुखं वयै-  
कवीर्यात्मकं, निःसीमातिशयप्रभावभवनं श्रीपार्श्वनाथं स्तुवे ॥४५॥ कायं ते जिनराजराजिकिरणग्रामाभिराम स्तवः?, काहं प्रातिभ-  
सौरमस्फुरदुरुप्रज्ञाविहीनः प्रमो! । किंतु त्वद्गुणराशिरक्तहृदय स्तोत्रप्रवृत्तोऽस्म्यहं, शक्याशक्यविचारणासु विकलः प्रायो हि  
रागी जनः ॥४६॥ विध्वस्तामय! निर्जितेन्द्रियहय! प्रक्षीणकर्माशय!, श्रीलीलालय! निर्मितस्मरजय! स्याद्वादविद्यामय! ।  
मिध्यात्वप्रलय! प्रहीणविषय! स्फूर्जत्त्रिलोकीदय!, श्रीपार्श्व! स्मररोप! दोषकुनयध्वंसिन्! सदा त्वं जय ॥४७॥ किं कारु-  
ण्यणी? किमुत्सवमयी? किं विश्वमैत्रीमयी?, किं वाऽऽनंदमयी? किमुन्नतिमयी? किं सौरूपरेखामयी? । इत्थं यत्प्रतिमां समीक्ष्य  
भविनश्चेतश्चिरं तन्वते, स श्रीपार्श्वजिनस्तनोतु विशदश्रेयांसि भूयांसि वः ॥४८॥ आधिग्याधिविरोविषारिधियुधि व्यालस्फुटा-  
लोरगे, भूतप्रेतमलिम्लुचादिषु भयं तस्येह नो जायते । नित्यं चेतसि पार्श्वनाथ इति हि स्वर्गापवर्गप्रदं, सन्मंत्रं चतुरक्षरं प्रति-

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३३ ॥

धोः०  
 धैत्य० श्री-  
 धर्म० गवा-  
 धारविधौ  
 ॥ ३४ ॥

कलं यः पाठमिदं पठेत् ॥४९॥ त्वं देवः शरणं त्वमेव जनकस्त्वं नायकस्त्वं गुरुस्त्वं बंधुस्त्वमसि प्रभुस्त्वमभयस्त्वं मे गतिस्त्वं  
 मतिः । तत् किं पार्श्वनिभो ! पुरःस्थितमपि त्वत्सेवकं किंरु, मामद्यापि लसद्दयारसिकया दृष्ट्याऽपि नो वीक्षसे ? ॥५०॥ शस्योऽयं  
 गमयः धणोऽयमनघः पुण्या त्रियं शर्षरी, श्लाघ्योऽयं दिवमो लभोऽयममलः पक्षोऽयमर्चास्पदम् । मामोऽयं विशदः समाः स्फु-  
 टमिमाः श्रीपार्श्वविश्वप्रभो !, यत्र त्वद्भजनं व्यलोक्यत मया निःशेषसौरुयाऽहम् ॥ ५१ ॥ धन्योऽहं कृतकृत्य एष नृमनस्तीर्णो  
 भवांभोनिधिर्घ्नस्तातरवैरिवारिपयो लब्धस्त्रिलोकोत्सवः ! श्रीमत्पार्श्वनिभो ! सदा त्रिजगतीविश्रामभूरप्यहो, यस्त्वं हंस इवाधुना  
 विदधसे मन्मानसे सस्थितिम् ॥ ५२ ॥ इत्थं त्वां नितधर्मकीर्तिभवनं स्तुत्वेदमभ्यर्थये, श्रीमत्पार्श्वजिन ! त्वयाऽपि हि सदा यस्मै  
 कृते तत्त्वजे । प्राज्यं राज्यमनाविला च कमला शुद्धातपंध्वादिकं, विश्रानंदपदाय मुस्पृहयति त्यस्मै मदीयं मनः ॥५३॥ ११३

नमाखंडलमौलिमंडलमिलन्मंदारमालोच्छत्सांद्रामद्रमरदपूरसुरभीभूतक्रमांभोरुहान् । श्रीनाभिप्रभवप्रभुप्रभृतिकांस्तीर्थकरान्  
 शंकरान्, स्तोप्ये माप्रतकाललब्धजनान् भक्त्या चतुर्विंशतिम् ॥ ? ॥ नंदान्नाभिसुतः सुरेश्वरनतः संपारपार गतः, क्रोधाद्यै-  
 रजितं स्तुत्वेऽहमजितं त्रैलोक्यसंपूजितम् । सेनाबुद्धिभयः पुनातु विभवः श्रीशंभयः संभयः, पायान् मामभिनंदनः सुभदनः स्वामी  
 जनानंदनः ॥ २ ॥ लोकेऽयः सुमतिस्तनोतु मम निःश्रेयःश्रियं मन्मतिर्दभद्रोः कलभं मदेभशरभं गस्तौमि पद्मप्रभम् । श्रीपृथ्वी-  
 तनयं सुपार्श्वमभयं वदे विलीनामयं, श्रेयस्तस्य न दुर्लभं शशिनिभं यः स्तौति चंद्रप्रभम् ॥३॥ बोधिं नः सुविधे ! विधेहि सुविधेः  
 कर्मद्रुमौषधे, जीयादंजुजकोमलकमतलः श्रीमान् जिनः शीतलः । श्रीश्रेयांस ! जय स्फुरद्गुणचयश्रेयः श्रियामाश्रयः, संपूज्यो  
 जगतां श्रियं वितनुतां श्रीप्रामुष्यः मताम् ॥४॥ मोक्षं मे विमलो ददातु विमलो मोहांतु राहानिलोऽनंतोऽनंतगुणः सदा गतरणः

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३४ ॥



श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ३५ ॥

कुर्यात् क्षयं कर्मणः । धर्मो मे विपदं च्युताच्छिन्नपदं दद्यात् सुखैकास्पदं, शान्तिस्तीर्थपतिः करोत्विभगतिः शान्तिं कृतांतक्षितिः  
॥५॥ कुंभुर्मेघरवो भवादवतु वो मानेभकण्ठीरवो, भक्त्या नम्रतरामरं जिनवरं प्रास्तस्मरं नौम्यरम् । श्रीमल्लेखनतक्रमोज्झिततमो  
मल्लेस्तु तुल्यं नमो, विश्वाचर्यो भवतः स पातु भवतः श्रीसुव्रतः सुव्रतः॥६॥ लोभांभोजतमेश्वरोपम ! नमे ! धर्मे धियं धेहि मे,  
वंदेऽहं षुपगामिनं प्रशमिनं श्रीनेमिनं स्वामिनम् । श्रीमत्पार्श्वजिनं स्तुवेऽस्तवृजिनं दान्ताक्षदुर्वाजिनं, नौमि श्रीत्रिशलांगजं गतरुजं  
मायालताया गजम् ॥७॥ इत्थं धर्म्यवचोवितानरचितं वर्यं स्तव्यं मुद्युतः, सद्धर्मद्रुमसेकसंवरमुचां भक्त्यार्दतां नित्यशः । श्रेयःकी-  
र्तिकरं नरः स्मरति यः संसारमाकृत्य सोऽस्तीतार्तिः परमे पदे चिरमितः प्राप्तोत्यनंतं सुखम् ॥८॥ कर्तुनामगर्भाष्टदलकमलं ॥

जिन ! तव गुणकीर्त्तं ! विश्वविध्वस्तकीर्त्तं !, विगलदपरकीर्त्तेर्यद्गिरा धर्मकीर्त्तं ! सितकरसितकीर्त्तं ! शुद्धधर्मैककीर्त्तं, स्तु-  
तिमहमचिकीर्त्तं तां कृतानंगकीर्त्तं ! ॥१॥ जय षुपभजिनामिष्टूयसे निम्ननाभिर्जडिमरविसनाभिर्यः सुपर्वांगनाभिः । तम इह किल  
नाभिक्षोणिभृतसुनुनाभिद्रुतध्रुवनमनाभि शान्तिसंपत्कुनाभिः॥२॥ प्रकृष्टितृपूरूप ! त्यक्तनिःशेषरूपप्रभृतिविषयरूप प्राप्तचैतन्यरूप  
जय चिरमसरूप पापपंकाभ्युरूप ! त्वमजित ! निजरूपप्राप्तसञ्जातरूपः॥३॥ जय मद्गजवारीसंभवांतर्भवारीव्रजभिदि हतवारिश्रीर्न  
केनाऽप्यवारि । यदधिकृतभवारिथंसनश्रीभवारिः, प्रशमशिखरिवारि प्राणमदानवारिः॥४॥ अकृतशुभनिवारं यत्र रागादिवारं, सुविन-  
तमघवारं संवराहः सुवारम् । मदनदहनवारं दोलितांतर्भवारं, नमत सपरिवारं तं जिनं सर्ववारम् ॥५॥ तव जिन ! सुमते ! नप्रत्यहं  
तन्यते न, स्तुतिरिति सुमतेन कच्चमोनिष्कृतेन । यदिह जगति तेन द्राग्मया संयमेन, ध्रुवमितदुरितेन श्रीश ! भाव्यं हि तेन ॥६॥ परिग-  
तनृपपद्म ! श्रीजिनाधीशपद्मप्रभ ! सदरुणपद्म द्युत्तमोहंसपद्म । त्वदखिलभविष्यत्रातसंधोधपद्म, स्वजनगतविषयाप्येऽनुशर्मा रूपद्म ॥७॥

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३५ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ३६ ॥

दुरितनिभगमोऽहंपूर्विकार्यक्रमोहं त्यजति समतमोऽहंकारजिघः समोहम् । कृतकरणदमो हंतास्तलोभं तुमोहं, मतिहतमगमोहं तं सु-  
पार्थं तमोहम् ॥९॥ समवृणमणिभाजः ज्ञातनिःशेषभाजः, प्रहतसकलभावप्रत्यनीकप्रभाव ! । कृतमदपरिभाव श्रीशचंद्रप्रभावद्विजयति  
तनुभावत्यक्तकामस्वभाव ॥९॥ जिनपतिसुप्रियेयः स्यात्प्रदाज्ञाविधेयप्रवण इह विधेयः प्रस्फुरद्भागधेयः । श्रीजगदनभिधेय श्लाघ-  
मन्नामधेयः, श्रयति शुभविधेयस्तं लमद्रूपधेयः ॥१०॥ य इह निहतकामं मुक्तराज्यादिकामं, प्रणतसुरनिकामं त्यक्तसद्भोगकामम् ।  
नमति स निजकामं शीतल ! त्वा प्रकामं, श्रयितकि तमकामं मार्तिका श्रीः स्वकामम् ॥११॥ विषमविशिषदोषा चारिचारप्रदोषा,  
प्रतिविधति सदोषाऽप्यस्य किं कालदोषा ? । य इह वदनदोषापार्चिषा क्षालिदोषा, तनुकमलमदोषा श्रेयसा शस्तदोषा ॥ १२ ॥  
कृतकुमतपिधानं मत्परश्रापिधानं, विहितदमविधानं त्रैलोकप्रधानम् । अममशमनिधानं शं जिनं संदधानं, नमत सदुपधानं वा  
सुपूज्याभिधानम् ॥१३॥ भयदवजलवाहः कर्मकुंभाद्यवाहः, शिवपुरपथवाहस्त्यक्तलोकप्रवाहः । विमल ! जय सुवाहः सिद्धिकांता-  
निवाहः, शमितकरणवाहः शांतवृद्धव्यवाहः ॥१४॥ जिनपर ! विनयेन श्रीशशुद्धाशयेन, प्रवरतरनयेन त्वं नतोऽनंत येन ! । भवि-  
कमलचयेन स्फूर्जर्जस्ययेन, द्विरदगतिनयेन त्वेन भाष्यं नयेन ॥१५॥ जडिमरविसधर्मन्नुक्तदानादिधर्मं, त्रुटितमदनधर्मं न्य-  
रुक्ताप्राज्ञधर्मं । जय जिनवरधर्म ! त्यक्तसंसारिधर्मं, प्रतिनिगदितधर्मद्रव्यमुख्यार्थधर्मं ॥१६॥ यदि नियतमशांतिं नेतुमिच्छो-  
पशांतिं, ममभिलपत शांतिं तद्विधा प्रतशांतिम् । प्रहतजगदशांतिं जन्मतोऽप्यात्तशांतिं, नमत विगतशांतिं हे जना देवशान्तिम् ॥१७॥  
ननु सुरवरनाथ त्वां ननाथे नृनाथ !, त्वमपि विगतनाथः किं त्वहं कुंथुनाथः । प्रकुरु जिन सनाथः स्यां यथाद्योपनाथ, प्रणतविबु-  
धनाथ प्राज्यसच्छिष्य(च्छ्रीश)नाथ ! ॥१८॥ अवगममवितार विश्वविश्वेशितार, तनुरुचिजिततार सदयासांद्रतारम् । जिनमभिन-

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ३७ ॥

मतारं भव्यलोकागतारं, यदि पुनरवतारं संसृतौ नेच्छतारम् ॥१९॥ अनिशमिह निशान्तं प्राप्य यः सन्निशान्तं, नमति शिवनिशांतं  
मल्लीनाथं प्रशान्तम् । अधिपमिह विशांतं श्रीर्गता चावशांतं, श्रयति दुरितशांतं प्रोज्ज्य नित्यं वशांतम् ॥ २० ॥ न्यदधत मघ-  
वा सत्प्रोच्छसत्शुद्धवासः, परिहृतगृहवामस्यांशके यस्य वासः । विहितशिवनिवासः प्रत्तमोहप्रवासः, समन इह भवासः सुव्रतो  
मेऽध्युवास ॥२१॥ समनमयत बालः शात्रवान् योऽप्यवालप्रकृतिरसितवालः श्रस्तरुक्चक्रवालः । जयतु नमिरवालः सोऽधरास्त-  
प्रवालः, श्वसितविजितवालः पुण्यवल्ल्यालवालः ॥२२॥ जितमदन मुने मे नानिशं नाथ नेमे !, निरुपमशमिनेमे येन तुभ्यं विनेमे ।  
निकृतिजलधिनेमे सीरमोहदुनेमे, प्रणिदधति न नेमे तं परा अप्यनेमे ॥२३॥ अहिपतिपृतपार्श्वं छिन्नसंमोहपार्श्वं, दुरितहरणपार्श्वं  
संनमद्यक्षपार्श्वम् । अशुभतमउपार्श्वं न्यत्कृतामंशु(शर्म)पार्श्वं, वृजिनविपिनपार्श्वं श्रीजिनं नौमि पार्श्वम् ॥२४॥ त्रिदशविहितमानं सप्त-  
हस्तांगमानं, दलितमदनमानं सद्गुणैर्वर्द्धमानम् । अनवरतममानं क्रोधमत्यस्यमानं, जिनवरमसमानं संस्तुवे वर्द्धमानम् ॥ २५ ॥  
विगलितवृजिनानां नौमि राजीं जिनानां, सरसिजनयनानां पूर्णचन्द्राननानाम् । गजवरगमनानां वारिवाहस्तनानां, हतमदमदनानां  
सुक्तजीवासनानाम् ॥२६॥ अविकलकलताग प्राणनाथांशुतारा, भवजलनिधितारा सर्वदाऽविप्रतारा । सुरनरविनतारा त्वार्हती गीर्व-  
तारादनवरतमितारा ज्ञानलक्ष्मीं सुतारा ॥ २७ ॥ नयनजितकुरंगीमिंदुसद्रोचिरंगीमिह कुलमहुरंगीकृत्यचिचांतरंगी । स्मरति हि  
सुचिरांगीदेवतां यस्तरंगी, कुरुत इममरंगीत्यादिकृद् बंधुरंगी ॥२८॥ इति द्विवर्णयमितांह्रियत्यष्टकस्तुतयः । पत्र ११६

श्रीकुंभभूपालविशालमंशनमोऽंगणोद्भ्रातनशुभ्रभानुम् । प्रभावतीकुक्षिसरोमरालं, वनाभ्यहं मल्लिजिनेन्द्रचन्द्रम् ॥२७॥ जन्मा-  
ऽभिगेके किल यस्य शक्रेः, प्रलोठितैः क्षीरमसुद्रनीरैः । विराजितो राजितवान् सुमेरुर्मल्लिर्मुदे सोऽस्तु ममावलंबम् ॥२८॥ अचि-

स्तुतिसंप्रहः

॥ ३७ ॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३८ ॥

त्यमाहात्म्यनिरस्तसर्वप्रत्यर्थिजालंबनवैभवं तत् । स्वदर्शनं मल्लिजिन ! प्रयच्छ, प्रसीद मेऽहंमतिभेदि देव ॥ २९ ॥ अनन्यसामा-  
न्यवरेण्यपुण्यप्रागल्भ्यलभ्यं भुवनाभिरामम् । त्वदर्शनं नाथ ! कदा समस्तं, श्रिया विशालं वनजं श्रयिष्ये ॥३०॥ नीलेन्द्रकालं-  
वनवाहमुच्चैस्तच्चावबोधक्रमसेवनेऽहम् । श्रीमल्लिनाथं जगतीशरण्यं, भावारिभीतः शरणं श्रयामि ॥ ३१ ॥ सदा चिदानंदमयास्त-  
मोहमल्लेन मल्ले ! भवितासि देव ! । कदा निरालंब निरंजन त्वं, कुंभांकितः केवलसंविदे मे ॥३२॥ अध्यासिता हे जिन ! मुक्ति-  
कांता, हृदंतरालंबनजोपमानम् । श्रीमल्लिनाथांहियुगं कदा तेऽवतंसयित्वा प्रणतोत्तमांगः ॥३३॥ मल्ले नमल्लेखभवांधकूपे, पतंत-  
मालंबनवर्जितं माम् । स्वभारतीवर्यवर ! त्वया त्वमालंबयालंबनविष्टपस्य ॥३४॥ मल्लीशमल्लीममधर्मकीर्ते, महोर्ध्वकडमीरजलिप्त-  
विश्वः । अलेरिवालं निजपादपद्ममालंबनं मे मनसः प्रयच्छ ॥३५॥ पत्र १२९

सिरिविस्ससेणअइरासुयं मयंकं थुणामि संतिजिणं । वारसभवक्कित्तणओ सगणहरं चत्तधणुमाणं ॥ ९४ ॥ रयणपुरे आसि  
तुमं सिरिसेणनिवोऽभिनंदियादइओ । पढमभवे वीए पुण उत्तरकुरुजुअलनर दोऽवि ॥ ९५ ॥ तइए सोहम्मसुरा चउत्थए अमिय-  
तेअसिरिविजया । इह जाया भे होहिह पंचमए पाणए अमरा ॥९६॥ छट्टे सुभापुरीए अवराइअणंतविरियवलविण्हू । सत्तमए तं  
अच्चुयइंदो इयरो पढमनरए ॥९७॥ तो उच्चइय होउं विजाहररायमेहनाउत्ति । होही अच्चुअअप्ये सो तुह सामाणिओ देवो ॥९८॥  
तं वज्जाउहचक्की अट्टमए रयणसंचयाइ इमो । सहमाउहो तुह सुओ नवमे दो तइअगेविजे ॥ ९९ ॥ पुंडरिणिणीइ सावकभायरा  
मेहरहदढरहत्ति । दसमे इकारसमे दोन्निवि देवा उ सच्चट्टे ॥१००॥ चरिमे पंचमचक्की संती सोलसजिणो गयउरे तं । चक्काउ-  
हुत्ति एसो सुओ गणहरो य तुह पढमो ॥ १०१ ॥ पोससिअनवमि नाणं तुह भइववहुलमत्तमीचवणं । जिट्टस्स बहुलतेरसि जंसु

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३८ ॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३९ ॥

सावणचउदसीइ वयं ॥ १०२ ॥ एवं देविदमुणिदवंदिओ संतिनाहतिथयरो । ससिहरसधम्मकिची भवेसि भवियाण संतिकरो  
॥ १०३ ॥ पत्र १७२

सो आह सामि! एसो अट्टावयपव्वओ जयपसिद्धो । इह दससहस्समुणिवरसाहिओ सिद्धो रिसहनाहो ॥ ९५ ॥ एयस्सुवरिं  
सिरिभरहकारियं एगजोयणपमाणं । जिणभवणमत्थि कलियं चउवीसजिणिदपडिमाहिं ॥ ९६ ॥ तह एगो मह धूमो नवनवईभा-  
यनवनवईधूमो । संति इह सामि! इक्ख्वागसेसमुणीणं तिधूभा य ॥ ९७ ॥ तह सत्तुंजयसिद्धा भरहवंसनिवई सुबुद्धिणा सिद्धा । जह  
सगरसुयाणऽट्टावएत्थ तह किच्चियं धुणिमो ॥ ९८ ॥ (इह अट्टावयसेले सगरसुयाणं सुबुद्धिमच्चिवेण । जह भरहवंसजनिवा सिद्धा  
तह किंचि किचेमि) ॥ ९९ ॥ आइच्चजसाइ सिवे चउदसलक्खा उ एगु सव्वट्ठे । एवं जा इफिका असंख इय दुगतिगाईवि ॥ १०० ॥  
जा पन्नासमसंखा तो सव्वट्ठंमि लक्खचउदसगं । एगो सिवे तहेव य अस्संखा जाव पण्णासं ॥ १०१ ॥ तो दो लक्खा मुक्खे  
दुलक्ख सव्वट्ठि मुक्खि लक्खतिपं । इय इगलक्खुत्तरिया जा लक्ख असंख दोसु समा ॥ १०२ ॥ तो इगु सिवे सव्वट्ठि दुत्तिति  
सिवंमि चउर सव्वट्ठे । इय एगुत्तरवुडी जाव असंखा पुढो दोसु ॥ १०३ ॥ तो इगु मुक्खे सव्वट्ठि तिन्नि पण मुक्खि इय दुरुत्तरि-  
या । जा दोसुऽविय असंखा एमेव तिउत्तरा सेठी ॥ १०४ ॥ विसमुत्तरसेठीए हिदुत्तरि ठविय अउणतीसतिया । पढमे नत्थि क्खेवो  
सेसेसु सिया इमो खेवो ॥ १०५ ॥ दुग पण नवगं तेरस सतरस बावीस छच अट्टेव । वारस चउदस तह अट्टवीस छवीस पणवीसा  
॥ १०६ ॥ एगारस तेवीसा सीयाला सयरि सत्तहत्तरिया । इगदुगसत्तासीई इगहत्तरिमेव चावट्ठी ॥ १०७ ॥ अउणुत्तरि चउ(ग्रंथ-  
३००) वीसा छायाला तह सयं तु छवीसा । मेलित्तु इगंतरिया सिद्धीए तह य सव्वट्ठे ॥ १०८ ॥ अंतिल्लंकां आई ठविउं वीयाइ

स्तुतिसंग्रहः

॥ ३९ ॥

श्रीदे०  
पत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ४० ॥

वेरगा तद्वय । एवमसंखा नेया जा अजियपिया समुप्पन्नो ॥१०९॥ अस्संखकोडिलक्खा सिद्धा सन्नद्धगावि ठविय तओ । गिण्हि-  
यचरणा देविंदवंदिया सिवपयं पत्ता ॥ ११० ॥ किं बहुणा नणु इमिणा गिरिणा सुरअसुरखयरनिलएण । सयलेऽवि महीवलए  
अन्नो तुल्लो गिरी नत्थि ॥१११॥ पत्र १२०

श्रीनामिमरुदेवांगप्रभवं कनकत्वपम् । वृषांकं वृषभं वंदे, पंचचापशतीमितम् ॥११४॥ गजांको रुक्मरुक् सार्धचतुर्धन्वशतोन्नतः ।  
थिये स्तादजितस्वामी, विजयाजितशत्रुभूः ॥ ११५ ॥ चतुश्चापशतोत्तुंगं, हेमाभं वाहवाहनम् । जितारिराजसेनांगसंभवं शंभवं स्तुवे  
॥११६॥ निष्कत्वपं प्लवंगांकं, मिद्वार्यसंवराङ्गजम् । सार्धत्रिशतधन्वाङ्गं, सेवेऽहमभिनंदनम् ॥११७॥ कोदंडत्रिशतीमानः, क्रौंच-  
लक्ष्माऽर्जुनद्युतिः । मुदे सुमंतिनायोऽस्तु, मंगलामेघभूपभूः ॥११८॥ सार्धत्रिशतचापोच्चं, सुसीमाधरनंदनम् । सरोजलक्षितं शोण-  
प्रभं पद्मप्रभं स्तुवे ॥११९॥ पृथ्वीप्रतिष्ठसंभृतिर्द्विधन्वशतविग्रहः । सुपार्थनाथ ! रैरोचिः स्वस्ति स्वस्तिकचिह्न ते ॥१२०॥ चंद्राभं  
चंद्रलक्ष्माणं, लक्ष्मणामहसेनजम् । सार्धचापशतोच्छ्रायं, नौमि चंद्रप्रभं प्रभुम् ॥१२१॥ सुग्रीवरामातनयं, मकरांकं हिमच्छविम् ।  
सुविधिं विधिना वंदे, धनुःशतसमुच्छ्रयम् ॥ १२२ ॥ पायान्नप्रतिधन्योच्चः, स्वच्छः श्रीवत्पलांछितः । नंदादृढरथोद्धृतः, शीतलः  
कनकद्युतिः ॥१२३॥ कल्याणकांतिः श्रीविष्णुविष्णुदेवीतनूरुहः । धन्वशीतिमितः पातु, श्रेयांसः खड्गिलांछनः ॥१२४॥ वसुपूज्य-  
जयाधनुर्महिषांकोऽरुणप्रभः । चापमप्रतिदेहोऽव्याद्, वासुपूज्यजिनेश्वरः ॥१२५॥ श्रीश्यामाकृतवर्मांगजन्मा पष्टिधनुस्तनुः । शूक-  
रांको हिस्ण्याभः, शिवाय विमलोऽस्तु मे ॥१२६॥ पंचाशद्धनुच्छ्रायः, सुयशःसिंहसेनजः । श्वेनांकः स्वर्णवर्णः स्तादनंतोऽनंत-  
संपदे ॥१२७॥ सुव्रताभानुभूः पंचचत्वारिंशद्धनुर्मितः । जातरूपरुचिर्वन्नचिह्नोऽव्याद् धर्मतीर्थकृत् ॥१२८॥ चत्वारिंशद्धनुर्देहो

स्तुतिसंग्रहः

भीदे०  
शैल० भी  
धर्म० संभा  
चारिभो  
॥ ४१ ॥

हेमधामा मृगश्वजः । विश्वसेनाविरायनुः, श्रीशांतिः शांतयेऽस्तु नः ॥१२९॥ छायांकः स्वर्णरुह पंचत्रिंशत्कार्मुकमूर्तिभृत् । श्री-  
कुंभुः श्रेयसे दरश्रीराशीतनयोऽस्तु मे । १३० ॥ नंदावर्त्तांकितं त्रिशङ्खमानं वसुञ्जविम् । अरनाथं स्तुवे देवीसुदर्शनसमुद्भवम् ॥१३१॥  
नीलं कुंभांकितं कुंभमभापत्यंगसंभवम् । पंचमिशतिकोदंडमूर्तिं मल्लिमुपास्महे ॥१३२॥ पद्मासुमित्रयोः पुत्रं, घनाभं कूर्मलक्षणम् ।  
चापविशतिमानांगं, स्वर्गीमि मुनियुगतम् ॥ १३३ ॥ वप्राविजयसंभूतं, नमिं नीलोत्पलांकितम् । शातकौभप्रभं पञ्चदशधन्वतनुं श्रये  
॥१३४॥ शंखांशो दशपापोधः, सद्युदविजयास्मजः । शिवायारुत्तु शिवायनुनेभिर्नयपनस्त्रिभिः ॥ १३५ ॥ ननहस्तवपुर्बालतमालदलदी-  
धितिः पागाधसेनभूर्भूरभै, भीपार्थोऽस्तु कृष्णध्वजः ॥१३६॥ सप्तहस्तमितं सिंहलांछनं फांचनस्त्रियम् । सिद्धार्थत्रिशलयुतं, श्रीवीरं  
प्रणिदधहे ॥१३७॥ एतं स्तुताः स्नयन्तौकमानांभापितृनामभिः स्युः सदा धर्मकीर्तिश्रीनायका जिननायकाः ॥१३८॥ पत्र १९१  
नैवाभाभियुतः सुरेश्वरनतः संसारपारं गतः, क्रोधाद्यैरजितं स्तुभेऽहजितं त्रैलोक्यसंपूजितम् । सेनाकुक्षिभवः पुनातु विभवः

स्तुतिसंग्रहः

दे०  
नैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥ ४२ ॥

भवादवतु वो मानेभकंठीस्वो, भक्त्या नम्रनरामरं जिनवरं प्रासस्मरं नौम्यरम् । श्रीमल्लेखनतक्रमोज्ज्वलततमो मल्लेऽस्तु तुभ्यं नमो,  
विश्वाचर्यो भवतः स पातु भवतः श्रीसुव्रतः सुव्रतः ॥५५॥ लोभांभोजतमेश्वरोपम ! नमे धर्मे धियं धेहि मे, वंदेऽहं वृषगामिनं  
प्रशमिनं श्रीनेमिनं स्वामिनम् । श्रीमत्पार्श्वजिनं स्तुवेऽस्तुवृजिनं दंताक्षदुर्वाजिनं, नौमि श्रीत्रिशलांगजं गतरुजं मायालताया गजम्  
दुरापास्तसमस्तकल्मष (कुत्सन) तमावीताखिलांतारजायामोह्यासविनाशसूतमहने (लासशोभनमहा) मृद्वग्निमौकावलम् । स्फूर्जद्-  
भाषुषभामिरामनयनिर्दग्धाशुभैधावरं, गातां मुक्तिपदप्रदं जिनवृषा वृद्धं प्रसादं मम ॥५७॥ एकवचनं द्विवचनं बहुवचनं तुल्यं ।  
इत्थं धर्म्यवचोवितानरचितं वज्र्यं स्तवं मुद्युतः, सद्धर्मद्वुमसेकसंवरमुचां भक्त्यार्हता नित्यशः। श्रेयःकीर्तिकरं नरः स्मरति यः सं-  
सारमाकृत्यसोऽस्तीतार्त्तिः परमे पदे चिरमितः प्राप्नोत्यनंतं सुखम् ॥२८॥ नामगर्भमण्डलं कमलं ॥” पत्र २०५  
इन्द्रश्रीरहमिन्द्रश्रीधक्रिश्रीरपराः श्रियः । त्वद्भक्तेस्तु त्रिलोकश्रीः, शिवश्रीरप्यवाप्यते ॥५४॥ पत्र २२२  
जय जय जिणिंद ! तियसिंदविंदवंदियप्यारविंदजुया । सिरिपासनाह मणवंछियत्थ संपायणसमत्थ ! ॥१०६॥ सामि ! न  
याणामि अहं अहेसि तुह कित्तियं तु लायणं ? । नयणाइंगंति तुह नाम धारए पत्थिवेऽवि चिरं ॥१०७॥ नयणा निग्थया ते

स्तुतिसंग्रहः



श्रीदे०  
वैद्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ४३ ॥

न सञ्जाया ॥११२॥ किं बहुणा ? नाह इहं तुह सेवावञ्जियस्स जं किंपि । तं सञ्चंपि निरत्थयमणत्थसत्थप्पपाणाउ ॥२१३॥ ता  
विन्नत्तो ससिकरसधम्मकिच्चिभर पासतित्थयर ! । तुह सेवाए सहलाणि हुंतु मह लोयणाईणि ॥२१४॥ पत्र २२५

“संकल्पोऽपि न कल्पजतरौ चिंता न चिंतामणौ, कामः कोऽपि न कामकुंभविषयो नो चित्रकृच्चित्रकः । मन्ये कांचनपुरु-  
षोऽपि पुरुषो नो कामधेनौ मनो, यत्ते श्रीमुनिराजपादकमलद्वंद्वं मया वंदितम् ॥६८॥ अंहःसंहतिमाशु लुंपति धृतिं धत्ते विधत्ते  
शिवं, चारित्रं चिनुते निहंति कुमतिं भिन्ते भृशं दुर्गतिम् । पुष्पात्यद्भुतशुद्धबुद्धिमहिमाः श्रीधर्मकीर्तिप्रभाः, श्रीवाचंयमराज !  
भव्यभविनां पादप्रसादस्तव ॥६९॥” पत्र २७६

जय जय नाणदिवायर परोवयारिक्कपच्चल मुणिंद ! । गुरु करुणारससायर नमो नमो तुब्भं पायाणं ॥४९॥ दारिदअमुदस-  
मुदमञ्जनिवडंतजंतुपोयाणं ! सकलकमलालयाणं नमो नमो तुब्भं पायाणं ॥५०॥ सम्गापवग्गमग्गाणुल्लगजणसत्थवाहपायाणं ।  
भवियावलंबणाणं नमो नमो तुब्भं पायाणं ॥५१॥ चकंकुसंकवरकलसकुलिसरुमलाइलक्खणजुयाणं । असरणजणसरणाणं नमो नमो  
तुज्झ पायाणं ॥५२॥ पत्र ३५०

जिनं यशःप्रतापास्तपुष्पदंतं समं ततः । संस्तुवे यत्क्रमो मोहपुष्पदंतं समंततः ॥ १ ॥ प्रातस्तेऽंहिद्वयो येन, सरोजास्य  
समा नता ! त्वयाऽस्तु जिनधर्माब्जसरोजास्य समानता ॥ २ ॥ वंदे देव ! च्युतोत्पत्तिव्रतकेवलनिर्वृतिम् । विश्वाचित्च्युतो-  
त्पत्ति, व्रतके वलनिर्वृतिम् ॥ ३ ॥ चतुरास्यं चतुष्कायं, चतुर्धावृषसेवितम् । प्रणमामि जिनाधीशं; चतुर्धावृष सेऽवितम् ॥ ४ ॥  
जिनेन्द्रानंजनश्यामकल्याणाब्जहिमप्रभान् । चतुर्विंशतिमानौम्यकल्याणाब्जहिमप्रभान् ॥ ५ ॥ विलोक्य विकचांभोजकाननं ना-

स्तुतिसंग्रहः

॥ ४३ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ४२ ॥

भवादवतु वो मानेभकंठीखो, भक्त्या नम्रनरामरं जिनवरं प्रासस्मरं नौम्यरम् । श्रीमल्लेखनतक्रमोज्झिततमो मल्लेऽस्तु तुभ्यं नमो,  
विश्वाचर्यो भवतः स पातु भवतः श्रीसुव्रतः सुव्रतः ॥५५॥ लोभांभोजतमेश्वरोपम ! नमे धर्मे धियं धेहि मे, वंदेऽहं वृषगामिनं  
प्रशामिनं श्रीनेमिनं स्वामिनम् । श्रीमत्पार्थजिनं स्तुवेऽस्तुवृजिनं दंताक्षदुर्वाजिनं, नौमि श्रीत्रिशलांगजं गतरुजं मायालताया गजम्  
दुरापास्तसमस्तकल्मष (कुत्सन) तमावीताखिलांतारजावामोह्यासविनाशघ्नतमहने (लासशोभनमहा) मृद्वग्रिमौकावलम् । स्फूर्जद्-  
भावृषभाभिरामनयनिर्दग्धाशुभैधावरं, गातां मुक्तिपदप्रदं जिनवृषा वृद्धं प्रसादं मम ॥५७॥ एकवचनं द्विवचनं बहुवचनं तुल्यं ।  
इत्थं धर्म्यवचोवितानरचितं वर्ज्यं स्तवं मुद्युतः, सद्धर्मद्रुमसेकसंवरमुचां भक्त्यार्हता नित्यशः । श्रेयःकीर्तिकरं नरः स्मरति यः सं-  
सारमाकृत्यसोऽस्तीतार्तिः परमे पदे चिरमितः प्राप्नोत्यनंतं सुखम् ॥५८॥ नामगर्भमष्टदलं कमलं ॥” पत्र २०५

इन्द्रश्रीरहमिन्द्रश्रीश्वक्रिश्रीरपराः श्रियः । त्वद्भक्तेस्तु त्रिलोकश्रीः, शिवश्रीरप्यवाप्यते ॥५४॥ पत्र २२२

जय जय जिणिंद ! तियसिंदविंदवंदियपयारविंदजुया । सिरिपासनाह मणवंछियत्थ संपायणसमत्थ ! ॥१०६॥ सामि ! न  
याणामि अहं अहेसि तुह कित्तियं तु लायणं ? । नयणाइगंति तुह नाम धारण पत्थिवेऽवि चिरं ॥ १०७ ॥ नयणा निरत्थया ते  
जयमदयंजण न जेहिं दिट्ठोऽसि । वायावि वंचिया सा सुरसंथुय ! जीइ नहु थुणिओ ॥ १०८ ॥ हिययं हियआणंदं हिययाणंदं  
न जं तुमं झाइ । सवणावि सव्वणा ते नहु तुह गुणसवणपवणा जे ॥ १०९ ॥ नाह ! सिरं तं असिरं तिहुयणनमियस्स जं न ते  
पणयं । भालंपि भग्गभग्गं तुह पयपीढे न जं लग्गं ॥१००॥ अकयत्था ते हत्था जे तुह कमकमलसेवअसमत्था । पायावि बहुअ-  
पाया गंतूण न वंदिओ जेहिं ॥१११॥ जम्मोऽवि सो अरम्मो जंमि न संमाणिओ तुमं सामी । लच्छीवि सा अलच्छी तुहत्थवंशा

स्तुतिसंग्रहः

॥ ४२ ॥

न सञ्जाया ॥११२॥ किं बहुणा ? नाह इहं तुह सेवावज्जियस्त जं किंपि । तं सञ्चंपि निरत्थयमणत्थसत्थप्पयाणाउ ॥११३॥ ता  
विन्नत्तो ससिकरसधम्मकित्तिभर पासत्तिथयर ! । तुह सेवाए सहलाणि हुंतु मह लोयणाईणि ॥११४॥ पत्र २२५

“संकल्पोऽपि न कल्पजतरौ चिंता न चिंतामणौ, कामः कोऽपि न कामकुंभविषयो नो चित्रकृच्चित्रकः । मन्ये कांचनपुरु-  
पोऽपि पुरुषो नो कामधेनौ मनो, यत्ते श्रीमुनिराजपादकमलद्वंद्वं मया वंदितम् ॥६८॥ अंहःसंहतिमाशु लुंपति धृतिं धत्ते विधत्ते  
शिवं, चारित्रं चिनुते निहंति कुमतिं भिन्ते भृशं दुर्गतिम् । पुष्पात्यद्भुतशुद्धबुद्धिमहिमाः श्रीधर्मकीर्तिप्रभाः, श्रीवाचंयमराज !  
भव्यभविनां पादप्रसादस्तव ॥६९॥” पत्र २७६

जय जय नाणदिवायर परोवयारिक्कपच्चल मुणिंद ! । गुरु करुणारससायर नमो नमो तुब्भं पायाणं ॥४९॥ दारिद्दअमुद्दस-  
मुद्दमज्झनिवडंतजंतुपोयाणं ! सकलकमलालयाणं नमो नमो तुब्भ पयाणं ॥५०॥ सग्गापवग्गामग्गाणुलग्गजणसत्थवाहपायाणं ।  
भवियावलंघणाणं नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥५१॥ चक्कंहुसंकररकलसकुलिसकमलाइलक्खणजुयाणं । असरणजणसरणाणं नमो नमो  
तुज्झ पायाणं ॥ ५२ ॥ पत्र ३५०

जिनं यशःप्रतापास्तपुष्पदंतं समं ततः । संस्तुवे यत्क्रमौ मोहपुष्पदंतं समंततः ॥ १ ॥ प्रातस्तेऽंहिद्वयी येन, सरोजास्य  
समा नता ! त्वयाऽस्तु जिनधर्माब्जसरोजास्य समानता ॥-२ ॥ वंदे देव ! च्युतोत्पत्तिव्रतकेवलनिर्वृतिम् । विश्वार्चितच्युतो-  
त्पत्ति, व्रतके वलनिर्वृतिम् ॥ ३ ॥ चतुरास्यं चतुष्कायं, चतुर्धावृषसेवितम् । प्रणमामि जिनाधीशं; चतुर्धावृष सेऽवितम् ॥ ४ ॥  
जिनेन्द्रानंजनश्यामकल्याणाब्जहिमप्रभान् । चतुर्विंशतिमानौम्यकल्याणाब्जहिमप्रभान् ॥ ५ ॥ विलोक्य विकचांभोजकाननं ना-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥ ४ ॥

भिनंदनम् । द्रष्टुमुत्कायते कोऽपि, काननं नाभिनंदनम् ॥ ६ ॥ तवानीश ! सदा वश्या, जितनिष्कोप नाथति । अहितो न हि तं  
स्वामी, जितनिष्कोऽपनाथति ॥ ७ ॥ सदातनाय सेनांगभय संभव संभव । भगवन् भविकानामभव शंभवसंभव ॥ ८ ॥ दृष्टुं मे  
मनोहंसमानस स्याभिनंदनः । श्रीसंरधराधीशमानसस्याभिनंदनः ॥ ९ ॥ अज्ञानतिमिरध्वंसे, सुमते सुमतेन ते । क्रियते न नमः  
केन, सुमते ! सुमतेनते ? ॥१०॥ त्वां नमस्यंति येऽक्रुस्थपद्मं पद्मप्रभेश ! ते । त्रैलोक्यस्य मनोहारिपद्म पद्मप्रभेशते ॥११॥ सद्ग-  
त्तया यः सदा स्तौति, सुपार्श्वमपुनर्भवम् । सोऽस्तजातिमृतिर्याति, सुपार्श्वमपुनर्भवम् ॥१२॥ सहर्षं ये समीक्षंते, मुखं चंद्रप्रभांग ! ते ।  
चिदुः सकलसौर्यानां, मुखं चंद्रप्रभांगते ॥१३॥ सदा स्वपादसंलीनं, सुविधे सुविधेहितम् । येन ते दर्शनं देव !, सुविधे ! सुविधे-  
हितम् ॥१४॥ यथा त्वं शीतलस्वामिन् !, सोमः सोममनोऽहरः । भव्यानां न तथा भाति, सोमः सोममनो हरः ॥१५॥ तं वृणोति  
न्ययंभूष्णु, श्रेयांसं बहुमानतः । जिनेशं नोति यो नित्यं, श्रेयांसं बहुमानतः ॥१६॥ वाक्यं यस्तव शुश्राव, वासुपूज्य ! सनातनम् ।  
कुर्यात्तमोदाचवाः सुपूज्यः सनातनम् ॥१७॥ कस्य प्रमोदमन्यत्र, विमलात् परमात्मनः । हृदयं भजते देवाद्, विमलात् परमा-  
ः ॥१८॥ दृष्ट्वा त्वाऽनेंतजिद्भावपराजितमनो भवम् । भविनां नाथ ! नाभैत्य, पराजितमनोभवम् ॥१९॥ श्रीधर्मेण क्षमारा-  
प्रकृष्टतरवारिणा । सनाथोऽस्मि वृषावल्लीप्रकृष्टतरवारिणा ॥२०॥ त्वया द्वेषाऽखिर्गो यत्, पदौ श्रीशांति नाथते । शरणं तद्भ-  
स्तापदौ श्रीशांतिनाथ ! ते ॥२१॥ वीतरागं स्तुवे कुंभुं, जिनें शंभुं स्वयंभुवम् । सरागत्वात् पुनर्नान्यं, जिनें शंभुं स्वयंभुवम्  
॥२२॥ विजिग्ये लीलया येन, प्रद्युम्नो भवताऽदरः । भविनां भवनाशाप, प्रद्युम्नो भवतादरः ॥२३॥ यः स्यात् मल्ले नमल्लेखो,  
मल्लस्य प्रतिमल्लते । क्रमो मनसि यो देह, मल्लस्य प्रतिमल्ला ! ते ॥२४॥ विधत्ते सर्वदायत्ते, समुद्(स)व्रतसमुन्नतिम् । समासादयते

स्तुतिसंग्रहः

॥ ४४ ॥

स्वामिन्, समुद्र(सु)व्रतसमुन्नतिम् ॥ २५ ॥ दृष्ट्वा समवसृत्यन्तर्नमीशं चतुराननम् । पश्येत् कोऽजितखं धीमान्नमीशं चतुराननम् ?  
॥ २६ ॥ श्रीनेमिनाथमानौमि, समुद्रविजयांगजम् । हेलानिर्जितसंग्राहसमुद्रविजयांगजम् ॥ २७ ॥ शिवार्थी सेवते ते श्रीपार्थ ! नाली-  
ककोमलौ । न क्रमावनिशं नग्नपार्थ ! नालीककोऽमलौ ॥ २८ ॥ वरिवस्यति यः श्रीमन्महावीरं महोदयम् । सोऽश्रुते जितसंमोहम-  
हावीरं महोदयम् ॥ २९ ॥ श्रीसीमंधरतीर्थेशं, सादरं नुतनिर्जरम् । येऽज्ञानं भिन्त्ते भस्मादरं नुत निर्जरम् ॥ ३० ॥ पृ. ३९५

सुरराजसमाजनतांह्रियुगं, युगपञ्जनजातविवोधकरम् । करणद्विषकुंभकठोरहरिं, हरिणांकितमर्जुनतुल्यरुचिम् ॥ ५६ ॥ रुचि-  
रागमसर्जनशंभुममं, सममानविलोकितजंतुगणम् । गणनायकमुख्यमुनीन्द्रनतं, नतयांछितपूरणकल्पनगम् ॥ ५७ ॥ नगराजविनि-  
र्मितजन्ममहं, महनीयचरित्रपवित्रतनुम् । तनुकीकृतवैरिनरेशमदं, मदमत्तगजेन्द्रसदृग्गमनम् ॥ ५८ ॥ मनईहितसौख्यविधा-  
नपटुं, पटुवाणिजनौघकृतस्तवनम् । वनजोदरसोदरपाणिपदं, पदपद्मविलीनजगत्कमलम् ॥ ५९ ॥ मलमांघविमुक्तपदप्रभवं, भव-  
दुःखसुदारुणदानघनम् । घनसारसुगंधिमुखश्चसितं, सितसंयमशीलधुरैकवृषम् ॥ ६० ॥ धृपकाननसेचननीरघरं, धरणीधरवंद्यमनिघ-  
गुणम् । गुणवञ्जनताऽऽश्रितसचरणं, रणरंगविनिर्जितदेवनरम् ॥ ६१ ॥ नरकादिकदुःखसमूहहरं, हरहारतुसारसुकीर्तिभरम् । भरत-  
क्षितिपामितबाहुबलं, बलशासनशंसितसाधुजनम् ॥ ६२ ॥ जनकाद्यनुरागविधौ विमुखं, मुखकांतिवितर्जितचंद्रकलम् । कलनाति-  
गसिद्धिसमृद्धिपरं, परभक्तिजनातुलशांतिजिनम् ॥ ६३ ॥ जिनपुंगवनायक शिवसुखदायक कामानलदेवेन्द्रवर ! । त्रिभुवनजनबंधुर  
भवतरुसिंधुर भव भविनां भवभीतिहर ॥ ६४ ॥ पृ. ४३१-४३२

अस्थि सुरद्राविसथो विसयसयविरायमाणनयविसरो । सरसफलकलियफलओ लयलीणमुणिंदगिहसिहरो ॥ १ ॥ सतुंजय-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सघा  
चारविधौ  
॥ ४६ ॥

सेलेसो सेलेसीकरणसालिसो तत्थ । भवियाण निवुडकरो तह कयलहुपचसरमरणो ॥ २ ॥ जो अहु जोयणाइ समूसिओ पवरओ  
सहिसमिद्वो । दसजोयणविच्छिन्नो सिहरे मूले य पन्नासं ॥३॥ अविय गयणयलमणुलिहतरुडकतकृतजिणभरणो । वणमज्झपहंत  
झरतनीरनिज्झरणनियरजुओ ॥४॥ जुयलद्वियसुरकिनरसिद्धस्यारदसुद्वगंधव्वो । गधव्वपणइणीजणमुच्छाविज्जतवीणमरो ॥ ५ ॥  
सरसहरिचदणदुमसुगधपूरतसयलदिसिविवरो । वररयणनियरचिंचडयसिहरसयसकुलो रम्मो ॥६॥ पृ. ४३६

जय पणमिरविज्जाहरदेविंदमुणिंद सिरिगणहरिद । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाण ॥६१॥ जय जय नाण-  
कलानिहि पडिपोहियवहुयभवियपुडरिय । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ६२ ॥ सग्गापवग्गमग्गाणुलग्गजण-  
सत्थनाहपायाण । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥६३॥ जय गुणगणहर गणहर ! सुयहरसंमोहकरडिपुंडरिय ! ।  
गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाण ॥ ६४ ॥ भपरुदअमुदसमुदमज्झमज्जंतजतुपोयाणं । गुरुकरुणारससायर नमो नमो  
तुब्भ पायाण ॥६५॥ दुस्सहदोहग्गदरिदतावतापियजियाण पुडरिय ! । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥६६॥  
जय विगलियकलिमलमर निम्मलतवचरणसाहु पुडरिय ! गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ६७ ॥ डिंडीरपिंड-  
पहरसुधम्मकित्तिभरभरियथुयणयल । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ६८ ॥ इय सथुओ सि गणहर ! देविंद-  
मुणिंदपणयपयकमल ! । जिणसास्रणम्मि भत्ती मे पहु ! हुज सया तुह पसाया ॥६९॥ पृ. ४४०

स्तुतयः

॥ ४६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
घर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥ ४७ ॥

## देशनास्थानानि

अभिनंदनजगन्नंदनदेशना	पत्र ६	शुवनभानोरुपदेशः	१५८	समन्तभद्रदेशना (२)	२४७
अभयघोषदेशना	३८	कीर्त्तिघरोपदेशः	१६३	(सामाचार्यः) समन्तभद्रकेवलि-	
गुर्वनुशास्त्रः	३९	अचलमुनिदेशना	१७१	देशना	२७७
सुमतिकेवलिदेशना	४१	चारणोपदेशः	१७३	श्रीशङ्करभद्रदेशना	४०५
विमलपुत्रदेशना	५०	विष्णुलमतिदेशना	१७२	गुणधरमुनिदेशना	३५१
स्वयंभूजिनदेशना	६९	संगमधरिदेशना	१८४	अमरचन्द्रधरिदेशना	३५५
हीमत्युपदेशः	७३	विमलबोधार्च्यदेशना	१८७	प्रभासाचार्यदेशना	३६२
रामकृष्णाकेवलिदेशना	७४	गुणंधराचार्यदेशना	१९७	नन्दनगिरिदेशना	३६८
सिंहचन्द्रोपदेशः	७८	गुणंधराचार्यदेशना	१९८	मरुदेवाप्रबन्धः	३८०
हरिसुनिचंद्रदेशना	९१	प्रभासमुनिदेशना	२००	शशिप्रभदेशना	४१६
पार्थजिनदेशना	१११	मुनिदेशना	२२२	सुधर्मगुरुदेशना	४१७
ज्ञानभानुमुनिदेशना	११४	चारणभ्रमणदेशना	२४७	मुनिदेशना	४२५
				(आत्मजये) स्वयंभूदत्तदेशना	४३२

देशना-  
स्थानानि

॥ ४७ ॥

इह अत्थिविहरिद्विसिद्धिसग्गाइकारणं धम्मो । धम्मो महल्लमंगलधल्लिपल्लवणघणतुल्लो ॥ ८ ॥ उल्लसिरनिरंतरअंतरायसं-  
घायघायगो धम्मो । धम्मो य उदग्गसमग्गज्वंगकल्लणकुलभवणं ॥ ९ ॥ सयलसुहदाणपच्चल निच्चलसम्मत्तसुपइट्टाणो । सो सव्व-  
देसविरइप्पभेयओ पुण भवे दुविहो ॥ १० ॥ पत्र ६

लहिउं सुदुल्लहं नरभवाइसामग्गिमत्थ भवहरण । सइमणपरिभट्टा मा दुहिया भमह कुम्मच्च ॥ २८ ॥ हरपरिमियत्तणा अवि-  
लहिज्ज ससिदंसणाइ सो कुम्मो । न उ पुणवि जिओ बोहिं भवणंतत्ता अकयसुकओ ॥ २९ ॥ ता सोउमिमं संमं अरिहं देवो  
सुसाहुणो गुरुणो । जिणपन्नत्तं तत्तं इत्थ पहाणंति कुणह मइं ॥ ३० ॥ पत्र ३८

कोहो अप्पीइकरो उव्वेयकरो य सुगइनिइलणो । वेराणुबंधजणणो जलणो वरगुणगणवणस्त ॥ ८४ ॥ कोहंघा निहणंति पुत्तं  
मित्तं गुरुं कलत्तं च । जणयं जणणिं अप्पंपि निग्घिणा किं न कुव्वंति ? ॥ ८५ ॥ कोहम्मी पज्जलिओ न केवलं दहइ अप्पणो देहं ।  
संतावेइ परंपिहु पहवइ परभवविणासाय ॥ ८६ ॥ ता कोहमहाजलणो विज्जवियव्वो स्वमाजलेण सया । अन्नह दुसहं दुक्खं देइ  
जह इमीइ बालाए ॥ ८७ ॥ पत्र ४१

न हु होइ सोइयव्वो जो कालगओ दढो चरित्तंमि । मो होइ सोइयव्वो जो संजमदुब्बलो विहरे ॥ ५१ ॥ सोचा ते जियलोए  
जिणवयणं जे नरा न याणंति । सोचाणवि ते सोचा जे नाऊणं नवि करंति ॥ ५२ ॥ दावेऊण घणनिहिं तेसिं उप्पाडिआणि अ-



च्छीणि । नाऊणवि जिणवयणं जे इह विहलंति धम्मधणं ॥५३॥ को से सोओ सुचरियतवस्स गुणसुद्धियस्स साहुस्स । सुग्गइग-  
मपडिहत्थो जो अच्छइ नियमभरियभरो ॥५४॥ ५०

गंतुं सिवपुरमिच्छह जइ भविया ! लंघितं भवारणं । तो नाणाइसरूवे मग्गे लग्गेह सुविसुद्धे ॥१७॥ नाणं पयासगं सोहओ तवो  
संजमो य गुत्तिकरो । तिण्हंपि समायोगे मोक्खो जिणसासणे भणिओ ॥१८॥ पत्र ६९

धम्मे अतुच्छसुहदे वच्छे ! सच्छासए पमायंती । मा गच्छ इह सुतुच्छे सुक्खे विणिवायवहुलंमि ॥ ९२ ॥ जओ-संसारीण  
सरीरं कयलीकोमलकरीरनिस्सारं । रूवं संसुब्भवअभरागसमं नस्सरसरूवं ॥९३॥ मयकलियकलहकरिकण्णतारतरलं व तरलतारु-  
णं । पवणपणुल्लियदीवयसिहव्व अवि चंचलं जीयं ॥९४॥ तहय अवस्सं पियजणसंजोगा विप्पओगपजंता । मुहमहुरमंतविरसं  
विसयसुहं विसमविससरिसं ॥ ९५ ॥ ता पुत्ति ! निरुयमंगं इंदियहाणी न जाव जाव जरा । अल्लियइ जाव न मच्चू लहु उजम  
ताव अप्पहिए ॥९६॥ पत्र ७३

मायपियभायभइणीभजासुयधूयसुण्हसुहिसयणा । जाया सव्वेवि जीया अणंतसो सव्वजीवाणं ॥१०३॥ पत्र ७४  
लब्भंति लोललोयणललणाजणजणियचित्तपरितोसा । धरवासा कक्खडकम्मखवणदक्खो न उण धम्मो ॥ १७० ॥ लब्भंति  
पणयवरविणयपउणसुरसुंदरीसणाहाइं । इंदत्तणाइं न उणो नरेहिं सिवसुहफलो धम्मो ॥ १७१ ॥ अह स गहइ गिहिधम्मं सम्मं  
संमत्तमूलमाजीवं । वंभं छट्ठतवं तह तो मुणिणा एवमणुसिट्ठो ॥ १७३ ॥ अरिहंतुच्चिय देवो मुणिणुच्चिय सीलसंगया गुरुणो ।  
जीवदयच्चिय धम्मो निचं चित्तिज नियचित्ते ॥१७४॥ पत्र ७९

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ५० ॥

संसारमि असारं असारभूया विसेसओ एसा । लच्छी देहो णेहो तारुणं जीवियञ्चं च ॥२१४॥ जं जलतरंगतरला लच्छी  
देहो जराइ जजरिओ । नेहो णरयदुहाईवल्लिपल्लवणनवमेहो ॥२१५॥ मयकलियकलहकरिकणतारतरलं च तारतारुणं । पवण-  
पणच्चियदीवयसिहव्व अइचंचलं जीयं ॥२१६॥ गरुण पुत्रपत्तेण पाविया एत्त मणुयजम्मतरी । जाव न भिज्जइ ता भवजलनि-  
हितरणे पतूरेह ॥२१७॥ पत्र ८१

कह तं भन्नइ सुक्खं सुचिरेणवि जस्स दुक्खमल्लियइ । जं च मरणावसाणं भवसंसारानुबंधिं च ? ॥१७॥ ता चउगइभव-  
दुहदारुदाहदहणं करेह जिणधम्मं । दुविहंपि ससत्तीए ओसहमिव कम्मरोगाणं ॥ १८ ॥ तो मंती तुट्टमणो गिहत्थधम्मं गहेवि  
तं बालं । पहु पाएसुं पुण पुण पाडेवि गओ सठाणंमि ॥ १९ ॥ पत्र १११

भवजलहिंमि अपारे जम्मणजरमरणनीरपडिपुत्ते । वाहिदुरंतजलयरे कुजोणिसयदुत्तरावत्ते ॥ ५७ ॥ किण्हाइअसुहलेसाअवा-  
लसेवालजालपडिहत्थे । गुरुरायपंकखुत्तो गुत्तो मायालयागहणे ॥ ५८ ॥ कहकहवि सुपुण्णवसा पावइ पाणी नरत्तबोहित्थं । संम-  
त्तपइट्ठाणं सुजाइकुलपमुहवरफलयं ॥ ५९ ॥ संवरकयनिच्छिदे सन्नाणगुणे विवेयगुणरुक्खे । संवेयसेयवट्टे निव्वेयानिलजणियवेगे  
॥६०॥ सज्झायज्ञाणपोए वाहेसु नियमपुलिंदए तत्थ । सुहभावकन्नधारं भविया ! भवजलहितरणकए ॥ ६१ ॥ जं एत्त पमायअ-  
वायनियरओ रक्खिओ रयणदीवे । नेऊण इमं पूरइ एव महव्वयसुरयणेहिं ॥६२॥ तत्थऽत्थि सव्वसावज्जविरइसेलो तहिं च सुह-  
छाया । सीलंगमहस्सफला दसविहमुणिधम्मकप्पतरू ॥६३॥ भवजलहितडिसमा केवलित्ति तस्सिं गओवरिं सिद्धिपुरी (सिद्धी) ।  
अत्थि तहिं ठवइ जीयं नरत्तबोहित्थमिह मुत्तं ॥६४॥ जीइ न जम्मो न जरा न य मरणं नेय छुहपिवासाई । न य रागरोगसोगा

देशना-  
संग्रहः

॥ ५० ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
स्तरविधौ  
॥ ५१ ॥

न आहिणो वाहिणो नेव ॥ ५ ॥ किंतु अणंतचउकयकलिओ जीवो निरंजणो निचो । उज्जोयंतो तिजयं चिट्ठइ रयणप्पइवुव्व  
॥ ६६ ॥ पत्र ११४

यावन्न जरा न रुजा न विघ्नसंघो न चेन्द्रिये हानिः । तावदलममलमतिना स्वहितकृताबुधमः कार्यः ॥८४॥ पत्र १५८  
इह निचुइपरमंगाणि जंतुणो दुल्लहाणि चत्तारि । मणुयत्तं धम्ममुई सद्धानं संजमे विरियं ॥ ४२ ॥ चुलसीइलक्खजोणीसु  
पहुकुलकोडीसु भमिय कहवि जिओ । इह लहइ माणुसत्तं सुदेससुकुलाइसुपविचं ॥५०॥ तत्थवि कुतित्थवहुले लोए दुलहा विसु-  
द्धधम्मसुई । जीइ अहिंसगधम्मं पडिचजिय तरइ भवजलहिं ॥५१॥ धम्मसुवि दुल्लहा तत्तरुई मिच्छत्तसेवए लोए । जं नेयाउय-  
मग्गा बहवे भस्संति मूढमई ॥ ५२ ॥ सदहणेऽविहु धम्मस्स फासणा दुल्लहा उ काएण । कामगुणमुच्छिया जं विरमंति जिया न  
पावाओ ॥५३॥ जो उ मणुयत्तपत्तो सुद्धं धम्मं सुणित्तु सदहिउं । जहविहिणा उ अणुइ सो इह लहु धुणइ कम्मरयं ॥५४॥ ता  
धम्माणुद्धाने करेह जत्तं सया विदिपहाणे । धारेह सुद्धभावं भविआ ! वज्जेह वित्तहभावं ॥ ५५ ॥ जं विहियमणुद्धाने वित्तहत्तं  
कुणइ दंसणं समलं । समले तंमि तव नियमवयगुणा हुंति न बहुफला ॥५६॥ धम्मगयं वित्तहत्तं थोवंपि विसं व हणइ सुहनिचयं ।  
पणुइ दोसजालं जणेइ बहुऽणत्थवित्थारं ॥५७॥ धर्मानुष्ठानपैतथ्यात्, प्रत्यपायो महान् भवेत् । रौद्रदुःखौघजननो, दुष्प्रयुक्तादि-  
शोभात् ॥ ५८ ॥ पत्र-१६३

भगवतो दुदहेऊ दुक्खफलो दुसहदुक्खरूपो य । नेहनियलेहिं बद्धा न चयंति तहावि ते जीवा ॥ ७० ॥ जह न तरइ आरु-  
॥ ५१ ॥ पत्रो फरी थलं कहवि । तह नेहपंकखुत्तो जीवो नारुइ धम्मथलं ॥७१॥ छिअं सोसं मलणं बंधं नीपीलणं च लोय-

देशना-  
संग्रहः

॥ ५१ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५२ ॥

म्मि । जीवा तिला य पिच्छह पावंति सिणेहपडिवद्वा ॥७२॥ थोवोऽवि जाव नेहो जीवाणं ताव निव्वुई कत्तो ? । नेहकूखयंमि  
पावह पिच्छह पइवोवि निव्वाणं ॥७३॥ दूरुज्झियमजाया धम्मविरुद्धं च जणविरुद्धं च । किमकञ्जं जं जीवा न कुणंति सिणेहग-  
हगहिया ? ॥ ७४ ॥ (बुप्प०) पत्र १७१

देवाणुप्पिय ! दुलहं मणुयत्तं लहिय इह पमायं मा । काहिसि जिणवरधम्मे जम्मजरामरणभयहरणे ॥ ११२ ॥ अविय—  
जिणाणं पूअजत्ताए, साहूणं पज्जुवासणे । आवस्सयंमि सज्झाए, उज्जमेज्ज दिणे दिणे ॥ ११३ ॥ जओ—कदाचिन्नातंकः कुपित  
इव पश्यत्यमिमुखं, विदूरे दारिद्र्यं चकितमिव नश्यत्यनुदिनम् । विरक्ता कांतेव त्यजति कुगतिः संगमुदयो, न मुंचत्यभ्यर्णं सु-  
हृदिव जिनाचां रचयतः ॥११४॥ आरंभाणां निवृत्तिर्द्रविणसफलता संघवात्सल्यमुच्चैर्नैर्मलयं दर्शनस्य प्रणयिजनहितं जीर्णचैत्या-  
दिकृत्यम् । तीर्थोन्नत्यप्रभावं जिनवचनकृतिस्तीर्थकृत्कर्मकत्वं, सिद्धेरासन्नभावः सुरनरपदवी तीर्थयात्राफलानि ॥११५॥ तत्त्वां-  
भोजप्रकाशं रचयति रविवन्नेमिवदुःखलक्षं, स्फूर्जत्कक्षं छिनत्ति प्रकटयति लसद्दीपवन्मोक्षमार्गम् । भव्यानां भक्तिभाजां जन-  
यति धनवत् पापनाशाय शांतिं, साधूनां पर्युपास्तिर्विघटयति तमःस्तोमभिंदुप्रभेव ॥ ११६ ॥ सावद्यं दलयत्यलं प्रथयते सम्यक्-  
प्रसिद्धि परां, नीचैर्गोत्रमधः करोति सुयमच्छिद्रं पिघत्ते क्षणात् । सद्ध्यानं चिनुते निष्ठंतति ततं तृष्णालतामण्डपं, वश्यं सिद्धिसुखं  
करोति भविनामावश्यकं निर्मितम् ॥११७॥ कालुष्यं कलयाऽपि नो कलयति स्वांतं प्रशांतं भवेत्, विश्वं पाणितले स्थितामलक-  
वत् प्रत्यक्षमेवाखिलम् । आसन्नाऽपि कुवासना न भवति स्वाध्यायमभ्यस्यतः, पुंसः पुंसितमेव दुर्मतिगतिस्थानादिकं सर्वतः  
॥ ११८ ॥ पत्र १७३-१७४

देशना-  
संग्रहः

॥ ५२ ॥

देहो ध्रुवं विणासी तवसंजमसाहणं फलं तस्स । वचइ दुलियं जीयं ता मा धम्मे पमाएह ॥१३०॥ सिद्धंपि महाविजं असरंतो  
निष्फलं जहा कुणइ । तह धम्मपमाइल्लो हारइ पत्तंपि मणुपत्तं ॥१३१॥ जह दुलहं कप्पतरुं लहिउं मग्गइ वराडिअं मूढो । सुक्ख-  
फले मणुअत्ते तह अबुहो मग्गए विसए ॥१३२॥ पत्र १७५

इह-भवजलनिहिधुअ चिंतारयणं व सुदुल्लहं मणुअजम्मं । रोरस्स निहाणंपिअ तत्थवि सम्मत्तमइदुलहं ॥४॥ कहकहवि तंपि  
लहिउं तस्सुद्धिकए करेह पइदिवसं । मज्झजइल्लुफोसं चिइवंदणयं जहासमयं ॥५॥ तत्थ-एगनमुक्कारेणं बहुविहसक्कथएण व जइत्ता ।  
इरियनमुक्काराईपणिहाणंतेणवि इगेणं ॥६॥ सच्चिअ इगचूलधुई उज्जोअगरंति जाव मज्झिमया । पणदंडधुइचउक्कगपणिहाण विणात्ति  
जं भणियं ॥ ७ ॥ 'निस्सकडमनिस्सकडे'त्यादि, सक्कथयचिइवंदणथयनामथयाइ तिननि थुइदंडा । एवं पणदंडा चउथुइजुया  
अंतसक्कथया ॥ ८ ॥ जा थयपणिहाणंता उक्कोसा दुगुणपंचदंडा वा । पणसक्कथया वा थयपणिहाणत्तिय थुइतिगंता ॥९॥ भणितं  
च-'दुब्धिगंधमलस्सावि, तणुरप्पेसण्हाणिया । उभओ वाउवहो चेष, तेण ट्ठंति न चेइए ॥१०॥ तिननि वा कडुई जाव, थुइओ  
तिसिलोइया । (चैत्यवंदनान्ते प्रणिधानरूपा) ताव तत्थ अणुत्तायं, कारणेण परेणवि ॥११॥ जओ-जियमवणं सुरभवणं व होइ  
तह किंकरिव्व चफसिरी । सुइरं विलसंति सत्तणुम्मि उग्गसोइग्गपग्गहगुणा ॥ १२ ॥ सुइउत्तारो गुप्पयजलं व अवि एत्त हुअ  
भवजलही । सिद्धिसुहंपि अभिमुहं नराण चिअवंदणपराणं ॥१३॥ अविअ-विसमंपि समं सभयंपि निब्भयं दुज्जणोवि सुयणिव्व ।  
विहिविहियचेइवंदणपभावओ जायइ जियाणं ॥१४॥ पत्र १८४

कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणयनासणो । माया मित्ताइं नासेइ, लोभो सच्चविणासणो ॥५२॥ कोहो य माणो य अणि-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५४ ॥

गहीया, माया य लोहो य पवइढमाणा । चत्तारि एए कसिणा कसाया, सिंचन्ति मूलाइं पुण्णभवस्स ॥५३॥ उवसमेण हणे कोहं,  
माणं मद्वया जिणे । मायं चऽज्जवभावेणं, लोभं संतोसपोसओ (ओ जिणे) ॥५४॥ पत्र १८७

पंचांगचंगमतिरंगभरेण भव्यो, यो वंदते जिनपतिं विगतप्रमादः। तेनेऽत्र तेन वसुधावलये यशः स्वं, दौर्गत्यदुःखतरुखंड-  
मखंडि शीघ्रम् ॥५॥ तं प्राज्यराज्यकमला कमलीकरोति, तस्मै सदा स्पृहयति त्रिदशासुरश्रीः। तस्येन्दुकाशकुसुमोज्ज्वलपुण्यरा-  
शेरद्वैतसौख्यपदवी न दवीयसी स्यात् ॥६॥ पत्र १९७

यः सर्वांगगुरुप्रमोदपुलकः पंचांगभूस्पर्शनो, दुष्टानंगविधातिनो जिनपतेः पादद्वयं वंदते । भुक्त्वाऽश्लेषपडंतरंगरिपुजित् स-  
प्रांगराज्यश्रियं, हत्वाऽष्टांगमशेषकर्मपटलं प्राप्न्योत्यसंगं पदम् ॥२०॥ पत्र १९८

इह तुल्लेवि नरत्ते एगे पहुणो पयाइणो अन्ने । धम्माधम्मफलं ता नाउं भविया ! कुणह धम्मं ॥५२॥ जह इहलोइयकजे  
सव्यत्थामेण उज्जमइ लोओ । तह जइ लक्खंसेणवि परलोए ता सुही होइ ॥५३॥ धम्मेण विणा जइ चिंतियाइं लब्भन्ति इत्थ सु-  
क्खाइं । ता तिहुयणेऽवि सयले न कोऽवि इह दुक्खिओ हुज्जा ॥ ५४ ॥ अह भणइ सुणी इहर्यं भइ ! भवीणं भवंति भदाणि ।  
पुण्णेण सुचिण्णेणं पावेणं पुण अमहाणि ॥५८॥ पत्र २२२

इह चउगइभवगइणे कहंपि लद्धूण माणुसं जम्मं । जे नहु कुणंति धम्मं ते नूणं अत्तणो अहिषा ॥ ३१३ ॥ जेणं करयल-  
परिकलियसलिलविंदुच्च परिगलइ आउं । दारंति दारुणा दारुयं च रोगा पुणो देहं ॥३१४॥ बहुविहकिलेसपत्तावि चोरजलजलण-  
निवइपमुहेहिं । संपासंपायचला खणेण खलु नासए लच्छी ॥ ३१४ ॥ पियमायपुत्तसुकलत्तमित्तसयणाइइट्टसंजोगो । खणदिट्ठन-

देशना

॥ ५४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५५ ॥

दृश्यो जलनिहिकलोलसंकासो ॥३१२॥ पद्मपत्रशुष्पाडियअकतूलत्तरलं सयावि तारुणं । चंपयकुसुमुकररंगभंगुरं इत्थ विसयसुहं  
॥३१७॥ ता सासयसुहहेउंमि सयलभयदुखलरूपदलणसहे । भविया ! मुत्तु पमायं सद्धम्मे आयर कुणह ॥३१८॥ पत्र २३८  
अणवरयं मुणिनमणेण सिरिजिणिंदाण पूयकरणेण । कोहाइनिग्गहेणं पावमिणं मे खयं गमिही ॥३०॥ पत्र २४७  
आह गुरु निपनंदण ! जियररुत्तासच्चवयणवंभेहिं । मंसाइरज्जणेण य गम्मइ एयारिमसुरेसु ॥ २९ ॥ पयईइ तणुत्ताओ  
दाणरओ सीलसंजमविहणो । मज्झिमगुणेहिं जुत्तो जीवो अजेइ नरज्जम्मं ॥३०॥ उम्मग्गदेसओ मग्गनासओ गूढहिययमाइल्लो ।  
सदसीलो य ससल्लो तिरिआउं बंधए जीवो ॥३१॥ जीवरहणेण पलभकूपणेण पारद्विपमुहवमणेहिं । परधणहरणाईहि य गम्मइ  
जीवेहिं नरएसु ॥३२॥ गुरुराह सुण उपायं कुमार ! तं देसु पावएवणकए । नियदुकडेसु मिच्छामिदुकडं अपुणकरणेण ॥३५॥

जहा विसं कुट्टगयं, मंतमूलविसारया । विजा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निच्चिसं ॥१॥ एवं अट्टविहं कम्मं, रागदोसमम-  
ज्जियं । आलोयंतो य निदंतो, खिप्पं हणइ सुसावओ ॥२॥ आरस्तएण एएण सावओ जइवि बहुरओ होइ । आलोयंतो य नि-  
दंतो खिप्पं हणइ सुसावओ ॥३॥ पत्र २७४

भो भो भवणवे इह निमज्जमाणाण भव्यसत्ताणं । नित्यारणे समत्थो धम्ममुच्चियऽतुच्छबोहित्थो ॥७१॥ सो दुविहो मुणि-  
गिहिधम्मभेयओ तत्थ समणधम्मो य । सावज्जकज्जण निरवजासेवणपहाणो ॥७२॥ पत्र २७७

भत्तिवहुमाणपूयाथुइसेयानमणपंदणाईहिं । लहइ जिणाईण जिओ तित्थयरत्ताइ वररिद्धी ॥ २४ ॥ नियमइ य तित्थगुत्तं  
नियमा मणुओ तिहावि सुहलेसो । आसेविएहिं बहुसो वीसाए अन्नयरएहिं ॥२५॥ जओ-जिण १ सिद्ध २ पवयण ३ गुरु ४

थेर ५ बहुस्सुय ६ तवस्सि ७ वच्छं । नाणुवओगो ८ दंसण ९ विनया १० वसयविहि ११ सीलवयं १२ ॥ ३० ॥ अणइकमो  
खणलव १३ तव १४ चय १५ वेयावच १६ विहिसमाही य १७ । अप्पुव्वनाणगहणं १८ सुयभत्ति १९ पमावणा वीसं २०  
॥ ३१ ॥ पत्र २०५

जं इह जियाण जायइ मणोरमं रूवरिद्धिमाईयं । तं धम्मफलं नूणं विवरीयं पुण अहमस्स ॥ ५ ॥ धम्माभासेहिं समाउलंभि  
लोए जहट्टिअं धम्मं । आमन्नभाविभदा विरलच्चिय केइ जाणंति ॥ ६ ॥ विरलाणवि ते विरला धम्मविसेसं वियाणिउं सम्मं । जं  
इह भणियं तं तह कुणंति जेणेह निरवेक्खं ॥ ७ ॥ सो पुण धम्मो पंचमपुरिससमो इह अणोवमो नेओ । राजा-भयवं ! को सो  
पंचमपुरिसोवमो धम्मो ? ॥ ८ ॥ मुनिः-नस्वर जह वीयंगे भणिअं वीरेण गोअमाईणं । पंचमपुरिससरूवं तहेगचित्तो निसामेहि  
॥ ९ ॥ पृष्ठ ३५१

जत्थ य विसयविराओ कमायचाओ गुणेषु अणुराओ । करुणाएँ अप्पमाओ सो धम्मो सिवसुहोवाओ ॥ ३४ ॥ जइधम्मो  
तत्थ समग्गसंगविगमे गयंगिवग्गवहो । विहियअसायकसायचाओ सिवगमणपवणगुणो ॥ ३५ ॥ तदसत्ताणं सत्ताणङ्गारधम्मो-  
ऽवि होइ गुणहेऊ । लहुभोयणं व लंघणकरणासत्तस्स रोगिस्स ॥ ३६ ॥ इय जाणिय जे सम्मं धम्मं धारंति ते सया धन्ना । जे  
नेरइयारमेयं पालंती ताण किं भणिमो ? ॥ ३७ ॥ जओ-धन्नाणं विहिजोगो विहिपक्खारगा सया धन्ना । अन्यच्च-विहिवहुं-  
णी धन्ना विहिपक्खअदसगा धन्ना ॥ ३८ ॥ भणियं च-आसन्नसिद्धियाणं विहिवहुमाणो उ होइ सयकालं । विहिचाओ अवि-  
हंभत्ती अभव्वजिय दूरभव्वाणं ॥ ३९ ॥ पृ. ३५६



भीरे०  
नेत्य० भी  
र्म० संभा  
सरनिभो  
॥ १५७ ॥

देशना

जं पुरीण अचिरायं अगोचरं जं च पुरिमयारस्म । जं इह अद्दुस्मज्जं जं च ठियं दूरदेसंमि ॥ ६२ ॥ तंपिद्दु पुन्नोदयओ  
संपज्ज पुप्पविदिगगुत्तयाणं । नदि हेउमंतरेणं कयावि किर जायणं फजं ॥ ६३ ॥ तं पुण पुञ्चं अहिगारसुद्धचिद्वंदणाविहाणेण ।  
जिण्णनाहपूयणेणं वाणाईभम्मकरणेणं ॥ ६४ ॥ सुमुण्णिवगसोणाणं निचं चिय भम्मसत्थराणेण । इंदियविणिग्गहेणं निम्मलसंम-  
त्तपरणेणं ॥ ६५ ॥ आरावधेरमणेणं साहम्मियगग्गवच्छलेणेण । फल्लणमिणजोणेण गच्छइउ उवचयं परमं ॥ ६६ ॥ पृ. ३६२  
दुत्तं तद्विग नरभं भविथा । भविपयानिभोगेण । चिद्वंदणाइभम्मं करेण जइ मद्दइ सिपसंभं ॥ ३५ ॥ यतः—पूया जिणि-  
हेसु रई पणसु, जतो य सागाइपपोसदेसु । दाणं सुपसे सवणं सुतिस्थे, सुसादुसेवा सिचलोपमग्गो ॥ ३६ ॥ पृ. ३६८  
आर्गिणोणं गौनेन, विह्वलाइसदसकम् । पुरे पुरिमतात्ताग्गे, गगो धीपुपभोऽन्यदा ॥ १ ॥ उवाने तत्र शट्कमुखे वटतरो-  
रुपा । उत्तरापादभे कृष्णैकादशां फालगुने विद्युः ॥ २ ॥ पूर्वादिऽष्टमशक्तेन, केवलज्ञानमासदत् । मदिमानं ततश्चक्रुः, सर्वे देवासु-  
सारमा ॥ ३ ॥ भरतास्त्रायुभागारे, पाकरत्नं तदाऽजनि । सुगपत्केवलं तत्र, राधे पुंभिर्निवेदितम् ॥ ४ ॥ अचिंतयत्ततो राजा, किं पूज्यं  
प्रापे मया ? । क्षणाजिर्णित्वास्तत्र, पूज्यः प्रेत्यसुखावहः ॥ ५ ॥ रुदंतीं पुत्रशोकेन, नीलच्छन्नदृशं ततः । सिंधुरस्कंधमारोप्य,  
॥ ६ ॥ १ ॥ पूयः ॥ १ ॥ जिं नंतं गजन्तुभे, मातः पश्य प्रभोः श्रियम् । अनन्यसदृशीं देवास्तराणामपि दुर्लभाम् ॥ ७ ॥ हर्षा-

३ दि०  
 चैत्य० श्री-  
 धर्म० संघा-  
 चारविधौ  
 ॥ ५८ ॥

भणइ मुणी भो निवसुय ! दन्वूसियप्पमुहवहुविहविगप्पो । एसंतरंगरूवो काउस्सग्गत्ति पवरतवो ॥१४॥ नवरमिमो दुविगप्पो चि-  
 द्वाए अमिभते य णायवे । चिद्वाएऽणेगविहो कालपमाणं च तं बहुहा ॥१५॥ तथाहि-देसियराइयपक्खियचाउम्मासिय तहेव वरिसे य ।  
 नियया काउस्सग्गा इरियाइसु अनियया हुंति ॥१६॥ सायसयं गोसद्धं तिन्नि सया पक्खियंमि ऊमासा । पंचसया चउमासे अट्ट-  
 सहस्सं च वरिसाए ॥१७॥ अनिययउस्सग्गेषु य इरियाइसु पंचवीस ऊमासा । सेसेसु अट्ट पट्टवणपडिकमणाईसु सगवीसा ॥१८॥  
 अभिमपिउं दुक्कं कुट्ठेण सुराइणा व अभिभविओ । जं कुणइ काउस्सग्गं सो अभिभवकाउस्सग्गत्ति ॥१९॥ कालपमाणं च इहं उक्कोसं  
 वरिसमवहिमाहंसु । वाहुवलिप्पमुहाणं जहन्नमंतोमुहुत्तं तु ॥ २० ॥ नवरं अभिभवउस्सग्गवत्तिणो अगणिसप्पमाईहिं । खोभेऽवि  
 अकयकज्जस्स जुज्जाए नेव परिचइउं ॥२१॥ वासीचंदणकप्पो जो मरणे जीविए य समदरिसी । देहे अप्पडियद्धो काउस्सग्गो हवति  
 तस्स ॥२२॥ ति विहाणुवसग्गाणं दिव्वाण य माणुमाण तिरियाणं । संममहियासणाए काउस्सग्गो हवइ सुट्ठो ॥२३॥ पृ. ४२५

आत्माऽयमनल्पविकल्पकल्पनोत्पन्नपापपरिणामः । हरिकरिविसविसहरसत्तुणोऽवि दूरं विसेसेइ ॥ ८४ ॥ यस्मात् करिहरि-  
 मुख्या रुष्टा अपि ददति मरणमेकभवम् । अप्पाउ दुप्पउत्तो देइ अणंताइं मरणाइं ॥ ८५ ॥ किंच-अप्पा नइ वेतरणी, अप्पा मे  
 कूडसामली । अप्पा कामदुहा धेनु, अप्पा मे नंदनं वनं ॥८६॥ अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य । अप्पा मित्तममित्तं  
 च, दुप्पट्ठियं सुपट्ठियं ॥८७॥ तद् भव्यैरयमात्मा जेतव्यो मुक्तिमिच्छुभिः सततम् । जेण जिओ चिय आया तेण जियं तिहु-  
 यणंपि जओ ॥८८॥ जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जाए जिणे । एगं जिणिज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ ॥८९॥ पृ. ४३३

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
घर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५९ ॥

संज्ञिनां मनःपूर्विकैः प्रवृत्तिः ३  
श्रौढविशेषणादनुक्तेऽपि विशेष्ये  
विशेष्यप्रतिपत्तयः ५  
न य सोहृद् वेयशुणी वाइजंतीइ वीणाए ८  
नायंमि पडियारो कंहंपि रोगुव्य जं होइ ८  
तम्हा न भव्यनासो एयस्स भवे कर्हिंवि  
कत्थविय १०  
जत्तपहुत्ते हि नहु दोसो १०  
आसक्काओ आक्कीडयाओ १०  
अच्चेसिं पाणीणं ताणकए १०  
नाइंतरेऽवि जंति हि ११  
तो मणसा देवाणं १७

पत्रांकः

## सूक्तिसाक्षिमुखानि

एकोद्विय वरविणओ, १८  
पणयवच्छला गरुआ, १९  
तिरुसुचो मुद्धानं, ३४  
तणुयणमाणसाणं, ३६  
लघूत्थानान्यविघ्नानि ३७  
अलियाववायअभिदूमियस्स ३८  
किं तीइ सिरीए पीवराइ ४८  
पुष्पाभिपस्तोत्रप्रतिपत्तिपूजानां  
यथोत्तरं प्राधान्यं ६२  
पठितं श्रुतं च शास्त्रं १२२  
कृमयो भस्म विष्ठा वा, १३६  
निरर्थका ये चपलस्वभावा, १३६  
नियपाणे परपाणेहिं, १३६

नियपाणचाएणवि परपाणा १४०  
तह जो मरणंतेऽविहु, १४०  
चित्तं क्षमादिभिः शुद्धं १४४  
अप्रशांतमतौ शास्त्रमद्भाव- १४५  
तपस्विनि क्षमाशीले, १४५  
हिंसावागनृतप्रियः, १५६  
धर्मानुष्ठानवैतथ्यात्, १६०  
सहसा विदधीत न क्रियाम्, १६१  
अनुचितकर्मरंभः, १६२  
जं संतेच्चिय कुसले, १६७  
पच्छावि ते पयाया खिपं, १७५  
एगदिवसंपि जीवो, १७५  
सप्पुरिसाण य कोहो, १८७

सूक्तिसा-  
क्षिमुखानि

॥ ५९ ॥

असहकारयंमिवि,	१८७	उपकारिणि विश्रब्धे	२०७	अग्गीइ विणा दाहो,	२२१
उपकारिणि वीतमत्तरे	१८७	चित्तइ अहो महेला	२०७	वारियवासा सच्छंद-	२२१
न य बंधुणो न पद्दुणो	१८७	सोयसरी दुरियदरी	२०७	नियभुयविदत्तविहवो,	२२१
अधिरेण यिरो समलेण	१८७	ते घन्ना सप्पुरिमा	२०७	जाई कुलं च रूवं	२२१
बहुनामत्थेऽधि परंमि	१९९	खरो गोवो मित्तो	२१९	जा जीवियं जणेणं	२२१
जं पुव्वभवे जीवेण	२०२	जउ मंतेहिं तंतेहिं	२१९	अत्थं पत्थेमाणा,	२२१
तं ओसहेहिं विविहेहिं	२०२	जम्मजरामरणभएहिं	२२०	अर्थानामर्जने दुःखम्,	२२१
वरमणलंमि पवेमो	२०३	बहुविहआयइमज्जे	२२०	खणसंजोगविओगा	२२१
न उणो अविमरिसिय-	२०३	जं जेण कयं कम्मं	२२०	सुकुलुप्पत्ती सोहग्गरूव-	२२२
रे जीव! मा विअरसु	२०४	जं जीवाणं पायं पिम्मं	२२०	दालिहं दोहग्गं,	२२२
जह संपत्तीइ मणं	२०४	अन्नं चित्तेइ जणो	२२०	तो आवयाउ संपयसमाउ	२२३
मही भुणोवि	२०४	पविसउ विवरं आरुहउ	२२०	अन्नुन्नदेसजाया	२२३
हेणोऽवि	२०४	केरिसया व विलासा का	२२०	तं अत्थं तं च सामत्थं,	२२३
त धुवो मच्चू	२०७	पत्नी प्रेमवती सुतः सुविनयो	२२०	पुव्वकपसुकयविहियं,	२२३

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६१ ॥

देवपूजा गुरुपास्तिः २२४  
जिणदिट्ठीगोयरे तो, २२५  
भणिउं नमो जिणाणं, २२६  
करधरियजोगमुदो, २२५  
निसीहियाइ पविसित्तु, २२५  
णवणविलेवणआभरण- २२६  
दाहिणदिसा जहोचिय- २२५  
अनिरिक्खंतो तिदिसिं, २२५  
धन्नाणं विहजोगो २२६  
साहम्मियाण वच्छं २२६  
धम्मियजणेहिं न विणा २२६  
साहम्मियम्मि पत्ते निपघरे २२६  
तग्हा सच्चपयत्तेण २२६  
अप्पस्स भावणाओ २२६

पुत्ति ! पवित्तं सीलं पालिज्जसु २२७  
सेविज्जसु नयमग्गं, २२७  
नरो जं जीयंतो नियइ भइसए २२९  
अग्गह चित्तेइ नरो २३०  
जेणेस नमुक्कारो पत्तो, २३९  
पंचनमुक्कारसमा अंते २३९  
पाणिवहालियचोरिय- २७४  
महुमंसभक्खणेणं, २७४  
गुरुक्कोवमाणमायालोभेहि, २७४  
जिणदिट्ठनाणदंसण- २२५  
साहूण साहुणीणं २७५  
मिच्छत्तं अहिगरणं, २७५  
हा दुद्दु कयं हा दुद्दु, २७५  
महद्धिः पापात्मा विरलमपि २७५  
संगं न लभते, २७५

कइया सुत्तित्थपडिमा, २७६  
कुसमयमइनिम्महणं, २७६  
उब्भडसडाकडप्पो २७६  
संकल्पोऽपि न कल्पतल्पजतरौ-, २७६  
अहंःसंहतिमाशु लुंपति २७७  
इच्छामिच्छा तहफार, २७८  
उवसंपया य संमं, २७७  
गुरुभत्ती तवसत्ती, २७७  
भालाईपडियरणं, २७७  
जं होइ सिद्धकओ २८०  
तवसो नत्थि दुरप्पं, २८२  
जिनानां मन्दिरं कुर्यात्, २८८  
कयावि किं खत्तियारणे विमुहा ३६०  
अहवा निम्मेराणं, हवंति एवं- ३६०

सुक्तिसा-  
क्षिमुखानि

॥ ६१ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० सधा-  
चारविधौ  
॥ ६० ॥

अपराहकारयमिधि,  
उपकारिणि वीतमत्तरे  
न य बंधुणो न पद्गुणो  
अधिरेण धिरो समलेण  
बहुसामत्येऽपि परमि  
ज पुत्रभवे जीवेण  
तं ओसहेहिं विनिहेहिं  
वरमणलंमि पवेमो  
न उणो अपिमरिसिय-  
रे जीव ! मा निग्रसु  
जह संपत्तीइ मण  
एगंतसुही भुगणेनि  
जइ चक्किणोऽपि  
जायस्म धुवो मन्चू

१८७ उपकारिणि विश्रब्धे  
१८७ चितइ अहो महेला  
१८७ मोयमरी दुरियदरी  
१८७ ते घना मप्पुरिगा  
१९९ यरो गोरो मित्तो  
२०२ जउ मंतेहिं तंनेहिं  
२०२ जम्मजरा मरणभण्हिं  
२०३ चहुपिह आयडमज्जे  
२०३ जं जेण कयं कम्मं  
२०४ जं जीवाणं पापं पिम्मं  
२०४ अन्नं चित्तेइ जणो  
२०४ पमिमउ विपर आरुहउ  
२०४ केरिमया य विलागा का  
२०७ पत्नी प्रेमवती मुतः मुविनयो

२०७ अग्गीइ रिणा दाहो,  
२०७ वारिययामा मच्छंद-  
२०७ नियभुयपिडत्तविहरो,  
२०७ जाई हुलं च म्पं  
२१९ ना जीवियं जणेणं  
२१९ अत्थं पन्थेमाणा,  
२२० अर्धानामर्चने दुःखम्,  
२२० गणसंजोगपिओगा  
२२० सुहुत्तुप्पत्ती मोहगरु-  
२२० दालिदं दोहमं,  
२२० तो आययाउ संपयगमाउ  
२२० अनुन्नदेमजाया  
२२० तं अत्थं तं च मामत्थं,  
२२० पुज्वरुयसुरुपविदियं,

२०१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२१  
२२२  
२२३  
२२३  
२२३  
२२३

शक्तिमा-  
दिपुराणि

॥ ६० ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६१ ॥

देवपूजा गुरुपास्तिः  
जिणदिट्ठीगोयरे तो,  
भणिउं नमो जिणाणं,  
करधरियजोगमुदो,  
निसीहियाइ पविसित्तु,  
पहवणविलेवणआभरण-  
दाहिणदिसा जहोचिय-  
अनिरिक्रवंतो तिदिसि,  
धन्नाणं विहियोगो  
साहम्मियाण वच्छल्लं  
धम्मियजणेहिं न विणा  
साहम्मियम्मि पत्ते नियघरे  
तम्हा सव्वपयत्तेण  
अप्पस्स भावणाओ

२२४ पुत्ति ! पविचं सीलं पालिअसु  
२२५ सेविअसु नयमगं,  
२२५ नरो जं जीवंतो नियइ भइसए  
२२५ अन्नह चित्तेइ नरो  
२२५ जेणेस नमुकारो पत्तो,  
२२५ पंचनमुकारसमा अंते  
२२५ पाणिवहालियचोरिय-  
२२५ महुमंसभक्खणेणं,  
२२६ गुरुकोवमाणमायालो भेदि,  
२२६ जिणदिट्ठनाणदंसण-  
२२६ साहूण साहुणीणं  
२२६ मिच्छत्तं अहिगरणं,  
२२६ हा दुइत्तु कयं हा दुइत्तु,  
२२६ महज्जिः पापात्ता विरलमपि  
२२६ संगं न लभते,

२२७ कइया सुत्तित्थपडिमा,  
२२७ कुसमयमइनिम्महणं,  
२२९ उन्भडसडाकडप्पो  
२३० संकल्पोऽपि न कल्पत्तल्पजतरौ-  
२३९ अहंःसंहतिमाशु लुंपति  
२३९ इच्छामिच्छा तहकार,  
२७४ उवसंपया य संमं,  
२७४ गुरुभत्ती तवसत्ती,  
२७४ बालाईपडियरणं,  
२२५ जं होइ सिद्धकजो  
२७५ तवसो नत्थि दुरप्पं,  
२७५ जिनानां मन्दिरं कुर्यात्,  
कयावि किं खत्तियारणे विगुहा  
२७५ अहवा निम्मेराणं, हवंति एवं- ३६०

श्रुक्तिसा-  
क्षिमुखानि

॥ ६१ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ६२ ॥

अङ्गरुयपुत्रपञ्चभारपरिगया, ३६१  
तद्विवरीया पुण गुरुसमिद्धि- ३५१  
नहि हेउमंतरेण कयावि किर जायए  
कज्जं ३६२  
संचितसुकृतभराणां जागत्ति सतां  
परं धम्मः ३७४  
पचति हि खलु पापिनां पापम् ३७४  
जं बोहिरयणरहिओ, ३७६  
दिव्वस्स गई अहो दिव्वा ४०३  
सच्छंदपयाराओ सुहेण विलसंति  
बुद्धीओ ३१२  
एतद्धि महापापं परो, ४२०  
असुहाणं कम्माणं जं असुहो चैव  
जायइ विवागो । ४३७

सच्चो पुच्चकयाणं कम्माणं पावए ४३७  
फलविवागं,  
चलति कुलाचलचक्रं मर्यादां  
लंघयन्ति जलनिधयः ४३७  
सो विरलो कोऽपि जणो दुहियं  
जणिऊण जो सुहिओ ४३८  
जातेति चिंता महतीति शोकः,  
कस्मै प्रदेयेति महान् विकल्पः, ४३८  
निर्वचा दहइ मणं विणट्टसीलावि  
देइ दुक्खाइं ४३८  
गुणरिद्धी दूरं वड्डियावि अविणय-  
पवणपडिहणिया ४३९  
नीहारहारधवलोऽवि वच्छ !  
सच्चोवि सुगुणसमुदओ ४३९

अचंतपियोवि वज्जिज्जइ पुरिसो  
विणयवज्जिओ दूरं ४३९  
इय दुव्विणयत्तणदोसनिवहमव-  
लोइऊण बुद्धीए ४३९  
विणयाओ हुंति गुणा गुणेहिं  
लोगोऽणुरागमुव्वहइ ४३९  
विणया नाणं नाणाउ दंसणं  
दंसणाउ चारित्तं ४३९  
चडइ नमंताण गुणो आरूढगुणाण  
होइ टंकारो ४३९

—\*—

श्रुक्तिसा-  
क्षिमुखानि



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ६३ ॥

## साक्षिग्रन्थनामानि

आचारविधिः	पत्र ३
महानिशीथं	२-५-११५-१२२-१२३
	१३३-१६०-६६-६०-४९
भगवती	५-१२३-१२५-१३२-१४०
वसुदेवहिंडी	६-१७-८५-१७३-
	५१-५२-६३-६४-६५
बृहद्भाग्यं	१३-१४-३२-६७-९०-
	५४-६२-६४-६५-१४१-
	१७७-१८१
ललितविस्तरा	१४-३०-१६०-६०-
	६२-१८०
व्यवहारभाग्यं	१४

आवश्यकं	१४-६४
निशीथसूत्रं	१५-६४-६५
निशीथचूर्णिः	१६-६३
विशेषावश्यकं	१६
आवश्यकचूर्णिः	२६-३०-६४-१७८
आवश्यकनिर्युक्तिः	३०
आवश्यकवृत्तिः	३१
व्यवहारचूर्णिः	३१
उत्तराध्ययनं	३२
चैत्यवंदनाचूर्णिः	६१
ठाणंगं	६४
प्रशमरतिः	६५

पूजापंचाशकं	६६
पंचवस्तुकः	६७-१७१-१८०
त्रिपटीयशलाकाचरित्रं	६७-१००
पूजाषोडशकम्	६५-६७
चैत्यवंदनलघुभाग्यं	९०
कल्पविशेषचूर्णिकः	१०७
जीर्णोद्धारप्रकीर्णकः	१०१
योगतत्त्वरत्नसारः	११२
दशवैकालिकम्	१२३-१८२
आचारांगचूर्णिः	१३२
ज्ञाताधर्मकथाङ्गम्	१३४
चैत्यवंदनाविवरणम्	१३४

साक्षिग्रन्थ-  
नामानि

॥ ६३ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ६४ ॥

पष्ठांगमूत्रं  
जीवाभिगमलघुविवरणम्  
पंचाशकं  
लघुभाष्यं  
पंचाशकवृत्तिः  
मार्कण्डेयपुराणम्  
कल्पनिशीथचूर्णिः  
आचाराङ्गचूर्णि  
पंचस्थानकः  
लघुभाष्यं  
कल्पनिर्युक्तिः  
निशीथभाष्यं  
पाक्षिकचूर्णिः  
कल्पभाष्यं

१३९	चैत्यवन्दनाचूर्णिः	१८२
१४०	शालिसूरीयभाष्यं	१८३
१५१	आचारांगचूर्णि १९६-२५०-२६७-३३४	
१५१	बृहद्भाष्यं	२०९-३२४
१५२	महानिशीथम् २०९-२११-२४१-४३४	
१५२	उत्तराध्ययनम्	२०९-२८५
१५२	नमस्कारपंजिकासिद्धचक्रादिः २१०-११	
१५२	अष्टप्रकाशी	२१०
१६६	छंदःशास्त्रम्	२१०
१७६	चैत्यवन्दनभाष्यं	२१०
१७९	प्रवचनसारोद्धारः	२१०
१७९	बृहन्नमस्कारफलं	२११
१८१	आवश्यकवृत्तिः	२१२-४३४
१८१	व्यवहारभाष्यं	२५०

आचारांगमूत्रं	२६५
भागवतपुराणं	२६७
लघुभाष्य	३०३
आवश्यकचूर्णिः ३०३-३१२-३१३-३८०	
जीवाभिगमः	३०३
ललितविस्तरा ३०३-३५१-३९४-४०१	
चैत्यवन्दनाचूर्णिः	३०४-३५१
धम्मरयणवित्ती	३१६
निशीथचूर्णिः	३५०
आवश्यकम्	३७९-३८१
महापुरुषचरितं	३८२
निशीथचूर्णिः	४४६
पंचवस्तुकः	४५२

ॐ\*

साक्षिग्रन्थ-  
नामानि

॥ ६४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चरविघौ  
॥ ६५ ॥

## साक्षिलोकाद्यपदानि

भवकोटीदुष्प्रापामवाप्य	२	सुयसायरो अपारो	१४	अत्थं भासइ अरिहा	१६
संक्षेपात् कथ्यते धर्मो	२	सर्वज्ञोक्तोपदेशेन	१४	जिणगणहरगुरुदेसिय—	१६
नोपकारो जगत्यस्मिन्	२	चिइवंदणाइ सम्मं सोउं	१४	ते तावत्कृतिनः परार्थघटकाः	
से भयवं! किं तं पइदिणकिरिपं	१-२	सुत्तं गणहररइयं	१४	स्वार्थस्य नाशेन ये	१९
एष पंचनमस्कारः	५	अपरिच्छियसुयनिहस्त	१५	जो जत्तिअस्त अत्थस्त	१९
तस्स णं सयलसुक्खहेउसंचयस्स	५	जं जह सुत्ते भणियं	१५	नाकारणरुपां संख्या	१९
सयंपभाकन्ना	६	व्याख्याततो विशेषप्रतिपत्तिः	१५	गच्छउ दूरं आरुहउ	१९
सिरिविजओवि	११	वत्तणुवत्तपवत्तो	१५	अप्रवृत्तिगतं भूपं	२०
चित्तं मणो पमत्थं	१३	मग्गो आगमनीइं	१५	किं मिच्चो सोऽवि न	२०
भावजिणप्पमुहाणवि	१३	उस्सुत्तमणुवइइं	१५	तो पढियं तो गुणियं	२०
श्रुत्वाऽमिधेयं शास्त्रादौ	१३	उस्सुत्तं नाम सुत्तादवेयं	१६	वरिसित्ता अमियरसं	२०
प्रयोजनमनुद्दिश्य	१४	प्रेक्षावतां प्रवृत्त्यर्थं	१६	पुरिसो मयणविहुरिओ	२१

साक्ष्या-  
द्यपादः

॥ ६५ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६६ ॥

नचंति य गायंति य  
दुहखाणी सुहअगणी  
आसाइ जो पद्दुत्तं  
उशना वेद यच्छासं  
इयं पसंगेण वन्निअं  
साहूण गिहत्थाण य  
उदामसरं वेयालिउव्व  
वामं आणुं अंचेइ  
तिविहा पूया-पुप्फेहिं  
पश्यति प्रथमं रूपं  
भुवणेकगुरुजिणिंदपडिमासु  
जइ तिन्नि चाराए  
पंचविहाभिगमेणं  
एणं निणं मुत्तूण

२१ दव्यच्चणमिह सावयसीलं  
२१ देविंदेण य इमं इत्थ-  
२१ धूवं दाउं तओ सुरहिमह्ल-  
२१ दो जाणू दुन्नि करा  
२५ तिविहा पूआ-पुप्फेहिं  
२६ जिणपडिमाओ लोमहत्थएण  
३१ ण्हवणविलेवणआहरण  
३४ वत्थेण पंधिरुणं नासं  
३४ कायकंडूयणं वज्जे  
३४ नाणाफलेहिं व धएहि निचं  
३४ कयाइ य देवकज्जे  
३५ साहम्मिओ न सत्था  
३६ संप्रतिराजा रहग्गओ य  
३८ विविहभक्खपाणगपडिपुत्ता

४९ पभावईए देवीए  
५१ बलित्ति असिवोवसमणनिमित्तं  
५२ कीरइ बलित्ति तं आढगं  
५५ तेणेव सिद्धाययणस्स  
६१ विविहभक्खपाणगपडिपुत्ता  
६२ रहग्गओ विविहफलखज्जग-  
६२ जो पंचवन्नसत्थिय-  
३२ गंधव्वनट्टवाइय-  
६२ सरसेणं गोसीसचंदणेणं  
६३ सो उ गंधारसावओ  
६३ कयाइं च भाणुसिट्ठी  
६३ पंचोवयारजुत्ता पूया  
६३ पंचोपचारयुक्ता काचित्  
६३ चैत्यायतनप्रस्थापनानि

६४  
३४  
६४  
६४  
६४  
६४  
६४  
६४  
६५  
६५  
६५  
६५  
६५

साक्ष्या-  
द्यपादः

॥ ६६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६७ ॥

अग्नेहि वरेहि य  
वरगंधधूवअक्खेहिं  
सब्बोपयारपूया  
मंगलदीपाइ तहा  
पक्खंदे जलियं जोई  
तवनियमेण य मुक्खो  
पूजया विपुलं राज्यम्  
अज्ज अट्टमीए दिणओ  
उभयकरधरियकलसा  
जे अ अइयगाहाए  
समहियजोयणापिहुलो  
विट्ठ्ठाइं सुरहिं  
वड्ढइरयणं भणियं  
इय पाडिहेरिद्धी

६६ चाउक्कोणा तिन्नि पागारा  
६६ रइऊण समोसरणे  
६७ सोवाणपंतिआणं  
६७ कोसदुगं वियतइए  
७२ पिंडे मुक्खा पदे मुक्खा  
७५ अरहंता भगवंतो  
७६ स्वर्णादिबिबनिप्पत्तो  
८५ तएणं तस्स संखस्स  
९० पायविहारचारेणं  
९० गमणागमणाए पडिक्कमइ  
९९ सक्केणं भंते !  
९९ भुयणेक्कगुरुजिणिंद-  
१०० सक्कत्थयाइयं चेइयंदणं  
१०० तएणं सा दोवई

१०७ तिहिं ठाणेहिं जीवा  
१०७ अन्नंपि तिप्पयारं  
१०७ इह पणिहाणं तिविहं  
१०७ चित्तइ न अन्नकजं  
११२ सव्वत्थवि पणिहाणं  
११२ चन्नाइसु उवओगा  
११३ वड्ढइ धम्मज्झाणं  
१२५ स्वर्णादिप्रतिमा  
१२५ अनिएअवासो समुआणचारिआ  
१२५ चरेन्माधुकरीं घृत्तिम्  
१३२ कम्माण मोहणीयं  
१३३ उन्नयमविकसु निन्नस्स  
१३४ अविहिकया वरमकयं  
१३९ धर्मानुष्ठानवैतथ्यात्  
१४०  
१४१  
१४१  
१४१  
१४१  
१४२  
१४३  
१४३  
१४४  
१४५  
१५१  
१६०  
१६०  
१६४

साक्ष्या-  
द्यपादः

॥ ६७ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
वर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ६८ ॥

जह चेव उ मुखकला  
वंदइ पडिपुच्छइ पञ्जुमासई  
ते चिअ चारणमाहू  
दो सासयजत्ताओ  
अप्पेणवि कालेणं केइ  
जे य अइयगाथाए  
सेहमिह वामपासं  
केचिअन्या अपि पठंति  
दंडपंचगथुइजुयल—  
विरइपडिवत्तिकाले  
इइ ललियवित्थरावित्तीइ  
उकोसा तिविहावि  
निस्सकडमनिस्सकडे  
चिइवंदणं तु नेयं

१५६ जह इत्तिअमित्तं  
१७२ जं जह सुत्ते भणियं  
१७३ ता गोयमा ! अप्पडिकंताए  
१७४ अभिक्खणं काउसग्गकारी  
१७५ उकोम जहन्ना पुण  
१७६ मक्कत्थयाइदंडगपंचग—  
१८० दुब्भिगंधमलस्सावि  
१८० दंडगपंचगथुइजुयल—  
१७९ उकोसुकोमिया य पुण नेया  
१८१ चिइवंदणा तिभेभा  
१८१ कहां नमंति ? सिरपंचमेण काएणंति  
१८१ अन्ने अदट्टवयारं भणंति  
१८१ एक्कावि जा ममत्था  
१८१ पयत्तेण धूवं दाऊण

१८१ जिणविंवाभावे पुण २०९  
१८२ थयथुइमंगलेणं भंते ! २०९  
१८२ तस्स य सयलसुक्खहेउ— २०९  
१८२ पंचपयारणं पणतीस २१०  
१८२ आग्नेय्यादिविदिग्गव्यवस्थितेषु २१०  
१८२ सत्त पण मत्त सत्त य २१०  
१८२ विपमाक्षरपादं वा २१०  
१८३ पंचपरमिड्डिमंते २१०  
१८३ अंतिमचूलाइ तिर्यं २११  
१८३ तहेव य तदत्थाणुगमियं २११  
१९६ एयं तु जं पंचमंगलमहासुक्खंधस्स २११  
१९६ प्रशस्तवागादीनां दानं वंदणं २१३  
२०१ पूजापि गंधमाल्याधिवासधूप— २१३  
२०२ इत्थ नमुत्तिपयं २१४

साक्ष्या-  
घपादः

॥ ६८ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६९ ॥

देवासुरमणुएसुं अरिहा  
अडवीइ देसिअत्तं तहेव  
अरिहंतुणएसेणं सिद्धा  
नत्थि व र्हो य छन्नं  
न र्हंति न चयंति नाणाइ  
इंदियविसयकमाए  
अरिणा वा धम्मचकेण  
सुत्तथविऊ लक्खणजुत्तो  
पंचविहं आयारं आयरमाणा  
संग्रामसागरकरीन्द्रभुजंगसिंह-  
अहिमकानि भूतानि  
पशवो ये तु हिंसंति  
यावंति रोमरूपानि  
घातको ब्रध्यते नित्यं

२१४  
२१४  
२१५  
२१५  
२१५  
२१५  
२१६  
२१६  
२१७  
२१७  
२३४  
२३४  
२३४  
२३४  
२३४

देवानामर्थतः कृत्वा  
स्वाहासुधाऽमृतभुजो  
मुचूण जिणं मुत्तूण  
गोयरगपविट्ठी उ  
से भयवं! एवं जहुत्तविण-  
पुष्कामिसपूयाओ काउं  
अप्पडिक्कंताए इरियावहियाए  
किचाकिचं गुरुणो वियंति  
जिणाणाए कुणंताणं  
खंती महव अज्जव  
आलावो संलावो वीसंभो  
किं पिच्छसि साहणं  
पासत्थाई वंदमाणस्स  
ओयह दडुकलेवरहु

२३६  
२३६  
२३७  
२४०  
२४१  
२४२  
२४२  
२४३  
२४३  
२४३  
२४३  
२४४  
२४४  
२४५

नवनवइसयं इरियावहियाए  
जीया विराहिया पंचमी उ  
आयरियग्गहणेणं तित्थयरो  
आयरिया तित्थयरा'  
गुरुविरहंमि उ ठवणा  
आणाबलाभिओगो  
नियआलयाओ गमणं  
गमणागमण विहारे सुत्ते वा  
भत्ते पाणे व सयणासणे य  
हत्थगयादागंतुं गंतुं च  
से वेमि इमंपि जाइधम्मयं  
आगमथोपपत्तिथ  
कुसुंभकुंकुमांभोवन्नित्तं  
पृढवीचित्तमंतमन्खाया

२४८  
२४९  
२५०  
२५०  
२६२  
२६२  
२६३  
२६३  
२६३  
२६३  
२६५  
२६५  
२६६  
२६७

साक्ष्या-  
घपादः

॥ ६९ ॥

रीदे०  
पैत्य०थी-  
वर्म०संपा-  
चारविधौ  
॥ ७० ॥

तेज्जाउ विहणा एवं सेमावि २६७  
 पृथिव्यामप्यहं पार्थ ! २६७  
 यो मां नरगतं ज्ञात्वा २६७  
 अहमा संताणवो पिपीलियाईणं २६७  
 कयपागोवि मणुस्मो २६८  
 आभोगमणाभोगे २६८  
 जसज्जरो य धेरो २६९  
 जस्म य इच्छाकारो २७५  
 तस्म य पायच्छित्तं २७८  
 ता उद्धरंति गास्वरद्विया २७९  
 प्रलंबितभुंजद्वंद्वमूर्ध्व- २७९  
 काउसगो जह सुद्वियस्म २७९  
 निष्ठाइ दज्ज भायोवउत्त २८५  
 अत्थुत्ति पत्थणा दुत्तहो २८५

विति अणासंसं चिय २८५  
 अरहंता तित्थयरा २८५  
 जिणअट्टपाडिहेर- २८५  
 अरहंति वंदणनमंणाणि २८६  
 न रहंति न चयंति णाणाई २८६  
 नत्थि व रहो य छन्नं २८६  
 संगुवलकखणभूओ २८६  
 दग्घे वीजे यथाऽत्त्यंतं २८७  
 ईमरिअ जसो रूवं २८७  
 सन्वसुरा जइ रूवं २८७  
 साक्षाद्द्वेन्द्रभूतिः समवसृतिभुवो- २९२  
 नाणं पयासगं सोहओ ३००  
 दइदंमि जहा वीए न होइ ३०२  
 मन्वन्नूयाइ पढमो वीओ ३०३

विमयवहुत्ते किरिया- ३०३  
 सज्जायझाणतवओस- ३०२  
 उक्कोमपएणं सत्तर- ३०३  
 पुव्वाहिगाराभिहिय- ३०४  
 अनियाणकडा रामा ३१०  
 सो विणएण उवगओ ३१२  
 उट्टिय जिणमुद्दाठियचलणो ३१२  
 अरहंति वंदणनमंणाणि ३१३  
 नत्थि व रहो य छन्नं ३१३  
 सिद्धाई अरहंता ३१३  
 पूजा च गन्धमाल्यादि- ३१३  
 अकसिणपवत्तगाणं ३१४  
 पूयाफलपरिकहणा ३१४  
 अगणीओ छिदिज्ज व ३१८

साक्ष्या-  
द्यपादः

॥ ७० ॥



श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ७१ ॥

अदृष्टसासपमाणा उस्सग्गा  
मिहिलाए नयरीए विजय-  
निसीहियत्ति निग्गणं  
मिच्छादंसणमहणं  
अवंतीजणवए उडोणी नयरी  
अर्थात्रिवर्गनिष्पत्तिः  
गुणपगरिमवहुमाणो  
नो खलु अप्परिवडिए  
विहियंपि भापरहियं  
कायकिरियाइ जोगा  
विहिसुद्धमणुड्डाणं  
विगइं विगईभीओ  
धूमसय भाउयाणं  
सचरिसयमुक्कोसं

३२० जस्सट्टाए कीरइ नग्गभावे  
३२४ तं नाणं तं च विश्राणं  
३३४ औचित्यमेकमेकत्र,  
३४२ आरंकाव् भूपत्तिं यावत्  
३५० जीयंति वा करणिउंति वा  
३५७ जो नवि वहुइ रागे  
३७१ रत्तो दुड्ढो मूढो  
३७१ बहुसुयकमाणुपत्ता  
३६३ अवलंविऊण कउं जं  
३६३ संविग्गा विहिरसिया  
३६३ तदपरिज्ञानेऽप्यस्मात्तच्छुभ-  
३६३ भूतस्य भाविनो वा भावस्य  
३८१ आरंभपत्तत्ताणं गिहीण  
३८२ अकसिणपवत्तगाणं

३८४ वयभंगे गुरुदोसो ४१७  
३८५ भत्ते पाणे सयणासणे य ४२३  
३८६ जिणचेइए वंदमाणस्स ४३४  
३८६ तओ तित्ति थुईओ ४३४  
३९२ गोयमा ! जे केइ मिरसू वा ४३५  
३९३ चिइवंदणपडिक्कमणं गाहा ४३५  
३९३ चेइएहिं अवंदिएहिं जाव ४३५  
३९३ इरियाकुसुमिणुसग्गो ४३५  
३९४ रज्जुग्गहणे विसभवखणे य ४३९  
३९४ पुव्वभवविहिजहविहिचिइवंदण- ४४१  
४०१ धनदो धनार्थिनां धम्मः, ४४४  
३७८ ताहे पभावई ष्हाया ४४५  
४११ उट्टिय जिणमुहाठियचरणो ४५१  
४११ सम्पूर्णा विपयायनुक्कमणिकाः ५

साक्ष्या-  
धपादः

॥ ७१ ॥

## श्रीसंघाचारविधेरूपक्रमः

श्रीसंघाचारत्वं-जगति विदितमेतद् विपश्चितां यदुत श्रीमञ्जिनाज्ञानुसारिणां समुदायः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूपमोक्ष-  
मार्गं विघ्राणाना समुदायश्च संघ इति मण्यते, यतो गुणसंघातमया एते एव, एवं च यथा सर्वेषामेवाज्ञानुमारिणां संघत्वं व्यवहा-  
रपतितं तर्थात्कस्यापि श्रीजिनेन्द्रप्रचनानुमारिणो गुणसंघातत्वात् अव्याहृतमेव संघत्वं, तथा च समुदाये संकेतिताः शब्दा  
अत्रयत्रेऽपि केवलान्तरस्य स्वरत्नत्वात् प्रवर्तते इति न्यायेन केवलस्यापि साध्यादेः श्रीसंघत्वं, तथा गुणसंघातार्थेनार्थत्रयादप्येक-  
स्यापि साध्यादेः श्रीसंघत्वमव्याहृतमेव, एवं च न चैत्यवन्दनादिक्रः सघाचारः समुदायसहकृतः, किंतु प्रत्येकमेव साध्यादीना-  
माचरणीय एव, यदा अविशेषेणैव चैत्यवन्दनायाः मर्त्येव साध्यादिभिराचरणीयत्वात् संघाचारत्वं सामायिकादीनां संघाचारत्वे  
मत्यपि देशमर्षविशतिभतां तानि सामायिकादीन्याचारविषयाणि, पर यावज्जैनं चैत्यवन्दनाया एवाचरणीयत्वात् यथावदस्या एव  
संघाचारता,

आचश्यकता-अत एव श्रीमहानिशीथसूत्रप्रतिपादिता चैत्यवन्दनाया आवश्यकता संगतिमंगति, किंच-श्रीमहानिशीथे  
श्रावणवर्गमाश्रित्य स्पष्टं त्रिकालं चैत्यवन्दना प्रतिपादिता, न केवलं प्रतिपादिता, किंतु प्रातरुदकपानात् मध्याह्ने भोजनात् सायं  
श्रयातलाक्रमणाच्च प्राहू तस्या अशक्यव्यता तदीयाभिग्रहस्य करणीयतां प्रतिपाद्य नियमिता,

चैत्यानां वंद्यता-श्रीमत्सूत्रराध्ययनेषु मन्व्यक्तपराक्रमाध्ययने ज्ञानदर्शनचारित्राणां संपत्तिर्बोधिलाभस्य जनकता च स्त-  
स्तुतिमंगलेन स्पष्टतर निर्दिष्टा, स्तयादिषु च प्रणिधानमध्ये स्तवस्य कायोत्तमगान्तरमेव स्तुतेः चैत्यवन्दनाकरणस्य प्रारभ एव च

संघाचारापराभिधानाया विधानात् वृत्तिस्फुटितानां पदार्थानां न कथंचनापि मूलग्रन्थस्थितार्थविवक्षाया लेशतोऽपि बाधकता, गुरुशिष्यत्वसंबन्धश्चेतेषां पुरस्तात् निर्देक्ष्यमाणानेकग्रन्थपाठात् सुगम एव, तथा च ये ये दृष्टान्ता यत्र यत्राधिकारे श्रीमद्भिर्वृत्तिकृत्तिर्वितता न ते मूलकृता विपक्षामन्तरेणेति न निश्चेतुं दुःशकं,

ग्रंथे मतान्तराणां खंडनं—श्रीसंघाचाराभिधानेऽत्र वृत्तिग्रन्थे निम्ननिर्दिष्टाना चैत्यमंदनाविषयकसूत्रसंबन्धिनां मतान्तराणां खंडनमुपलभ्यते—

१ रात्रौ मन्दिरे गमनं निषिध्य यो विम्बानां तदा स्तुत्यादीन् निषेधयति खरतरादिस्तस्य प्रसुदेवहिण्डीग्रन्थाक्षरैरेव विहितं खंडनं  
२ श्रीमज्जिनानां पुरस्तात् नैवेद्यफलबल्यादीनां पूजाया निषेधं पल्लविकादिर्यस्तनोति तस्यापि श्रीप्रसुदेवहिण्डवक्षरैरेव खंडितं मतं  
३ यत्र श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्कारे छन्दोभंगनाम्ना होइत्तिपाठे बद्धाग्रह आंचलिकस्तस्यापि श्रीमहानिशीथसूत्रश्रीआवश्यकसू-  
त्रीयमलयगिरिकृतवृत्तिश्रीप्रवचनसारोद्धारादिग्रन्थपाठैर्विहितं विस्तरेण प्रतिविधानं,

४ यत्र श्रीजिनपस्याग्रे ईर्यापथिक्यां स्थापनाचार्यस्थापनरसिकस्तस्यापि श्रीस्कंदकचरितेन साधितं समाधानं  
५ यत्र नाभिमन्यते सिद्धाना पूजा सोऽप्याप्रश्यकाचारागव्याख्याश्रीविशेषावश्यकभाष्याक्षरैः सिद्धानामर्हच्छब्दवाच्यतां पूज्यतां चोपदर्श्य निरुत्तरी कृतो नीरुद्धं च तन्मतं

६ यत्रैर्यापथिक्या दैवसिकत्वादिप्रतिक्रमणतामूरीकृतवान् सोऽपि निराकृत आवश्यकीयक्रायोत्सर्गस्थानदर्शनेन  
७ यत्र सर्वानुष्ठानानामैर्यापथिक्याः प्रतिक्रमणमादौ न भवमान् तस्यापि श्रीमहानिशीथदशवैकालिकाद्यक्षरैर्निरुत्तरतां वि-

तीर्णवन्तः पूज्यपादाः

८ यत्र चैत्यवन्दनायां सुरस्मरणस्य निषेधं निश्चितवान् तस्यानेकशः सुरस्तुतिः कायोत्सर्गयोर्नियततां प्रदर्श्य सूचितवांसो मिथ्यात्वमोहान्धतां ॥ इत्येवमादीन्यनेकानि मतान्तराणि तत्रभवद्भिरुन्मूलितानि मूलतः, याथातथ्येन तज्ज्ञानं तु सकलशास्त्रार्थावबोधेनैव बोध्यं,

स्तुतिचतुष्कपद्धतिः—यद्यपि श्रीवर्धमानसूरीणां श्रीमदभयदेवसरिपितामहानां शिष्यवरैः श्रीशोभनमुनिभिः प्रतिजिनं स्तुतिचतुष्कं कृतं प्रख्यातमेव, विधिवादेन तु भवविरहकालात् प्राक्तनत्वं, परं श्रीमद्भिः प्रतिजिनमेकैकां स्तुतिं विरचय्य सर्वजिनादिस्तुतयः प्रान्त्यभागे न्यस्ताः, न चेयं पद्धतिरपि श्रीमदुपज्ञा, यतः श्रीजैनस्तोत्रसंग्रहेऽप्येवमनेकानां कृताः स्तुतयः पूर्वपुरुषसमाहता विद्यन्ते, तद्यथा—१ पृष्ठे १२० श्रीपालसूत्रिताः २ पृष्ठे ७० श्रीचारित्ररत्नरचिताः ३ पृष्ठे पूर्वाचार्यविद्वधाः ४ पृष्ठे २०६ जिनपतिप्रतताः ५ पृष्ठे २२० जिनेश्वररचिताः ६ पृष्ठे २१६ जिनप्रभीयाः, तथा च स्तुतिचतुष्ककरणं न नूतनं, सुरस्मरणस्य नियतता च श्रीमद्भिरनेकशोऽनेकधोद्भाविता

श्रीमतां गच्छः—प्रकृतप्रकरणकाराः श्रीधर्मघोषसूरयः श्रीजैनशासनाविच्छिन्नाविरुद्धपारंपर्यप्रधानश्रीमतस्तपोगच्छस्य विभूषणाः, यतो नैष गच्छोऽविचलां चतुर्दशीं विलोप्य पूर्णिमाप्रवर्तकवत् मुखवस्त्रिकां शास्त्रसमुदायसिद्धां प्रतिपिष्याश्चलग्रहणप्रवर्तकवच्च नवीनप्रवर्तनोत्थनामधारकः, न च खरारटनखरतरवत् 'सुरपर वर लद्ध' इत्यादिषु प्राक्तनप्रबन्धेषु 'खरपर वर लद्ध' इत्यादि परावृत्तिपरायणीभवनभंगीरतः, निजकठोरभाषकतानिवन्धनखडगतलाभिधानरूढेः स्वीकर्तृवत् दृग्गुणगुणातिभृद्य, किंतु निर्ग्रथत्व-

संघाचारापराभिधानाया विधानात् वृत्तिस्फुटितानां पदार्थानां न कथंचनापि मूलग्रन्थस्थितार्थविवक्षाया लेशतोऽपि बाधकता, गुरुशिष्यत्वसंबन्धैतेषां पुरस्तात् निर्देक्ष्यमाणानेकग्रन्थपाठात् सुगम एव, तथा च ये ये दृष्टान्ता यत्र यत्राधिकारे श्रीमद्भिर्वृत्ति-  
कृद्भिर्वितता न ते मूलकृतां विवक्षामन्तरेणेति न निश्चेतुं दुःशकं,

ग्रंथे मतान्तराणां खंडनं—श्रीसंघाचाराभिधानेऽत्र वृत्तिग्रन्थे निम्ननिर्दिष्टानां चैत्यवंदनाविषयकसूत्रसंबन्धिनां मतान्तराणां खंडनमुपलभ्यते—

१ रात्रौ मन्दिरे गमनं निषिध्य यो विम्बानां तदा स्तुत्यादीन् निषेधयति खरतरादिस्तस्य वसुदेवहिण्डीग्रन्थाक्षरैरेव विहितं खंडनं  
२ श्रीमञ्जिनानां पुरस्तात् नैवेद्यफलबल्यादीनां पूजाया निषेधं पल्लविकादिर्यस्तनोति तस्यापि श्रीवसुदेवहिण्ड्यक्षरैरेव खंडितं मतं  
३ यश्च श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्कारे छन्दोभंगनाम्ना होइत्तिपाठे बद्धाग्रह आंचलिकस्तस्यापि श्रीमहानिशीथसूत्रश्रीआवश्यकसू-  
त्रीयमलयगिरिकृतवृत्तिश्रीप्रवचनसारोद्धारादिग्रन्थपाठैर्विहितं विस्तरेण प्रतिविधानं,

४ यश्च श्रीजिनपस्याग्रे ईर्यापथिक्यां स्थापनाचार्यस्थापनरसिकस्तस्यापि श्रीस्कंदकचरितेन साधितं समाधानं

५ यश्च नाभिमन्यते सिद्धानां पूजां सोऽप्यावश्यकचारांगव्याख्याश्रीविशेषावश्यकभाष्याक्षरैः सिद्धानामर्हच्छब्दवाच्यतां पूज्यतां चोपदर्श्य निरुत्तरी कृतो नीरुद्धं च तन्मतं

६ यश्चैर्यापथिक्या दैवसिकत्वादिप्रतिक्रमणतामूरीकृतवान् सोऽपि निराकृत आवश्यकीयकायोत्सर्गस्थानदर्शनेन

७ यश्च सर्वानुष्ठानानामैर्यापथिक्याः प्रतिक्रमणमादौ न मतवान् तस्यापि श्रीमहानिशीथदशवैकालिकाद्यक्षरैर्निरुत्तरतां वि-

तीर्णवन्तः पूज्यपादाः

८ यत्र चैत्यवन्दनायां सुरस्मरणस्य निषेधं निश्चितवान् तस्यानेकशः सुरस्तुतिः कायोत्सर्गयोर्नियततां प्रदर्श्य सूचितवांसो मिथ्यात्वमोहान्धतां ॥ इत्येवमादीन्यनेकानि मतान्तराणि तत्रभवद्भिरुन्मूलितानि मूलतः, याथातथ्येन तज्ज्ञानं तु सकलशास्त्रार्थावबोधेनैव बोध्यं,

स्तुतिचतुष्कपद्धतिः—यद्यपि श्रीवर्धमानसूरीणां श्रीमदभयदेवसुरिपितामहानां शिष्यवरैः श्रीशोभनमुनिभिः प्रतिजिनं स्तुतिचतुष्कं कृतं प्रख्यातमेव, विधिवादेन तु भवविरहकालात् प्राक्तनत्वं, परं श्रीमद्भिः प्रतिजिनमेकैकां स्तुतिं विरचय्य सर्वजिनादिस्तुतयः प्रान्त्यभागे न्यस्ताः, न चेयं पद्धतिरपि श्रीमदुपज्ञा, यतः श्रीजैनस्तोत्रसंग्रहेऽप्येवमनेकाचार्यकृताः स्तुतयः पूर्वपुरुषमादृता विद्यन्ते, तथा—१ पृष्ठे १२० श्रीपालसूत्रिताः २ पृष्ठे ७० श्रीचारित्ररत्नरचिताः ३ पृष्ठे पूर्वाचार्यविद्वन्धाः ४ पृष्ठे २०६ जिनपतिप्रतताः ५ पृष्ठे २२० जिनेश्वररचिताः ६ पृष्ठे २१६ जिनप्रभीयाः, तथा च स्तुतिचतुष्ककरणं न नूतनं, सुरस्मरणस्य नियतता च श्रीमद्भिरनेकशोऽनेकधोद्भाविता

श्रीमतां गच्छः—प्रकृतप्रकरणकाराः श्रीधर्मघोषसूरयः श्रीजैनशासनाविच्छिन्नाविरुद्धपारंपर्यप्रधानश्रीमतस्तपोगच्छस्य विभूषणाः, यतो नैष गच्छोऽविचलां चतुर्दशीं विलोप्य पूर्णिमाप्रवर्त्तकवत् मुखवस्त्रिकां शास्त्रसमुदायसिद्धां प्रतिपिध्याञ्चलग्रहणप्रवर्त्तकवच्च नवीनप्रवर्त्तनोत्थनामधारकः, न च खरारटनखरतरवत् 'सुरवर वर लद्ध' इत्यादिषु प्राक्तनप्रबन्धेषु 'खरयर वर लद्ध' इत्यादि परावृत्तिपरायणीभवनभंगीरतः, निजकठोरभाषकतानिबन्धनखडतलामिधानरूढैः स्वीकर्त्तृवत् दुर्गुणख्यातिभृच्च, किंतु निर्ग्रथत्व-

संभाचारापरामिभानाया विभानात् प्रथिम्फुटितानां पदार्थानां न कथंचनापि मूलग्रन्थस्वितार्थविश्रया लेशतोऽपि बाधकता, गुरुशिष्यस्वसंबंधतेषां पुरस्तात् निर्देश्यमाणानेकग्रन्थपाठात् गुणम एव, तथा च ये ये एष्टान्ता यत्र यत्राधिकारे श्रीमद्भिर्गुत्ति-  
 कृद्भिर्विज्ञेता न ते मूलकृतां विवश्रामन्तरेणोति न निधेतुं युशकं,

अंशे मत्तान्तराणां संखनं- श्रीसंभाचाराभिधानेऽथ प्रथिग्रन्थे निम्ननिर्दिष्टानां चैत्यसंदनाविषयकप्रसंघभिनां मतान्तराणां संखनमूपलभ्यते—

१ राश्री मन्दिरे गगनं निषिध्य यो विम्भानां तदा स्तुत्यादीन् निषेभयति स्वगतरादिस्वाम्य ऋगुदेवहिण्डीग्रन्थाधरैरेव विहितं खंडनं  
 २ श्रीमञ्जिनानां पुरस्तात् नेषेद्यफलषल्यादीनां पूजाया निषेधं पाङ्गविहादिर्यस्तनोति तस्यापि श्रीवगुदेवहिण्डीधरैरेव खंडितं मतं  
 ३ यथ श्रीपंचपरमेष्ठिनमस्कारे छन्दोमंगनाम्ना दोश्चिपाठे बद्धाग्रह आंचलिकस्तस्यापि श्रीमहानिशीथयश्रीआपश्यकय-  
 श्रीयमलयगिरिकृतप्रथिप्रवचनसारोद्धारादिग्रन्थपाठेविहितं विस्तरेण प्रतिविधानं,

४ यथ श्रीजिनपस्याग्रे ईर्यापथिकयां स्थापनाचायस्थापनरसिकस्तस्यापि श्रीस्कंदकचरितेन साधितं गमाधानं  
 ५ यथ नामिमन्यने सिद्धानां पूजां मोऽप्यापश्यकानामंगन्याख्याश्रीविशेषावश्यकमाप्याधरैः मिद्धानामर्गच्छन्दनाच्यतां  
 पूज्यतां चोपदर्थं निरुपरी कृतो नीरुद्धं च तन्मतं

६ यथैर्यापथिकया देवसिकत्यादिप्रतिक्रमणतागुरीकृतवान् मोऽपि निराकृत आवश्यकीयकायोत्सर्गस्थानदर्शनेन  
 ७ यथ गपानुष्ठानानामैर्यापथिकयाः प्रतिक्रमणमादौ न भवतान् तस्यापि श्रीमहानिशीथदसर्गैकालिकाधरैर्निरुत्तरतां वि-

तीर्णवन्तः पूज्यपादाः

८ यत्र चैत्यवन्दनायां सुरस्मरणस्य निषेधं निश्चितवान् तस्यानेकशः सुरस्तुतिकारयोत्सर्गयोर्नियततां प्रदर्श्य सूचितवांसो मिथ्यात्वमोहान्धतां ॥ इत्येवमादीन्यनेकानि मतान्तराणि तत्रभवद्भिरुन्मूलितानि मूलतः, याथातथ्येन तज्ज्ञानं तु सकलशास्त्रार्थावबोधेनैव बोध्यं,

स्तुतिचतुष्कपद्धतिः—यद्यपि श्रीवर्धमानसूरीणां श्रीमदभयदेवस्वरिपितामहानां शिष्यवरैः श्रीशोभनमुनिभिः प्रतिजिनं स्तुतिचतुष्कं कृतं प्रख्यातमेव, विधिवादेन तु भवविरहकालात् प्राक्तनत्वं, परं श्रीमद्भिः प्रतिजिनमेकैकां स्तुतिं विरचय्य सर्वजिनादिस्तुतयः ग्रान्त्यभागे न्यस्ताः, न चेयं पद्धतिरपि श्रीमदुपज्ञा, यतः श्रीजैनस्तोत्रसंग्रहेऽप्येवमनेकाचार्यकृताः स्तुतयः पूर्वपुरुषसमाहता विद्यन्ते, तद्यथा—१ पृष्ठे १२० श्रीपालसूत्रिताः २ पृष्ठे ७० श्रीचारित्ररत्नरचिताः ३ पृष्ठे पूर्वाचार्यविद्वन्धाः ४ पृष्ठे २०६ जिनपतिप्रतताः ५ पृष्ठे २२० जिनेश्वररचिताः ६ पृष्ठे २१६ जिनप्रभीयाः, तथा च स्तुतिचतुष्ककरणं न नूतनं, सुरस्मरणस्य नियतता च श्रीमद्भिरनेकशोऽनेकधोद्भाविता

श्रीमतां गच्छः—प्रकृतप्रकरणकाराः श्रीधर्मघोषसूरयः श्रीजैनशासनाविच्छिन्नाधिरुद्धपारंपर्यप्रधानश्रीमतस्तपोगच्छस्य विभूषणाः, यतो नैष गच्छोऽविचलां चतुर्दशीं विलोप्य पूर्णिमाप्रवर्त्तकवत् मुखवस्त्रिकां शास्त्रसमुदायसिद्धां प्रतिपिध्याञ्चलग्रहणप्रवर्त्तकवच नवीनप्रवर्त्तनोत्थनामधारकः, न च खरारटनखरतरवत् 'सुरवर वर लद्ध' इत्यादिषु प्राक्तनप्रबन्धेषु 'खरयर वर लद्ध' इत्यादि परावृत्तिपरायणीभवनभंगीरतः, निजकठोरभाषकतानिबन्धनखडतलाभिधानरूढैः स्वीकर्त्तृवत् दुर्गुणख्यातिभृच्च, किंतु निर्ग्रथत्व-



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सपा-  
चारविधौ  
॥ ७६ ॥

गुणेन निग्रंथयन् कोटिमंत्रजापात् कोटिक्रमम मोक्षमार्गाद्वितीयभूषणतपोरूपगुणभूषितत्वात् तपोगच्छामिधान एषः, न च यथा स्वर  
तराणा ग्वरतरेत्यभिधा त्रिचतुश्शतार्द्धं यावत् तत्परपराग्रन्थादिषु नोपलब्धा दीर्घचक्षुष्करिपि तै तथेयमपीति वाच्यं, यतः श्रीमदे-  
वेन्द्रसुरिमिरेन श्रीरुर्मग्रन्थवृत्तिप्रशस्तौ स्वयंप्रतिपादितमिदं “ऋमात्प्राप्तपाचार्येत्यभिरुया भिक्षुनायकाः। ममभूयन् कुले चान्द्रे,  
श्रीनगचन्द्रसूरयः ॥४॥ जगज्जनितबोधाना, तेषा शुद्धचरित्रिणाम् । विनेयाः ममजायन्त “श्रीमदेवेन्द्रसूरयः” ॥५॥ स्वान्ययोरु-  
पकाराय, श्रीमदेवेन्द्रसुरिणा । स्रोपज्ञशतकटीका, सुबोधेय विनिर्ममे ॥६॥ विबुधपर “धर्मकीर्ति” श्रीविद्यानंप्रमुखमुख्यबुधैः ।  
स्वपरममयं ऋशुलैस्तदैव सशोधिता चैयम् ॥७॥ इति स्रोपज्ञ ऋर्मग्रथप्रशस्तौ ।

न च वाच्यं श्रीमद्भिर्देवेन्द्रसुरिमिरेन म्वेषा चित्रागालगच्छयत्तित्तं श्रीश्राद्धदिनकृत्यवृत्तौ धर्मरत्नवृत्तौ च कथ प्रतिपादितं?, नि  
भान्यता तत्रत्यौ पाठौ “तत्र ऋमेण चित्रावालरुगच्छो बभूव भुवि विदितः । श्रीभुवनचन्द्रसुरिस्तत्राभूदिव्यपन्नरविः ॥६॥ तच्छि-  
प्यरत्नमभवद् भुवनप्रसिद्धाधारितपात्रमखिलश्रुतपाग्मासाः। गार्भीर्यमुख्यगुणरत्नमहासमुद्राः, श्रीदेवभद्रगणिमिथसुनामधेयाः ॥७॥  
तत्पादाम्युजरोलना, निरालना नपुष्यपि । अभूयन् भूरिभावाद्याः, श्रीजगच्चंद्रसूरयः ॥८॥ देवेन्द्रसुरिसंज्ञस्तेपामाद्यो बभूव शिष्यलयः ।  
श्रीविजयचन्द्रसुरिस्तथा द्वितीयो गुणैस्त्राद्यः ॥९॥ चक्रेभ व्यावबोधाय, सप्रदायाऽऽगताऽऽगमात् । सच्छाद्दिनकृत्यस्य, वृत्तिर्देवेन्द्र  
सुरिमिः ॥१०॥ श्रीविजयचन्द्रसुरिप्रमुखैर्विद्वद्गुणैर्गुणगरिष्ठैः । स्वपरोपकारनिरतैस्तदैव सशोधिता चैयं ॥११॥ प्रथमां प्रतिमप्रतिमप्रति  
भाप्रतिहस्तितत्रिदशसुरिः। श्रीहेमकलशनामा मदुपाध्यायो लिलेख्यास्याः ॥१२॥ क्रमशश्चैत्रावालरुगन्ठे कपिराजराजि नमसीन ।  
श्रीभुवनचन्द्रसुरिर्गुरुदिपाय प्रवस्तेजाः ॥४॥ तस्य विनेयः प्रशमैरुमन्दिर देवभद्रगणिपूज्यः। शुचितमयं न कनिकयो बभूव भुवि

प्रस्तावना

॥ ७६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सधा  
चारविधौ  
॥ ७७ ॥

विदितभूरिगुणः॥५॥ तत्पादपद्मभृद्गा निस्संगाथद्रुतुङ्गसंवेगाः। संजनितशुद्धबोधा जगति जगच्चन्द्रसूरिवराः ॥६॥ तेषामुभौ विनेयौ  
श्रीमान् देवेन्द्रसूरिरित्याद्यः । श्रीविजयचन्द्रसूरिर्द्वितीयकोऽद्वैतकीर्तिभरः । ७॥ स्वान्ययोपकाराय, श्रीमदेवेन्द्रसूरिणा । धर्मरत्नस्य  
टीकेयं, सुखरोधा विनिर्ममे ॥८॥ प्रथमां प्रतिमप्रतिम विश्राणो गुरुजनेषु भक्तिभरम् । विद्वान् विद्यानंदः सानन्दमना लिलेखास्याः  
॥९॥ श्रीहेमकलशवाचकपण्डितवरधर्मकीर्तिमुख्यबुधैः । स्वपरसमयैककुशलैस्तदैव संशोधिता चेयम् ॥१०॥ इति । यतोऽत्र न वाव-  
दीति यद् श्रीजगच्चन्द्रसूरिवराणा चैत्रापालकगच्छीयश्रीदेवभद्रसूरीणा पार्श्वे यथोपसंपद्रहस्तथा श्रीमतां देवेन्द्रसूरीणा, किंच—  
श्रीमद्भिर्यदा कर्मग्रन्थवृत्तिः प्रणीता तदा जातैव तपोगच्छोत्पत्तिः, स्पष्टं चैतदुपरिष्ठान्निर्दिष्टतत्पाठात्, किंच—श्रीकर्मग्रन्थवृत्तौ श्री-  
श्राद्धदिनकृत्यवृत्तिं स्पष्टमुल्लिख्य काव्यं तत्रत्यं 'हमाभृद्रंककयोर्मनीपिजडयो'रित्येतत् उल्लिखितं, ततः स्पष्टतरमेतस्यास्तस्याः  
पश्चाद्भावित्वं, किंच—धर्मरत्नकर्मग्रन्थवृत्तिकरणकाले श्रीधर्मकीर्त्तिपंडिताना साहाय्य यथा दर्शितं न तथा श्राद्धकृत्यवृत्तौ, तथा च  
श्राद्धदिनकृत्यधर्मरत्नकर्मग्रन्थवृत्तीना क्रमेण कृतिः, एवं च कर्मग्रन्थवृत्तावेव तपोगणाचार्यत्वाभिधानात् श्रीजगच्चन्द्रसूरिभ्यः तपो-  
गणोद्भवस्तदानीं निस्सदिग्धः, अन्यच्च—श्रीश्राद्धदिनकृत्यवृत्तिप्रशस्तौ श्रीविद्यानंदोल्लेखात् कर्मग्रन्थधर्मरत्नवृत्त्योः श्रीपिद्यानन्द-  
धर्मकीर्त्युभयोल्लेखात् श्राद्धदिनकृत्यवृत्तेः पूर्वतरभाविता, आद्यवृत्त्योः श्रीहेमकलशस्योल्लेखेऽपि अन्त्याया तदनुल्लेखेऽपि क्रमवृत्तां  
घोतयति, एव श्रीमदेवेन्द्राणा तपागच्छीयत्वे सिद्धेऽपि तपोगणोद्भवस्य त्रयोदशशताब्दीपूर्वैरर्वाग्भावे न संदेहो विधेयः, यतः  
स्तम्भतीर्थीयश्रीशान्तिनाथभांडागारीयपुस्तकेषु स्पष्ट एव तपोगणस्योल्लेखः, दृश्यंता प्रशस्तिसग्रहगतास्ताः प्रशस्तयः

श्रीत्रिपटीय (तृतीयपर्व) चरित्रं पृष्ठ ४७ नं. ५७—१०९५ वर्षे आश्विनपदि २ रवौ अद्य श्रीबीजापुरपत्तन ममस्तराजा-

प्रस्तावना

॥ ७७ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सपा  
पारविषी  
॥ ७६ ॥

गुणेन निग्रंथयन् कोटिमत्रजापात् कोटिकयच मोक्षमार्गाद्वितीयभूषणतपोरूपगुणभूषितत्वात् तपोगच्छामिधान एषः, न च यथा खर  
तराणा ग्वरतरेत्यभिधा त्रिचतुश्शताब्दीं यावत् तत्परपराग्रन्थादिषु नोपलब्धा दीर्घचक्षुष्कैरपि तै तथेयमपीति गान्यं, यतः श्रीमदे-  
वेन्द्रसुरिभिरेव श्रीकर्मग्रन्थवृत्तिप्रशस्तौ स्वयंप्रतिपादितमिदं “ऋमात्प्राप्तपाचार्येत्यभिरुया भिक्षुनायकाः। ममभूयन् कुले चान्द्रे,  
श्रीनगचन्द्रसूरयः ॥४॥ जगज्जनितबोधाना, तेषा शुद्धचरित्रिणाम् । विनेयाः समजायन्त “श्रीमदेवेन्द्रसूरयः” ॥५॥ स्वान्ययोरु-  
पसाराय, श्रीमदेवेन्द्रसुरिणा । स्योपनशतकृटीका, सुबोधेय विनिर्ममे ॥६॥ त्रिवुधपर “धर्मनीति” श्रीविद्यानप्रमुखमुख्यशुधैः ।  
स्वपरममयं ऋकुशलैस्तदैव सशोधिता चेयम् ॥७॥ इति स्योपज्ञकर्मग्रन्थप्रशस्तौ ।

न च गान्य श्रीमद्भिर्देवेन्द्रसुरिभिरेव म्वेषा चित्रागालगच्छवृत्तित् श्रीश्राद्धदिनकृत्यवृत्तौ धर्मरत्नवृत्तौ च कथ प्रतिपादितः, नि-  
भान्यता तत्रत्यौ पाठौ “तत्र क्रमेण चित्रागालगच्छो बभूव भुवि विदितः । श्रीभुवनचन्द्रसुरिस्तत्राभूदिव्यपन्नरविः ॥६॥ तच्छि-  
प्परत्नमभयद् भुवनप्रमिद्धाधारितपात्रमखिलश्रुतपारमाणाः। गाभीर्यमुख्यगुणरत्नमहासमुद्राः, श्रीदेवभद्रगणिमिश्रसुनामधेयाः ॥७॥  
तत्पादान्मुञ्जरोलना, निरालना उपुष्यपि । अभूयन् भूरिभागाढ्या, श्रीजगच्चन्द्रसूरयः ॥८॥ देवेन्द्रसुरिसज्ञस्तेषामाद्यो बभूव शिष्यलयः ।  
श्रीविजयचन्द्रसुरिस्तथा द्वितीयो गुणैस्त्राद्यः ॥९॥ चक्रेभ व्यावबोधाय, सप्रदायाऽऽगताऽऽगमात् । सच्छाद्धदिनकृत्यस्य, वृत्तिर्देवेन्द्र-  
सुरिभिः ॥१०॥ श्रीविजयचन्द्रसुरिप्रमुखैर्द्विद्विगुणैर्गुणगरिष्ठै । स्वपरोपकारनिरतैस्तदैव सशोधिता चेयं ॥११॥ प्रथमां प्रतिमप्रतिमप्रति  
भाप्रतिहस्तितत्रिदशसुरिः। श्रीहेमकलयनामा मदुपाध्यायो लिलेख्यास्याः ॥१२॥ क्रमशश्चैत्रावालकगच्छे कनिरानराजिनभसीव ।  
श्रीभुवनचन्द्रसुरिर्गुरुदियाय प्रवर्तेजा ॥४॥ तस्य विनेयः प्रथमैऋमन्दिरे देवभद्रगणिपूज्यः। शुचिममपन्नकनिषपी बभूव भुवि

प्रस्तानना

॥ ७६ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सया  
चारविधौ  
॥ ७७ ॥

विदितभूरिगुणः॥५॥ तत्पादपद्मभृङ्गा निस्संगाथद्गतुङ्गसंवेगाः। संजनितशुद्धबोधा जगति जगच्चन्द्रसरिरराः ॥६॥ तेषामुभौ चिनेयौ  
श्रीमान् देवेन्द्रसरिरित्याद्यः । श्रीविजयचन्द्रसरिर्द्वितीयकोऽद्वैतकीर्तिभरः । ७॥ स्वान्ययोपकाराय, श्रीमद्देवेन्द्रसरिणा । धर्मरत्नस्य  
टीकेयं, सुखमोधा त्रिनिर्ममे ॥८॥ प्रथमा प्रतिमप्रतिम विभ्राणो गुरुजनेषु भक्तिभरम् । विद्वान् पिद्यानंदः सानन्दमना लिलेखास्याः  
॥९॥ श्रीहेमकलशवाचकपण्डितवरधर्मकीर्तिमुख्यवृद्धैः । स्वपरसमयैरुकुशलैस्तदैव सशोधिता चैयम् ॥१०॥ इति । यतोऽत्र न राव-  
दीति यद् श्रीजगच्चन्द्रसरिवराणा चैत्रागळरुगळीयश्रीदेवभद्रसरिणा पार्श्वे यथोपसपद्महस्तया श्रीमता देवेन्द्रसरिणा, किंच—  
श्रीमद्भिर्यदा कर्मग्रन्थवृत्तिः प्रणीता तदा जातैव तपोगन्धोत्पत्तिः, स्पष्टं चेतदुपरिष्ठान्निर्दिष्टतत्पाठात्, किंच—श्रीकर्मग्रन्थवृत्तौ श्री-  
श्राद्धदिनकृत्यवृत्तिं स्पष्टमुल्लिख्य काव्यं तत्रत्य 'क्षमाभृद्रं ककयोर्मनीपिजडयो' रित्येतत् उल्लिखितं, ततः स्पष्टतरमेतस्यास्तस्याः  
पश्चाद्भावित्वं, किंच—धर्मरत्नकर्मग्रन्थवृत्तिरुपलक्षणे श्रीधर्मकीर्तिपडिताना साहाय्य यथा दर्शितं न तथा श्राद्धकृत्यवृत्तौ, तथा च  
श्राद्धदिनकृत्यधर्मरत्नकर्मग्रन्थवृत्तीना क्रमेण कृतिः, एवं च कर्मग्रन्थवृत्तावेव तपोगणाचार्यत्वाभिधानात् श्रीजगच्चन्द्रसरिभ्यः तपो-  
गणोद्भवस्तदानीं निस्सदिग्धः, अन्यच्च—श्रीश्राद्धदिनकृत्यवृत्तिप्रशस्तौ श्रीविद्यानंदोल्लेखात् कर्मग्रन्थधर्मरत्नवृत्तयोः श्रीविद्यानन्द-  
धर्मकीर्त्युभयोर्ल्लेखात् श्राद्धदिनकृत्यवृत्तेः पूर्वतरभाविता, आद्यवृत्तयोः श्रीहेमकलशस्योल्लेखेऽपि अन्त्याया तदनुल्लेखोऽपि क्रमयत्ता  
द्योतयति, एव श्रीमद्देवेन्द्राणा तपागळीयत्वे सिद्धेऽपि तपोगणोद्भवस्य त्रयोदशशताब्दीपूर्वैरर्वाग्भावे न सदहो विधेयः, यतः  
स्तम्भतीर्थीयश्रीशान्तिनाथभांडागारीयपुस्तकेषु स्पष्ट एव तपोगणस्योल्लेखः, दृश्यता प्रशस्तिसग्रहगतास्ताः प्रशस्तयः

श्रीत्रिपटीय (तृतीयपर्व) चरित्रं पृष्ठ ४७ न. ५७—१-९५ त्रये आश्विनवदि २ रात्रौ अद्येह श्रीश्रीनापुरपत्तन ममस्तराजा-

प्रस्तावना

॥ ७७ ॥

श्रादे०  
चैत्य० श्री-  
वर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७८ ॥

वलीपूर्वकं तपाकीयश्रीपौषशालायां चरित्रगुणनिधानसमस्तसिद्धान्तकलोन्मानेन पारगेन तपादेवभद्रगणि-मलयकीर्त्ति-पंडि-  
तफुलचन्द्रपंडितदेवकुमारमुनिनेमिकुमारमुनिप्रभृतिसमस्तसाधून् तचरणकमलान् भक्तपरमश्रावकसाधू रतनपाल समस्तसिद्धान्तपु-  
स्तकानां पौषशालाभारनिर्वाहकपरमश्रावक श्रेष्ठी वील्ह द्वितीयभारनिर्वाहक साधर्मिकाणां वात्सल्यतत्पर परमश्रावक उ० आम-  
पाल तृतीयभारनिर्वाहक निरंतरं पुस्तकसिद्धान्तनिर्विकल्पभक्त्या सारतत्पर श्रावक साधु लाहणप्रभृतिभिः समस्तश्रावकैः त्रिपष्ठी-  
यपुस्तकं समस्तसाधूनां श्रावकाणां पठनवाचकश्रेयोऽर्थं लिखापितं लेखकपाठकानां शुभं भवतु ॥ अनेन प्रागेवोत्पत्तिर्तपोऽभिरूपा-  
याः पंचनवत्यग्रद्वादशशताब्द्याः

न च पूर्वोक्तेषु त्रिष्वपि देवेन्द्रसूरीणां सूरित्वेनोल्लेखाच्चतुर्दशशताब्द्यां कृतय एतासां, यतः श्रीमतां षट्त्रिंशदधिकद्वादशसु  
शतेषु सूरितया स्थितिः, यतः प्रशस्तिसंग्रहे द्वितीये भागे बन्दारुवृत्तिपुष्पिकायां स एव हायनो निर्दिष्टः 'कृतिरियं सुविहितशि-  
रोमणीनां श्रीमद्देवेन्द्रसूरीणामिति समाप्तौ सूचनात्, दृश्यतां तल्लेखः

श्रीवन्द्रारुवृत्ति भा. २ पृष्ठ १ नं. १—इति षड्विधावश्यकविधिः । एवं ग्रन्थाग्रं २७२० । कृतिरियं सुविहितशिरोमणीनां  
श्रीमद्देवेन्द्रसूरीणां । रसखिलोचनशैव, कलासंपूर्णवर्त्तते (१२३६) ग्रहयोगवियुक्तश्च, मधौ च कृष्णपक्षके ॥१॥ चृहद्गणगणाधी-  
शाः, सूरिश्रीशीलदेवाख्याः तच्छिष्येणैव लिखितां, भानुप्रभोर्वृत्तिमिमां ॥२॥ प्रवाच्यमानं कृतिभिस्तु नद्यात् ॥ शुभं भूयात् ।

व्यवहारसूत्रम्, सवृत्ति (द्वितीय खंडः) पृ. ४४ नं. ५०—इति श्रीमलयगिरिविगचितायां व्यवहारटीकायां पंचमोद्देशकः  
समाप्तः । पंचमोद्देशके ग्रन्थाग्रं ९०५ ॥

प्रस्तावना

॥ ७८ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ७९ ॥

वरहुडिया माधू० राहड सुत० लाहडेन त्रेयोऽर्थे व्यवहारद्वितीयखंडं लिखापितं संवत् १३०९ वर्षे भाद्रपद सुदि १५ ॥  
श्रीदेवभद्रगणिपादसरोरुहालेर्भक्त्या नमद्विजयचन्द्रमुनीश्वरस्य । देवेन्द्रसूरिसुगुरोः पदपद्ममूले, तत्रांतिमौ जगृहतुर्यतितां शिवोत्कौ ॥७॥  
प्रशस्तिगताः श्रोदेवेन्द्रसूरिमत्का लेखाश्चैते—

श्रीभगवतीसूत्रवृत्तिः पृ. ४६ नं. ५४—ग्रन्थाग्रं १८६१६ । शुभं भवतु । संवत् १२९८ वर्षे सुदि १३ मोम, अद्येह वी  
जापुरे सा० सहदेव सा० राहडसुत लाहणेन सा० देवचंद्रप्रभृत्तिकुडुंबसमुदायेन चतुर्विधसंघस्य पठनार्थं वाचनार्थं च लिखापितं ।  
संवत् १२९८ वर्षे फागुन सुदि ३ गुरौ अद्येह वीजापुरे पूज्यश्रीदेवच(वे)न्द्रसूरिश्रीविजयचन्द्रसूरिव्याख्यानतः संसारासारतां  
विचिन्त्य सर्वज्ञोक्तं शास्त्रं प्रमाणमिति मनसि ज्ञात्वा सा० राहडसुतजिणचन्द्रधणेसरलाहड सा० सहदेव सुत सा० पेढा संघवी  
गोसलप्रभृत्तिकुडुंबसमुदायेन चतुर्विधसंघस्य पठनार्थं वाचनार्थं च लिखापितमिति ॥

श्रीउपासकादिसूत्रवृत्तिः पृष्ठ ४७ नं. ५५—संवत् १३०१ वर्षे फाल्गुन वदि १ शनौ अद्येह वीजापुरे पंचांगीभूत्रवृत्तिपुस्तकं  
ठ० अरमिहेन लिखितं । उभय ११२८ । संवत् १३०१ वर्षे फाल्गुनवदि १३ शनौ, इहैव प्रल्हादनपुरे श्रीनागपुरीयश्रावकैः पौष-  
घशालायां सिद्धान्तशास्त्रं पूज्यश्रीदेवेन्द्रसूरिश्रीविजयचंद्रसूरिउपाध्यायश्रीदेवभद्रगणेश्वर्याख्यानतः संसारासारतां विचिन्त्य सर्वज्ञोक्तं  
शास्त्रं प्रमाणमिति मनसि विचिन्त्य श्रीनागपुरीयवरहुडीयासंताने सा आसटेव (विशेष श्रीपाक्षिकसूत्रवृत्तिः ता. प्र नं २५ मुजव)

श्रीपाक्षिकसूत्रवृत्तिः पृष्ठ १९ नं. २५—मंगलं महाश्रीः ॥ पाक्षिकसूत्रवृत्तिः । ग्रन्थाग्रं ३१०० ॥ संवत् १२९६ विशा-  
खशुदि ३ गुरौ इहैव वीजापुरे श्रीनागपुरीयश्रावकैः पौषघशालायां सिद्धान्तशास्त्रपूज्यश्रीदेवेन्द्रसूरिव्याख्यानतः संसारासारतां

प्रस्तावना

॥ ७९ ॥

श्रीद०  
पैत्य० श्री  
धर्म० सदा  
चारिणी  
॥ ८० ॥

विचिंत्य मरुजोक्त शास्त्र प्रमाणमिति मनसा विचिंत्य श्रीनागपुरीयपरहुडीयासंताने सा० आसदेव सुत सा नेमड सुत सा राहड  
मा० जयदेव मा० महदेव तत्पुत्र मा पेदा मा गोमल सा० राहडसुत जिणचन्द्रवणेसरवाहडदेवचन्द्रप्रभृतिना चतुर्विध सधस्य  
पाठनार्थं पाचनार्थं च आत्मश्रेयोऽर्थं लिखापित ।

श्रीज्ञाताधर्मकथाद्यगवृत्तिः पृष्ठ न. ४६—ग्रन्थाग्र ९००—मगल महाश्रीः । सप्त १२९० वर्षे चैत्र शुदि २ मगल-  
दिनेऽद्येह श्रीमदनहिल्लपाटके महाराजाधिराजश्रीभीमदेवविजयकल्याणराज्ये ज्ञाताधर्मकथागप्रभृतिपडंगीसूत्रवृत्तिपुस्तक लिखितं ।

पुण्यायां इय मूर्त्ताथत्वारो नदनास्नयोर्नाताः । कर्तुमिदं तुल्यकालं जिनोक्तधर्मं चतुर्भेदम् ॥६॥ प्रथमस्तत्र जयंतो वीरा  
व्यस्तदनु दनु (ज) तिहुणाहौ । जालहणनामा तुर्ग, पचत्त्र प्राप तत्राद्यः ॥७॥ वीरस्ततोऽन्यदाऽश्रौपीच्छोऽकशकुत्रिनाशकम् ।  
श्रीनगचन्द्रसूरीणा, पच मरुजभापितम् ॥ ८ ॥ तद्यथा—चला ममृद्धिः क्षणिक शरीर, बहुप्रबधोऽपि निजायबन्धः । भवान्तरे  
सचलितस्य जतोर्न सोऽपि धर्मादपरः महायः ॥९॥ कुणोधरुद्धे भुग्ने न बुध्यते, स्फुट जिनेन्द्रागममन्तरेण । कलौ भवेत्सोऽपि  
न पुस्तकं विना, विधीयते पुस्तकलेखन ततः । १०॥ स्वभ्रातुः श्रेयसेऽलेसि, ततस्तेन सवधुना । ज्ञाताधर्मकथागादिपडंगी वृत्ति  
सयुता ॥११॥ जंघरालामिधस्थाने, युगादिजिनमंदिरे । सधस्य पुरतो व्याख्यातैषा देवेन्द्रसरिभिः ॥१२॥ यावत् व्योमसरःक्रोडे,  
राचहंसौ विरानतः । तात्कृतिरिय स्नातानन्द नन्दतु पुस्तक ॥१३॥ स. १२९७ वर्षे व्याख्यातमिति शुभं भवतु । अतः पच-  
नप्रतद्रादशशतेभ्योऽर्थांश्च श्रीजगच्चन्द्रसूरीणा स्वर्गतिः

श्राद्धदिनकृत्यवृत्तिः पृष्ठ ४३ न. ४८—श्रीमज्जगच्चन्द्रमुनीन्द्रशिष्यश्रीपूज्यदेवेन्द्रमुनीश्वराणा । तदाद्यशिष्यत्वभृता च

प्रस्तावना

॥ ८० ॥

विद्यानंदाख्यविख्यातमुनिप्रभूणाम् ॥७॥ तथा गुरूणां सुगुणैर्गुरूणां, श्रीधर्मघोषाभिध्वरिराजां । सदेशनामेवमपापभावं, शुश्राव  
भावावनतोत्तभागः ॥ ८ ॥

श्रीनन्दध्वयनटीका (मलयगिरीया) पृष्ठं ५१ नं. ८४—संवत् १२९२ वर्षे वैशाख शुदि १३ अद्येह वीजापुरे श्रावकपौष-  
धशालायां श्रीदेवभद्रगणिपं.मलयकीर्त्तिपं.अजितप्रभगणिप्रभृतीनां व्याख्यानतः संसारासारतां विचिंत्य सर्वज्ञोक्तं शास्त्रं प्रमाण-  
मिति मनसि ज्ञात्वा सा० धणपालसुत सा० रतनपाल ठ० गजस्तत् (सुत) ठ० विजयपाल श्रे० दुल्हासुत श्रे० वील्हण महे०  
जिणदेव महे० वीकलसुत ठ० आसपाल श्रे सोल्हा ठ० सहजासुत ठ० अरसिंह सा० राहडसुत सा० लाहडप्रभृतिप्रमस्तश्रावकै-  
र्भोक्षफलप्रार्थकैः समस्तचतुर्विधसंघस्य पठनार्थं च समर्पणाय लिखापितं ।

श्रीलिंगानुशासनम्, पृष्ठं ५४ नं. ८७—सं० १२८७ वर्षे वैशाख सुदि गुरावद्येह वीजापुरीयश्रावकपौषधशालायां पूज्यश्री-  
देवेन्द्रसूरिविजयचंद्रसूरिउपाध्यायश्रीदेवभद्रगणिसद्गुरूणां धर्मोपदेशतः सा० रत्नपाल सा० लाहड श्रे० वील्हण ठ० आसपाल  
सूत्रपुस्तिका लिखापिता ।

व्याकरणटीप्पनकम् पृष्ठं ८५ नं. १४४—सं० १२८८ वर्षे अपाठ वदि अमावास्यादिने भौमे राणकश्रीलावण्यप्रसाददेवराज्ये  
वटकूपके वेलाकुले प्रतीहारशखा(खा)टप्रतिपत्तौ श्रीमद्देवचंद्रसूरिशिष्येण भुवनचंद्रेण क्षुल्लकधर्मकीर्त्तिपाठयोग्या व्याकरणटीप्प-  
नपुस्तिका लिखितेति । पं. सोमकलशेन शोधिता च । यादृशं० मम दोषो न दीयते ॥१॥ शिवतातिरस्तु श्रीजिनशासनस्येति ।

श्रीउत्तराध्ययनलघुवृत्तिः पृष्ठं ३८ नं. ४३—तस्याभूत्कह्याभिरुयोऽनुजो धरणिगस्तथा । तयोः प्रियतमा लापू, जासलेति



यथाक्रमम् ॥३॥ नारायणस्य संज्ञे, हंसलेति सधर्मिणी । स्तनपालोऽभिधानेन, पुत्रोऽभूद् हृदयप्रियः ॥४॥ जैनधर्मधराधुर्यः,  
श्रेष्ठी नारायणोऽन्यदा । श्रीमद्देवेन्द्रसूरीणामिति वाक्यामृत (पपौ) ॥ ५ ॥

उपरिष्ठान्निर्दिष्टानां लेखानां तात्पर्येक्षणत्वात् समुन्नीयते एतद्यदुत श्रीमन्तो जगच्चन्द्रसूरयः पञ्चनवत्यधिकद्वादशशतसंवदि वरी-  
वर्त्तमानाः श्रीमन्तो देवभद्राश्च ततः परमपि पिद्यमानाः तत्सेवापराश्च श्रीमन्तो देवेन्द्रपादाः, किञ्च-व्याकरणटीप्पनकपुष्पिकाद-  
र्शनात् श्रीमता धर्मघोषसूरीणां सिद्धहैमाध्येतृत्वं वन्दारुच्यः लेखेन श्रीतपोगच्छस्य प्राग् बृहद्गच्छीयत्वमासीदिति च, अष्टाशीत्य-  
धिक्राया द्वादशशतान्ध्यामपि श्रीमद्भिर्भुवनचन्द्रसूरिभिः श्रीधर्मकीर्त्तये टीप्पनकस्य लिखनात् उपसंपदो गच्छारूपायाश्च परावृत्ता-  
वपि नान्यगणीयत् मूलगणाद्वैमनस्कृतेति ।

श्रीमता देवेन्द्रसूरीणां चैत्यमन्दनभाष्यमूलकाराणां वृत्तिकृता श्रीधर्मघोषसूरीणां च सोमसौभाग्यकाव्यक्रियारत्नसमुच्चय-  
श्रीतपोगच्छपट्टावलीगतमैतिल्यमेव-ततो गणः शिष्यततेर्वटाख्याख्यातोऽभवत् कापि बृहद्गणार्चिः। तस्मिंश्च गच्छे प्रवरेषु भूरिषु,  
सूरिष्यतीतेषु रहुश्रुतेषु ॥ २३ ॥ श्रीमान् जगच्चन्द्र इति प्रतीतनामा सुधामाऽजनि सूरिराजः । पद्त्रिंशदाचार्यगुणाः गणेन्द्रं,  
त शिष्यियुः प्रेमभरप्रणुना ॥२४॥ (युग्मम्) स्वगोभरैर्ध्वस्तसपस्तपापतमाः क्षमादर्शितपुण्यमार्गः। जगज्जनानां प्रमदं वितन्वन्,  
श्रीचन्द्रवद्योऽजनि सार्थकाहः ॥२५॥ वैराग्यवान् द्वादशहायनान्याचामाम्लनिर्माणतपो ह्यतप्त । यो दुस्तप तेन तपागणेति, गणस्य  
सत्ख्यातिरभूत् क्षमायाम् ॥ २६ ॥ श्रीमज्जगच्चन्द्रगुरोर्पिनेयस्त्वमेयसद्गोयगुणैर्निद्रः । देवेन्द्रमर्त्येन्द्रमुनीन्द्रवद्यो, देवेन्द्रसूरिः  
ममभूत् प्रमाह्य ॥२७॥ व्याख्याकला यस्य कला त्रिलोक्य, श्रीमस्तुपालादिमहेभ्यसभ्याः । के घूर्णयन्ति स्म न पूर्णचित्ताः, शी-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ८३ ॥

र्षाणि हर्षेण च विस्मयेन ॥२८॥ कर्मस्वरूपप्रथनाढ्यकर्मग्रंथादिसद्ग्रंथविधा नवेधाः । मेधाप्रधानो जगतां गतांहा, व्यभासयज्ञै-  
नमतं मतं यः ॥ २९ ॥ संशुद्धसाधुस्थितिदुर्गमार्ग, प्ररूपयंश्चारु समाचरंश्च । अनल्पसंकल्पितदानकल्पद्रुमोऽभवद्यो जिनकल्पि-  
कल्पः ॥३०॥ ख्यातो दिगंते वितते तदंतेवासी स्वदासीकृतदेवसरिः । निस्सीमगंभीरिमहद्यविद्यानंदाहसरींद्र इहावभासे ॥३१॥  
अनौकहं नव्यलताः श्रिता वा, सरित्पतिं वा सरितस्तता वा । मराललीला इव मानसं वा, यं हृद्यविद्या हि तथा प्रियाढ्याः ॥३२॥  
प्रहादनस्पृकपुरपत्तने श्रीप्रहादनोर्वापतिसद्विहारे । श्रीगच्छधुर्यैः किल यस्य वर्यश्रीसरिमंत्रे सति दीयमाने ॥३३॥ सत्पात्रमात्रा-  
तिगसद्गुणातिप्रहृष्टहृष्टेखभृदम्यलेखाः । कर्पूरकाश्मीरजकुंकुमादिगंधोदकं श्राक् वष्टुपुस्तदानीम् ॥ ३४ ॥ युग्मम् । तत्पट्टपूर्वाद्विचि-  
निद्रभानुर्जगन्नयाह्लादनशीतभानुः । श्रीधर्मघोषः स्फुटदन्तघोषः, स नन्दतान्निमित्तपुण्यपोषः ॥३५॥ प्रबोधितो येन नयेन साधुः,  
पृथ्वीधरः साधुधुरंधरोऽसौ । स्फारान् विहारांश्चतुरश्रतुभिः, समन्वितशीतिमितानकार्पात् ॥ ३६ ॥ पट्पूर्वपंचाशदतुल्यहेमधटी-  
भिरिभ्यो रुचिरेन्द्रमालाम् । कंठे निजे यो विनिवेश्य वश्यां, मुक्तिं वशां तां हृदि मन्यते स्म ॥३७॥ माधुर्यधुर्या च सुधासदेश्यां,  
यदेश्यानां श्रोत्रपुटैर्निपीय । पृथ्वीधरांगोद्भवज्ञज्ञणोऽसौ, श्रीतीर्थयात्रां रचयन् पवित्राम् ॥३८॥ सुवर्णदुर्वर्णमयीं किलैकामेवाद्भु-  
तश्रेणिकरीं पताकाम् । ददौ सदौचित्यधरः सुतीर्थे, शत्रुंजयाद्रावपि चोज्जयंते ॥३९॥ युग्मम् । श्रीधर्मघोषो गुरुस्न्यदोर्व्यां, गुर्व्यां  
विहारं रचयन् समागात् । श्रीउज्जयिन्यामलकाजयिन्यामनन्यसामान्यघनप्रभावः ॥४०॥ गुरुन्नतिं लोकततिप्रस्रतामतिप्रभूतां पुरि  
वीक्ष्य कथित् । योगी विपश्चित् कुपितः समागात्, गुर्वाश्रमं संश्रित आप्तशिष्यैः ॥४१॥ सर्पान् सदपान् वदनोत्थतारस्फुत्कार-  
वारैर्भरितांतरिक्षान् । परःसहस्रान् स मुमोच विद्याकृतानि चान्यान्यपि वक्तितानि ॥४२॥ पञ्चासने ध्यानमथ प्रपूर्य, सूर्यप्रणीर्भो-

प्रस्तावना

॥ ८३ ॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
वर्म० सया-  
चारविधौ  
॥ ८४ ॥

यगुणोऽनणीयः। विनेयवृन्दैः सह त वचध, सक्रो चवध बुधसर्वभौमः॥४२॥ मिमे म्रिपेऽह सह शिष्यलक्षैर्मा मुंच सद्यः सुगुरो !  
प्रमथ । कारुण्यपुण्यः श्रितमाम्यक्राम्यस्त्व प्रतसेयद् प्रतिनामिनश्च ॥ ४४ ॥ ततो व्यमुचद् गुरुचक्रवर्ती, त योगिनं योजितपा  
णिपत्रम् । ततो मन माम्यभृता नितान्त, कात घृणामाद्ररमैः प्रशस्यैः ॥ ४५ ॥ विद्यापुरे क्षुद्रविनिद्रविद्यानिदः मदःसश्रितचा-  
रुपहाः । आद्वीः प्रदृष्टा हृदि शाकिनीः श्रागम्बंभयद्यश्चतुरश्वतस्रः ॥ ४६ ॥ यः पूर्जनाभ्यर्थनया नयानुमारीव ताः स्तभनतो  
मूमोर । आदर्शयद्यस्य च रत्नमेक, रत्नाकरः स्व तटसश्रितस्य ॥४७॥ विनिर्मिता येन च भव्यनव्यग्रथा अनेके सरसार्थमार्थाः।  
प्रदीप्रदीपा इव तत्रमार्गमयापि हृद्याः किल दर्शयन्ति ॥ ४८ ॥ गिरीशगिर्बुज्ज्वलतोत्यगर्वस्वर्गीकृतैः पेशलकौशलाढ्याः । सदा-  
वदाताः प्रवरावदाता, वक्तुं न शक्याः कविमिर्यदीयाः ॥ ४९ ॥ पृ ३४

श्रीमत्तपोगणाममानानुपमस्तंभायमानश्रीधर्मसागरमहोपाध्यायप्रणीततपोगच्छपट्टापल्यामपि—श्रीजगच्चंद्रपट्टे पचचत्वारिंशत्तमः  
श्रीदेवेन्द्रसूरिः, स च मालवके उज्जयिन्या जिनभद्रनाम्नो महेभ्यस्य वीरधवलनाम्नस्तत्सुतस्य पाणिग्रहणनिमित्तं महोत्सवे  
जायमाने वीरधवलकुमार प्रतिरोध्य न्युत्तरत्रयोदशशत १३०२ वर्षे प्राजाजपत्, तदनु तद्भ्रातरमपि प्रजाज्य चिरकालं मालवके  
एव विहृतयान्, ततो गूर्जरधरिन्या श्रीदेवेन्द्रधरयः श्रीस्तभतीर्थे ममायाताः । पृ ५७

स्तभतीर्थे च चतुष्पथस्थितकुमारपालविहारे धर्मदेशनायामष्टादशशत १८०० मुखगस्त्रिकाभिर्मन्त्रिस्तुपालः चतुर्वेदादिनि-  
र्णयदावृत्तेन स्वममयपरममयप्रिदाश्रीदेवेन्द्रसूरीणा वदनरुदानेन बहुमानं चकार ॥—श्रीगुरवस्तु विजयचन्द्रमुपेक्ष्य विहरमाणाः  
क्रमेण पाल्हेणपुरे ममायाताः। तत्र चानेरुजनतान्निताः शीकरीयुक्तमुखामनगामिनश्चतुरशीतिरिभ्या धर्मश्रोतारः। प्रह्लादनविहारे

प्रस्तावना

॥ ८४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ८५ ॥

च प्रत्यहं मूटकप्रमाणा अथताः, क्रयविक्रयादौ नियतांशग्रहणान् षोडशमणप्रमाणानि पूगीकलानि चायांति, प्रत्यहं पंचशतीवी-  
सलप्रियाणां भोगः ॥ एवं व्यतिकरे सति श्रीसंधेन विज्ञप्ता गुरवः यदुत गणाधिपतिस्थापनेन पूर्यतामस्मन्मनोरथः, गुरुमिस्तु  
तयाविधमौचित्यं विचार्य प्रल्हादनविहारे वि० प्रयोविंशत्यधिके प्रयोदशशते १३२३ वर्षे कचिच्चतुरधिके १३०४ श्रीविद्यानं-  
दसूरिनाम्ना वीरधवलस्य सूरिपदप्रदानं । तदनुजस्य च भीमसिंहस्य धर्मकीर्तिनाम्नोपाध्यायपदमपि तदानीमेव संभाव्यते ॥  
सूरिपदानावसरे सौवर्णकपिशीर्षके प्रल्हादनविहारे मंडपान्तः कुंकुमवृष्टिः, सर्वोऽपि जनो महाविस्मयं प्राप्तः । श्राद्धैश्च महानुत्स-  
वश्चक्रे ॥ तैश्च श्रीविद्यानंदसूरिमिदिद्यानंदाभिधे व्याकरणं कृतं ॥ यदुक्तम्—विद्यानंदाभिधं येन, कृतं व्याकरणं नवम् । भाति  
सर्वोत्तमं स्वल्पसूत्रं बहुर्थसंग्रहं ॥ १ ॥ पश्चात् श्रीविद्यानंदसूरीन् धरिष्यामाज्ञाप्य पुनरपि श्रीगुरवो मालवके विहृतवंतः ।  
तत्कृताश्च ग्रंथास्त्वेते २—श्राद्धदिनकृत्यसूत्रवृत्ती २—नव्यकर्मग्रन्थपंचकसूत्रवृत्ती २—सिद्धपंचाशिकासूत्रवृत्ती १—धर्मरत्नवृत्तिः २—  
(१) सुदर्शनाचरित्रं ३ त्रीणि भाष्याणि “सिरिउत्सहवद्धमाण” प्रभृतिस्तवादयश्च, केचित्तु श्रावकदिनकृत्यसूत्रमित्याहुः ॥ विक्रमात्  
सप्तविंशत्यधिकप्रयोदशशत १३२७ वर्षे मालवक एव देवेन्द्रसूरयः स्वर्गं जग्मुः ॥ दैवयोगात् विद्यापुरे श्रीविद्यानंदसूरयोऽपि  
प्रयोदशदिनांतरिताः स्वर्गं भाजः ॥ अतः पद्मभिर्मासैः सगोत्रिसूरिणा श्रीविद्यानंदसूरिबांधवानां श्रीधर्मकीर्त्युपाध्यायानां श्री-  
धर्मघोषसूरिरितिनाम्ना सूरिपदं दत्तम् ॥ श्रीगुरुभ्यो विजयचंद्रसूरिपृथग्भवने कं गुरुं सेवेऽहमिति संशयानस्य सौवर्णिकसंग्रामपू-  
र्वजस्य निशि स्वप्ने देवतया धीदेन्द्रसूरीणामन्वयो भव्यो भविष्यतीति तमेव सेवस्वेति ज्ञापितम् ॥ श्रीगुरुणां स्वर्गगमनं श्रुत्वा  
संघाधिपतिना भीमेन द्वादश वर्षाणि धान्यं त्यक्तम् ॥

प्रस्ता-  
वनायां  
पञ्चावली

॥ ८५ ॥

श्रीदे०  
 पैत्य० श्री  
 धर्म० तं पा-  
 चारविधौ  
 ॥ ८६ ॥

१३-छायालीगोति श्रीदेवेन्द्रसुरिपट्टे पदत्रयारिंशत्तमः श्रीधर्मघोषसुरिः, येन मंडपाचले सा० पृथ्वीधरः पंचमव्रते लक्ष-  
 प्रमाणं परिग्रहं नियमयन् ज्ञानातिशयात्तद्भंगमग्रगम्य प्रतिपेधितः । स च मंडपाचलाधिपस्य सर्वलोकाभिमतं प्राधान्यं प्राप्तः,  
 ततो धनेन धनदोषमो जातः॥ पश्चात्तेन चतुरशीति ८४ जिनप्रासादाः सप्त च ज्ञानकोशाः कारिताः। श्रीशत्रुञ्जये च एकविंशति-  
 घटीप्रमाणसुवर्णव्ययेन रैमयः श्रीरूपभदेवप्रासादः कारितः, केचिच्च तत्र पदपंचाशत्सुवर्णघटीव्ययेनेन्द्रमालायां (लां यः) परि-  
 हितवानिति वदन्ति ॥ तथा धरित्र्यां केनचित्साधर्मिकेण ब्रह्मचारिवेपदानावसरे महर्षिकृत्वात् पृथ्वीधरस्यापि तद्वेषः प्राभृतीकृतः,  
 स च तमेव वेपमादाय ततःप्रभृति द्वारिंशद्वर्षीयोऽपि ३२ ब्रह्मचार्यभूत् ॥ तस्य च पुत्रः मा० ज्ञाज्ञणनामा एक एवासीत् ।  
 येन श्रीशत्रुंजयोञ्जयंतगिर्योः शिखरे द्वादश १२ योजनप्रमाणः सुवर्णरूप्यमय एक एव ध्वजः समारोपितः । कर्पूरकृते राजा  
 मारगदेवः करयोजनं कारितः ॥ येन च मंडपाचले जीर्णटंकानां द्विसप्तत्या क्वचित् पदत्रिंशता सहस्रैर्गुरुणा प्रवेशोत्सवश्चक्रे ॥  
 देवपत्तने च शिष्याभ्यर्चनया मंत्रमयस्तुतिविधानतो येषां रत्नाकरस्तरगे रत्नदौकनं चकार । तथा तत्रैव ये स्वध्यानप्रभावात्प्रत्य-  
 क्षीभूतनवीनोत्पन्नरूपदियक्षेण रत्नस्वामिमाहात्म्याच्छत्रुंजयान्निष्काशितं जीर्णकपर्दिराजं मिथ्यात्प्रमुत्सर्पयंतं प्रतिबोध्य श्रीजैनचिं-  
 वाधिष्ठापकं व्यधुरिति ॥ एरुदा कामिश्चिद् दुष्टस्त्रीभिः साधूनां विहारिताः कर्मणोपेता वटका भूषीठे यैस्त्याजिताः संतः प्रभाते  
 पापाणा अभवन्, तदनु चाभिमंन्याऽर्पितपट्टकामनास्ताः स्तंभिताः सत्यः कृपया मुक्ता इति । तथा विद्यापुरे पक्षांतरीयतथावि-  
 धस्त्रीभिर्गुरुणां व्याख्यानरसे मात्सर्यात् स्वरभंगाय कण्ठे केशगुच्छके कृते यैर्निज्ञातस्वरूपास्ताः प्राग्बत्स्तंभिताः संत्योऽतः परं  
 भयद्गणे न वयमुपद्रोप्याम इति वाग्दानपुरःसर संघाग्रहान्मुक्ता इति ॥

प्रस्ता-  
 वनायां  
 पट्टावली

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ८७ ॥

उज्जयिन्यां च योगिभयात् साध्वस्थिते गुरव आगताः, योगिना साधवः प्रोक्ताः-अत्रागतैः स्थिरैः स्थेयं?, साधुभिरुक्तं-स्थिताः  
सः किं करिष्यसि?, तेन साधूनां दन्ता दर्शिताः, साधुभिस्तु कफोणिर्दर्शिता, साधुभिर्गत्वा गुरूणां विज्ञप्तं, तेन शालायामुन्दरवृन्दं  
विकुर्वितं, साधवो भीता गुरुभिर्घटमुखं वक्षेणाऽऽच्छाद्य तथा जप्तं यथा राटिं कुर्वन् स योगी आगत्य पादयोर्लग्नः ॥

कचन पुरे निश्यभिमंत्रितद्वारदानं, एकदा अनभिमंत्रितद्वारदाने शाकिनीभिः पट्टिरुत्पाटिता स्तंभिता ततो वाग्दाने च मुक्ताः ॥  
यैरेकदा सर्पदंशे रात्रौ विपेणांतरांतरामूर्च्छामुपगतैरुपायविधुरं संघं प्रत्युचे । प्राचीनप्रतोल्यां कस्यचित् पुंसो मस्तके काष्ठ-  
भारिकामध्ये विषापहारिणी लता समेषति सा च प्रघृष्य दंशे देया इत्येवं प्रोक्ते संघेन च तथाविहिते तथा प्रगुणीभूय ततः प्रभृति  
यावज्जीवं पडपि विकृतयस्त्यक्ता आहारस्तु तेषां सदा युगंधर्या एव ॥

तत्कृता ग्रन्थास्त्वेवं-संघाचारभाष्यवृत्तिः, सुअधम्मेतिस्त्वः कायस्थिति-भवस्थितिस्त्वौ चतुर्विंशतिजिनस्त्वः चतुर्विंशतिः,  
प्रास्ताशर्मत्यादि स्तोत्रं देवेन्द्रैरनिशं० इति श्लेषस्तोत्रं यूयं युवां त्वमिति श्लेषस्तुतयः, जय वृषमेत्यादिस्तुत्याद्याः ॥

तत्र जयवृषमेत्यादिस्तुतिकरणव्यतिकरस्त्वेवं-एकेन मंत्रिणाऽऽष्टयमकं काव्यमुक्त्वा प्रोचे-ईदृग्काव्यमधुना केनापि कर्तुं न शक्यं ।  
गुरुभिरुचे-अनस्तिर्नास्ति । तेनोक्तं-तं कविं दर्शयत । तैरुक्तं-ज्ञास्यते ॥ ततो जयवृषमस्तुतयः अष्टयमका एकया निशा निष्पाद्य  
भिन्निलिखिता दर्शिताः । स च चमत्कृतः प्रतिबोधितश्च ॥ ते च वि० सप्तपंचाशदधिकत्रयोदशशत १३५७ वर्षे दिवं गताः ॥ पृ. ५७

श्रीक्रियारत्नसमुच्चये-देवेन्द्रकर्णाभरणीभवद्भिर्द्विर्यशोभिरुद्धासितविष्टेन । देवेन्द्रदेवेन वमेऽस्य पट्टे, विष्णोर्यथा वक्षसि कौस्तु-  
भेन ॥११२॥ निजाङ्गनोद्गीतपदीपकीर्तिशुश्रूषुरशिश्रवमामृभुक्षाः । चक्षुःसहस्रे रसिकः किमाधात्, पट्टे स तस्याजनि धर्मभोपः

प्रस्ता-  
वनायां  
पटावली

॥ ८७ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ८८ ॥

॥११३॥ मिथ्यामतोत्सर्पणपदकक्षं, प्रेक्ष्य क्षितौ जीर्णकपर्दिनं यः। प्रबोध्य वाचा जिनराजविम्व्याधिष्ठायकं पूर्वमिव व्यधत् ॥११४॥  
शिष्यार्थनानिर्मितसंस्तपस्यानुभावतो देवकपत्तनेऽन्धिः। भूपस्य शुश्रुपुरिवास्य रत्नं तरङ्गहृत्तरुपदीचकार ॥ ११५ ॥ विद्यापुरे  
योऽखिलशाकिनीनामुपद्रवं द्रावयति स शरिः। श्रीहेमचन्द्रो भृगुकच्छसंज्ञे, पुरे यथा दुर्धरयोगिनीनाम् ॥११६॥ यो योगिनं पुष्प-  
करण्डनीस्यं, दृष्ट्वेष्टितैर्भाषनपदकक्षम्। तथाऽवनम्रं विदधेऽन्तिमोऽर्हन्निवास्थिरग्रामिकशूलपाणिम् ॥११७॥ यस्योपदेशान् नृप-  
मन्त्रिपृथ्वीपरशतुभिः सहितामशीतिम्। ज्ञातीस्त्रिवोद्वर्तुमिदं मिताः स्वा, व्यधापयतीर्थकृतां विहारान् ॥११८॥ दंशादहेर्गाहित-  
काष्ठमारविषौषधीसञ्जतनुर्दिशन्ते। महात्मनघो विकृतीर्विहाय, वृत्ति व्यधादेव युगंधरीभिः ॥११९॥ पृ. १३१

वृत्तिकाराणां श्रद्धानिर्मलत्वं सिद्धान्तज्ञानं माहित्यरसिकता अत्रानुपदमेव प्रतिभापथमेष्यति विलोककानामिति विलोकनाय  
चिदुपोऽभ्यर्च्य ममाप्यव इदमिति अलेग्न्यानंदमागरेण श्रीसिद्धक्षेत्रे (पालीटाणा) वीरसंवत् २४६४ भाद्रशुक्लद्वितीया।

प्रस्तावना-  
यां क्रिया-  
रत्नपाठः

जैनस्तोत्रसंग्रहे तत्र भवत्कृतानां मुद्रितानां स्तुतीनां सूचिरियं

श्रीधर्मघोषसूरिकृतानि स्तोत्राणि

पृ. १३	जिनस्तवनं 'विश्वत्रयैकदर्शन!'	(९)	२४७	सर्वजिनस्तवनं—'नम्राखण्डलमौलि'	(८)
१०६	आदिनाथ १३ भवस्तोत्रं—'नाभिमरुदेवि'	(९)	२४८	चतुर्विंशतिजिनस्तुतयः—'जिनं यशःप्रताप'	(३९)
१०७	चन्द्रप्रभ ७ भवस्तोत्रं—'मइसेणलक्ख'	(६)	२५५	श्रीपार्श्वदेवस्तवनम्—'विध्वस्ताखिलकर्मा'	(९)
१०७	शांतिनाथ १२ भवस्तोत्रं—'सिरिविस्ससेण'	(१०)	२५७	श्रीमहावीरकलशः—'यस्तेजोऽस्तरवि'	(२७)
१०९	श्रीमुनिसुव्रत ९ भवस्तोत्रं—'घणवण्णं चिह्णं'	(६)	२६२	जीवविचारस्तवनम्—'संसारजिएसु'	(४०)
१०९	नेमिनाथ ९ भवस्तवनं—'नेमिं रायमइजुअं'	(७)	२६७	पञ्चत्रिंशजिनवाणीगुणं—'जोसणगमद्ध'	(१६)
११०	श्रीपार्श्वनाथ १० भवस्तवनं—'नवहत्थं नीलाहं'	(९)	२६८	निकांचिततीर्थकृन्नामकर्मणां जिनानां भवत्रयी- स्तवनं—'रिसहाइजिणवरिंदे'	(८)
१११	श्रीवीर २७ भवस्तोत्रं—'तिसलासिद्धत्थसुअं'	(१०)	२६९	श्रीदुष्पमाकालस्तवनं—'वीरजिणभुवणविस्सुय'	(२६)
२४१	भावचतुर्विंशतिजिनस्तवः—'देवेन्द्रवन्दितान्'	(१४)	२७३	ऋषिमंडलस्तवः—'सकलसकलचक्रवर्ती'	(२०९)
२४२	पार्श्वनाथस्तवः—'जय जय जिणिंद'	(९)	परिशिष्टे १०७	वरमंत्रधर्मकीर्तिश्रीपार्श्वनाथमालामंत्रस्तवः	(१३)
२४३	—'पूर्वं पामरपुंगवेन'	(११)	१०९	लोकान्तिकदेवस्तवः थोसामि जिणे	(१६)
२४६	श्रीवीरजिनस्तवनं—'जय श्रीसर्वसिद्धार्थ'	(९)			



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
वर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥ ९० ॥

## परिशिष्टम् १ उपयुक्ततरस्थानानि

तेनात्र यदेकश्लोकादिकं भगवद्गुणोत्कीर्तनपरं चैत्यवंदनायाः पूर्वं भण्यते तत् मंगलवृत्ताऽपरपर्याया नमस्कारा इत्युच्यंते, यद्भाष्ये-उद्दामसरं वेयालिउच्च पढिऊण सुकइबंधाई । मंगलवित्ताई तओ पणिवायथयं पढइ संमं॥१॥ति (२३६ अ.) पूर्वभणनीयत्वादेव नमस्काराणां तद्द्वारं पूर्वं सप्तममुक्तं, यत्तु कायोत्सर्गानंतरं भण्यते ततः स्तुतय इति रूढाः, चैत्यवंदनापर्यंते च स्तोत्रमिति, अयमेव चैतेषां परस्परं विशेषः, अन्यथा भगवत्कीर्तनरूपतया सर्वेषामप्येषामेकस्वरूपापत्तेः, भणितं चागमे त्रितयमप्येतत् नमस्कारस्तुतिस्तवा इति, तथा चोत्तराध्ययनसूत्रं-थयथुइमंगलेणं भंते ! जीवे किं जणयइ ?, थयथुइमंगलेणं नाणदंसणचरित्ताणि बोहिलाभं च भणयइ, नाणदंसणचरित्तसंपन्ने णं जीवे अंतकिरियं कप्पविमाणोववत्तियं आराहणं आराहेई (२९ अ०)त्यादि विमर्शनीयमिदं सूक्ष्मधियेति २२ पृ. ३१-३२

निर्व्याजा दयिते ननांइपु नता श्वश्रूपु नम्रा भवेः, स्निग्धा बंधुपु वत्सला परिजने स्मेरा सपत्नीष्यपि । पत्युर्मित्रजने सनर्मवचना खिन्ना च तद्द्वेषिपु, स्त्रीणां संवननं नतभु ! । तदिदं वीतौपधं भर्तृपु ॥ १२४ ॥ पृ. ४३-४४

प्रदक्षिणात्रयानंतरं च देवगृहलेखकपोतकपापाणादि घटापनकर्मकरसारादिकरणेत्यादिजिनविषयव्यापारपरंपराप्रतिषेधरूपां द्वितीयां नैपेधिकीं मध्ये मुखमंडपादौ कृत्वा मूलबिंबसंमुखं प्रणामत्रिकं करोति, पृ. ५३

तां च विशिष्टान्यपूजां सामर्थ्यभावे नोत्सारयेत्, भव्यानां तद्दर्शनजन्यपुण्यानुबंधिपुण्यानुबंधस्यांतरायप्रसंगात्, किंतु-तंपि सविसससोहं जह होइ तहा तहा कुञ्जा ॥ ४ ॥ पृ. ५३

उपयुक्त-  
स्थानानि

॥ ९० ॥

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ९१ ॥

पुष्पफलपानीयनैवेद्यप्रदीपप्रमुखपदार्थसार्थसमानयनादिरूपो जिनपूजाविषयोऽपि सावद्यव्यापारो देववंदनावसरे न कर्तव्य  
इत्यर्थः ॥ पृ. ५४

उस्सेहमंगुलेणं अह उडूमसेस मत्त रयणीओ । तिरिलोए पंचधणुसय सासयपडिमा पणिवयामि ॥ २२ ॥

अत्र यथा निर्माल्यापनयनानंतरं प्रथममंगप्रक्षालनं पूजादि च, स्नानानंतरं पुनः अंगप्रक्षालनादि विधीयते, स्नानपूर्वं कुसु-  
माञ्जलिप्रक्षेपणाद्यपि च ज्ञेयं पृ. ५८

“पुष्पामिपस्तोत्रप्रतिपत्तिपूजानां यथोत्तरं प्राधान्य”मिति ॥ अत्रायं भावार्थः—पुष्पैः जात्यादिभिः प्रथमा अंगपूजा भवति । इह  
पुष्पग्रहणमादिमध्यावसानेषु पुष्पाञ्जलिपुष्पपूजापुष्पप्रकरादिसमये सर्वत्र बहुपयोगि बहुशोभित्वाद्, अन्यथा पत्रफलजलगंधव-  
स्त्राभरणाद्यप्यंगपूजायामुपयुज्यते, ततश्चात्र पुष्पेत्युपलक्षणं, तेन निर्माल्यापनयनमार्जनांगप्रक्षालनाद्यनंतरं नित्यं विशेषतश्च पर्वसु  
कुसुमाञ्जलिप्रक्षेपादिपूर्वं धुनीकर्पूरजलादिचंदनकुंकुमादिकल्पितजलप्रभृतिसद्गृहजेतरगंधोदकादिभिः स्नपनं सुरभिसुकुमालवस्त्रे-  
णांगलूछनं धनसारकुंकुमादिभिर्विलेपनांग्यादिविधानं गोरोचनामृगमदादिभिरलंकरणं विचित्रवस्त्रैः परिधापनं ग्रंथिमवेष्टिपूरिमसं-  
घातिमविधानचतुर्विधप्रधानाम्लानमाल्यादिभिर्मांलाटोडरमुगुटशिरस्कृष्णगृहादिविरचनं जिनहस्ते नालीकेरवीजपूरपूगीफलनागव-  
ल्लीपत्रादिमोचनं धूपोत्क्षेपसुगंधवासप्रक्षेपाद्यपि च सर्वमंगपूजायां भवति पृ. ६२

अह मिम्मियपडिमाणं पूया पुष्पाइएहिं खलु उचिया । पृ. ६३

स्नपनादिभेदानंतरेण यत्पंचादिपूजाभेदानामेवमुपन्यासः तत्र पूर्वपूजितादिषु मृन्मयादिर्विवेषु च संख्यादिषु च प्रायः पंच-

उपयुक्त-  
स्थानानि

॥ ९१ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ९२ ॥

पूजामद्भावभाषितया सर्वदा सर्वोपयोगित्वादिति ज्ञापनार्थं पृ. ६६

प्रत्यन्तरेऽधिकं—तेसु पुरेसु समासु य नमिबिनमीहिं फुरंतभत्तीहिं । ठविओ सिरिरिसिहजिणो धरणिंदो नागराया य  
॥८१॥ आवश्यकचूर्णिः—'पुरेसु भयवं ऊत्तभमामी देवयं ठाविउं' 'तं पूयंति तिसंज्ञं ज्ञायंति सया अवंज्ञफलमुसहं । अच्छउमत्थं  
छउमत्थवत्थसुत्थं थुणंतेमं ॥ ८२ ॥ सुइकसिणचउत्थीए उत्तरसादाहिं जो सुरिंदेहिं । कहिओ मरुदेवीए ओयरिओ भाविति-  
जयपह ॥ ८३ ॥ चित्तकसिणडुमीए जं जम्मणमज्जणक्खणे मग्गे । सुरसेले भत्तीए ष्हविंसु पूइंसु देविंदा ॥ ८४ ॥ जेण हरि-  
विहियरज्जाभिसेयविहिणा अहेसि जयपहुणो । इह वसुमई व सुमई सुनयसहाणा सणाहा य ॥८५ ॥ रज्जावसरं चिरधरियनलिपि-  
पत्ताभिसेयसलिलेहिं । मिहुणेहिं ष्हवणभोहि व जप्पयपउमा य अभिरुइया ॥८६॥ नाणं वरविनाणं कलाउ सकला जओ पहुत्तं सा ।  
रजं पहुत्तसज्जं पावेसि जणो य सयणो य ॥८७॥ लोयंतिमग्गणा इय नमज्जणा सज्जणा न के हुज्जा ? । संवच्छरियमवुच्छं किमि-  
च्छियं जस्स दितस्स ॥ ८८ ॥ चित्ताइमडुमीए महया महयामि गिण्हिरे जंमि । के के न बुहा विबुहा महिमं महिमंडले कासी  
॥८९॥ सो जयउ दुविहमोणो अज्जो अज्जे जणंतुऽणजेवि । कइया पुण दच्छामो तं तिजइंदं तिजयमाणुं ॥ ९० ॥ तेण अदेवावि  
जणा देवाविव दिग्बरिद्विणो विहिया । होऊ तथा य सयाविहु नमो नमो नमिरअमराय ॥९१॥ ततो तत्ततवाओ हुत्था सत्थावि  
अत्थ सुकयत्था । तस्सेव किंकरा मो दासा पेसा य सिद्धा य ॥९२॥ तंमि छउमत्थवत्थे विहरंते महियलं पवित्तंते । वरधम्मकित्ति  
पत्ता होउ सुभत्ती सया अम्ह ॥ ९३ ॥ इय सत्तविभत्तिविभत्तिभत्तिभत्तीइ संथुओ रिसहो । वियरउ संपइ संपइ सयावि भत्ति  
गयविभत्ति ॥ ९४ ॥ पृ. ९५-९६

उपयुक्त-  
स्थानानि

इओ य-मह निष्पाणनिमाए गोयम ! पालपनिवो अवंतीए । होही पाडलियपह सो असुअउदाइनिवमरणे ॥ ७० ॥ पालइ-  
रजं सट्टी पणपणसयं नवण्ह नंदाणं । नवमोरीणऽड्डसयं तीस वरिस पूममित्तस्म ॥ ७१ ॥ वलमित्तभाणुमित्ताण सट्टी नरवाहणस्स  
चालीसा । तेर निवगइभिल्लो कालयआणीयसग चउरो ॥ ७२ ॥ सुन्नमुणिवेयजुत्ता जिणकाला विकमो वरिस सट्टी । धम्माइचो  
चत्ता भाइल सगवीस नाहडे अट्ट ॥ ७३ ॥ तह धुंधुमार तीसा लहुविकमाइच बारसय वरिसे । दस बुद्धमित्त अंधो हेहयवंसी असी  
भोओ ॥ ७४ ॥ इत्यादि । पृ. १२१

इह साधुः श्रावको वा चैत्यगृहादावेकांते प्रयतः परित्यक्तान्यकर्त्तव्यः सकलसन्धानपायिनीं भुवं निरीक्ष्य परमगुरुप्रणीतेन  
विधिना त्रिः प्रमृज्य च क्षितितलनिहितजानुयुगलः करकमलसत्यापितयोगमुद्रं प्रणिपातदंडकं पठतीति पृ. १३३

अरिहंतचेइआणमित्यादिदंडकपाठेन जिनविंवादिस्तवनं जिनमुद्रया, इयं च पादाश्रिता, दंडकानामपि स्तवरूपत्वात्, योग-  
मुद्राऽप्यत्र संगतैव, सा च हस्ताश्रिता, अत उभयोरप्यनयोर्वदने प्रयोगः। पृ. १३४

तं प्राज्यराज्यकमला कमलीकरोति, तस्मै सदा स्पृहयति त्रिदशासुरश्रीः । तस्येन्दुकाशकुसुमोज्ज्वलपुण्यराशेरद्वैतसौख्य-  
पदवी न दवीयसी स्यात् ॥ ६ ॥ (प्रत्यन्तरे-पंचांगभंगमतिरंगभरं नमेद्यो, निःसंगिनं जिनमनंगजितं समंतात् । स स्यादिह त्रि-  
जगताऽपि सदा नमस्वस्तं प्राज्यराज्यकमला कलयत्यवश्यम् ॥ १ ॥ दौर्गत्यदुःखतरुखंडमखंडितेन, तस्मै सदा स्पृहयति त्रिदशा-  
सुरश्रीः । तस्माद् द्रुतं द्रवति रौद्रदरिद्रमुद्रा, तस्य प्रकर्षपदवी न दवीयसी स्यात् ॥ २ ॥

(प्रत्यन्तरे-चित्तइ सीहोऽवरेण किं ? ॥६४॥ जं न रसाइ ठियं मे तह दुलहं लद्धमिण्हि लद्धञ्चं । जिणपयवंदणमसमं अहरिय-  
चिंतामणाइगुणं ॥ ६५ ॥ भणियं च—एक्काऽवि जा समत्था जिणभत्ती दुग्गइं निवारेउं । दुलहाइं लहावेउं आसिद्धिं परंपरसुहाइं  
॥ ६६ ॥ पत्र २०१

विस्तरार्थिना नवकारपटलसिद्धचक्रवृहन्नमस्कारफलादीन्यवलोकनीयानि पत्र २१८

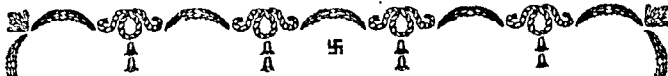
वाचनांतराणि त्वर्थसांगत्याभावेन यादृच्छिकान्येवेति मत्वोपेक्षितानि पत्र २१८

(प्रत्यन्तरे त्वियं व्याख्यैवं—एवं साक्षात्समासन्नभावाचार्यसद्भावे क्षमाश्रमणपूर्वं जिनविम्वाद्यन्यथाऽऽपृच्छ्य ईर्यापथिकी  
प्रतिक्रमणीया, न तु तद्विनाऽपि, पत्र २६१-२६२

इदानीमपि येऽनासादितभावाऽर्हत्पदा वर्चन्ते, छद्मस्था इत्यर्थः

प्रभूतदेवगृहादौ वा अधिकाऽपि ( चैत्यवन्दना ) पत्र २३६

इति श्रीसंघाचारभाष्यापराभिधानसंघाचारविधेरुपक्रमः॥



तपोगच्छधुरन्धरश्रीदेवेन्द्रसरिसूत्रितं चैत्यवन्दनभाष्यं  
श्री मदन्तेवासिश्रीधर्मघोषसूरिसूत्रितचिवरणवृतम्

## । श्रीसङ्घाचारभाष्यम् ।

( संघाचारटीका )

देवेन्द्रवृन्दस्तुतपादपद्मः, स्वर्भूषुवःश्रीवरकेलिसद्म ।  
संदेहसंदोहरजःसमीरः, स वः शिवायास्तु जिनेन्द्रवीरः ॥१॥  
चैत्यमुनिवन्दनप्रभृतिभाष्यविष्टतेर्यथाश्रुतं किञ्चित् ।  
सङ्घस्याचारविधिं वक्ष्ये स्वपरोपकाराय ॥२॥

श्रीदे० जे  
त्यश्रीधर्म०  
सघाचार-  
विधौ  
॥ २ ॥

इह हि दुरन्तानतचतुरतासारविसारिससारापारगारागारे निमज्जता भव्यजन्तुना जिनप्रचनप्रतीतचोह्लुकादिदशनिदर्शनदुष्प्रापा  
कथमपि प्रशस्तसमस्तमनुजजन्मादिसामग्रीमवाप्य भजलधिसमुत्तरणप्रवणप्रहणमधर्मसद्धर्मविधाने प्रयत्नो विधेयः, यदवादि-  
“ भवकोटीदुष्प्रापासवाप्य नृभवादिसकलसामग्रीम् । भवजलधियानपात्रे धर्मे यत्नः सदा कार्यः ॥ १ ॥”  
तत्रापि विशेषतः परोपकारकरणे प्रवर्तितव्यं, तस्यैवान्वयव्यतिरेकाभ्यामपि पुण्यबंधनिबधनत्वात्, उक्तं च-  
“ सक्षेपात् कथ्यते धर्मो, जनाः! किं विस्तरेण वः? । परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम् ॥ १ ॥”  
मचोपकारो द्वेषा द्रव्यतो भावतश्च, तत्र द्रव्योपकारो भोजनशयनाच्छादनप्रदानादिलक्षणः, स चाल्पीयाननात्यंतिकश्च, ऐहि-  
कार्थस्यापि साधने नैकातेन साधीयानिति, भावोपकारस्त्वध्यापनश्रावणादिस्वरूपो गरीयान् आत्यंतिक उभयलोकसुखानहश्चेत्यतो  
भावोपकार एव यतितव्यः, स च परमार्थतः पारमेश्वरप्रवचनवचनोपदेश एव, तस्यैव भवगतोपचितदुःखलक्षयक्षमत्वात्, आह च-  
“ नोपकारो जगत्स्मिस्तादृशो विद्यते क्वचित् । यादृशी दुःखविच्छेदाद्देहिनां धर्मदेशना ॥ ३ ॥”  
स चोपदेशो यद्यपि उपदेष्टव्यभेदादनेकविधः तथापि चैत्यवन्दनादिविषयः सघस्याचारविधिरेव प्रथमत उपदेश्यः, तस्यैवाहर्निश-  
मश्यानुष्ठेयतया प्रतिदिनक्रियत्वेनानुसमयोपयोगित्वात्, तथा च महानिशीथमत्तमाध्ययनसूत्रं-“ से भयं! किं तं पइदिण-  
किरियं?, पइदिणकिरियं गोयमा! जण्ण अणुसमय अहन्निस पाणोपरम जाव अणुद्वेयवाणि सखिजाणि आपस्सगाणि, से भयं!  
कयरे ते आपस्सगे?, गोयमा! चिइंदणादओ” इत्याद्यागमाद् विनिश्चित्य बहुविस्तरातिगंभीरपूर्वभाष्यचूर्ण्यादिग्रथोक्तप्रति-  
दिनाप्रशयकृत्यचैत्यवन्दनाद्याचारविधिस्वरूपायगमविधिनिर्णयाममर्थान् दुष्पमाद्रोपादस्यतं तथाविधायुर्मेधादिवत्सामग्रीविकला

उपक्रमः

॥ २ ॥

निदंयुगीनलोकानवलोक्य तदनुग्रहकाम्यया संक्षिप्ततर सुखावबोधं आचारविधिनामकं शास्त्रं कर्तुकामः शास्त्रकारः आदावेव समस्तप्रत्यूहद्यूहव्यपोहाय शिष्टसमयपरिपालनाय चाभीष्टदेवतास्तुतिरूपमत्यंताव्यभिचारि मंगलं श्रोतृजनप्रवृत्त्यर्थमभिधेयं प्रयोजनादि च प्रतिपिपादयिपुरिमां भाष्यगाथामाह-

वंदितु वंदणिजे सद्ये चिद्वंदणाइसुविचारं । बहुवृत्तिभासचुष्णीसुधाणुसारेण बुच्छामि ॥ १ ॥

वंदित्वा वंदनीयान् सार्वान्-सर्वज्ञान् सर्वान् वा समस्तान् चैत्यवंदनादिसुविचारं बहुवृत्तिभाष्यचूर्णिश्रुतानुसारेण वक्ष्यामीति पदसंस्कारः । तथा इह साधिकाद्यपदे मंगलं, द्वितीयेऽभिधेयप्रयोजने, उत्तरार्धे सम्बन्धश्च ज्ञातव्यः पदार्थः पुनरयं-‘वंदित्वे’त्यत्र “बहुद् स्तुत्यमिवादनयो”रित्यर्थद्वयाभिधायी घातुः, तत्र स्तुतिः गुणोत्कीर्तनं अभिवादनं-कायेन प्रणिपातः, ततथायमर्थः-वंदित्वा-वचनेन स्तुत्या कायेन च प्रणम्य, अनयोश्च प्रायः संज्ञिनां मनःपूर्विकेव प्रवृत्तिरिति मनसोऽप्याक्षेपः, ततश्च मनसाऽपि, प्रणिधाय चैत्यर्थः, एतेन च करणत्रयनमस्काररूपभाववंदनेन वंदित्वा इत्यावेदितं भवति, न पुनः मनःप्रणिधानविधुरतया वीरकादियद् द्रव्यवंदनेन, तस्याकिंचिच्चरत्वेनाविकलसकलफलाकलनविकलत्वात्, कान् वंदित्वेत्याह-‘सार्वान्’ सर्वमतीतानागतवर्तमानकालभाविभावनिकुरंवं मकललोकालोकलक्षणलक्ष्यावलोकनकुशलविमलकेवलज्ञानावलोकनलेन करतलकलितनिर्मलामलकफलवत् समस्तभूतभवद्भाविगुणपर्यायैर्विदंति सार्वान्, सर्वज्ञा इत्यर्थः, यद्वा सर्वभ्यो-जीवाजीवादिपदार्थसार्थेभ्यो यथावस्थितवितथस्वरूपनिरूपणरक्षणादिना प्रकारेण हिताः सार्वान्-तीर्थकृतः तान्, किंविशिष्टानित्याह-‘वंदनीयान्’ स्तूयंते अभिवायंते च भक्तिभरनिर्भरांतःकरणैः सुरामुरनरनायकगणैर्ये ते वंदनीयास्तान्, त्रिभुवनजनतानमस्यानित्यर्थः । एवं निखिलदुरसमूहशिरः-



श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ४ ॥

शिखरभूतानां निःशेषातिशेषविभूषितानां भगवतां तीर्थकृतां सर्वस्वपरसंपत्संहतिसर्वस्वदेश्याः चत्वारोऽतिशयाः संसृचिताः,  
तथाहि—सर्वं विदंतीति सार्वी इति व्याख्यानेन भगवतां त्रिकालवेदिनां ज्ञानातिशयः समुपलक्ष्यते, न हि निखिलाकल्पितमात्रक-  
लापोपकलनकुशलविमलकेवलालोकविकलतया सर्ववेदित्वं सिद्धिसौधमध्यमध्यास्ते १॥ अनेनैव च श्री वीतरागाणामपायापग-  
मातिशयोऽपि प्रतिपाद्यते, तदविनाभावित्वात् केवलभावस्य, तथाहि—सर्वापायभूता हि रागादयः, अविपह्यशारीरमानसाद्यनेक-  
दुःखलक्षोपनिपातहेतुत्वात्, ततश्च न यावद् रागद्वेषादिदोषापादननिदानभूतघनघातिकर्मचतुष्कात्यंतापगमस्तावन्न केवलं, न च  
तावत् सर्वविद्या युक्तिघटाकोटिमाटीकते इत्यपायापगमातिशयाविनाभावी ज्ञानातिशय इति २॥ सर्वेभ्यो हिताः इत्यनेन तु तेषां  
स्याद्वादनां वचनातिशयः स्पष्टं निष्टं क्यते, न खल्वेककालानेकलोकशंसयसंदेहापोहसमर्थसमस्तनयस्तोमाभिमतसर्वसत्त्व-  
स्वस्वभाषापरिणाम्यतिशायिवचनविशेषमंतरेण सर्वथा सर्वेभ्यः सर्वदोषकर्तुं शक्यते इति ३॥ वंदनीयानित्यनेन तु पूजातिशयः  
श्रीमदहंतां सुप्रतीत एव, प्रशस्तसमस्तजगज्जंतुजातचित्तचमत्कारिपुरंदरादिसुंदरसुरनिकरविरचितप्रकृष्टाष्टमहाप्रातिहार्यादिप्रकार-  
पूजोपचारस्य त्रिभुवनविभूनामहर्निशमवश्यंभावित्वादिति ४॥ एते चत्वारोऽपि देहसौगन्ध्यादीनामतिशयानामुपलक्षणं, तानंतरे-  
णैषामसंभवात्, ततश्चतुस्त्रिंशदतिशयोपेतान् सर्वज्ञान् वंदित्वेति तात्पर्यार्थः, यद्वा वंदनीयानिति विशेष्यपदं, तत्र वंदनं—नमनस्तव-  
नानुचितनादिप्रशस्तकायवाङ्मनोव्यापाररूपां प्रतिपत्तिमर्हन्तीति वंदनीयाः 'शक्तार्हे कृत्याश्चे' (हैम-५-४-३५) त्यर्हार्थेऽत्रानीयः,  
ते चार्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधवः, अर्हन्ति चैते मुक्तिमार्गोपदेशप्रदानाः विप्रणाशबुद्धिजननरपंचाचारपरिपालनश्चिनयवि-  
नयन ४ सहायकरणादि ५ कारणैर्वन्दनां, यदागमः—

मंगलादीनि

श्रीदे०  
पैत्यधी-  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥ ५ ॥

“मग्ने१ अविष्पणासो२ आचारं३ विणयया४ सहायत्तं ५ । पंचविह्नमुक्कारं करेमि एण्हिं हेउहिं ॥१॥”ति  
भवति हि प्रौढविशेषणादनुक्तेऽपि विशेष्ये विशेष्यप्रतिपत्तयः, यथा—‘ध्यानैकतानमनसो विगतप्रचाराः, पश्यन्ति यं किमपि  
निर्मलमद्वितीयमित्यत्र ध्यानैकतानमनस इत्यनेन योगिनः किमपि निर्मलमद्वितीयमित्यनेन तु परमात्मा च प्रतीयत इति, तान्  
किपत इत्याह—‘सर्वान्’ निःशेषान्, समस्तक्षेत्रकालत्रयवर्तिनः’ पंचापि परमेष्ठिन इत्यर्थः, अथवा वंदनीयान् सिद्धियुद्धिसमाधि-  
विधानादिनिबंधनप्रत्यलतया प्रणिधानादियोग्यांनर्हत्सिद्धसाधुधर्मरूपान् चतुरः पंचमांश्र सम्यग्दृष्टिदेवतादीन् ‘चउ वंदणिज्ज  
जिणमुणिसुयसिद्धा इह सुरा य मरणिजा’ इत्यत्रैवाधिकारितयाऽभिधास्यमानान् वंदित्वा, श्रुतादितविधिक्रमेण स्मरणादिगोचरी-  
कृत्य इत्यर्थः । तदेतावता निर्विघ्नशास्त्रपारगमनार्थं शिष्यप्रशिष्यपरंपरया च तत्प्रतिष्ठार्थं मंगलमुक्तं, अर्हदादिप्रणामस्य सकला-  
कुशलजालसमूलोन्मूलकत्वेन भावमंगलत्वात्, यदभाणि भगवत्यां श्रीविवाहप्रज्ञप्त्यां—“एष पंचनमस्कारः, सर्वपापप्रणा-  
शनः । मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं भवति मंगलम् ॥१॥” तथा महानिशीधेऽपि—‘तस्स थं सयलसुखहेउसंचयस्त न  
इहदेवयानमुक्कारविरहिण् फेई पारं गच्छेजा, इहदेवयाणं च नमुक्कारो गोयमा ! पंचमंगलमेव, नो णमन्न’ति, तच्चैवं—नमो अरिहं-  
ताणं जाय पढमं हवइ मंगल’मिति । तथाऽन्यत्रापि ‘अर्हतो मंगलं सिद्धा, मंगलं सर्वसाधवः । मंगलं केवलप्रोक्तो, धम्मो मे मंगलं  
मदा ॥२॥” तथा—‘मम मंगलमरिहंता सिद्धा साहू सुयं च धम्मो य । मम्महिद्धो देवा दिंतु ममाहिं च वोहिं च ॥१॥’ भवन्ति च  
श्राविजपनृपतेरिपार्हद्वंदनादिना मंगलानि, तत्कथा चैवम्—

विभो ममुहलओ सुवेइओ सुविजओ सुवामहरो । सुनओ सुवाहिणीओ जंबुदीवुऽत्थि सुनिवुव ॥ १ ॥ तत्थत्थि सुभडसित्तं व

श्रीविजय-  
नृपकथा

॥ ५ ॥

श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ६ ॥

भरहखित्तं वणावलीजुत्तं । तत्थ य गिरी सुविजाहरो विषइहो विषद्वष ॥२॥ तदुवरि रहनेउरचक्कवालनयरंमि खयरनरनाहो ।  
जलणजडी पयडीभूयजालमालाजलणतेओ ॥३॥ तस्सत्थि वाउवेया सुविवेयालंकिया महादेवी । पुत्तो य अक्ककित्ती सयं-  
पभा नाम वरधूया ॥४॥ अन्नदिणे अभिनंदणजगनंदणनामया तहिं पत्ता । भवियाण ममत्थअणत्थवारणा चारणा समणा ॥५॥  
सुतवस्सियाण पूयापणामसक्कारविणयकज्जपरो । वद्धंपि कम्ममसुहं सिढिलेइ लघुंति चिंततो ॥ ६ ॥ राया सुयाइसहिओ तत्थ य  
आगम्म सम्मभानम्म । मुणिणो उवविसइ तओ जिह्मणी कहइ इय धम्मं ॥७॥ “इह अत्थि विविहरिद्वीसिद्विसग्गाइकारणं धम्मो ।  
धम्मो महह्मंगलवह्मिपल्लवणघणतुल्लो ॥८॥ उल्लसिरनिरंतरअंतरायसंघायघायगो धम्मो । धम्मो य उदग्गसमग्गअंगकल्लाणकुलभवणं  
॥९॥ सयलसुहदाणपच्चलनिच्चलमम्मत्तसुप्पइट्ठाणो । सो सबदेसविरइप्पमेयओ पुण भवे दुविहो ॥१०॥” इय सोउं तत्तनिच्चयदिट्ठी  
छड्डिय अपुवमिच्चत्तं । गिण्हइ सयंपहा संमरंमगिहिधम्ममइसंमं ॥११॥ तत्तो पणमिय मुणिणो सपरियणो नियगिहे गओ राया । दुरि-  
यभरतिमिरत्तणी मुणीवि अन्नत्थ विहरित्था ॥१२॥ कहयावि पव्वदिवसे सयंपहा काउ पोमहं पुण्णं । तप्पारणए वंदित्तु चेइए जाइ पिउ-  
पासं ॥१३॥ जंपइ य ताय ! एयं सेयं सेसं जिणिंदचंदाणं । गिण्हेह तयणु तेणवि पडिच्चिया पणयसीसेण ॥१४॥ उक्तं च वसुदेवहिं-  
डीप्रथमग्वण्ड एकोनविंशतितमे लंभे ‘सयंपभा कन्ना अभिनंदणजगनंदणचारणसमणसमीवे सुअधम्मा सम्मत्तं पडिवन्ना,  
अन्नया य पव्वदिवसे पोमहं अणुपालेऊण सिद्धाययणकयपूया पिउणो पाममागया—ताय ! सेसं गिण्हहत्ति, पणएण रन्ना पडिच्चिया सिर-  
मत्ति” अह सुचरणं मुवयणं सुदंसणं नियसुअं निएवि तथा । भणइ निवो सचिवाई भो कहइ इमीइ वरमुच्चियं ॥१५॥ अप्पाउआइ आस-  
ग्गीचाट् निवाइणो अवरमिद्धे । विणिवारिय दिवविउ जंपइ संभिन्नसोउत्ति ॥१६॥ इह—सेणिपद्दुत्तपओ मे पोयणपुरपहुसुओ अय-

श्रीविजय-  
नृपकथा

श्रीदे० वै-  
त्यश्र/धर्म०  
संघाचर-  
विधौ  
॥ ७ ॥

लभाया । पद्म! पद्मअद्भुतकी वरो तिविद्वो इमीइ वरो ॥१७॥ अविद्य-जशुखट्टमहस्सदुगुणनिवियरकन्न१६ वेस१६पुर १६देसे ।  
अडयालकोडिसुहडे४८हय४२गय४२रह४२लक्खवायाले ॥१८॥ कब्बडमडंब वारममहसे दुतिगुणियपट्टणोचपुरे । अडवीसअंतरो-  
यग पणवीस कुरज खंडतिगं ॥१९॥ अडयाल गामकोडी दीणमुहागरयखेडसंवाहा । सबगुणवन्न दसअडसगमहसे सोल नाडय  
सहस्से ॥ २० ॥ तत्र-ग्रामो घृत्याघृतः स्यान्नगरमुरुचतुर्गोपुरोद्भासिशोभं, खेटं नद्यद्विवेष्टं परिषुतमभितः कर्भटं पर्वतेनग्रामैर्युक्तं  
मडंबं दलितदशशतैः पचनं रत्नयोनि, द्रोणारच्यं सिंधुवेलावलयितमथ संवाधनं वाऽद्रिशृंगे ॥२१॥ मगरयणवियदद्वं लवणोयहि-  
याभिणेगनागवई । छतीकयकोडिसिलो म सासिही जम्मभरहद्वं ॥ २२ ॥ उक्तं च-“ चक्रिऽद्धरिद्विविलया चक्रधणुगयामिसंग्व-  
मणिमाला । मगरयणा गरुलभया नीलतणू पीयवसण हरी ॥ २३ ॥” तं मोउं जलणजडी मपरियणो गंतु पोयणपुरंमि । पत्थिअ  
तिविद्वुणा तो मयंपहं लहु विवाहेइ ॥२४॥ तीइ सुओ सिरिविजओ जाओ अह उवरयंमि पियरे सो । अयलंमि गदियदिक्खे पवलप-  
यापो कूणइ रअं ॥२५॥ सो अन्नदिणे गोसे तोसेणं विहियसज्जमज्जणओ । जणउह दंमणेणवि पयाण पायडियगुरुहरिमो ॥२६॥ हरिमम-  
विहमयहुदंडनाहअणुणिज्जमाणवरमग्गो । मग्गणगिअंतामलजमजलभरभरियभुवणमरो ॥२७॥ मरभमपणमंतमहंतमंतितामंतनियर-  
नयपग्गो । गणरसियनरो विव विहियपवरचहकवयसंपग्गो ॥२८॥ गहनाहो विव सययं चुहकविसरगुरुजणाणुगओ । गयपुंगवुष  
अणपरयं जो तिविहवरदाणसंवरिसी ॥२९॥ रिमिमाणसं च निअियदुडायअंतरविक्खच्छग्गो । वग्गंतसुहडेहेसंततुरयगअंतगय-  
नियहो ॥३०॥ गहमाणो जिणआणं हिआण् विहडियअसेमअहिअत्थो । अत्थाणे उअविद्वो पिच्छणयं जाव पिच्छेइ ॥ ३१ ॥ ताव  
पग्गामि पिभी पागीयरदंडमंडियकरग्गो । पविमिय अत्थाणसहं नमिअ निवं विन्नवइ एवं ॥३२॥ पद्म मिअवत्थो पुत्थियहत्थो

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥ ८ ॥

नेमिचिओ तिकालविऊ। चिड्डइ वारे भे दंसणुस्सुओ मुचउ न वत्ति ? ॥३३॥ मा मुअसु जंपइ निवो कोऽवसरो तस्स पिच्छणे  
अत्थ?। नय सोहइ वेयइणुणी वाइजंतीइ वीणाए ॥३४॥ मंती विन्नवइ इमं मिल्हावसु सामि! जं तिकालन्नू। दीसइ न कोऽवि  
इह पिच्छणं तु अणिसं पडुपसाया ॥३५॥ तो मुयसुत्ति निवुत्ते मुक्को सो वेत्तिणा तहिं पत्तो। मंतुच्चारणपुवं उवविट्ठो उचियठाणंमि  
॥३६॥ मग्गेउमागओ किं? अक्खेउं किंपि वा तुमं इहयं?। इय सायरं निवेणं भणिओ सो आह पयडमिणं ॥ ३७ ॥ जीवामि  
जाइएणेव जइवि निव! जाइउं तहवि किंपि। तुम्ह सयासाउ नेव संपयं संपयं अम्ह ॥३८॥ सक्किज्जइ अक्खेउं न जं तयं अक्खिउं  
इहायाओ। नायंभि पडीयारो कहंपि रोगुव जं होइ ॥३९॥ मा संकसु किंपि इहं भण वीसत्थो तए जमिह नायं। इइ निवइअणु-  
न्नाए जंपइ नेमिचिओ तत्तो ॥४०॥ पोअणपुरेमरोवरिइओ दिणा सत्तमे दिणे विज्जू। मज्झंदिणे पडिम्मइ नायमिणं मे निमित्तेण  
॥४१॥ तो कुविओ जुवराया तह्छहुभायाऽऽह त विजयसेणो। किं नाम तमि दिवसे तुब्भुवरि पुण पडिस्सिहिइ? ॥४२॥ ओएह  
असंबद्धपलाविरस्स निमित्तिआहमस्स कहं। जीहाए चवलत्तं ठाणे एयंमिवि इमस्स? ॥४३॥ नेमिचिओ पयंपइ मं पइ मा कुमर! कुण  
मुहा कोवं। जं मह न भावदोसो सुनाणदिट्ठं कहंतस्स ॥४४॥ अविय-पवरोविहु दिवन्नू दिवं सक्केइ नेव रक्खेउं। जं भाविस्सुह-  
असुहं तं पुण सो कहइ अवियप्पं ॥४५॥ किंच दिवसंमि तंमी सकारपुरस्सरं ममं पडिही। आभरणवत्थमाणिकजायरूवाइवरसुट्ठी  
॥४६॥ एयस्स वरवरस्स व जहत्थकहणा महोवयारिस्स। मा कुप्पसुत्ति कुमरं भणिय निवो भणइ नेमिचिं ॥४७॥ सिक्खियमिमं  
निमित्तं कत्थ तए? लं निरत्तए वयणे। सट्ठा न होइ खलु पच्चयं विणा अह भणइ सोऽवि ॥४८॥ पडु पवजंतेणं सह अयलवलेण  
सारही-त्तस्स। मज्झ पिपा संडिह्ठो पवइओऽहंपि पिइमोहा ॥४९॥ सबं निमित्तजायं तं एयं सिक्खियं मए तइया। जिणसमएचिय

श्रीविजय-  
नृपकथा

॥ ८ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ९ ॥

नाणं जं अषमिचारि न अन्नत्थ ॥५०॥ अट्टविहंपि निमित्तं नरिंद ! जाणामि अवितहं एयं । लाभा१लाभर सुहारे सुह४ जीविय२-  
मरण३ जय७ विजयत्ति८ ॥५१॥ लक्खण१ दिव्वुप्पायं३ तल्लिक्ख४ भोमं५ ग६ वंजण७ सरं च८ । पउम१ रुपणु२ क३ तडि४-  
कंप५ फुरण६ तिलग७ सऊणाई८ तयं ॥५२॥ संपत्तजुव्वणोऽहं विहरंती अन्नया गओ नयरे । पउमिणिसंडंमि हिरण्णलोमिया  
पिउसिया तत्थ ॥५३॥ तीइ सुया चंदजसा पुबिं दिन्ना उ सा मह तयं च । ददुं रागाउ मण चइऊण वयं परिणयाऽऽसी ॥५४॥  
संपइ सकअसिद्धिं नाउ निमित्तेण इममणत्थं च । इह आगओ नरेसर ! जं जुत्तं तं करिज लहुं ॥ ५५ ॥ अह मंतिजणे तक्खण-  
निवरक्खणआउले भणइ एगो । ठाउ पइ मत्ताहं महन्नवे नावमारुहिउं ॥५६॥ विइओ भणइ न एअं रुचइ मे तत्थ जं पडंति तया ।  
को चारिही ? वियद्वे ता गंतुं चिड्डउ गुहाए ॥५७॥ जेण इमाए ओसप्पिणीइ सुम्मइ कयाइ नहु तत्थ । विज्जुनिवाओ नागिद-  
दिन्नविआणुभावाओ ॥ ५८ ॥ तइओ भणइ इमंपिहु जंकिंचि जओ अवस्मभावी जो । अत्थो जत्थ व तत्थ व न अन्नहा होइ  
इह नायं ॥५९॥ इह भरहे विजयपुरंमि रुद्धसोभो दिओ पिया तस्म । जलणस्सिहा ओवाइयसयजाओ नंदणो उ सिही ॥६०॥  
तत्थऽन्नया निसियरो अइकूरो कोऽवि आगओ सो उ । बहुमाणुसाणि हणितं थोवं भुंजइ चयइ बहुअं ॥६१॥ भणिओ निवेण  
मामेण सो गुहा किं चहुं हणसि मणुए ? । सीहाइणोऽवि पसुणो हणंति छुहिआ जमेगजिअं ॥६२॥ तुहविक्किं दाहं माणुसमणिसंति  
योऽवि मन्नइ तं । कारइ निवोऽवि नयरे पइदिह नरनामगोलाइं ॥६३॥ कुमरिक्करेणं गोलो कइदिजंतो उ निस्सरइ जस्स । जाइ  
म पुररक्खत्थं भक्खत्थं रक्खसस्म तओ ॥६४॥ निस्सरिओ गोलो सिहिदिअस्स तस्सऽन्नया य तन्नाउं । हा वच्छ ! तुह विणा कह  
होहमहं ? रुअइ तम्माया ॥६५॥ अह तग्गिहमामने एगं भूयगिहमत्थि सुमहंतं । तं मवणदुस्मवं तीइ रोइअं मुणिय ते भूया ॥६६॥

श्रीविजय-  
नृपकथा

॥ ९ ॥

१६० जे-  
त्यश्रीधर्म-  
भंगाना-  
विषी  
॥ १० ॥

जायदया तं पभणंति रूपसु ना तत्थ जाउ तुह पुत्तो । तुह पासे आणिल्लामु रक्खससगासाओवि इमं ॥ ६७ ॥ इअ न ववत्था-  
लोपुनि भणइ मा माहू माहू हे देवा! । जा ताव सया रक्खेहि रक्खमस्सअप्पिओ नेव ॥ ६८ ॥ जा भक्खिस्सइ तं सो अवहरिउं तेहिं  
अप्पिओ ताव । तीइ जणणीए तीइवि भीयाइ भयं नियंतीए ॥ ६९ ॥ संगोविओ गुहाए गमिओ मो अयगरेण तत्थ ठिओ ।  
तम्हा न भयनामो एयस्स भवे कर्हिंवि कत्थविय ॥ ७० ॥ नवरं इमो उपाओ अरिहाईपूअणाइयं धम्मं । सवे करेह जं मो तुरिअं  
अरहरइ क्खणइ सुहं ॥ ७१ ॥ भणिअं च-“गत्तपीडामारीदुन्निमित्तदुस्सउणपमुहदोमगणा । अरिहाइवंदणाहिं नूणं सिग्घं  
उवममंति ॥ ७२ ॥” तथा-सवे ताव पमत्था सुमिणा मउणा गहा य नक्खत्ता । तिहुअणमंगलनिलयं हिअण्ण जिणं  
चरंताणं ॥ ७३ ॥ मंती भणइ चउत्थो एमेअ इमं परं इहअंप्पि । जत्तंतरं विहिजउ जत्तवहुत्ते हि नहु दोसो ॥ ७४ ॥ ता मत्तदिणे अन्नो  
ठारिजउ अहिवइ इहं तत्थ । अमणिनिगाए दुरिअं जाइ खयं जेण लहु पहुणो ॥ ७५ ॥ किंच-नेमित्तिणावि इमिणा पोअणपुरअहिवइस्स  
उगगम्म । भणिओ अमणिनिगाओ न उणो मिरिजियनरनाहे ॥ ७६ ॥ भणइ निमित्ती मंतिवर ! ते मई मह निमित्तओ अहिया । ता  
लहु क्खण कज्जमिणं चिहुउ राया म धम्मपरो ॥ ७७ ॥ जंपइ निरई संपइ जो खे सिच्चए अहह तस्स । पाणविणासं चित्तेमि निरवराहस्स  
रुहमहयं ॥ ७८ ॥ जओ-आसक्काओ आक्कीडयाओ पाणीण वृत्तया पाणा । तो कइ नरमग्गकरंति जुजए मह इमं काउं ॥ ७९ ॥  
अरिअ-अत्तेमि पाणीणं ताणकरणिक्कमवया गरुआ । अम्हे उ कइ मजीविअकए परं पाणिणं हणिमो ॥ ८० ॥ युवगजा-आत्मानं  
मर्वतो रक्षयं, प्राहुधेम्मविदो जनाः । यदिदं चैव शरीरं, धर्मस्याद्यं हि माधनम् ॥ ८१ ॥ जीवन भद्राण्यवाप्नोति, जीवन् पुण्यं  
रुरोति च । मृतस्य देहनाशोऽस्ति, धर्मव्युपरमन्था ॥ ८२ ॥ इय चुत्तिचुत्तमृत्तोऽत्रि षेगहा जा न मन्नइ निओ सो । ता विअरइ

श्रीविजय-  
नृपकथा

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ११ ॥

सुबुद्धी विसुद्धचउबुद्धिमणिसिंधु ॥ ८३ ॥ पद्दु दुग्मवि काहमिमं जहऽणत्थखओ न यावि जीववहो । इय पुण सचिवेषुत्ते  
भणइ निओ घडड कहमेयं ? ॥ ८४ ॥ माहइ सचिवो मामिअ ! सिअउ रजंमि इह धणयपडिमा । सत्ताहं सेचिस्सइ तंपिव तमिमो  
जणो मवो ॥ ८५ ॥ दिवणुभावा दुरिअं न होइ जइ कंचणं सुरहि तत्तो । तन्भावे पडिमक्खय पदुरक्खा नविय जीववहो ॥ ८६ ॥  
जुत्तंति ठविउ रजे तं तह कारेतु चेइएसु महं । कयसेयं सेयंसं देवं वंदइ इय थुईहिं ॥ ८७ ॥ “अस्सेयदेविं दलियंअमुत्ती, सेअं-  
ममेयं सुयधम्मकीत्ति । करिसुमेयं जमिहं अविज्जाणंदोलगिण्हंपि तमअ ! कुआ (१) ॥ ८८ ॥ प्राग् शय्याधिष्ठात्रीमश्रेयस्कारिणीं  
दृष्टदेवीं दलयित्वा-तच्छरण्योपविशनेन वित्रास्य अंबेव माता-मूर्तिर्यस्य गर्भस्थितत्वात् मोडंबमूर्तिः अर्यं!-स्वामिन् ॥ जे  
धम्मकित्तिसिरसंतिविगुत्तिविज्जाणंदप्पयाणपणिहाणविहाणमआ । देविंदविदपरिविंदपयारविंदा, ते मुत्तिजुत्तिमिह दिंतु जिणिंद-  
चंटा (२) ॥ ८९ ॥ तेमि मपुसधम्मकीत्तियमिणं देविंदचकित्तणं, संपुण्णेपरियाइसाहणगुणं लोगुत्तमुक्कित्तणं । विज्जाणंदपहाण-  
मुत्तिपयवीसंपायणं मवया,आयंतीह जिणिंदचंदवयणं जे मवया सवया (३) ॥ ९० ॥ शणं-बालत्तणं । निअं देविंदसूरी जियमइविहया  
जे सुयंगीड नामं, ज्ञायंता हुंति मत्ता तमतिमिरमिया धम्मकित्तिल्लयं तं । जं पारीणत्तणंभो धिवियइ अइरा मवसत्थुत्तमाणं, विज्जाणंदं व  
एसा जिणरउयणे भत्तिराणं नराणं (४ ॥ ९१ ॥ ” चिइवंदणाइ सेयं इय काउं जाइ तिविहसेयमई । सत्ताहपोमहं कुणइ दब्भ-  
मंथारगो गया ॥ ९२ ॥ भणियं च वसुदेवहिं डीण-मिरिपिजओऽवि दब्भसंथारोवगओ मत्तरत्तपरिचत्तारंभपरिग्गहो वंभयारी  
संविग्गो पोमहं पालेड”त्ति, वट्टंति मंतिणो नियनियव वेयमणजक्खपडिमाए । नाहंतरेऽवि जंति हि धीमंतो सामिखेमत्थं  
॥ ९३ ॥ पंचपरमिद्धिउमंभंतमुमरणापमिडपम्मझाणंमि । शल्लीणो नग्नाहो मुहेण बोलेड दिवमाइं ॥ ९४ ॥ अह मत्तमंमि दिवसे मज्झण्हे

श्रीविजय-  
नृपकथा



धीदे०  
नेत्यश्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ १२ ॥

याह उत्तरो परणो । कचोलयमुहमित्तं समुच्छ्रियं अब्भखंडं च ॥९५॥ नेमित्तिओ पयंपह उत्तरओ नियह अब्भयं लोया ! पच्छाइ-  
म्मइ गयणंगणं इमो पलपमेहुव ॥९६॥ जह२ पसरइ पवणो तह तह पसरेइ मेहखंडंपि । ते नहयलपरिसक्कणगहमहमिगयाइ व  
ट्ठणंति ॥ ९७ ॥ भरियगिरिकंदरोदरधरविवरो झत्ति थणियसदोऽवि । फोडंतो वंभंडं दिक्करडिरवुव वित्थरिओ ॥९८॥ तडि-  
दंडाडंबरनिम्भरंतरं तक्खणे जयं जायं । पलयानलजडिलविलोलजालमालाक्खलियंव ॥ ९९ ॥ मेहाउ तडियदंडो जमदंडिव  
कडयडत्ति कुणमाणो । पडिओ रज्जधुरंधरधुरीकए तंमि जरूखंभि ॥१००॥ तस्म सयं चिय जाया तस्स उ नेमित्तियस्स उवरिंमि ।  
अंतेउराडपिहिआ रयणाभरणाइवरवुट्ठी ॥१०१॥ पारित्तु पोसहं करिय जिणमहं पारणं विहिय रत्ता । नेमित्तिओ विसिट्ठो दाउ पुरं  
पउमिणीसंडं ॥१०२॥ आपयवंधुत्ति निवेण कारिया मणिमई धणयपडिमा । सामंताईहिं तहा नयरंमि महुसवो रम्मो ॥१०३॥  
गयणंगणविवरविगारि सवणमुहकारि अह समुच्छ्रिलिओ । जयसदपंचमो तरूखण झुसिराणद्धतूररवो ॥ १०४ ॥ किमिणंति संभ-  
मुम्भंतलोयणा जा जणा नियंति नहं । दमदिमिपयासयंतं विमाणमिक्कं पलोयंति ॥१०५॥ अब्भुट्ठिओ विमाणा ओयरिओ अमि-  
यतेयव्यरिंदो । नियमायमयंपहभायअक्किचीसुओ राया ॥१०६॥ सनिवस्म मजोइपहा काउ पियं नियससामुताराए । सिरिवि-  
जयं तदिन्नामणो य पुच्छेइ इय हिट्ठो ॥ १०८ ॥ नेव वसंताइमहो न पुत्तजम्मो नरिंद ! तुज्झ तओ । को उस्मवं करेइ य सिरि-  
विजओ कइहू तो सवं ॥ १०९ ॥ तंमोउ अमियतेओ वत्थाभरणाइएहि सिरिविजयं । सक्कारिय कइवि दिणे तत्थ य ठाउं गओ  
मपुरं ॥११०॥ देवेन्द्रादिनमस्कृतानथ नृपः स्तौत्यर्हतः सिद्धमद्विद्यानंदमुखाद्यनंतकपिधान् सिद्धान् समृद्धान् शुभैः । आचार्यान्  
श्रुतधर्मयोगगुणान् न्याचारचारून् मद्रोराध्यायान् यतधर्मकीर्तित्रिधेः माधून् ममामाधकान् ॥१११॥ इय सिरिविजओ राया

श्रीविजय-  
नृपकथा

श्रीदे०  
चैत्यधी-  
धर्म० संघा  
नारविषौ  
॥ १३ ॥

जिणाइपणिहाणपत्तकल्लाणो । इय दसममवे संतिस्स गणहरो होउमिह सिद्धो ॥११२॥ श्रुत्वेत्यहो श्रीविजयस्य धर्माद्विघ्नोपशान्त्या  
बहुमंगलानि । कल्याणकानां जिनवन्दनादौ, मंगल्यभूते कुरुत प्रयत्नम् ॥ ११३ ॥ इति श्रीविजयनृपतिकथा ॥

इत्थं च कृतमङ्गलोपचारः शास्त्रकारः कृत्वाप्रच्ययस्योत्तरक्रियासव्यपेक्षत्वात्तमाह-वक्ष्यामि-भणिष्यामि, कं?—‘चैत्यवन्दनादि-  
सुविचारं,’ तत्र चित्तं—प्रस्तावात् प्रशस्तं मनस्तन्भावः चैत्यं, तद्धेतुत्वात् जिनविंबान्यपि चैत्यानि, कारणे कार्योपचारात्, तेषां वन्दना-  
पूर्वोक्तशब्दार्था चैत्यवन्दना, उक्तं च—“चित्तं मणो पसत्थं तन्भावो चेइयंति तज्जणं । जिणपडिमाओ तासिं वंदणमभिवायणं तिविहं  
॥१॥” यथा चित्तेः—लेप्यादिचयनस्य भावः कर्म वा चैत्यं, तत्र संज्ञादिशब्दत्वाद् देवताप्रतिबिंबे प्रसिद्धं, चूर्णौ तु ‘चिती संज्ञाने  
काष्ठकूर्मादिषु प्रतिरूतिं दृष्ट्वा संज्ञानमुत्पद्यते यथाऽर्हदादिप्रतिमैपे’त्युक्तं, शेषं प्राग्वत्, ननु भावार्हदादीनामप्यत्र वन्दना क्रियते तत्कथं  
चैत्यवन्दनेत्युच्यते?, सत्यं, प्रायेणास्याश्चैत्याग्रे करणात्, तथाच बृहद् भाष्यं—“भावजिणप्पमुहाणवि सव्वेसिवि जइवि वंदणा तइवि ।  
ठरणाजिणाण पुरओ कीरइ निइवंदणा तेण ॥१॥१२॥ जिणविंबाभावे पुण ठवणागुरुसक्खियावि कीरंती । चिइवंदण श्रिय इमा तत्थवि  
पमिद्धिठरणाउ ॥२॥१३॥ अहया जत्थ तत्थ व पुरओ परिकप्पिऊण जिणविंबं । कीरइ पुहेहिं एसा नेया चिइवंदणा तम्हा ॥३॥१४॥”  
‘शदिप्रवृत्तात् गुरुवन्दनाप्रत्याख्यान्यानादिपरिशुद्धः, तेषां सुविचारः, तत्र गुण्डु-शोभनो बहुशास्त्रसाराथसंग्रहतया तन्निष्पन्नतया च स्वल्प-  
प्रशान्नामपि गुरवेन यठनावबोधादिनिबन्धनत्वात् सकलसंघस्य प्रतिदिनावश्य करणीयतया सदोपयोगित्वाच्च विचारो-विधिस्वरूपादि-  
व्यर्थं चैत्यवन्दनादिसुविचारः, एतेन च प्रेक्षावत्प्रसुप्तपर्यमभिधेयनिर्देशः कृतः, एतदुक्तौ हि शास्त्रश्रवणादिप्रवृत्तेः, उक्तं च—“श्रुत्वा-  
नैवंदनां प्रागादी, पूर्याथोपकारकम् । भवणादौ प्रवर्तते, तज्जिज्ञासादिनोदिताः ॥१॥” अनेनैवात्र बहुशास्त्रसाराथसंग्रहज्ञापक-

मुशब्दविशेषिततया सूत्रकृत् प्रयोजनमपि दर्शयति, तद्विना सर्वस्यापि विवेकिनः सर्वत्राप्यप्रवृत्तेः, न्यगादि च—“प्रयोजनमनु-  
दिश्य, न मन्दोऽपि प्रवर्तते। एवमेव प्रवृत्तिश्चैतन्ये नास्य किं भवेत्? ॥ १ ॥” तच्च शास्त्रकर्तृश्रोत्रोरन्तरपरंपरभेदाच्चित्यं, तत्र  
शास्त्रकर्तृग्नंतरं प्रयोजनं सत्त्वानुग्रहः, संक्षिप्तशास्त्रस्य सुखेन पठनपाठनादिना विस्तरशास्त्रपठनाद्यसमर्थसंक्षिप्तरुचिसत्त्वानामत्र प्रवर्त-  
नात्, यत उच्यते—“सुयसायरो अपारो आउं थोवं जिआ य दुम्मेहा। तं किंपि सिक्किव्यव्वं जं कज्जकरं च थोवं च  
॥१॥” परंपरप्रयोजनं त्वपवर्गप्राप्तिः, धर्मोपदेशदानस्य हि मोक्षफलत्वात्, तथा चोक्तम्—“सर्वज्ञोक्तोपदेशेन, यः सत्त्वानामनुग्रहम्।  
करोति दुःखतप्तानां, न प्राप्नोत्यचिराच्छिवम् ॥१॥” श्रोतुश्चानंतरप्रयोजनं चैत्यवंदनाद्याचारविधिपरिज्ञानं, परंपरं तु तस्याप्यपवर्ग-  
प्राप्तिः, सम्यक्चैत्यवंदनाद्याचारविधिपरिज्ञातुः शुभभावभवनतो यथाविधि तत् समाचरतश्च सर्वकर्मक्षयेण निर्वाणनिबंधनत्वाद्,  
आह च—“चिइवंदणाइ सम्मं मोउं लहुकम्मयाइ काऊणं। निट्टविअअट्टकम्मा सिद्धिं पत्ता अणंतजिया ॥ १ ॥” कथं  
वक्ष्यामीत्याह—‘बहुवृत्तिभाष्यचूर्णिश्रुतानुसारेण’ अत्र बहुशब्दः प्रत्येकं संबध्यते, ततश्च बह्व्यो वृत्तयः-टीका बहुसंस्कृताक्षर-  
निबद्धसूत्रादिरिगणरूपा ललितविस्तराद्याः बहूनि च भाष्याणि-गाथानिवद्धसूत्रव्याख्यानरूपाणि एतद्बृहद्भाष्यव्यवहार-  
भाष्यादीनि तथाच बहवश्चूर्णयः-प्रायः प्राकृताक्षरनिबद्धविवरणविशेषा एव एतत्पाक्षिकावश्यकादिसंबन्धिन्यः, तथा श्रुतं-  
सूत्रं गणधरादिकृतं, पंचसाक्षिकधर्मप्रतिपादनपरपाक्षिकसूत्रादि, निर्युक्तयस्तु चतुर्दशपूर्वधरकृतत्वेन सूत्रत्वात् श्रुतग्रहणेन गृहीताः,  
उक्तं च—“मुत्तं गणहररइयं तहेव पत्तेयवुद्धरइयं च। मुअकेरलिणा रइयं अभिन्नदमपुविणा रइयं ॥ १ ॥” श्रुतकेवलिनेति-चतुर्द-  
शपरिणा, अभिनेति-परिपूर्णाः, यदा गाथानिबद्धसूत्रव्याख्यानरूपत्वात् निर्युक्तीनां भाष्यग्रहणाद् ग्रहः, तेषामनुसारेण-तदृक्ता-

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १५ ॥

विसंवादेन, यथा तेषूक्तं तथा तेभ्य उद्धृत्य अत्र भणिव्यामीति तात्पर्यार्थः॥ एषामक्षराणि त्वग्रे यथाप्रस्तावं दर्शयिष्यामः । एतेन च शास्त्रस्य गौरवमापादितं स्यात्, भवति ह्याधारविशेषादाधेयस्य गुणप्रकर्षविशेषो, जलादेरिव क्षित्याद्याधारविशेषादिति, अथवा श्रुतमिति-आकर्णितम्, अर्थात् गुरुममीप इति गम्यते, इदमत्र हृदयम्-सूत्रनिर्घुक्तिभाष्यचूर्ण्यादिभणितोऽपि चैत्यवंदनाद्यर्थो यथा गुरुभिव्याख्यातस्तथा वक्ष्ये, न पुनर्निजमत्या विकल्प्य, निजमतिकल्पितार्थानुसारेण हि शुद्धानुष्ठितस्यापि कष्टानुष्ठानस्या-ज्ञानकष्टानुपातित्वाद्, उक्तं च-“अपरिच्छिद्यसुयनिहसस्स केवलमभिन्नसुत्तचारिस्स । सव्वुज्जमेणवि कयं अन्नाणतवे बहुं पडइ ॥१॥” अभिन्नत्ति-विशेषव्याख्यानरहितं, किंच-यदि सूत्रोक्तमात्रमेव कार्यकारि स्यात् तदाऽनुयोगोऽनर्थकः स्याद्, यदागमः-“जंजह सुत्ते भणियं तहेव तं जइ विआरणा नत्थि । किं कालिआणुयोगो दिट्ठो दिट्ठिप्पहाणेहिं ? ॥८॥” एवं च गुरुपारतन्त्र्य-प्राधान्यव्यापनातो ग्रंथकृता स्वमनीषिकापरिहार उक्तः, यद्वा ‘व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्ति’ रितिन्यायात् बहुशब्दः श्रुत-शब्देऽपि संबध्यते, बहु श्रुतं येषां ते बहुश्रुताः ततश्च प्रभूतागमाः प्रधाना गीतार्थाः पूर्वसूरयः इत्यर्थस्तेगामनुमारेण, अपमर्थः-यथा बहुश्रुतपूर्वाचार्यपरंपरया चैत्यवंदनादिविचारः समायातः तथा वक्ष्ये, बहुश्रुताद्यनुमारेण एव जीतव्यवहारानुपातितया मोक्षमार्गानुयायित्वात्, उक्तं च-“वत्तणुवत्तपवत्तो बहुसो आसेविओ महाणेण । एसो अ जीअकप्पो पंचमओ होइ ववहारो ॥१॥ वत्तो नामं इक्कसि अणुवत्तो जो पुणो विइयवारा । तइअट्ठण पवत्तो सुपरिग्गहिओ महाणेण ॥२॥” तथा “मग्गो आगम-नीई अहवा संविग्गगुरुजणाइण्णो । उभयाणुमारिणी जा सा मग्गणुमारिणी किरिय ॥१॥” ति (धर्मरत्ने) एतदन्यथा व्याख्यानं तु मार्गानुयायितया स्रच्छंदतापत्तेश्च, उक्तं च निशीर्षकादशोद्देशके-“ उस्मुत्तमणुवइट्ठं सच्छंदविग्गप्पियं अणणुवाई । परतत्तिपवत्ते

प्रस्तावना-  
शेषं

॥ १५ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
र्म० सघा  
चारविधौ  
॥ १६ ॥

तित्तिणे य इणमो अहाछदो ॥ १ ॥ एतच्चूर्णिः-उस्सुत्त नाम सुत्तादवेय, अणुवइडं नाम जं नो आयरियपरपरागयं, मुक्तव्याकर-  
णवत् ( ५०० ) सीसो पुच्छइ-किमन्न सो परुवेइ?, आचार्य आह-‘स्वच्छदविकल्पितं’ स्वेन छदेन विकल्पितं स्वच्छंदविक-  
ल्पितं च, अननुपाति न क्वचित् सूत्रेऽर्थे उभयोर्वा अनुपाति भवति, ईदृशं प्ररूपयतीति, एतेन च प्रेक्षावत्प्रवृत्तिनिमित्तं सवधोऽपि  
प्रदर्शितः, तथा च तैरुक्तम्-“ प्रेक्षावता प्रवृत्त्यर्थं, फलादित्रितय बुधैः। मगलं चैव शास्त्रादौ, वाच्यमिष्टार्थसिद्धये ॥ १ ॥”  
स च सवधो द्विधा-उपायोपेयलक्षणो गुरुपर्वक्रमलक्षणश्च, तत्राद्यस्तर्कानुसारिणः प्रति, तद्यथा-वचनरूपापन्नमिदं भाष्यमुपाय-  
स्तत्परिज्ञानं चोपेय, गुरुपर्वक्रमलक्षणस्तु केवलश्रद्धानुसारिणः प्रति, स चैवं-अर्थतश्चैत्यवन्दनादिविधिर्भगवता श्रीवर्द्धमानस्वा-  
मिनोपदिष्टः, सूत्रतस्तु गणधरैर्ग्रथितो, यदागमः-“अथ भासइ अरिहा सुत्त गथति गणहरा निउणं। सासणस्स हियद्वाए तओ  
मुत्त पयत्तई ॥१॥ (आ. नि.)” ततश्चोञ्जयिन्याः पुरुषपरपरया कौशाम्ब्या समानीतेष्टका इव जवूस्वामिप्रभवप्रभृतिकेवलेश्रुतकेव-  
लिदशनपूर्वधरादिपूर्वाचार्यपारम्पर्यण समायातो यावदस्सद्गुरव इति, तथा चाहुर्दुष्पमाधकारनिमग्नजिनप्रवचनप्रदीपप्रतिमाः श्री-  
जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणपादा विशोपाचर्यके-‘जिणगणहरगुरुदेसिय आयरियपरपरागय तत्तो। आय च परपरया पच्छा  
सयगुरुजणुहिट्ट ॥ १ ॥ उञ्जेणीओ नीया जहिट्टगाओ पुरा परपरया। पुरिसेहि कोसवि तहाऽऽगयं परपरयत्ति ॥२॥’ पारम्पर्यं  
दृष्टान्तश्चायम्-अत्थिह पच्छाविसए मुणिब निञ्जिअआससपरविमए। कोसंवी वरनयरी न अरीण जत्थ विणिवेत्तो ॥ १ ॥  
अविय-तत्थाऽसि जणो चिताउरो य सुकलाकलावदलणमि। अलियपयपणमूओ अलमो य अकज्जकरणमि ॥ २ ॥ पालेड तत्थ  
रज्ज रज्जतो जिणमए मयाणीओ। णीयजणचरियरहिओ हिओ पयाण पयानाहो ॥ ३ ॥ चेडगनरिददुहिया जिणिदपयपूयपूय-

प्रस्तावना-  
शेषं

॥ १६ ॥

श्रीदे०  
वैत्यधी-  
धर्म० संधा  
चारविधौ  
॥ १७ ॥

करकमला । गुहसीलालंकारा मियावई पिययमा तस्त ॥४॥ जीते मुकुमालाओ बाहुलयाओ सपा न बुद्धीओ । अलियाणुगया  
वक्का य कुंतला न थ समुल्लावा ॥५॥ वरकुंडलाणि सवणासत्ताणि य न उण पिसुणभणियाणि । सुगुणेसु य बहुमाणो न रूवलाव-  
न्नजाई ॥६॥ अह अन्नया नरिंदो सव्वावसरंमि संनिविट्ठो सो । नियरिद्धीए गवं वदमाणो पुच्छई दूअं ॥७॥ भो देवाणुप्यिअ !  
नरवईण अन्नेसि अत्थि जं तं किं । विज्जइ न मज्झ रज्जे ? अह दूओ भणइ देव ! तुहं ॥८॥ वरसामिमंतिमुहिकोसरद्धुग्गवलरूवसत्तंगे ।  
रज्जे न किंचि ऊणं णं मुत्तूण चित्तमहं ॥९॥ तो मणसा देवाणं चाग्गाए पत्थिवाण सिज्जंति । अत्थेण ईसराणं दुस्सज्झा-  
डं पि कज्जाडं ॥१०॥ आणत्ता चित्तयरा तेऽवि तयं विभज्जिउं महं लग्गा । चित्तेउं अत्थि इओ चित्तयरसुओ वहिं सोमो ॥११॥  
तस्संतेउरपासे दिन्नो भागो अहऽन्नया तेण । जालंतरेण दिट्ठो मियावईए पयंगुट्ठो ॥१२॥ तो तेण निउणमइणा तीए रूवं निरत्तिअं  
रुइरं । नयणुम्मीलणऽवसरे पडिओ य ऊरुम्मि मसिबिंदू ॥ १३ ॥ अवणिय तं पुण जावायरेण तं करइ ता पुणो पडिओ । इय  
तइयंमिवि चारे पडिअं दट्ठुं स चित्तेड ॥१४॥ होअवमित्थ नूणं अणेण ता उवरमो इहं सेओ । निम्माया चित्तसदत्ति अह निरो  
तेहिं विन्नविओ ॥१५॥ तो निरई चित्तसहं निरूवमाणो कमेण अइनिउणं । मसिबिंदुदूमियं तं पिच्छेइ मियावईरूवं ॥ १६ ॥  
तं दट्ठुण नरिंदो रोसवसायं विरच्छि विच्छेहो । भालयलघडियमिउडी चित्तिउमेवं समादत्तो ॥१७॥ एएण पात्रमइणा मम पत्ती धरि-  
सियत्ति निम्भंतं । कहमन्नहा नियंसणमज्झगयंपि हु मुणिअ मसं ? ॥१८॥ इयरम्मिवि परदारं अन्नायपरं परं निगिण्हामो । किं पुण  
सए कलत्ते ? एवं नाउंपि हु खमामो ॥१९॥ तो वज्झो आणत्तो चित्तकरा वितिं भो इमो हणिउं । उच्चिओ लद्धवरो यहू कहं निवुत्ते  
मणंति इमे ॥ २० ॥ अत्थि पुरे म्मागेये संकेयनिकेयणे वरकलाणं । संनिहियपाडिहारियमुरपिअं जवखणिहमीमाणे ॥ २१ ॥

परंपराया  
मृगावती-  
कथा

॥ १७ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ १८ ॥

पइवरिसं चित्तेउं कीरइ से उच्छवो हणेइ तेओ । चित्तयरं कुणइ पुणो अचित्तिओ सो पुरं मारिं ॥२२॥ पाणभया चित्तयरा पला-  
यमाणा तओ नरिंदेण । पुररक्खाइनिमित्तं ते विहिया एगसंकलिया ॥ २३ ॥ यतः—त्यजेदेकं कुलस्यार्थं, ग्रामस्यार्थं कुलं त्यजेद् ।  
त्यजेद् ग्रामं जनस्यार्थं, (ग्रामं जनपदस्यार्थं) आत्मार्थं पृथिवीं त्यजेत् ॥२४॥ अह तेसि नाम पत्तेसु लिहिय छूटेसु मुद्दिए घडए । निहरेइ  
जस्स पत्तं सो चित्तइ तंमि वरिसे तं ॥ २५ ॥ अह एसो देव ! तहिं उवरयपियगे गओ कला गहिउं । एगसुयाए चित्तयरथेरि-  
याए गिहंमि ठिओ ॥ २६ ॥ तीएवि निबिसेसो दिट्ठो ससुआ इमो ससुयमित्तो । जाओ अ तंमि वरिसे थेरीसुयवारओ तो सा  
॥२७॥ रोयइ बहुप्पयारं अम्मो ! किं रुयसि? णेण इअ पुट्ठा । भणइ मम वच्छ! पुत्तो एगो अंधलगलट्टिसमो ॥२८॥ सो संपयं  
जमगिहं वच्चिस्सइ चित्तिऊण जक्खगिहं । माऽणेणुत्ता सदयं मा रुअसु भलिस्समिह सबं ॥ २९ ॥ किं मे तुमं न पुत्तो अप्पाणं  
नेमि वच्छ ! जं वसणे? । इअ भणिरीइवि तीए चित्तमिमो आयरइ जक्खे ॥३०॥ एकोच्चिय वरविणओ अमूलमंतं इहं वसी-  
करणं । किं पुण तवम्सहाओ? ता जइअवं मए एत्था ॥३१॥ इअ चित्तिय छट्ठतवं काउं तह वंभचेरमाइ वयं । ण्हाउं मुई नियं-  
सइ सियसदमाहयवमणजुअलं ॥ ३२ ॥ येनाभीष्टदेवतार्चायामन्यैरप्यपवित्रवस्त्रपरिभोगः प्रत्यपेधि, तथाहि—कटिस्पृष्टं च यद्वस्त्रं,  
पुरीषं येन कारितम् । मूत्रं च मैथुनं चापि, तद् वस्त्रं परिवर्जयेत् ॥३३॥ चंदणचच्चियपाणी मुहकोसं चारु काउमट्टपुडं । कलसेहिं नवेहिं  
तर्यं ण्हवित्तु पुप्फेहिं पइत्ता ॥३४॥ काउ नवं कुच्चगमल्लगाइयं अमुई वज्जलेवाई । चइउं पवरेहिं वण्णगेहिं तो चित्तए जक्खं ॥३५॥  
अह चित्तसमत्तीए परेण विणएण एस पयवडिओ । सप्पणयं सबहुमाणं जक्खं विन्नवइ एवं तु ॥३६॥ देव ! सुरप्पिय ! को तुज्झ  
चित्तकम्मं विणिम्मिउं तरइ । अचंतं निउणोऽविहु? किं पुण अम्हारिमोऽसुद्धो? ॥३७॥ तो इह मूदत्तणओ न मुद्दुत्तं जं वडिअं मए

परंपरायां  
मृगावती-  
कथा

॥ १८ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ १९ ॥

किंपि । तं स्वमियवं सामिय ! जओ पणयवच्छला गरुआ ॥३८॥ जकखोऽह भणइ तुट्टो तुह वरविणएण भो ! वरेहि वरं । इमिणुत्तं  
मा मारसु जणंति एमो चिअ वरो मे ॥३९॥ जकखेणुत्तं अविणामओ तुहं मिद्धमेव इणमन्नं । वरसु वरं ते अहियं तुट्टो परकअनिरयस्स  
॥४०॥ भणितं च-“ते तावत्कृतिनः परार्थघटकाः स्वार्थस्य नात्रो न ये, सामान्यास्तु परार्थमुग्रतधियः स्वार्थाविरोधेन  
ये । तेऽस्मी मानुपराक्षसाः परकृतिर्वैर्हन्यते स्वार्थतो, ये निघ्नंति निरर्थकं परकृतं ते के न जानीमहे ? ॥४१॥” ता जंपइ  
दुपयाईण देसंपि निएमि तदणुरूवं से । रूवं करिअमिमिणा वुत्ते एवंति भणइ मुरो ॥४२॥ जओ-जो जन्तिअस्स अत्थस्स भायणं  
तस्स तत्तिअं होइ । वुट्टेऽवि दोणमेहे न डुंगरे पाणिअं ठाइ ॥४३॥ दरियक्खएण इहलोयसिद्धिमिय सोउ भत्तिजुत्तस्स । ता  
जययहऽणंतमुहे जिणवयणे मुविहिभत्तीए ॥४४॥ इय लद्धवरो मामिय ! मफारं पाविऊण तत्थेसो । इत्थागओ इहऽत्थे इमं परिकखउ  
पसिय देवो ॥४५॥ तो खुजदासिमुहदंमणेण विन्नामिओऽवि कोउमा । नरवइणा निविसओ आणचो छिन्नसंडासो ॥४६॥ यतः पथ्यते-  
नाकारणरूपां संख्या, संख्याताः कारणकुधः । कारणेऽपि न कुप्यंति, ये ते जगति पंचपाः ॥४७॥” तो गंतुं सागेए उवट्टिओ  
मुरापियं पुणो तेण । पढमुववासे वुत्तो वामकरेणपि तह लिहेमि ॥४८॥ जओ-गच्छउ दूरं आरुहउ गिरिवरं विसउ विसमचिव-  
रेसु । आराहउ अमराई लिहिआ अहिअं नहु त्हावि ॥४९॥ तो मो पुण लद्धवरो चित्तेइ विडंविओ निस्वराहो । निक्कारण-  
रिउणाऽहं पावेण सयाणिएण कहं ? ॥ ५० ॥ ता अस्म तण्कलं दरिसिहंति चित्तिय मियावईरूवं । लिहिऊण चित्तफलए पज्जोय-  
निवस्स दंसेइ ॥५१॥ ददट्टु तमाह निमो किं अमरीव रई व किन्नरी व इमा ? । स भणइ न इमा न इमा न इमा पट्टु ! किंतिमा-  
मणुई ॥५२॥ चित्ते कला वरा ते म निवेणुत्तोत्ति भणइ पट्टु ! का मे ? । मुकला रूवं दिट्ठंपि तारिसं अलिहमाणस्मा ॥५३॥ निउणो पयावई

परंपरायां  
मृगावती-  
कथा

॥ १९ ॥



सो निरुयमरूवा अदिट्टपडिछंदा । पहु ! जेण सयाणियरायअग्गमहिस्सी इमा लिहिया ॥५४॥ तं अइसअमुंदेरं रूववइं साउ इत्थ-  
लोलो सो । पभहुट्टकुलऽभिमाणो गलिअनओ मुक्कमज्जाओ ॥५५॥ चित्तरं सक्कारिय विसज्जितं सिक्खित्तं च लहु दूअं । पव्वए  
कोसंबीइ तत्थ स भणई सयाणीयं ॥५६॥ आइसई पज्जोओ वरभज्जा जा मिआवई तुज्झ । पेसिज्जमज्ज तं हुज्ज जुज्झकज्ज व लहु सज्जो  
॥५७॥ पभणइ सयाणियो रे दूयाहम ! तुह पहु विमुक्कनओ । जइ जंपई अजुत्तं ता किं वुत्तं तुहवि जुत्तं ॥५८॥ किं वा—“अप्रवृत्ति-  
गतं भूपं, छंदोवृत्त्या स्तुवंति ये । लक्ष्मीहृत्तिकृतोपायाः, शत्रवस्ते न मंत्रिणः” ॥५९॥ अपिच—किं भिच्चो सोऽवि न  
जो नियपहुणो उप्पहं पवन्नस्स । नियवुद्धिघणरसेणं अवजसंपंसुं उवसमेइ ॥६०॥ किं बहुणा ? एवं जंपिरस्स तुह इय जु-  
ज्झइ विणासो । काउं जं च न कीरइ तं नयभेउत्ति कलिऊण ॥६१॥ इय निब्भत्थिय दूओ निद्वमणे गलगहेण निच्छूढो । तह कहइ गंतु  
सपहुस्स तस्स जह वइट्ठिओ कोहो ॥६२॥ तो सेणाए हयगयरहजोहसहस्पलक्खकोडीए । चलिओ तह चउदसमउडवद्वराईहिं तं पऽ  
सो ॥६३॥ अणवरयपयाणेहिं इंतं सोऊण तं जममरित्थं । अप्पवलो कालगओ सयाणियो अविइअइमारो ॥६४॥ चित्तइ मियावई  
मे धिरत्थु रूवं जओ मओ दइओ । उदयणसुओऽवि वालोत्ति पाणसंसयतुलारूढो ॥६५॥ एयस्स उ अणुसरणे इत्थ कलंको  
परत्थ दुक्खं च । ता छउमेणवि ईणिंह कालक्खेवो ममं जुत्तो ॥ ६६ ॥ तो पढियं तो गुणियं तो मुणियं तो अ वेइओ  
अप्पा । आवडियपिल्लियाभंतिओऽवि य जइ न कुणइ अकज्जं ॥ ६७ ॥ जओ—वरिसित्ता अमियरसं सक्कारिय  
वत्थमाइणा धरित्तं । तलदोरेण सकज्जं मइमं कुज्जा कुलाल्लुव ॥६८॥ इय चित्तिय दूएणं तीए खंधासो इमो भणियो ।  
सरणं तं चेव सयाणिए गए मे महाराया ॥६९॥ नवरमसंपत्तवलो पुत्तो मुक्को मए विणस्सिहिई । पंचंतनरवईहिं तो कह रजं इमो

धीरे  
 शिव-  
 मन्त्रं संवा  
 नारविषो  
 ॥ २१ ॥

काही ? ॥७०॥ अह भणह रक्खगे मद् सुअस्म को अप्पिअं खमो काउं? सच्चं चिय सामि! इमं नवरं देवीइ भणियमिणं ॥७०॥  
 दूरथो किं करिही सामी सीमनि विनासिए कजे । जह उस्सिसगसप्पे अखमो जोअणसए विजो ॥७२॥ भणइ निवो किं ततो  
 भणिअं देवीइ जं तओ काहं ? । म भणइ कोसंविपुरं ममारवावेह पहु पसिउं ॥७३॥ कीरउ किमिहं निवुत्ते स भणइ उजेणीइड्डगा  
 बलिया । ताहिं विसालो सालो कीरउ मन्नइ निवोऽवि इमं ॥७४॥ जओ-पुरिसो मयणविहुरिओ पत्थिज्जंतो मणप्पिय-  
 जणेण । किं किं न देइ किं किं करेड नहु लहु असज्जंप्पि? ॥७५॥ तो काउ उभवपुरंतरंमि चउदस निवा सपरिवारा । उजेणी-  
 इड्डगा तेण आणिया नरपरंपरया ॥७६॥ ताहिं कओ पागारो कोसंचीए हिमालयागारो । पुण भणिओ तीइ स किं इमीइ भन्नाइ  
 रहियाए ? ॥७७॥ धणधन्नवत्थमाईहिं तक्खणं तेण पूरिया ती सा । किं किं न कुणइ जीवो आसापासेण वावदो ? ॥७८॥ जओ-  
 नचंति य गायंति य चवंति दीणं कुणंति चारुणि । आसाविवसा जीवा विडंबणं किं न पावंति ? ॥७९॥ बृहस्पाणी  
 सुहअगणा पावलया दोसआयरा जा सा । सग्गापवग्गनयरप्पवेसलोहग्गला निविडा ॥८०॥ आसाइ जो पट्टत्तं  
 देइ स दासत्तमप्पणोऽवस्सं । इय सव्वणत्थमूला परिहरियघा सया आसा ॥८१॥ रोहगसज्झा जाया पुरित्ति सा धीमई  
 तओ नाउं । विप्पडिवन्ना दाराइं दाउमुवरिं भडा ठवेआ ॥८२॥ जओ-उशना वेद यच्छाअं, यच वेद बृहस्पतिः । स्वभावादेव  
 तत्सर्वं, स्त्रीणां बुद्धौ प्रतिष्ठितम् ॥८३॥ पओओ उ विलक्खो वेट्ठिता मणओ ठिओ नयरिं । चित्तइ वेरग्गया मिगावई अन्नया एवं  
 ॥८४॥ धन्ना गामागरनगरखेउकच्चडमडम्बदोणमुहा । विहरेइ भविपउमे वीहिंते जत्थ वीरवी ॥८५॥ ते धन्ना कयउन्ना सुकयत्था  
 तिजयपूयणिजा य । दुइवासं मुत्तु गिहं ने बालत्तेऽवि गहियपया ॥८६॥ वेरग्गतिकक्खगेहिं छिदिउं मोहपासए जे उ । गिण्हंति

परंपरायां  
 मृगावती-  
 कथा

महामत्ता अदिद्विपियसंगमा दिक्खं॥८७॥ अणवरयमरणरणयभीसणं पिच्छिऊण संसारं । मुक्कं विसं व विसमं विसयसुहं जेहि ताण  
नमो ॥८८॥ जइ कहमवि मह पुण्णोदएण इह इज्ज सिरिमहावीरो । गिण्हामि मुक्खपचक्खसक्खिणि ता अह दिक्खं ॥८९॥ को  
सो वरिसो मासो पक्खो दिवसो तिही सुनक्खत्तं । पहरो य मुहुत्तो हुज्ज जंमि दिक्खं गहिस्सामि ? ॥९०॥ एवं सुस्सावयजणउ-  
चियमणोहरमणोरहरहेसु । आरुहमाणा सा गमइ धम्मज्झाणेण निसिसेसं ॥९१॥ आवइगओवि न चएइ जो रइं लहइ अयलमुदयं  
सो । अचिरेणंति भणंतोव उग्गओ अह रवी ज्ञत्ति ॥९२॥ अह मारि१ वेर२ विग्गह३ कुबुद्धि४ दुब्बिक्ख५ रोग६ ईईओ७ ।  
उवमामंतो भयवं मपायजोअणसयंतरए ॥९२॥ चंदुवयारुज्जाणे पत्तो देहाणुमग्गलग्गेण । भामंडलेण रविणा अणुगम्मंतोव दिण-  
उदए ॥९४॥ नाऊण समोसरियं जिणं बहिं तो मियावई गंतुं । वंदिय जिणं निविट्ठा पज्जोयनिवो उ इय धुणइ ॥ ९५ ॥ जय-  
श्रीसर्वोसद्दार्थं !, सिद्धार्थनृपनंदन ! । सुमेरुधीरगंभीर !, महावीरजिनेश्वर ! ॥ ९६ ॥ योऽप्रमेयप्रमाणोऽपि, सप्तहस्तप्रमो मतः ।  
पूर्णेन्दुवर्ण्यवर्णोऽपि, स्वर्णवर्णः सुवर्णकः । ९७ ॥ मदृशं कौशिके शक्रे, मर्षे च क्रमसंस्पृशि । पीयूषवृष्टिसृष्ट्या यं, दृष्ट्या दिष्ट्या  
विदुर्बुधाः ॥९८॥ विष्टपत्रितयोत्संगरंगदुत्तुंगकीर्तिना । सनाथं येन नाथेन, विश्वं विश्वंभरातलम् ॥९९॥ यस्यै चक्रे नमः सेवाहे-  
वाकोत्सुकमानसैः । वीराय गतवैराय, मर्यामित्यामुरेश्वरैः ॥१००॥ यन्माद्विपादयो दोषाः, क्षिप्रं क्षीणाः क्षमाखनेः । दोषापू-  
मयूखेभ्य, इह हर्यक्षलक्षणात् ॥ १०१ ॥ यदेहद्युतिमन्दोहे, संदेहितवपुर्दधौ । रविः खद्योतपोतनुत्याडंबरविडंबनाम् ॥ १०२ ॥  
भविनां यत्र चित्तस्थे, स्युर्धीश्रीवृद्धिसिद्धयः । तं वर्धमानमानीति, त्वां वर्धमानभावनः ॥ १०३ ॥ इति यस्तव स्तवं पठति वीर-  
जिनचंद्र ! जातरोमांचः । सोऽर्षत्यपवर्गमखर्वगर्वमर्वारिवर्गजयी ॥१०४॥” तो मिलियाए सहाए जोयणपरिमाणभूनिविट्ठाए ।

श्रीदे० च.  
त्यश्रोधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ २३ ॥

भूरिनरतिरियसुरकोडिसंकडाए ममहयाए ॥ १०५ ॥ मवसभामासंवाइर्णाइ चाणीइ जोअणगमाए । कम्मस्खयजाइसओ करइ  
पहू देमणं एवं ॥ १०६ ॥ “फरिसरसगंधरुवरवलालसा सालसा उ विरईए । पावंति जिया वहबंधछेयमरणाइं वसणाइं ॥ १०७ ॥  
इह एवं पंचपयारविसयमृहं कंखिरो मया जीवो । अलहंतो विरइसुहं पुणो पुणो भमइ संसारे ॥ १०८ ॥” निवेयकारिणिमिणं मव-  
णामयसारणिं अमयसरणिं । पहू करइ देमणं जा ता तत्येगो नरो पत्तो ॥ १०९ ॥ सजीयकयकोदंडो संधियकण्डो पयंडभुयदंडो ।  
आवेमवसविमपंतसेयजलसित्तमधंगो ॥ ११० ॥ मणपुच्छिरो नयमिरो भणिओ पड्डुणा म पुच्छ भो वयसा । जा सत्ति तओ तेणं  
पुट्टे मा सत्ति कहइ पहू ॥ १११ ॥ समयकोउगकलिओ तत्थ उट्टित्तु गोयमो भयवं । पणमित्तु पहू पुच्छइ भयकोउगकारि पहू  
किमिणं ? ॥ ११२ ॥ जओ-एसो उदंडचंडकोदंडमंडियभुओ भयं जणइ । वेरगगओ विणएण पुच्छिरो पुण महच्छरियं ॥ ११३ ॥  
कुंदंदुदंतपंतीफुरतकरनियरहरियतिमिरभरो । अह भणइ भुवणनाहो गोयम ! भवविलसियमिणं तु ॥ ११४ ॥ तं केरिसंति गोयमपुट्टो  
भयवं भणइ सुण वच्छ ! । विसयासत्ता सत्ता विडंवंणं इह लहंति जहा ॥ ११५ ॥ चंपाइणंगसेणो सुण्णारो दाउ पंच कणगमए ।  
परिणइ सुखुवकन्नं जा जाया ताण पंचसया ॥ ११६ ॥ कारइ तिलगचउट्टसआभरणं देइ न मइ परिहेउं । इमाइ गिहं न मुअइ  
परस्स न य अल्लिउं देइ ॥ ११७ ॥ मित्तेण कयाइ चला नीओ सो पगरणे इओ ताओ । लंकियविभूसियाओ दप्पणहत्था उ वि-  
हरंति ॥ ११८ ॥ तेणागएण एगा ता पहया जा मया अदियराओ । इअ अम्हाणवि काहिनित्ति चित्तिउं जमगममगं तं ॥ ११९ ॥  
एगुणपंचदप्पणसएहिं मारित्तु जायअणुतावा । का पड्मारीण गई अम्हं ? होहीह जणनिंदा ॥ १२० ॥ दाराइं दाउ जलणं जालित्तु  
अकामनिज्जराएऽवि । माणुकोसा मरिउं जाया चोरा गिग्गिम्मिके ॥ १२१ ॥ जा पडममारिया मा तिरिओ होऊण दिपसुओ जाओ ।

परंपरायां  
मृगावती-  
कथा

॥ २३ ॥

श्रीदे० चै-  
त्यथीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ २४ ॥

सुण्णारो पुण तिरिएसु भमिय तन्भइणि संजाया ॥ १२२ ॥ सा सह रोयइ थका उ गुज्जलगे कयाइ माउकरं । तह कीलावंतो  
सो नाओ पियरेहिं निच्छुओ ॥ १२३ ॥ तमह गओ चोरगिरिं भमिरा बाला उ सइरिणी सा उ । कंमि ठिया गामे सो उ  
पिच्छिओ तेहि चोरेहिं ॥ १२४ ॥ सा उ सपच्छि नीआ कयाइ तीए विइज्जिया णीया । तं ह्णिउं नियइ इमा छिहे चोरा गया धाडिं  
॥ १२५ ॥ दीसइ किमित्थ पिच्छत्ति भणिय सा पिच्छिरी तहिं मुद्धा । खित्ता कूवे तीए चोराणं पुच्छिराण पुणो ॥ १२६ ॥ कहिय-  
मिमं कीस न अप्पणो पियं सारवेह अह तेहिं । नायं गोयम ! एवं इमीइ सा मारियाऽवरई ॥ १२७ ॥ तं दुद्धुचिच्चिअं ददु-  
मेस सा मे मसा ण पावित्तिं । संसइओ सवन्नु मं जणाउ णाउं इहं पत्तो ॥ १२८ ॥ मणपुच्छिरो निसिद्धो तं मे जा सित्ति मउलिअं  
चेव । लज्जाए पुच्छंतो सा सत्ति गिराइ जाणविओ ॥ १२९ ॥ भवविलमियमिय गोयम ! जत्थेवं विसयमोहिया जीया । विरइसुहम-  
पावंता पावंति विडंबणं थोरं ॥ १३० ॥ पहु देसणमिय सोउं जाया सवा महा पयणुराया । मौंउ नरो पवइओ पहुपासे तिबसंवेगो  
॥ १३१ ॥ सुयदिट्ठपुट्टुउग्घडसुमारिया बहुअभवमरणदुहया । मा भो विमया भुत्ता वरि विसमुग्गंपि विवरीयं ॥ १३२ ॥ इयं तेण  
वोहिया ते सेसावि इगुणपणसया तेणा । पवइया अह नमिउं मियावई विन्नवइ नाहं ॥ १३३ ॥ पज्जोअमणुन्नविउं पडिंविज्जिस्सामि  
सामि ! पवज्जं । मणइ अवंतीवइमवि तेऽणुन्नाया गहेमि वयं ॥ १३४ ॥ सोऽवि परिसाइ तीए लज्जाए वारिउं तमतरंतो । अणु-  
मन्नइ सावि तओ सुओत्ति अप्पइ उदयणं से ॥ १३५ ॥ अंगारवइप्पमुहाओ अट्ट पज्जोअअग्गमहिसीओ । सहिआ मियावईए  
तइआ दिक्खं पवज्जिसु ॥ १३६ ॥ अणुसासिऊण ताओ चंदणवालाइ अप्पिऊण तओ । भवियजणमणाणंदो सामी अन्नत्थ  
विहरित्था ॥ १३७ ॥ उज्जेणीनाहोऽविहु पहुप्पभावाउ उवसमियवेरो । कोसंवीइ उदयणं ठविय निवं नियपुरीइ गओ ॥ १३८ ॥ एयं

परंपरायां  
मृगावती-  
कथा

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ २५ ॥

पसंगओच्चिय पयंपियं पुण पओयणं अत्थ । पुरिमपरंपरणं सूरिपरंपरगनाएणं ॥१३९॥ तथाहि—जह नरपरंपराए आणीया इट्टगा  
अवंतीओ । कोसंबीइ तहेव य सिरिवीरजिणाउ इह तित्थे ॥१४०॥ सिरिसुहुमजंबुपभवा सिज्जंभव जसयभद संभूओ । भदवाहु  
थुलभदो अजमहागिरि सुहत्थी य ॥१४१॥ गुणसुंदर कालियगुरू खंदिल रेवइयमित्त धम्मो अ । भदगुत्तो सिरिगुत्तो वइरो  
रक्खिवययदुब्बलिओ ॥ १४२ ॥ तह वयर नागहत्थि रेवइमित्तो य सिंह नागज्जुणो । भुयदिच्चु कालगो सच्चमित्त हारिलय  
जिणभदो ॥१४४॥ तहुमासाई पुममित्त संभूओ माढरजसंभूओ । धम्मरिसी जिट्ठंगो फगुमित्तो धम्मघोसोत्ति ॥१४४॥ गणह-  
रकेवल्लिचउदसदसनधपुष्पाइजुगपढाणाणं । इय सूरिपरंपरण आगयं जाव अम्ह गुरू ॥ १४५ ॥ सुत्तेणं अत्थेणं करणविहीए य  
इणमणुट्ठाणं । सवंपिह आवस्सयच्चुण्णीए भणियमेयंति ॥१४६॥ तथाहि—“इयं पसंगेण वन्नियं, अत्थ इट्टगपरंपरण अहिगारो,  
एस दव्वपरंपरओ, एएण भावपरंपरओ साहिज्जइ, जहा वद्धमाणसाभिणा सुहंमस्स, जंबुनाम जाव अम्ह वायणायरिया, आणुपु-  
षीए—कमपरिवाडीए आगयं सुतओ अत्थओ करणओ य”त्ति । उपनयशेपस्त्वयमत्र—चउगोयरपायारो चउप्पयारो हु सिरिसमण-  
संघो । धणधन्नयत्थमाई वरदंसणनाणचरणाई ॥१४७॥ भविया मियावइसमा निव्वुइकारी विमुद्धचरणनिवो । सोहग्गलवणिमाई  
मुल्लगुणा उत्तरगुणा य ॥१४६॥ चित्तपरो कलिकालो मोहनरिंदो य चंदपज्जोओ । चउदस निवा उ नवनोकसायमिच्छत्तचउ-  
फसाया ॥१४९॥ जह ठाउ वप्पमज्जे मियावई चंडमोहरायभया । पालित्ता नियसीलं तह संवगया कुणह धम्मं ॥१५०॥ प्रद्यो-  
तानुमतेन योजनक्षतं प्रागुज्जयिन्या नरैः, कौश्याभ्यां करतः करेण हि समानीता यथैवेष्टकाः । श्रीवीरात्तु युगप्रधानगुरुभिः स-  
त्रार्थतः कार्यतस्तीर्थेऽस्मिन् जिनवंदनादि तदिवायातं श्रुतान्तर्गतम् ॥१५१॥ इत्याचार्यपारंपर्ये उज्जयिनीपुरुषेष्टकादृष्टांतः ॥

मृगावती  
दृष्टान्तो-  
पनयः

॥ २५ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २६ ॥

व्याख्यातं श्रोतृजनाद्यवस्थितिहेतुतया पीठिकाकल्पं मंगलामिधेयादि । इह च प्रतिदिनानुष्ठेयं चैत्यवंदनादिकं संघस्याचारविधिं  
वक्ष्यामीत्युक्तं, तत्र यावत् 'साहूण गिहत्थाण य मवाणुट्ठाणमूलमकूलायं । चिइवंदणमेव जओ ता तम्मि त्रियारणा जुचे॥१॥' ति  
वचनात् 'मामाइयठिएहिवि चउवीसं थवेयव्वे' त्याचइयकचूर्णिवचनाच्च प्रथमं चैत्यवंदनाविधिं विमणिपुर्माप्यकारः शास्त्रमुखा-  
परपर्यायं तद्द्वारगाथाचतुष्टयमाह—

दहतिग १ अहिगमपणगं २ दुदिसिरे तिहृग्गइध तिहा उ वंदणया ५ ।

पणिवाय ६ नमुक्कारा ७ वण्णा सोलस थ मीआला ८ ॥ २ ॥

इगसीइसयं तु पया सगनउई संपया उ पण वंडा ।

वार अहिगारा चउवंदणिल्ल सरणिल्ल चउह जिणा ॥ ३ ॥

चउरो थुइ १६ निमित्तइ १७ धारस हेऊ अ १८ मोल आगारा १९

गुणवीस दोस २० उस्सग्गमाण २१ थुत्तं च २२ सगवेला २३ ॥४॥

दसआसायणचाओ एवं चिइवंदणाइठाणाणि । चउवीसदुवारेहिं दुसहस्सा हुंति चउसयरा ॥५॥

इह सामान्येव साधुथावकादिसवहुमानजिनभवनप्रवेशादिसमयविधीयमाननैपेधिक्यादिप्रणिधानपर्यवसानसकलचैत्यवंदना-  
विधानप्रतिपादनप्रधानं त्रिंशत्स्थानकनिबद्धदशत्रिकाख्यं प्रथमद्वारं 'दहतिग' ति-दशेति दश संख्यानि त्रिकाणि-नैपेधिकी-  
त्रयादिरूपाणि यत्र तद् दशत्रिकं, वक्ष्यति च 'तिभि निसीदी' इत्यादि, अत्र च सर्वत्र विभक्तिलोपादिकं प्राकृतलक्षणवशादवसा-

चैत्यवन्द-  
नाद्वाराणि

॥ २६ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ २७ ॥

तव्यं, पुनः ऋद्धिप्राप्तानृद्धिप्राप्तश्राद्धानधिकृत्य विशेषतः चैत्यादिप्रवेशविध्यभिधायकं द्वितीयमभिगमद्वारं—‘अहिगमपणगं’ति  
‘अभिगमानां—चैत्यादिप्रवेशे विधिविशेषाणां पंचकमभिगमपंचकं, भणिष्यति च—‘मच्चित्तद्वयज्जणे’त्यादि२, प्रविश्य जिनगृहे  
विहितयथोचितनैपेक्ष्यादिकारणैर्नरनारीगणैर्भावपूजादिविधित्सया स्वस्वोचिता दिग् ज्ञेयेति तृतीयं दिग्द्वारं ‘दुदिसि’ति  
द्वे—वामनदक्षिणलक्षणे दिशौ—काष्ठे क्रमतः स्त्रीपुंसयोर्योग्यतया वंदनामधिकृत्य समाहृते वर्णिते वा यत्र तद् द्विदिग्, अभिधास्यति  
‘वंदंति जिणे दाहिणे’त्यादि३, अत्र वामेतरदिकस्यैश्च तैर्जिनात् कियद्दूरे वंदना विधेया इति दिगनंतरं चतुर्थमवग्रहद्वारं ‘तिहु-  
गह’त्ति, त्रिधा—जघन्यमध्यमोत्कृष्टभेदात् त्रिप्रकारोऽवग्रहो—मूलविंशंदनास्थानाम्यंतरालभूभागरूपः, गदिष्यति च—‘नवकर-  
जहन्ने’त्यादि४, उक्तरूपावग्रहस्थंश्च कियद्भेदा वंदना कार्येति तद्भेदविधये चैत्यवंदनाद्वारं ‘तिहा उ वंदणय’त्ति, त्रिधा—जघन्यादि-  
भेदात् त्रिभेदा, केत्याह—वंदनेति, ‘भामा सत्यभामे’ति न्यायाचैत्यवंदना पूर्वोत्कृष्टशब्दार्था, प्रतिपादयिष्यति च—‘नवकारेण जह-  
न्ने’त्यादि, तुशब्दो विशेषणार्थः, तेन ग्रंथांतरप्रसिद्धजघन्यादिभेदान्नवधापि, एवमवग्रहोऽपि शास्त्रांतरोक्तो द्वादशधाऽवसातव्यः,  
एतच्चोपरिष्ठादर्शयिष्यते५, चैत्यवंदना च प्रायः प्रणिपातपूर्वेति तत्स्वरूपनिरूपकं षष्ठं प्रणिपातद्वारं ‘पणिवाय’त्ति, प्रणिपातः—  
प्रणामः, न चोत्कृष्टतः पंचांगो ज्ञातव्यो, नाष्टांगः, तस्य प्रवचनेऽप्रसिद्धत्वात्, अध्येष्यति च ‘पणिवाओ पंचंगो’इत्यादि६, कृत-  
प्रणिपातैश्च प्रथमतो नमस्कारा भणनीयाः, अतः सप्तमं नमस्कारद्वारं ‘नमुकार’त्ति, नमस्कारा—जिनगुणोत्कीर्तनपरा वचनपद्धतयः,  
मंगलवृत्तानीतियावत्, ते चात्रोत्कृष्टतः पुरुषानाश्रित्याष्टोत्तरशतं ज्ञेयं, निरूपयिष्यति च ‘सुमहत्थ नमुकारे’त्यादि, नमस्का-  
रमथ वर्णात्मका इति वर्णराख्याद्वारमष्टमं ‘वण्णे’त्यादि, यद्वा सर्वमप्यनुष्ठानमहीनातिरिक्ताक्षं कर्णीयं, त्रिपरीते दीपसंभवान्,

चैत्यवन्द-  
नाद्वाराणि

॥ २७ ॥



श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ २८ ॥

तथा चागमः—“अहिए कुणालकइणो हीणे विजाहराइदिट्टंता । बालाउराण भोयणभेसज्जविवज्जओ उभए ॥१॥” अहीनाद्यक्षरत्वं च वर्णसंख्यापरिज्ञाने सति भवतीत्यष्टमं वर्णसंख्याद्वारं, ‘वण्णा सोलसय सीयाल’त्ति, वर्णाः—अक्षराणि, ते च सामान्यतोऽत्र चैत्यवंदनाधिकारे नमस्कारक्षमाश्रमणादिषु नवसु स्थानेष्वपुनरुक्ता ध्रुवभणनीयाश्च षोडश शतानि सप्तचत्वारिंशदधिकानि ज्ञातव्यानि, तथाहि—अडसट्टि६८ अट्टवीसा२८ नवनउअसयं च १९९ दुसय सगनउया २९७ । दोगुणतीस २२९ दुसट्टा २६० दुसोल २१६ अडनउयसय १९८ दुवन्नमयं १५२ ॥१॥ इय नत्रकार१ खमासमण२ इरिय ३ सक्कथयाइदण्डेसु ८ । पणिहाणेसु य ९ अदुरुत्त वण्णा सोलसय सीआला ॥२॥ यदिह नमस्कारादि वर्णपरिसंख्यानं तत्तदादिमूलत्वात् सर्वधर्मस्येति ज्ञापनार्थं, एवं पदादिष्वपि वाच्यं, वर्णेश्च पदानि स्युरिति वर्णद्वारानंतरं नवमं पदद्वारं ‘इगसीइ’ इत्यादि, एकाशीत्यधिकं शतं पदान्यत्रौघतो नमस्कारादिस्थानसप्तके ज्ञातव्यानि, तुर्विशेषणे, विशेषश्चायम्—यद्यपि क्षमाश्रमण जे य अइयासिद्धेत्यादिगतानि अतिरिक्तान्यपि पदान्यत्र संति तथापि पूर्वबहुश्रुतैः संपदादिकं किमपि कारणान्तरमधिकृत्यैतावन्त्येव पदानि स्वस्वभाष्यादिपूक्तानीति तन्मार्गानुगामितया अस्माभिरप्यत्रैतावन्त्येव तान्युक्तानि, नाधिकानीति, तथा चोक्तं लघुभाष्ये—‘नव वत्तीस तितीसा तिचत्त अडवीस सोल वीमपया । मंगलइरियासक्कथयाइसु इगसीइ सयं ॥१॥’ एवमन्यत्रापि न्यूनाधिकत्वे कारणं वाच्यं ९, द्वित्रादिभिश्च पदैः संपदो भवन्तीति दशमं संपदद्वारं—‘सगनउइ संपयाउ’त्ति, सप्तनवतिः संपदः—अर्थविश्रामस्थानानि सांगत्येन पद्यते—परिच्छिद्यतेऽर्थो यागिरिति व्युत्पत्तेः संगतार्थपदपद्धतय इत्यर्थः, ताश्चैवं सप्तसु स्थानेषूच्यन्ते—‘अट्टट्ट नवट्टय अट्टवीस सोलस य वीस वीसामा । मंगलइरियासक्कथयाइदण्डेसु मगनउई ॥१॥’ तुयब्दो नामस्तवादिषु प्रायो विशेषार्थपरिच्छेदाभावेऽपि संगतपदत्वेन ‘पायसमा

चैत्यवन्द-  
नाद्वाराणि

॥ २८ ॥

ऊसासा' इति वचनाच्च सामान्येन संपदश्च दंडादिगा अत एकादशं दंडद्वारं 'पण दंड'त्ति, यथोक्तमुद्रामिरस्खलितं भण्यमानत्वा-  
दंडा इव दंडाः, सरला इत्यर्थः, ते चात्र पंच शक्रस्तगादयः, प्रतिपादयिष्यति च- 'पण दंडा सफ्थये'त्यादि, यदत्र वंदनाया एव  
दंडकाः परिज्ञापिताः, नान्येषां, तदस्या एनात्र मुख्यतया प्रस्तुतत्वादिति, एतमधिकार्यादिषापि वाच्यं ११। दंडेषु चैक्यादिका अर्था-  
धिकाराः संतीति तत्संख्याख्यापकं द्वादशमधिकारद्वारं 'वार अहिगार'त्ति, अधिकारा-भावाहंदाद्यालंबनविशेषस्थानानि, ते च द्वादश  
दंडकपंचके भवंति, अभिधास्यति च- 'दो इग दो दो पंच य' इत्यादि १२। अधिकाराथ अधिकार्याविनाभाविनः आधेयाभावे  
आधारव्यपदेशाभावात्-घृताद्यभावे घृतघटादिव्यपदेशाभाववत्, अतोऽधिकारिण आलंबनापरपर्याया अत्र ज्ञेयाः, ते च द्विधा  
वंदनीयस्मरणीयभेदात्, तत्र प्रथमं सामान्यतः सकलवंदनीयप्रतिपादकं त्रयोदशं वंदनीयद्वारं 'चउपंदणिज्ज'त्ति चत्वारो वक्ष्य-  
माणा जिनादयः अत्र वंदनीयाः-प्रमाणार्चाघर्हाः, निरूपयिष्यति च- 'चउ वंदणिज्ज जिणमुणिसुयसिद्ध'त्ति १३। अधिकारप्रस्तावा-  
देन चतुर्दशं स्मरणीयद्वारं- 'सरणिज्ज'त्ति स्मरणीयाः-शुद्धोपद्रवविद्रवणादिकृते तच्चद्गुणानुचितनादिनोषवृंहणीयाः स्तवनीया  
इतियापत्, 'परा स्मरणीयाः-प्रमादादिना विस्मृतं तत्करणीयं तत्तत्संधादिकार्यं च ज्ञापनीयाः, अथवा सारणीयाः-प्रभावनादौ  
तत्र तत्र हिते कार्ये प्रवर्तनीयाः, ते चात्राधिकारितया सम्यग्दृष्टयो देवाः ज्ञातव्याः, तेषामेव स्मरणाद्यहंत्वात्, अहंदादीनां तु  
वंदनीयत्वेन प्रागुक्तत्वात्, स्मरणादिकर्तृत्वाच्च, मणिष्यति च इह 'सुरा यूसरणिज्ज'त्ति १४। एवं च सामान्येनाधिकारिण,  
उक्ता इति विशेषतस्तदभिधानार्थं पंचदशं जिनद्वारं- 'चउह जिण'त्ति, अथवा जिनोदयोऽत्र वंदनीया इत्युक्तं, जिनाः कतिविधा इति  
गणेशोप्रायकं पंचदशं जिनद्वारं 'चउहजिण'त्ति जिना-दुर्वाररागाद्यांतरवैरिवारजेतारः, ते च चतुर्धा-वक्ष्यमाणनामजिनादिभेदेन

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३० ॥

चतुष्प्रकाराः, वक्ष्यति च-‘चउह जिणा नामे’त्यादि १५ । जिनादयः स्तुत्यादिभिः स्तूयन्ते इति जिनद्वारानन्तरं षोडशं स्तुतिद्वारं  
‘चउरो थुई’त्ति चतस्रः स्तुतयोऽत्र संपूर्णायां चूलिकारूपा देयाः, तत्रैका ‘अरिहंतचेइआण’मिति चैत्यवन्दनादंडककायोत्सर्गानन्तरं,  
तिस्रस्तु ललितविस्तराभिधानाद्यचैत्यवन्दनाविवरणावश्यकचूर्ण्यादिव्याख्यातमर्वदासकलसंघसर्वत्रध्रुवभणनीयाः लोगस्स उ-  
ज्जियगरे? पुक्खरवरदीवइहेर सिद्धाणं बुद्धाणरे मित्याद्यपदाभिधानसर्वजिननामस्तुति? श्रुतस्तुति? सिद्धस्तुति? रूपदंडकत्रयकायो-  
त्सर्गाणां चानन्तरं ‘उस्सग्गे पारियम्मि थुई’ इत्यावश्यकनिर्युक्त्यादिभणितेन प्रति कायोत्सर्गमेकैकस्या देयभावात्, मर्वाश्च चतुःसं-  
ख्याप्रमाणाः, उक्तनीत्या कायोत्सर्गाणां चतुःसंख्यत्वात्, स्तुतयो यथाविज्ञातगुणाद्युत्कीर्तनात्मिकाः तत्तत्कायोत्सर्गानन्तराध्रुव-  
चूलिकारूपाः, अध्रुवत्वं च तेषां कदाचित् कासांचिदानात्, युगपद्वंदनाकर्तृषु मध्ये चैकैकैव भण्यमानत्वाच्च, चूलिकात्वं तु उक्त-  
कायोत्सर्गचतुष्टयपारणार्थं ‘उस्सग्गे पारिए नमो अरिहंताणं’तिरूपस्तुत्यनन्तरमेव भणनात् भाष्यांतरादिषु तथैव व्याख्यातत्वात्  
करणविधौ तथाऽऽयातत्वात्, ‘आगयं आणुपुब्बीए-कमपरिवाडीए सुत्तओ अत्थओ करणओ य’ इत्यावश्यकचूर्णिकारेणापि करण-  
विधेरभ्युपगमात् बहुश्रुतैस्तथैवाचर्यत्वाच्च, वीक्षितव्यमत्र सूक्ष्मेक्षिकया न्यक्षमपि, ताश्चात्र सामान्येन चतस्रः अधिकृततीर्थकृन्? सम-  
स्तार्हत्? प्रवचन? प्रवचनभक्तदेवता? विषया दातव्याः, निरूपयिष्यति च ‘अहिगयजिण षडमधुई’ इत्यादि १६ । कायोत्सर्गानन्तरं  
स्तुतयो दीयन्त इत्युक्तं, अथोत्सर्गा एवात्र किमर्थं क्रियन्त इति तत्फलनिरूपकं सप्तदशं निमित्तद्वारं-‘निमित्तइ’त्ति निमित्तानि-  
प्रयोजनानि फलानि इतियावत् अष्टौ-अष्टसंख्यानि, इदमत्र हृदयं-संपूर्णायां अस्यां क्रियमाणायां पापक्षपणादीन्यष्टौ फलानि  
मवंतीति, प्रतिपादयिष्यति च-‘पाव्वणणन्धमिरियाइ’ इत्यादि, यदत्रैर्यापथिकया अपि फलमुपादर्शितं तदीर्यापथिकीप्रतिक्रमण-

चैत्यवन्द-  
नद्वाराणि

॥ ३० ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संधा-  
चारविधौ  
॥ ३१ ॥

पूर्विकैव परिपूर्णा चैत्यवन्दनेति प्रतिपादनार्थं, एवं तद्धेतुप्रमाणवर्णादीनामपि निरूपणे कारणं वाच्यं १७ । फलाष्टकार्थं कायो-  
त्सर्गाः कार्या इत्यभाणि, तत्र न कारणमंतरेण कार्यप्ररोहसंभावना, बीजेन विनाङ्कुरप्रादुर्भावाभाद्वदिति निमित्तद्वारानंतरमष्टा-  
दशं हेतुद्वारं 'धारह हेऊ य'त्ति हेतवश्च फलसाधनयोग्यानि कारणान्यत्र वक्ष्यंते, यथा- 'तस्म उत्तरीकरणे'त्यादि, चशब्दो निमि-  
त्तहेतून् कश्चित् कथंचन कतिचित् मन्यत इति वाचनांतरप्रदर्शनार्थः, तत्तु अग्रे दर्शयिष्यते १८। इति निमित्तहेतुभिः कृतोऽप्यु-  
त्सर्गो नाकारैर्विना निरतिचारः शक्यः पालयितुमित्याकारद्वारमेकोनविंशतितमं 'सोल आगार'त्ति, षोडश आकाराः-अपवादाः  
कायोत्सर्गकरणे ज्ञातव्याः, वक्ष्यति च 'अन्नत्थयाइ वारसे'त्यादि १९। कृते चोत्सर्गे दोषा वज्या इति विंशतितमं दोषसंख्याद्वारं  
'गुणवीस'त्ति, एकोनविंशतिदोषाः कायोत्सर्गस्थैर्वर्जनीयाः, अमिधास्यति च- 'घोडग लये'त्यादि २०। कियंतं च कालमेवमुत्सर्गः  
कार्य इत्येकविंशं तत्प्रमाणद्वारं 'उस्मग्माणु'त्ति, कायोत्सर्गप्रमाणमथ ज्ञेयं, वक्ष्यति च 'इरिउस्सग्गपमाण'मित्यादि २१। चैत्यव-  
न्दना हि स्तुतिस्तवादिस्वरूपाः, तत्र स्तुतयो वंदनामध्ये दीयमानत्वात् तद्वारं षोडशमुक्तं, स्तवस्तु वंदनापर्यंतभावी 'चेइआइ  
वंदिजंति, तथो पञ्चा संतिनिमित्तं अजियसंतित्थओ परियाट्टिजइ' इत्याद्यद्यकचूर्णि (पारि० नि०) वचनात् तथैव सकलसंधेन  
क्रियमाणतया करणविधौ समायातत्वाच्च, तथाचावश्यकवृत्तावप्युक्तं- 'चेइआइ वंदिजंति, तथो संतिनिमित्तं अजियसंतित्थओ  
कइइजइ' (पारि० नि०) इत्येतो द्वाविंशं स्तवद्वारं 'युत्तं'ति तत्र स्तोत्रं-चतुःश्लोकादिरूपं 'चउसिलोगाइपरेणं थओ भवइ'ति व्य-  
वहारचूर्णिवचनात् तदत्र भणनीयं, वक्ष्यति च- 'गंभीरमहुरमइ'मित्यादि, चशब्दो विशेषकः, तेनात्र यदेकश्लोकादिकं भगवद्-  
गुणोत्कीर्तनपरं चैत्यवन्दनायाः पूर्वं भण्यते तत् मंगलवृत्ताऽपरपर्याया नमस्कारा इत्युच्यंते, यद्वाप्ये-उद्दाममरं वेयालिउव्व पट्टिऊण

चैत्यवन्द-  
नद्वाराणि

॥ ३१ ॥

मुकड्वदाइं । मंगलविचाइं तओ षणिवायथयं पढइ संमं॥१॥ति (२६७अ.) पूर्वभणनीयत्वादेव नमस्काराणां तद्वारं पूर्वं सप्तममुक्तं, यत्तु कायोत्सर्गानंतरं मण्यते ततः स्तुतय इति रूढाः, चैत्यवंदनापर्यंते च स्तोत्रमिति, अयमेव चैतेषां परस्परं विशेषः, अन्यथा भगवत्कीर्तनरूपतया सर्वेषामप्येषामेकस्वरूपापत्ते, भणितं चागमे त्रितयमप्येतत् नमस्कारस्तुतिस्तवा इति, तथा चोत्तराध्ययन-सूत्रं 'थयथुइमंगलेणं भंते ! जीवे किं जणयइ?, थयथुइमंगलेणं नाणदंसणचरित्ताणि चोहिलाभं च जणयइ, नाणदंसणचरित्तसंपन्ने णं जीवे अंतकिरियं कप्पविमाणोववत्तियं आराहणं आराहेइ'(२९ अ०)त्यादि, विमर्शनीयमिदं सूक्ष्मधिवेति २२। इयं च चैत्यवंदना दिनमध्ये कियतो वारानोषतो विधेया इति वेलाप्रमाणप्ररूपकं त्रयोविंशतितमं द्वारं 'सग वेल'त्ति, सप्त वेलाः—सप्त वारान् दिनां-तरोषतोऽपि वंदना कार्येति, कथयिष्यति च—'पडिक्कमणे चेइय जिमण चरिमे'त्यादि २३। चैत्यवंदनां विदधता विशेषतः आ-शातनाः परिहार्या इति चतुर्विंशतितममाशातनाद्वारं 'दस आसायणचाउ'त्ति, दशानां आशातनानां—जिणभवणंमि अवण्णा? पूयाइ अणायरो २ तहा भोगो ३। दुप्पणिहाणं ४ अणुचियवित्ती ५ आसायणा पंच॥१॥ (५९अ.) इत्ति बृहद्भाष्योक्तावज्ञादिपंचप्रकाराऽऽशा-तनान्तर्वर्तिभोगाभिधानतृतीयाशातनाभेदानां तांबूलपानीयादीनां त्यागः—परिहारः कार्यो जिनगृह इत्युपस्कारः, वक्ष्यति च—'तंबोलपाणभोयणे'त्यादि, एतामां चोपलक्षणस्त्रान् तुलादंडन्यायेन वा मध्यग्रहणेनाद्यंतयोरपि ग्रहणात् चतुरशीत्युत्तरभेदाऽवज्ञादि-पंचप्रकाराप्याशातना वज्या इति, एतच्च एतद्द्वारव्याख्यावसरे भणिव्यामः, एवं पूर्वोक्तप्रकारेण चैत्यवंदनायाः स्थानानि भवंती-तिभावः, कैः?—चतुर्विंशतिद्वारैः, तत्राद्यगाथायामष्टौ द्वितीयस्यां सप्त तृतीयस्यां अष्टौ चतुर्थ्यां एकं द्वारमिति, कियंति स्थाना-नि भवंति इत्याह—द्वौ सहस्रौ चतुष्पट्यधिकौ, तत्राद्यद्वारे त्रिंशत् द्वितीये पंच तृतीये द्वे चतुर्थे त्रीणि पंचमे त्रीणि षष्ठे एकं सप्तमे

एकं अष्टमे षोडश शतानि सप्तचत्वारिंशदधिकानि नवमे एकाशीत्यधिकं शतं दशमे सप्तनवतिः एकादशे पंच द्वादशे द्वादश त्रयो-  
दशे चत्वारि चतुर्दश एकं पंचदशे चत्वारि षोडशे चत्वारि सप्तदशे अष्टौ अष्टादशे द्वादश एकोनविंशतितमे षोडश विंशतितमे  
एकोनविंशतिः एकविंशतितमे एकं द्वाविंशे एकं त्रयोविंशे सप्त चतुर्विंशतितमे दश, सर्वे मिलिताः चतुःसप्तत्यधिकद्विसहस्रा भवं-  
तीति द्वारगाथाचतुष्टयार्थः ॥ अथ 'यथोद्देशं निर्देश' इति न्यायात् प्रथमं द्वारं व्याचिख्यामुः दशत्रिकप्रचिकटविषया शास्त्रप्रति-  
मुखरूपाणि प्रतिद्वाराणि चिरंतनगाथाद्वयेनाह—

तिन्नि निसीहि१ तिन्नि उ पयाहिणार२ तिन्नि चैव य पणामार३ ।

तिविहा पूया य तथा४ अवत्थतियभाषणं५ चैव ॥ ६ ॥

तिदिसिनिरिक्खणविरई६ पयभूमिपमज्जणं च तिक्खुत्तो ७ ।

वन्नाइतियं८ मुहातियं च९ तिविहं च पणिहाणं१० ॥ ७ ॥

तिस्रो नैषिधिकयो-गृहादिव्यापारपरिहाररूपाः, जिनगृहादिस्थाने प्रविशता कर्तव्या इति क्रियाऽध्याहारः, एवमन्यत्रापि 'यत्र  
निवं परशुना, यश्चैनं मधुसर्पिणा । यश्चैनं गंधमाल्याभ्यां, सर्वत्र कटुरेव स ॥१॥ इत्यादिवत् यथानुरूपा क्रियाऽध्याहार्येति प्रथमं  
त्रिकं१। तिस्रश्च प्रदक्षिणा दातव्याः, तत्र प्रकर्षेण सर्वासु दिक्षु विदिक्षु च परिभ्रमतां दक्षिणं-आत्मनो दक्षिणांगभागावर्ति मूलविंबं  
ज्ञानादित्रयानुकूल्यकृते क्रियते यत्र प्रतिपत्तौ सा प्रदक्षिणेति द्वितीयं त्रिकं२। त्रयश्च प्रणामाः-प्रकर्षेण शीर्षादिना भूस्पर्शादिलक्षणेन  
नामा-नमनानि प्रह्वीभावा जिनस्याग्रे विधेयाः, नमस्कारकरणकाले भक्त्यतिशयख्यापनार्थं त्रीन् वारान् शिरोनमनादि विधेयं,

श्रोदे०  
चैत्यथी-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ३४ ॥

नत्वेकमपि वारमित्येवशब्दो नियुक्ते, यदागमः—‘तिवखुत्तो मुद्गाणं धरणितलंसि नमे(निवेसे) इति, शिरसा त्रिभूमिं स्पर्शयतीत्यर्थः, एरुशब्दः ममुष्ये द्वितीयस्तु विशेषणे, स चैकागादिकमपि प्रणामं कुर्वन्निर्भूम्याकाशशिरःप्रभृतिष्वपि सर्वत्र शिरः१ करां२ जल्यादि ३ त्रिः परावर्तनीयमिति विशिनष्टि, एवं च ‘पणित्राओ पंचंगो’ इत्युच्यमानं न विरुध्यते, प्रणिपातभेदांगव्यक्तिख्यापनपर-  
त्वात् तस्याः, यद्वा भूमौ जानुन्याम१ शिरःस्पर्श२ शिरोऽंजलिकरणरूपास्त्रयः प्रणामाः शकस्तवादौ विधयाः उक्तं च—‘वामं  
आणुं अवेः’ इत्यादि, अथवा अजलिबद्धोऽर्धावनतः पंचांगश्चेति अत्रैव वक्ष्यमाणलक्षणास्त्रयः प्रणामा इति तृतीयं त्रिकं३। त्रिविधा  
च—त्रिप्रकारा अगाग्रभावात्मिका पुष्पामिपस्तुत्यादिनिर्माप्यस्वभावाः पंचप्रकाराऽष्टप्रकारा सर्वप्रकाररूपा वा अत्रैव वक्ष्यमाणस्वरूपा  
पूजा—अर्वा विधेया, तथेत्यागमोक्तनीत्या तदुक्ताशेषशेषतत्पूजाभेदानामत्रांतर्भावरूपया, उक्तं चैतच्चूर्णौ—‘तिविदा पूया—पुष्पेहिं  
निवेजेहिं शुईहिं य, सेममेया इत्थं चैत्र पत्रिसंति’ इति यद्वा तथेति ‘सयमाणयणे षडमे’त्यादिस्थानातरप्रसिद्धाऽनेकधापूजात्रयाणां  
ख्यापकः, तानि च अग्रे दर्शयिष्याम इति चतुर्थं त्रिकं४। अवस्थात्रिकस्य—छद्मस्थकेवलिसिद्धत्वरूपस्य भावनं—पुनः पुनः चिंतनं,  
‘भाषयेद् ज्योतिरातर’मिति वचनात् पिंडस्थपदस्थरूपातीतध्यानकृते कर्तव्यमेवेत्येवशब्दोऽवधारयति, तथैव पिंडस्थादिध्यान-  
सिद्धेस्तदर्थत्वाच्च सर्वस्यापि सद्धर्मानुष्ठानोपक्रमस्य, रूपस्थध्यानं तु दर्शनमात्रादपि सिध्यति, उक्तं च—‘पश्यति प्रथमं रूपं,  
स्तांति ध्येयं ततः पदैः । तन्मयः स्यात्ततः पिंडे, रूपातीतः क्रमाद् भवेत् ॥१॥ इति पंचमत्रिकं ५। तिसृणां—ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्-  
रूपाणां वामदक्षिणपश्चात्पश्चालक्षणाणां वा दिशां निरीक्षणस्य—आलोकस्य विरतिं—वर्जनं विदध्यात्, तत्रोपयोगे वंदनस्यानादरता-  
दिदोषप्रसंगात्, यस्यां दिशि तीर्थकृद्बिंबं तत्संमुखमेव निरीक्षेतेत्यर्थः, यदागमः—‘भवणेकगुरुजिणिंदपडिमासु विणिवेसिय-

द्वारगा-  
थार्थः

॥ ३४ ॥

नयणमाणसेण जाव चेष्ट वंदियव्वे'त्ति पष्ठं त्रिकं३। पदभूमेः-निजचरणन्यासभूमेः सः सत्त्वादिरक्षार्थे सम्यग् चक्षुषा निरीक्ष्य प्रमार्जनं च त्रिकृत्वः-त्रीन् वारान् कुर्यात्, उक्तं च आगमे-‘जइ तिन्नि वाराउ चलणाणं हिट्ठं भूमिं न पमजिआ तो पच्छि-  
चं'ति सप्तमं त्रिकं७। वर्णादित्रिकं चैत्यवन्दनगताक्षरार्थावलम्बनरूपं यथापरिज्ञानं मम्यगुच्चारचितनाश्रयणत एकाग्रतायै मनसश्चि-  
न्तयेत् इत्यष्टमं त्रिकं८। मुद्राणां-हस्ताद्यंगविन्यासविशेषलक्षणानां त्रयं च योगमुद्रा१ जिनमुद्रा२ मुक्ताशुक्तिमुद्रात्मकं३ सूत्रपाठस-  
मकभावितया मूलमुद्रात्रयरूपं समस्तप्रत्यूहव्यूहव्यपोहार्यं सकलसमीहितसंपादनार्थं च, यथा महामांत्रिको मंत्रादि स्मरन् वज्र-  
मुद्राकृष्टिमुद्रादिका मुद्राः प्रयुंक्ते तथा चैत्यवन्दनासूत्रोच्चारणसरेऽवश्यं सत्यापनीयतया ज्ञातव्यं, तदधिनाभाविचारात् सूत्रोच्चारस्य,  
'थयपाठो होइ जोगमुद्दाए' इत्यादिवचनात्, दृष्टश्च समुद्रं सूत्रपाठोऽन्यत्रापि मंत्रवेदादौ, परममंत्रवेदादिकल्पं च सर्वं जिनागमसूत्रं,  
'कम्मविसपरममंतो' इति 'अट्टारसपयसहस्सिओ वेओ' इत्यादिवचनात्, अंजलीमुद्रापंचागीमुद्रादयस्तु अत्र न परिज्ञाताः, उच्य-  
रमुद्रारूपत्वात्, तासामनियतत्वात्, सूत्रपाठसमयेऽनुपयुज्यमानत्वात् तथाऽनुक्तत्वात् सूत्रोच्चारकालात् पूर्वापरकालभावित्वाद् वि-  
नयविशेषदर्शनमात्रफलत्वाच्चेत्यादि बहुत्र परिश्लेषमिति ज्ञपरिज्ञयेति नवमं त्रिकं९ त्रिविधं च-त्रिमेदं चैत्यमुनिवन्दनाप्रार्थनाभेदात्  
प्रणिधानं चैत्यवन्दनावसाने विदध्यादिति शेषः, तथा चागमः-‘वंदइ नमंमइ'त्ति सूत्रस्य वृत्तिः-वंदते ताः प्रतिमाश्चैत्यवन्दनाविधिना  
प्रसिद्धेन, नमस्करोति पथात् प्रणिधानादियोगेनेति दशमं त्रिकमिति प्रतिद्वारगाथाद्वयसमासार्थः१०॥७॥ उक्तो दशत्रिकाक्षरार्थः,  
अथ भावार्थ उच्यते-तत्र प्रथमं नैपेधिकीत्रिकं भावयन् गाव्यकृदाह-

घरंजिणहरजिणपूयाचावारचाथओ निस्सीहितिगं । अग्गहारे१ मज्जे२ तइया चिइवंदणासमए३ ॥ ८ ॥



श्रौदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ३६ ॥

गृहं च-मंदिरमुपलक्षणत्वादापणादिपरिग्रहः जिनगृहं च-देवगृहं जिनपूजा च-पूष्पादिभिर्जिनाभ्यर्चनं तेषां व्यापारः-तद्गतकार्य-  
कारणचित्तनादिलक्षण आरंभस्तस्य त्यागाद्-वर्जनाभैपेधिकीत्रयं पूर्वोक्तशब्दार्थं यथार्थनामकं भवतीतिगम्यते, तत्र प्रथमा नैवे-  
धिकी अग्न्यादारे-बलानकप्रवेशसमये विधेया१, द्वितीया तु मध्ये-मुखमंडपादौ२ तृतीया पुनश्चैत्यवन्दनाविधानसमये इत्यक्षरार्थः,  
माचार्यस्त्वयम्-जिनभवनादिवहिर्भूतगृहहृद्वादिगतक्रयविक्रयादिव्यवहाररूपसावद्यारंभविधाननिषेधनिष्पन्ना प्रथमा नैपेधिकी, सा  
च अग्रद्वारे-जिनभवनबलानके वक्ष्यमाणपंचविधाभिगमविधानपुरस्सरं प्रविशता भुवनमल्लनरेंद्रवत् कार्येति, यदुक्तं भाष्ये-पंच-  
विधाभिगमेणं पविसंतु बलाणए निसीहितिगं । कुजा वहिवावारं न काहमिण्हिति भावितो ॥ १ ॥ ” (१८८ अर्थतः) अत्र मनो-  
वचःकार्यैर्गृहादिव्यापारो निषेध्य इति ज्ञापनार्थमुक्तं-‘निसीहितिगं कुज’त्ति, परमेकैवैषा गण्यते, जिनगृहादिवहिर्भावितयैकरूपस्यैव  
गृहादिव्यापारस्य निषिद्धत्वात्, तथाच लघुभाष्यं-“तणुवपणमाणसाणं निसेहविसया निसीहिया तिन्नि”त्ति, भुवनमल्लनरेंद्र  
कथा चैकं कुस्तुमपुरी अत्थि पुरी बहुचउरयणेहिं एगचउरयणं । एगहरिं भूरिहरीहिं परिहवइ अमरनयरिं जा ॥ १ ॥  
हेमप्पहो हरी इव तत्थइत्थि निवो गवाहिवो स जओ । भज्जा य तस्स रंभा पुत्तो पुण भुवणमल्लत्ति ॥ २ ॥ सरो रणंमि  
सोमो नयंमि वको रिउंमि जो उ बुहो । सत्थंमि मईइ गुरू नीईइ कई अघे मंदो ॥३॥ कइआ निवं सहत्थि वित्ती विन्नवइ देव !  
वहि एगो । पुरिसो दट्ठं इच्छइ पहुं कहेइ अ न सो अप्पं ॥४॥ मुंचत्ति निवुत्ते जा मुक्को पत्तो य रायदिट्ठिपहं । ता हसिअ  
निवो भणइ किं अप्पं करह ! गोवेसि ? ॥५॥ सो भणइ कयपणामो पहु ! कीरउ भेज्वयारणं करहो । कइ चिरदिट्ठो ओलक्खिओ  
मि नामं च सरियं मे ? ॥ ६ ॥ भणइ निवो उवयारी वीसरसि तुमं ? जमत्थिया तुमए । रंभा दिवे चिवाहे थविअ कणयपाउया

नैपेधिक्यां  
भुवनमल्लः

॥ ३६ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ३७ ॥

मञ्ज ॥७॥ इअ संभासिअ पुट्टो आगमणपओअणं निवेण इमो । भणइ पट्ट ! अत्थि सिरिसेणनिवईधूया रयणमाला ॥ ८ ॥  
सा कुंदरयणमालासु रयणमालध वरगुणसमेया । जा कुणइ राहवेहं स मे वरो इय कयपइत्ता ॥९॥ राया उ भुवणमल्लं इच्छइ समइणीसुअं  
वरं नवरं । न कुमरि गिरमत्रमइ जाणंतो कुमरकोसल्लं ॥१॥ इअ पेसिओ निरा इहं ता कुमरो निववेउ अविलंबं । नियदंसणामएणं  
सिरिसेणनरिंदमणनयणे ॥११॥ नियइ निवो गणयमुहं तो स भणइ पपरमज्ज जुत्तदिणं । चितइ निवो धुरा कुमरभइसेणी मविहलग्गा  
॥१२॥ यत उक्तम्—“लघूत्थानान्यविघ्नानि, संभवत्साधनानि च । कथयंति पुरः सिद्धिं, कारणान्येव कर्मणाम् ॥१३॥”  
मणपणसउणपरियणअणुकूलत्तेण तो भुवणमल्लो । चंपापुरीहिंसिमुहं चलिओ चउरंगवलकलिओ ॥१४॥ सिद्धत्थपुरसमीवे जा  
पत्तो ता नरेहिं तप्पहुणा । विन्नत्तो जह कीरउ खीरसरवणे इहावासो ॥१५॥ तत्थावसिओ कुमरो नियइ वणं विम्हिओ समंता  
जा । ता पिच्छइ हयगयरहसुहडसमूहं ममुहमितं ॥१६॥ किमियंति कुमरपुट्टा गणंति सिद्धत्थपुरनिवनरा ते । न मुणेमु परं संभाविअइ  
सिरिमूलदेवनिवो ॥१७॥ जं तुम्हागमवत्तायन्नणसमया स मन्नइ खणंपि । वरिससमंति इमे जा कहंति ता विन्नवइ वित्ती ॥१८॥  
सिद्धत्थपुरनिवो पट्ट ! गयउत्तिन्नो पएहिं एइत्ति । तो कुमरो अहिगच्छइ जा पत्तो ता स इत्ति तहिं ॥१९॥ अइरूवविजियमारं  
ददत्तु कुमरं धमत्ति धरणियले । मुच्छायसा स पडिओ हाहासदो पुणुञ्जलिओ ॥२०॥ कुमरेण ससंमममह चंदणसेयाइणोवया-  
रेण । संलद्धचेयणो किं वाहइ तुम्हंति सो पुट्टो ॥२१॥ ओणयवयणो न देइ उत्तरं नियइ चलिरदिट्ठीए । कंडुअइ वामकन्नं पायं-  
गुट्टेण लिहइ भुवं ॥ २२ ॥ किमियंति कुमरपुट्टो सिरिसेहरमंतिनंदणो सीहो । कुमरवयंसो साहइ पट्ट ! इह न मुणिज्जई किंपि  
॥२३॥ नवरं इओ अदूरे गम्मिअओ देव ! जेण वरनाणी । सिरिअभयघोससूरी समागओ अत्थि इह जो उ ॥ २४ ॥ मेरुव

नैवेधिक्यां  
भुवनमल्लः

॥ ३७ ॥

धीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संधाचार-  
विधौ  
॥ ३८ ॥

महियजलही घरोविव निहयविसमतरकरणो । दोसुम्मूलणरसिओ रविब हारुब पवरगुणो ॥२५॥ एणपरिग्गहरहियो विरइअसा-  
रंगसंगहो सययं । विहियसयलक्खविजओ एगसंसारभयमीओ ॥२६॥ तो कुमरो सो य निवो गंसूणं तत्थ नमिय सरिपए । उव-  
विसइ उचियठाणे तो सरी कहइ इय धम्मं ॥२७॥ “लहिउं सुदुल्लहं नरभवाइसामग्गिमित्थ भवहरए । सइंसणपरिभट्टा मा दुहिया  
भमह कुम्मव ॥ २८॥ हरपरिगियत्तणा अवि लहिज्ज ससिदंसणाइ सो कुम्मो । न उ पुणवि जओ बोहिं भवणंतत्ता अकयसुकओ  
॥२९॥ ता सौउमिमं संमं अरिहं देवो सुसाहुणो गुरुणो । जिणपन्नत्तं तत्तं इत्थ पहाणंति कुणह मइं ॥२९॥ भणियं च—“मुत्तूण  
जिणं मुत्तण जिणमयं जिणमयट्टिए मुत्तुं । संसारकत्तवारं चित्तिजंतं जगं सेसं ॥३०॥ सइंसणसुद्धिकए कायव्वा वंदणा जिणाण सया ।  
तिन्निनिसीहाइदसगं तत्थ य नेयं जहाविहिणा ॥३१॥” अह भणइ भुवणमल्लो भययं ! कह मुच्छिओ ममं ददुं ? । समयणरम-  
णिवियारे कहं व पुरिसोवि कुणइइमो ? ॥३२॥ भणइ गुरु भइ ! पुरा सीहपुरे आसि रयणसारनिवो । गंगव सुई सुदया तस्स  
पिया मयणरेहत्ति ॥३३॥ अलियविलीयविरत्ते कहआइ निवंमि साणुरत्तावि । उव्वंधेऊण मया अवमाणदुहं असहमाणा ॥३४॥  
जओ—अलियाववायअभिदूमियस्स जीवस्स सुद्धहिययस्स । होइ दहंतस्स पुणो चंदणरससीयलोऽग्गीवि ॥३५॥  
देवचणदाणदयाण सुद्धभावाउ सा इहुप्पणा । सिद्धत्थपुरे सुंदरनिवधूआ मूलनक्खत्ते ॥ ३६ ॥ अह सहसा कालगओ राया जंमे  
इमीइ तो कुणइ । सुमइअमच्चो पयडियपुत्तत्तं रज्जअभिसेयं ॥ ३७॥ मरिऊण रयणसारो जाओ सि तुमं इहागए दिट्ठे । पइ पुत्त-  
भवन्भासा एईए पसरिओ नेहो ॥३८॥ किं मह इमंमि पीई एवंति इमीइ विमरिसंतीए । जाए जाईसरणे तं जायं जं तए पुट्ठं  
॥३९॥ भुत्तं संसारसुहं नाओ दइयस्स नेहपरिणामो । दिट्ठो मालवदेसो खट्ठा मंडा य अग्घाणा ॥ ४० ॥ इअ भणिय मूलदेवो

नैपेधिक्यां  
भुवनमल्लः

श्रीदे० वे-  
त्यभ्राधर्म०  
संपाचार-  
विधौ  
॥ ३९ ॥

मुनिवश्ययणात् जायवेरगो । पडिवअइ पवञ्जं रञ्जं दाउं कुमारस्स ॥ ४१ ॥ कुमरो पुण संमत्तं गिण्हइ चिद्वंदणाइनियमजुयं ।  
अह गुरुणा गुरुकरुणापरेण एवं स अणुसिट्ठो ॥४२॥ “लभंति गुरुसुहाइं लभंति नरिंद ! पवररिद्धीओ । न उणो सुबोहिरयणं  
लभइ मिच्छत्तमदरणं ॥४३॥ जह गहगणाण गयणं आहारो रोहणो य रयणाणं । सिंभूण जहा जलही तह सयलगुणाण संमत्तं  
॥४४॥ जह उवसमो मुणीणं चाओ विद्वीण सीलमिस्थीणं । तइ संमत्तं गिदिणो जइणोवि विभूसणं परमं ॥४५॥ ता मा फासि  
पमायं सम्मचे सबदुक्खनासणए । जं सम्मत्तपइइहाइं नाणतवविरियत्तरणाइं ॥४६॥” इच्छंति भणिय कुमरो तो मभंतो कयत्थ-  
मप्पाणं । बहुबहुमाणं नमिउं गुरुपयपउमं गओ सिविइं ॥४७॥ सिद्धत्थपुरे गंतुं सुमइअमत्तं तहिं ठविय रजे । पलिओ पुरओ  
पत्तो अडविं कालिंजरं जा उ ॥४८॥ स्वग्गमिधायभउंतमत्तमायंगयियउकुंभयडा । विलसिरसकुंताररत्तकपायवासंगरुद्धरदा ॥४९॥  
तत्थ दसजोअणंते आवासिय जाव खरुणनइतीरे । कुमरो नियइ पणाइं ता पिच्छइ रिसहजिणभचणं ॥५०॥ तो तत्थ निसी-  
हितिगं फाउं जा पविसई नियइ ताव । जिणपूयवापडाओ अमरीओ भयिनभिरीओ ॥ ५१ ॥ अह ददुं निप्पडिंमं फणममं  
रिसहगामिणो पडिमं । कुमरो वियसिययणो पंदइ चिदिणा धुणइ एवं ॥ ५२ ॥ “विश्ववगैकदर्शनं ! सहसदर्शननतकम  
जिनेंद्र ! । सवणंतपपदंसण ! अणंतदंसण चिरं जयसु ॥ ५३ ॥ पूर्वांकृतसुकृतानां पूर्वाशीलितपिष्टुद्वशीलानाम् । अपिदिगत्तवाण  
शुद्धिं न होइ तुह दंसणं पेव ॥५४॥ भवशतकृतमपि पापं त्वदर्शनतो विलीयते नाथ ! । पिंडीभूअणिव पयं दूअं जहा जलिरजल-  
णाओ ॥५५॥ ममयोऽयमेव शस्यः सलक्षणोऽसौ धणस्तदहरनगम् । पक्खोऽपि सो सपक्खो जयधंभव ! वीरसे जत्थ ॥ ५६ ॥  
द्रुपुपरुष्टे पाळा ष्टे त्वयि नाथ ! विरहजं दुःखं । इय जइ दुहापि न गुहं तहापि तुह दंसणं होउ ॥ ५७ ॥ पूर्वाजितसुकृतकृतं

नेवेधिक्यां  
शुवनमल्लः

॥ ३९ ॥

श्रुदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ४० ॥

भाविशुभनिबंधनं हरति चैनः । इय कालत्तयमुहयं जियाण तुह दंसणं दुलहं ॥ ५८ ॥ स्वामिन् ! स्वदर्शनं कुरु तथा यथा स्यात्  
पुनर्न तदभायः । ज्ञचंधवेयणाओ चक्खुक्खयवेयणा दुसहा ॥ ५९ ॥ नामापि नाथ ! यस्ते वरमंत्रसधम्म कीर्तयति तस्य ।  
मिच्छादंसणदोसो लहु नासइ किं परं भणिमो ? ॥ ६० ॥ य इति जिन ! त्वापन्यूनदर्शनं न्यूनदर्शनो नौति । स विशुद्धदर्शनः  
श्रयति सत्वरं सर्वदशित्वम् ॥ ६१ ॥ इय थोउ चेइयं जा सविम्हयं नियइ सबओ कुमरो । ता पिच्छइ पच्छिमदिसि पुक्खरिणि  
पवरपुक्खरिणि ॥ ६२ ॥ गंतुं तत्थ जलेणं महुरेणं सीयलेण विमलेण । गुरुवयणेण व अप्पं सोहिय जा वीसमइ सुत्थो ॥ ६३ ॥ ता  
गुंजाहलहारो सल्लयसालाकरो हलिदनिहो । एगो समागओ तत्थ वानरो वानरीइ जुओ ॥ ६४ ॥ स मणुयगिराइ कुमरं पणमिय भणइ  
पह ! असरणसरणा । मुदयपवण्ण मुदक्खिण कुमार ! मह सुणसु विन्नत्ति ॥ ६५ ॥ इह अडवीइ सयाविहु वानरज्जहाहिवत्तमासी मे । एसा  
उ वल्लहा तह पाणेहिचि वल्लहा निच्चं ॥ ६६ ॥ तं मह जूहं इण्हि वणंतरगयस्स वानरेण बला । अवहरियं अन्नेणं तं तु समत्थो  
विनिग्गहिउं ॥ ६७ ॥ नवरं न देइ मह तेण जुज्झिउं नेहकायरा एसा । अहमवि इमं न सकेमि इत्थ एगाणिणिं मुत्तुं ॥ ६८ ॥ संपइ  
तुमं महायस ! मह नयणूसवकरो सुबंधुव । परउवयारिकपरो दिट्ठो पुण्णोदएण मए ॥ ६९ ॥ ता जाव अहं रिउवानरं लहुं निह-  
णिऊण एमि इहं । ता नेहमीरु एसा निरुवदवा ठाउ तुह पासे ॥ ७० ॥ इय भणिय तयं मुत्तुं गओ इमो चितए तओ कुमरो ।  
कइ मणुअगिराइ पम्भ वयइ पवत्तइ य मइपुवं ॥ ७१ ॥ बलिअरिउणा पिअं जा निहयं न सुणामि ता ममवि जुत्तं । मरणंति भणिअ  
कुमरस्स वानरी पडइ चाविं तो ॥ ७२ ॥ नहु मह इमीइ सरणागयाइ मरणं उविक्खिउं उचियं । इय तीइ कइटणत्थं झंपावइ तत्थ  
जा कुमारो ॥ ७३ ॥ ताव न वावी न जलं न वानरी तत्थ किंतु अप्पाणं । वरमणिमयपामाए पल्लंकरयं नियइ कुमरो ॥ ७४ ॥ अह

नैपेधिक्यां  
भुवनमल्लः

॥ ४० ॥

श्रीदे० चै-  
त्यशोधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ४१ ॥

अनियंता कुमरं मित्रा गंतुं कर्हन्ति मंतीणं । तेविद्दु संनिहियवला तं कयजचा गवेसंति ॥७५॥ आगम्म नरो एगो अह कुमरं पइ  
पयंपइ इहं भो । मा किंपि चित्तिसुञ्चं कारणओ तं मयाऽऽणीओ ॥७६॥ को तं ? किमाणिओऽहं इय कुमरुत्ते नरो भणइ सुणसु ।  
अमिअगई असुरोऽहं कीलाभरणं च मह एयं ॥७७॥ कइआ दइआसहिओ उज्जिते सुमइकेवलं नंतुं । चलिओ निएमि मग्गे  
जोगिअमिकं ममाणंतो ॥७८॥ रत्तंदणकयतिलयं परिहियमिगचम्मचित्ततयदुत्थं । कसिणाहिजोगवट्टं मिहंतं गुरुयहुकारं ॥७९॥  
तस्सग्गे जलिरानिलकुंडं वामंमि कन्नगं चैगं । रुयमाणिं रत्तंदणदित्तं कणवीरमालिहं ॥ ८० ॥ तं जा खिविही जलणे स मए ता  
तज्जिओ अरे पाव ! । असमंजसमिअ काउं कत्थिण्हि वचसि हयास ! ॥ ८१ ॥ तो सो भीओ कन्नं मुत्तुं नट्टो दयाइ मे मुक्को ।  
पत्तो अहंपि रेवयगिरिंमि तं बालियं गहिउं ॥ ८२ ॥ तत्थ सिरिस्तुमइकेवलिमुणिणो कमकमलजमलमहं । पणमित्ता आसीणो  
सुणेमि इय देसणं अणहं ॥८३॥ “कोहो अप्पीइकरो उव्वेयकरो य सुगइनिदलणो । वेराणुबंधजणणो जलणो वरगुणगणवणस्स  
॥८४॥ कोहंधा निहणंति पुत्तं मित्तं गुरुं कलत्तं च । जणयं जणणिं अप्पंपि निग्घिणा किंनन कुणंति ॥८५॥ कोहग्गीपज्जलिओ  
न केवलं दइइ अप्पणो देहं । संतावेइ परंपिहु पहवइ परभवविणासाय ॥८६॥ ता क्रोहमहाजलणो विज्झवियवो खमाजलेण सया ।  
अन्नह दुमहं दुक्खं देइ जह इमीइ बालाए ॥८७॥” भयवं! कोहवसेणं इमीइ पत्तं दुहं कर्हन्ति मया । पणमिय पुट्टो स कहइ केवली  
असुर ! निसुणेहि ॥८८॥ कयमंगलापुरीए धणसिद्धिसुया उ बालविहवाऽऽसी । जयसुंदरीत्ति तीसे भत्तिजुया भायरा पंच  
॥८९॥ जिद्धस्स पुणो भज्जा न वट्टए तीइ सह सया संमं । तं परिणावइ अन्नं कन्नं सा मच्छरिल्लमणा ॥९०॥ तीइ कयं जंकिंपि-  
वि दूसइ तह डहइ दुडुवयणेहिं । गयलज्जा संसुहमुत्तरं दयइ भाउजायावि ॥९१॥ जिणभवणमागयाओवि परुप्परं विलियभासणेण

नेपेधिक्यां  
शुवनमल्लः

॥ ४१ ॥

इमा । अत्राणवि निस्सहियाभंगाई कुणंति विकहपरा ॥९२॥ जओ-“जो होइ निसिद्धप्पा निसीहिया तस्स भावओ होइ । अनि-  
सिद्धस्म निसीहिय केवलमित्तं भवइ सद्दो ॥९३॥ मिहो कहाउ सब्बाओ, जो वञ्जेइ जिणालए । तस्स निसीहिया होइ, ईई केवलि  
भासियं ॥९४॥” इअ अट्टवसट्ठाउ परुप्परं दोवि कलहमाणाओ । विज्जूए दड्ढाओ मरिउं जायाउ वग्गीओ ॥९५॥ पुब्बभासा  
अल्लुन्नदंसणे जायतिवरोसाओ । जुज्झिय मरिउं तत्तो पत्ताओ तइयनरयंमि ॥९६॥ तत्तो उवट्टिय गयउरंमि पुब्बभवविहियसुक-  
यवसा । भाउञ्जायाजीवो जाया स्सरिस्सूरनिवजाया ॥९७॥ तीसे गग्गभे धूयत्ताइ नणंदाजिओ उ उप्पन्नो । अरइं मणसंतावं उवेयं  
जणइ अइगरुयं ॥९८॥ विहिएसुवि तप्पाडणहेउसएसुं न जाव सा पडिया । तो जाया पयडेउं मयत्ति दासीइ छट्टविया ॥९९॥  
तद्विसपसूयाए तीए पुण अप्पिया सधूयाए । तत्थ य पालिजंति सा बाला वड्ढिया तत्तो ॥१००॥ कीलंती डिंभेहिं अहण्णया  
जोगिएण भोलविआ । अइरुद्धमंतसाहणहेउं नीया ममाणे सा ॥१०१॥ जा खिविही सो जलणे ता तुमए मोइउं इहाणीया । इय नाउं  
भो अप्पा कसाइअवो न थेवंपि ॥१०२॥ भणियं च-‘अण थोवं वण थोवं अग्गी थोवं कसाय थोवं च । नहु मे वीससिअव्वं थेवंपि हु तं  
वहुं होइ ॥१०३॥ दासत्तं देइ अणं अइरा मरणं वणो विसप्पंतो । सब्बस्सदाहमग्गी दिंति कसाया भवमणंतं ॥१०४॥” सा भणइ  
सरिय जाइं भयवं ! सब्बपि मेऽणुभूयमिणं । ता इण्हि कुण करुणं दुहावि जह होमि निस्संगा ॥१०५॥ भणइ मुणी गिहिधम्मस्स  
इण्हि उचिया तुमं जओ अत्थि । पुब्बकयदेवपूयाइसुकयसंभूय भोगफलं ॥१०६॥ जओ-“देवच्चणेण रज्जं भोगा दाणेण रूवमभ-  
एणं । सोहग्गं सीलेणं तवेण मणवंछिया सिद्धी ॥१०७॥” सा भणइ तुम्ह सब्बं पच्चक्खं नाहं ! नवरि मज्झ कहां । अविरयसुराण  
मज्झे ठियाइ निवहेइ गिहिधम्मो ॥१०८॥ तो केवलिणा भणियं भदे ! कालिंजराइ अडवीए । सरिरिसहनाहभवणंमि तुज्झ पूयं

श्रीदे० चै-  
त्यश्रोधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ४३ ॥

रयंतीए ॥१०९॥ हेमप्पहरायमुओ तत्थ समागच्छिही भुवणमल्लो । जिणनमणत्थं विहिणा काउं निस्सीहियातियगं ॥११०॥ तेण  
समं रजसुहं माणिता पालिउं च गिहिधम्मं । पडिवज्जिय पव्वजं लहेमि अयरामरं ठाणं ॥१११॥ अह तीए गिहिधम्मे पडिवन्ने  
नमिअ केवलिस्स मए । इत्थागएण विहियं विजयपडायत्ति से नामं ॥ ११२ ॥ अह कुमर ! अज्ज एसा जाव गया चेइयंमि  
पूयत्थं । ता कयनिसीहियतिगो जिणनमणत्थं तुमं पत्तो ॥११३॥ निस्सीहियं कुणंतं तं ददट्टु इमा सुरीहिं भणियत्ति । जो केव-  
लिणा कहिओ धुवं इमो भुवणमल्लो सो ॥११४॥ अह ताहिं वाविपमुहं काउ पवंचं तुमं इहाणीओ । ता तीइ पाणिगहणेण कुणसु  
मह पत्थणं सहलं ॥ ११५ ॥ कुमरो भणइ पमाणं आएसो नवरि गम्मउ वणम्मि । मे विरहिओ परियणो दुहेण गमिही खणंपि  
जओ ॥ ११६ ॥ आरोविउं विमाणे कुमरं सिविरंमि नेइ जा असुरो । ता सहसा उज्जोअं ददट्टुं सचिवाइणो विति ॥ ११७ ॥  
भो किंपि समेइ इणं हरिओ जेण कुमरो तओ खोहं । चइय हवह सजा साहमस्स दइवोऽवि नहु किंपि ॥११८॥ यतः—“सत्त्वै-  
कतानमनसां, स्फूर्जदूर्जस्वितेजसाम् । दैवोऽपि शंकते तेषां, किं पुनर्मानवो जनः ॥ ११९ ॥” इय ते जा साडोवा  
हुंति गुणंतित्ति ताव अमरगिरं । सत्तप्पहाण अवितहऽमिहाण जय सिरिभुवणमल्ल तुमं ॥ १२० ॥ परउवयारपरायणपुरिसेसुं तुज्ज  
दिअए लेहा । परुमिच्चस्सवि कजे गणेसि पाणे तिणसमाणे ॥ १२१ ॥ इय सुणिय जायहरिसा ते ओयरिउं विमाणओ कुमरं ।  
पणमंति तयं असुरं देवीसहियं च तुट्टमणा ॥ १२२ ॥ तो सो असुरो हिट्ठो कुमरेण विवाहए तयं धूरं । सप्पणयं भणइ तहा  
वच्चे ! मृण मज्झवयणमिणं ॥१२३॥ निवर्याजा दयिते ननांहपु नता श्वश्रूषु नम्रा भवेः, स्निग्धा घन्धुषु वत्सला  
परिजने स्मेरा सपत्नीष्वपि । पत्युर्मित्रजने सनर्मवचना खिन्ना च तदूहेपिषु, स्त्रीणां संवननं नतधु ! तदिदं

नैवेधिक्यां  
भुवनमल्लः

॥ ४३ ॥



श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ४४ ॥

वीतौपधं भर्तृषु ॥ १२४ ॥ आमंति तीइ वुत्ते असुरो सपियस्स भुवणमल्लस्स । वत्थाभरणाइ वहुं दाउं पत्तो सठाणंमि  
॥१२५॥ कुमरोऽवि तओ चलिओ पत्तो चंपाइ तमह वुत्तंतं । सिरिसेणनिवो सोउं इय चितइ हरिसिओ हियए ॥ १२६ ॥  
तंमि कुले उप्पत्तिं सो विणओ तं कलासु कोसल्लं । सो कोऽवि पुण्णपभारपगरिसो अत्थ एयस्स ॥ १२७ ॥ जेणं लीला-  
इच्चिय धुवं करिस्सिहि राहवेहंति । निव्वुयहियओ राया कुमरं संठवइ वरभुवणे ॥ १२८ ॥ अह सज्जिअराहावेहमंडवे रयण-  
थंभसोहिल्ले । मंचोवरि वरसिंहासणोवविट्ठेसु निवईसु ॥ १२९ ॥ कुमरो असुरऽपियपवरवत्थआहरणभूसियसरीरो । पडिहारदंसि-  
यंमि निविसइ सिंहासणे रम्मे ॥ १३० ॥ इत्तो य रयणमाला कुमरी सियसिचयसारलंकारा । सिविआरूढा पत्ता तत्थुव-  
विट्ठा पिउच्छंगे ॥ १३१ ॥ अह सिरिसेणनिवेणं भणिअं भो भो निवा ! निवइपुत्ता ! । जोराहमिणं विंधइ सो कन्नाए इमीइ वरो  
॥ १३२ ॥ जा मंडवमज्झमुनिविट्ठकणयथंभोवरिं अहो वऽण्णा । वरकंचणपुत्तलिया ठविआ तीसे उ हिट्ठंमि ॥ १३३ ॥ चउच्चउ-  
चक्काइं दाहिणेण वामेण वेगभमिराइं । तेसिं अहभूमीए तिह्लजुआ कुंडिआ ठविआ ॥ १३४ ॥ तत्थ पडिबिंबयाए पंचालीए  
अहो नियंतेणं । विंधेयवा वामच्छितारिया सावहाणेण ॥ १३५ ॥ तह इह पत्ताण मए सवेसिं खत्तिआण नामाइं । भुज्जेमु लिहावेउं  
मिम्मियगोलेमु खित्ताइं ॥ १३६ ॥ ठविआइं ताइं इह सायकुंभकुंभंमि संति कड्ढंते । अहं पुरोहियम्मी गोलो किर नीहरइ जस्स  
॥ १३७ ॥ सो राहावेहंमी यवसायं कुणइ इय भवत्थत्ति । तत्थ पुरोहियहत्थे अह पढमे गोलए पडिए ॥ १३८ ॥ नामंमि वाइए तह  
अउज्झनयरीए जस्स अंगरुहो । मयरद्धयकुमरो उट्ठिऊण सकरे करेइ धणुं ॥ १३९ ॥ पुवभणिणण विहिणा मुकोऽविहु अफ्फिडित्तु  
अयरंमि । सुचरणमुणिहियए इव भग्गो मयरद्धयस्स सरो ॥ १४० ॥ एवं राहावेहे विहलारंभेमु खत्तिअवरेसु । उट्ठेइ भुवणमल्लो

नैपेधिक्यां  
भुवनमल्लः

॥ ४४ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संधा-  
चारविधौ  
॥ ४५ ॥

कुमरो इह अवसरे पत्ते ॥१४१॥ सञ्जीकयधम्मगुणो अंतरमह लहिय मुक्कअसमसरो । राहावेहं साहइ गंठीभेयं व भवजिओ ॥४२॥  
जयतालादाणपरे जणंमि कुमरेण हट्टतुट्टमणो । तो सिरिसेणनरिंदो परिणावइ रयणमालं तं ॥ १४३ ॥ कयसम्माणं अग्ने  
नियनियठाणे निवे विसज्जेइ । कुमरोऽवि कइवि दिवसे सुहेण तत्थेव ठाऊण ॥१४४॥ सिरिसेणनिवमणुअविय बहुयपरिवारपण-  
इणीममेओ । पत्तो नियंमि नयरे पिऊण पणमेइ पयपउमं ॥१४५॥ भुत्तुत्तरं व सीदो कुमरवयंसो कहेइ सर्वपि । रण्णो जं जहविचं  
ता जाव इहागओ कुमरो ॥१४६॥ धम्मत्थिणा अह निवेणाहूआ कयाइ सबदंमणिणो । पुट्ठा धम्मं तेहिं कहिए चितइ इमं राया  
॥१४७॥ जत्थ न विसयविराओ न संगचाओ जिएसु विणिवाओ । किह हुअ सोवि धम्मुत्ति चित्तिउं ते विसज्जेइ ॥ १४८ ॥  
कहइ कुमारो इच्छा धम्मे जइ ताव ताय ! जइणोऽवि । ता पुच्छह मुणिणो रक्खियंगि गयसंग जियणंगा ॥ १४९ ॥ निवआएसा  
तो वित्तिणा उ खुट्ठो समाणियो एगो । स निवेणुत्तो खुट्ठय ! जइ धम्मं मुणासि ता कहसु ॥ १५० ॥ तो सो अक्खुहियमणो  
धम्मरहस्सं इमंति भणमाणो । सुक्कल्लमट्टिगोलयदुगं निवग्गे खिवइ कुट्ठे ॥१५१॥ राजा-खुट्ठय ! इय खिडुंमी धम्मरहस्सं न किंपि  
बुज्झामो । क्षुल्लकः-नरवर ! ता एगमणो सुण भणियं जमिह गोलेहिं ॥१५२॥ उल्लो सुको य दो छटा, गोलया मट्टियामया । दोऽवि  
आवडिया कुड्डे, जो उल्लो सो विलग्गई ॥१५३॥ एवं लग्गंति दुम्मेहा, जे नरा कामलालसा । विरत्ता उ न लग्गंति, जहा से  
सुकगोलगो ॥१५४॥ विम्हइयमणो निवई मुणिसत्तम अतम सुदट्ठ उवइट्ठं । इय थोऊणं तह नमिय, खुट्ठयं तो विसज्जेइ ॥१५५॥ अह  
वीयदिणे राया रज्जं दाऊण भुवणमल्लस्स । सिरिअ भयघोसगुरुणो पासे दिक्खं पवजेइ ॥१५६॥ हेमप्पहरायरिसी दुवालसंगी सुपत्त-  
सूरिपओ । बोहइ रविइ वनुहासरमीए भवियमरमीरुहे ॥१५७॥ अह निवइ भुवणमल्लो पयावओ चेव विजियरिउमल्लो । साहम्मि-

नैपेधिकां  
भुवनमल्लः

॥ ४५ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ४६ ॥

अवच्छलं करेइ वंदेइ जिणचंदे ॥१५८॥ पवयणपभावणपरो तिन्निनिसीहीपमुक्खसुयविहिणा । पविसिय चेईहरेसुं अचाउ जिणाण  
अचेई ॥ १५९ ॥ रहजत्तपत्तसोहं अट्टाहियमहिमहणियजणमोहं । सयलंपि नियं रज्जं कुणइ सुराणांपि कयचुज्जं ॥१६०॥ तत्था-  
गयहेमप्पहगुरुणो वयणं सुणेवि कइयावि । पुत्तंमि ठविय रज्जं विजयपडायाइसंजुत्तो ॥ १६१ ॥ पडिवज्जई पवज्जं निसेहिउं  
तिविह सवसावज्जं । अब्भसइ दुविहसिक्खं सो मुणिसीहो भुवणमल्लो ॥१६२॥ इच्छामिच्छातहकार आवसी तह निसिहिआ आपुच्छा ।  
पडिपुच्छ छंदण निमंतणा य उवसंपया दसमा ॥१६३॥ इय सामायारिपरो निसेहिउं सयलअंतरारिवलं । तो स निसेहियफिरिओ  
सिवं गओ सविजयपडाओ ॥१६४॥ श्रुत्वेति वृत्तमनिवृत्तवरेण्यपुण्यपण्यापणं भुवनमल्लनरेश्वरस्य । त्रैकाल्यविन्निजगदीशजिनस्य  
गेहे, नैपेधिकीत्रिककृतौ कृतिनो ! यतध्वम् ॥१६५॥ इति नैपेधिकीत्रये भुवनमल्लनरेश्वरकथा ॥

अथ बलानकप्रवेशसमयविहितनैपेधिकीत्रयानंतरं जिनदर्शने 'नमो जिनेभ्यः' इति भणित्वा प्रणामं च कृत्वा सर्वं हि  
प्रायेणोत्कृष्टं वस्तु कल्याणकामैर्दक्षिणभाग एव विधेयमित्यात्मनो दक्षिणांगभागे मूलविंशं कुर्वन् ज्ञानादित्रयाराधनार्थं प्रदक्षिणात्रयं  
करोति, उक्तं च—'तत्तो नमो जिणाणंति भणिय अट्टोणयं पणामं च । काउं पंचंगं वा भत्तिभरनिब्भरमणेण ॥ १ ॥ पूअंगपा-  
णिपरिवारपरिगओ गहिरमहुरघोसेण । पढमाणो जिणगुणगणनिबद्धमंगल्लथुताइं ॥२॥ करधरियजोगमुदो पए पए पाणिरक्खणा-  
उत्तो । दिज्जा पयाहिणतिगं एगंगमणो जिणगुणेसु ॥३॥ (वृ)अविय—“मुत्तण जं किंचिवि देवकज्जं, नो अन्नमट्टं तु विंचितइज्जा ।  
इत्थीकहं भत्तकहं विवज्जे, देसस्त रन्नो न कहं कहिज्जा ॥१॥ मंमाणुवेहं न वइज्ज वकं, न जंमकंमाणुगयं विरुद्धं । नालीयपेसु-  
न्नसुककसं वा, थोवं हियं धम्मपरं लविज्जा ॥२॥” गिहचेइएसु न घडइ इयरेसुवि जइवि (न कुणइ) कारणवसेण । तहवि न मुंचइ

प्रदक्षि-  
णात्रयं

॥४६॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० सघा  
चारविधौ  
॥ ४७ ॥

मइमं सयावि तकरणपरिणाम॥१॥ (वृ)ति, यथा च चैत्येषु भावार्हत्प्रमारोप्य शक्रस्तपपाठः पंचविधाभिगमश्चेति भावार्हत्प्रतिप-  
त्तिर्विधीयते तथा तत्र प्रदक्षिणात्रयमपि दातव्य, दत्ताश्च तिस्रः प्रदक्षिणा विजयदेवेन निजराजधानीसिद्धायतने, व्याख्यातं चैतत्  
वृतीयोपागजीवाभिगमविवरणे श्रीहरिभद्रसूरिभिः, तथा अमिततेजःखेचरेश्वरचैत्यगृहे चारणश्रमणाभ्यां ताः प्रदत्ताः, बाल-  
चद्रया च विद्याधर्या वैताढ्योपरितने सिद्धायतने कृताः, वसुदेवेन हरिकूटपर्वतोपरितने सिद्धायतने विहिता, एतच्च सर्वं वसु-  
देवर्हिंडौ प्रतिपादित यथाप्रस्ताव च दर्शयिष्यते, तत्र चाय हरिकूटपर्वतसवधः—वेयड्ढे ताव पुरे निरसतो देवरिसहखयरगिहे ।  
कइयावि बालचदापियाइ भणिओ य वसुदेवो ॥ १ ॥ पत्तो हरिकूडनगे जत्ताए तत्थ पुच्छए मयण । कि मित्त ! कारणमिह  
जमिति खयरा इमे सवे ॥ २ ॥ स भणइ इह पहु ! अंबरतिलयपुरे दाहिणाइ सेठीए । विजाहरचक्कवई आसी इह चित्तवे-  
गोत्ति ॥३॥ तस्स य चित्तवेगो लहुभाया भण्णए हरिति इओ । मुणिविमलगुत्तपासे कयाइ इय सुणइ सो धम्मं ॥४॥  
अइवहुकिलेसपत्त चित्तरयणं व नरभव भणिया । शरित्तु पमायत्ता दुहिया मा भमह भइउव ॥ ५ ॥ तथाहि—रयणपुरे आसिको  
जणकयभइआभिहो नरो दुहिओ । गन्मत्थे जमि मओ जणओ जणणी उ जायंमि ॥६॥ निम्भग्गसेहरुत्ति य सयणेहिं विव  
जिओ उ बालत्ते । बलियत्तणा उ आउस्स नगरि सो वइट्ठिओ कह्णि ॥७॥ अह तरुणत्त पत्तो ददुं नायरजण पलीलंतं । चित्तइ  
धिरत्थु जीय महत्थक्कामेहिं रहियस्स ॥८॥ तो जायविसयत्तहो विसया अत्थं विणा न हुत्तित्ति । चित्तिय कस्सवि बहणे चडिय  
गओ सो रयणदीवे ॥९॥ गयणावडिओ धरणीइ साहिओ नत्थि कोऽवि मह सरणं । त मुत्तुं रोहणाचल ! इय भणिउं पूइउं च  
तय ॥१०॥ गहियाहयकुदालो कयकच्छुटो त्रिमुक्कचिहुरचओ । जायइ लग्गो चहुरयणखणिं खणेउ इमो तयणु ॥११॥ निम्भग्गसि-

प्रदक्षिणाया  
हरिकूट-  
सवधः

॥ ४७ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ४८ ॥

रोमणिणो मह विणु चिंतामणिं अखयखाणि । कालेण खयं होही रयणाण वराणवियराणं ॥१२॥ ता मह न तेहिं कज्जंति निच्छिउं  
गिण्हए न रयणाणि । वयराइणीवि चिंतामणिंमि धणियं स बद्धमणो ॥१३॥ कइहिवि दिणेहिं अह सत्थिएहिं भणिओत्ति नियपुरं  
जामो । सो आह नाहमज्जवि किंपि लहित्था कइं एमि? ॥१४॥ तो जायदएहिं सहागओत्ति कइमिक्कगं वरागमिमं । गच्छामोत्ति  
विणिच्छिय पुण भणिओ सो इमं तेहिं ॥१५॥ आगच्छ तुहवि देमो भागो रयणाण तो इमो भणइ । न विणा चिंतामणिणा गहेमि  
रयणे वरेऽवि परे ॥१६॥ चिंता मणंमि तुह चेव अत्थि चिंतामणी न उण अन्नो । इय भणिय बहु सहासं तं मुत्तु इमे गया सपुरं ॥१७॥  
सीयायवल्लुहमाई सहमाणो अह इमो बहुकिलेसे । छम्मासंते निसि रोहणाहिवइणा इमं भणिओ ॥१८॥ किं न तुमं इह रयणे गहिय गओ  
सत्थिएहिं सह सपुरं । द्रमकः-चिंतामणी अलाहा देवः-लहिसि चिंतामणिं न तुमं ॥१९॥ द्रमकः-नणु किं न संति ते इह? देवः-संति  
बहू न उण ते अपुन्नस्स । द्रमकः-गोविसि कत्थ नणु तेवि मज्झ खगंतस्स सयलगिरिं ॥२०॥ अह देवे सट्ठाणं गयंमि गोसे इमो गिरिं  
खणिउं । लग्गो धणियं कइहिवि दिणेहिं पुणरवि सुरेणुत्तो ॥२१॥ भो गच्छसि किं नऽज्जवि?, द्रमकः-वुत्तं चिय तं मणिं विणत्ति  
धुवं । देवः-जइ इय ता हुज सुही गोसे चिंतामणिं गहिउं ॥२२॥ इय भणिय गए अमरे स विबुद्धो लब्भित्ति जा खणिओ । दस-  
दिसि उज्जोयंतं ता लहु चिंतामणिं नियई ॥२३॥ तं गहिय ण्हविय पइय नमिउं चिंतामणी जइऽसि सच्चं । तो पणसवकणगोवरि  
निविसत्ति भणित्तु सो सुत्तो ॥२४॥ गोसे ददत्तुं सकणगं तं मन्नंतो कयत्थमप्यं तो । चिंतइ गंतु मदेसे माणेमि इमस्स रिद्धिफलं  
॥२५॥ जओ-किं तीई सिरीए पीवराइ जा होइ अन्नदेसम्मि । जा य न मित्तेहिं समं जं च अमित्ता न पिच्छंति ॥२६॥ तो  
वंमग्गे उब्भइ तिणपूलमिओ य गच्छिरेण तहिं । केणवि वणिणा आणवि पुच्छिओ कोऽसि किमिहंति? ॥२७॥ स भणइ असंबलमिहं

प्रदक्षिणायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ४८ ॥

मं मुतुं सत्थसत्थिया पत्ता । कहइ वणी तो भो इह जिमिअ तं एअ जाव तडं ॥ २८ ॥ तो तवइणविलग्गो आगच्छंतो कयाइ  
स निसीहे । सुत्तविउद्धो पिच्छइ सहसा पुंनिमनिसारयणं ॥ २९ ॥ तं धवलियदिसिवलयं पिच्छइय जा चितए किमन्नपि । अह एरि-  
समत्थि नवत्ति सरइ ता सो मणि निययं ॥ ३० ॥ तं काउ करे जा नियइ को णु पवरोत्ति विम्हिओ दोवि । सहसा दुल्लियवहणे  
ता पन्मट्टो कराउ मणी ॥ ३१ ॥ सो पडिओ जलहिजले तं नाउ इमो निवडिओ वहणे । हा हा मुट्टो मुट्टोत्ति पुक्करंतो य विल-  
वंतो ॥ ३२ ॥ अह आसासिय पुट्टो पवहणवइणा सो किमेयं भो ! । तो अंघुणि मुयंतो साहइ सवंपि वुत्तंतं ॥ ३३ ॥ जंपइ य बहुकि-  
लेसेहिं अज्जियं देव ! मे हयासेण । हारियमअ पमाया अस्पावसु पसिअ तं रयणं ॥ ३४ ॥ भणइ वणी किह मुद्वय ! लन्भइ मट्टो  
मणी इह अगाहे ? । जत्थ फुरेइ न बुद्धी न य विहववलं न पोरिस्सं ॥ ३५ ॥ ता सो दुमगो दुहिओ जह जाओ तं मणि विणा  
सुइरं । तह होइ जिओवि दुही पमायओ हारिय नरत्तं ॥ ३६ ॥ अवि देवाइपमाया तं लहिअ कयाइ पुण स हुअ सुही । न उण  
जिओवि पमत्तो नरभवमग्गहियसुकयलन्भं ॥ ३७ ॥ जह पुण अच्चणमहिओ सहलो चिंतामणी हवइ इहयं । तह नरभवोऽवि  
अच्चणनिरयस्म नरस्स सुहहेऊ ॥ ३८ ॥ तो अच्चणं विहेयं सया जिणाणं जहिच्छियफलाणं । दवच्चणभावच्चणमेया पुण होइ तं  
दुविहं ॥ ३९ ॥ अथ मत्तानिशीथोक्तं—दवच्चणमिह सावयसीलं सकारपूयदाणाइं । भावच्चणं चरित्ताणुट्ठाणं उग्गतवचरणं ॥ ४० ॥  
तथा—भावच्चणमुग्गविहारया य दवच्चणं तु जिणपूआ । पढमा जईण दुन्निवि गिहीण पढमच्चिय पसत्था ॥ ४१ ॥ कंचणमणिसोवाणं  
थंभमहस्ससिए सुवण्णतले । जो कारिअ जिणहरे तओऽवि तवसंजमो अणंतगुणो ॥ ४२ ॥ जओ—तवसंजमेण बहुभवसमज्जिअं  
पायकम्ममललेवं । निद्धोविउण अइरा अणंतसोक्खं वए मुक्खं ॥ ४३ ॥ काउंपि जिणायघणेहिं मंडिअं मवमेइणीवट्ठं । दाणाइचउ-

क्लेशं सुदृढवि गच्छेज्ज अच्युययं ॥४४॥ जो पुण निरचणोच्चिय सरीरसुहकज्जमित्ततल्लिच्छो । तस्स न य बोहिलाभो न सोग्गई  
नेव परलोगो ॥ ४५ ॥ इय सोउ विमलगुत्तायरियसगासे विचित्तवेग निवो । गहियवओ विहरेई भावितो इय मणंमि सया  
॥ ४६ ॥ जिय ! गहिउं इय दिक्खं तह गुरुसिक्खं चइतु तणुविक्खं । तो तवणु तवं तिक्खं सुहदिक्खं जेण दइरिक्खं  
(तुह सक्खं) ॥ ४७ ॥ इय भावितु अभिक्खं विसुद्धभिक्खंपि चइअ सिवमक्खिं । कयअणसणो मुणींदो स मरिय जाओ  
सुहम्मिन्दो ॥ ४८ ॥ अह संनिहियसुरेहिं निसीहिया तस्स पूइया तं च । नमिउं खेयरचउरो समण्णिओ चित्तवेगोवि ॥ ४९ ॥  
तं ददहु भाउणेहाउ मुच्छिओ कहवि लद्धचेयणो । सो तत्थ विमलगुरुणा विवोहिओ मा य सोय पुरो ॥ ५० ॥ जहा—“न हु  
होइ सोइयवो जो कालगओ दढो चरित्तंमि । सो होइ सोइयवो जो संजमदुब्बलो विहरे ॥ ५१ ॥ अविच—सोचा  
ते जियलोए जिणवयणं जे नरा न याणंति । सोचाणवि ते सोचा जे नाऊणं नवि करंति ॥ ५२ ॥ जओ—दावेऊण  
घणनिहिं तेसिं उप्पाडिआणि अच्छीणि । नाऊणवि जिणवयणं जे इह विहलंति धम्मधणं ॥ ५३ ॥ किंच—  
को से सोओ सुचरियतवस्स गुणसुट्टियरस साहुस्स । सुग्गइगमपडिहत्थो जो अच्छइ नियमभरियभरो  
॥ ५४ ॥” इचाइवोहिओ सो तणं व चइऊण खयरचक्खित्तं । पडिवज्जइ पवज्जं असेमदुक्खक्खण सज्जं ॥ ५५ ॥ अणुमरिय सुओयहिणो  
तक्खणमुल्लसियसेयज्ञाणस्स । उप्पन्नकेवलस्स य सको से वंदिउं पत्तो ॥ ५६ ॥ सो भयवमेसि धम्मं कहिउं तद्विसमेव सिद्धिगओ ।  
विहिया अन्धुयभूया हरिणा निव्वाणमहिमा से ॥ ५७ ॥ एयं च जिणाययणं सक्केण विणिम्मियं इहं मज्झे । रिसइस्स भाउणो तह  
ठविआ पडिमाउ कणगमया ॥ ५८ ॥ चक्करयणं व से धम्मचक्कंचिअ ठावियं इहेव इमं । भदासणं च वाहिं तस्सोवरि मंडवो

एतो ॥ ५९ ॥ अत्र च वसुदेवहिंडी-देविंदेण य इमं इत्थ सव्वण्णणाइसयं जिणाययणं निरुपमसस्तिरीयं निरुवियं, इत्थ य  
नाभेयस्स भगवओ माउणो य पडिमाओ ठाविआओ सबकणगामईओ, चरुरयणं च घम्मचकं निधाइयं, वाहिं निविट्टस्स य उवरि  
रयणमंडवो कउ”त्ति ॥ भणियं हरिणा किर अजपमिई अविहाडिए इहं भवणे । मज्जे पडिमा मह वयणओ सुरा पूइहिंति सया  
॥६०॥ वरिसुच्छवो बहिं पुण कायवो उभयसेट्ठिखयरेहिं । जो उ न काही इहयं होही खलु भट्टविजो सो ॥ ६१ ॥ जो कारणा-  
गओ इह चकी चरिमतणु खयरचकी वा । जो खयरचकिणा वा न दुम्मए सम्मदिट्ठी य ॥६२॥ जे एसि पिया पुत्तो वणंतरं चेइयं  
इमं सययं । उग्घाडिस्मइ भद्दासणं च वाहिस्सइ न अन्नो ॥ ६३॥ तस्स य नीसाएँ जणो सेसोविहु वंदिही इमं पडिमं । मह मइ-  
विणिम्मियाउत्ति भणिय सको गओ सग्गं ॥६४॥ सकस्स तस्स दोसुवि भवेसु आसी हरिति जं नामं । तेणं एमो धूमो भण्णइ  
तप्पमिइ हरिकूडो ॥६५॥ तो मिलिय सबखयरा कुणंति महिमं इहं इय ठिईए । जायाइ इंदजुगंतराइ णेगाइ अइयाइ ॥ ६५ ॥  
निसुणिअइ अ परंपरसुईइ जह आसि अंतरा एअं । उग्घाडियं जिणगिहं केहिवि वरखयरनकीहिं ॥ ६६ ॥ बइवे य किलिस्संति  
उत्तमपुरिसुत्तमट्ठिआ खयरा । उग्घाडिउमिमं वाहिउं च एयं वरिसवरिसे ॥६८॥ इय मयणमित्त कहिए वसुदेवो गंतु जिण-  
गिहे नमिउं । तिपयाहिणपुवं चेइआणि बहि पिच्छई महिमं ॥६९॥” अत्र वसुदेवहिंडीअश्वराणि “तत्थ य तिगुणाइयं पयाहिणं  
काउं वंदिऊण वाहिं भत्तीए चेइयाणि एगओ ठिय”त्ति, वट्टइ य चारुगंधवगीअयो सुमहिमा विहिअंति । खयरेहि मुक्कयरेहिं इय  
समुग्घुट्ट धुइ सहसा ॥७०॥ तथाहि-सज्ज्ञानलक्ष्याः सुनिवेशनार्थं, मन्मंडपत्याशु समा(दा)गमोत्था । लसघदंसोपरि केशवल्ली,  
सदा मुदे वः स युगादिदेवः ॥७१॥ त्रैलोक्यलक्ष्म्या वृतये स्वयं या, मन्मंडपत्यार्हतचैत्यराजी । साऽनित्यनित्या नमतां नृणां स्याद-



श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ५२ ॥

नित्यनित्याय सुखाय नित्यं ॥७२॥ अनित्या-कृत्रिमा नित्या-शाश्वता अनित्यं सुखं स्वर्गान्तं नित्यं मुक्तिसंभवं । सत्तीर्थलक्ष्म्या  
विशतौ हि रंगात्, श्रीमंडपत्यास्त्वृतसूत्रितं यत् । तदस्तु मे जैनीवचः प्रपंचि, सुवाचनं प्रावचनं सुवाचौ ॥७३॥ श्रीसंघलक्ष्म्या  
सुचिरं सदा ये, समं डपंतीह सुरासुरीभिः । संख्याघृतव्यावृत्तभावभावाः, सुदृष्टयः संतु सुदृष्टये ते ॥७४॥ संघशोभायै समं-सह  
णिचोऽनित्यत्वात् डपडिपुण् संघाते डपंति-मिलंति संख्याघृतौ व्यापारितो व्याघृतभावो-वैयाघृत्यभावो यैस्ते तथा ।" तथा च  
वसुदेवहिंडिः-कमेण य जिणगे पवरनट्टोवहारवज्रमाणवारसतूरगंभीरसंभंतभत्तीपरायणखयररवसंसत्तथुइमयगुम्मंतत्तिपरायणभ-  
मंतसिरिसंकुला पयासिया महिमत्ति" अह वसुदेवो भणिउत्ति देवरिसहाइससुरखयरैहिं । जिणगिहविहाडणाए न संति सन्वे स्वमे  
इयरा ॥७५॥ ता उग्घाडेहि महाणुभाव ! एयं इमोवि खयरजणो । पिच्छउ पढमजिणमुहं पूएउ य दिव्वपडिमाओ ॥७६॥ तो सो  
ण्हाउविलित्तो परिहित्तियअहयवत्थवरजुयलो । देवरिमहाइखयरिंदसंजुओ जाइ जिणगेहं ॥७७॥ मक्खवं सग्गस्स व संपयाहिणाहो  
पयाहिणाहो सो । तइया पयाहिणाओ पयाहिणाओ तहिं कुणंतो ॥७८॥ विणयपणउट्टितो तो वसुदेवो सुहुमलोमहत्थेण । सिद्धाय-  
यणक्खाडे मज्जिय अहिंसिचइ जलेण ॥७९॥ तो सुरहिमल्लमालाअलंकिए काउ दाउ धुवं च । बहुभक्खपाणचउरं तस्स बलिं दोयइ  
विचित्तं ॥८०॥ उक्तं च वसुदेवहिंडीतृतीयखंडे-"धुवं दाउं तओ सुरहिमल्लकरंविद्याविविहभक्खपाणगपुण्णा मल्लसुरहिसास-  
गविभूसिया निवेइया विचित्ता बली," पुणरवि दावियधूवो कयंजली विणयपणंयसीसो य । कयसिद्धनमुक्कारो वसुदेवो आह  
वयणमिणं ॥ ८२ ॥ जइहं सच्चं भव्वो विण्हुपिया वावि उत्तमो पुरिसो । सम्मदिट्ठी देवा ता उग्घाडित्तु मम दारं ॥ ८३ ॥ इय  
भणिए उग्घडियं चेइयवारं सयं चिय तओ सो । पडिमालोए भणिउं नमो जिणाणंति पणमेइ ॥८४॥ तो ण्हविय पूइऊणं विहिणा

प्रदक्षिणायां  
हरिकूट-  
संबंध

॥ ५२ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५३ ॥

पंदेइ चेइयाणि इमो । सेसोऽविहं खयरजणो एवं चिय कुणइ जिणमहिमं ॥८५॥ इय जिणपइक्खणेणं सहलेणं संपइक्खणं तं सो ।  
चिहिणा पइक्खणेणं पइक्खणं पक्खणपरेण ॥८६॥ तद्यथा—अणुगम्मंतो स सुराइएहिं तह जाव गंतु वसुदेवो । भूयासणे निसीयइ-  
ता उच्छलिया गयणवाया ॥ ८७ ॥ पुवभवसुकयअज्जियफलोदओ साहुविणयगुणजुतो । बलकेसवजुयलपिया लग्गो भूयासणं  
दिहं ॥८८॥ जमणेण कयं विउलं वेयावच्चं सुसाहुवग्गस्स । नीयाविचीइ पुरा तस्सेसमुवट्टियं एयं ॥ ८९॥ अह उट्टिय वसुदेवो  
वंदिय पुण चेइयाणि तायपुरे । पत्तो सुहेण वोळइ कालं दोगुंदुगुसुरुव्व ॥९०॥ एवं निशम्य सम्यग् प्रदक्षिणात्रितयपूर्वकं भव्याः१।  
ज्ञानादित्रितयाराधनाय चैत्यानि वंदध्वम् ॥ ९१ ॥ इति प्रदक्षिणात्रये हरिकूटपर्वतसंबंधः ४ ॥ प्रदक्षिणात्रयानंतरं च  
देवगृहलेखकपोतकपापाणादिघटापनकर्मकरसारादिकरणेत्यादिजिनगृहविषयव्यापारपरंपराप्रतिषेधरूपां द्वितीयां नैपेधिकीं मध्ये  
मुखमंडपादौ कृत्वा मूलबिंबसंमुखं प्रणामत्रिकं करोति, यद्भाष्यं—तत्रो निसीहियाए पत्रिसित्ता मंडवंसि जिणपुरओ । महिनिहिय-  
जाणुपाणी करेइ विहिणा पणामतियं ॥ १० ॥ तयणु हरिसुल्लसंतो कयमुहकोसो जिणिंदपडिमाणं । अवणेइ रंयणिवसियं निम्मल्लं  
लोमहत्थेणं ॥२॥ जिणगिहपमज्जणं तो करेइ कारेइ वावि अन्नेण । जिणबिंबाणं पूयं तो विहिणां कुणइ जहजोगं ॥३॥ अह पुवं  
चियं केणइ हविज्ज पूया कया सुविहवेण । तां च विशिष्टान्यपूजां सामग्र्यभावे नोत्सारयेत्, भव्यानां तद्दर्शनजन्यपुण्यानुबंधिपुण्या-  
नुबंधस्यांतरायप्रसंगात्, किंतु तं पि सविसससोहं जह होइ तहा तहा कुज्जा ॥४॥ (१९३-१९६) निम्मल्लंपि न एवं भन्नइ नि-  
म्मल्ललक्खणाभावा । भोगविणट्ठं दव्वं निम्मल्लं विति गीयत्था ॥५॥(८९) यत्तु जिनबिंबारोपितं सद्विच्छायीभूतं विगांधि संजातं  
दृश्यमानं च निःश्रीकृतया न भव्यजनमनःप्रमोदहेतुस्तन्निर्माल्यं ब्रवति बहुश्रुताः, आगमे चैवंविधं निर्माल्यमेवं च नेत्येवं निर्णयो

प्रदक्षिणायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ५३ ॥

न क्वापि दृश्यते । इतो चैव जिणाणं पुणरवि आरोवणं कुणंति जहा । वस्थाहरणाईणं जुगलियकुंडलियमाईणं ॥६॥ (९०) नैवं  
चेत्-कहमन्नह एगाए कासाईए जिणिंदपडिमाणं । अट्टसयं ल्हंता विजयाई वन्निया समए ॥७॥ (९०) एवं अंगपूजां वक्ष्यमाणां  
चाग्रपूजां कृत्वा चैत्यवंदनां चिकीर्षुर्यथोचितदिगवग्रहस्थस्तृतीयां जिनपूजाकरणव्यापारपरित्यागरूपां नैपेधिकीं करोति, पुष्पफ-  
लपानीयनैवेद्यप्रदीपप्रमुखपदार्थसार्थसमानयनादिरूपो जिनपूजाविषयोऽपि सावद्यव्यापारो देववंदनावसरे न कर्तव्य इत्यर्थः॥ तत्र  
यदुक्तं-‘करेइ विहिणा पणामतियं’ति तत्प्रणामस्वरूपनिरूपिकेयं गाथा—

अंजलिबंधो अद्धोणओ अ पंचंगओ य तिपणामा । सवत्थ वा तिवारं सिराइनमणे पणामतियं ॥९॥ (प्र०)

यद्वा भावितं-‘तिन्नि निसीहि तिन्नि य पयाहिणे’त्ति त्रिकद्वयं, संग्रति ‘तिन्नि चैव य पणामे’ति तृतीयं त्रिकं भावयन्नाह-  
‘अंजलिबंधो’ गाहा, प्रक्षेपा सोपयोगा चेति व्याख्यायते-इहैकः प्रणामोऽंजलिबंधरूपः, अयमर्थः-स्वाम्यादिदर्शनविज्ञापनादि-  
समये भक्तिकृते करद्वयायोजनतोऽंजलिकरणं, शीर्षादौ वाऽंजलेन करणं शीर्षादौ, तत्र च परिभ्रम्य विज्ञापनकृते मुखादिप्रदेशे संस्था-  
पनं, यथाऽऽगमः-“चक्रुष्वासे अंजलिपग्गहेणं” तथा ‘अंजलिमउलियग्गहत्थे तित्थयरामिमुहे सत्तट्ट पयाईं अभिगच्छइ” तथा  
‘सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी’ तथा ‘सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु जएणं विजएणं वद्धावित्ता  
एवं वयासी’इत्यादि, उपलक्षणमेतत् एकहस्तस्याप्यूर्ध्वीकरणादेः, गौरवाद्यर्हप्रतिपत्तये तथा करणस्य लोके दर्शनात्, अन्यस्त्वर्धावि-  
नतरूपः ऊर्ध्वादिस्थानस्थितैः किञ्चित् शिरोनमनं शिरःकरणादिना भूपदादिस्पर्शनं चेत्यादिस्वरूपः, उक्तं चागमे-“आलोए  
जिणपडिमाणं पणामं करेइ’ तथा बृहद्भाष्ये “ततो नमो जिणाणंति भणिय अद्धोणयं पणामं च । काउं पंचंगं वा भत्तिभर-

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ५५ ॥

निम्बरमणेण ॥१॥”ति (१९) अर्थतः । एकांगदिचतुरंगांतप्रणामानामुपलक्षणमिदं, अर्द्धानि न सर्वाणि प्रकृतांगमध्यादंगान्य-  
वनतानि यत्र प्रणामे सोऽर्द्धानत इति व्युत्पत्तेः, अत्रस्तु पंचांगः, पंच न चत्वार्यपि अंगानि जानुद्वयादीनि भूस्पृष्टानि यत्र स-  
पंचांगः, उक्तं च—“दो जाणूदुन्नि करा पंचमंगं होइ उत्तमंगं तु । संमं संपडिवाओ नेओ पंचंगपणिवाओ ॥१॥ (२३३) एते त्रयः  
प्रणामाः, सर्वत्र वा भूम्याकाशशिरःप्रभृतिषु उक्तप्रणामेषु वा प्रणामकरणकाले त्रीन् चारान् शिरःकरांजल्यादेर्नमनावर्तनादिना  
प्रणामत्रिकं भवति कर्तव्यं, विजयदेवत्, विशेषविषयस्त्वत्र एतद्द्वारावसरव्याख्यानतो बहुबहुश्रुतपर्षुपास्तेथ ज्ञातव्यः । पूर्व-  
चितविजयदेवक्तव्यता चैयं—

पृष्ठेण विजयदाराउ गंतुं तिरियं असंखदीवुदहिं । अन्नंमि जंबुदीवे वारस जोअणसहस्साइं ॥ १ ॥ ओगाहिता विजया-  
नामा तत्थत्थि रायहाणी सा । वारसहस्साइं जोयणाण आयामविक्रवंभे ॥ २ ॥ वप्पो कणगमओ तीइ सड्ढसगतीसजोयणे  
उच्चो । चउरंसो मज्झे बहिवट्ठो गोपुच्छसंठाणो ॥३॥ अद्धचेरसजोयणपिहुलो मूलेदतयद्वयं मज्झे । उवरिं तु जोयणतिगं कोसद्वं  
चेव विच्छिन्नो ॥ ४ ॥ पणधणुसयपिहुकोसड्ढदीह ऊणद्धकोसउचेहिं । पंचविहमणिमएहिं कविसीससएहिं सोहिछो ॥ ५ ॥ वाहाए  
२ सेयावरकणगभूदिया रम्मा ५ । पणुवीसंसयदारा तोरणछत्तज्झयाइजुया ॥६॥ सबोउयकुसुमफला तस्सासोगवणसत्तवणवणा ।  
चंपयवण चूयवणत्ति चउदिसिं पुच्चमाईसु ॥७॥ जे सु अ बहवे वंतरदेवा देवी सयंति निसयंति । चिदंति तुयदंती ललंति कीलंति  
य पहिद्धा ॥८॥ पोरणसुचिन्नाणं कडाण कम्माण आयस्कयाणं । पच्चणुभवंति निचं कल्लाणतरं फलविसेसं ॥ ९ ॥ तहिं पासाय-  
वडिसो बहूमज्जे अत्थि विजयदेवस्स । पवरमणिरयणकिरणोहरइयगयणयलहरिचावो ॥१०॥ सो लहुपासायवडिसएहि दिसिगेहिं

प्रणामे  
विजयदेवः

॥ ५५ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ५३ ॥

चउहि परियरिओ । सोहइ सोहम्मवडिंसउव्व दिसिवइविमाणेहिं ॥ ११ ॥ तेविहु चउरलहुपरपासायवडिसगाणुगा रम्मा । रेहंति  
चउदिसिगया ते वहिमेरू सगयदंता ॥१२॥ मणितोरणचंदणघडपंचालियछत्तझयपडागाहिं । परिमंडिया सुरूवा पासाईया य ते  
सव्वे ॥ १३ ॥ तथा ईशानदिग्धिभागे-थंभसहस्सिल्लमुहमंडवाइच्छगजुअतिदारपंचसहा । संति सुहम्मववायाभिसेयलंकारववसाया  
॥१४॥ अह उववायसहाए दूसंतरियम्मि देवसयणिजे । विजओ नामं देवो उववन्नो चिंतए एवं ॥१५॥ किं मे पुव्वं सेयं? किं वा  
पच्छा व एव करणिज्जं । हियसुहस्वमनिस्सेसाणुगामियाए भविस्सइ वा? ॥१६॥ तस्सेवं अन्नमत्थियचिंतियपत्थियमणोगयं मुणिउं ।  
संकप्पं सामाणियदेवो आगम्म विजयस्स ॥१७॥ करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु । जयविजयेणं वद्धावित्ता  
वयणमिणमुदाहु ॥१८॥ सोहम्मसहेसाणे पहु ! सिद्धाययणमत्थि तिदुवारं । नवजोयणउच्चं अद्धतेरदीहं तयद्धपिहु ॥१९॥ चिइ-  
सहि वहिपडिदारं मुहमंडवपिच्छर्मडवक्खाडा । मणिपेढिधूहपडिमा चउचिइतरुसुरुयपुक्खरिणी ॥ २० ॥ चिइमज्जे मणिपेढीइ  
देवच्छंदे जिणुस्सिया पडिमा । अट्टमयं सीहासगस्सरपलियंकसुनिमन्ना ॥ २१ ॥ भणियं च-उस्सेहमंगुलेणं अह उड्ढमसेस सत्त-  
रयणीओ । तिरिलोए पंचधणुसयसामयपडिमा पणिवयामि ॥ २२ ॥ अंकमयनहच्छी कणगनासिआ लोहियक्खजुयअंतो ।  
रिट्टमयरोमराईच्छिपत्ताराभमुहकेसा ॥ २३ ॥ छत्तधरपडिम एगा पिट्ठिं वइरपडिम चमरधर दुहओ । पुरओ दो दो नागा भूया  
जक्खा य कुंडधरा ॥२४॥ तह घंटाचंदणघडभिंगाराऽऽदरिसयाइसुपइट्टा । पुप्फाइपडलचंगेरी तिष्ठसमुग्गाइ छत्ताई ॥२५॥ जओ-  
ताओ पडिमाओ समियसोहंसहाइ संति जाओ तहा । माणवचेइअखंभे वइरसमुग्गेषु जिणमकहा ॥२६॥ ता उन्नमस्सेसिं वहूण देव-  
देवीण अच्चणिज्जाओ । गंधाईहिं सुगुणुक्कित्तणओ वंदणिज्जाओ ॥२७॥ पुप्फाईहिं पुजा सकारिजा उ वत्थमाईहिं । अंजलिवद्धा-

प्रणामे  
विजयदेवः

॥ ५६ ॥

श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संवाचार-  
विधौ  
॥ ५७ ॥

ईहि य निचं सम्माणणिजाओ ॥ २८ ॥ कल्लाणमंगलं देवचेइयं पज्जुवासणिजाओ । इयमेव पुव्व पच्छा व सेयकरणिज्जहियमाई  
॥ २९ ॥ परियणमयणंगाई सच्चं सक्कारियं भवाय भवे । भवियाण वीयराए भत्ती पुण भवविणासाय ॥ २९ ॥ तं सोउ  
हट्टतुट्ठो हरिमवसविसप्पमाणमणनयणो । विजयसुरो सयणिजा उट्ठिय निक्खमइ पुव्वेण ॥ २९ ॥ गंतुं हरयं जलमज्जणेण  
आपंतचुक्खसुइभूओ । अहिसेयसहाए अहिसित्तो सामाणियाईहिं ॥ ३७ ॥ तोऽलंकारमहाओ (गन्ता ल्हेइ सयलगायाई । मुरमीइ  
गंधकासाइए य अणुलिंपई य पुणो ॥ ३८ ॥ सरसेणं गोसीसेण तहा नियंसेइ देवदूमज्जुगं । हारद्धहारदित्तो तत्तो ववमायसभमेइ ॥  
३९ ॥ रिट्ठ०) मयक्खरकंपियपुत्थयरयणंमि रूपमयपत्ता । तवणिज्जमओ दीरो गंठी नाणामणिमई य ॥ ४० ॥ वेरुलियं मसि-  
भायणु तवणिजा संकला मसी रिट्ठा । रिट्ठामय छंदणं रययलेहिणी धम्मियं सत्थं ॥ ४१ ॥ तो धम्मियववहारं गहिउं गच्छेइ  
नंदपुक्खरिणि । पक्खालिय करपाए गिण्हइ पउमुप्पलाइं तहिं ॥ ३२ ॥ तह एगं भिंगारं रूपमयं विमलसलिलपडिपुन्नं । गहिउं  
देवपरिबुडो सिद्धाययणंमि गच्छेइ ॥ ३३ ॥ तथाहि-तए णं से विजए देवे चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं चउहिं अग्गमहिमीहिं  
सपरिवाराहिं तीहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिं वईहिं सोलसहिं आपरक्खदेवसाहस्सीहिं अनेहि य वहुहिं विज-  
यारापहाणीवासीहिं वाणमंतरेहिं देवेहिं देवीहि य सद्धिं संपरिबुडे मविइठीए सबजुईए सबबलेणं सबममुदएणं सवादरेणं सबवि-  
भूईए सबसंभमेणं सबपुष्पगंधमल्लालंकारेणं सच्चतुट्ठियसदसंनिनाएणं महयाए इइठीए महया बलेणं महयाए जुईए महया बलेणं  
महया ममुदएणं महया वरतुट्ठियजमगसमगप्पवाइएणं संखपणवपडहगभेदीश्ललरिखरमुहिहुइक्कमुरवमुदं गदुंदुहिणिग्घोसणाइयरवेणं  
जेणेव सिद्धाययणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छइत्ता मिद्धाययणं तिपयाहिणीकरेमाणे २ पुरच्छिमिल्लेणं दारेण अणुपविमइ २ ता जेणेव

प्रणामे  
विजयदेवः

॥ ५७ ॥

देवच्छंदए जेणेव जिणपडिमाओ तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवा०२ सूत्रं, अत्र वृत्तिः-नंदापुष्करिणीं गच्छति, तत्र पद्मादीनि गृह्णाति ।  
सांतःपुरः ततो देवपरिवृतः सिद्धायतनप्रागच्छति, त्रिः प्रदक्षिणीकरोति, ततः पूर्वद्वारेण प्रविशति, आलोके प्रणामं करोतीत्या-  
दि देवकर्म निगदसिद्धं । तच्चैवं अंगपूजादि विधेयं । आलोए जिणपडिमाणं पणामं करेइ२त्ता लोमहत्थएणं परामुसइ लोमहत्थगं  
गेण्हइ जिणपडिमाओ लोमहत्थएणं पमज्जइ सुरहिणा गंधोदएणं ण्हावेइ सुद्धोदएणं ण्हावेइ ॥ अत्र यथा निर्माल्यापनयनानंतरं  
प्रथममंगप्रक्षालनं पूजादि च स्नानानंतरं पुनः अंगप्रक्षालनादि विधीयते तथा स्नानपूर्वं कुसुमांजलिप्रक्षेपणाद्यपि च ज्ञेयं, दिच्वाए  
सुरहीए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ२ सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपइ सव्वजिणपडिमाणं अहयाइं सेयाइं दिच्वाइं देव-  
दूसजुयलाइं नियंसेइ२ अग्गेहिं वरेहि य गंधेहिं मल्लेहि य अच्चेइ २ पुप्फारुहणं मल्लारुहणं गंधारुहणं वण्णारुहणं चुण्णारुहणं  
बत्थारुहणं आभरणारुहणं करेइ, आसत्तोसत्तविउलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं करेइ२, अथाग्रपूजाविधित्तया अच्छेहिं सण्हेहिं  
सेएहिं रयणामएहिं अच्छरसातंदुलेहिं जिणपडिमाणं पुरओ अट्टट्टमंगलए आलिहइ, तंजहा-सोत्थिय सिरिवच्छ नंदियावत्त  
वट्टमाण भदासण वरकलस मच्छ दप्पण, इत्थ गाहा-मंगलसुत्थियसिरिवच्छनंदियावत्तवट्टमाणा य । भदासण वरकलसा मच्छ  
दप्पणइयऽट्टट्ट ॥१॥ अट्टट्टमंगलए आलिहिता कयग्गहगहियकरयलपब्भट्टविप्पमुक्केणं दसद्ववण्णेणं कुमुमेणं मुक्कपुप्फपुंजोवयार-  
कलियं करेइ२ चंदप्पहवयरवेरुलियविमलदंडं कंचणमणिरयणभत्तिचित्तं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघंतगंधुद्धुयामिरामं  
भाणविद्धं व धूमवट्टिं विणिमुयंतं वेरुलियमयं कडुच्छुयं पगहिता पयत्तेण धूवं दाऊण जिणवराणं । भावपूजाविधित्तया अट्ट-  
सयविसुद्धगंधजुत्तेहिं महावित्तेहिं अत्थजुत्तेहिं य अपुणरुत्तेहिं संधुणइ२, अत्र वृत्तिः-अष्टशतेन वृत्तानां स्तौति शुद्धग्रंथयुक्तानां

श्रीदे० चै-  
त्यश्राधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ५९ ॥

संगतार्थानामपुनरुक्तानां तथाविधदेवलब्धिप्रभावतः, तथाहि--“अस्ताशर्मावृत्तसुमहिमावीरितस्वांतजन्माबाधासिंधुप्रतरणसहा-  
वासनावस्थितानाम् । अप्येको द्वौ किमुत बहवो वाऽनिशं ध्येयभावं, गाते येषां जिनवरवृषा वृद्धये किं न तेषां ? ॥ १ ॥ शर्मन्  
शर्मं वृत्तं प्राप्तं महिमा जन्मन् जन्मवाधा विकल्पाद्या वासना आसना ते आते अन्ते वृषन् इंद्र वृष वृषभ वृद्धि ऋद्धि ।  
दूरापास्तसमस्तकुत्सनतमावीताखिलांतरजावामोह्लासविलासशोभनमहावृद्धयग्रिमौकारम् । स्फूर्जद्भाष्यमामिरामनयनिर्दग्धाशुभे-  
धावरं, गातामेक उभौ समे जिनवृषा वृद्धं प्रसादं मम ॥ २ ॥ पञ्चबंधः ॥ तमस् तमप् प्रत्ययः वीत ईड च गतौ ईत अंतर्मध्ये  
रजस् रज वाम आम महस् मह ओकस् ओक वरं प्रधानं अरं शीघ्रं भास् भा वृषभवदभिरामो नयो-गतिर्येषां ते च ते निर्दग्धा-  
शुभेधाथ एधस् एध वलं अलं ता आतां अंतां वृद्धं ऋद्धं ॥ संप्राप्तत्रहसीमावतनुसुमुखमावर्यध्यद्वैतधामावीक्ष्यातीताप्तहेमावितत-  
दुरितहावृष्टवामावितारं । एको द्वौ वापि सर्वे प्रतिदिनमरिहा वाञ्छितश्रेयसे द्राक्, प्रत्तश्रीललामावरमिह भविनामीशतान्नप्र-  
काणां ॥३॥ सीमन् सीमा वत नु अतनु सुमुखमा सुमुखमास मुखचंद्र मुखमा मुखश्रीः वर्यश्रीश्चासावद्वैतधामा च अर्यमावत्  
अद्वैतधामा वीक्ष्यातीतं-चिंतातिक्रान्तं आप्तं हेमन् हेम येभ्यः वितत विस्तृत इतत गतश्च दुरितं हंति क्किपूडप्रत्ययौ वृष्ट ऋष्ट  
गत वामन् वाम वितारं विशेषतारं इतारं-गतारित्रजं अरिहन् अरिह वाञ्छित आञ्छित विस्तृतललाम ईश इवाचरतु ईशतात्  
ईशाविचाचरतां बहुत्वे ईशक् ऐश्वर्ये पंचमी अंतां नम्रं सरसं ॥ इत्येको द्वौ समे वा त्रिमिरभियतिभिः काव्यराजैः  
क्रियादिश्लेषैः श्रीधर्मघोषैरभिनुतमहिमावर्यभावप्रकाशैः । त्रिच्छत्रीदंडकैवांतररिपुविजयन्यस्तविश्वत्रयांतःकीर्तिस्तंभैरिव श्रीजि-  
नवरवृषभावीक्ष्याध्यासतां मां ॥ ४ ॥ शोभात्मकघोषैः वर्यभाव अर्यभाव स्वामित्व इति काव्यानां विशेषणानि, कर्तृपक्षे तु

प्रणामे  
विजयदेवः

॥ ५९ ॥



त्रिभिः मनःवचःकायैः यतिस्वामिभिः कविगणराजैः क्रियादिपरायणैर्धर्मघोषैर्नाम्ना वा इव जिनवरवृषेपु-प्रधानकेवलिष्वपि मध्ये भासते जिनवरवृषभा वीक्षा ईक्षा अधिआङ् 'अपी असी गत्यादानयोश्च' अस् एकत्वे आत्मनेपदतां द्वित्वे परस्मैपदताम् बहुत्वे आसक् उपवेशने पंचमी अंताम्" ॥ एवमादिभिः संयुजिता सत्तद्वृषयाइं ओसरइ वामं जाणुं अंचेइ २ दाहिणं जाणुं धरणि- तलंसि निहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धानं धगणितलंसि निवाडेइ २ । एवं चतुरंगप्रणामं कृत्वा अंजलिबंधप्रणामार्थं आह-ईसिं पच्चुन्नमइ २ कडगतुडियथंमिआओ भुआओ पडिसाहरइ २त्ता करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-एवं अंजलिबंधादिना भक्तिविशेषं सत्यापयित्वा पश्चादेवं ते समयसुप्रसिद्धविधिना शक्रस्तवं पठति, तत्र चायं महानिशीथोक्तो विधिः—भुवणिकगुरुजिणिंदपडिमासुविणिवेसियनयणमाणसेण विहियकरकमलंजलिणा तसवीयहरियाइरहियजंतुमि वंदमाणेणं जाव चेइए वंदियव्वे सकत्थवाइयं चेइयवंदणत्ति-नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं नमो जिणाणं जिअभयाणंति कट्टु वंदइ नमंसइ' अत्र वृत्तिः-ततो विधिना प्रणामं कुर्वन् प्रणिपातदंडकं पठति, तद्यथा-नमोत्थुणं अरिहंताण-मित्यादि यावन्नमो जिणाणं जियभयाणं' दंडकार्थश्चैत्यवंदनविवरणाल्ललितविस्तराभिधानादवसेयः, वंदइ नमंसइत्ति वंदते ताः प्रतिमाश्चैत्यवंदनविधिना प्रसिद्धेन नमस्करोति पश्चात् प्रणिधानादियोगेन इत्येके, अन्ये तु विरतिमतामेव प्रसिद्धश्चैत्यवंदनविधिः, अन्येषां तु तथाभ्युपगमपुरस्सरकायव्युत्सर्गासिद्धेरिति वंदते सामान्येन नमस्करोति आशयवृद्धेर्व्युत्थाननमस्कारेणेति, तच्चमत्र भगवंतः परमर्षयः केवलिनो विदंतीति । वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव सिद्धाययणस्स बहुमज्झदेसभाए तेणेव उवागच्छइ २त्ता दिवाए उदगधाराए अब्भुक्खेइ २ सरसेणं गोसीसचंद्रणेणं पंचंगुलितलमंडलं आलिहइ चच्चए दलयइ २ कयग्गहग्गहियं करयलपब्भट्टवि-

श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संधाचार-  
विधौ  
॥ ६१ ॥

पुष्पकेणं दसद्ववण्णेणं कुसुमेणं मुक्कपुष्पपुंजोवयारकलियं करेइ२ धूवं दलयइ२ । अह दाहिणदारेणं निगंतु चेइधूहपच्छिमओ । जिणपडिमाआलोए करइ पणामाइ पुबविही ॥ ४४ ॥ तथाहि-नमणपमज्जणण्हवणंगल्लइअणुलेहवासपरिहाणं । फुल्लहरपुष्पपगरो मंगल्लथवाइ बूहणया । ४५ ॥ एवं चिय उत्तरपुबदाहिणे पडिम अच्चिउं जाइ । सिद्धाययणं काउं पयाहिणं उत्तरदुवारं ॥ ४६ ॥ पुवं व पडिमचउगं तत्थऽचिय गंतु पुबदारंमि । दाहिणपच्छिमउत्तरपुबठिआ अच्चए पडिमा ॥ ४७ ॥ तो गंतु सुहम्मसइं जिणसकहा दंसणंमि पणमित्ता । उग्घाडित्तु समुग्गे पमज्जए लोमहत्थेणं ॥ ४८ ॥ सुरहिजलेणिगवीसं वारा पक्खालियाणुलिपित्ता । गोसीस-चंदणेणं तो कुसुमाईहिं अच्चेइ ॥ ४९ ॥ तो दारपडिमपूयं सहासु पंचसुवि करइ पुवं व । दारचणाइ सेसं तइओवंगाओ नायवं ॥ ५० ॥ इय तिपयाहिणतिपणामपुबकूयतिपतिमपूयवंदगओ । विजयसुरो सुरसम्मं माणंतो विहरइ सुहेण ॥ ५१ ॥ शुत्वेति वृत्तं विजयामरस्य, भो भव्यलोका ! जिनचैत्यगेहे । प्रदक्षिणानां त्रितयं विधाय, त्रिः पूजनाः त्रिः प्रणमेत नित्यम् ॥ ५२ ॥ इति प्रदक्षिणात्रयपूजात्रयसहिते प्रणामत्रिके विजयदेवकथा ॥ उक्तं 'तिन्नि निसिही१ तिन्नि य पयाहिणा२ तिन्नि चेव य पणा-मे३'ति त्रिकत्रयम् । संप्रति चतुर्थं पूजात्रिकं सकलगाथयाऽनेकधा भावयन्नाह—

अंगगभाचभेया पुष्पाहारत्थुईहिं पूयतिगं । पंचोवयारअट्टोवयारसधोवयारा वा ॥ १० ॥

अंगं च-जिनप्रतिमांगं अग्रं च-तत्पुरो भागो भावश्च-चैत्यवंदनागोचर आत्मनः परिणामविशेषः, कैः कृत्वेत्याह-पुष्पाहार-स्तुतिभिर्यथाक्रममिति गम्यं, यदुक्तं बृहद्भाष्ये-अंगंमि पूष्पपूया आमिसपूया जिणगगओ वीया । तइया थुत्तगया जा तासि सरूवं इमं होइ ॥ १॥" चैत्यवंदनाचूर्णाविष्युक्तं-"तिविहा पूआ-पुष्पेहिं नेवेजेहिं थुईहि य,सेसभेया इत्थ चेव पविसंतित्ति", उत्तरा-

अंगादि-  
पूजात्रयं

॥ ६१ ॥

ध्ययनेषु पुनरेवं-तिथयरा भगवंतो, तस्स चैव भक्ती कायवा, सा पूआवंदणाईहिं हवइ । पूयंपि पुष्कामिसधुइपडिवत्तिभेयं चउविहंपि जहामत्तीए कुञ्ज'त्ति, ललितविस्तरादौ तु "पुष्पाभिपस्तोत्रप्रतिपूजानां यथोत्तरं प्राधान्य"मिति ॥ अत्रायं भावार्थः-पुष्पैः जात्यादिभिः प्रथमा अंगपूजा भवति, इह पुष्पग्रहणमादिमध्यावसानेषु पुष्पांजलिपुष्पपूजापुष्पप्रकरादिसमये सर्वत्र बहूपयोगिवहुशोभित्वाद्, अन्यथा पत्रफलजलगंधवस्त्राभरणाद्यप्यंगपूजायामुपयुज्यते, ततश्चात्र पुष्पेत्युपलक्षणं, तेन निर्माल्यापनयनमार्जनांगप्रक्षालनाद्यनंतरं नित्यं विशेषतश्च पर्वसु कुसुमांजलिप्रक्षेपादिपूर्वं धुनीकर्पूरजलादिचंदनकुंकुमादिकल्पितजलप्रभृतिसद्गृहजेतरगंधोदकादिभिः स्नपनं सुरमिसुकुमालवस्त्रेणांगलूलनं घनसारकुंकुमादिभिर्विलेपनांग्यादिविधानं गोरोचनामृगमदादिभिस्तिलकादिकरणं निःसपत्नरत्नसुवर्णमुक्ताभरणादिभिरलंकरणं विचित्रवस्त्रैः परिधापनं ग्रंथिमवेष्टिमपूरिमसंघातिमविधानचतुर्विधप्रधानाम्लानमाल्यादिभिर्मालाटोडरमुगुटाशिरस्कपुष्पगृहादिविरचनं जिनहस्ते नालिकेरबीजपूरपूगीफलनागवल्लीपत्रादिमोचनं धूपोत्क्षेपसुगंधवासप्रक्षेपाद्यपि च सर्वमंगपूजायां भवति, उक्तं चागमे-जिणपडिमाओ लोमहत्थएण पमञ्जइ इत्यादि जाव विउलवड्वग्घारियमल्लदामकलावं करेइ" तथा बृहद्भाष्ये-"ण्हवणविलेवणआहरणवत्थफलगंधधूवपुष्फेहिं । कीरइ जिणंगपूआ तत्थ विही एस नायवा ॥१॥ वत्थेण वंधिऊणं नासं अहवा जहासमाहीए । वज्जेयव्वं तु तथा देहंमिवि कंडुयणमाई ॥ २ ॥" अन्यत्राप्युक्तं-"कायकंडूयणं वज्जे, तहा खेलविगिचणं । धुइधुत्तभणणं चैव, पूयंतो जगवंधुणो ॥३॥" उचियत्तं पूयाए विसेमकरणं तु मूलविंवस्स । जं पडइ तत्थ पढमं जणस्स दिट्ठी सह मणेणं ॥४॥ (१९७) शिष्यः-पूआवंदणमाई काउणेगस्स सेसकरणंमि । नायगसेवगभावो होइ कओ लोयनाहाणं ॥५॥ एगस्सायरसारा कीरइ पूआ वरेसि थोवयरी । एमावि इह अवन्ना लक्खिअइ निउणबुद्धीहिं ॥६॥ (३९-४०) आचार्यः-

नायगसेवगबुद्धी न होइ एएसु जाणगजणस्स । पिच्छंतस्स समारणं परिवारं पाडिहेराई ॥७॥ (५०) ववहारो पुण पढमं पइट्ठिओ मूलनायगो एसो । अवणिज्जइ सेसाणं नायगभावो न उण तेणं ॥८॥ (५१) वंदणपूयणवल्लिढोयणेसु एगस्स कीरमाणेसु । आसायणा न दिट्ठा उचियपवित्तस्स पुरिसस्स ॥९॥ (५२) जह मिम्मयपडिमाणं पूया पुप्फाइएहिं खलु उचिया । कणगाइनिम्मियाणं उचियतमा मज्जणाईवि ॥१०॥ (५४) अविय-कल्लाणगाइकज्जा एगस्स विसेसपूअकरणेऽवि । नावन्नापरिणामो जह धम्मिजणस्स सेसेसु ॥११॥ (५३) उचियपवित्तिं एवं जहा कुणंतस्स होइ नावन्ना । तह मूलविंबपूआविसेसकरणेऽवि नन्नत्थ ॥ १२ ॥ (भा.५५) किंच-जिणभवणविंबपूआ कीरंति जिणाण नो कए किन्तु । 'सुहभावणानिमित्तं बुहाण इयराण बोहत्थं ॥१३॥ (१४२) जओ-चेइयहरेण केई पसंतरूवेण केइ विंबेण । पूआइसयाकेई अन्ने बुज्झंति उवएसा ॥१४॥ (१४३) इति पुष्पाद्यैः प्रथमा अंगपूजा ॥

अथ द्वितीया अग्रपूजा भाव्यते-सा च प्रधानाहारेण आमिपापरपर्यायेण, यद्गौडः-उत्कोचे पलले न स्त्री, आमिपं भोज्यवस्तुनि' । तेनाशनादिना चतुर्विधेन भवति, तथाहि-इह होइ असणपूया वरखज्जगमोयगाइभक्खेहिं १ । दुद्धदहिपाणियाइ-भायणेहिं२ तह ओयणाईहिं३ ॥१॥ अत्र निशीथचूर्णिः 'संप्रति राजा रहग्गओ य विविहफलखज्जगभुज्जगे य कवड्ढगवत्थमाई उक्किरणे करेइ' । अन्यत्रोक्तं-"नाणाफलेहिं व थएहि निचं"२ तथा वसुदेवहिंडौ मृगत्राह्मणप्रस्तावे "कयाइ य देवकजे सज्जियं भोयणं,साहवो उवागया,तिण्हवि जणाण समवाओ पडिलाभेमो"त्ति, कल्पे तु-"साहम्मिओ न सत्था तस्स कयं तेण कप्पइ जईणं । जं पुण पडिमाण कए तस्स कहा का अजीवत्ता? ॥१॥ संवट्टिमेहपुप्फा सत्थनिमित्तं कया जइ जईणं । न हु लब्भइ पडिसेहं किं पुण पडिमट्टमारद्धं? ॥२॥" तृतीयखण्डे तु हरिकूटपर्वतप्रस्तावे-"विविहभक्खपाणगपडिपुन्ना निवेइया विचित्ता च-

ली”ति, तथा निशीथे तु ‘पभावर्ये देवीए सवंपि बलिमाइं काउं भणिअं-देवाहिदेवो बद्धमाणस्सामी तस्स पडिमा कीरउत्ति वाहिओ कुहाडो, दुहा जायं, पिच्छइ सव्वालंकारविभूसियं भयवओ पडिमं” तथा निशीथपीठे “बलित्ति असिवोवसमननिमित्तं कूरो किजइ” आवश्यके तु-“कीरइ बलित्ति तं आढगं तंदुलाणं सिद्धं, तओ जस्स मत्थए सित्थं बुज्झइ तस्स पुव्वुप्पन्नो वाही उवसमइ”इत्यादि । “जलपूया जलभायणधारादाणाइ २ खाइमच्चलिया । फलदाणा अक्खयसरिसवाइणा मंगलादिविही ॥३॥” तृतीयोपांगे-“जेणेव सिद्धाययणस्स बहुमज्झदेसभाए तेणेव उवागच्छइ २ दिव्वाए उदगधाराए अब्भुक्खेइ”अन्यत्र तु “पाणिपपुन्नेहि य भायणेहिं” वसुदेवहिंडौ तु “विविहभक्खपाणगपडिपुन्ना निवेइया विचित्ता बली” २ । फलेष्वेवमा-  
वश्यकचूर्णिः “पत्तपुष्पफलवीयमल्लगंधवण्णजाव चुण्णवासं वासंति”ति, निशीथे “रहग्गओ विविहफलखज्जग ” इत्यादि,  
बृहद्भाष्ये त्वेवम्-“जो पंचवन्नसत्थियबहुविहफलसलिलभक्खदीवाइ । उवहारो जिणपुरओ कीरइ नेवज्जपूआ सा (आमि-  
ससपज्जा) ॥३॥ (२०४) साइमपूयाइ पुणो नेयं पूगफलपत्तगुलपमुहं । पंचंगुलितललिहणाइ पुष्पपगराइ दीवाइ ॥३॥ प्रदीपारा-  
त्रिकनृत्याद्युपलक्षणमिदं, उक्तं च भाष्ये-“गंधव्वनट्टवाइयलवणजलारत्तयाइ दीवाइ । जं किच्चं तं सवंपि ओयरइ अग्गपूआए  
(आमिमपूयाए चिय सव्वंपि तयं समोयरइ) ॥१॥ (२०५) तच्चागमे-“सरसेणं गोसीसचंदणेणं पंचंगुलितलेणं मंडलं आलिहइ २  
चच्चए दलइ २ कयग्गाहगहियकरयलपन्नभट्टविप्पमुक्केणं दसद्धवण्णेणं कुसुमेणं मुक्कपुष्पपुंजोवयारकलियं करेइ २ धूवं दलयइ २”  
यथा चात्राग्रपूजायां पुष्पपत्रगंधाद्युपयुज्यते तथाऽग्रपूजायामाहारोऽपि, तथा अशने दुग्धदध्यादि, पाने जलसुरसादि, स्वाद्ये फला-  
घक्षतादि, स्वाद्ये पत्रपूगकर्पूरादि, इति भाविता द्वितीया अग्रपूजा ।

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ६५ ॥

अथ तृतीया भावपूजा, सा च स्तुतिमिलोकोत्तरसद्भूततीर्थकरगुणगणवर्णनपरामिर्वाक्यपद्धतिभिर्भवति, आह च—“तइया उ  
भावपूया ठाउं चियवंदणोचिए देसे । जहसत्तिचित्तधुइधुत्तमाइणा देववंदणयं ॥१॥”ति । तथा निशीथे—‘सो उ गंधारमावओ थयधुईहिं  
धुणंतो तत्थ गिरिगुहाए अहोरत्तं निवसिओ” तथा वसुदेवहिंडौ ‘कयाइं च भाणुसिद्धी सह धरणीए जिणपूयं काऊण पञ्जालिएसु  
दीवेसु पोसहिओ दम्भसंधारगगओ थयधुइमंगलपरायणो चिट्ठइ, भयवं च गयणचारी अणगारो चारुनामा उवइओ, कयजिणसंथवो  
कयकायविउस्सग्गो य आसीणो”, तथा “चारुदत्तो उवगओ, अंगमंदिरं पविट्ठो, जिणाययणचेडेहिं उवणीयाणि पुप्फाईणि, कयं  
अच्चणं पडिमाणं, धुईहिं वंदणं कयं, निग्गओ जिणभवणाउत्ति, वसुदेवो पच्चूसे कयसमत्तसावयसामाइयाइनियमो गहियपच्चक्खाणो  
कयकाउस्मग्गधुइवंदणो उइण्णावसरे कुसुमुच्चयं काउं” तत्तृतीयखंडे “खयरवहूसंसत्तधुइसयगुम्मंततीपयाहिणभमंतसिरिसंकुलाए  
पासिया महिम”ति, तथा ‘गया मो सिद्धाययणं, धुईहिं वंदणं कयं’इत्यादि, तथाऽन्यत्र “वंदणं(दइ)उभओ कालंपि चेइआइं थय-  
त्धुईपरमो” एवं अनेकेषु स्थानेषु श्रावकादिभिरपि कायोत्सर्गस्तुत्याद्यैश्चैत्यवंदना कृतेत्युक्तं तत्केन लिख्यते इति भाविता तृतीया  
भावपूजापि । चैत्यथवा प्रकारांतरेण पंचाष्टसर्वोपचाररूपेण३ पूजात्रिकं भवति इतिशेषः, तथा च बृहद्भाष्यं-पंचोवयारजुत्ता पूया  
अट्टोवयारकलिया य । रिद्धिविसेसेण पुणो नेया सवोवयारावि ॥१॥(२०९) श्रीहरिभद्रसूरिभिरपि पूजापोडशके भणितं-पंचोप-  
चारयुक्ता काचिच्चाष्टोपचारयुक्ता स्यात् । ऋद्धिविशेषादन्या प्रोक्ता सर्वोपचारेति ॥१॥ तत्रैका पंचोपचारा, सा च प्रायः अंगपूजावि-  
पयेत्येकात्मिका, एषा च श्रीउमास्वातिवाचकेन प्रशमरत्यामेवमुक्ता-चैत्यायतनप्रस्थापनानि कृत्वा च शक्तितः प्रयतः । पूजाश्च  
गंधमाल्याधिवासधूपप्रदीपाद्यैः ॥१॥ अधिवामो गंधमाल्यादिभिः संस्कारविशेषः, दृष्टा चागमेऽधिवासपूजा युगपदेवं मिलनतो

पूजात्रिक-  
विचारः

॥ ६५ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ६६ ॥

गधमाल्यास्त्रहणादिभ्यः पृथग्, तथा च सूर्याभदेवादिवक्तव्यतादिपूक्तम्—“अग्नेहि वरेहि य गंधेहि मल्लेहि अचेइ”ति, अन्ये त्वेव-  
माहुः ‘तहियं पंचुवयारा कुसुमकखयगधधूवदीवेहि’ति(२१०)तथाऽन्यत्र ‘पुप्फेहि सुगंवएहिं, दिव्वेहिं य अकखएहि’ति, द्वितीयाऽष्टो-  
पचारा, सा चागाग्रपूजागोचरेतिद्विरूपा, एषा चैवमुच्यते—कुसुमकखयगंधपईवधूयनेवेज्जफलजलेहिं पुणो । अट्टविहकम्ममहणी अदट्ट-  
वयारा हवइ पूया ॥१॥” पूजापंचाशकेऽपि “वरगंधधूपअकखेहिं पपर कुसुमेहिं पवरदीवेहिं । नेवेज्जफलजलेहिं य जिणपूया अट्टहा  
होइ ॥१॥निच्चंचिय सपुन्ना जइविहु एसा न तीरण काउं । तहयि अणुचिड्डियवा अकखयदीमाइदाणेण ॥२॥ स्नपनादिभेदानंतरेण यत्पं-  
चादिपूजाभेदानामेवमुपन्यासस्तत् पूर्वपूजितादिषु मृन्मयादिर्विवेषु च सध्यादिषु च प्रायः पंचपूजामद्भाभवावितया सर्वदा सर्वोप-  
योगित्वादिति ज्ञापनार्थं, सर्वोपचारपूजाया तु सर्वसगृहीतत्वाच्च, उक्ता च बलिप्रदीपादिका पूजा छेदग्रंथेऽपि, तथा च महानि  
शीये तृतीयाध्ययने पंचमंगलमहाश्रुतस्कंधव्याख्यानप्रस्तावे श्रीमन्महावीरभणितानुवादत उक्तं श्रीवज्रस्वामिपादैः “जहा किल  
अरहंताणं भगवताणं गंधमल्लपईवसमज्जणोत्रलेणविचित्तबलित्थधूवाइएहिं पूयासक्कारेहिं पइदिणमब्भच्चणं पकुवाणा तित्थुस्स  
प्पणं करेमो”ति, प्रदत्तश्च प्रदीपो जिनप्रतिमा पुरतो भानुश्रेष्ठिना, उक्तं चैतद् वसुदेवहिंडौ प्रथमखंडे तृतीयलंभे—‘कयाइं च  
सिद्धी मह घरणीए जिणपूयं काऊण पज्जालिएसु दीवेसु पोमहिओ दब्भसथारयगओ थयथुइमगलपरायणो चिड्डइ’ एतत्कथा चैत्यस्तव-  
दंडकव्याख्यावसरे दर्शयिष्यते, तथा सीमणगपर्वते विद्याधरैर्जिनभवनेषु प्रदीपाः प्रज्वालिताः, एतत्तु तद्द्वितीयखंडवैह्यमालालंभे  
भणितं, ‘तओ अत्थमिए दिणयरे उद्दायतमइत्थियाए सझाए अग्गाहियाउ खयरेहिं जिणाययणसंसियाओ दीवपतीओ, दीवसय  
सहस्सेहिं पज्जलिओ इव महीहरो सदीपिउं पयत्तो” तृतीया सर्वोपचारा, सा चागाग्रभावपूजात्मिकेति त्रिस्रभागा, आह च—“सवो

पूजात्रिक-  
विचारः

॥ ६६ ॥

ययारपूया ण्वयणचणवत्थभूसणाईहि । फलबलिदीवाईनट्टगीयआरत्तियाईहिं ॥१॥ पंचवस्तुकेऽपि “विविहनिवेयणआरत्तिगाइधूव-  
यमाइयं विहिणा । जहमत्ति गीयवाईयनचणदाणाइयं चैव ॥२॥ आरात्रिकादिकं पुनः प्रतिष्ठाप्राभृतादिकेपूक्तम्, भणितं चैतत्  
पादलिसेन प्रतिष्ठाप्राभृतादुद्धृत्य कृतायां निजप्रतिष्ठापद्धतरै, यथा भणितमागमे-मंगलदीवाइ तथा घयगुडपुण्णा तहेक्खुभ-  
क्खिणिया । वरवण्णअक्खयविचित्तसोहिया तह य कायवा ॥१॥ ओसहिफलवत्थसुवण्णरयणमुत्ताइयाइं विविहाइं । अन्नाइवि गरुय-  
सुदंसणाइं दिव्वाइं विमलाइं ॥२॥ चित्तबलिगंधमल्ला विचित्तकुसुमाइ चित्तवासा य । विविहाइं धन्नाइं सुहाइं सुरुवाइं उवणेह । ३॥  
आरत्तियमवयारण मंगलदीवं च निम्मिउं पच्छा । चउनारीहिवि उम्मत्थणं व विहिणा उ कायवं ॥४॥ अथ श्रीनेमिनाथजन्मोद्देशके  
महापुरुषचरित्रेऽप्युक्तम्-“तो देविंदेहि बलिं काउं आरत्तियं भमाडेवि । वंदित्ता जयनाहं पिच्छणयाइं च कारेन्ति ॥५॥ एव-  
मन्यान्यपि बृहद्भाष्याद्युक्तानि प्रागुक्तानि बलिआरात्रिकादिप्रतिपादनपराणि ज्ञातव्यानि, आसां च पुष्पामिवादिपूजाभ्यो भेदे-  
नोपन्यासः एकद्वित्रिपूजारूपत्वाद्, उक्ताश्चैता बृहद्भाष्ये-—पंचोवयारजुत्ता पूआ अट्टोवयारकलिया य । रिद्धिविसेसेण पुणो  
नेया सवोवयारावि ॥ १ ॥ पूजापोडशकेऽपि-पंचोपचारयुक्ता काचिच्चाष्टोपचारयुक्ता स्यात् । ऋद्धिविशेषादन्या प्रोक्ता सर्वाप-  
चारापि ॥ १ ॥ यच्चान्यत्र ‘सयमाणयणे पढमा वीआ आगावणेण अन्नेहिं । तइया मणसा संपाडणेण वरपुष्फमाईणं ॥१॥ति  
पूजात्रिकमुक्तं तत्कायवाचानोयोगितया करणकारणानुमतिभेदतया च सर्वपूजांगत्वेन सर्वपूजांतर्गतमिति पृथक्त्रिकतया न भा-  
वितं । एवं ‘विग्धोरसामिगेगा अन्धुदयपसाहिणी भवे वीया । निव्वुइकरणी तइया फलया उ जहत्थनामेहिं ॥१॥’ इत्यपि त्रिकं  
अंगादिपूजाफलतया पूजाकार्यत्वेन तदभिन्नत्वात्, कार्यकारणयोः कथंचिदभेदाभ्युपगमात्, एवं स्नपनपुष्पारूढणादयोऽपि पूजा-



श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥ ६८ ॥

भेदास्तत्रांगपूजादौ तथा तथांतर्गता भावनीयाः, न पृथग् गणनीयाः, अपरिमितत्वेन पूजाप्रकाराणां यथोक्तपूजासंख्याविघात-  
प्रसक्तेः, तथा सत्यनवस्थापत्तेः, यदृच्छया सर्वस्यापि पूजाभेदस्य कल्पनात्, ततश्च निह्ववमार्गानुयायित्वप्रसक्तेः, उक्तं च सूत्रकृ-  
तांगनिर्युक्तौ-आयंरियपरंपरणेण आगयं जो य अप्प(छेय)बुद्धीए । कोवेइ छेयवाई जमालिनासं स नासिहिई॥१॥ परिभावनीयमत्र  
कदाग्रहविरहेण, यतः-‘जं बहु खायं दीसइ नय दीसइ कहवि भासियं सुत्ते । (बहुसूत्रस्य विच्छेदात्, संक्षिप्तत्वाच्च)पडिसेहोऽवि न दीसइ  
माणंचिय तत्थ गीयाणं ॥१॥ आवस्सयकप्पनिसीहउत्तरज्झयणत्तुण्णिमाईसु । जह भणिया जिणपूया फलबलिनेवेज्जभक्त्वाई ॥१॥ तह  
पयडेमि वसुदेवहिंढीसोलसमलंभभणिर्यमि । मिगमाहणनायंमि पयासियाऽऽहारपूयफले ॥२॥ तथाहि-इह भरहे वेयइहे उत्तरसेटीए  
अत्थि वरनयरं । सिरिगयणवच्छहं वच्छहं जममरणवि सिरीए ॥३॥ तत्थोभयसेटीगयविजाहरनियरनमिगकमकमलो । पालइ रजं  
विज्जाउग्घाडो विज्जुदाढनिवो ॥ ४ ॥ सो अन्नयाऽणगारं अवरविदेहाउ पडिमपवन्नं । विज्जाबलेण आणित्तु इत्थ विज्जाहरे  
भणइ ॥५॥ भो उप्पाउव्व इमो वड्ढंतो णे भविस्सइ वहाय । तो सिग्घमविग्घमिमं हणेह तं ते सुणेऊणं ॥६॥ ऊणहिया तव्व-  
हणत्थमुट्ठिया विज्जविहियनियरक्त्वा । उग्गुग्गीरियखग्गरइवग्गाहत्था जमगसमगं ॥ ७ ॥ इत्तो जंतो नंतुं अट्ठावयपव्वए जिणे  
धरणो । ते तदवत्थे दट्ठुं दट्ठुट्ठो भणइ इय रुट्ठो ॥८॥ रे पाविट्ठा दुट्ठा नट्ठा रिसिघायगा सरह इट्ठं । तज्जत्तेणं तेणं त्तिविज्ज-  
रहिया इमे विहिया ॥९॥ विजाहरणुब्भवमनुरुद्धकंठुट्ठगग्गरगिरिह्हा । विणएण विन्नवंती धरणं सरणं भणंता ते ॥१०॥ सामि ! इमं  
विज्जुदाढमासणा ववसिया अयाणंता । ता णे स्वमह पसीयह कहह मुणी नाह ! को एसो ? ॥११॥ तो सो पण्डुरोसो धरणिदे ते  
भणइ धरणिंदो । एयस्स रायरिसिणो सुणेह चरियं हरियदुरियं ॥१२॥ अवरविदेहेसु महुरसलिले सलिलावइमि विजयंमि । बहु-

पूजायां  
मृगमाहन-  
कथा

॥ ६८ ॥

श्रीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ६९ ॥

वीयसोयलोआ आसि पुरी वीयसोयत्ति ॥ १३ ॥ राया य वैजयंतो नाम जयंतो रिऊ अहेसि तर्हि । सच्चसिरी तस्स पिया नामेण  
तहा गुणेहिपि ॥ १४ ॥ तीए य नंदणा दुन्नि संजयंतो जयंतनामो य । अह तत्थ समोसरिओ सयंभुनामा जिणवरिंदो ॥ १५ ॥  
ततो सविइटीए तत्थ य गंतुं नमित्तु पडुपाए । आसीणे य नरिंदे करइ पडु देमणं एवं ॥ १६ ॥ “गंतुं सिवपुरमिच्छइ जइ भविया  
लंघिउं भवारणं । तो नाणाइमरूवे मग्गे लग्गेइ सुविसुद्धे ॥ १७ ॥ नाणं पयासगं सोइओ तवो संजमो य गुत्तिकरो । तिण्हंपि समा-  
योगे मोक्खो जिणसामणे भणिओ ॥ १८ ॥” चइउं रज्जं राया दिक्खं सुयजुयजुओ गहेइ तओ । तिपर्इपुवं गणहरपयं पच्छइ इमस्स  
पडु ॥ १९ ॥ अइ पउणपहरसमए एइ चली सामिणो निसीयंमि । इय भणिया असिबोउसमकारणा किञ्जए कूरो ॥ २० ॥ आव-  
स्सयकप्पाइसु पुण तीए कारगा १ सरूवं च २ । परिमाणं च ३ विही खलु ४ फलं च ५ एवं फुडं भणियं ॥ २१ ॥ तथाहि—राया  
च रायमच्चो तस्सासइ पउरजणवओ वावि । दुब्बलिखंडियचलिछडियतंदुलाणाढयं कलमा ॥ २२ ॥ भाइयपुणाणीयाणं अखंड-  
फुडिआण फल्गमरियाणं । कीरइ चलिं सुराविय तत्थेव छुहंति गंधाई ॥ २२ ॥ एसा चूणिः—तं आढगं तंदुलाणं सिद्धं देवमछे  
राया वा रायमच्चो वा पउरं वा गामो वा जणवओ वा गहाय महया तुडियरवेणं सविइटीए देवपरिबुडो पुरच्छिमिल्लेणं दारेणं  
पविमइ, एवं च आणयणं बलेरितिशेषः ॥ तं आढगं तओ तंदुलाण सिद्धं गहित्तु रायाई । तुडियरवेणं देवाइपरिबुडो  
विसइ पुब्बेण ॥ २३ ॥ बलिपविसणसमकालं पुब्बहारेण ठाइ परिकहणा । तिगुणं पुरओ पाडण तस्सद्धं  
अवडियं देवा ॥ २५ ॥ जाहे पविट्ठो अग्ग्भतरं पागारं भवइ ताहे तित्थयरो धम्मं कहंतो तुण्हक्कीभवइ, ताहे रायाई चलि-  
हत्थगओ देवपरिबुडो तित्थयरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं काउं तित्थयरस्म पायमूले तं चलिं निसिरइ, तस्स अद्धं अवडियं

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ६९ ॥

धीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ७० ॥

देवा गिण्हंति'त्ति ॥ अद्धं अहिवइणो अवसेसं होइ पागयजणस्स । सव्वामघप्पसमणी कुप्पइ तन्नो य छम्मासे  
॥२६॥ सेमस्स अद्धं अहिवई गिण्हइ, सेसं पागयजणो गिण्हइ, तओ सित्थं जस्स मत्थए छुभइ तस्स पुव्वुप्पन्नो वाही उवसमइ,  
अणुप्पन्ना य रोगायंका छम्मासे न उप्पजंति । अह सो उ वेजयंतो विहरित्ता गणहरो महीइ चिरं । वरणाणदंसणधरो मुत्ति  
पत्तो वरचरित्तो ॥२७॥ जो य जयंतमुणी सो चरणं अइचरिय मरियइहं धरणो । नवपुव्वाइ अहिओ भयवं पुण संजयंतमुणी  
॥२८॥ तवसत्तसुत्तएगत्तवलसरूवाहिं पंचतुलणाहिं । तोलइ स नियं कायं काउं जिणक्कप्पपरीकम्मं ॥२९॥ तिविहोवसग्गसहणो  
महणो दुस्सहपरीसहवलस्स । सुहझाणसमल्लोणो उज्झियपाणन्नभोई य ॥३०॥ ससरीरेवि हु मुच्छाविवज्जिओ विहरइ विहेमाणो ।  
सुन्नहरसुमाणाइसु विचित्तपडिमासणाईणि ॥३१॥ सो एस मज्झ भाया जिट्ठो पडिमट्ठिओ इहाणीओ । खयरहमेण इमिणा कहेइ  
इह तेसि जा धरणो ॥ ३२॥ सवणसुहकारि ता कमणकिंकिणीकणकणारवं गयणे । निसुणिय खयरेहिं पुणो पुट्ठो धरणो पहु !  
किमेयं ॥३३॥ धरणः—केवलनाणं उत्पन्नमिण्हि एयस्स भो महामुणिणो । तम्महिमकए एए अमरा खयरा अ यंति इहं ॥३४॥  
खचराः—किं कारणमाणीओ इत्थ महप्पा इमो अणेणंति । धरणः—पुच्छामो एसुच्चिय सबण्णू इण्हि भो कहिही ॥३५॥ ते तत्थ तओ  
गंतुं तिपयाहिणेउं मुणिं नमिय चिंति । इय विस्सवच्छले किमिय भच्छरो विज्जुदाढस्स ? ॥३६॥ भयवं भणेइ भदा ! भवइ भवीणं भवंमि  
पाएण । कीयो व पसाओ वा पुव्वभवन्भाससंजणिओ ॥ ३७ ॥ जओ—लोयस्स लोयणाइं नूणं जाईसराइं एयाइं । मउ-  
लिज्जंति अणिट्ठे दिट्ठे इट्ठे उ वियसंति ॥ ३८ ॥ कहमेयंति पवुत्ते तेहिं मुणी कहइ इत्थ भरहंमि । सीहपुरं आसि पुरं  
पूरस्मरं पवरनयराणं ॥ ३९ ॥ सीलेण निम्मलेणं पडिहत्थो तह धणेण पउरेण । पउरजणो परदाराइं जत्थ न पलोयइ कयावि

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७० ॥

श्रीदे० वै-  
त्यश्रीधर्म०  
संपाचार-  
विधौ  
॥ ७१ ॥

॥४०॥ अइउभडरिउभडकोडीकरडीकरडययाडणपडिद्वो । सीहोष सीहसेणो तत्थाऽसि वसुंधरानाहो ॥४१॥ तस्सासि रामकण्ठा  
दइया दुहिआ उ जा अदुहियावि । पोयणपुरसामियपुण्णभदहरिमईयदेवीणं ॥ ४२ ॥ चउवुद्विसुद्धसुधासिंधुसचिवो सुवुद्धि-  
नामो से । आसी गुरुयविभूई पुरोहिओ तहय सिरिभूई ॥ ४३॥ अह पउमिणिखेडा तत्थ आगओ भवमिच्चसत्थाहो । सायर-  
वाणिजे मज्जमाणसो चिंतए एवं ॥ ४४ ॥ निवडंतमहंतसयावयागरो सागरो इमो रुंदो । किच्चिमकयसंधिच्छिद्वज्जियं जाणवत्त-  
मिणं ॥ ४५ ॥ पवणेरियकमलदलगजललवचवला तहा इमा कमला । एसो सुघडियविहडणपयडपयावो विहिहयासो ॥ ४६ ॥  
अकयअखंडियसुकया पाण्णं पाणिणो इमे तत्तो । न मुणिजइ किह जलहीउ आगओ इह पुणो होही ? ॥४७॥ ता मज्ज सवसारेण  
सायरे नेव संपय गंतुं । किंतु चिय मुत्तुं किंचि नायपच्चयकुले कंमि ॥४८॥ इय चिंतिय अब्भत्थिय सिरिभूई तस्स मंदिरे सोउ ।  
वीमत्थो वीसामइ नियमुद्दामुदियं नउलं ॥४९॥ तो वेलाउलपत्तो सज्जियपोओ समुहकयपूओ । चलिओ पसत्थदियहंमि भइमित्तो  
तओ कइया ॥५०॥ उल्लालियकल्लोलो जलनिहिजलनिवहजणिअआवत्तो । तस्स उ अपुन्नपसरोव पसरिओ कालियावाओ ॥५१॥ अइ-  
वहलगवलकजलसामलकायंविणीकलावेण । पच्छाइयं नहयलं कुपुरिसअयसेण व खणेण ॥५२॥ धीरेयराण चरियं व अवधीरिय धीर-  
माधुरं धणिरा । धाराधरा धराए खलव उन्नइपयं पत्ता ॥ ५३ ॥ खणमित्तदिट्ठनद्धा अइचवला पायडियसयलआमा । तह विज्जुला  
चमकेइ पवंचपुण्णाण रिद्धिब ॥ ५३ ॥ अह उप्पायनिवाए खणे खणे कुणइ सायरो गयणे । नावा नावइलंखयधूया सिक्खेइ नट्ट-  
विहिं ॥ ५५ ॥ अकडफुडिपवंमंडमंडअइविस्समुक्कअकंदं । अकंदंति परोप्परकंठविलग्गा अतो लोगा ॥ ५६ ॥ हा ताय ! रक्ख  
रक्खसु हा संपइ माइ ! कह भविस्सामो ? । कुलदेवयाउ तुम्हिवि हा इण्हि कत्थवि गयाओ ? ॥५७॥ हा नत्थि कोऽवि देवो

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७१ ॥

धीदे० चै-  
त्यश्रीधर्म०  
संघाचार-  
विधौ  
॥ ७२ ॥

प दाणवो वा परोवयारिह्यो । कारुण्यपुण्यहिअयो वमणमिणं जो निवारेइ ॥६८॥ दीणालावेहिं न नेव रोइएहिं न चित्ततावेहिं ।  
पुकरिएहिं न केणवि विहिम्मि विमुहे हवइ ताणं ॥६९॥ इय स्रअंतोव तओ साडिअ खंभुव तं च सोअरवं । कत्तियऽपुण्यजणमणोरहोव  
विलयं गओ पोओ ॥ ६०॥ जलसंगयं दुरतं विहडियसंधिं च तुट्टगुणजालं । कुकलचं व कुजाणं सत्थाहेणं खणा चत्तं ॥६१॥ फलि-  
हमहिलहिय जलहिं तरिउं सीहे पुरंमि सत्थाहो । गंतुं पुरोहियगिहे मग्गइ निक्खेवयं निययं ॥६२॥ कलुसमई सिरिभूई बहु मग्गंतं  
तयं कडुगिराहिं । निब्भत्थइ कोऽसि तुमं ? अरे तथा किं कया मुक्कं ? ॥ ६३ ॥ तो रायकुलं स गओ तहिमलहंतो पवेसमणुदि-  
यहं । रायदुवारे भणई नासं मे हरइ सिरिभूई ॥ ६४ ॥ तं सोउं रण्णा पुण सिरिभूइ पुट्टो भणेइ सामि ! इमो । नूणं नामभंतीइ  
पलवेई किंपि मुन्नमणो ॥ ६५ ॥ सिरिभूइणा अणाहो मुसिओऽहं णाह ! रक्ख रक्खत्ति । विलवंत भमंतो सो पुण दिट्ठो निवइणा  
कहवि ॥६६॥ जायकरुणेण पुट्टो तो सदाविय सुबुद्धिवरमंती । कह नेयमेयमह तेण भदमित्तो गिहं णीओ । ॥६७॥ निक्खेवस-  
क्खिदिवसाइ पुच्छिउं लहिय दंसिओ रओ । भणियं देव ! भविस्सइ एवं एवं पयडमेयं ॥ ६८॥ गहिय पुरोहियमुहं अलक्खियं  
निवइणा रमंतेण । निउणमई पडिहारी तमप्पिउं पेसिया तो मा ॥६९॥ गंतुं पुरोहियगिहे तब्भजं भणइ तुह पिण्णुत्तं । मुदमिमं  
अप्पिय भदमित्तनिउलं जहा णेहि ॥७०॥ तं तीय अप्पियं सा गहिय निवस्सोवणेइ तेण तओ । नियनिउलंतो खिविउं भणिओ  
गिण्हत्ति सत्थाहो ॥ ७१ ॥ सुपसाउत्ति भणंतो सतोमतो सो गहेइ नियनिउलं । निवासिओ विडंविय नयराउ पुरोहिओ इत्तो  
॥७२॥ अह सोउ भदमित्तो निक्खेवं गहिय नियपुरं जंतो । चितइ कह जलहीओ इह जीवंतो अहं पत्तो ? ॥७३॥ ता ववहारेण अलं  
चित्तं तु इमं कहिंचि सुहखित्ते । वइऊण पवइस्सं सुत्तो इय चित्तिगे रण्णे ॥७४॥ अह पवसियस्म सोगेण तस्म माया अहोनिंसं बहुमो ।

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७३ ॥

रोयंती अवगच्छा जाया भक्ते अरोयंते ॥ ७५ ॥ निजामियमिह वेरं किइ पुत्तमिसेण भद्दमिसेण ? । विवसा मरिस्समखमा हु जीवि-  
यं तं अपस्संती ॥ ७६ ॥ इय अट्टुहट्टा सा मरिउं जाया तहिं वणे वग्धी । खद्धो तीइ सपुत्तो स भद्दमित्तो तहिं खुत्तो ॥ ७७ ॥  
तो सीहसेणरत्तो स सीहचंदुत्ति नंदणो पढमो । जाओ वीओऽवि तद्वा पुत्तो से पुत्तचंदुत्ति ॥ ७८ ॥ अह कइयावि पविट्ठो भंडारे  
सीहसेणनहनाहो । दट्ठोसु निट्ठुरं तेण दीहपिट्ठेण रुट्ठेण ॥ ७९ ॥ तविसवेगवसगओ गओ नरिंदो धसत्ति धरणियले । कीरंती-  
सुवि किरियासु नेव कोवि हु गुणो जाओ ॥ ८० ॥ अहिणो अहाहितुंडियवरेण आवाहिया लहुं तत्थ । पत्ता सव्वेऽवि विसजिया  
उ निदोस्तिणो जे उ ॥ ८१ ॥ रहिओ अगंधणो सो भणिओ विजावलेण तो तेण । गिण्हसु मुक्कं नियगरल लहु कलय जलंतजलणं  
वा ॥ ८२ ॥ अह अहिमाणधणेणं जालामालाउलंमि जलणंमि । विहिओ तेण पवेसो न य भुत्तं नियगरं वंतं ॥ ८३ ॥ यदाप—  
“पक्खंदे जलियं जोइं, धूमकेउं दुरामयं । नेच्छंति वंतयं भोत्तुं, कुले जाया अगंधणे ॥ ८४ ॥” तविसविहुरियगतो तत्तो पत्तो  
निवोऽवि पंचत्तं । रज्जे उ सीहचंदो अहिसित्तो तस्म जिट्ठमुओ ॥ ८५ ॥ अह रामकण्हदेवीइ सोपविहुराइ निययधूयाए । संबोह-  
त्थं पत्ता पवत्तिणी हिरिमई तत्थ ॥ ८६ ॥ अविय—वासोउव्व सुमेहा अदिट्ठदोसायरा अरयसंगा । ससधरधवलंबरसच्छमाणसा  
सरयलच्छिब्ब ॥ ८७ ॥ अंगीकयपरमहिमा विउडियकमलायरा हिमोउव्व । परिखिजमाणदोसा सुसीयला सिसिरमइयव्व ॥ ८८ ॥  
परहुयमहुरालावानंदियलोया वसंतमुत्तिव्व ॥ गिम्हसिरी इव कयजणवहुसेया उग्गतवनाहा ॥ ८९ ॥ इय सव्वकालसीलं पवत्तिणिं  
आगयं मुणिय नमिउं । पत्ता जुत्ता पुत्तेहिं रामकण्हा तओ देवी ॥ ९० ॥ नमिय निविट्ठाए तीए हिरिमई धम्मदेसणं कुणई ।  
परपुट्टकंठउट्ठितमहुरमरसरिमवाणीए ॥ ९१ ॥ “धम्मे अतुच्छसुहदे वच्छे ! सच्छामए पमार्यंती । मा गच्छ इह सुतुच्छे सुक्खे विणिवा-

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७३ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७४ ॥

यवहुलंमि ॥९२॥ जओ-संसारोण सरीरं कयलीकोमलकरीरनिस्सारं । रूवं संझुभवअभरागसमं नस्सरसरूवं  
॥ ९३ ॥ मयकलियकलहकरिकण्णतालतरलं च तारतारुणं । पवणपणुल्लियदीवयसिहच्च अवि चंचलं जीयं ॥ ९४ ॥ तहय  
अवस्सं पियजणसंजोगा विप्पओगपजंता । सुहमहुरमंतविरसं विसयसुहं विसमविससरिसं ॥९५॥ ता पुत्ति ! निरुयमंगं इंदियहाणी  
न जाव जाव जरा । अल्लियइ जाव न मच्चू लहु उज्जम ताव अप्पहिण् ॥९६॥” तो उज्झियगिहिवासा पव्वइया सा उ सीहचंदोऽवि ।  
डहरसहोयरनिक्खिवियरञ्जमारो गहेइ वयं ॥९७॥ सुत्तत्थगहियसारं पवत्तिणिं ठविय रामकण्हं तं । अह मरिउं सुसमाहीइ हिरि-  
सई सुगइमणुपत्ता ॥ ९८ ॥ इत्तो य रामकण्हा सुविउलतवगलियघाइकम्ममला । केवलकलिया पत्ता विहरंती पुणवि सीहपुरे ॥ ९९ ॥  
नियकुट्टारगयं तं हरिसससुस्तसियरोमकूवो तो । नमिउं पराइ भत्तीइ पुच्छए पुण्णचंदनिवो ॥ १०० ॥ भयवइ ! भावियस्-  
भूयभाविभावे कहेह मम तुभं । केणं पुवभवुभवसंबंधेणं अइसिणेहो ? ॥ १०१ ॥ सा कहइ केवली निव ! संसरमाणण इत्थ  
जीवाणं । जाया अईयकाले असइं सव्वेऽवि संबंधा ॥१०२॥ जओ-मायपियभायभइणिभज्जासुयधूयसुण्हसुहिसयणा ।  
जाया सव्वेऽवि जीया अणंतसो सव्वजीवाणं ॥१०३॥ आसन्नजंमओ पुण पुन्नसोजन्नओ जओ नवरं । तुज्झ सिणेहो  
अहिओ मज्झं पइ तं निसामेहि ॥१०४॥ अत्थि जिणममयअइकुसलजणवए कोसलाजणवयंमि । कयधम्मनिव्विसेसं निवेसयं संगमं  
नाम ॥१०५॥ जिणवयणे अणुरत्तो इह इत्तो नत्थि उत्तरीयंति । निच्चं पइट्टियमई विसारओ विविहसत्थेमु ॥१०६॥ तत्थ दिओ  
आसि मिगो साणुक्कोसो सया अणारंभी । गामच्छायणमित्तं पडिणिण्हइ निम्ममो य धणे ॥१०७॥ तस्स समुन्नयवंसा सुवन्नरयणु-  
ज्जला सुरगिरिच्च । मइरत्ति पिया मइरायमंदिरं वारुणी दुहिया ॥१०८॥ माहाविण्ण विण्णण मइवेणं तहुज्जुभावेण । सा उ

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७५ ॥

नियजीवियाउवि वल्लहा जणयलोयस्स ॥ १०९ ॥ कइया उ मिगेणुत्ता मइरा भदे ! करेह देवकए । भत्तं भणिया पूया चउहा जं  
आगमे एवं ॥११०॥ तथाहि-तित्थयसे अरहंतो, तस्स चेव भत्ती कायच्चा, सा य पूया चंदणाईहिं भवइ, पूयंपि पुप्फामिसथुइ-  
पडिवत्तिभेयओ चउविहंपि जहासत्तीए कुअत्ति । अन्यैरप्युक्तं-“पुप्फामिपस्तोत्रप्रतिपत्तिपूजानां यथोत्तरं प्राधान्य”मिति, तत्रामिपं  
प्रधानमशनादिकं भोग्यं वस्तु, यद्गौडः-‘उत्कोचे पलले न स्त्री, आमिपं भोग्यवस्तुनि, प्रतिपत्तिः पुनरविकलाप्तोदेशपरिपालने’ति ॥  
मन्नंतीए नेवेअपूयमह पुप्फपूयओ पवरं । कइया उ देवकअंमि मज्झियं भोयणं. तीए ॥ १११ ॥ ताव मलमलिणगत्ता तिगुत्ति-  
गुत्ता पसंतवरत्तिता । पंचमहव्ययजुत्ता तत्थ दृवे साहुणो पत्ता ॥ ११२ ॥ उक्तं च वसुदेवहिंदौ-कयाइ य देवकजे मज्झियं  
भोयणं, माहवो य उवगया, तिण्हवि जणाण समवाओ पडिलाभेमोत्ति । अह हरिमियाइं ताइं चिन्तंति किहऽम्ह अज भुअमिमं ?  
कह व मुणी ? कह भावो ? इय ता अम्हे चिय सुधन्ना ॥११३॥ जओ-केसिंचि ह्योइ वित्तं चित्तं केसिंचि केसि उभयंपि ।  
चित्तं वित्तं पत्तं तिच्चिवि केसिंचि धन्नाणं ॥११४॥ अह वारुणी निउत्ता वच्चे ! साहूण देहि एयंति । तो तस्ममयं तीसे जाओ  
सुविसुद्धतरभावो ॥११५॥ तओ य-माहम्मिओ न मत्था तस्म कयं तेण कप्पइ जईणं । जं पुण पडिमाण कए, तस्स कहा का अजी-  
वत्ता ॥११६॥ संवड्ढमेहपुप्फा सत्थनिमित्तं कया जइ जईणं । नहु लब्भा पडिसेहं किं पुण पडिमट्टमारद्धं ॥११७॥ इचाइकप्पभणि-  
याणुमारओ तत्थ दाउमुवओगं ।-गिण्हंति मुणी किंचिवि-किंचिवि तेसिं संजायं । रायकुले भोगफलं जम्ममहो पूयमाहप्यं ॥११८॥  
उक्तं च-“तवनियमेण थ मुक्खो दाणेण य हुंति उत्तमा भोगा । देवचणेण रज्जं अणमणमरणेण इंदत्तं ॥ ११९ ॥ शिवधर्मोत्त-  
रेऽप्युक्तं-“पूजया विपुलं राज्यमग्निकार्येण संपदः । तपः पापविशुद्ध्यर्थं, ज्ञानं ध्यानं च मुक्तिदम् ॥ १२०॥” अह पुवं चिय

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७५ ॥



श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७६ ॥

मइरा मरिउं नयरे पइट्टनामंमि । जाया हिरिमइनामा अइबलनिवसुमइदेविसुया ॥१२१॥ संपत्तजुव्वणा पव्वणिंदुवपणा  
तओ य नरवइणा । सा पोयणाहिवइणा परिणीया पुन्नभइण ॥१२२॥ इओ य-वारुणिविओगमीरू मिगी तहिं चैव संनिवेसंमि ।  
पडिरूयदिणं तीइ पाणिहणं करावेइ ॥ १२३ ॥ तह तीए नेहेणं जओ तओ वंचिऊण जंकिंपि । देइ इओ नियडीए इत्थित्तं  
बंघियं तेण ॥ १२४ ॥ जो चवलो सढभावो मायाकवडेहिं वंचए सयणं । न य कस्सइ वीसत्थो सो पुरिसो महिलिया होइ  
॥१२५॥ अविहियसामन्नो विगयविसयतण्हो मिगी मरिय जाया । निव ! पुण्णभइ ! हिरिमइदेविसुया रामकण्हाइ ॥ १२६ ॥  
सा वारुणी उ मरिउं पुत्तो मे पुन्नचंदनरनाह ! । जाओ सि तुमं एवं च कारणं ते सिणेहस्त ॥१२७॥ पुणरवि तप्पयपउमं पण-  
मिय पुच्छेइ पुन्नचंदनिवो । भयवइ ! कत्थ गओ सीहसेणरायत्ति ? अह माऽऽह ॥१२८॥ अहिभूएणं तेणं डसिओ तइया निवो  
मरिय जाओ । इणहत्थी वणयरविहियनामओ असणिवेगत्ति ॥१२९॥ सुपइट्टलट्टसत्तंगसंगओ भइजाइसंपन्नो । भूमीवइव चिता-  
इरित्तदाणंनुसिचकरो ॥ १३० ॥ सुमुणिव्व सुदंतो चारुकुंभसोभिगसिरो य भिच्चोव्व । पावियजंगमभावी अंजणसेलोव्व सोहेई  
॥१३१॥ अह सीहचंदसाह सज्झाए उज्जुओ अपडिबद्धो । पंचसमिओ तिगुत्तो समहियनवपुव्वपारगओ ॥१३२॥ सुगुरूण अणु-  
णाए एगल्लविहारपडिमपडिवन्नो । विहरइ महिं महप्पा मोहीकयमोहमहिमो से ॥१३३॥ तुह पिउणा सिरिभूई पुरोहिओ भइमित्त-  
वणियस्म । निरूखेवनिण्हवपरो कओ विडंबित्तु निविमओ ॥१३४॥ अइदुहइवसद्धो रोमविसं सो निवंमि अमुयंतो । मरिउं निवई-  
मिरिहरे अगंधणो विमहरो जाओ ॥१३५॥ तो अन्नया उ देसंतरंमि सो गंतुमाणसो चलिओ । केणवि सत्थेण सम्मं तत्तो पत्तो य अड-  
वीए ॥१३७॥ सुविसालमालसहिया जा बहुवरवाणिया सुवंमजुया । पायडकासनिसायरविभीसणा सहइ लंकव्व ॥१३८॥ तत्थऽत्थि

अग्रपूजाया  
हरिकूट-  
संबंधः

श्रीदे०  
शैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ७७ ॥

मरं वियडं अखंडवणसंडमंडियमनद्वग्गं । जन्थ य जलं महामुणिमणं व मच्छं मुइअतुच्छं ॥ १३९ ॥ तस्संतियंमि भोयणसमए आवासिओ  
तओ मत्थो । वीमत्थो य पवत्तो रंधणपयणाइमायरिउं ॥ १४० ॥ इंधणकारणमेगे सलिलनिमित्तं परे उ उट्टंति । अन्ने तणगहणत्थं केविहु  
पाकाइणा विग्गा ॥ १४१ ॥ इत्थंतरे स हत्थी महत्थिणीसत्थसंजुओ तंमि । आगम्म मरे सलिलं पातुं काउं च जलकेलिं ॥ १४२ ॥  
आरुहिउं पालीए दिसिबलयं जा पलोयए ताव । कुवियकयंतस्मव तस्म दिट्ठिविमयं गओ मत्थो ॥ १४३ ॥ तो तदंमणउच्छलिय-  
पवरकोवानलो अरुणनयणो । गलगज्जिएण जलभरभरियंयुहरुव्व गज्जंतो ॥ १४४ ॥ मविसेमायमवसुम्भिन्नकवोलयलगलियमय-  
मलिलो । मत्थाभिमुहो वेगेण धाविउं पयणजइणा सो ॥ १४५ ॥ रांरंभवियासिययणकंदरो गमिउमुट्ठिउव्व जमो । उप्पत्थेणं  
इंतो सत्थेणं तक्खणा दिट्ठो ॥ १४६ ॥ पुव्वकयसुकयचाओक्खितुव्व समंतओ तओ लोओ । जियगाहेण पलाओ सधस्सवि  
वह्लहं हि जियं ॥ १४७ ॥ विहडइ स निविडगगडे तडत्ति तोंडेड गुणणियातलए । गोणाइ रडावेई दिमोदिसिं विक्खिवइ मंडं  
॥ १४८ ॥ एयममंजसं तं कुणमाणं पिक्खए ममणमीहो । उवमग्गपरीमहमएण पच्चलो निच्चला ज्ञाणे ॥ १४९ ॥ उत्तममत्तो तो थिर-  
गत्तो मेरुव्व ठाइ उस्सग्गे । भयरहिओ जियरहिए अरुखुभियमणो सुठाणंमि ॥ १५० ॥ अह जाव जहिच्छमतुच्छमच्छरोत्थाहच्छिन्न-  
सत्थो सो । मव्वत्थ भमड हत्थी ता पिच्छइ सीहचंदरिमिं ॥ १५१ ॥ उब्भडरुंडत्तिकुंडलियवियडतुपयंडसुंडदंडो तो । तक्खण-  
विप्फारिअअरुणपुक्खरो मरयकालोव्व ॥ १५२ ॥ खयसमयममीरुक्खित्तसेलकूडोव्व इंचरियभुवणो । गुरुयतरामरिमवसेण मुक्क-  
उक्किट्ठसीकारो ॥ १५३ ॥ गुंजद्वारुणनयणो पहाविओ माहुसंमुहं जाव । ता हाहारवकलिओ उच्छलिओ बहुलजणरोलो ॥ १५४ ॥  
उन्नियह नियह एमो रायरिसी निजए कयंतगिहे । इमिणा मायंगेणं मायंगेणं हयासेण ॥ १५५ ॥ अह सो माहुवरिट्ठं तं ददट्ठं तेहि

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७७ ॥

श्रीदे०  
धैत्यधी-  
धर्म० मंगा  
चारविधौ  
॥ ७८ ॥

निय पणहि ठिओ । संधंमिउच्च महमा अदिट्टउकिट्टुदट्टेण ॥ १५६ ॥ सुपसन्नं नयणेहिं रायरिसिं तस्स पिच्छमाणस्स । उल्ल-  
सियं द्वियणं वयणेणं वियसियं हत्ति ॥ १५७ ॥ ता उन्नयनिम्मलदंतमुसलजुगले निवेसिउं स करं । मुणिवयणनिहियनयणो  
चित्तिउमेवं ममाढनो ॥ १५८ ॥ मन्ने मया इमो कत्थ दिट्टुपुवोत्ति चित्तयंतस्स । संभारणत्थमिव लहु तो जायं जाइसरणं से  
॥ १५९ ॥ तो मरियपुब्बजम्मो सिंचंतो पुढविमंसुधाराहिं । महसत्ति रायरिसिणो पडिओ पयपउममूलंमि ॥ १६० ॥ तेणं उवउ-  
मेणं नाउं जाइमरजायसंवेगो । पारियपडिमेणं सो अणुसिट्ठो कोमलगिराए ॥ १६१ ॥ मा सीहसेण ! वच्चसु सुविसायं दाणसील-  
याइ तुमं । नो नरए उववन्नो जाओ धणमुच्छिया तिरिओ ॥ १६२ ॥ तो सो विम्हियहियओ चित्तइ य अहो स एस मज्झ सुओ ।  
जाओ महाणुभावो जं जाणइ मे मणगयंपि ॥ १६३ ॥ अह विन्नविउं लग्गो सयावि ते इय ठियस्स मुणि ! भदं । मज्झवि तमेव  
उवदिम जं महिरिसिणो दए रिसिणो ॥ १६४ ॥ अणिमिसनयणो वियसियवयणो तं ठवियवियडकन्नउडो । रोमं । गत्तो  
गुत्तो मुणिणा करिवरो मो ॥ १६५ ॥ मयमणुभूयभवणवविडंबणाडंबरस्स वारण ! ते । किं इण्हिमुवइसिज्जइ तहावि किंपि हु पयं-  
पेमि ॥ १६६ ॥ संदिहिअइ दिट्टंपि जं न कहियंपि कोवि पत्तियइ । अणुभूयंपिय पुढं जं पडिहाइ न इह वत्थु ॥ १६७ ॥ माइंदजालिओ-  
विव तंपि ममन्धेइ कम्मपरिणामो । कहमन्नह तं रज्जं कहमेरित्थं च तेरिच्छं ? ॥ १६८ ॥ पच्चक्खपरुक्खसुमिक्खदुक्खलक्खालएसु  
दूरुमंता । मिल्हवि मोयं संपइ दुलहं पडिवअ जिणधम्मं ॥ १६९ ॥ जओ-लभंति लोललोयणललणा जणजणियचित्तपरि-  
तोमा । घरवामाकरुल्लडकम्मरत्तवणदक्खो न उण घम्मो ॥ १७० ॥ स्ववियपडिवक्खलक्खाइं अविय लभंति रज्जसुक्खाइं । भवअंध-  
रुउदरणपणलो न उण जिणधम्मो ॥ १७१ ॥ लभंति पणयवरविणयपउणामुरसुंदरीमणाहाइं । इंदत्तणाइ न उणो नरेहिं मियमुइफलो

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥ ७९ ॥

धम्मो ॥१७२॥ अह स गहइ गिहिधम्मं सम्मं समत्तमूलमाजीवं । वंभं छट्ठतवं तह तो मुणिणा एवमणुसिट्ठो ॥१७३॥ अरिहंतु-  
च्चिय देवो मुणिणुच्चिय सीलसंगया गुरुणो । जीवदयच्चिय धम्मो निच्चं चित्तिज नियचित्ते ॥१७४॥ दुहदहणसअवुट्ठिं असेससत्तो-  
हदिन्नमणतुट्ठिं । सुमरेजेगगमणो मंतं पिव पंचपरमिदं ॥१७५॥ उज्झसु कसायवससंभवाइं दुक्कम्मविलसियाइं लहुं । सहइण-  
नाणसारं भावेषु य भावणापडलं ॥ १७६ ॥ तोसगओ तो स गओ नमिऊण मुणिं सह गएण गओ । नाउमिणं सत्थजणोवि-  
लेइ संमाइ जहजोगं ॥१७७॥ वेरग्गओ जयणाइ गच्छिरो पारणं कुणइ स गओ । परिमडियपंडुनीरसभग्गमिलाणेहिं पत्तेहिं ॥  
१७९॥ दुकरतवआयावणपरायणो सो कयाइ गिम्हंमि । अप्पजले बहुपंके मरे गओ पाणियं पाडं ॥ १७८ ॥ अप्पत्तजलो पंके  
खुत्तो जाणित्तु तथकिलिन्नोऽहं । अनलो उत्तरिउमिउत्ति वज्जए सव्वमाहारं ॥१७२॥ अह सिरिभूइ भुयंगो स अग्गिदब्बो तथा  
मरिय जाओ । कोलवणो चमरगवो दवगिगदब्बो तओ मरिउं ॥१८०॥ सल्लइवणंमि कुक्कुडसप्पो जाओ तओ स तं दइत्तुं । अण-  
सणगयं गयं जायमच्छरो डसइ कुंममि ॥१८१॥ विमवेगविहुरियंगो वोसरिउं सव्वपावठाणाइं । खमिपजिओ मण्णंतो अन्नो-  
ऽहं अन्नमंगं मे ॥१८२॥ इय सुहइणाणे नवकारतप्परो मरिय सुक्ककप्पंमि । सिरिनीलविमाणे सतरअयरआऊ सुरो जाओ ॥१८३॥  
तहन्तमुत्तिआइं गहिऊण सिआलदन्तवाहेण । परिच्चियगुणपीईए धणामित्तवणिस्स दिन्नाइं ॥१८४॥ तेणवि तुहइप्पियाइं मित्तीइ  
सलक्खणात्ति विनिउत्ता । दन्ता निवासणे मुत्तिआइं चूलामणंमि तए ॥१८५॥ एमा संसारठिईं सोगट्ठाणेधि हवइ जं तुट्ठीं । जम्मं-  
तरगयपिउणो देहावयवेऽवि भुत्तण ॥१८६॥ स कयाइ चागुरेणं कुक्कुडसप्पो विणासिओ दुहिओ । सत्तरअयराउ पंचमपुट्ठवीइ जाओ  
नेरइओ ॥१८७॥ होही अमरो नवमे गेप्रिज सीहचंद्रायरिमी । इगतीसमागराऊ सुविमाणे पीइकरनामे ॥१८८॥ पोमइपडिवज्ज-

अप्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७९ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ७८ ॥

चिय पण्हि ठिओ । संधंमिउव्व सहसा अदिट्टउकिट्टदट्टेण ॥ १५६ ॥ सुपसन्नं नयणेहिं रायरिसिं तस्स पिच्छमाणस्स । उल्ल-  
सियं हियणं वयणेणं वियसियं ज्ञत्ति ॥ १५७ ॥ ता उन्नयनिम्मलदंतमुसलजुगले निवेसितं स करं । मुणिवयणनिहियनयणो  
चित्तिउमेवं समाढत्तो ॥ १५८ ॥ मन्ने मया इमो कत्थ दिट्टपुवोत्ति चित्तयंतस्स । संभारणत्थमिव लहु तो जायं जाइसरणं से  
॥ १५९ ॥ तो मरियपुव्वजम्मो सिंचंतो पुढविमंसुधारहिं । सहसत्ति रायरिसिणो पडिओ पयपउममूलंमि ॥ १६० ॥ तेणं उवउ-  
तेणं नाउं जाइमरजायसंवेगो । पारियपडिमेणं सो अणुसिट्ठो कोमलगिराए ॥ १६१ ॥ मा सीहसेण ! वच्चसु सुविसायं दाणसील-  
याइ तुमं । नो नरए उववन्नो जाओ धणमुच्छिया तिरिओ ॥ १६२ ॥ तो सो विम्हियहियओ चित्तइ य अहोस एस मज्झ सुओ ।  
जाओ महाणुभावो जं जाणइ मे मणगयंपि ॥ १६३ ॥ अह विन्नविउं लग्गो सयावि ते इय ठियस्स मुणि ! भइं । मज्झवि तमेव  
उवदिम जं महारिसिणो दए रिसिणो ॥ १६४ ॥ अणिमिसनयणो वियसियवयणो तं ठवियवियडकन्नउडो । रोमं । गत्तो  
बुत्तो मुणिणा करिवरो सो ॥ १६५ ॥ मयमणुभूयभवणवविडंबणाडंबरस्स वारण ! ते । किं इण्हिमुवइसिज्जइ तहावि किंपि हु पयं-  
पेमि ॥ १६६ ॥ संदिहिज्जइ दिट्टंपि जं न कहियंपि कोवि पत्तियइ । अणुभूयंपिय पुवं जं पडिहाइ न इह वत्थू ॥ १६७ ॥ माइंदजालिओ-  
विव तंपि समत्थेइ कम्मपरिणामो । कहमन्नइ तं रज्जं कहमेरित्थं च तेरिच्छं ? ॥ १६८ ॥ पच्चक्खपरुक्खसुभिक्खदुक्खलक्खालएसु  
दुक्खंता । मिद्धवि सोयं संपइ दुलहं पडिवज्ज जिणधम्मं ॥ १६९ ॥ जाओ-लब्भंति लोलोयणललणा जणजणियचित्तपरि-  
तोमा । घरवामाकक्खडकम्मस्खवणदक्खो न उण धम्मो ॥ १७० ॥ स्ववियपडिवक्खलक्खाइं अविय लब्भंति रज्जसुक्खाइं । भवअंध-  
क्खउदरणपघलो न उण जिणधम्मो ॥ १७१ ॥ लब्भंति पणयवरविणयपउणसुरसुंदरीमणाहाइं । इंदत्तणाइ न उणो नरेहिं मिवसुद्धफलो

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥ ७९ ॥

धम्मो ॥१७२॥ अह स गहइ गिहिधम्मं सम्मं समत्तमूलमाजीवं । पंभं छट्ठतवं तह तो मुणिणा एवमणुसिट्ठो ॥१७३॥ अरिहंतु-  
च्चिय देवो मुणिणुच्चिय सीलसंगया गुरुणो । जीवदयच्चिय धम्मो निच्चं चिंतिअ नियचित्ते ॥१७४॥ दुहदहणसअवुट्ठिं असेससत्तो-  
हदिअमणतुट्ठिं । सुमरेअेगगमणो मंतं पिव पंचपरमिदंठिं ॥१७५॥ उज्झसु कसायवससंभवाइं दुक्कम्मविलसियाइं लहुं । सहहण-  
नाणसारं भावेसु य भावणापडलं ॥ १७६ ॥ तोसगओ तो स गओ नमिऊण मुणिं सह गएण गओ । नाउमिणं सत्थजणोवि-  
लेइ संमाइ जहजोगं ॥१७७॥ वेरग्गगओ जयणाइ गच्छिरो पारणं कुणइ स गओ । परिमडियपंडुनीरसभग्गमिलाणेहिं पत्तेहिं ॥  
१७९॥ दुकरत्तवआयावणपरायणो सो कयाइ गिम्हंमि । अप्पजले बहुपंके सरे गओ पाणियं पावं ॥ १७८ ॥ अप्पत्तजलो पंके  
खुत्तो जाणित्तु तथकिलिच्चोअ्हं । अनलो उत्तरिउमिउत्ति वज्जए सव्वमाहारं ॥१७२॥ अह सिरिभूइ भुयंगो स अग्गिदइढो तया  
मरिय जाओ । कोलवणो चमरगवो दवग्गिदइढो तओ मरियं ॥१८०॥ सल्लइवणंमि कुक्कुडसप्पो जाओ तओ स तं दइहुं । अण-  
सणगयं गयं जायमच्चरो डसइ कुंभमि ॥१८१॥ विसवेगविहुरियंगो वोत्तरियं सव्वपावठाणाइं । खमियजिओ मण्णंतो अच्चो-  
अ्हं अन्नमंगं मे ॥१८२॥ इय सुहज्जाणो नवकारत्तप्परो मरिय सुक्कप्यंमि । सिरिनीलविमाणे सतरअयरआऊ सुरो जाओ ॥१८३॥  
तदन्तमुत्तिआइं गहिऊण सिआलदन्तवाहेण । परिचियगुणपीईए धणमित्तवणिस्स दिन्नाइं ॥१८४॥ तेणवि तुहअप्पियाइं मित्तीइ  
सलक्खणत्ति विनिउत्ता । दन्ता निवासणे मुत्तिआइं चूलामणंमि तए ॥१८५॥ एमा संसारठिईं सोगट्ठाणेवि हवइ जं तुट्ठी । जम्मं-  
तरमपपिउणो देहावयवेअवि भुत्तण ॥१८६॥ स कयाइ वागुरेणं कुक्कुडमप्पो विणासिओ दुहिओ । सत्तरअयराउ पंचमपुढवीइ जाओ  
नेरइओ ॥१८७॥ होही अमरो नवमे गेविअ सीहचंदरायरिमी । इगतीसमागराऊ सुविमाणे पीइकरनामे ॥१८८॥ पोमहपडिवन्न-

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ७९ ॥

श्रीदे०  
नेत्यश्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ८० ॥

सुमारउव मो सहइ चत्तवावारो । वरमाहुव अण्णिदो गयदइओ वीयरगुव ॥१८९॥ तो चविउं चकपुरे राया चक्काउहुत्ति सो होउं ।  
विहियासवमुणिपासे पव्वइउं पाविही मोक्खं ॥१९०॥ सत्थाइभदमित्तो१ सीहचंदो उरनवमगेविजे३। चक्काउहो य राया४चइउं  
रजं सिउं गमिही ॥१९१॥ इय सोउ पुन्नचंदो गिहिधम्मं गहिय जायसंवेगो । वंदित्तु रामकण्हं केवल्लिणिं मगिहमणुपत्तो ॥१९२॥  
गोमाइसु पंचविहं अट्टुवयारविहीइ मज्झण्हे । सव्वोवयारपूयं पव्वाइसु अह विहेमाणो ॥ १९३ ॥ सामाइयपोसहाइं अणुपालंतो  
मयापि मत्तीए । पडिलाभंतो ममणे पालइ रजं सनीईए ॥१९४॥ अंतंमि चत्तभत्तो मरिउं जाओ सुरो महासुक्के । देवणसतरसागर-  
ठिई विमाणंमि वेहलिए ॥१९५॥ पालित्तु रामकण्हा केवल्लिपरियायमह बहं कालं । सिवमयलमरुयमक्खयमपुण्णभवठाणमणुपत्ता  
॥१९६॥ अह आसी इह भरहे वेयइडे उत्तराइ सेठीए । मणिपहनिच्चालोयं निच्चालोयंति वरनयरं ॥१९७॥ तत्थ अरिसीहरन्नो  
देवीए सिरिधराय संजाया । मो पुन्नचंददेवो तओ चुओ जसहरा धूया ॥१९८॥ सुरावत्तेण पहंकरापुरीसामिणा परिणिया  
मा । पुष्फामिसैहिं पूअइ देवे वंदइ इय थुईहिं ॥ १९९ ॥ “सिरिविजाणंदपरा सेवंति जणंपि सेविणं जस्म । तमहं सधम्मकीत्ति  
देविंदणयं थुणामि जिणं ॥२००॥ सुयधम्मकीत्तिनयमयविजाणं देसए सया विमए । वंदे विदेण सुराण वंदिए मव्वजिणचदे ॥२०१॥  
देविंदाइपयं तिणमधम्मकित्तियमिमस्म जो निच्चं । ज्ञायइ जिणिंदवयणं वरविजाणंदपयकरणं ॥ २०२ ॥ ममरह मुयदेविं देहि-  
मोहहरधम्मकित्तियं जीए । नाभंपि ठाणमागमविजाणं देइ मच्चाणं ॥२०३॥ अह सीहसेणनिवकरिजिओ उ सुक्का चुओ जसहराए ।  
जाओ य गस्मिवेगो पुत्तो पत्तो य कुमरत्तं ॥२०४॥ धम्मरइधम्मनंदे चारणममणे अहागए तत्थ । नमिय निवो सपरियणो निसुणइ  
इय देमणं तेमिं ॥२०५॥ दुलहं मणुम्मज्जमं लद्धूणं रोहणं व रोरेण । रयणं व धम्मचरणं वृद्धिमया हंदि चित्तव्वं ॥२०६॥ जह

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

पत्थणालसाणं चिंतामणिणो न दिंति धणरिद्धिं । धम्मचरणालसाणं तह विहलो मणुयजम्मोऽवि ॥२०९॥ इअ सोउ रस्सिवेग-  
स्म दाउ रज्जं गहितु पव्वज्जं । ख्रावचनिवरिमी कयकम्मंतो सिवं पत्तो ॥ २१०॥ गुणचइअजापासे गहियवया जसहरा सुरो  
जाओ । रुयगविमाणे लंतयकप्पे चउदसजलहियाऊ ॥ २११ ॥ राया उ रस्मिवेगो सुदाणतवसीलभावणारंमं । सम्मं गिहत्थ-  
धम्मं रज्जेण नमं पयाहेइ ॥२१२॥ अन्नदिणे हरिमुणिचंदचारणे तत्थ आगए समणे । विणएण पणमिऊणं सुणेइ तेसिं इमं  
पयणं ॥२१३॥ “संमारम्मि अमारे अमारभूया विसेमओ एसा । लच्छी देहो णेहो तारुणं जीवियव्वं च ॥२१४॥ जं जलतरंगत-  
रला लच्छी देहो जराइ जजरिओ । नेहो णरपद्दहाईवल्लिपल्लवणनवमेहो ॥२१५ ॥ मयकलियकलहकरिकण्णतारतरलं च तार-  
तारुणं । पवणपणचिरदीवयसिहव्व अइचंचलं जीयं ॥२१६॥ गरुएण पुन्नपत्तेण पाविया एम मणुयजम्मंतरी । जाव न मिजइ ता  
भवजलनिहितरणे पत्तूरेह ॥२१७॥” इय मुणिय चइय रज्जं गहिय पवज्जं पट्टियनवपुत्तो । सो निवई पडिवन्नो एगल्लविहारवरपडिमं  
॥ २१८ ॥ कंचणगुहाइ पडिमं ठिओ कयाविट्ठु इओ य धूमाओ । उव्वट्टिय स पुरोहियजीवो गुरू अयगरो जाओ ॥ २१९ ॥  
तेणं गसियो स मुणी सुढ्ढाणपरायणो मरिय अमरो । जाओ चउदसअयराउ लंतए सुप्पहविमाणे ॥२२०॥ अयगुरू सप्पो पुण  
तिव्वकोहपरिणामओ समज्जिणिउं । बहु अमृहवेयणिज्जं जाओ धूमाइ नेरइओ ॥२२१॥ अह सीहसेणजीवो लंतयकप्पाउ चविय  
चफपुरे । चकाउहरायमुओ जाओ वज्जाउहोत्ति निवो ॥ २२२ ॥ तस्सासि रयणमाला देवी अह ताण लंतयाउ चुओ । सो  
पुन्नचंदजीवो जाओ रयणाउहोत्ति मुओ ॥ २२३ ॥ वज्जाउहो उ रजे ठविअ सुअं चइरदत्तमुणिपासे । पवइओ चरणरओ  
अहिज्जिओ पुव्वचउदमगं ॥२२४॥ तो विइयमवभायो जिणुव्व अज्जिणोवि सो विहरमाणो । वज्जाउहरायरिमी पत्तो नयरंमि चकपुरे



धीदे०  
वैत्यश्री-  
धर्म० संया  
पारविधो  
॥ ८२ ॥

॥२२५॥ ना रपणाउहराया मह नियजणणीइं रपणमालाए । गंतुं नमइ मुणिंदं भयवं एवं कहइ धम्मं ॥२२६॥ “न तत् परस्य  
संदंष्यात्, प्रतिहूलं यदात्मनः । षप संक्षेपतो धर्मः कामादन्यत् प्रवर्तते ॥ २२७ ॥ किंच-यथा हस्तिपदेऽन्यानि, पदानि पदगा-  
मिनाम् । प्रविशन्ति तथा ह्यत्र, सर्वे धर्माः दयानुगाः ॥२२८॥ मीप्सः-चतुर्विधेयं निर्दिष्टा, त्वहिंसा ब्रह्मवेदिभिः । एषैकतोऽपि  
विम्रष्टा, न भवत्यरिषुदन ! ॥२२९॥ यथा सर्वचतुष्पादस्त्रिभिः पादैर्न तिष्ठति । तथैवेयं महीपाल !, प्रोच्यते कारणैस्त्रिभिः ॥२३०॥  
चातुर्विध्यं त्वेवं-पूर्वं च मनमा कृत्वा, तथा वाचा च कर्मणा । न भक्षयेच्च यो मांसं, त्रिविधं स विमुच्यते ॥२३१॥ त्रिप्रकारं  
तु निर्दिष्टं, श्रूयते ब्रह्मवादिभिः । मनो वाचि तथाऽऽस्वादे, दोषा द्वेषु प्रतिष्ठिताः ॥ २३२ ॥ रसं च प्रतिजिह्वायाः, प्रज्ञानं ज्ञायते  
यथा । तथा श्राव्येषु नियतं, रागो ह्यास्वादतो भवेत् ॥ २३३ ॥ तस्माच्चक्त्वा रसास्वादमहिंसाधर्मकाम्यया । वर्जनीयं सदा मांसं,  
हिंसाभूलमिदं यतः ॥२३४॥ न हि मांसं तृणात्काष्ठादुपलाद्वाऽपि जायते । हत्वा जंतुं भवेन् मांसं, तस्माद्दोषोऽस्य भक्षणम् ॥२३५॥  
मार्कण्डेयः-यो हि ग्रादति मांसानि, प्राणिनां जीवितार्थिनाम् । इतानां च मृतानां च, यथा हंता तथैव सः ॥ २३६ ॥ कश्चित्  
ग्रादको न स्यान्न तदा घातको भवेत् । घातकः खादकार्थाय, तं घातयति नान्यथा ॥ २३७ ॥ अभक्ष्यमेतदिति चेत्, ततो हि  
पिनिवर्तते । खादनार्थमतो हिंसा, मृगादीनां न वर्तते ॥२३८॥ धनेन क्रायको हंति, उपभोगेन खादकः । घातको वधबंधाम्यामि-  
त्येष त्रिविधो वधः ॥२३९॥ आहर्ता चानुमंता च, विशसिता क्रयविक्रयी । संस्कर्ता चोपभोक्ता च, घातकाः सर्व एव ते ॥२४०॥  
एरमेपा महाराज !, चतुर्भिः कारणैः स्मृता । अहिंसाऽतीव निर्दिष्टा, सर्वधर्मार्थसंहिता ॥ २४१ ॥ सोऽमिमं दयारंभं गिह्धिधम्मं  
गदिय मंमरिइं च । जणणीइं गुओ निरइं गओ मुणिं नमिय नियनिलए ॥२४३॥ अह कइया वजाउहरायरिमी निम्ममो मरीरेऽवि ।

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ८२ ॥

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ८३ ॥

विजणपणसे करधवि ठिओ अहोराइअं पडिमं ॥ २४३ ॥ उवड्डिय धूमाओ अयगरजीवो इओ य चक्रपुरे । दारुणसोयरियसुओ  
अइकट्टो नाम उप्पन्नो ॥ २४४ ॥ हिंडंतेणं तेणं इओ तओ पिच्छिउं स रायरिसी । स्वग्गेण अखंडतवो खंडाखंडीकओ मरिउं  
॥२४५॥ अविणट्टधम्मज्ञाणो देवो सव्वट्टसिद्धसुविमाणे । जाओ अइकिट्टो पुण अपइट्टाणे दवाभिहओ ॥ २४६ ॥ कारइ निवो  
अमारिं अह तिन्धुन्नइकए तह सरजे । जिणरहजत्ताइ तहिं चउहाऽऽहारऽऽगपूयति ॥२४७॥ इह होइ असणपूया वरखज्जगमोय-  
गाइभक्खेहिं । दुद्धदहिघयाईभायणेहिं तह ओयणाईहिं ॥२४८॥ जलपूया जलभायणधारादाणाइ खाइमच्चणया । फलदाणादिक्खुसं-  
रिसवाइणा मंगलाइविही ॥२४९॥ साइमपूयाइ पुणो नेयं पूगफलपत्तगुलपमुहं । पंचंगुलितललिहणाइ पुप्फप्पगराइ णेताइं । २५०॥ इय  
पालियगिहिधम्मा रयणाउहराय रयणमाला उ । दिन्नवहुजीवअभया विहियाखिलभत्तपरिचाया ॥२५१॥ अच्चुयकप्पे पुप्फगनलिण-  
गुम्मेसु वरविमाणेसु । चावीमसागराऊ जाया देवा महिड्डीया ॥२५२॥ अह घायइसंडदीवे अवरविदेहे पुरच्छिमद्वस्स । सीयाओ  
दाहिणओ अत्थि सुनलिणो नलिणविजओ ॥२५३॥ नयरीएँ असोगाए तत्थ अहेसी अरिंजयनिवस्म । सुव्वयजिणदत्ताओ भज्जाओ  
सीलसज्जाओ ॥२५४॥ तासि सुया संजाया वीयभय-विभीसणत्ति बलविण्हू । ते अच्चुयकप्पचुया रयणाउहरयणमालजिया  
॥२५५॥ ते साहियमिजयद्धा विसुद्धमद्धा सया सुहसमिद्धा । विहरंति जितविरुद्धा अब्भुन्नसिणेहपडिवद्धा ॥२५६॥ अयराउ नारओ  
सक्कराइ जाओ विभीमणो मरिउं । वीयभओ पुण सुविहियगुणिपासे गिण्हए दिक्खं ॥ २५७ ॥ काउं पाओवगमणं लंतयकप्पंमि  
सुरवरो जाओ । आइचामविमाणे समहियइकारअपराउ ॥२५८॥ वंसाउ पुणुव्वट्टिय विभीमणो जंघुदीवएरवए । सिरिवम्मसुओ  
जाओ सिरिदामनिवो अउज्जाए ॥२५९॥ पत्तो मिहारजचं वीयभयमुरेण पुव्वनेहेण । पडिशोहिओ अणंतइजिणपासे गहिय-

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ८३ ॥

पञ्चओ ॥२६०॥ सामन्नममामन्नं पालित्वा चंभलोपकल्पसुरो । ऊणदममागराऊ जाओ चंदाभसुविमाणे ॥२६१॥ अइकट्टो उव्वट्टिय  
गत्तमपुट्टवीड भमिय भूरिभवे । तिरिएसुं सहिऊणं दुहं चहुं खवियवहुकम्मो ॥२६२॥ अह जाव नईतीरे गोसिंगतवस्मिनंदणो  
जाओ । नामेणं मिगसिंगो उरुडअन्नाणकट्टरओ ॥२६३॥ सविमाणगयं खयरं दट्टु नियाणं करेवि इह जाओ । निववइरदाढ-  
विआजिन्भमुओ विज्जुदानुत्ति ॥२६४॥ तह वजाउहदेवो सव्वट्टा चविय वीइसोगाए । जाओ विजयंतसुओ उ संजयंतोत्ति  
गो उ अहं ॥२६५॥ तिरिदामसुरो चंभाउ चवियभाया जयंननामो सो । होउं किंचिविराहियचरणो जाओ इमो घरणो ॥२६६॥  
पडिमहिओ अणीओ अमुक्कवेरेण विज्जुदाढेण । इत्थ अहं इय भो वेरकारणं एयमेयस्म ॥२६७॥ जइ पुण पुरोहियभवे सुत्तु कमाए  
मणंमि चिन्तंतो । नियदोसेणेय मए पत्तमिणं वमणमइदुमहं ॥२६८॥ अहिं चरमर सप्परे धूमा४ अयगर५ धूमा६ तिकट्ट७  
मापरई८ । इवाइ चहुभवेसुं न सहंतो दारुणदुहं तो ॥२६९॥ ता निज्जिणेह कोहं सया सलोहं चएवि संमोहं । तरिऊण भवजलो-  
हं जइ इच्छह मियमुहममोहं ॥२७०॥ पुण भणइ तेहिं पुट्टो इह तीएऽणागए जिणे स मुणी । विमलाई भावजिणा वार अईया य  
रिगदाई ॥ २७१ ॥ वीयभयसुओ ? घरणो यर वंदिउं विन्नवेत्ति केवल्लिणं । पहु संगमो इओ णो होही ? चोही तदा सुलहा ?  
॥२७२॥ केरली-इह मेरुमालिरन्नो अणंतनिरि ? अमियगई यर देवीणं । होहिह पुत्ता मंदर ? मुमेरुणो ? तुम्हि महुराए ॥२७३॥  
तुम्हं दृण्हरि रज्जं दाऊण कयाइ मेरुमालिनिओ । निरिद्धिमलजिणमगासे पच्चइउं गणहरो होही ॥ २७४ ॥ तुम्हेवि कयाइविहु  
जाईमरणा चण्णि रज्जमिणिं । मिरिद्धिमलजिणममीवे गिज्झस्मिह विहियवरचरणा ॥२७५॥ एतद्भवसंग्राहिके गाथे-चारुणि य ?  
पुण्णनंदो ? मुत्तंमि ? जमोदग४ प लंतया ५ । रयणाउह६ अच्चुयण् ७ वीयभओ ८ लंत ९ मंदरो १० मुक्के ११ ॥२७६॥ देवी य

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ८५ ॥

रयणमाला १ अञ्जुयगि २ विभीसणो य ३ वंताए ४ । मिरिदामनिवो ५ वंतर ६ जयंत ७ धरणो ८ सुमेरु ९ सिवे १०  
॥२७७॥ इय छिनसंमया देवखेयरा जा नमंति केवलिनं । ता कयजोगनिरोहो सिद्धो सो संजयतमुणी ॥२७८॥ निवसीहसेण  
१ इत्थी २ सुके ३ नियअस्सिवेग ४ लंतयए ५ । विज्जाउह ६ मव्वट्टंमि ७ संजयंतो मुणी सिद्धो ८ ॥२७९॥ काउं निव्वाणमहं  
पंचनइसंगमे सुरेहिं कयं । सीमणगनागसिरिसंजयंतसिद्धस्स आययणं ॥ २८० ॥ अह विभवंति खयरा धरणं चरणेसु  
निवडिया धणियं । मामिय ! दिट्ठो कोवो विज्जादाणेण सुपसीय ॥२८१॥ तो ते धरणिदेणं भणिया भो सुणह अज्जपमिइओ ।  
विज्जाउ साहियाओ तुम्ह विहेया भविस्संति ॥२८२॥ एयस्स पुणो वंसे खेयरअहमस्स विज्जुदाइस्स । सिज्झिस्संति कहंपि इ  
न महाविज्जाउ पुरिसाणं ॥ २८३ ॥ इत्थीणंपिहु दुक्खेण मोवसग्गं च सिज्झिहंति तथा । देवमद्दामुणिमहपुरिसदंसणेण व सुहे  
णावि ॥२८४॥ तह भणिया ते खयरा जं इह अट्ठाहियाउ कायव्वा । पइवरिसं तेऽवि तओ मिलिउं मव्वे तह कुणंति ॥ २८५ ॥  
उक्तं च वसुदेवहिंदितृतोयस्वडे—“अञ्ज अट्टमीए दिणओ आढवेऊणं पंचनइसंगमे भगवओ संजयंतस्म नागरणो य अट्ठाहिया  
महामहिमा पवत्ता होहिइ, तत्थ य दोहिवि विज्जाहरसेठीहिं निरवसेसाहिं अवस्सं मिलियन्तंति”इच्चाइ खेयराणं देवममव्वखं ठिइं ठवे-  
ऊण । धरणिंदो मट्ठाणे मह देवगणेण संपत्तो ॥२८६॥ इह संजयंतमुणिसिद्धपडिमपूयाइ भवियवोहत्थं । कहियं पगयं तु मिगेण  
विहिअदेवत्थभत्तेण ॥२८७॥ इत्यग्रपूजाफलकीर्तनात्मकं, श्रुत्वा मृगब्राह्मणसंविधानकम् । सुभोज्यनैवेद्यफलामिसंगतां, विघत्त  
मोक्षादिसुखां सदागताम् ॥२८८॥ इति फलनैवेद्याहारपूजायां मृगब्राह्मणसंविधानकं ॥

अथ भव्यजनानुग्रहाय विशेषतो रात्रिसिद्धपूजास्तुतिप्रदीपादिपूजोपदर्शनार्थं सीमणगपर्वतप्रबंधः प्रदर्शयते, तथाहि—अह कयाइ

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥ ८२ ॥

धोदे०  
 पैत्यधी-  
 परं० संपा-  
 पारविधौ  
 ॥ ८६ ॥

अनिलजसाऽ वाउररखेयरंरममाए । ललियपुरा वसुदेवो आणिय मुक्तो गिरिभिक्के ॥१॥ पुच्छइ तं सुअणु ! तए आणिओ  
 कृत्यऽहं ? कहइ अह मा । सीमणगगिरी एमो हिरिमंतोत्तिय पवुचइ य ॥२॥ एयसिरंमि य एयं निम्मवियं धरणनागराएण ।  
 नामेयजिणाययणं धरणुभेयंति भण्णइ य ॥ ३ ॥ पडिमोवगयस्म इहं किर आइगरस्म भगवओ पुरओ । नमिबिनमीणं पदमं  
 विआ दिमा धरणरत्ता ॥४॥ तह ठविआ मजाया अरिपि जो इह गिरिम्मि वसमाणं । अभिभवइ सो उ महसा कुलेण मह लहु  
 विणस्मिहिइ ॥५॥ अयलबलभइकेवलठाणे वीयं इमं जिणाययणं । कारविअं सिरिविजणण अमियतेण तइयमिई ॥६॥ मत्तु-  
 अगम्मिनि इहाणीया सीमाणे चलामन्ने । तुम्हे अह वसुदेवो नागुभेयं गओ हरयं ॥ ७ ॥ ण्हाउ तहिं जिणभवणे गंतुं वंदित्तु  
 पेए विहिणा । मुइरं च पज्जुवामिय विणिग्गओ मायममयंमि ॥८॥ गंधवेण विवाहिअ अनिलजसं निसमइकमिय गोसे । गहिय  
 जलधलजहुमुमे तह नलिणदलेहिं वरमलिलं ॥ ९ ॥ पनो जिणभवणेसुं दारे उग्घाडिउं पविसिउं च । निस्सीहियाइवि हेणा पस-  
 सियाइं जिणहराइं ॥१०॥ कयसंमज्जणविलेवणे पूइऊण जिणपडिमे । अरणिमहणेण अगणिं उप्पाइय दाउ धूवाइं ॥ ११ ॥ वंदित्तु  
 पेइयाइं विहिणा मुइरं च पज्जुवासित्ता । पिहियदुवारो सपिओ विणिग्गओ जिणगिहेहिंतो ॥१२॥ एवं सो पइदियहं कुणमाणो  
 मप्पिओ वियरमाणो । गिरिकंदरासु वंतरसुरुच्च कालं गमेइ मुहं ॥१३॥ कइया निएवि हयगयरहरखयरविमाणपरिगयं गयणं ।  
 मणइ पिइ ! रयरजणो मसंभमं एइ किमिह इमो ? ॥१४॥ अनिलजमा-इह अज्ज जिणहराणं वरिसमहो एगराइओ एत्तो । अन्नोवि  
 होइ अट्टाहियामहो इत्थ सुमहल्लो ॥१५॥ अत्र च वसुदेवहिंदिअक्षराणि-“एवं तीए भणियं-अज्जउत्त ! इत्थ विजापटमप्पया-  
 णभूमोए जिणाययणं संवच्छरम्मजो एगराइओ संपत्तो, अन्नोऽविय होइ महो इत्थ तत्थ अट्टाहिया होइ महिम”त्ति, नुया

अग्रपूजायां  
 हरिकूट-  
 संबंधः

श्रीदे०  
चैत्यश्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥ ८७ ॥

अस्याः प्रथमे खण्डे भणितं—“तिन्नि महिमाओ करेमाणा ते हरिसेण कालं गमंति”ति, तथोत्तराध्ययनवृत्तौ—दो सासयजत्ताओ  
तत्थेगां होइ चित्तमासंमि । अद्वाहियाइमहिमा बीया पुण अस्सिणे मासे ॥१६॥ एयनिमित्तं तह अज्ज विज्जजावोवयारकज्जेणं ।  
होहि अखिलविज्जाहरममवाओ अज्जउत्त ! इहं ॥ १७ ॥ अह नमिय जिणहराइं जहारिहाणसुरेसु खयरेसु । महिमाइ एगदिवसे  
पयोहिया जिणगिहपईवा ॥१८॥ तथा च वसुदेवहिंडौ—“एवं खयरविंदेसु उवसोहिए मव्वओ समंता धरणुब्भेयजिणाययणे महि-  
माए गयं दिवसं, तओ अत्थमिए दिणयरे उद्वायतमइत्थियाए संझाए अग्गाहियाओ खयरहिं जिणाययणसंसियाओ दीवपंतीओ,  
दीवसयसहस्सेहिं पज्जलिओ इव महीहरो संदीविउं पयत्तो”ति । अह वसुदेवो सपिओ जिणप्पणामकयवंदणो तत्थ । पिच्छंतो पिच्छ-  
णयं अलक्खिओ भमइ खयराणं ॥१९॥ एगत्य गवलवन्नं स खेयरिं नियइ वेरुलियमालं । नचंति जिणजिणजणियभत्तिमुत्ति  
धुवं रत्ति ॥२०॥ अत्र च वसुदेवहिंडिः—“तत्थ य सियसुहुमवत्थपरिहियाए पियदंसणाए विज्जाहराय बुडीए भणियं—पुत्ति !  
वेरुलियमाले ! सच्चं ताव तुमं अज्ज नियमोवधामकरिसिया, तहावि अवस्सं च तुमे अज्ज भगवओ सयलतिहुअणमाणखंमस्स  
उममसासिणो नागरणो य सोववासाए नडोवहारो दायव्वो, तं उयर पुत्ति ! नडुसज्जत्ति, तओ दासीए अम्मत्थिया विणिग्गया  
पट्टजरणियंतराओ मणोहरा महाकन्ना, अविथ—सिहिगलयनीलमग्गयसरिवण्णा मा उवागया तं तु । पवरत्तरमुग्गचंद्रा मणोरहं  
रंगवरभूमि ॥२१॥ जिणपडिमाण य कयप्पणामा पणच्चिया गीययाइयाणुरुवं, अह मयकरणसंपउत्तं वत्तीमइमेयं नट्टं उवदंसियं,  
समइत्थियाए अ निमाए ममुग्गए दिणयरे य मम्मत्तपव्वमहिमं काउणं गयाइ सनगराभिमुहाइं खयरवंदाइं,” वसुदेवो पुण गोसे  
कयुमामइयाइमावयावमओ । काउं पचक्खाणं देवे वंदइ इय थुईहिं ॥ २२ ॥ तद—“देवेन्द्रवन्धो जिनमर्चविधानंदं विधत्ते त्वयि

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबंधः

॥८७॥

धीदे०  
चेत्यधी-  
धर्म० संपा  
पारविधौ  
॥ ८८ ॥

वीक्षते यः । मदा ममामादितधर्मकीर्तिः । शिवं श्रयेताशिशामनेऽसौ ॥ १ ॥ ते सर्वदेवेन्द्रगुरोः सविद्या, नंदन्ति नूनं सुमनः-  
गमानु । ये दशितार्थं श्रुतधर्मकीर्तान् !, नमन्ति देवान् परमान्मपूर्तान् ॥ २ ॥ सर्वदेव 'अनियोगे लुगेवे' इत्यलोपात् सदैव, इन्द्र-  
गुरोः-वाचस्पतेरपि मरुतात् शास्त्रविद्याः कीर्तान्-कीर्त्तनानि । यद्भक्तितः श्रीरपि सार्वविद्यानंद स्थितं पुंमि सधर्मकीर्तौ ससंप-  
देवेन्द्ररति प्रकामं, तस्मै नमो जैनवगगमाय ॥३॥ सार्वविदी-सर्वज्ञसंबंधिनी आनन्द-वबंध ससंपदेव-मद्विद्वि कामं-वांछामि या  
च द्रति-मुंचति निरीहेऽपीत्यर्थः । तेषां मुदेऽवेन्द्रमधर्मकीर्त्ते, बलक्षमूर्ते श्रुतदेवते त्वम् । ये ते गुणानस्तविसार्यविद्यानंदोलयन्ति  
स्तरनेन नित्यम् ॥ ४ ॥ अरभ्य अस्तविसार्यविद्यान्-निगकृतविस्तरविद्यान् दोलयन्ति-इतस्ततो विस्तारयन्ति ॥ तथा च वसुदेव-  
हिंडिः-“व मुदेवो य एञ्चूमरुययम्मत्तमाचयमामार्इयाइनियमो गहियपचकराणो कयकाउस्मग्गथुइरंदणो अवइण्णोमरे कुसुमच्चयं  
काउं” अन्यत्रापि यथा-वंदइ उभओ कालंपि चेडआइ थपथुईपरमो” दैवमि करारिकप्रतिक्रमणयोर्थथाक्रममादाववमाने चेत्यर्थः,  
तथा च महानिशीथे-“चियवंदणपडिकरणं” गाहा, तथा ‘चेइएहिं (अरंदिएहिं) पडिकमिजा पच्छित्तं एका०, तथा मूलावइय-  
कटीका ‘तओ तिन्नि थुईओ जहा पुब्बि, नवरमप्पमइए दिंति, जहा घरकोइलाई सत्ता न उट्टंति, तओ देवे वंदंति, तओ चहुवेलं  
संदिमांति,” रुयजिणगिहपुष्कारुणरंदणो तमह वेरुलियमालं गंतुं । मायंगपुरे तप्पिउगेहे म परिणेइ ॥२०॥ श्रुत्वेति पूजां स्वचरे-  
शरः कृतां, स्तुतिप्रदीपादिभिरुत्तमाद्भुतम् । निर्गममोक्षाम्युदयप्रदीपिकां, कुर्वीत तां तीर्थकृतां प्रदीपिकाम् ॥२१॥ इति स्तीम-  
णगपर्यमचेत्यप्रदीपरात्रिपूजा कायोत्सर्गस्तुत्यादिप्रबंधः । उक्तं ‘तिविहा पूयाय तह’ति चतुर्थे पूजाशिकं, पूजां च कुर्वतो  
भगवतोऽव्याशिकं भाग्यीयमिति पंचमं तत्रशिकं पर्यायाभ्यामाह—

अग्रपूजायां  
हरिकूट-  
संबधः

॥ ८८ ॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ८९ ॥

भाविज्ज अवस्थितियं पिंडस्थं पयस्थं च्चवरहियत्तं ३ । उउमत्थं केवलित्तं २ सिद्धत्थं चैव ३ तस्मत्थो ॥११॥  
 भावितार्था, ननु च-पिंडस्थं च पदस्थं च, रूपस्थं रूपवर्जितम् । ध्यानं चतुर्विधं ज्ञेयं, संमार्गवतारक ॥१॥ मि ते चतुर्धा ध्यान-  
 वेदिभिर्ध्यानमुच्यते, अत्र त्वयथात्रिकेण ध्यानप्रयुक्त, अतोऽत्र चतुर्थं ध्यानं कथं स्याद् ? उच्यते, रूपस्थध्यानं हि जिनविवा-  
 दिदर्शनतः प्रथममेव संजायते, यत उक्तम्—'पश्यति प्रथमं रूपं, स्तौति ज्ञेयं ततः पदैः । तन्मयः स्यात्ततः पिंडे, रूपातीतः  
 क्रमाद्भवेत् ॥१॥' इति स्यादेव यथोक्तध्यानसिद्धिः । अथ भव्यजनानुग्रहाय किञ्चिद् ध्यानचतुष्टयभावनोच्यते—पूजादिषु देहस्थं  
 यथास्थमूर्त्तिं जिनादिकं मनमा । तद्रूपं चात्मानं यद् ध्यायेत् तदिह पिंडस्थम् ॥१॥ मंत्रादिषु गुरुदेवस्तुतौ तथा पादनापरपदेषु ।  
 हृत्पद्मादिपदेषु च यद् ध्यानं तत्पदस्थमिह ॥ २ ॥ तत्र-विघ्नविपक्षयशिवशातिपुष्टिकवित्वचरितादिषु सितानि । क्षोभे विदुम-  
 वर्णान्याकृष्टावरुणवर्णानि ॥ ३ ॥ वश्ये रक्तान्यामितानि मारणे मोहने तु नीलानि । स्तंभे पीतानि द्वेषणेऽर्द्धनीलार्धरक्तानि ॥४॥  
 धूम्राण्युचाटनके राजावर्चकनिभानि परविजये । मरकतभानि भयहतौ ध्यायेन् मंत्राक्षराणि मदा ॥५॥ स्वर्णादिप्रतिमास्थितमर्द्धद्रूपं  
 यथास्थितं पश्येत् । मप्रातिहार्यशोभं यत् तद् ध्यानमिह रूपस्थम् ॥ ६ ॥ मिद्धममूर्त्तमलेपं मदा चिदानंदमयमनाधारम् । परमा-  
 त्मानं ध्यायेद् यद्रूपातीतमिह तदिदम् ॥ ७ ॥ स्वर्णादिर्विपनिष्पत्तौ, कृते निर्मदनेऽन्तरा । ज्योतिष्पूर्णं च संस्थाने, रूपातीतस्य  
 कल्पना ॥८॥ विभ्रतश्च शरीरं च, बहिरात्मा निगद्यते । तदधिष्ठायको जीवन्त्यन्तगात्मा मरुर्मरुः ॥९॥ निरातंको निराकांक्षो,  
 निर्विकल्पो निरजनः । परमात्माऽश्रयोऽत्यक्षो, ज्ञेयोऽन्तगुणोऽव्ययः ॥१०॥ यथा लोहं सुवर्णं च, प्राप्नोत्यौषधियोगतः । आत्म-  
 ध्यानात्तथैवात्मा, परमात्मत्वमश्नुते ॥ ११ ॥ लिंगत्रयविनिर्मुक्तं, मिद्धमेकं निरजनम् । निगद्यं निराहारमात्मानं चितयेद् बुधः

११॥  
ध्यान-  
चतुष्टयं

॥ ८९ ॥



श्रीदे०  
प्रेत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥ ९० ॥

॥१२॥ अथ प्रथमां छद्मस्थावस्थां विभावयिषुर्गाथाप्रथमपादमाह—

णह्वणचगेहिं छउमत्थऽवत्थत्ति

स्नपनं च-मज्जनमर्चा च-पूजां कुर्वतीति स्नपनार्चकाः 'कचिदिति' डप्रत्यये, स्नपनकारा अर्चाकाराश्चेत्यर्थः, ततश्च स्नापकैः परिकरो-  
परिषटितगजारूढसकलशैरमरैः अर्चाकैश्च तत्रैव घटितमालाधारैः कृत्वा जिनस्य छद्मस्थावस्थां भावयेदित्युक्तप्रकारेण संबन्धः, छद्मस्था-  
ऽवस्था च त्रिधा-जन्मावस्था १ राज्यावस्था २ श्रामण्यावस्था चरे, तत्र चेयं बृहद्भाष्योक्ता भावना-"उभयकरधरियकलसा  
गजगयसुरवह्णपुरस्सरा तियसा । गायंता वायंता जिणपरिगरउवरि निम्मविया ॥१॥ (२१८) वररयणरययकणयनिम्मिएहि मिस्सेहिं  
वरेहिं कलसेहिं । सुरगिरिभिहरोवरिसरहसमिलियसुरअसुरनियरेहिं ॥२॥ विहियं ठावंति मणे संपइ अम्हारिसाण लोयाणं । जम्मण-  
समयपउत्तं मज्जणमहिमासमारंभं ॥३॥ (२१९) वत्थाहरणविलेवणमल्लेहिं विभूसिओ जिणवरिंदो । रायसिरिमणुहवंतो भाविज्जइ  
मालहारेहिं ॥४॥ (२२०) एवं च जन्मावस्था राज्यावस्था चोक्ता, श्रामण्यावस्था तु भगवतोऽपगतकेशशीर्षमुखदर्शनात् गुज्ञा-  
नैवेति सूत्रे माक्षान्नोक्ता, बृहद्भाष्ये त्वेवं-'अवगयकेसं सीसं गुहं च दिट्ठं पि भुवणनाहस्स । साहेइ समणभावं छउमत्थो एस  
पिंडत्थो ॥५॥ (२२१) अन्यैस्तु जन्मराज्यावस्थाद्वयं विहाय छद्मस्थावस्थायां श्रामण्यावस्थैवैका भाविता, तत्र चैवं व्याख्या-  
स्नानार्चाकारकैः पूर्वोक्तार्थैः छद्मस्थश्रीषुगादिदेवपार्श्ववर्तिभ्यां, इव नमिदिनमिभ्यां दीक्षामहोत्सवार्थं वा सर्वतो मिलितैरिव  
सुरासुरनरेश्वरविसरैर्जिनस्य छद्मस्थावस्थां श्रामण्यावस्थायां भावयेदिति, एषा त्ववस्था-'जे अईया सिद्धे'त्यस्यां गाथायां भाव्यते,  
अनुत्पन्नकेवलज्ञानानामपि जिनानां द्रव्यार्हत्वात्, उक्तं च चैत्यवंदनलघुभाष्ये-'जे अ अईयागाडाणं वीयदिगारेण दव्वअरिहंते ।

छद्मस्थाव-  
था भावना

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ९१ ॥

पणमामि भावसारं छुमत्थे तिसुवि कालेसु ॥१॥"त्ति ॥ नमिचिनमित्तं वंधश्चायं-इह भरहे सञ्जियधणुहसंनिहे अत्थि कोसला  
नयरी । नासञ्जुआ दिप्पंतसुरयणा अमरनयरिष ॥ १ ॥ सालासु तंतुवायाण जत्थ वसणुब्भवो तह तरुसु । छायाएँ परावचो  
मयणंमि य मारसदो उ ॥२॥ मग्गणसदो वाणेसु चालहत्थीसु तह कलहसदो । रयणेसु वयरसदो न कयावि हु नायरजणस्स  
॥३॥ आखंडलकरयलकलियकणयकलसकयरअअहिसेओ । स्तिरिरिस्सदो मंतेसुव पणवो पढमो निवेसु निवो ॥४॥ दंसियनिस्सेस-  
कलाविआविआणसिप्पकम्मस्स । मंतिपरिकप्पणा रायनीइमित्तं चिय पहुस्स ॥५॥ तिहुयणभवणोयरविउरवत्तिसत्ताण रक्खणख-  
मस्स । सेवगपणयावेक्खाइ अंगरक्खा ण य समिक्खा ॥६॥ सयलामरअसुरनरिंदविंदसेवियपयारविंदस्स । हरिकरिरहवरभडनिव-  
हसंगदो रअविइमित्तं ॥७॥ तिहुअणपिउणो पहुणो सुहमाणालंवरं पहरणाइं । असिचक्कावसरसिल्लभल्लवावल्लपमुहाइं ॥८॥ कुमरत्तं  
वीसं पुबलक्ख तेवट्ठि तहय इय रअं । पालिय तओ वियाणिय दिक्खासमयं नियं सामी ॥९॥ सामंताइसमक्खं जा भरहं नियपए  
ठवेइ तहा । बाहुयलिपमुहकुमराणवि भइउं देइ देससयं ॥ १० ॥ ताव सुदिट्ठी धंभंतरिड्डपयरिड्डकिण्हराइंतो । ईसाणाइविमाणेसु  
अट्टअगराउ लोयंता ॥११॥ अच्चि१य अचीमाली२विरोयण३पभंकरे४य चंदाभे ५ । सराभे६ सुक्काभे ७ सुपइट्ट८ रिट्ठे ९ नव  
विमाणा ॥१२॥ सारस्सय१माइच्चा २ वण्ही ३ वरुण ४ गदतोय ५ तुसिया य ६ । अन्वाहा ७ अग्गिच्चा ८ रिट्ठभिहा९इंति इय  
संखा ॥ १३ ॥ दुदुदुतिसु पुढो सगहिय सगसय चउदस सहस्स चउदहिया । सत्तहिया सगसहसा नवुत्तरा नव सया कमसो  
॥१४॥ ते वेयालियकप्पा नियनियपरिवारिणो कयंजलिणो । बुज्झाहि नाह ! तित्थं पयट्ट जगजियहिअट्ठाय ॥१५॥ एए देवनिकाया  
तत्थ य दुसु आइमेसु सत्त मया । दुसु चउदससहसा दुसु मइस तिसु नव सया अमरा ॥१६॥ भत्तिभरनमियसिररइअंजली ते

नमिचिन-  
मिड्डत्तं

॥ ९१ ॥

श्रीदे०  
पैत्य० धी-  
र्म० मंया-  
पारविधौ  
॥ ९२ ॥

उ विभ्रयंति इमं । मवजगज्जीवहियं भययं ! तित्थं पवसेहि ॥१७॥ इय विभ्रविउं मामिं नमिऊण य ते सुरा गया मग्गं । जिण-  
नमणाओ मग्गं उंति जि्या अहव किं चुअं ? ॥१८॥ इंदनियत्तकुवेरप्पेरियजंभगसुरेहिं जयपहुणो । मणिरयणकणयपमुहो उव-  
णीओ विवि विहरभरो ॥१९॥ मिघाडगतिगच्चरचउक्कचउमुहमहापहपहेसु । तह गोयररत्थाइसु वरवरियाघोसणेण तओ ॥२०॥  
श्रोदयाउ आग्गम पायगमाउ जाव जयनाहो । वियरेइ कोडिमेगं कणगस्म तहऽट्टलक्खा उ ॥२१॥ कोडीसय तिग कोडी अट्टा-  
मीई अमीइलक्खा उ । जगवञ्जलेण संरञ्जरेण दिन्ना तिजयपहुणा ॥ २२ ॥ एवं कंचणधाराहिं तच्चधाराधरोविव धराए । पढमो  
पगाधिगया धरिसेइ दरिदसंतापं ॥२३॥ अह वरिसियदाणंते मडगा चलियामणा सुरवरिंदा । मविड्डीइ मपरिमा सव्वेऽवि ममा-  
गया इत्थ ॥२४॥ तदिक्खामिसेपं मायकुंभकुंभेहिं अंभभरिएहिं । पहुणो कुणंति अह प्ह आरुहइ सुदंमणं सिवियं ॥२५॥ पुच्चिं  
उक्खिना माणुसेहिं माहदुगेमहूवेहिं । पञ्जा वहंति सीयं असुरिंदसुरिंदनागिंदा ॥२६॥ सुग्गवग्परियरिओ चित्ते कसिणट्टमीइ  
अररण्हे । छट्ठेण अपाणेणं मिद्रत्थरणंमि गंतु प्ह ॥२७॥ हरिक्खणाइ चउमुट्ठि काउ लोयं तओ नभिय मिद्धे । मम मवमकगणिअं  
पारंति चरित्तमारुदो ॥२८॥ अह उक्खिंत्ते दुवहगुरुचरणभरंमि मामिणो ममगं । माहिअंपिय दाउं मणपअवनाणमुप्पन्नं ॥२९॥  
तह पणारि महस्सा कञ्जमहाकञ्जपमुहनरइणो । मयमेव विहियलोया प्हमनीएँ गहियंमु वयं ॥३०॥ कलहेहिं गइंदो इव अणु-  
गम्मंती मुणीहिं तेहिं प्ह । जलहिब भूरिमत्तो कयमोणो विहग्ग वसुहं ॥३१॥ मिकवाइ गओ सामी भत्तीइ जणेण हयगंयाईहिं ।  
कस्साहिं निर्मत्तिअइ रत्थाभणेरणामहिं च ॥३२॥ तइया अणुणियमिक्खत्तायरो जणो दाउ जाणइ न मिकवं । तो मिकवं अलहंता  
एुहामिभूया मुणी ते उ ॥३३॥ इट्ठी कुमेरना इव मत्तु प्हं इकगं तओ मन्ने । गंगातीग्गणेसुं जाया कंदाइआहाग ॥ ३४ ॥

नभिविन-  
मिबृत्तं

श्रीदे० नै-  
त्यश्रीधर्म०  
संपाचार-  
विधौ  
॥ ९३ ॥

कच्छमहाकच्छसुया पद्मआएसेण दूरदेसंमि । गयपृथि नमीविनमी अहागया तेण मग्गेण ॥३५॥ ते नियजणए ददुं विमायदि-  
हुरा भणंति हा ताया ! । किमणाहा इय तुब्भे नाहे मइ रिमहनाहेऽवि ? ॥३६॥ ते विञ्चु पुषवितं भणंति जलदुहुरव कीडव्य ।  
न चएणु विणु जलने मामिमसं अच्छिउं वच्छ ! ॥ ३७ ॥ तुब्भे उ भयह भरहं मो भे काहिइ ठिइज्वगन्निप तं । सीमणगनगे  
पडिमाठियपहुपासे वयंति इमे ॥३८॥ विणएण नमिय पभणंति नाह ! भरहाइनियसुयाणं व । पुवं अदिश्वरजाण अम्ह रज्जप्पओ  
होसु ॥३९॥ किं देव ! देवपाएहिं पिक्खिओ कोऽवि अविणओ अम्ह । जं पडिययणंपि न देह अप्पमन्नव जयनाह ! ॥ ४० ॥  
जइवि न जंपइ मामी तहावि एमो गई मई अम्ह । इय निच्छिय ते देवं एयं सेवेउमारद्दा ॥४१॥ तथाहि-जलरुहिणीपत्तेहिं जला-  
सयाभो जलं रामाणेउं । सामिममीवे वरिसंति निचमहरंणुगमणत्थं ॥४२॥ तह गोसे तोसेणं पुक्कप्पगरं करंति पद्मपुरओ । अविरल-  
परिमलपरिमिलियभमलकुलमहुरवरुद्धं ॥४३॥ करकोमधरियनिकोमअभिवरा संठिया उभयपासं । सययं सेवंति पद्मं सुमेरुसेलं व  
समिग्ग ॥४४॥ नमिऊणं च तिसंज्ञं मग्गंति कयंजली मया अम्ह । तं मुत्तु पद्मं नऽओ मामिय ! रज्जप्पओ होसु ॥४५॥ अन्न-  
दिणे धरणिंदो पद्मपपनमणत्थ तत्थ संपतो । ते तह कुव्वंत ददुं कोउगा इय पयंपेइ ॥४६॥ भो भदा ! केतुब्भे ? किं मग्गह ?  
किं तया गया कत्थ ? । जइया पद्मणा दिन्नं मव्वेमि किमिच्छियं दाणं ? ॥४७॥ इण्हि पुण एम सामी निस्संगो निम्ममो मरी-  
रेऽवि । वासीचंदणतुल्लो विवज्जिओ रोमतोसेहिं ॥४८॥ छउमत्थावत्थाइवि उटुंतो जो छउमपरिमुक्को । कयमोणो वसुहाए अनिय-  
यत्तिहीइ विहरेइ ॥४९॥ नूणं इमस्म मामिस्म सेवगा केऽवि एम भत्तुनि । चितिय मगोरवं ते उरगपइं तं पयंपंति ॥ ५० ॥  
एयम्म वयं भिच्चा एयादेसेण दूरदेसंमि । अगमिंसु मपुत्ताणं मव्वेसिमदाग्गि रजाइं ॥५१॥ एम पद्मणोऽवि रजं वियरिस्मइ अवि

नमिविन-  
मिष्टं

॥ ९३ ॥

धीदे०  
वेत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
पाविधौ  
॥ ९४ ॥

विदिन्नमश्चस्ते । गरुआण चलणसेवा कयावि नहु निष्कला होइ ॥५२॥ अविष-पहुणो अत्थि न अत्थि व इय चिंता नो कयावि  
कायशा । किंतु विहेया सेवा सयकालं सेवगजणेण ॥ ५३ ॥ सेवह गंतुं भरहं सामिस्स य नंदणोवि सामिब । एवं पुणोवि धरणेण  
पमणिया ते उदाहु इमं ॥ ५४ ॥ वच्छरियमहादाणेण पूरिउं सयललोयआसाए । पयलग्गधूलिलीलं जइवि चएसी य रअभरं  
॥५५॥ वट्टंतो छउमत्थावत्थाए तहवि छउमपरिमुक्को । दुत्थियजणपत्थिअत्थसत्थिचिंतामणी एसो ॥ ५६ ॥ ता लहिय सामिमे-  
रिममन्नं मामिं यं नहु करेमो । को कप्पपायवं पाविऊण सेवेइ करीरतरुं ? ॥५७॥ न य अन्नं पत्थेमो तिहुअणसामिं इमं पमुत्तूण ।  
किं वप्पीहो पीढइ जलधारं मुत्तु अन्नं पि ॥५८॥ भदं भरहाइणं हवेउ किं तुह इमीइ चिंताए ? । जमियाउ होइ पहुणो सं होउ परेण  
किं अग्घ ? ॥५९॥ अवि-होइ थिराणं लच्छित्ति जिणसुई सुवए तओ अग्घे । होमो न उस्सुया जह मुद्धो कागीकयमऊरो ॥६०॥  
तहाहि-इह कोइ नरो आजम्म निद्वणो बालकालमयपियरो । भूरिपिसएसु भमिओ विभूइहेउं न सा पत्ता ॥६१॥ भणियं च-  
दूं वचइ पुरिमो हियए धरिऊण सयलमुक्कवाइं । तत्थवि पुवकयाइं पुवगयाइं पडिक्खंति ॥६२॥ कंमि अरण्णे चिरजिण्णदेउले  
कोइण्णेण अह जक्खो । आराहिओ पयंपइ बहववासेहिं तं सुमिणे ॥६३॥ भो पइदिणमिह गमिही मुत्तु सिही कणगपिच्छमिक्किं ।  
गाणि य कमेण गहिउं पभूयभूई भवेज सुही ॥६४॥ किमिणंति व बुद्धो मो जा चितइ ता समागओ मोरो । सो सुचिरं नच्चिय  
कणयपिच्छमिक्किं विमुत्तु गओ ॥ ६५ ॥ इय कइसु दिणेमु गएसु चितए स इह किच्चिरं वसिमो ? । ता लहु एयकलावं एगसरं  
गहिय जामि गिहं ॥ ६६ ॥ तो वीयदिणे मुद्धो पिच्छकूलावं म नच्चिए मोरे । जा गिण्हइ ता सहसा गओ मिही वायसीहोउं  
॥६७॥ अतः पठ्यते-अत्रग मयकार्येषु, स्वरा कार्यविनाशिनी । स्वराभाषेण मयैवण. मयरो वायसीकृतः ॥६८॥ तो तो विल-

नमिविन-  
मिवृत्तं

श्रीदे०  
 चैत्य० श्री-  
 धर्म० संघा-  
 चारविधौ  
 ॥ ९५ ॥

कलचित्तो खित्तो दूरे सुरेण कुविण्ण । अवहरियपुबपिच्छो जाओ सवत्थ दुहभागी ॥ ६९ ॥ इय तेसि सोउ वयणं थडो धरणो भणेइ भो भदा ॥ एसग्धि इमस्स पडुस्स सेवगो पन्नगाहिवई ॥ ७० ॥ एसुच्चिय किर सामी सेवेपन्वो सपावि नहु अब्भो । तुम्हाण धुवव थिरा सुपइना साहु साहु इमा ॥ ७१ ॥ पडुणो इमस्स तुम्भेऽवि सेवगा सेवगो अहंपि तओ । पडुपायपसायफलं ददामि खयरसरत्तं वो ॥ ७२ ॥ पडुसेवापत्तं चिय एयं बुज्जेह मा गणह अन्नं । उज्जोओ अरुणभवोऽवि रविभवो चेव भुवि जेण ॥ ७३ ॥ इय संबोहिय तेसि गोरीपन्नत्तिपमुहविज्जाओ । अडयालीससहस्साइं पाढसिद्धाउ वियरेइ ॥ ७४ ॥ भणइ य वेयडुनगे गंतुं सेढीदुगंमि भो तुम्भे । ठावित्तु पुरवराइं करेइ निकंठयं रज्जं ॥ ७५ ॥ तो नमिय भुवणसामिं विउच्चिउं पुष्कगं वरविमाणं । आरु- हित्तं ते चलिया पन्नगवइणा समं चेव ॥ ७६ ॥ पडुसेवापत्तं तं संपयमकहिंसु गंतुं जणयाणं । जाणाविसु य भरहेसरस्स गंतुं अउ- ज्जाए ॥ ७७ ॥ तत्थ य-निययसयणवगं ते सपरियणं पमुइयं विमाणंमि । आरोविउं खणेणं पत्ता वेयडुसेलंमि ॥ ७८ ॥ पणुवीस- जोयणुच्चो पंनासं वित्थडो य रययमओ । चउसेढी सिद्धाययणमंडिओ पवरनवकूडो ॥ ७९ ॥ दसजोयणेहिं उवरिं भूमितला उविय जंमसेढीए । दसजोयणपिहुलाए पंन पुरे सद्धि इयरीए ॥ ८० ॥ रज्जं पालेइ नमी रहनेउरचक्कवालनयरंमि [प्रत्यन्तरेऽधिकं-तेसु पुरेसु सभासु य नमिविनमीहिं फुरंतभत्तीहिं । ठविओ सिरिरिसहजिणो धरणिंदो नागराया य ॥ ८१ ॥ अत्रावश्यकचूर्णिः-‘पुरेसु भयवं उतभसामी देवयं ठाविउं’ तं पूयंति तिसंज्ञं ज्ञायंति सया अवंज्ञफलमुसहं । अञ्जउमत्थं छउमत्थवत्थसुत्थं थुणंतेवं ॥ ८२ ॥ सुइकसिणचउत्थीए उत्तरसाढाहिं जो सुरिंदेहिं । कहिओ मरुदेवीए ओयरिओ भावितिजयपहु ॥ ८३ ॥ चित्तकसिणट्टमीए जं जम्मणमज्जणकूखणे सन्वे । सुरसेले भनीए षड्विसु पूइंसु देविंदा ॥ ८४ ॥ जेण हरिविहियरज्जामिसेयविहिणा अहेसि जयपडुणो ।

नमिविन-  
 मिवृत्तं

॥ ९५ ॥

श्रीदे०  
 चैत्यश्री-  
 धर्म० संपा-  
 षारविधौ  
 ॥ ९६ ॥

इह वसुमई वसुमई सुनयसणाहा मणाहा य ॥ ८५ ॥ रञ्जावमरे चिरधरियनलिणिपत्ताभिसेयसलिलेहिं । मिहुणेहिं ष्ववणगेहि व  
 जप्पयपउमा य अमिह्दया ॥ ८६ ॥ नाणं वरविन्नाणं कलाउ मकला जओ पहुत्तं मा । रञ्जं पहुत्तसज्जं पावेसि जणो य सयणो य  
 ॥ ८७ ॥ लोयंतिमग्गणा इव नमज्जणा सज्जणा न के हुआ ? । संवच्छरियमवुच्छं किमिच्छियं जस्स दिंत्तस्स ॥ ८८ ॥ चित्ताइम-  
 हर्माण महया महयामि गिण्हरे जंमि । के के न चुहा विचुहा महिमं महिमंडले कासी ॥ ८९ ॥ सो जयउ दुविहमोणो अजो  
 अजे जणंतुण्णजेवि । कइया पुण दच्छामो तं तिजइदं तिजयभाणुं ? ॥ ९० ॥ तेण अदेवावि जणा देवावि व दिव्वरिद्विणो विहिया ।  
 होउ तया य मयाविह्दु नमो नमो नमिरअमराय ॥ ९१ ॥ तत्तो तत्तत्ताओ हुत्था मत्थावि अत्थमुक्कयत्था । तस्सेव किंकरा मो  
 दाया पेमा य मिचा य ॥ ९२ ॥ तंमि छउमत्थवत्थे विहरंते महियलं पवित्तंते । वरधम्मकित्तिपत्ता होउ सुभत्ती सया अग्ग  
 ॥ ९३ ॥ इय मत्तविभत्तिविभत्तिभत्तिभत्तीइ संथुओ रिमहो । वियरउ संपइ संपइ मया विभत्तिं गयविभत्तिं ॥ ९४ ॥ ]  
 अह वरिसंते गयउरि गओ पह अत्थि जत्थ कुमरत्ते । चाहुवलिपुत्तसोमपहधारिणीसूणु सिज्जंसो ॥ ९५ ॥ दइं सुमिणं सुतेओ  
 पडंनुणा पोविउं कओ मेरू । कुमरेण तहाऽरिवलं कयमाहिजो जिणइ सुहडो ॥ ९६ ॥ रविणो रस्सिमहस्सं भस्संतं कुमरजोइयं  
 दित्तं । इय कुमरनिउदसिटीं नियनियसुमिणे कइंमु तहा ॥ ९७ ॥ सुदट्टु तदत्थममृणिरा वुत्तु सुतेया ? रिजय २ पयासा ३ य । जं इह  
 कुमरकया तो फलमस्मानि गया मठाणे ते ॥ ९८ ॥ तिजयावामं वामंमदेमठियवामदेवदूसेण । तित्थंकरवेसेणं विभूसियं भूमण-  
 रिमुत्ते ॥ ९९ ॥ पामित्तु मणिहमित्तं पट्टं विचित्तइ तया य सिज्जंमो । एरिमलिंगं नणु मे मुदिट्टपुवं सरइ इय तो ॥ १०० ॥ (पारावइ  
 त्रयपुंसं) पुवं पुवविदेहे पुह्णवलयऽविजयपुंडरिगिणीण् । निरवयस्सेणु रञ्जं चइय गिडेमिणि जिणलिंगं ॥ १०१ ॥ नेणुत्तमिमे

नमिविम-  
 मिवृत्तं

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ९७ ॥

वज्रनाहवाहुसुवाहुपीढमहपीढा । सवष्टि भरहि जिणचकि भुयवली थीदुगं होही ॥ १०२ ॥ तो सहरिसं सरहसं उत्तरियमणुत्तरं  
तिलोयपहुं । नमइ तिपयाहिणं मो पयाहिणं दिज्जमाणगुणो ॥ १०३ ॥ कुमलो कोसल्लागय इक्खुस्सं सुहरसं सुहासरिसं । पारावइ  
जयनाहं पणदिव्वाविभवमणाहं ॥ १०४ ॥ कहमेयं ते नायं ? तत्थ तयागयनिगाइणा पुट्ठो । सिजंसो भणइ अहं भमिओ पहुणा  
सहइहभवे १६ ॥ तेहिं कहंति पवुत्ते भणइ इमो धाइखंडदीवंमि । पुबविदेहे पुषेण मंगलावइयविजयंमि ॥ ७ ॥ नागिलनागसिरि-  
सुया मत्त सलक्खण सुमंगला धन्नी । सुब्बी उब्बी छाडी निन्नामिय नंदिगामंमि ॥ ८ ॥ घण चरभोयण माउय पिडुंवरतिलय-  
गिरिं फलत्थगया । मुरिजुगंधरदुहपुच्छ चउगइ धम्मं च वंभधरा ॥ ९ ॥ अणसण ललियंग नियण मयंपहेमाण सिरिपहविमाणे  
पुंडरिगिणीइ जिणचकिवइरसेणस्स गुणवइए ॥ १० ॥ सिरिमइधिय सुरदंसण जाइसरण मउण भंडिगा चित्तं । जिणवरिसमहे  
लोहग्गलसामियज्जजंचपरिणयणं ॥ ११ ॥ सरयण मुसाहुदानं सुय विसधूमियगिहुत्तर सुहंमे । वच्छावई पहंकरपुरी अभय-  
घोम विजसही ॥ १२ ॥ पन्नवणि पुन्न केसव मुणिजागर दिक्ख अचुयसमाणा । पुंडरिगिणीइ वज्रनाह सारही दिक्ख सवट्ठे  
॥ १३ ॥ जिणचइरसेणपासे सुयंति भरहे जिणो वइरनाहो । होही पढमोत्ति तं तं ददट्टु पहुं मे सुमारियं तं ॥ १४ ॥ जओ-सवेवि  
जिणा इगदेवदूसरूवे हवंति जिणलिंगे । न य अन्नतित्थिलिंगे न साहुलिंगे न गिहिलिंगे ॥ १५ ॥ निन्नामि ललिंग सयंपह ? सिरिमइ  
वज्रजंपुर नररे सुहमे ४ । केमवऽभयघोमा ५ च्चुय ६ सारहि वज्रनाह ७ सवट्ठे ८ ॥ १६ ॥ तेऽवि तओ सुयविहिणा भत्ता भत्तीइ दिति  
भत्तीई । पहुपयठाणे पीढचनादिगरमंडलपमिद्धी ॥ १७ ॥ रहचक्कवालनयरे णमी ठिओ उत्तराइ दाहणओ । सिरिगयणवह्महपुरे  
विनमी पुण धग्गवयणेण ॥ १८ ॥ मव्वेसुवि नयरेसुं नमिविनमीहिं फुरंतभत्तीहिं । ठविओ सिरिरिमहजिणो धरणिंदो नागराया

नमिविन-  
मिष्टुत्तं

॥ ९७ ॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥ ९८ ॥

य ॥१९॥ विज्ञावलदपंधा करिसु मा दुश्चय इमे स्वयरा । तो धरणिदो तेसिं एवं मेर ठवेसीय ॥२०॥ सिरिजिणवराण जिणचेइ  
आण सुमुणीणचरमटेहाणं । मिहुणाण परिभवकरो होही णु सज्जो विगयविज्जो ॥२१॥ इय भणिय रयणमित्तिसु तं मेर लेह्दिऊण  
ते ठविउं । विज्ञाहराहिउत्ते तिरोहिओ ज्जत्ति धरणिदो ॥ २२ ॥ तेऽवि छउमत्थवत्थ पहुणो सच्छामया विभावंता । पहुपयसेवाइ  
फलं मणंमि धणियं विचिंतिन्ता ॥ २३ ॥ पूयंता य तिसंझं अवंझफलदायगं रिसहनाहं । दोगुदुगुष देवा गयंपि कालं न याणंति  
॥२४॥ अह वरिसंते गयउरपुरे पहुंच पारवेइ सिज्जंसो । बाहुबलिपुत्तसोमपहनंदणो पवरइकखुरसं ॥२५॥ नहलीअडंबइल्लाजोण-  
गपल्हगमुवण्णभूमाई । छउमत्थो विहरतो कुणइ पहु भइए देसे ॥२६॥ वाससहस्संते कसिणफागुणिकारसीइ वरनाणं । पहु अट्ट-  
मेण पत्तो सगडमुहवणे पुरिमताले ॥ २७ ॥ पुव नयमगंगंपिव सुधम्ममगंगं पहु पयासितो । नियचरणफरिसणेणं विहरइ वसुहं  
पविचंतो ॥२८॥ नमिविनमी स्वयरपहु कयावि नियनियसुएसु रज्जभर । सठविय रिसहसामिस्म पायमूलंमि पवइया ॥२९॥ धरिय-  
वरचरणकरणा पुंडरियनगामि निम्मियाणसणा । मुणिकोडिनुअलजुत्ता नमिविनमिरिसी सिवं पत्ता ॥३०॥ नमिविनमिखेचरेश्वर-  
चरितं श्रुत्वेति जिनपतेर्भयिकाः! । छन्नस्थावस्था चैत्यनमनसमये सदा सरत ॥३१॥ इति नमिविनमिखेचरेश्वरसंबंधः ॥

इत्युक्ता छन्नस्थावस्था, अथ कवलपयस्था गाथाद्वितीयपादनाह—

‘पडिहारणहिं केवलिय’ति

प्रातिहायः—प्रतिभापरिकरोद्घटितैः कैवलिकामवस्था, मन्त्रिपुत्रदेवदत्तवत्, जिनस्य भावयेदिति गम्य, तत्र प्रतिहारा इव सदा  
पुरोऽवस्थानात् प्रतिहाराः सुरपतिनियुक्ता देवास्तेषा कर्माणि—कार्याणि प्रातिहार्याणि, तानि चाष्टौ, तथाहि—जिण अट्ट पाडिहेरा असोग-  
तरु कुसुमबुद्धि दिवशुणी । चमराइं मिहामण भामंडल मेरि छत्तियं ॥१॥ तत्र परिकरोपरितनकलशोभयपार्श्वघटितैः पत्रैः स सर्वकाल

नमिविन-  
मिबृत्तं

समुल्लसद्बहुलपाटलपल्लवमनोहारिसमधिक्रयोजनविसारिविसालसालशाली कंकणवृद्धः केवलोत्पश्यन्तरं जिनस्योपरि शरीरप्रमा-  
णाद् द्वादशगुणो गीर्वाणैर्विधीयत इति विभाव्यते, उक्तं च—“समहियजोयणपिडुलो बत्तीसधणूसिओ उ वीरस्म । सेसाण चेइय-  
दुमा ससरीरा चारसगुणा उ ॥१॥”<sup>१</sup> तथा मालाधारैः परिकरघटितैः समंततो विकुर्वणाविरचिताधःकृतवृंतजानुदयसुरभिपंचवर्ण-  
जलस्थलजविकचमणीवकप्रचयवृष्टिः संस्रव्यते २, अथाम्लानसुमनःप्रकरस्योपरि कथं सर्वथा सचित्तसंघट्टनादिविरतानां यतीना-  
मवस्थानं कर्तुं युज्यत इति १, तत्रैके प्रत्युत्तरयंति—साध्ववस्थानस्थाने न तानि सुराः प्रतिकिरंतीति, तत्रान्ये निगदंति—नैतदेवं,  
प्रयोजने अन्यत्रापि साधूनां गमनादेरपि संभवात्, केवलं विकुर्वितत्वात् तानि सचित्तानि न भवंति, अपरे त्वमिदधति—न विकु-  
र्वितान्येव तानि, जलजस्थलजानामपि कुसुमानां तत्र प्रकीर्णत्वात्, तथा चागमः—“बिंटट्टाईं सुरहिं जलथलयदिबकुसुमनीहारिं ।  
पयरंति ममंतेणं दसद्धवणं कुसुमवासं॥१॥”<sup>२</sup>ति, परमत्रैवं बहुश्रुताः समादधते—यथा निरुपमाचित्यपारमेश्वरप्रभावादेकयोजन-  
मात्रेऽपि क्षेत्रेऽपरिमितमर्त्यामर्त्यादिलोकसंमर्देऽपि न परस्परमावाधा विवाधा वा काचित् तथा सुमनसामपि तासांमुपरि संचरिष्णौ  
वा मुन्यादिलोके इति, तद्यं पुनः केवलिनो विदंतीति २ तथा वीणावंशकरैः प्रतिमोभयपार्श्ववर्तिभिः भक्तिभरविवशविबुध-  
विसरवाद्यमानवेषु वीणाद्यनुसारिमालवकैश्चिक्यादिशामरागमनोहारिसरससुधारसानुकारिसकललोकानंददायी दिव्यो ध्वनिः संस्र-  
र्यते ३ अत्राहुर्वहुश्रुताः—यद्यपि चायमनुपमो भगवत एव ध्वनिः तथापि यद् देशनाममये बहुबहुमानातिशयप्रेरितोभयपार्श्व-  
वर्तिभिरमर्त्यैः वरेण्यपुण्यलवानुगातिवल्गुवेषु वीणादिकणैर्भगवद्वचनमन्वीयते तदंतावताऽंशेनास्य प्रतिहारदेवकर्मत्वं न विरुध्यते  
इति ३। तथा प्रतिमानामूर्ध्वपश्चाद्भागविलसद्ज्ज्वलाखंडचंडांशुमंडलाकारदर्शनात् प्रकृतिभास्वरतीर्थकरकायतः तेजःपुंजं सुरैः

श्रीदे०  
चेत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१००॥

संपिंड्य तद्रूपसुखावलोकनाय रात्रावपि तमोऽपनयनाय च जिनशिरसः पश्चादास्रत्रितं भावलयायमानं भामण्डलं चिंत्यते ४ । तथा  
दुंदुमिकैश्छत्रत्रयोपरिनिर्मापितैः तारतरस्फारभांकारसंभारनिर्भरभरितभुवनोदरविवराः सुरैः मदा श्रीजिनपुरतो वाद्यमाना मेरयो  
महादकाः स्वर्यते ५ । चामरसिंहासनच्छत्रत्रयाणि प्रकटान्येव, एतदर्थमेव मुक्तिपदप्राप्तानामपि भगवतां तीर्थकृतां अष्टमहाप्राति-  
हार्यादिपरिवृत्ताः प्रतिमा निर्माप्यन्ते, उक्तं च बृहद्भाष्ये—“इय पाडिहेरिद्वी अणन्नसाहारणा पुरा आसि । केवलियनाणलंभे  
तित्थयरपयंमि पत्तस्म ॥१॥ (२२३) जिणरिद्विदंमणत्थं एवं कारेइ कोइ भत्तिजुओ । पायडियपाडिहेरं देवागमसोहियं चिंवं  
॥२॥ (२७) मुत्तिपयसंठियाणवि परिवारो पाडिहेरपामुक्खो । पडिमाण निम्मविज्जइ अवत्थतिगभावणणिमित्तं ॥३॥ (८२) भरहेणं  
निम्मविया अट्टमहापाडिहेरसंजुत्ता । अट्टावयंमि सेले पडिमा सिरीरिमहधूहंमि ॥४॥ उक्तं च महापुरुपग्रंथे श्रीश्रुतभदेवनिर्वा-  
णोदेशके—बहुइरयणं भणियं एत्थुत्तुंगे नगंमि धूमसयं । मणिकणयरयणचित्तं कंचणपडिमाइसंपुत्तं ॥१॥ पंचधणूसयमाणा इक्किक्का  
तत्थ पडिम मज्झंमि । नाणाविहरयणविभूसियत्ति इक्किक्क इक्किक्के ॥ २ ॥ अट्टमहापाडिहेरा पडिमा उसहस्स पढममहधूहे । तत्तो  
अणुक्कमेणं केवलपडिमाउ ठावेइ ॥३॥ तथा—तत्थाइमजिणपडिमा पंचधणूसयसमूसिया रम्मा । अट्टमहापाडिहेरा णमुत्ति काऊण  
नरनाहो ॥४॥”त्ति ॥ मंत्रिपुत्रदेवदत्तकथा चैवम्—

इत्थऽत्थि जंबुदीवे विजये विजियारिचक्खवालंमि । सत्तिसोलमकलाए पडिरूवं भारहं खित्तं ॥१॥ लोयाणुभावलट्टो संठिय-  
ददवारमारचक्खिल्लो । ओसप्पिणिअवसप्पिणीअइदीहग्गइहल्लिजुओ ॥२॥ जणआउयजलभरभरियरित्तदिणरयणिनिविडघडिमालो ।  
जत्थ विणु वारिचारी भमंतसमहरतरणिउसहो ॥३॥ कम्मपरिणामकोडुंविण्ण संसारिजीवजावकए । चुलुहुलु दालिअंतो कालऽरहट्टो

प्राति-  
हार्याणि

॥१००॥

न विरमेइ ॥४॥ तत्थ कियारसमाए चपाइ पुरीइ पालगो हुत्था । राया जियारिनामा सिवदत्तो तस्म वरमंती ॥५॥ तस्म य  
 वसतसेणा भजा सा सुयअभावदुक्खेण । परिचत्तभोयणा अवरनासरे मंतिणा भणिया ॥६॥ दइए ! तुह किं वाहइ जं अहुणा  
 भोयणपि ते चत्त । सा आह सुयाभावं विणा न वाहइ किमवि अन्न ॥७॥ जओ-जलमज्जे किर पडिया घडिया दीसइ खणंतर  
 जाव । तणयमिहूण तु कुल न दीसए थेवकालपि ॥८॥ तहुहदुहिओ मती भणइ पिए ! पुरिमयारसज्जं ज । मइसज्जं वा कज्जं त  
 साहइ नणु कहवि पुरिसो ॥९॥ किमिह पुण दइवसज्जे कीरइ मा तहवि ऋहिसि तिसायं । कुलदेवि आराहिय साहिस्समिमं लहु  
 जेण ॥१०॥ तीइयि तह पडिवत्ते मती गंतूण भूवइममीवे । कहिउं घरवित्तंत दसरत्तं निमणुत्तविउं ॥ ११ ॥ नियगिहविचि-  
 त्तदेसे मुक्कालकारभोयणविहाणो । कुसमत्थराधिरूढो मंती सुमरेइ कुलदेवि ॥१२॥ अह मच्चिसत्तमस्म य सत्तं सत्तमदिणंमि  
 सपत्ते । देवी परिक्खिउमणा उवदसइ भीमणे वहवे ॥१३॥ ददट्टु तमक्खुहियमण पच्चक्खीहोउ हरिसिया देवी । सच्चिवर वरसु वर  
 जपइ अह सोऽनि पचाह ॥१४॥ देवि ! अविन्नापंपिव कह मयमि मम वरेसु वरमिह । देवी-उक्खित्तचित्तयाए, मत्री-को पुण  
 वक्खेवहेऊ ते ॥१५॥ देवी-सत्ताणत्थी त वच्छ ! वच्छय वंछसे तुहं सो उ । दिन्नो परडुमाणो करिस्सइ अमुददारिइ ॥ १६ ॥  
 तुह सत्तरजियाए कि सुयमन्न व देमि एयस्स । उक्खित्तमणाइ मण वरसु वर जपिओसि तुम ॥१७॥ इय सुचा भयमीओ मती  
 चित्तइ अहो दरिइमिहं । असुयवहो तणुदाहो भुक्खामारो अ दुब्बिक्खो ॥ १८ ॥ ता मह किमुचियमहुणात्ति चित्तिरो देवयाइ  
 रसु वर । इय पुणरुत्तो सहसत्ति भणइ सो देसु मह पुत्त ॥१९॥ दिञ्चुत्ति मा करिअसु सदेह किंतु वच्छ ! सविसेस । धम्ममि  
 पयट्टिअसु इय भणिय त्तिरोहिया देवी ॥२०॥ मतीपि देविमच्चिय भुत्तो तो रुहइ तुह पिए ! होही । देवी दिन्नो पुत्तो होउमिण

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥१०२॥

मा पवञ्जेइ ॥२१॥ अह निमि वसंतसेणा रिक्तं कलसं निष्पि सुमिणंमि । माहेइ मंतिणो सोऽवि आह नणु तुह सुओ होही ॥२२॥  
सा भणइ किंतु रिक्तो कलसो ? सो आह किंपि नहु एयं । तयणु इमा तुट्टमणा तं गब्भं वहइ सुहसुहओ ॥ २३ ॥ काले सुयं  
पद्यया दुवालमाहे करेवि जंममहं । बालस्म कयं नामं जणएहिं देवदन्तुत्ति ॥२४॥ तं पत्तजुवणगुणं मंतिवरिट्ठो उ चंदसिद्धिस्म ।  
मोमामिहधूयाए पाणिग्गहणं करावेइ ॥ २५ ॥ अन्नंमि दिणे रत्ता अवराहं किंपि पयडिउं लोए । उदालिऊण मुहं मंती गुत्तीइ  
पक्खिसो ॥२६॥ विविहं तज्जाविज्जइ कारिज्जइ लंघणाइं बहुयाइं । परपरिभवदवददो मंती चित्ते विचिंतेइ ॥२७॥ वरमरिसदने-  
भ्यो मिश्रया प्राणवृत्तिर्वरमटाविनिवासो हालिकत्वं वरं च । वरममजनानां भृत्यभावप्रपत्तिस्तदपि नरपतीनां माऽधिकारेण  
लक्ष्मीः ॥२८॥ अधिकाधयोऽधिकाराः कारा एवाग्रतः प्रवर्तते । प्रथमं न बंधनं तदनु बंधनं नृपतियोगजुषाम् ॥२९॥ लद्धेणवि  
भुत्तेणवि दिन्नेणवि किं सुएण अत्थेण ? । निवडइ विडंवणा जस्स एवमममाऽवमाणंमि ॥ ३० ॥ खंडुच्छुसक्कराणवि रसं विसेसेइ  
पढमसंमाणो । रत्तो अंते मोच्चिय विमं विसेसेइ नालउडं ॥ ३१ ॥ अह दिन्नमव्वदवो सुदो दिव्वेण गुत्तिओ रत्ता । मुक्को सग्गिहे  
पत्तो मंती वुत्तो पियाइ इमं ॥३२॥ पूरिजंती रिक्ता भरिया रिक्ता भवंति इह पुरिमा । भमिरारघट्टघडियव्व किंतु ता चित्तता-  
वेण ? ॥ ३३ ॥ अविय-नणु कस्स थिरा लच्छी ? पुन्ना सवे मणोरहा कस्म ? । को वल्लहो निवाणं ? निच्चं कस्स व सुहं इत्थ ?  
॥ ३४ ॥ मंत्री-दइए ! अयंडपडिए दूक्खे खलु होइ चित्तसंतारो । पुव्वविणिच्छियपडिए को तस्स हविज्ज अवयासो ? ॥ ३५ ॥  
वसंतसेना-कह निच्छओ इहासी ? , मंत्री-एयं कहियं तथा उ देवीए । वसंतसेना-ता किं तणएण विणा न सारिअं अज्जउत्त !  
तए ? ॥३६॥ मंत्री-जं जेण पावियव्वं इट्टमणिट्ठं पट्टमपट्टं । तं पुण होइ अवस्सं निमित्तमित्तं परो होइ ॥३७॥ जंपइ अणिट्टहेउं

जणस्म सद्योऽवि अट्टमं चंदं । राहुगिलणंमि तस्सेव अट्टमे कहसु को अवरो ? ॥ ३८ ॥ ता मह विणावि तणयं दोगचंमवस्स-  
 भावि जइ इण्हि । पत्तं नणु को दोसो मुअस्म मा आह एवमिणं ॥ ३९ ॥ तो सुयभजासुण्हासहिओ कत्थवि गओ इमो गामे ।  
 तत्थ य ते पियपुत्ता कहंपि उयरंपि पूरंति ॥ ४० ॥ अह वेरग्गोवगया ते अन्नदिणंमि मुणिवरं एगं । कत्थवि निएवि नमिउं  
 पुच्छिसु पुराकयं दुक्कयं ॥ ४१ ॥ मुणिराह भदिलपुरे नंदो सिट्ठित्ति सुंदरीदइओ । तस्स य च्चंदयनामो पुत्तो सुण्हा य सीलवई  
 ॥ ४२ ॥ नंदस्म कयाइ पुरा अज्जिअकहुक्कम्मपवणपमरेण । पुत्ते घणे पणट्ठे न होइ विभवो नइरउत्त ॥ ४३ ॥ काउं कुडुवसुत्थं  
 भंडुलं किंपी गहिय तो नंदो । वाणिजेण सुएणं सह चलिओ गुह्यविसयंमि ॥ ४४ ॥ मग्गे य तस्म मिलिओ सत्थाहो देवसंम-  
 अभिहाणो । अत्तुअमेसि जाया पीई आलवणपमुहेहिं ॥ ४५ ॥ अह कित्तियंपि भूभागमग्गओ ताण अक्कमंताणं । उम्मुकपिकहका  
 पिलायपाडी समापडिया ॥ ४६ ॥ सत्थाहनंदखंदा इगदिसि भयकंपिरा लहु पलाणा । निण्णायमुत्ति सत्थो उल्लुडिओ भूरि-  
 भिल्लेहिं ॥ ४७ ॥ कमसो नंदिउरपुरे ते पत्ता नंदखंदमत्थाहा । कंमाइं परघरेसुं काउं पूरंति नियउयरं ॥ ४८ ॥ तत्थ य सत्था-  
 हेणं धणसंखासंगओ सपबइओ । निहंकिपदिसिभागो लद्धो कइयावि निहिकप्पो ॥ ४९ ॥ तं तेण सरलहियएण दंसिउं ते पयं-  
 पिया एवं । साहिजेणं तुग्गं निहिमेयं पितुमिच्छामि ॥ ५० ॥ तेहिवि तहत्ति कहिए भव्वदिणे काउ चलिविहाणाइं । तं पारद्धा  
 सणिउं उन्निभट्ठो कंठगो शति ॥ ५१ ॥ इत्थंतरंमि तं गहिउमाणसो निविडनियडिकवडमई । मुच्छानिमीलियच्छो पडिओ  
 चंदो पसत्ति धरं ॥ ५२ ॥ अह नंदमत्थवाहा भीया मुत्तुं तयं निहिं सिग्घं । अकरिसु पवणमाई न य जाओ से गुणो कोऽवि ॥ ५३ ॥  
 ५५ निहिदेयकओ विग्घो एमुत्ति स्वामिय तयं जा । अपिहिंसु य निहिठाणं तो जाओ खंदओ सुत्थो ॥ ५४ ॥ पुट्ठो मत्थाहेणं

श्रीदे०  
वंत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१०४॥

किमिणं भो भद्र ! आह सो माई । केणऽविऽहं पारद्वो हणिउं णिसुणेमि वयणमिणं ॥५५॥ हा हा इमो वराओ हम्मइ अवराहव-  
ज्जिओ किमिह ? । हंतवो सत्थाहो जेणमिणं खणिउमारद्धं ॥५६॥ सत्थाहो भयमीओ निहिमुज्झिय गंतु नियगिहे सुत्तो । तं खंदकयं  
नाऊण कइयवं हरिसिओ नंदो ॥५७॥ अह निसि ते जणयसुया तमणग्घं रयणसंचयं गहिउं । कमसो सपुरंमि गया मिलियासिं  
सयणपउरजणा ॥५८॥ यतः—संपदि सपदि घटंते कुतोऽपि संपत्तिसहभुवो लोकाः । वर्षाभूनिवहा इव काले कोलाहलं कृत्वा ॥५९॥  
पडिबुद्धो सत्थाहो गोसे अनिएवि ते विचिंतेइ । हुं लोभतरलियमणा गहिय निहाणं धुवं नट्टा ॥६०॥ पत्तो निहाणठाणं तं रिच्छं अच्चियं  
च दट्टण । अंसुजलाविलनयणो पहाविओ तेसि पुट्टीए ॥ ६१ ॥ कहकहवि भदिलपुरे पत्तो सढयाइ नंदखंदेहिं । तस्स उच्चिय-  
पडिवत्ती विहिया वत्थाइदाणेण ॥ ६२ ॥ कहियं च इमं मा कोइ गिण्हीहि तंति जा वयं पत्ता । निहिठाणे ता दिट्ठा तं गहिउं  
नस्मिंरा केऽवि ॥६३॥ तो तप्पिट्ठीइ वयं गया सुदूरेण नउण ते पत्ता । पढभट्टा झूरंता कहवि तओ इत्थमणुपत्ता ॥६४॥ अह  
तदिण्णोच्चियसंवल्लो गओ सासयंमि सत्थाहो । ते पुण पियमायातणयसुण्हया तेण दविणेण ॥ ६५॥ सुच्चिरं भुंजिय भोए पट्टु-  
त्तरकूडकवडनिपडिपरा । कालंमि काउ कालं संपत्ता विविहकुगईए ॥ ६६ ॥ मित्तविसंवायणदविणगहणवडुंतहरिसपसरेण । तं  
दुअयमज्जियमंतरायकम्मं वसा तस्म ॥ ६७ ॥ जम्मो जहिं जहिं होइ ताण नहु भोअणाइसंपत्ती । अच्चंतमुज्जयाणवि तहिं तहिं  
जायइ कहिंपि ॥६८॥ कीरंति जाइं लोहाभिभूयचित्तेहिं इत्थ जीवेहिं । कम्माइं अहम्माइं परिणामे ताइं वाहंति ॥६९॥ सरिसव-  
मित्तसुहट्टा थोवदिणकण कुणंति तमकज्जं । मूढप्पा अहह जओ चिरमइगुरुयं लहंति दुहं ॥७०॥ चउमृवि गईसु भमिउं ते चउरो  
कहवि अह कुणालाण । विणग्घंभरमिड्डिस्म य जाया दो दो सुआ धूआ ॥१॥ बालत्ते गहियवया दुच्चरतवचरणखीणवहुयरया ।

वेयावचाइरया मरिउं जाया सुहम्मसुरा ॥७२॥ तो नंद? खंदर सुंदरिरे सीलवइजिया४ कमेण इह चविउं । मंति! तुमं? तुह पुत्तोरे  
 तुह भज्जारे तुह वह जाया ४ ॥७३॥ तं समुदयकयकम्मं तुम्हाणं समुदियं समुदएण । खीणं भे संपइ देवदिन्नं तं मृतु बहुकणउं ॥७४॥  
 इय सुणिय पुबजार्इ सरिया तेहिं तह वइयरं तं तु । सोउं तम्महिलाणऽवि जाईसरणं समुप्पन्नं ॥७५॥ अह भणइ देवदिन्नो कइ  
 पइ ! म्बुहिहमिमाउ पावाओ । मुणिराह दुरियदलणं एयमिह भइ ! पणिहाणं ॥७६॥ जिणयणनिहिपनयणो वंदंतो चेइए  
 सुपणिहाणो । केवलियऽवत्थमुत्थरुई झाइज्ज जिणं इय मणंमि ॥७७॥ तथाहि—“धुणिमो केवलियवत्थं वरविज्जाणंदधम्मकि-  
 त्तित्थं । देविंदनयपयत्थं तित्थयरं समवसरणत्थं ॥१॥ पयडियसमत्तभावो केवलिभावो जिणाण जत्थ भवे । सोहिंति सबओ  
 तहिं महिमाजोयणमनिलकुमरा ॥२॥ वरिसंति मेहकुमरा सुरहिजलं उउगुरा कुमुमपसरं । विरयंति वणा मणि? कणयरे रयणरे-  
 चिथं महियलं तो ॥३॥ अम्भितर? मज्झरे वहिंरे तिरप्प मणि? रयणरे कणयरे कविसीसा । रयणज्जुणरुप्पमया वेमाणिय-  
 जोइभरणकया ॥ ४ ॥ षड्मि दुतीसंगुल तित्तीस धणुपिडुल पणसयधणुच्चा । धणुसयइगकोसंतरा य रयणमयचउदारा ॥ ५ ॥  
 षउरंसे इगधणुसयपिडुपप्पा पडम बीयअंतरयं (सडुकोसअंतरिया प्र०) । कोमद्धं चिइ तइए (पडमविया वियतइया प्र०) कोसंतर  
 पुजामिय सेसं ॥६॥ सोवाणसहस्सदसकरापिडुच्च गंतुं भुवो पडमवप्पो । तो पच्चाधणुपयरो तओ य सोवाणपणसहसा ॥ ७ ॥ तो  
 वियवप्पो पक्खाधणुपयरु सोवाणसहस्सपण तत्तो । तइओ वप्पो छस्सयधणु इगकोसेहिं तो पीढं ॥ ८ ॥ चउदारतिसोवाणं मज्झे  
 मणिपेडियं जिणतणुच्चं । दोधणुसयपिडु पीढं सइदुकोसेहिं धरणियला ॥९॥ जिणतणुवारगुणुच्चो समहियजोयणगिह असोगतरु ।  
 गहिं होइ देवउंदे पउत्तीहासण सपयपीढा ॥१०॥ तदुवरि चउछत्ततिपा पडिरुवतिगं तहऽट्टचमरधरा । पुरओ कणयकुसेसयठि-



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१०६॥

यफालियधम्मचक्रवर्तु ॥११॥ झयच्छतमयरमंगलपंचालीदामवेडरकलसे । पइदारं मणितोरणतिय धूवघडी कुणंति वणा ॥१२॥  
जोयणसहस्मदंडा चउज्झया धम्ममाणगयसीहा । ककुभाइजुआ सबं माणमिणं जिण(निय प्र०)निअकरेण ॥ १३ ॥ पविसिय  
पुव्वाड पहू पयाहिणं पुव्वाआसणनिविट्ठो । पयपीठविअपाओ पणमियतित्थो कइइ धम्मं ॥ १४ ॥ सुणि १ वेमाणिणि २  
समणी ३ सभरण १ जोइ २ ण ३ देवि ३ देवतियं ३ । कप्पमुर १ नरित्थि ३ तियं ठंतिऽग्गेयाइविदिसासु ॥ १५ ॥  
चउदेवि समणि उद्धट्टिया ५ निविट्ठा नरित्थि मुरसमणा ७ । इय पण सग परिस सुणंति देसणं पढमवप्पंतो ॥ १६ ॥  
इय आपस्सयवुत्तीवुत्तं चुन्नीइ पुण सुणि निविट्ठा । वेमाणिणि समणी दो उद्धा सेसा ठिआ उ नन ॥१७॥ वीयंतो तिरि इसाणी  
देवन्डंदो य जाण तइयंतो । तह चउरसे दुदुआवि कोणेषु उ वट्ठि इक्किआ ॥१८॥ पीयसियरत्तमामा सुरणजोइभरणायणवप्पे ।  
धणुदंडपासगयहत्थसोमजमरुणधणदक्खा ॥ १९ ॥ जयविजयाजियअपराजियत्ति सियअरुणपीयनीलाभा । वीए देवीजुअला  
अभयंकुसपाममगरकरा ॥२०॥ तह य वहि सुरा तुंवरु? खगं(डुं)गि २ कपाल ३ जडमउडधरा ४ । पुवाइदारवाला तुंवरुदेवो य  
पडिहारो ॥२१॥ मामन्नममोसरणे एम तिही एइ जइ महिड्डिसुरो । सबमिणं एगोऽविहु स कुणइ भयणेषरसुरेसुं ॥२२॥ पुव-  
मजायं जत्थ उ जत्थेइ सुरो महिड्डिमघवाई । तत्थोमरणं नियमा सययं पुण पाडिहेराइं ॥२३॥ दुत्थियममत्तअत्थियजणपत्थिय-  
अत्थसत्थसुममत्थो । इत्थं थुओ लहु जणं तित्थयरो कुणउ सपयत्थं ॥२४॥ समवसरणस्तवनं समासं ॥ पयडियममत्तभावो  
गाहा, 'सवओ'त्ति चैत्यवृक्षस्थानात् सर्वदिशं, उक्तं च-मध्ये मणिपीठिका विष्कंभे धनु २००, अर्द्धं धनु १००, उच्चत्वे तीर्थकरदेह-  
माना मणिपीठिका, प्रथमे प्राकारागतरे गाउ १ धनु ६००, प्राकारविष्कंभे धनु ३३ इस्त १ अगुल ८, उच्चत्वे धनु ५००, प्रथम-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
र्मध० संघा-  
चारविधौ  
॥१०७॥

द्वितीयप्राकारांतरे गाउ १ धनुष्य ६००, द्वितीयप्राकारः विष्कंभे धनु ३३ हस्त १ अंगुल ८, उच्चत्वे धनु ५००, द्वितीयतृतीय-  
प्राकारांतरे गाउ १ धनु ६००, तृतीयप्राकारः विष्कंभे धनु ३३ हस्त १ अंगुल ८, उच्चत्वे धनु ५००, एवं जिनविंवाद् द्वितीय-  
पक्षेऽपि, चतुरस्रप्रस्तावेऽपि यथा मणिपीठिका पूर्वापरतो विष्कंभ धनु २००, अर्द्धे धनु १०० मणिपीठिका, प्रथमप्राकारांतरे गाउ  
१ धनु ६००, प्राकारोच्चत्वे धनु ५००, विष्कंभे धनु १००, प्रथमद्वितीयप्राकारांतरे (ऽर्धगव्यूतं) प्राकारः विष्कंभे सह गाउ २ प्राकारो-  
च्चत्वे धनु ५०० विष्कंभे धनु १०० द्वितीयतृतीयप्राकारांतरेऽर्द्धगव्यूतं प्राकारोच्चत्वे धनु ५०० विष्कंभे धनु १००, एतं द्वितीय-  
पक्षेऽपि मणिपीठिकारहितं द्विगुणं कार्यं ॥३॥ अम्भितरमज्जगाहा ४, रयणज्जुगरुपनिहत्तिअ ३, कल्पविशेषचूर्णिः—चाउ-  
कोणा तिन्नि पागारा रइअंति चउदारा, अम्भितरिल्लो लोहियएहिं अक्खेहिं, मज्झिल्लो पीयएहिं, बाहिरिल्लो सेयएहिं ॥४॥ वट्टमि  
दुतीसं गाहा ५, उक्तं जीणोद्धारप्रकीर्णके—रइऊण समोमरणे सालतियं मयदसद्धउस्सेहं । विरथरओ गव्यूयं धणुसयल्लकेण अम्भ-  
हियं ॥५॥ चउरंसे इग गाहा ६, कोमद्धंति कोसो कोसाद्धं च, सार्धगव्यूतमित्यर्थः, एतच्च—धणुसयपिहुल छधणुमय कोस १  
कोसद्ध २ कोस ३ विच्चालं । सालतियं चउरंसे सेसं पुण भणिय वट्टसमं ॥१॥ ति जीणोद्धारप्रकीर्णकगाथागाथाभिप्रायादारूपातं ॥  
पूर्वदर्शितस्य तु प्रथमद्वितीयप्राकारांतरे गाउ २ द्वितीयतृतीयप्राकारांतरेऽर्धगव्यूतमिति, तथा अम्भितरमज्झमाणं पागाराणं अंतरे  
जोयणं मज्झमवाहिराणं पागाराणं अंतरे गाउ अंति कल्पविशेषचूर्णेऽपि प्रायादेवं पाठः 'कोसदुगं वियतइए कोसद्धं पुव्वमि व सेसं'  
केवलमत्र पूर्वाचार्योक्तवक्ष्यमाणसोपानविभागो विभावयितुं न पायते, हस्तपृथुच्चसोपानसहस्रपंचरुस्य हस्तसहस्रचतुष्क्रमानेऽर्द्ध-  
गव्यूते रचयितुमसंभवात् ॥ ६ ॥ इय सोराणनहस्मदनकरगायाद्वयं, उक्तं च जीणोद्धारे—“सोवाणपंतिआणं वीससहस्मा उ

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१०८॥

हत्थुच्चा” ॥८॥ चउदारतिसोवाण गाहा ९, तथा च जीर्णोद्वारे—दो धणुसयमवि पढमं जिणतणुसमभागसद्धसमउच्चं । सीहासणं महल्लं चउदारे तत्थ काहिति ॥१॥ धरणियलाउ सहस्सा धणुहाणं पंच पेढिआ जत्थ ।” तत्त्वामृतज्ञानार्णवयोस्त्वेवं—पंचधणु-सहसुच्चा मणिपेढी तीइ उवरि मणिपीढं । दो धणुसयाइं जिणतणुउच्च सीहासणं च तर्हि ॥ २ ॥ जोअणसहस्मदंडा गाहा १३, माणमिणं नियकरेणत्ति, भणितं च जीर्णोद्वारे—‘जे जंमि जुगे तद्देहमाणओ उस्सहेण धणुहाइं’ति ॥१३॥ ‘इय आवस्सय’ गाहा १७ ॥ तथा चैतयोरक्षराणि—“अवसेसा संजया निरइसेसिया पुरच्छिमेण चेव दारेणं पविसित्ता भयवंतं तिपयाहिणीकाउं वंदित्ता य नमो तित्थस्स नमो अइसेसियाणं भणित्ता अइसेसियाणं पिट्ठओ निसीयंति १, वेमाणियाणं देवीओ पुरच्छिमेण चेव दारेणं पविसित्ता भयवं तिपयाहिणीकरित्ता वंदित्ता य नमो तित्थस्म नमो अइसेसियाणं नमो साहूण य भणित्ता निरइसेसियाणं पिट्ठओ ठायंति, न निसीयंति २ समणीओ पुरच्छिमेण चेव दारेणं पविसित्ता तित्थयर तिपयाहिणीकरित्ता वंदित्ता य नमो तित्थस्म नमो अइसेसियाणं नमो साहूण य भणित्ता वेमाणियदेवीणं पिट्ठओ ठायंति, न निसीयंति ३ भरणवासिणीओ जोइसिणीओ वंतरीओ एयाओ दाहिणेण दारेण पविसित्ता तित्थयरं तिपयाहिणीकरित्ता वंदित्ता य दाहिणपच्छिमेणं ठायंति, भरणवासिणीणं पिट्ठओ जोइसिणीउ तासिं पिट्ठओ वितरीओ ३ भरणवासी देवा जोइसिया देवा वाणमंतरा देवा एए अवरदारेणं पविसित्ता तं चेव विहिं काउं उत्तरपच्छिमेणं ठायंति जहासंखं पिट्ठओ, वेमाणिया देवा १ मणुस्सा २ मणुस्सीओ य ३ उत्तरेणं पविसित्ता उसरपुरच्छिमेणं ठायति, यथासंख्यं पिट्ठओ” इति चूर्णिः ॥ अथ वृत्तिः—“अथ च मूलटीकाकारेण देवीप्रभृतीनां स्थानं निपीदनं वा स्पष्टाक्षरैर्नोक्तं, अवस्थानमात्रमेव प्रतिपादितं, पूर्वाचार्योपदेशलिखितपट्टिकादिचित्रकर्मबलेन तु सर्वा एव देव्यो न निपीदन्ति,

देवाः४ पुरुषाः१-स्त्रियश्च१ निपीदंतीति प्रतिपादयन्ति केचने'त्यलं प्रसंगेन । इय ओसरणे आजानुसुरहिपणवष्णसुमणउफिरणे । वण-  
 परकरनरकेचणमहस्सदलठविअकमकमलो ॥९९॥ सहरिसहरिकरचालियमुकंतदिप्पंतचारुचमरचऊ । जियरविमंडलभामंडलेण  
 अहियं विरायंतो ॥१००॥ सुरताडियदुंदुद्धिसरसंसहयअंतरंगरिउविजओ ४ सुरअसुरस्वरकिअरनरवरउग्घुट्टजयसदो ॥१०१॥  
 पविसिय पुग्गाहिमुहो उच्चतयसालतरुतलंमि पडू । सिंहासणे निसीयइ चउतीसाइसयकुलभुणं ॥ २ ॥ पणतीसगुणजुयाए  
 जोयणनीहारिणीए वाणीए । सवमभासाणुगयाइ इय रयणतिगं उवइसेइ ॥३॥ तइलोअकयाणंदो तिलोअचितामणी तिलोयगुरू ।  
 तियलोयपहुपदेसियसधम्मकित्तिपुरधरलियतिलोओ ॥४॥ इय झाइओ तिसंशं जिणचंदो हरइ (भवियलोयाणं । मिच्छततमंघेणं  
 पदं पोराण) दुरियभरं ॥ ५ ॥ अविय-कयतियलोयसियमुहं तियलोए सवसंपयामूलं । निट्टविअकम्मगंठियसेमदोसोसहमवंशं  
 ॥६॥ ता झाइज्झ जिणिंदं जाव पुरो संठियं च पडिहाइ । इय निचन्भासेणं होही जिणरूपपडिहासो ॥७॥ संवेगा कंमखओ खुदेहि  
 तहा अलंघणीयत्तं । अप्पडिहयवयणत्तं रोगारिप्पभिइउवसमणं ॥८॥ अत्थज्जणं च परमं सोहग्गाई य कित्तियं चव । नरसुर  
 सियसुक्खाणिवि करगोयरमिति अचिरेण ॥ ९ ॥ दुक्खक्खउ कम्मक्खओ समाहि मुक्खो य चोहिलाभो य । संसारुत्तारणयं  
 होइ ममं तुह पभावेणं ॥१०॥ इचाई पणिहाणं करिअ चिइवंदणावमाणंमि । इय कुणओ ते पावं पुवकयं खिज्झिही खिप्पं ॥११॥  
 इत्च्छंति भणिय गिण्हिय गिहिधम्मं नमिय मुणिवरं पत्तो । सयणजुओ नियगेहे मंतिसुओ कुणइ तह धम्मं ॥१२॥ अह धम्मप-  
 भावेणं पुव्वंपिय पत्तरायसंभाणा । सिवदत्तदेवदिना सुचिरं कुवन्ति गिहिधम्मं ॥१३॥ पिउणुन्नाओ कइयावि देवदिण्णो गहेवि  
 पवज्जं । जाओ तइए कप्पे कप्पाहिउसरिसइसुरो ॥ १४ ॥ ते चविअ खिइपइट्टियनयरंमि महाधरस्स नरवइणो । रेवइ-

देवीइ सुओ जाओ सोमुत्ति सोमगुणो ॥१५॥ केवलिअवत्थमायन्निऊण स कयावि पासजिणपासे । पंचसयरायतणएहिं संजुओ गिण्हए दिक्खं ॥१६॥ सिरिपासकहियतिवईपभावकयचंगवारसंगसुओ । होउं पंचमगणहरदेवो सोमो सिवं पत्तो ॥ १७ ॥ मंत्री-शोद्धवदेवदिन्नचरितं चेतश्चमत्कारकं, श्रुत्वैवं भविनो विनोदनिकरात् कृष्णाऽन्यतः स्वं मनः। सम्यग् भावयतानिशं जिनपतेः कैवल्य-वस्थां परां, कैवल्यातुलसौख्यसंचयकरीं दुष्कर्मशैलाशनिम् ॥ १८ ॥ इति कैवल्यावस्थायां देवदिन्नकथा ॥ निरूपिता कैवल्या-वस्था, संप्रति सिद्धावस्थानिरूपणार्थं गाथोत्तरार्धमाह-

पलियंकुस्सग्गेहि अ जिणस्स भाविज्ज सिद्धत्तं

पर्यंकासनेन-कायोत्सर्गेण प्रतीतेन जिनस्य-तीर्थाधिनाथस्य भावयेत्-पुनः पुनश्चितयेत् सिद्धत्वं-सिद्धावस्थां, सुमतिमहामा-ल्यवत् । सिद्धौ किल जिनानामेतस्यैवाकारस्य भावात्, उक्तं च भाष्ये-उसभो अरिद्धनेमी वीरो पलियंकसंठिया सिद्धा । अवसेसा तित्थयरा उद्धट्टाणेण उवयंति ॥१॥(८०) संठाणमंतसमये भवं चयंतस्स जमिह होइ तहिं । सिद्धस्स तिभागूणं तं संठाणं पएसघणं ॥२॥ सिद्धजहन्नोगाहण छत्तीसंगुल जिणाण घणरयणी । ऊणतिभागुकोसा तिसया तित्तीस धणुतिभागो ॥ ३ ॥ किंच-इहभव-मिन्नागारो कम्मवसाओ भवंतरे होइ । न य तं सिद्धस्स जओ तम्मिवि तो सो न यागारो॥४॥त्ति ॥ सुमतिमहामाल्यकथा चैवं-भद्विलपुरे इहासी दासीकयदरियवइरिनिवचकी । चक्काउहोत्ति राया सुमई नामेण से-मंती ॥१॥ बहुओवाइयसहसेहिं अन्नया.मंतिणो सुओ जाओ । जम्मदिणाओऽवि तस्स य रोगा उग्गा समुब्भूया ॥२॥ विहिया, बहुवयारा न य से रोगा मणंपि उवसंतां । नेरइयस्स व वियणा भिसं विसन्नो तओ मंती ॥३॥ सो पुण बालो खसखाससासजरदाहपमुहरोणेणं । वियणाए अकंतो

कंदतो अञ्जइ सयावि ॥ ४ ॥ अह उडामरडामररोगदुक्खोहतावनवमेहो । चउतीसाइसयनिही समोसदो तत्थ पासजिणो ॥ ५ ॥  
 अहमइमिगाइ नियनियरिद्धिबलजुओ पुरीजणो सयलो । पामपहुपायपंकयवंदणवडियाइ संचलिओ ॥ ६ ॥ सयलाहिवाहिविसहरवि-  
 सविहुराणं जणाण अमयसमं । पासजिणं तत्थागयमायन्निय, झत्ति मंतीवि ॥ ७ ॥ पवरत्तुरंगारूढो नियपाणिपुडेण धरिय तं चालं ।  
 पाइड पहुपयजुअले अणप्पमाहप्पकुलभवणे ॥ ९ ॥ जलिरजलणा जउडंअव अहिकुलंपिव सुपन्नदंसणओ । नट्टं पहुप्पभावा सिस्सुणो  
 लहु रोगजालं तं ॥ १० ॥ तं ददट्ट महच्चरियं चालं अग्गे करेवि सचिववरो । एगगमणो पहुणो देसणं निसुणए एवं ॥ ११ ॥  
 तथाहि-जीवो अणाइकम्मयतणुजोगउ दुट्ट दुट्टावारो । दुस्महदुहदंदोर्लि सहेइ नरण अकयसुरूओ ॥ १२ ॥ गुरुभारवहणसीउण्ह-  
 वासधारानिवायपमुहमिहं । जं अणुहवंति दुक्खं तिरिया तं सव्वपचक्खं ॥ १३ ॥ बहुआहिवाहिमाणवमाणदारिद्दमियमणाणं ।  
 विसयासानडियाणं मणुआणं नाम किं सुक्खं ? ॥ १४ ॥ असरिसअमरिसईसाधिसायहासाइदोसभवणेसु । अमरेसुवि अइफारो दुह-  
 संभारो वियंभेइ ॥ १५ ॥ तिरिनरअमरभवेसुं विसयासेवाइ जो सुदाभासो । सोवि अपत्थं पच्छा दितो बहुदुमहदुहनिवहं ॥ १६ ॥  
 भणिअं च-“कइ तं भन्नइ सुक्खं सुचिरेणवि जस्स दुक्खमल्लियइ । जं च मरणावमाणे भवसंसारणुवंधिं च ॥ १७ ॥ ता चउगइ-  
 भवदुहदारुदाहदहणं करेह जिणधम्मं । दुविहंपि ससत्तीए ओसहमिय कम्मरोगाणं ॥ १८ ॥ तो मंती तुट्टमणो गिहत्थधम्मं गहेवि  
 तं चालं । पहुपाएसुं पुण पुण पाडेवि गओ सठाणंमि ॥ १९ ॥ सिरिपामदंसणाओ रोगायंका इमस्स नणु नट्टा । तत्तो सुदंसणो  
 सो चालो चुच्चइ पुरजणेणं ॥ २० ॥ भुवणस्सवि भदाइं पकुणंतो भददंतिसरिमगई । भदिलपुराउ अन्नत्थ विहरिओ पामजिणनाहो  
 ॥ २१ ॥ ते मंतिमंतितणया बहुसो मुणिसंगमेण संजाया । लद्धट्टा गहियट्टा विणिच्छियट्टा जिणमयंमि ॥ २२ ॥ अह कइया निय-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥११२॥

जणयं उद्विगमजं सुदंसणो धणियं । पिच्छइ पुच्छइ ताया ! दीसह मे किमिइ उद्विग्गा ? ॥२३॥ सो आह वच्छ ! जयवच्छलस्स  
नीसेसदुरियदलणस्स । जस्स पभावेण तया नीरोगतणू तुमं जाओ ॥२४॥ पणयजणपूरियासस्स पणयपासस्स जस्स य पसाया ।  
सियसुहजणयं मे दंसणाइ रयणत्तयं पत्तं ॥२५॥ सुइरं देसणजुण्हाइ कुवलरं बोहिउं स चंदुब । कयबहुसम्मो संमेयपवणं गंतु पडु  
पासो ॥२६॥ वग्घारियभुयजुयलो मासं कयअणसणो चइय देहं । उडुं सच्चट्ठाओ बारसजोयण अइकमिउं ॥२७॥ पणयालल-  
क्खजोयणमाणा मज्झट्टजोयणे रुंदा । मच्छियपत्ताउ तणू अंते उच्चाणत्तनिहा ॥२८॥ सिद्धसिला ससिधवला परिहीए जोयणाण  
इगकोडी । वायाल लक्ख तीसं सहसा दुसया उगुणत्ता ॥ २९ ॥ तीसे उवरिमजोयणचउवीसइमम्मि सो पडु भागे । रयणी-  
त्तकोगाहो सिद्धो इय अज्ज निसुयं मे ॥ ३० ॥ हा बहुसो तस्स पडुस्स नेव नमियं मए चरणकमलं । नेव सुहारसनिस्संदसुंदरा  
देसणा निसुया ॥३१॥ तत्तो सुदंसणो सुद्धदंसणो विहिअअंजली भणइ । मा उब्बेयमयं पुण मणयंपि मणं कुणह ताया ! ॥३२॥  
किंतु चरणाणदंमणअमंदआणंदविरियमयरूवं । रूवाइयं सिद्धावत्थं पासं सया सरह ॥३३॥ संठाणाइविहूणं अजरं अमरं अत्तंग-  
मसरीरं । अन्भप्पविउअगम्मं सिद्धावत्थं सरह पडुणो ॥३४॥ सिद्धावत्थाइ जिणेसरस्स निस्सेमकम्मसुक्कस्स । रूवाइयं ज्ञाणं ज्ञाणेसु-  
निदंसिअं परमं ॥३५॥ उक्तं चान्यैरपि—“सिद्धममूर्त्तमलेपं सदाचिदानंदमयमनाधारम् । परमात्मानं ध्यायेत् यद्रूपातीतमिह तदि-  
दम् ॥३६॥ निरातंको निराकांधो, निर्विकल्पो निरंजनः । परमात्माऽक्षयोऽत्यक्षो, ज्ञेयोऽनंतगुणोऽव्ययः ॥ ३७ ॥ योगतत्त्वरत्न-  
सारे “पिंडे मुक्ताः पदे मुक्ताः, रूपे मुक्ताः पडानन ॥ रूपातीते तु ये मुक्तास्ते मुक्ता नात्र संशयः ॥३८॥ सिद्धावत्थाइचिय सरणत्थं  
पासचेइअं पवरं । कारेवि नमह पूयह थुणेह सुमरेह ज्ञायेह ॥३९॥ यदुक्तं—अरहंता भगवंतो असरीरा निम्मला सियं पत्ता । तेसि

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥११३॥

संभरणत्थं पडिमाओ इत्थ कीरंति ॥ ४० ॥ उद्धृष्टाणठियाओ अहवा पलियंकसंठिया ताओ । सिद्धिगयाणं तेसि हु जं तइयं नत्थि संठाणं ॥४१॥ अन्येऽप्याहु-“स्वर्णादिविचिनिष्पत्तौ, कृते निर्मदनेतरा । ज्यातिष्पूर्णा च संस्थानरूपातीतस्य कल्पना ॥४२॥ एवं निसम्म सम्मं सचिववरो असमहरिसभरपुत्तो । कारावइ जिणभवणं भवणं भुवणस्सवि सिरीए ॥ ४३ ॥ सिरिपासनाहपडिमं विहिणा ठावित्तु तत्थ भत्तीए । पूइअ अवत्थतियभावणेण वंदित्तु इय धुणई ॥ ४४ ॥ “विध्वस्ताखिलकर्मजालममलज्ञानं लस- हर्शनं, ज्योतीरूपमरूपगंधमरसं स्पर्शादिभिर्वर्जितम् । सिद्धावस्थमवस्थितातुलसुखं चर्यैकत्रीयात्मकं, निःसीमातिशयप्रभावभवनं श्रीपार्श्वनाथं स्तुवे ॥४५॥ फायं ते जिनराजराजिकिरणग्रामाभिराम स्तवः ? फाहं प्रातिभसौरभस्फुरदुरुप्रज्ञाविहीनः प्रभो ! किंतु त्वद्गुणराशिरक्तहृदयस्तोत्रप्रवृत्तोऽस्म्यहं, शक्याशक्यविचारणासु विकलः प्रायो हि रागी जनः ॥ ४६ ॥ विध्वस्तामय ! निर्जितेन्द्रिय- हय ! प्रक्षीणकर्माशय !, श्रीलीलालय ! निर्मितसरजय ! स्याद्वादविद्यामय ! मिथ्यात्वप्रलय ! प्रहीणविषय ! स्फूर्जत्त्रिलोकीदय !, श्रीपार्श्व ! सररोप ! दोषकुनयध्वंसिन् ! सदा त्वं जय ॥४७॥ किं कारुण्यमयी ? किमुत्सवमयी ? किं विश्वमैत्रीमयी ? किं वाऽऽनं- दमयी ? किमुन्नतिमयी ? किं सौख्यरेखामयी ? इत्थं यत्प्रतिमां समोक्ष्य भविनश्चेतथिरं तन्वते, स श्रीपार्श्वजिनस्तनोतु विशद- श्रेयांसि भूयांसि वः ॥४८॥ आधिब्याधिविरोधिवारिधियुधि व्यालस्फुटालोर्गे, भूतप्रेतमलिम्बुचादिषु भयं तस्येह नो जायते । नित्यं चेतसि पार्श्वनाथ इति हि स्वर्गापवर्गप्रदं, सन्मंत्रं चतुरक्षरं प्रतिकलं यः पाठसिद्धं पठेत् ॥४९॥ त्वं देवः शरणं त्वमेव जनकस्त्वं नायकस्त्वं गुरुस्त्वं बंधुस्त्वमसि प्रभुस्त्वमभवस्त्वं मे गतिस्त्वं मतिः । तत् किं पार्श्वविभो ! पुरःस्थितमपि त्वत्सेवकं किंकरं, माम- द्यापि लसद्दयारसिक्रया दृष्ट्याऽपि नो वीक्षसे ? ॥५०॥ शस्योऽयं समयः क्षणोऽयमनघः पुण्या त्वियं शर्वरी, श्लाघ्योऽयं दिवसो



लवोऽयममलः पक्षोऽयमर्चास्पदम् । मासोऽयं विशदः समाः स्फुटमिमाः श्रीपार्श्वविश्वप्रमो !, यत्र त्वद्वदनं व्यलोक्यत मया  
निःशेषसौख्यावहम् ॥ ५१ ॥ धन्योऽहं कृतकृत्य एष नृभवस्तीर्णो मवांभोनिधिर्विध्वस्तांतरवैरिवारविपयो लब्धस्त्रिलोकोत्सवः ।  
श्रीमत्पार्श्वविभो ! सदा त्रिजगतीविश्रामभूरप्यहो, यस्त्वं हंस इवाधुना विदधसे मन्मानसे संस्थितिम् ॥५२॥ इत्थं त्वां सितधम्म-  
कीर्तिमवनं स्तुत्वेदमभ्यर्थये, श्रीमत्पार्श्वजिन ! त्वयापि हि सदा यस्मै कृते तत्यजे । प्राज्यं राज्यमनाविला च कमला शुद्धांत-  
बंध्रादिकं, विद्यानंदपदाय सुस्पृहयति त्यस्मै मदीयं मनः ॥५३॥” इय भक्तीए पासं जिणं धुणंतो पुणो पुणो मंती । तं चिय  
वहु ज्ञायंतो जा दिवसे गमइ अमयसमे ॥५४॥ ता तत्थ अणेयविणेयपरिगओ नाणभाणुवरणाणी । सुरखयरनमियचलणो समोसढो  
नंदणुजाणे ॥५५॥ तं नंतु सुमइमंती सुदंसणाईहिं संजुओ पत्तो । गुरुणा भवतरुकरिणा सुदेसणा एवमारद्धा ॥५६॥ “भवजलहिंमि  
अपारे जम्मणजरमरणनीरपडिपुत्ते । वाहिदुरंतजलयरे कुजोणिसयदुत्तरावत्ते ॥५७॥ किण्हाइअसुहलेसा अवालसेवालजालपडिहत्ते ।  
गुरुरायपंकखुत्तो गुत्तो मायालयागहणे ॥५८॥ कहकहवि सुपुण्णवसा पावइ पाणी नरत्तबोहित्यं । संमत्तपइट्ठाणं सुजाइकुलपमुह-  
वरफल्यं ॥ ५९॥ संवरकयनिच्छिद्धे सन्नाणगुणे विवेयगुणरुक्खे । संवेयसेयवट्टे निव्वेयानिलजणियवेगे ॥६०॥ सज्जायज्ञाणपोए  
वाहेसु नियमपुलिंदए तत्थ । सुहभावकन्नधारं भविया ! भवजलहितरणकए ॥६१॥ जं एस पमायअवायनियरओ रक्खिओ रयण-  
दीवे । नेज्जण इमं पूरइ एव महवयसुग्यणेहिं ॥६२॥ तत्थत्थि सबसावज्जविरइसेलो तहिं च सुहछाया । सीलंगसहस्सफला दंस-  
विहमुणिधम्मकप्पतरू ॥६३॥ भवजलहितडिसमा केवलित्ति तस्सि गओवरिं सिद्धिपुरी(सिद्धी) । अत्थि तहिं ठवइ जियं नरत्तबोहि-  
त्थमिहमुत्तं ॥६४॥ जीइ न जम्मो न जरा न य मरणं नेय छुहपिवासाई । न य रागरोगसोगा न आहिणो वाहिणो नेव ॥६५॥

किंतु अणंतचउरुगकलिओ जीवो निरंजणो निचो । उज्जोयंतो तिजयं चिद्वृद्ध्ययणप्पइवुव ॥६६॥” इय मुणिययणं कयदुकयप-  
तमणं निसमिउं सुमइमंती । रायाणमणुनविउं कुडुंभारे ठविय पुत्तं ॥६७॥ जिणमासणउच्छप्पणपुत्तं थुत्तंतओ सुरेहिंपि । सिरि-  
नाणभाणुकेवल्लिपासे दिक्खं पवजेइ ॥६८॥ सिद्धंतमहिजंतो सिद्धावत्थं जिणाण भावंतो । सिद्धीइ भवेऽवि समो सिद्धो सिरिसु-  
मइमंतिमुणी ॥६९॥ स्फुरन्मल्लीवल्लीकुसुमविशदं ज्ञानसुभगं, जनाः श्रुत्वा सम्यक् सुमतिमचिवस्येति चरितं । सदा सिद्धावस्थां-  
स्मरत हृदये चैत्यनमनक्षणे तीर्थेशानां सकलसुखसंसिद्धिवसतिम् ॥७०॥ इति सिद्धावस्थायां सुमतिमहानात्यकथा ॥१०॥

प्ररूपिता सिद्धावस्था, तत्प्रतिपादनेन च निरूपितमवस्थात्रिकभावनमिति पंचमं त्रिकं, तच्च दिक्त्रयावलोकनवर्जनेन सम्यक्  
स्यादित्यतः ‘तिदिसिनिरिक्खणविरइ’त्ति पण्डितिकस्वरूपनिरूपणार्थं गाथामाह—

उद्धाहोत्तिरियाणं तिदिसाण निरिक्खणं चइज्जइहवा । पच्छिमवाहिणवामेण जिणसुहत्तत्थदिट्ठिज्जुओ ॥१॥  
प्रक्षेपा सुगमा च, नवरं तुर्यपदस्येयं भावना—आलोचनं चक्षुं अणित्तं दुक्करं थिरं काउं । रूवेहिं तहिं खिप्पइ सभावओ वा सयं चलइ  
॥१॥ तद्विदु नामियगीवो विसेयओ दिसितियं न पेहिजा । तत्थ उवओगभावे दंसणपरिणामहाणी उ ॥२॥ उक्तं च महानिशीथे—‘धु-  
वणेकगुरुजिणिंदपडिमाविणिचेसियनयणमाणसेण धणोऽहं पुणोऽहंति जिणवंदणाए नहलीकयजम्मूत्ति मन्नमाणेण विरइयकरकमलं-  
जलिणा हरियतणुवीयजंतुविरहियभूमीए निहिउभयजाणुणा सुपरिफुडं सुविदियनिस्संकजहत्थसुत्तथोभयं पए पए भावेमाणेणं जाव  
चेइए वंदियन्वे’ गंधारश्रावकवत्, तथाहि—वेयदुगिरिस्स समासत्ते गंधारजणवए गंधस्समिद्धे नयरे गंधारो नाम सावओ, सो उ  
पवइउकामो, पवइएहिं दुक्खेण तित्थाइं नमिज्जंसित्ति सबतित्थयराणं जंमणनिकखमणनाणुप्पत्तिनिवाणभूमीओ ददुं निग्गओ, तत्थ—

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥११६॥

जंमपुरी दो विणियार सावत्थीरे दो अउज्झ५ कोसंधी६ । वाणारसि७चंदउरी८कायंदी९भदिलपुरं१०च ॥१॥ सीहपुर११चंप१२  
कंपिल्ल१३ अउज्झ१४ रयणउर१५तिगयपुर१६ मिहिला१९ । रायगिह२० मिहिल२१ सोरियपुर२२ वाणारसी२३ य कुंडपुरं२४  
॥२॥ उमभस्स पुरिमताले नाणं वीरस्स जंमियाइ बहिं । नेमिस्स य रेवयए नाणं सेमाण जंमपुरे ॥३॥ अट्टावयंमि उसभो वीरो  
पावाइ रेवए नेमी । चंपाइ वासुपूजो संमेए सेमजिण मिद्धा ॥४॥ इति तित्थाइं ददुत्तं पडिनियत्तो पन्वयामित्ति, ताइ सुअं वेअट्टु-  
गिरिगुहाए उसहाइयाण मवतित्थयराणं सव्वरयणचिचइयाओ कणगपडिमाओ, साहुसगासे सुणित्ता ताओ दच्छामित्ति तत्थ गओ,  
तत्थ देवयाराहणं करित्ता विहाडियाओ पडिमाओ, तत्थ सो सावगो धयधुईहिं थुणंतो अहोरत्तं निवसिओ” इति निशीये, तत्र  
स्तोत्रं—“नम्राखंडलमौलिमंडलमिलन्मंदारमालोच्छत्सांद्रामंद्रमरंदपूरसुरभीभूतक्रमांभोरुहान् । श्रीनामिप्रभवप्रभुप्रमृतिकांस्तीर्थक-  
रान् शंकरान्, स्तोष्ये सांप्रतकाललब्धजनान् भक्त्या चतुर्विंशतिम् ॥१॥ नद्यान्नामिसुतः सुरेश्वरनतः संसारपारं गतः, क्रोधाद्यै-  
रजितं स्तुवेऽहमजितं त्रैलोक्यसंपूजितम् । सेनाकुक्षिभवः पुनातु विभवः श्रीशंभवः संभवः, पायान् मामभिनंदनः सुवदनः स्वामी  
जनानंदनः ॥२॥ लोकेशः सुमतिस्तनोतु मम निःश्रेयःश्रियं सन्मतिर्दभद्रोः कलभं मदेभशरभं प्रस्तौमि पद्मप्रभम् । श्रीपृथ्वीतनयं सुपा-  
श्वमभयं वंदे विलीनामयं, श्रेयस्तस्य न दुर्लभं शशिनिभं यः स्तौति चंद्रप्रभम् ॥३॥ बोधिं नः सुविधे ! विधेहि सुविधेः कर्महुमौ-  
घप्रघे, जीयादंबुजकोमलक्रमतलः श्रीमान् जिनः शीतलः । श्रीश्रेयांस ! जय स्फुरद्गुणचयश्रेयःश्रियामाश्रयः, संपूज्यो जगतां  
श्रियं वितनुतां श्रीवासुपूज्यः सताम् ॥ ४ ॥ मोक्षं वो विमलो ददातु विमलो मोहांबुवाहानिलोऽनेतोऽनेतगुणः सदागतरणः  
कुर्यात् क्षयं कर्मणः । धर्मो मे विपदं व्युत्ताच्छिरसं दद्यात् सुखैकास्पर्द, शांतिस्तोर्थपतिः करोत्विभगतिः शांतिं कृतांतश्रितिः

गन्धार-  
श्रावकः

॥११६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारिणी  
॥११७॥

॥५॥ कुंधुमेंघरवो भवादवतु वो मानेभकण्ठीरवो, भक्त्या नम्रतरामरं जिनवरं प्रास्तस्मरं नौम्यरम् । श्रीमल्लेखनतक्रमोज्झिततमो  
मल्लेस्तु तुल्यं नमो, विश्वाचर्यो भवतः स पातु भवतः श्रीसुव्रतः सुव्रतः॥६॥ लोभांभोजतमेश्वरोपम ! नमे ! धर्मे धियं धेहि मे,  
वंदेऽहं वृषगामिनं प्रशुमिनं श्रीनेमिनं स्वामिनम् । श्रीमत्पार्श्वजिनं स्तुवेऽस्तवृजिनं दांताक्षदुर्वाजिनं, नौमि श्रीत्रिशलांगजं गतरुजं  
मायालताया गजम् । ७॥ इत्थं धर्म्यवचोवितानरचितं वर्यं स्तवं मुद्युतः, सद्वधर्मद्रुमसेकसंवरमुचां भक्त्याऽर्हतां नित्यशः । श्रेयः-कीर्ति-  
करं नरः स्मरति यः संसारमाकृत्य सोऽस्तीतार्तिः परमे पदे चिरमितः प्राप्नोत्यनंतं सुखम् ॥८॥ कर्तृनामगर्भाष्टदलकमलं ॥ जिन !  
तव गुणकीर्ते ! प्रियध्वस्तकीर्ते !, विगलदपरकीर्तेर्यद्गिरा धर्मकीर्तेः । सितकरसितकीर्ते ! शुद्धधर्मैककीर्तेः, स्तुतिमहमचिकीर्ते तां  
कृतानंगकीर्ते ॥१॥ जय वृषभजिनाभिप्लूयसे निम्ननाभिर्जडिभरविमनाभिर्यः सुपर्वांगनाभिः । तम इह किल नाभिक्षोणिभृत्सुनुनामिद्रुत-  
भुवनमनाभि क्षांतिसंपत्कुनाभिः । २ । प्रकटितवृषरूप ! त्यक्तनिःशेषरूप प्रभृतिविषयरूप ज्ञातविश्वस्वरूप जय चिरमरूप पापपंकाचुरूप !  
त्वमजित ! निजरूपप्राप्तसञ्जातरूपः । ३ । जय मदगजवारी संभवांतर्भवारिव्रजमिदि हतवारिश्रीर्न केनाप्यवागि । यदधिहृतभवारिश्रमन  
श्रीभवारिः, प्रशमशिखरिवारि प्राणमदानवारिः ॥४॥ अकून शुभनिवारं योऽत्र रागादिवार, सुविनतमघवारं संवराह्वः सुवारम् । मदनदह-  
नवार दोलितांतर्भवारं, नमत सपरिवारं तं जिनं सर्ववारम् ॥५॥ तव जिन ! सुमते ! न प्रत्यहं तन्वते न, स्तुतिरिति सुमतेन कचसोनि-  
ष्कृतेन । यदिह जगति तेन द्रागमया संमतेन, धुवमितदुरितेन श्रीश ! भाव्यं हितेन ॥६॥ परिहृतनृपपद्म ! श्रीजिनाधीशपद्मप्रभ !, सद-  
रुणपद्मद्युत्तमोहंसपद्म । त्वदखिलभविपद्मव्रातसंबोधपद्म, स्वजनगतविपद्माप्येऽनुशर्माकपद्म । ७ । दुरितनिभगमोऽहंपूर्विंकार्यक्रमोहं  
त्यजतिममतमोऽहंकारजिद्यः समोहम् । कृतकरणदमोहंतास्तलोभं तु सोहं, मतिहतमममोहं तं सुपार्श्वं तमोहम् ॥८॥ समतृणमणिभावः

गान्धार-  
श्रावकः

॥११७॥

ज्ञातनिःशेषभावः, प्रहृतमकलभावप्रत्यनीकप्रभाव ! । कृतमदपरिभाव श्रीशर्चंद्रप्रभावद्विजयति तनुभाव त्यक्तकामस्वभाव ॥ ९ ॥  
 जिनपतिसुविधे यः स्यात्तदाज्ञाविधेयप्रवण इह विधेयः प्रस्फुरद्भागधेयः। त्रिजगदनपिधेय श्लाघसन्नामधेयः, श्रयति शुभविधेयस्तं  
 लसद्रूपधेयः॥१०॥ य इह निहतकामं मुक्तराज्यादिकामं, प्रणतसुरनिकामं त्यक्तसद्भोगकामम् । नमति स निजकामं शीतल ! त्वां  
 प्रकामं, श्रयितकितमकामं सार्विका श्रीः स्वकामम् ॥ ११ ॥ विषमविशिषदोषा चारिचारप्रदोषा, प्रतिविधति सदोषाप्यस्य किं  
 कालदोषा ? । य इह वदनदोषापाचिपा क्षालिदोषा, तनुकमलमदोषा श्रेयमा शस्तदोषा ॥१२॥ कृतकुमतपिधानं सत्त्वरक्षाविधानं,  
 विहितदमविधानं सर्वलोकप्रधानम् । असमशमनिधानं शं जिनं संदधानं, नमत सदुपधानं वासुपूज्याभिधानम् ॥१३॥ भवदवजल-  
 वाहः कर्मकुंभाद्यवाहः, शिवपुरपथवाहस्त्यक्तलोकप्रवाहः। विमल ! जय सुवाहः सिद्धिकांताविवाहः, शमितकरणवाहः शांतवृद्ध्य-  
 वाहः ॥ १४ ॥ जिनवर ! विनयेन श्रीशशुद्धाशयेन, प्रवरतरनयेन त्वं नतोऽनंतयेन ! । भविकमलचयेन स्फूर्जदूर्जस्ययेन, द्विरदगति-  
 नयेन त्येन भाव्यं नयेन ॥ १५॥ जडिमरविसधर्मन्नुक्तदानादिधर्म, श्रुटितमदनधर्म न्यक्कृताप्राज्ञधर्म । जय जिनवर धर्म ! त्य-  
 क्तसंसारिधर्म, प्रतिनिगदित धर्मद्रव्यमुख्यार्थधर्म ॥१६॥ यदि नियतमशांतिं नेतुमिच्छोपशान्तिं, सममिलपत शांतिं तद्विधा  
 प्रत्तशांतिम् । प्रहृतजगदशांतिं जन्मतोऽप्यात्तशांतिं, नमतविगतशांतिं हे जना देवशांतिम् ॥१७॥ ननु सुरवरनाथ त्वां ननाथे  
 नृनाथ !, त्वमपि विगतनाथः कित्वहं कुंधुनाथः । प्रकुरु जिन सनाथ स्यां यथाद्योपनाथ प्रणतविबुधनाथ प्राज्यप्रच्छिष्य(च्छीश)-  
 नाथ ! ॥ १८ ॥ अवगमसवितारं विश्वविश्वेशितारं, तनुरुचिजिततारं सद्दयासांद्रतारम् । जिनमभिनमतारं भव्यलोकावतारं, यदि  
 पुनरवतारं संसृतौ नेच्छतारम् ॥१९॥ अनिशमिह निशान्तं प्राप्य यः सन्निशान्तं नमति शिवनिशान्तं मच्छीनाथं प्रशान्तम् । अधिपमिद

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥११९॥

विशांतं श्रीर्गता चावशांतं, धयति दुरितशांतं प्रोज्झय नित्यं वशांतं ॥२०॥ न्यदधत मघवासत्प्रोल्लसत्शुद्धवासः, परिहृतगृहवासस्था-  
शके यस्य वासः । विहितशिवनिवासः प्रत्तमोहप्रवासः, समन इह भवामः सुधतो मेऽध्युवासः ॥२१॥ समनमपत बालः शात्रवान्  
योऽप्यबालप्रकृतिरसितवालः शस्तरुकचक्रवालः । जयतु नमिरवालः सोऽधरास्तप्रवालः, श्वसितविजितवालः पुण्यवल्क्यालवालः  
॥२२॥ जितमदन मुने मे नानिशं नाथ नेमे !, निरुपमशमिनेमे येन तुभ्यं विनेमे । निकृतिजलधिनेमे सीर मोहत्रुनेमे, प्रणिद-  
धति न नेमे तं परा अप्यनेमे ॥२३॥ अहिपतिवृतपार्श्वं छिन्नसंमोहपार्श्वं, दुरितहरणपार्श्वं संनमयधपार्श्वम् । अशुभतमउपार्श्वं न्यस्कृ-  
तामंशुपार्श्वं, षुजिनविपिनपार्श्वं श्रीजिनं नौमि पार्श्वम् ॥२४॥ विदशविहितमानं सप्तहस्तांगमानं, दलितमदनमानं सद्गुणैर्वर्द्धमा-  
नम् । अनवरतममानं क्रोधमत्यस्यमानं, जिनवरमममानं संस्तुवे वर्द्धमानम् ॥ २५ ॥ विगलितबुजिनानां नौमि राजीं जिनानां,  
सरसिजनयनानां पूर्णचन्द्राननानाम् । गजवरगमनानां वारिवाहस्तनानां, हतमदमदनानां मुक्तजीवासनानाम् ॥२६॥ अत्रिकल-  
फलतारा प्राणनाथांशुतारा, भवजलनिधितारा सर्वदाविप्रतारा । सुरनरविनतारा त्वार्हती गीर्वतारादनवरतमितारा ज्ञानलक्ष्मीं सुतारा  
॥२७॥ नयनजितकुरंगीमिंदुसद्रोचिरंगीमिद्द कुलमदुरंगीकृत्य चित्तांतरंगी । सरति हि सुचिरांगीदेवतां यस्तरंगी, कुरुत इममरंगी-  
त्यादिकृद् बंधुरंगी ॥ २८ ॥ इति द्विचर्णयमितांद्द्विघृत्यष्टकस्तुतयः ॥ तस्स निम्मलरयणेसु न मणागमवि लोभो जागो,  
देवया चित्तेइ-अहो माणुममलुदंति, तुक्का देवया, इहि धरं भणंती उवट्टिया, तओ सावणेणं लवियं-नियत्तोऽहं माणुस्सपसुकाम-  
भोगेसु, किंचऽणेण कजंति !, अमोहं देवयादरिसणंति भणित्ता देवया अट्टसयं गुलियाणं जहाचित्तियमणोरहाणं पणामेइ । तओ  
य निग्गओ, सुयं चणेण-वीयभये नयरे सत्वालंकारविभूसिया देवावपारिया पडिमा, तं दच्छामिति तत्थ गओ, वंदिया

गान्धार-  
भावकः

॥११९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२०॥

पडिमा, तत्थ ठिओ स गिलाणो जाओ पडिजग्गिओ य कुञ्जाए । अट्टमयं गुलियाणं तीए दाउं म पव्वइओ ॥ २९ ॥ अह  
एगुलियभक्खणपभावओ सा सुवन्नभा जाया । सा तप्पमिइ जणे मुवन्नियगुलियत्ति सुविकखाया ॥३०॥ भक्खित्तु वीयगुलियं  
चित्तइ सा मे पिउव्व एस निओ । सेमा गोहममा तो मह भत्ता हवउ पज्जोओ ॥३१॥ सो देवयाणुभावा तीइणुरत्तो विमज्जए  
दूयं । सा भणइ दंसमु निवं पज्जोयस्माह सो गंतुं ॥४५॥ नलगिरिमारुहिय इमो निसि पत्तो तत्थ तीइ अभिरुइओ । जिय-  
पडिमं सह गिण्हसु एमि जहा अन्नहा नेव ॥४६॥ अह गंतु सो सनयरं पडिरूवं कारिउं तहिं पत्तो । तं मुतुं जियपडिमं दासिं  
गहिउं गओ सपुरिं ॥ ४७ ॥ गोसे सकरी सोउं नट्टमए चेडियं अवहडं च । कुविओ उदायणनिवो जा जोयावेइ जियपडिमं  
॥४८॥ तो तं मिलानमल्लं दट्टुं दममउडवद्धनिवमडिओ । पज्जोयनिवस्सुवरिं चलिओ काले निदाघंमि ॥ ४९ ॥ पत्तो मरुंमि  
सिन्ने भिसं तिमापीडिए मरइ राया । झत्ति पभावडदेवं स विउव्वइ पुक्खरतिगं तो ॥ ५० ॥ तहिं तहिं पाउं पाउं सुलिलं सिन्ने  
सुरो गओ सपयं । राया उदायणोऽविहु उज्जेणिपुरं कमा पत्तो ॥ ५१ ॥ तत्थ उदायणरत्तो अवतिनांहस्स दूयवयणेण । अचिरा  
परुप्परेणं रहसंगरसंगरो जाओ ॥५२॥ तयणु धणुद्धरपवरो रहमारुहिउं उदायणो पत्तो । गुणटंकारमुदारं कुणमाणो समरभूमीए  
॥५३॥ नाउ रहाऽजेयमुदायणं निवं नलगिरिं चडिय पत्तो । रणभुवि पज्जोओ पुण चलवंते का नणु पइत्ता ? ॥५४॥ नलगिरि-  
गयमारुडं तं दट्टुमुदायणो भणइ रुट्टो । पाविट्टु भट्टसंधो सि तहयि णट्टो सि रें घिट्टु ! ॥५५॥ इयं भणिय. मंडलीए रएण  
सरहं निवो भमाडंतो । निसियसरेहिं विंधइ वीतुं करिणो पयत्तलाइं ॥५६॥ तो लहुं हत्थीपडिओ धरिऊण उदायणेणं पज्जोओ ।  
मम दासीवइदामोत्तियंकिओ कोववमणेणं ॥५७॥ गंतुं तउ विदिसाए अत्थिय देवाहिदेवपडिमं जा । उप्पाडइ नरनाहो ता भणइ

गन्धार-  
श्रावकः

॥१२०॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१२१॥

सुरो अहो भूव ! ॥ ५८ ॥ मा नेसु इओ पडिमं बीषमए पंसुवद्वयो होही । तो राया सविसाओ नमिय तयं सपुरममि चलिओ  
॥५९॥ बुट्टीइ सिबनइतडे खलिओ सिबिरं निहित्तु तत्थ ठिया । काऊण धूलिवप्पे दसवि निवा तस्स रक्खट्ठा ॥ ६० ॥ अह  
पज्जुसणादिवसे कयउववासे उदायणे सुओ । पुच्छइ पज्जोयनिवं का तुह कारीउ रसवइत्ति ॥ ६१ ॥ सो चित्तइ नूणमिणं मारिउं-  
कामो विसाइणा तत्तो । जंपेइ सुय ! किमज्ज कीरइ मे वीसु आहारो ? ॥ ६२ ॥ सुओ जंपह सामी अंतेउरपरियरो यज्जत्तट्ठी । जं अज्ज  
पज्जुसवणा तो तुह साहेमि आहारं ॥ ६३ ॥ सो आह सुदट्ठ तुमए पव्वमिणं मज्झ सारियं सुय ! । अज्जुववासो मज्झवि जं  
पियरो मह परमसद्धा ॥ ६४ ॥ तं सुओ साहइ गंतु रायाणो सोऽवि भणइ जाणंमि । से सडुत्तं जाणइ युत्तो पुण वइसगं काउं ॥ ६५ ॥  
काराइ ठिए एयंमि जारिसे तारिसेऽवि नहु सुद्धा ! मह होइ पज्जुसवणा इय तं मुंचेइ नरनाहो ॥ ६६ ॥ दाउं अवंतिदेसं स महप्पा  
कुणइ तेण स्वामणयं । भालंकगोवणट्ठा वियरइ से कणगपट्टं च ॥ ६७ ॥ तप्पमिइ पट्टवद्धा निवा पुरा आसि मउडवद्धत्ति । वित्ते  
वरिसारत्ते उदायणो नियपुरं पत्तो ॥ ६८ ॥ जे लाभच्छी वणिया समागया तत्थ ववहरणहेउं । तेहिं चिय वसमाणं तं खायं दसपुरं  
नयरं ॥ ६९ ॥ इओ य-मह निवाणनिसाए गोयम ! पालयनिवो अवंतीए । होही पाडलियपट्टु सो असुअउदाइनिवमरणे ॥ ७० ॥  
पालइ रज्जं सट्ठी पणपण्णसयं नवण्ह नंदाणं । नव मोरीणज्जुसयं तीस वरिस पूसमित्तस्स ॥ ७१ ॥ बलमित्तभाणुमित्ताण सट्ठी  
नरवाहणस्स चालीसा । तेर निव गदमिल्लो कालयआणीयसगचउरो ॥ ७२ ॥ सुन्नमुणिवेयजुत्ता जिणकाला विकमो वरिस सट्ठी ।  
धम्माइच्चो चत्ता भाइलसगवीस नाहडे अट्ट ॥ ७३ ॥ तह धुंधुमार तीसा लहुविकमाइच्च वारसय वरिसे । दस बुद्धमित्त अंधो हे-  
हयवंसी असी भोजो ॥ ७४ ॥ इत्यादि । अह जिअपडिमं भाइलनिवो निसाए कयाइ पूअंतो । वहिआगए सुरे ददट्टु निग्गओ

गन्धार-  
श्रावकः

॥१२१॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२२॥

कुट्टओ रहसा ॥७५॥ वरसु वरंति मुरुत्तो भणइ सया हुज्जमिह पसिद्धोऽहं । होही एवंति परं मिच्छत्तं गच्छिही तित्थं ॥७६॥ जं  
अद्धकयाइ तुमं पूयाइ विणिग्गउत्ति वुत्तु सुरा । झत्ति गया अह झरइ निवो वहुं दुट्ठु विहियं मे ॥ ७७ ॥ भाइलसामित्ति तओ  
पसिद्धमज्जवि तमत्थिऽवंतीए । जियपडिमुप्पत्तिपइन्नगओ सेसं तु नायव्वं ॥७८॥ इह निसि थुईहिं वंदण देवयकर कणय-  
गुलियरज्जाई । भणियं भवियहियट्ठा तिदिसिअपेहाइ पुण पययं ॥७९॥ गंधारीयश्रावकस्येति वृत्तं, वित्तं श्रुत्वैकाप्रताया निमित्तम् ।  
नित्यं भव्या ! भव्यभावेन देवान्, वंदध्वं भो दिक्कयेक्षोज्जनेन ॥ इति त्रिदिग्निरीक्षणवर्जने गंधारश्रावकसंबंधः ॥

भावितं तिदिसिनिरकरणविरइत्ति पष्ठं त्रिकं, सप्तमस्य तु त्रिकस्य 'पथभूमिपमज्जणं च तिवसुत्तो' इत्यस्येयं भावना-सर्वमपि  
धर्मानुष्ठानं दयाप्रधानमेव क्रियमाणं नफलतां धत्ते, आह च-'पठितं श्रुतं च शास्त्रं गुरुपरिचरणं च गुरुतपश्चरणम् । घनगर्जितमिव  
विजलं विफलं सकलं दयाविकल ॥१॥मिति, तथा-जयणा उ धम्मजणणी, जयणा धम्मस्स पालणी चेव । तह बुट्टिकरी जयणा,  
एगंतसुहावहा जयणा ॥१॥त्ति, तथा महानिशीथे-'से भयवं ! केणट्ठेणं एवं बुच्चइ जहा णं पंचमंगलमहासुअक्खंधं अहिज्जिताणं  
पुणो इरियावहियं अहीणं, गोयमा ! जे णं एस आया से णं जया गमणागमणाइपरिणामपरिणाए अणेगजीवपाणभूयसत्ताणं  
अणुवउत्तपसत्ते संघट्टणं अवहावणं किलामणं काऊणं अणालोइअपडिकंते चेव असेसकम्मक्खयट्ठाए किंचिवि चिइवंदणमज्झाय-  
झाणाइएमु अमिरमेज्जा तथा से एगग्गचित्ता समाही हवेज्जा न वा, जओ णं गमणाइपणेगअन्नवावारपरिणामासत्तचित्ताए  
केइ पाणी तमेव भावंतरमच्छडिय अट्ठुट्ठुट्ठुज्जवसिए कंचि कालं खणं विरत्तेज्जा ताहे तं तस्स फलं विसंवरइज्जा, जया पुण किंचिवि  
अन्नाणमोइपमायदोसेणं सहसा एगिदियाईणं संघट्टणं परितावणं वा कयं हवेज्जा तथा य पच्छा हा हा हा इट्ठु कयमग्गेहिं

प्रमार्जनम्

॥१२२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२३॥

घणरागदोसमोहमिच्छतअन्नाणंधेहिं - अदिष्टपरलोगपचवाएहिं कूरकम्मनिग्घणेहिन्ति परमसंवेगमापन्ने सुपरिफुडं अलोएत्ताणं  
निदित्ताणं गरहेत्ताणं पायच्छित्तमणुचरित्ताणं निस्सल्ले अणाउलचित्ते असुहकम्मवखयट्ठा किंचि आयहियं चिइवंदणाइ अणुट्टिआ  
तया तयट्ठे चेव उवउत्ते से हविआ, जया णं से तयट्ठे उवउत्ते भवेआ तया तस्स णं परमेगग्गचित्ता समाही भवेआ तया चेव सब-  
जगज्जीवपाणभूयसत्ताणं अदिट्ठफलसंपत्ती हवेआ, ता गोयमा णं अपडिकंताए ईरियावहियाए न कप्पइ चेव किंचि चिइवंदण-  
सज्जायझाणाइयं काउं फलासामयमभिकंखुगाणं, एएणं अत्थेणं गोयमा! एवं बुद्धइ-जहा णं गोयमा! ससुत्तोभयं पंचमंगलं  
धिरपरिचिअं काऊणं तओ ईरियावहियं अज्झीए”त्ति, दशचैकालिकद्वितीयचूलिकावृत्तौ तु “ईर्यापथिक्याः प्रतिक्रमणं विना न  
कल्पते किमपि कर्तुं”मिति, इत्यागमप्रामाण्यादीर्यापथिकीपूर्वमेव सर्वमपि धर्मानुष्ठानमनुष्ठेयं, इत्थमेव चितोपयोगेनानुष्ठानस्य  
साफल्यभणनात्, अन्यथा प्रायश्चित्तैकाग्रताया अप्यभावात् सूत्रप्रामाण्याच्च, पुष्कलिना संखं प्रति श्रावकवंदनस्यापि तथैव विधा-  
नाच्च, यदुक्तं भगवत्सर्गां द्वादशशतकप्रथमोदेशके-“गमणागमणाए पडिकमइ, संखं समणोवासयं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमं-  
सिप्पा एवं वयासी” ईर्यापथिकीं च प्रतिक्रमता गीन् वारान् पदन्यासभूमिः प्रमार्जनीया, तथा च महानिशीथसूत्रं ‘इरियं  
पडिकमिउकामे जइ तिप्पि वाराउ चलणमाणं हिट्ठिमं भूमिभागं न पमज्जिआ तो पच्छित्तं’ति, पुष्कलीश्रावकसंबंधश्चायम्—

अत्थि पुरी सायत्थी ससावया जा असावयावि सया । तत्थ य सावयपवरो संखो संखोज्जलगुणोहो ॥ १ ॥ तस्स पिया  
नेपिगग्गिणपाण्णला उप्पलाभिहत्थि तर्हि । सइठो य पुक्खली वरपुक्खलदल इव निरुवलेवो ॥ २ ॥ जाणियजीवाइगणा  
यएगग्गणा य गति पणुसयणा । अग्गेऽवि तत्थ सइठो बहवे बहवेअरअवियइदा ॥३॥ वरणाणधनकुट्टयचेइये कोट्टए समोसरियं ।

प्रमार्जनम्

॥१२३॥

श्रीदे०  
चेत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२४॥

वीरजिणं नमिउं ते नियंति निसुणंति पद्दुवयणं ॥४॥ पुच्छइ गीयमसामी केणं विहिणा पद्दु पढिय सुत्तं । धम्माणुट्ठाणमिणं कीरइ  
तित्थंमि ? कहइ पद्दु ॥५॥ विग्घक्खयमंगलत्थं हिअट्ठआरद्धपारगमणत्थं । पढममिह पंचमंगलसुत्तमहिज्जिज्ज तो इरियं ॥ ६ ॥  
गीयम ! जेण न कप्पइ काउं इरियाइअपडिकंताए । चिइवंदणाइ किंचिवि तप्फलसायाभिलासीणं ॥ ७ ॥ जं गमणागमणाई  
णालोइय अपडिकमिय पाएण । न हवइ मणएगत्तं तयभावे किह सुधम्मफलं ? ॥८॥ जइया गमागमाई आलोइयनिदिऊण गर-  
हिता । हा दुट्ठुम्हेहिं कयं मिच्छादुकडमिय भणित्ता ॥९॥ तह उस्सगेणं तयणुरूवपच्छित्तमणुचरित्ताणं । जो आयहियं चिइ-  
वंदणाइऽणुट्ठिज्ज उवउत्तो ॥१०॥ तइया उ परमएगगमणसमाही हविज्ज तस्म तओ । इट्ठफलसंपया तो पुब्बि इरियं पडिकमिजा  
॥११॥ अविप-देवचणं पवित्तं करेइ जह काउ बज्जतणुसुद्धिं । भावचणंपि हुज्जा तह इरियाए विमलचित्ते ॥१२॥ तो चिइवंदण-  
सामाइयाइ सुत्तं अहिज्ज सेसंपि । देवच्चिअधम्मविअरउत्ति धम्मी पसिद्धमिणं ॥ १३ ॥ एवंपि भणिय गीयमपद्दु पद्दुं नमइ  
तेऽवि तह सइडे । वंदिय जिणं नियत्ते भणेइ संखो निरवकंखो ॥१४॥ भो भो उवक्खडावह विउलं असणाइ तं च जिमिऊण ।  
विहरिस्सामो गिण्हित्तु पक्खियं पोसहं संमं ॥ १५ ॥ तेसुवि तहेव भणिउं सट्ठाणगएसु चित्तए संखो । नो खलु कप्पइ तं मज्झ  
विउलमसणाइयं भुत्तुं ॥१६॥ किंतु विमुकालंकारसत्थकुसुमस्स बंभयारिस्स । एगागिस्स उ पोसहसालाए पोसहं घित्तुं ॥ १७ ॥  
पुच्छित्तु उप्पलं तो संखो गिण्हेइ पोसहं इत्तो । ते मिलिअ सावया लहु असणाइ उवक्खडाविति ॥ १८ ॥ जंपंति य भो महा !  
संखेणुत्तं जहा जिमेऊण । विहरिस्सामो गिण्हित्तु पक्खियं पोसहं अम्हे ॥ १९ ॥ ता किं अज्जवि संखो न एइ अह आइ पुक्खली  
सइदो । जाणेमि तं निमंतिय ता तुम्हे ठाह सुविसत्था ॥२०॥ इय भणिय संखगेहेसो पत्तो तं च उप्पला इत्तं । दइइ अज्जइइ

पुक्कली-  
श्रावकः

॥१२४॥

श्रीदे०  
वैत्य० धी०  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२५॥

जाइ संग्रहं तह सगहपए ॥२१॥ वंदिय निमंतिउं आसणेण पुच्छेइ आगमणकज्जं । स भणइ भदे ! संखुब निरंजणो कत्थ सो संखो ?  
॥२२॥ सा जंपइ पोसहिओ षोमहसालाइ अत्थि तो गंतुं । तिपमज्जिय पयभूमिं गमणागमणाइ पडिकमइ ॥२३॥ जोडित्तु करे  
वंदित्ति भणिय नामित्तु मउलमिय संखं । वंदिय नमंसित्तुं भणइ पुक्खली पुक्खलपमोओ ॥२४॥ यदुक्तं भगवत्यां द्वादशशतक-  
प्रथमोद्देशके—‘गमणागमणाए पडिकमइ, संखं समणोवासयं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—संख ! असणाइ सत्त्वं तं  
सिट्ठं एह लहु तओ उब्भे । स भणइ पोसहिओऽहं भइ ! तओ तत्थ सिच्छा मे ॥ २५ ॥ इय सुणिय पुक्खली तं कहेइ सड्ढाण  
संखवृत्तंतं । मणयं कसाइया ते भुंजंति तओ तमसणाइ ॥ २६ ॥ संखो निसाविरामे चितइ नमित्तं पट्टं पभाए मे । धम्मं सोउ  
निअत्तस्स पोसहं पारित्तं सेयं ॥२७॥ यदागमः—‘तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स पुब्बरात्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं  
जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए चित्तिए पत्थिए मणोमाणसिए संकप्पे समुप्पज्जित्था—सेयं खलु मे कल्लं पाउप्पभायाए  
रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियंमि अहापंडुरे पभाए रत्तासोगाकिंसुयमुहगुंजद्वारागसरिसे कमलावरसंडबोहए उट्टियम्मि घरे  
सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते समणं भयवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता तओ पडिनियत्तस्स पक्खियं पोसहं पारित्तएत्ति  
कदडु एवं संपेहेइ । अहं गंतु पए सगिहं परिहियमंगलवत्थपयचारी । पविसिय अहिगमवज्जं ओसरणे नमइ वीरजिणं ॥ २८ ॥  
उक्तं च—‘पायविहारचारेणं सावत्थिं नपरिं मज्झंमज्झेणं जाव पज्जुवासइ, अभिगमो नत्थि’ तेऽविहु सड्ढा ष्हाणाइ काउ मिलि-  
ऊणं नमिअ वीरजिणं । संखंते वित्ति जइ तुमं कल्लंमि तयं नयं वुत्ता ॥२९॥ पच्छा पोसहमजिमिय सयमेव गहेसि ता तुमं नूणं ।  
अम्हे हीलसि निंदसि खिससि गरिहसिऽवमन्नेसि ॥३०॥ तत्थ—जच्चाइएहिं हीला मणसा निंदा परुक्खओ खिसा । गरिहा तस्स

पुक्कला-  
कथा

॥१२५॥

श्रीदे०  
चेत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२३॥

समक्खं अवमन्नणयं अबहुमाणो ॥३१॥ अह भणइ पहू मेवं संखं हीलहू तुमे जओ एसो । पियधम्मो ददधम्मो जग्गेइ सुदक्खु-  
जागरियं ॥३२॥ “भंतेत्ति भगवं गोतमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वदासी-कत्तिविहा णं भंते !  
आगरिया पणत्ता?, गोयमा ! तिविहा जागरिया पणत्ता, तंजहा—बुद्धजागरिया अबुद्धजागरिया सुदक्खुजागरिया, सेक्केण-  
ट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ-तिविहा जागरिया पणत्ता, तंजहा—बुद्धजागरिया?, गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंता उप्पण्णनाणदंसण-  
धरा जहा खंदए जाव मव्वन्नू मव्वदरिसी एते णं बुद्धा बुद्धजागरियं जागरित्ति, जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया ५  
मणसमिया? मणगुत्तारे गुत्ता गुत्तिदिया जाव गुत्तवंभयारी एए णं अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरित्ति, जे इमे समणोवासया  
अमिगयजीवाजीवा जाव विहरंति, एए णं सुदक्खुजागरियं जागरित्ति, से तेणट्टेणं गो० एवं बुच्चइ तिविधा जागरिया बुद्धजा०  
अबुद्धजा० सुदक्खुजागरिया” तो संखो संखो इव महुरसरो भणइ कोहपमुहवमा । किं पहु ! वंधइ जीवो ? मगट्टकंमलवमाइ-  
पहु ॥३३॥ इहागमः—‘तए णं से संखे ममणोवानए समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वदासी—  
कोहवसट्टे णं भंते ! जीवे किं वंशति किं पकरोति किं चिणाइ किं उवचिणाइ ?, संखा ! कोहवसट्टे णं जीवे आउयवजाउ सत्त  
कम्मपयडीउ सिहिलबंधणपद्धाउ धणियबंधगवद्धाउ पकरेइ हस्सकालट्टिइआओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ, मंदाणुभावाओ  
तिवाणुभावाओ पकरेइ, अप्पएसग्गाओ वहुप्पएसग्गाओ पकरेइ, आउअं चणं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ, असायावेयणिज्जं-  
च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं अणवदम्मं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियइइ, एवं मानमायालीभवस-  
ट्टावि” ॥ इय सोउं ते मीया गयमिनिवेमा नमंति वंदंति । खामत्ति अ विणयपग संखं संखं च सुपविचे ॥ ३४ ॥ अह नमिय

पुष्कला-  
कथा

॥१२३॥

जिणं सखो संखोहवित्रज्जो पडिनियत्तो । पारंइ पोसह जंति तेवि मड्ढा तह मठाणं ॥३५॥ पडु ! पडइहिइ संखोत्ति गोयसुत्ते  
 न डुत्ति भणइ जिणो । तो कहिं गमिहित्ति पुणो गोयमपुट्ठो भणइ भयवं ॥ ३६ ॥ होउं चउपलियठिई सुरो सुहंमारुणाभसुर-  
 विमाणे । संखो असंखकम्मं खविउं सिज्झिस्सइ विदेहे ॥ ३७ ॥ पुक्खलिपमुहाविय सेमसावया विहिय सुद्धणुट्ठाणं । अणुहअ  
 मुगइसुक्खं कमेण गमिहिंति निबाण ॥ ३८ ॥ श्रुत्तवमल्पमपि पुक्कलिनाऽनुचीर्णमीर्याप्रतिक्रमणतः किल धर्मकृत्यम् । सामा-  
 यिकादि विदधीत ततः प्रभृतं, तत्पूर्वमत्र च पदावनिमार्जनं त्रिः ॥ ३९ ॥ इति ईर्यापधिकीपूर्व त्रिः पदभूमिप्रमार्जने  
 पुष्कलीश्रावकसंबंधः ॥ सप्रपंचं प्रोक्तः 'पयभूमिपमज्जण च तिक्खुत्तो'त्ति मत्तमत्रिकभावार्थः ॥ अथ वर्णादित्रयमित्यष्टमं  
 त्रिकं गाथापूर्वाद्धिन भाष्यकृद विवृण्वन्नाह—

वन्नतिर्यं वन्नत्थालंघणमालंघणं तु पडिमाई ।

वर्णत्रिकमुच्यते, किमित्याह—वर्णार्थालंघनानि, तत्र वर्णाः—स्तुतिदंडादिगतान्यक्षराणि, ते च स्फुटं संपदञ्चेदसुविमुद्धान्यु-  
 नातिरिक्ता उचार्याः, यदवाचि भाष्ये—“शुद्धदंडाई वन्ना उचरियव्वा फुडा सुपरिसुद्धा । सरवंजणाइमिन्ना सपयच्छेया उचियघोसा  
 ॥१॥ ( २३३ ) अर्थश्च तेषामेताभिधेयः, न यथापरिव्रानं चित्यः, न्यगादि च—“चित्तेयवो संमं तेसि अत्थो जहापरिघ्राणं ।  
 सुघ्नहियत्तमिहरहा उत्तमफलसाहगं न भवे ॥२॥ (२३३) आलंघनं तु स्वयमेव भाष्यकृद् व्याख्यानयति—आलंघनं तु पडिमादिति,  
 आलंघनं पुनर्देवान् वंदमानस्य चंद्रनरेन्द्रस्येवाश्रयणीयं, किं तत् ?—प्रतिमादि, आदिशब्दात् भावार्हदादिपरिग्रहः, यदभाषि-  
 “भानारिहंतपसुहं सरिज्ज आलंघणंपि दंडेसु । अहया जिणविंवाई जस्म पुरो वंदणारद्धं ॥१॥ (२३४) चंद्रनरेन्द्रकथा चैवम्—

सुविशालभद्रशाले कनकपुरे कनकशैलसंकाशे । कयकुवलयपरिओसो चंदो चदुब नरनाहो ॥१॥ तत्रान्यदा दिविपदामाग-  
मनात् केवलं समुत्पन्नम् । कस्मवि मुनिस्त नाउं तं नमिउं नरवरो पत्तो ॥२॥ अप्रतिरूपं रूपं सम्यक् संवीक्ष्य यतिपतेर्नृपतिः ।  
वेरगकारणं वयगहणे पुच्छेइ विम्हइओ ॥३॥ मुनिराख्यत् कुसुमपुरे जिनसमयत्रिवुद्धबंधुरमनस्कः । नायालंबणजणपालणुज्जओ  
आसि सुलसनिवो ॥४॥ सोऽन्येद्युरतनुदाहजरभरदवदग्धवपुरिदं दध्थौ अहह किह गुत्तिखित्ता सत्ता दुसहं सहंति दुहं ॥५॥  
तथाहि—देहं कारागारं हडिरायुः कीलिका विपयवृष्णा । तिमिरं आवरणदुग्ं वेयणियं जायणाऽगारे ॥६॥ हास्यादिपरिकरयुता  
उन्निद्रा यामिका इह कपायाः । रागदोसकवाडा भोगाईवारयं विग्धं ॥ ७ ॥ हीनजनोचितरूपादिकरणनिपुणानि नामगोत्राणि ।  
मंकुणजूआ वाही मिच्छत्तं दुट्टजंतुसमं ॥ ८ ॥ अज्ञानवप्रवारितमार्गा गृहवासबंधनैर्वद्ध्वा । दाऊण पियानियलं सुआइगलसंकलं  
तह य ॥९॥ कर्मपरिणामराज्ञा क्षिप्ता जीवाः सरोपमिति गुप्तौ । तत्तज्जोगावग्गणविहारिणो लोगभंडारे ॥१०॥ यदि मम रुजे-  
यमुपशमयेष्यति सितकरहतेव तिमिरततिः । सबाहं बंधणाइं छित्तुं अममत्तसत्थेण ॥११॥ भंत्त्वा कपाटसंपुटमर्हदीक्षास्फुरत्कुठा-  
रिकाया । पाहरियाणं सुहभावणुगओऽवसोवणिं दाउ ॥ १२ ॥ सुविवेकदीपदर्शितमार्गः प्रविदलितमोहनिद्रोऽहम् । गुणठाणगनि-  
स्सेणिं चडिउं लचित्तु पायारं ॥१३॥ पूर्वोदितकाराया विनिर्गमिष्यामि चरणबलकलितः । मोहनरिंदअगंमे पविसिस्सं निच्चुई-  
दुग्गे ॥१४॥ इति चित्तयतः सुलसस्य भूभुजः शुद्धभावनासुधया । सा निद्रुंजरभरदाहवेयणा झत्ति उवसंता ॥१५॥ तदनु स  
पुरे राज्यं न्यस्य श्रीधर्मघोपगुरुपाश्वे । गिण्हिय दिक्खं सिक्खियदुहसिक्खां पत्तखरिपओ ॥१६॥ विहरन्नसौ ततोऽप्रागतः सित-  
प्याननिहतकर्माऽयम् । पत्तो केवलनाणं सो उ अहं चंदनरनाह ! ॥१७॥ श्रुत्वेति चंद्रराजः प्रमोदमेदुरमना मुनिं प्रोचे । परिसयं

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
र्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१२९॥

केवलं किं कयापि अहयंपि पाविस्सं? ॥१८॥ गुरुरारुणतेह भरने मिथिलानगरीशकुंभभूपतिभूः। देवी पभावई नणु षणमालामु-  
नियमणिह ॥ १९ ॥ स्त्रीभावकर्मवशतो घटांकितो नीलरत्ननीलरुचिः । पणवीसधणुचतणू मल्लीनामा जिणो होदी ॥ २० ॥  
अरुतोद्वाहः समये सहितो राज्ञां त्रिमिः शनैः म विभुः। गिण्हस्सइ पव्वज्जं लहु लहिदी केवलं नाणं ॥२१॥ मिथिलायां तस्य  
विभोर्न्यास्यामाकर्ण्य चंद्र ! तव जीवः । पिउऽणुआओ गहिदी दिक्खं तस्सेव पासंभि ॥२२॥ मल्लिजिनालंबनतो ध्यानमनालंबनं  
गतबिलंबम् । शायंतस्स तुह इमं उवमज्जिहिइ परआणं ॥२३॥ एवं निशम्य मुदितो राजा प्रणिपत्य मुनिपददंडं । पत्तो नियंमि  
ठाणे अन्नत्थ गुरुवि विहरित्था ॥२४॥ अथ नृपतिर्निजमदने विधाय जैनेन्द्रमंदिरं तत्र । आलंबणाय मणसो संठावइ मल्लिजिण-  
पटिमं ॥२५॥ तामर्चामर्चित्वाऽष्टधाऽर्चया प्रत्यहं त्रिमन्ध्यमपि । मुकयत्थं अप्पाणं मअंतो धुणइ इय हिट्ठो ॥२६॥ “श्रीकुंभभूपा-  
लविशालवंशनभोऽंगणोद्दामनशुभ्रभानुम् । प्रभावतीकुशिसरोमरालं, वनाभ्यहं गल्लिजिनेन्द्रचंद्रम् ॥२७॥ जन्माभिपेके किल यस्य  
शक्रैः, प्रलोठितैः क्षीरसमुद्रनीरैः । विराजितो राजितवान् सुमेरुमल्लिभुदे सोऽस्तु ममावलंबम् ॥२८॥ अर्चित्यमाहात्म्यनिरस्तस-  
र्वप्रत्यर्थिजालंबनवैभवं तद् । स्वदर्शनं मल्लिजिन ! प्रयच्छ, प्रसीद मेऽहंमतिभेदि देव ! ॥ २९ ॥ अनन्यसामान्यवरेण्यपुण्यप्राग-  
ल्भ्यलभ्यं भुवनामिरामम् । त्वद्दर्शनं नाथ ! कदा समस्तं, त्रिया विशालं वनजं श्रयिष्ये ॥३०॥ नीलेन्द्रकालं वनवाहमुच्चैस्त-  
श्चावबोधक्रमसेवनेऽहम् । श्रीमल्लिनाथं जगतीशरण्यं, भावारिभीतः शरणं श्रयामि ॥ ३१ ॥ सदा चिदानंदमयास्तमोहमल्लेन  
मल्ले ! भविताऽसि देव ! । कदा निरालंब निरंजन त्वं, कुंभांकितः केवलसंविदे मे ॥३२॥ अध्यासिता हे जिन ! मुक्तिकांता, हृदं-  
तरालंबनजोपमानम् । श्रीमल्लिनाथांक्षिद्युगं कदा तेऽवर्तसयित्वा प्रणतोत्तमांगः ॥३३॥ मल्ले ! नमल्लेखभवांध्रकूपे, पतंतमालंबन-

श्रीचन्द्र-  
कथा

॥१२९॥



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥१३०॥

वर्जितं माम् । स्वभारतीवर्यवर ! त्वया त्वमालंबयालंबनविष्टपस्य ॥३४॥ मल्लीशमल्लीसमधर्मकीर्तेः, महोर्ध्वकश्मीरजलिप्तविश्वः।  
अलेरिवालं निजपादपद्ममालंबनं मे मनमः प्रयच्छ ॥३५॥” एवं स्तवने मौने जने वने निशि दिने बहिः सदने । सधत्थवि मल्लि-  
जिणालंरणपवणो स चिट्टेइ ॥३६॥ अन्वेद्युर्निजतनये नयेन संस्थाप्य निजकराज्यभरम् । गहिय उयं चंदनिवो पत्तो सोहम्म-  
कप्पमि ॥३७॥ च्युत्वा ततोऽपि मिथिलापुर्यां हरिनंदनो महेश्यस्य । आणंदुत्ति जणाणं जणिआणंदो सुओ जाओ ॥ ३८ ॥  
पित्राऽसाविभ्यानामष्टौ कन्या विवाहयांचक्रे । धम्मस्म अविग्घेणं भुंजइ पंचविहविमयसुहं ॥३९॥ अपरेद्युर्मल्लिजिनस्य देशनामृतरसं-  
श्रुतिपुटेन । घुंठइ सरसरओसरियमोहविसहरगरलपमरो ॥ ४० ॥ स्फुग्दुरुसंवेगभरः कथमपि पितरायसावनुज्ञाप्य । सिरिमल्लिजिण-  
समीवे महाविभूर्ईइ पव्वइओ ॥४१॥ आज्ञानिपाकसंस्थित्यपायविचयप्रकागतो धर्म्यम् । सालंबणं सुज्ञाणं चउहा ज्ञायइ इमो तयणु  
॥ ४२ ॥ द्रव्यध्वनियोगमिदा मसंक्रमं ध्यायति प्रथमशुक्लम् । भंगियसुएत्तिजोगो सपहुत्तवियकसवियार ॥ ४३ ॥ द्रव्यध्वनि-  
योगमिदा त्रसंक्रमं ध्यायति द्वितीयसितम् । सो एगत्तवियक्काविआरमन्नयरजोगजुओ ॥४४॥ ध्यानांतरानुगः सितलेइयः क्षेपितत्रि-  
षष्टिकर्माशः । विहरइ आणंदमुणी महीइ उप्पन्नवरनाणो ॥ ४५ ॥ अंतर्मुहूर्तमात्रिनि शिवेऽथ जातेव्यघातिकर्मसु या । चउसु  
विसमठिईसु निसग्गओ वा ममुग्घाया ॥ ४६ ॥ अग्रह्य मनोयोगं वाग्योगं तदनु चार्धतनुयोगम् । सुहुमकिरियानियट्टिं ज्ञाइ  
तओ तइयसियज्ञाणं ॥४७॥ तदनु कृततनुनिगोधः शैलेशी स्यात्ततो निरालंबं । ज्ञाइ परमसियज्ञाणं उवरयकिरियं अपडिवाइं ॥४८॥  
थइउरुल्लपचवर्णा मध्यमकालेन यावतोच्यंते । अच्छइ सेलेसिगओ तत्तियमित्तं तओ कालं ॥४९॥ प्रतिसमयमसंख्यगुणश्रेण्या कर्म  
क्षिपन् क्षिपेच्छेपाः । विमयरि १ तेरस २ पयडी कमेण दुचरिमे चरिमसमए ॥५०॥ ऋजुकश्रेण्याऽस्पृष्टा प्रदेशसमयांतरं चतुर-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१३१॥

नंतः । मागारुजोगो इगममण्णाणंदमुणि सिद्धो ॥५१॥ श्रुत्वेति चंद्रक्षितिगम्य पृत्तं, भव्या ! निरालंबपदेऽधिरोढुम् । गृहीत गाढं  
सुदृढं प्ररूढमालंबनं श्रीजिनविंशमुख्यम् ॥५२॥ इति चंद्रनरेन्द्रकथा ॥११॥ इति प्रतिपादितं वर्णादित्रिकं इत्यष्टमं त्रिकं, अथ  
नवमं मुद्रात्रिकं नामतो गाथोत्तरार्धेनाह—

जोग १ जिण २ मुत्तसुत्ती ३ मुद्दाभेण मुद्दत्तियं ॥ ११ ॥

मुद्राशब्दः पृथग् योज्यते, ततश्च योगमुद्राजिनमुद्रामुक्ताशुक्तिमुद्राभेदात् मुद्रात्रिकं भवतीत्यर्थः, आसां स्वरूपमाह—  
अलुप्ततरि अंगुली कोसागारेहिं दोहिं हत्थेहिं । पिट्टोवरिकुप्परिसंठिण्णिं तद् जोगमुद्दत्ति ॥१२॥  
चत्तारि अंगुलाइं पुरओ ऊणाइं जत्थ पच्छिमओ । पायाणं उस्सगो एसा पुण होइ जिणमुद्दा ॥१३॥  
मुत्तासुत्ती मुद्दा जत्थ समा दोऽवि गन्धियरा हत्था । ते पुण निलाडदेसे लग्गा अन्ने अलग्गत्ति ॥१४॥

उभयकरजोडनेन परस्परमध्यप्रविष्टांगुलिभिः कृत्वा पद्मकुड्मलाकाराभ्यां तथा उदस्योपरि कुहणिकया व्यवस्थिताभ्यां  
योगो—हस्तयोर्योजनविशेषः तत्प्रधाना मुद्रा, योगमुद्रा इत्येवंस्वरूपा भवतीति गम्यम् ॥ १२ ॥ चत्वार्यंगुलानि स्वकीयान्येव  
पुरतः—अग्रतः तथा ऊनानि किञ्चित् चत्वार्येवांगुलानि यत्र मुद्रायां पश्चिमतः—पश्चाद्भागे एवं पादयोरुत्सर्गः—परस्परसं-  
सर्गत्यागोऽंतरमित्यर्थः एषा पुनर्भवति जिनानां कृतक्रायोत्सर्गाणां सत्का जिना वा—विघ्नजेत्री मुद्रा जिनमुद्देति ॥ १३ ॥  
मुक्ताशुक्तिरिव मुद्रा—हस्तविन्यासविशेषो मुक्ताशुक्तिमुद्रा, सा चैवम्—समौ नान्योऽन्यांतरितांगुलितया विपमौ, द्वावपि, न  
त्वेको, गर्भिताविव गर्भितौ—उन्नतमध्यौ, नतु नीरन्ध्रौ, चिप्पिटावित्यर्थः, इस्तौ पुनरुभयतोऽपि सोल्लासौ करौ भालमध्यभागे

मुद्रात्रिकं

॥१३१॥

लघो-संचद्वौ कार्यौ इत्येके सूरयः प्राहुः, अन्ये पुनस्तत्रालाघावित्येवं वदन्ति, तत्र मध्यमभागमध्यवर्त्याकाशगतावित्यर्थः ॥१४॥  
 आमां विषयविभागमाह—

पंचंगो पाणियाओ धयपादो होइ जोगमुद्दाए । वंदण जिणमुद्दाए पणिहाणं मुत्तसुत्तीए ॥ १५ ॥

पंचांगानि जान्वादीनि विवक्षितव्यापारवन्ति यत्र स पंचांगः प्रणिपातः-प्रणामः प्रणिपातदंडकः, पाठस्यादापवसाने च कर्त्तव्य-  
 तथा लब्धतन्नामा, स चोत्कर्षतः पंचांगः कार्यो, यदुक्तमाचारांगचूर्णौ-‘कह नमंति ?, सिरपंचमेणं काएणं’ति, यत्पुनः ‘वामं  
 जाणुं अंचेइ’ इत्याद्युक्तं तन् प्रभुत्वादिकारणाश्रितत्वात् न यथोक्तविधिवाधकतया प्रभवितुमर्हति चरितानुवादत्वाच्च, यद्यपीह  
 पंचांगः प्रणिपात इत्युक्तं तथापि पंचांगमुद्रया प्रणिपातः कार्यः इति द्रष्टव्यं, मुद्राणामेवाधिकृतत्वात्, उक्तं च पंचांग्यामपि मुद्रा-  
 त्वं, अंगविन्यासविशेषरूपत्वात्, योगमुद्रादिवदिति, आह-नन्वेवं मुद्दातिर्यंति उक्तसंख्याविघातप्रसंगो, नैतदेवं, अभिप्राया-  
 परिज्ञानात्, उक्तं हि प्राक् योगमुद्रादयो ह्येवं परिसंख्याताः, सूत्रोच्चारभावितपा, मूलमुद्रात्रयरूपत्वात्, मुकुटां? जलीर पंचांगीर-  
 मुद्रादयस्तु प्रणामकरणकालभावित्वात्, यद्यपि ‘करयलपरिगाहियं मिरसावत्तं दमनहं मत्थए अंजलिं कद्दु एवं वयासी’त्युक्तं दृश्यते  
 तदपि सूत्रोच्चारस्यादौ विनयविशेषदर्शनपरं, न पुनस्तथास्थितस्यैव सूत्रोच्चारख्यापनपरं, अन्यदाऽपि नृपादिविज्ञापनादावप्यादौ  
 तथा प्रतिपत्तेभेणनात्, तथा स्थितस्य विज्ञापनादेरदर्शनात्, पूर्वकालभाविविधिविवाचिनः कृत्वेति तत्राप्रत्ययस्योत्तरकालभावि-  
 विध्यंतरसूचकत्वाच्च, अक्षिणी निमील्य ह्रमतीत्यादिवत् तुल्यकर्तृकत्वायोगात् निमील्यादौ कृगस्त्वग्रहणात्, किंच-यद्येवं स्थित-  
 स्यैव सूत्रपाठः क्रियेत ततोऽपिहितमुखत्वेन धर्मरुचिसाध्वादीनामपि मावद्यभाषापत्तिः, तथा च भगवत्यामुक्तम्-“मके णं भंते !

चैत्य० श्री-  
धर्म० संभा  
चारविधौ  
॥१॥

कण्डूण भतः एव बुचइ-जहा ण सक्क दावद दवराया सावज्जाप भासं भासइ अणवज्जंपि भासं भासइ ?, गोयमा ! जाहे णं सक्के देविंदे देवराया सुहुमकायं अणिज्जूहिताणं भासं भासइ ताहे णं सक्के देविंदे देवराया सावज्जं भासं भासइ, जाहे णं सक्के देविंदे देवराया सुहुमकायं निज्जूहियाणं भासं भासइ ताहे णं सक्के देविंदे देवराया अणवज्जं भासं भासइ, से एएणं अट्टेणं गोयमा ! एवं बुचइ-जहा णं सक्के देविंदे देवराया सावज्जंपि भासं भासइ, अणवज्जंपि भासं भासइ" तस्मात् मुकुटांजलिमुद्रादीनां विनयविशेषदर्शनफलत्वेन सूत्रोच्चारकालात् पूर्वापरकालभावितया न योगमुद्रादीनामिव मूलमुद्रारूपत्वं, ततश्च गृहातिरिति न यथोक्तसंख्याविघातः, पर्युपास्या अत्रार्थे बहुश्रुताः, यच्च चरितानुवादे जीवाभिगमादिषु विजयदेवादिभिः 'आलोए जिणपडिमाणं पणामं करेइ, तथा 'बामं जाणुं अञ्चेइ, दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहदडु तिकखुत्तो मुद्राणं धरणितलंसि निवेसेइ'त्ति एकांगश्चतुरंगश्च प्रणामः कृतो दृश्यते तत् मध्यमप्रणामत्वाद् अर्द्धधिनताख्यद्वितीयप्रणामांतर्रष्टव्यमिति, भावितार्थं चैतत् प्रणामत्रयव्याख्यावसरे, तथा सूत्रपाठः-शक्रस्तवादिभणनं भवति, कर्त्तव्य इति शेषो, योगमुद्रया पूर्वोक्तस्वरूपया, तत्र चायं विधिः-इह साधुः श्रावको वा चैत्यगृहादावेकांते प्रयतः परित्यक्तान्यकर्त्तव्यः सकलसत्त्वानपायिनीं भुवं निरीक्ष्य परमगुरुप्रणीतेन विधिना त्रिः प्रमृज्य च क्षितितलनिहितजानुयुगलः करकमलमत्यापितयोगमुद्रं प्रणिपातदंडकं पठतीति, यदुक्तं महानिशीथतृतीयाध्ययने-'भुवणेकगुरुजिणिंदपडिमाविणिवेसियनयणमाणसेण धन्नोऽहं पुन्नोऽहंति जिणवंदणाए सफलीकयजम्मृत्ति मन्नमाणेण विरइयकरकमलंजलिणा हरियतणुवीयजंतुविरहियभूमीए निहिउभयजाणुणा सुपरिफुडसुविदियनीसंकजहत्यसुत्तथोभयं पए पए भावेमाणेणं जाव चेइये वंदिय-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० मंग्या  
चतुर्विधो  
॥१३२॥

लघो-मंघद्वी कार्यो इत्येके ग्रहयः प्रादुः, अन्ये पुनस्तत्रालप्राप्तित्येवं यद्वन्ति, तत्र मध्यममागमभ्यन्तर्याकाशगतावित्यर्थः ॥१४॥

श्रायां विषयविभागमाह—

पंचंगो पाणियाओ भयपादो ह्येह जोगमुद्राण । वंदण जिणमुद्राए पणिहाणं मृत्तस्तुक्षीए ॥ १५ ॥

पंचांगानि जान्नादीनि विरक्षितव्यापाग्रन्ति यत्र ग पंचांगः प्रणिपातः-प्रणामः प्रणिपातदंडरुः, पाठस्यादाभवमाने च फर्कतय-  
तया लघोतशामा, ग चोत्कर्षतः पंचांगः कार्यो, यदृक्तमाचारांगमचूर्णो- 'रुह नमंति ? गिरपंचमेणं काण्णं'ति, यत्पुनः 'चामं  
जाणुं अंचेइ' इत्याद्युक्तं तत्र प्रभुत्वादिकारणाश्रितत्वात् न यथोक्तविधिबाधकतया प्रभ्रितुमर्हति चरितानुवादत्वात्, यद्यपीह  
पंचांगः प्रणिपात इत्युक्तं तथापि पंचांगमुद्रया प्रणिपातः कार्यः इति द्रष्टव्यं, मुद्राणामेवाधिष्ठितत्वात्, उक्तं च पंचांग्यामपि मुद्रा-  
त्वं, अंगविन्यामविशेषरूपत्वात्, योगमुद्रादिप्रतिष्ठिति, आह-नन्वेवं मुद्रातिथंति उक्तसंख्याविधातप्रसंगो, नैतदेवं, अभिप्राया-  
परिज्ञानान्, उक्तं हि प्राक् योगमुद्रादयो द्वेवं परिसंख्याताः, यत्रोद्यारभावितया, मूलमुद्राप्रयरूपत्वात्, मुहुटां १ जली २ पंचांगी ३-  
मुद्रादयस्तु प्रणामकरणकालभावित्वात्, यद्यपि 'करयलपरिगहियं मिग्मावचं ठमनहं मन्थण अंजलिं कदडु एवं वयामी'त्युक्तं दृश्यते  
तदपि यत्रोद्यारम्यादौ विनयविशेषदर्शनपर, न पुनस्तथास्थितस्यैत्र यत्रोद्यारम्यापनपर, अन्यदाऽपि नृपादिविज्ञपनादारम्यादौ  
तथा प्रतिपक्षेणान्, तथा स्थितस्य विज्ञापनादेरदर्शनात्, पूर्वकालभाविप्रिधिवाचिनः कृत्वेति तत्राप्रत्ययस्योत्तरकालभावि-  
विष्णंतरग्रनरुत्वात्, अक्षिणी निमील्य इमतीत्यादिवत् तुल्यकर्तृकत्वायोगान् निमीलयादौ कृगस्तप्रहणात्, किंच-यद्येवं स्थित-  
स्यैत्र यत्रपाठः क्रियेत् ततोऽपिहितमुग्रत्वेन धर्मरुचिमाध्वादीनामपि मात्रधभाषापत्तिः, तथा च भगवत्प्राप्तमुक्तम्-“मते णं भंते !

धारात्रिंशः

॥१३२॥

धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१३३॥

देविंदे देवराया सुहुमकाय आणज्जूहत्ताण भास भासइ ताह ण सक्क दावद देवराया सावज्ज भास भासइ, जाह ण सक्क दावद देवराया सुहुमकायं निज्जूहियाणं भासं भासइ ताहे णं सक्के देविंदे देवराया अणवज्जं भासं भासइ, से एएणं अट्टेणं गोयमा ! एवं युचइ-जहा णं सक्के देविंदे देवराया सावज्जंपि भासं भासइ, अणवज्जंपि भासं भासइ" तस्मात् मुकुटांजलिमुद्रादीनां विनयविशेषदर्शनफलत्वेन सूत्रोच्चारकालात् पूर्वापरकालभावितया न योगमुद्रादीनामिव मूलमुद्रारूपत्वं, ततश्च गृह्णाति यंति न यथोक्तसंख्याविघातः, पर्युपास्या अत्रार्थे बहुश्रुताः, यच्च चरितानुवादे जीवाभिगमादिषु विजयदेवादिभिः 'आलोए जिणपडिमाणं पणामं करेइ, तथा 'बामं जाणुं अश्चेइ, दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहदडु तिक्खुत्तो मुद्राणं धरणितलंसि निवेसेइ' चिं एकांगश्चतुरंगश्च प्रणामः कृतो दृश्यते तत् मध्यमप्रणामत्वाद् अर्द्धावनताख्यद्वितीयप्रणामांतरद्वयमिति, भावितार्थं चैतत् प्रणामत्रयव्याख्यावसरे, तथा सूत्रपाठः-शक्रस्तवादिभणनं भवति, कर्त्तव्य इति शेषो, योगमुद्रया पूर्वोक्तस्वरूपया, तत्र चायं विधिः-इह साधुः श्रावको वा चैत्यगृहादावेकांते प्रयतः परित्यक्तान्यकर्त्तव्यः सकलसन्धानपायिनीं भुवं निरीक्ष्य परमगुरुप्रणीतेन विधिना त्रिः प्रमृज्य च क्षितितलनिहितजानुयुगलः करकमलसत्यापितयोगमुद्रं प्रणिपातदंडकं पठतीति, यदुक्तं महानिशीथतृतीयाध्ययने-'भ्रुवणेकगुरुजिणिंदपडिमाविणिवेसियनयणमाणसेण धन्नोऽहं पुन्नोऽहंति जिणवंदणाए सफलीकयजम्मृत्ति मन्नमाणेण विरइयकरकमलंजलिणा हरियतणुवीयजंतुविरइियभूमीए निहिउभयजाणुणा सुपरिफुडसुविदियनीसंकजहत्थमुत्तयोभयं पए पए भावेमाणेणं जाव येइये वंदिय-

श्रीदे०  
शैल्य० श्री-  
धर्म० गंगा-  
चारविधौ  
॥१३२॥

लप्रो-संपद्यौ कार्यौ इत्येके मुरयः प्राहुः, अन्ये पुनस्तत्रालप्रावित्येवं वदन्ति, तत्र मध्यमभागमध्यवर्त्याकाशगतावित्यर्थः ॥१४॥  
आमां विषयविभागमाह—

पंचंगो पाणिघाओ भयपादो होड जोगमुद्दाए । वंदण जिणमुद्दाए पाणिहाणं मुत्तसुत्तीए ॥ १५ ॥

पंचांगानि जान्यादीनि त्रिरक्षितव्यापाग्वन्ति यत्र स पंचांगः प्रणिपातः—प्रणामः प्रणिपातदंडकः, पाठस्यादाववसाने च कर्त्तव्य-  
तया लब्धतन्नामा, स चोत्कृष्टतः पंचांगः कार्यो, यदुक्तमाचारांगचूर्णौ—‘कह नमंति ?, सिरपंचमेणं काणणं’ति, यत्पुनः ‘वामं  
जाणुं अंचेड’ इत्याद्युक्तं तन् प्रभुत्वाधिकारणाश्रितत्वात् न यथोक्तविधिबाधकतया प्रभवितुमर्हति चरितानुवादत्वाच्च, यद्यपीह  
पंचांगः प्रणिपात इत्युक्तं तथापि पंचांगमुद्रया प्रणिपातः कार्यः इति द्रष्टव्यं, मुद्राणामेवाधिकृतत्वात्, उक्तं च पंचांग्यामपि मुद्रा-  
त्वं, अंगविन्यामप्रिशेषरूपत्वात्, योगमुद्रादिवदिति, आह—नन्वेवं मुद्रातिथयंति उक्तसंग्याविधातप्रसंगो, नैतदेवं, अभिप्राया-  
परिज्ञानात्, उक्तं हि प्राक् योगमुद्रादयो हेवं परिसंख्याताः, सूत्रोच्चारभावितया, मूलमुद्रात्रयरूपत्वात्, मुकुटां? जली २ पंचांगी ३-  
मुद्रादयस्तु प्रणामकरणकालभावित्वात्, यद्यपि ‘करयलपरिगहियं मिग्मावत्तं दमनहं मन्थणं अंजलिं कद्दु एवं वयासी’त्युक्तं दृश्यते  
तदपि सूत्रोच्चारस्यादौ विनयप्रिशेषदर्शनपरं, न पुनस्तथास्थितस्यैव सूत्रोच्चारगव्यापनपरं, अन्यदाऽपि नृपादिविज्ञपनादावप्यादौ  
तथा प्रतिपत्तेमणनान्, तथा स्थितस्य विज्ञापनादेरदर्शनात्, पूर्वकालभाविप्रिधिवाचिनः कृत्वेति तत्राप्रत्ययस्योत्तरकालभावि-  
विष्णंतरसूत्रकन्याच्च, अधिष्ठा निमील्य ह्रमतीत्यादिनत् तुल्यकर्तृकृत्यायोगात् निमील्यादौ कृगस्त्वग्रहणात्, किंच—यद्येवं स्थित-  
स्यैव सूत्रपाठः क्रियेत ततोऽपिहितमृगत्येन धर्मरुचिमाध्वादीनामपि सावधभाषापत्तिः, तथा च भगवत्स्यामुक्तम्—“मणे णं भंते!

मुद्रात्रिकं

॥१३२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१३३॥

देविंदे देवराया किं सावज्जं भासं भासइ अणवज्जं भासं भासइ ? गोयमा ! सावज्जंपि भासं भासइ, अणवज्जंपि भासं भासइ, से केणट्टेणं भंते ! एवं बुच्चइ-जहा णं सके देविंदे देवराया सावज्जंपि भासं भासइ अणवज्जंपि भासं भासइ ? गोयमा ! जाहे णं सके देविंदे देवराया सुहुमकायं अणिज्जूहिताणं भासं भासइ ताहे णं सके देविंदे देवराया सावज्जं भासं भासइ, जाहे णं सके देविंदे देवराया सुहुमकायं निज्जूहियाणं भासं भासइ ताहे णं सके देविंदे देवराया अणवज्जं भासं भासइ, से एएणं अट्टेणं गोयमा ! एवं बुच्चइ-जहा णं सके देविंदे देवराया सावज्जंपि भासं भासइ, अणवज्जंपि भासं भासइ” तस्मात् मुकुटांजलिमुद्रादीनां विनयविशेषदर्शनफलत्वेन सूत्रोच्चारकालात् पूर्वापरकालभावितया न योगमुद्रादीनामिव मूलमुद्रारूपत्वं, ततश्च मुद्रातिथंति न यथोक्तसंख्याविधातः, पर्युपास्या अत्रार्थे बहुश्रुताः, यच्च चरितानुवादे जीवामिगमादिषु विजयदेवादिभिः ‘आलोए जिणपडिमाणं पणामं करेइ, तथा ‘बामं जाणुं अञ्चेइ, दाहिणं जाणुं धरणितलंसि निहदडु तिक्खुत्तो गुद्धाणं धरणितलंसि निवेसेइ’ति एकांगश्चतुरंगश्च प्रणामः कृतो दृश्यते तत् मध्यमप्रणामत्वाद् अर्द्धविनताख्यद्वितीयप्रणामांतरद्रष्टव्यमिति, भावितार्थं चैतत् प्रणामत्रयव्याख्यावसरे, तथा सूत्रपाठः-शक्रस्तवादिभणनं भवति, कर्त्तव्य इति शेषो, योगमुद्रया पूर्वोक्तस्वरूपया, तत्र चायं विधिः-इह साधुः श्रावको वा चैत्यगृहादावेकांते प्रयतः परित्यक्तान्यकर्त्तव्यः सकलसच्चानपायिनीं भुवं निरीक्ष्य परमगुरुप्रणीतेन विधिना त्रिः प्रमृज्य च क्षितितलनिहितजानुयुगलः करकमलमत्यापितयोगमुद्रं प्रणिपातदंडकं पठतीति, यदुक्तं महानिशीथतृतीयाध्ययने-‘भ्रुवणेकगुरुजिणिंदपडिमाविणिवेसियनयणमाणसेण धन्नोऽहं पुन्नोऽहंति जिणवंदणाए सफलीकयजम्मूत्ति मन्नमाणेण विरइयकरकमलंजलिणा हरियतणुवीयजंतुविरहियभूमीए निहिउभयजाणुणा सुपरिफुडसुविदियनीसंकजहत्थसुत्तथोभयं पए पए भावेमाणेणं जाव येइये वंदिय-



वे"त्ति, तत्रैव चोक्तं—'सकथयाइयं चेइयवंदणं'ति, यत्पुनर्ज्ञाताधर्मकथादिषु धर्मरुचिसाध्यादीनां चरितानुवादे भणितं 'पुरत्था  
मिमुहे संपलिअंकनिसन्ने करयन्ने'त्यादि तदशक्तपादिकारणाश्रितं, न पुनः 'भूमिनिहिउभयजाणुणा' इत्यादिविधेर्वाधाविधायि  
भवति, चरितानुवादविहितत्वात्, चरितानुवादविहितानि हि नोत्सर्गाभिधविधिमादस्य बाधकानि साधकानि वा भवितुमर्हति,  
कारणाश्रितत्वेन द्वितीयपदान्तर्वर्तित्वात् तेषाम्, अन्यथा वा यथाऽऽम्नायं सुधीभिः समाधेयं ॥ तथा वंदनं 'अरिहंतचेइआण'-  
मित्यादि दंडकैः प्रसिद्धैः जिनचिवादीनां जिनमुद्रया—पूर्वोक्तशब्दार्थया विघ्नजेत्या कर्तव्यं भवति द्रौपद्यादिनत्, तथा च पष्टांगे—  
"तए णं मा दोवई रायचरकन्ना जाण धुवं डहइ, वामं जाणुं अचेइ, करयल जाव कदडु एवं वयासी—नमोत्थु णं जाव संपत्ताणं,  
वंदइ नमंसइ" अत्र जीनाभिगमोक्तं विवरणं—ततो विधिना प्रणामं कुर्वन् प्रणिपातदंडकं पठति—नमोत्थु णं अरिहंताणमित्यादि  
यात्रन्नमो जिणाण जियभयाणं, दंडकार्थश्चैत्यवंदनाविवरणादवसेयः, 'वंदइ नमंसइ'त्ति वंदते ताः प्रतिमाश्चैत्यवंदनविधिना  
प्रसिद्धेन, नमस्करोति पश्चात् प्रणिधानादियोगेने"ति, परिगृह्यं मिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कदडु एवं वयासी—नमोत्थुणं अरि-  
हंताणमित्यादि, ततोऽस्य पाठे विप्रिधिमिधिदर्शनात् सर्वेषां च प्रमाणग्रंथोक्तत्वेन विनयविशेषकृतत्वेन च निषेद्धुमशक्यत्वात्  
योगमुद्रयाऽपि शक्यस्तत्रपाठो न निरुध्यते, विचित्रत्वात् मुनिमतानां, न चैतानि परस्परमतिविरुद्धानीति वाच्यं, सर्वैरपि विनयस्य  
दर्शितत्वात् इत्यलं प्रसंगेन, तथा वंदनं—अरिहंतचेइआणमित्यादिदंडरूपाठेन जिनचिवादिस्तरनं जिनमुद्रया, इयं च पादाश्रिता,  
दंडरूपाणामपि स्तररूपत्वात्, योगमुद्राऽप्यत्र संगतैत्र, सा च हस्ताश्रिता, अत उभयोरप्यनयोर्दने प्रयोगः, तथा प्रणिधानं 'जय-  
वीयराये'त्यादि यद्येष्टप्रार्थनारूपं यद्यस्य, तीत्रसंवेगाद्धि अत्राशुभाविनी विशुद्धयोगसंप्राप्तिः, तच्च मुक्ताशुक्तिमुद्रया कार्यमिति शेषः।

धर्मरुचिककथा त्विद्यम्-नयरी नयरीइवरा चंपा नामेण अत्थि जत्थ जणो । नेव कमलोवयारी रविच्च कमलोवयारीवि ॥ १ ॥  
 तत्थ य चउदसविजाठाणाणं पारगा सुबहुवत्ता । अन्नोन्नसिणेहल्ला संति तओ भायरो विप्पा ॥ २ ॥ सोमो य सोमदत्तो य  
 सोमभूर्इ य वल्लहा तेसिं । नागसिरी भूयसिरी जक्खसिरी नामओ कमसो ॥ ३ ॥ अह एगत्थ ठियाणं उल्लावो आसि तेसि जह  
 अहं । पूअइ धणं पगामंपि दाउमासत्तमकुलाओ ॥ ४ ॥ ता अन्नोन्नगिहेसुं वारंवारेण परियणेण समं । विलसंतभुंजयंतेण जुअए  
 चिठ्ठिउं नूणं ॥ ५ ॥ इय पडियज्जिय सव्वे कल्लाकल्लं मिहो गिहेसुं तो । असणाई भुंजंतो सुहेण वोळिंति बहुकालं ॥ ६ ॥ भोयणवारे  
 जाए अहउन्नया माइणी य नागसिरी । विउलं असणाईयं अइसरंभेण रंधेइ ॥ ७ ॥ तह एगं सुमहंतं सारइयं कडुपत्तियं तुंबं । कप्पूरे-  
 लाइजुयं विहेइ बहुनेहओगाढं ॥ ८ ॥ अह तस्स विंदुमेगं जा आसाएइ करयले काउं । खारमखअमभुजं विसभूयं जाणए ता सा ॥ ९ ॥  
 चित्तेइ अहण्णाए धिरत्थु मज्झं अनाणमूढाए । जीइ मए बहुनेहइवखणं इमं विहियं ॥ १० ॥ जइ जाणिस्संति इमं ता खिसि-  
 स्संति जाउयाओ ममं । इय चित्तिय सा गोवइ तुरियं तुंबं तमेगंते ॥ ११ ॥ अन्नं महुरालावुं उवखडई झत्ति सा तओ विप्पा । तं  
 भुत्तुं भज्जुया नियनियकज्जुज्जुया जाया ॥ १२ ॥ बहुसाहुसंजुया पुषधारिणो धम्मघोमआपरिया । अह तत्थ समोसरिया सुभूमि-  
 भागंमि उजाणे ॥ १३ ॥ तस्सीसो गुरुभत्तो धम्मरुई समिइगुत्तिसुपवित्तो । खंतो दंतो संतो उवसंतो रोसपरिचत्तो ॥ १४ ॥ निम्म-  
 मनिरहंकारो अमच्छरो असमरो असंमोहो । अनियाणो सुहजाणो वासीचंदणसमणमणा ॥ १५ ॥ मासखमणपारणए कुलाइं सो  
 उचनीयमज्झाई । अडमाणो नागसिरीगिहं पविट्ठो उ भिक्खवट्ठं ॥ १६ ॥ तं ददट्ठं पाविट्ठा सा तुट्ठा सुट्ठु धम्मपन्मट्ठा । उट्ठेऊणं  
 दुट्ठा देइ तयं तस्स सव्वंपि ॥ १७ ॥ आगंतु धम्मरुई पडिदंसइ जा गुरूण ता तेहिं । गंधेण तयं नाउं विसभूयं तो इमं भणिओ

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१३६॥

॥ १८ ॥ वच्छ ! परिद्धावसु इमं भुंजसु गिण्हितुमन्नमाहारं । मा पुण इमंमि भुत्ते मरणमकालंमि पाविहिसि ॥ १९ ॥ तो गंतु  
थंडिले सो तस्स लयं खिवइ जाव ता सहसा । बहुकीडियासहस्सा समागया नेहगंधेण ॥२०॥ जा जा उ तयं भक्खेइ तक्खणे  
गच्छइ खयं सा सा । तं पासित्ता चित्थइ धम्मरुई सुद्धधम्मरुई ॥२१॥ एगलवेणवि एयस्स जंति जइ जंतुणो मरणमेव । सव्वंमि  
परिद्धविए हा कहमेए भविस्संति ? ॥२२॥ ता इमिणाऽऽहारेणं वरं विणस्सउ ममं चिय सरीरं । विद्धंसणधम्ममिणं पुव्वं पच्छा व जं  
हेयं ॥२३॥ किंच-कूमयो भस्म विष्ठा चा, निष्ठा यस्येयमीदृशी । स कायः परपीडाभिः, पाल्यते ननु को नयः ? ॥२४॥  
तथा-निरर्थका ये चपलस्वभावा, यास्यंत्यवश्यं स्वयमेव नाशम् । त एव यांति क्रिययोपयोगं, प्राणाः परार्थे  
यदि किं न लब्धं ? ॥२५॥ अपिच-इच्छं चिय इत्थ वयं निद्धिं जिणवरेहिं सव्वेहिं । तिविहेण पाणिरक्खणमवसेसा  
तस्स रक्खट्ठा ॥२६॥ इय चित्तिता स समत्तसत्तसंताणरक्खणासत्तो । नियजीवियनिरिक्खो भक्खेइ तयं महासत्तो ॥२७॥  
जओ-नियपाणे परपाणेहिं पाणिणो पालयंति सव्वेऽवि । परपाणे नियपाणेहिं कोइ विरल्लुच्चिय जियंति ॥२८॥  
खणमित्तेणं तेणं परिणममाणेण वेयणा विउला । विहिया तस्स सरीरे तिन्वा कडुआ दुरहियासा ॥२९॥ तए णं से धम्मरुई अण-  
गारे अखमे अवले अविरिए अपुरिसकारपरकमे अधारणिजमितिकदुदु आयारमंडगं एगंते ठवेइ, एगंते ठवेत्ता थंडिल्लं पडिलेहेइ,  
थंडिलं पडिलेहित्ता दब्भसंधारगं संथरेइ, दब्भसंधारगं संथरेत्ता दब्भसंधारगं दूरुहइ, दब्भसंधारगं दूरुहित्ता पुरच्छामिमुहे संप-  
लियं कनिसन्ने करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं मत्थए अंजलिं कदुदु एवं वयासी—नमोत्थुणं अरिहंताणं जाव संपत्ताणं,  
नमोत्थु णं धम्मघोसाणं थेराणं मम धम्मायरियाणं धम्मोवएसयाणं, पुत्तिपि य णं मए धम्मघोसाणं थेराणं अंतियं सव्वं पाणाइ-

धर्मरुचि-  
कथा

॥१३६॥

वाए पचक्खाए जावजीवाए जाव परिग्गहो, इयाणिपिय णं तेसिं चेत्र भगवंताणं अतियं सव्वं पाणाइयायं पचक्खामि जावजीवाए  
 सव्वं मुसायायं० सव्वं अदिन्नादाणं० सव्वं मेहुणं० सव्वं परिग्गहं० सव्वं कोहं माणं मायं लोहं पिजं दोसं कलहं अन्मक्खाणं  
 पेशुन्नं अरइरइं परपरिवायं मायामोसं मिच्छादंसणसहं पचक्खामि जावजीवाए, सव्वं असणं सव्वं पाणं सव्वं खाइमं सव्वं साइमं  
 चउत्तिहपि आहार पचक्खामि जावजीवाए, जंपिय इमं सरीर इट्ठं १ पियं २ कंतं ३ मणुन्नं ४ मणामं ५ नामधिज्जं ६ तेसासियं ७  
 संमयं ८ बहुमयं ९ अणुमयं १० भंडकरडगसमाणं रयणकरडगभूयं उग्रहिव्व सुरक्खियं मा णं सीयं मा णं उण्हं मा णं खुहा मा णं  
 पिवासा मा णं वाला मा णं चोरा मा णं दंसा मा णं ममगा मा णं वाइयपित्थियसिंभियसन्निराइया विविदा रोगायं कपरीमहो-  
 वसग्गा फुसंतुत्तिक्कदु, एयंपि णं चरमेहि ऊसासनीसासेहिं वोसिरामित्थिक्कदु आलोइयपड्डिकंते कालगए । अह चिरगउत्ति गुरुणा  
 सुद्धिकए तस्स पेसिया समणा । तं कालगयं नाउं आगम्म कहंति ते गुरुणो ॥३०॥ पुव्वगए उग्रओगं दाउं मेलिय तओ सम-  
 णसंघं । तं बुत्तंतं कहिउं कहंति गुरुणो गइं तस्स ॥३१॥ अज्जो ! इमो महप्पा अममत्तो सत्तुमित्तममचित्तो । परपरिवायविरत्तो  
 अवगयत्तो महासत्तो ॥ ३२ ॥ जिणयणे अणुरत्तो दइक्करसिओत्ति मरिय धम्मरुई । उववन्नो सव्वट्ठे महाविदेहे सिवं गमिही  
 ॥३३॥ अन्नोवि कोवि एवं मा पुणरवि काहिहित्ति मुणिसहा ! । तो गंतु नयरि मज्जे जंपंतु इमं जणसमक्खं ॥३४॥ हा हा हहा  
 अक्खं नागसिरीमाहणीइ इह विहियं । कडुतुंबदाणओ जं रिणासिओ एरिसो सो मुणी ॥३५॥ तए णं ते माहणा चंपाए नयरीए  
 पट्टजणस्स अतिए एयमट्ठं सुचा निसम्म आसुरुत्ता रुट्ठा कुविया चंडकिया मिसिमिसेमाणा जेणेव नागसिरिमाहणी तेणेव उग्र-  
 गच्छति, उवागच्छिता नागसिरिं माहणी एवं नयासी-हं भो नागसिरि । अपत्थियपत्थिए दुरतपंतलक्खणे हीणपुन्नचाउइसीए

मिरिहिरीधिइपरिवजिए धिरत्थु णं तव अहन्नाए अपुन्नाए दूहगाए दूहगनिवोलियाए जीए णं तुमे तहारूवे साडूरूवे मासखम-  
णपारणगसि सालइएणं जाव वररोविए' ता मरसु दुक्कुलीणे ! निस्सर गेहाउ चयसु वत्थाइ । पाणिहिसि इमस्स फलं निहणंति  
तहा चवेडाहिं ॥३६॥ एव अकोमिच्चा उदंसित्ता तहा निमच्छित्ता । निच्छोडिय तज्जिय ताडिऊण कडुंति तं सगिहा ॥ ३७ ॥  
सिंघाडगतिगचउकग वचरचउमुहमहापदाईसु । हिंडइ सा अलहंती कत्थइ ठाणं व निलयं वा ॥३८॥ तथा-हीलिजंती जच्चाइएहि  
निदिजमाण तह मणसा । खिसिजति परोक्खं गरिहजती तह समक्खं ॥ ३९ ॥ तज्जिजंती तह अगुलीहिं दंडाइएहिं हम्मंती ।  
धिद्विफारिजंती नागरनरनारिनियरेहिं ॥४१॥ फुट्टहडाहडसीसा रिच्छिय अतुच्छमच्छियच्छन्ना । दंडियखंडनिपसणा मल्लग-  
खंडगघडगहत्था ॥४२॥ तो गेहगेहेणं हेउ भिक्खाइ हिंडमाणी सा । नरइव इहेव भवे तिकखं दुक्ख समणुपत्ता ॥ ४२ ॥ इय  
तीए सारीरियमाणमदुहसायरे निवुड्ढाए । दइदोवरिपिडगममा सोलस रोगा समुब्भूया ॥४३॥ खासे १ सासे २ जरे ३ दाहे ४,  
कुच्छिमूले ५ भगदरे ६ । अवस ७ अजीए ८ दिट्ठी ९, अच्छिमूले १० अरोयणे ११ ॥४४॥ कंइ १२ जलोयरे १३ सीसवे-  
यणा १४ कन्नवेयणा १५ कुट्टे १६ । इय आमयभीएहिं व पाणेहिं कहवि सा मुक्का ॥ ४५ ॥ अट्टदुहदुवसट्टा मरिउं उट्ठीइ  
नरयपुदवीए । उववण्णा नागसिरी वापीसंमागगउ ठिई ॥ ४६ ॥ तत्थ सहित्ता अडदुस्सहं दुह तो झसेसु उप्पन्ना । सत्थदया अह  
मरिउं सत्तमनिरयंमि उवन्ना ॥ ४७ ॥ तिचीमयागराईं सहिय दुहं तत्थ पुण झसो जाओ । पुण सत्तमनेरइओ पुण मच्छो तयणु  
उट्ठीए ॥ ४८ ॥ दुक्खुत्तो दुक्खुत्तो दुक्खत्ता सा समत्तनरएसु । भमिया जह गोसालो अणंतकालं भवारण्णे ॥ ४९ ॥ सवत्थ  
सत्थवज्झा दाहुप्पत्तीइ सा उ मरमाणा । भमिया दीहद्वं चाठरतसंसारकान्तार ॥५०॥ एत्तो कहवि लहियसुकुमालिभवं कयनिया-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१३९॥

णजुत्तना । पाविअदेवभवा सा इय जाया दोवई कुमरी ॥५१॥ अहसा इह चंपाए सागरदत्तपियाइ भदाए । सुकुमालियत्ति जाया  
दिव्ववसा कहवि अइदुहगा ॥ ५२ ॥ घरजामाउअविहिणा जिणदत्तसुएण सागरेण इमा । परिणिय चइया जलणाइअहिय-  
हत्थाइफामाओ ॥ ५३ ॥ ससुरउवलद्वपिउणा भणिओ किमदोसपइवया मुक्का ? । नररि मरामि न तं पुण गच्छंति विणिच्छए  
मुक्को ॥५४॥ पुण दमगस्सुवणीआ तप्फासं सोऽवि सहिउमचयंतो । सुत्तं मुत्तं नियखंडघडवसणाइं म गहिय गओ ॥५५॥ पुव्व-  
कयदुककयफलं इय वच्छे ! मुणिय मा विस्सरेसु । इय पिउविवोहिया सा महाणसे देइ दाणाइं ॥ ५६ ॥ भिक्खागयसमणीओ  
कयाइ तं कुंटलाइ पुच्छंति । गोवालियापवत्तिणी गाहइ गिहिधम्मजइधम्मं ॥ ५७ ॥ समणीणुवस्सयंतो कप्पइ समतलपयाव-  
णाइत्ति । भणियाविहु उस्सग्गाइ कुणइ पुण बाहिरुज्जाणे ॥ ५८ ॥ अह ददु देवदत्तं सिबियत्थं सायर पणनरेहिं । लालिज्जंतिं  
चित्तइ लायन्नमहो अहो सुभगा ॥ ५९ ॥ निब्भग्गाऽहमिगस्सवि आसि अणिट्ठत्ति हुज्ज ताऽहंपि । छट्ठमाइणाऽणेण निचमिय  
कुणइ दुनियाणं ॥ ६० ॥ हत्थाइधोविरा न हु जुज्जइ इय गुत्तवभयारीणं । पुण पुण भणिज्जमाणी गुरुणीहिं ठिया पुढो निलए  
॥ ६१ ॥ सच्छंदचिद्धिआ अद्धमासभत्तेण मरिय सा जाया । नवपलिआऊ देवी अपरिग्गहिआ विइअकप्पे ॥ ६२ ॥ चविउं  
कपिल्लपुरमि दुवयच्चुलणीण दोवई जाया । पणपंडवे वरइ सा सयंवरे वदिय जिणित्ति ॥६३॥ अत्र पष्ठांगसूत्रं—“तए णं  
सा दोवई रायवरकन्ना जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता जिणघर अणुपविसइ, जिणघर अणुपविसित्ता जि-  
णपडिमाणं आलोए पणाम करेइ, पणामं करेत्ता लोमहत्थयं परामुसइ, परामुसित्ता एवं जहा सूरियाभे जिणपडिमाओ अचइ  
तहेव भाणियधं जाव धूव डइइ, वाम जाणुं अचेइ, करयलजाव कदुडु एव वयासी—नमोत्थुणं जाव संपचाण, वंदइ नमसइ,

श्रीदे०  
चेत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१४०॥

जिणघराओ पडिनिखमइ” अत्र जीवाभिगमलघुविवरणोक्ता व्याख्या-ततो विधिना प्रणामं कुर्वन् प्रणिपातदंडकं पठति, तद्यथा-नमोत्पुणं अरिहंताणमित्यादि यावन्नमो जिणाणं जिअभयाणंति, दंडकार्थश्चैत्यवंदनविवरणादनसेयः, 'वंदइ नमंसइ'ति वंदते ताः प्रतिमाश्चैत्यवंदनविधिना प्रसिद्धेन, नमस्करोति पश्चात् प्रणिधानादियोगेनेत्येके, अन्ये तु विरतिमतामेव प्रसिद्धश्चैत्यवंदनविधिः, अन्येषां तु तथाऽभ्युपगमपुरस्सरकायव्युत्सर्गासिद्धिरिति वंदते सामान्येन, नमस्करोति आशयवृद्धेर्व्युत्थाननमस्कारेणेति, तच्चमत्र भगवंतः परमर्षयः केवलिनो विदंती”ति ॥ जह नारओऽस्स कुप्पइ अस्संजयअधिरयत्ति अनमंति । पाविंसु अवरकंकं तं तह छट्ठंगओ नेय ॥६४॥ जाए य पंडुसेणे गहियवया विमलगिरिकयाणसणा । सा लंतयंमि पत्ता महाविदेहंमि सिज्झिहिई ॥६५॥ अत्रोपनयलेशोऽयं-नियपाणच्चाएणवि परपाणा रक्खिया जहा इहयं । धम्मरुइसाहुणा तह रक्खेयवा सया जीवा ॥६६॥ तह जो मरणंतेऽविहु मणसावि न खंडए नियं नियमं । सो सग्गाइं पावइ जट पत्तं धम्मरुइमुणिणा ॥६७॥ अमणुन्नमभत्तीए पत्ते दाणं भवे अणत्थाय । जह दीहो संसारो नागसिरीए तया जाओ ॥६८॥ उक्तथायमर्थः श्रीभगवत्पां, तथा हे-‘तिहिं ठाणेहि जीवा असुहदीहाउयत्ताए कंमं पकरंति, पाणे अइवाइत्ता भवइ? सुसं वइत्ता भवइ? तहारुणं समणं वा माहणं वा हीलित्ता निंदित्ता खिसित्ता गरहित्ता अवमन्नित्ता अमणुत्तेणं अपीइकारेणं असणपाणखाइममाइमेणं पडिलाहित्ता भवइ, एएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा असुहदीहाउयत्ताए कंमं पकरति’ इत्थ-जच्चाइएहिं हीला मणसा निंदा परुखओ सिमा । गरिहा तस्स समक्खं पराभवो होइ अपमाणो ॥६९॥ शुत्वेति दुष्कर्मलतालवित्रं, भव्या जना! धर्मरुचेधरित्रम् । अमुद्रसौख्याय पयोक्तमुद्राश्चैत्यानि वंदध्वमपास्ततंद्राः ॥ ७० ॥ इति मुद्रात्रिके श्रीधम्मरुचिद्रौपदी-

धर्मरुचि-  
कथा

॥१४०॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥१४१॥

संबंधः ॥ उक्तं मुद्रात्रिकमिति नवमं त्रिकं, संप्रति 'तिविहं च पणिहाण'मिति दशमत्रिकं गाथापादत्रिकेणाह—

पणिहाणतिगं चेइयमुनिवंदणपत्थणास्वरूपं वा । मणवयकाएगत्ते

यदिह मुक्ताशुक्त्या मुद्रया क्रियते तदेतत् प्रणिधानत्रिकं, किमित्याह—चैत्यमुनिवंदनाप्रार्थनास्वरूपं, अत्र पृथग्वंदनाशब्द-  
योगात् प्रथमं प्रणिधान चैत्यवंदनारूपं जावंति चेइआइ इत्यादि, द्वितीयं मुनिवंदनालक्षणं जावंति केवि साहू इत्यादि, तृतीयं प्रार्थ-  
नास्वरूपं जय वीयरावेत्यादि, उक्तं च बृहद्भाष्ये—“अन्नपि तिप्पयार वंदणपेरतभावि पणिहाणं । जंमि कए संपुन्ना उक्कोसा  
वंदणा होइ ॥१॥ चेइयगय? साहुगयं? नेयव तत्थ पत्थणारूपं । एयस्स पुण सरूपं सविसेस उवरि बुच्छामि ॥२॥ (२५३-२५४)  
ननु यदेतत् प्रणिधानत्रिकं उक्तं तत्किल वंदनावसाने विधीयते, 'अन्नपि तिप्पयार वदणपेरतभावी'त्यादिभाष्यवचनात्, ततः शेषा वंदना  
प्रणिधानरहितेति प्राप्तमित्याशंक्याह—'वे'ति अथवा, द्वितीयमपि प्रणिधानत्रिकमस्ति यत् समस्तं चैत्यवंदनाया विधीयते, किं तदित्या-  
ह—मनोवचःकायानामैकाग्र्य-अकुशलरूपाणां निवर्तनं, समाधिः रागद्वेषाभावः अनन्योपयोगितेति यावत्, आह च—“इह पणिहाणं  
तिविहं मणवइकायाण ज समाहाणं । रागदोसाभावो उअओगित्तं न अन्नत्थ ॥१॥ एयं पुण तिविहंपि हु वंदंतेणाइओ हु कायव्वं । चिइवं-  
दणमुणिवंदणपत्थणरूपं तु पजंते ॥२॥ अत्र चेयं भाष्योक्ता भावना—चित्तइ न अन्नकजं दूर परिहरइ अट्टरुहाइं । एगग्गमणा अर्थालं-  
चनयोरिति गम्यं वदइ मणपणिहाणं हउइ एयं ॥१॥ विगहाविवायरहिओ वजंतो मूयढड्ढर सइं । वंदइ सपयच्छेयं वायापणिहाणमेयं तु  
॥२॥ पेहंतपमजंतो उट्टाणनिसीययाइयं कुणइ । वावारतररहिओ वंदइ इय कायपणिहाणं ॥३॥” (वन्दन) पंचाशकेष्वप्युक्तं—  
“सवत्थवि पणिहाणं तग्गयकिरियाभिहाणवत्तेसु । अत्थे विसए य तहा दिट्ठंतो छिन्नजालए ॥ १ ॥ अस्या अर्थः—सर्वत्रापि—

प्रणिधान-  
त्रिकं

॥१४१॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संवा  
चारविधौ  
॥१४२॥

ममस्तायामपि चैत्यवन्दनायां, न केवलं तदंत एव, प्रणिधानं कार्यं, नरवाहननरेन्द्रवत्, क विपये ? तद्गताः—चैत्यवन्दनागताः क्रिया-मुखस्थगनमुद्रान्यासादिका यास्तासु ? तथा अभिधानानि-पदानि वर्णा-अक्षराणि तेषु तथाऽर्थः—अर्हदादिपदाभिधेयस्तस्मिन् विपयो—वन्दनागोचरो भावार्हदादिर्दृष्टिगोचरो वा चैत्यविंशप्रभृतिकस्तस्मिन्, तथाशब्दात् जयवीयरायेत्यादिप्रार्थनायामपि, 'दिष्टं तो छिन्नजालाई'त्ति तुर्यपदस्यैवं भावना, प्रेरकः प्राह—बन्नाइसु उवओगा जुगवं कह घडइ एगसमयंमि ? । दो उवओगा समये केवलिणोऽविहु न जं इह्वा ॥१॥ आचार्यः—कमसोऽवि संभवता जुगवं नजंति ते विभिन्नावि । चित्तस्स सिग्घकारित्तणेण एगत्त-भावाओ ॥२॥ अत्र दृष्टान्तच्छिन्नजालया—उल्मूकेन, यथा हि तद्भ्राम्यमाणं छिन्नजालमपि शीघ्रतया चक्राकारं प्रतिभासते, यद्वा 'केवलिणो उवओगो वच्चइ जुगवं समत्थनेएसु । छउमत्थस्सवि एवं अभिन्नविसयासु किरियासु ॥३॥ तथा चागमः—भिन्नविसयं निसिद्धं किरियादुगमेगया न एगंमि । जोगतिगस्सवि भंगियसुत्ते किरिया जओ भणिया ॥४॥ मणसा चित्तइ भंगे वयसा उच्चरइ लिहइ काएण । एवं जोगतिगस्सवि भंगिअसुत्तंमि वावारो ॥५॥ नरवाहणनरेन्द्रवृत्तं चैवम्—

अत्थि पुरी वइदेसा सुरपुरिदेसा सिरीहि पवरीहिं । तत्थ सढो दुब्बियड्डो थड्डो नरवाहणो राया ॥१॥ सइ जिणपणिहाणपरा दुहावि पिग्गदंसणा पिया तस्स । निम्मियगुरुजणविणओमणओ तणओ अमोहरहो ॥२॥ किमिहऽज पवमेसो पउरजणो जाइ जं इह सुवेसो । इगदिसिऽभिमुहोत्ति कोउगकलिओ ता (निवेण पृच्छिओ) भणइ पडिहारो ॥३॥ देव ! कयकोवहाणी पसन्नवाणी स्वमाइगुणखाणी । सुव्वयसूरी पत्तो इह तन्नमणाय जाइ जणो ॥४॥ सो केरिसोत्ति कोउगकलिओ तो नरवईऽवि तत्थ गओ । नमिय निविट्ठाइ सहाय अह गुरु कहइ इय धम्मं ॥५॥ "पडिओ अकामनिजरनईइ गिरिपत्थरोव कहवि जिओ । अवि थावरो

प्रणिधान-  
त्रिकं

॥१४२॥

तसत्तं लहइ तिचउररुखयाइ तहा ॥६॥ तोऽवि नरचाऽऽरियखेत्तगोत्तअरुजत्तआऊअविगलत्ते । धम्ममई सुगुरुसवणे लद्धे दुलहा  
उ तत्तर्इ ॥७॥ यदागमः—“आहय सणं लद्धुं, सद्धा परमदुल्लहा । सुच्चा नेयाउअं मग्गं, बहवे परिभस्सई ॥ ८ ॥ ता लहिअ  
सुद्धसद्धं तन्वुड्ढिकए सयावि जीवेण । पणिहाणतिगपहाणा कायवा वंदणा पुण्णा ॥९॥ भणियं च—“वहइ धम्मज्झाणं फुरंति हियए  
गुणा जिणाईणं । उल्लसइ सुहो भायो वंदंताणं सुपणिहाणं ॥ १०॥ पणिहाणं पुण तिविहं मणवइकायाण संजमाहाणं । रागदोसा-  
भावो उवओगित्तं न अन्नत्थ ॥ ११ ॥ एयं पुण तिविहंपि इ वंदंतेणाइओ उ कायच्चं । चिइवंदणमुणिवंदणपत्थणरूवं तु पजंते  
॥१२॥ अह आह निवो किं वंदणिज्जमेयाण गुणविउत्ताणं । नियमइविगप्पणाए ठविआणं चेइआण अहो ? ॥१३॥ तह सोअवजि-  
आण अनिययविचीइ भमणसीलाणं । भिक्खाआजीवगाणं जईण किं नाम नमणिज्जं ? ॥१४॥ नणु अपसन्नमणाणं जिणाण किं  
इत्थ पत्थणाइ फलं ? । नहि अफला पडिवत्ती बुहाण संसिज्जइ कयावि ॥१५॥ भणइ गुरु भो नस्वर ! संति अणंता गुणा जिणाण  
धुवं । झाइज्जंति नमिज्जंति ठाविउं ते उ पडिमासु ॥ १६ ॥ एयं ध्यानद्वयसिद्धेः, आह च—“स्वर्णादिप्रतिमास्थितमर्हद्द्रूपं यथा-  
स्थितं पश्येत् । सत्प्रातिहार्यशोभं यत् तद्भवानमिह रूपस्थम् ॥ १७ ॥ प्रतिमादिषु देहस्थं यथास्थमूर्तिं जिनादिकं मनसा । तद्रूपं  
चात्मानं यद् ध्यायेत्तदिह रूपस्थम् ॥ १८ ॥ तथा चोक्तम्—(चिन्तित्य पूरण) अमिघणा अतिपय पंगू न दिति । इणि कारणि इह  
पत्थरा, देवत्तणु पारित्ति ॥१९॥ नियमणसंकप्पो चिय सव्यत्थवि इत्थ होइ कज्जकरो । जो नेइ सत्तमीए स्वणेण पावेइ वा मुक्खं  
॥२०॥ ता सुहआलंबणओ परिमाणविसुद्धिमिच्छता निचं । जिणपूअणाइ कुजा भविआण विचोहणत्थं च ॥२१॥ अत्र प्रयोगः—  
जिणवंदणाइ कुजा परिणामविसुद्धिहेउओ निचं । दाणादुव्व मग्गप्पभावणाओ व कहणं व ॥२२॥ सुद्धमणवयणत्तणुओ सुद्धायारा

धीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१४४॥

मुचंभचेराय । कपदुद्धमकरणदमा इतिणो सुइणो सया नेया ॥२३॥ यदाह व्यासः—“चित्तं क्षमादिभिः शुद्धं, वदनं सत्यभाषणैः ।  
ब्रह्मचर्यादिभिः कायः, शुद्धो गंगां विनाऽप्यसौ ॥२४॥ चित्तं रागादिभिः क्लिष्टमलीकत्रचनैर्मुखम् । जीरहिंसादिभिः कायो, गंगा-  
ऽप्यस्य पराश्रुखी ॥२५॥ आह च—न शरीरमलत्यागात्, नरो भवति निर्मलः । मानसैस्तु मलैर्मुक्तो, भवत्येव हि निर्मलः ॥२६॥  
विषयेषु भृशं रागो, मानसं मलमुच्यते । विरागो हि पुनस्तेषु, निर्मलत्वमुदाहृतम् ॥२७॥ मृदो भारसहस्रेण, जलकुंभशतेन च । न  
शुष्यन्ति दुराचाराः, स्नातास्तीर्थशतैरपि ॥२८॥ आचारवस्त्रांतरगालितेन, सत्यप्रसन्नक्षमशीतलेन । ज्ञानांबुना स्नाति च यो हि नित्यं,  
किं तस्य भूयात् सलिलेन कृत्यम् ? ॥ २९ ॥ शुचिर्भूमिगतं तोयं, शुचिर्नारी पतिव्रता । शुचिर्धर्मपरो राजा, ब्रह्मचारी सदा  
शुचिः ॥३०॥ शृंगारमदनोत्पादं, यस्मात् स्नानं प्रकीर्तितम् । तस्मात् स्नानं परित्यक्तं, नैष्ठिकैर्ब्रह्मचारिभिः ॥३१॥ कामरागमदोन्मत्ता,  
ये च स्त्रीवशवर्तिनः । न ते जलेन शुष्यन्ति, स्नातास्तीर्थशतैरपि ॥३२॥ स्नानमुद्धर्तनाभ्यंगौ, तांबूलं दंतधावनम् । गंधमाल्यं प्रदीपं  
च, त्यजन्ति ब्रह्मचारिणः ॥३३॥ नोदकक्लिन्नगात्रो हि, स्नात इत्यभिधीयते । स स्नातो यो दमस्नातः, स बाह्याभ्यंतरः शुचिः ॥३४॥  
यो लुब्धः पिशुनः क्रूरो, दांभिको विषयात्मकः । सर्वतीर्थेष्वपि स्नातः, पापाद्धि मलिनश्च सः ॥ ३५ ॥ ज्ञानजले ध्यानहृदे,  
रागद्वेषमलापहे । यः स्नाति मानसे तीर्थे, स गच्छति परां गतिम् ॥३६॥ सबन्ध सममणाणं धनमयणाइमु ममत्तरहियाणं । नि-  
हंसिषं रिसीणं अनिअयविचीइ परिभमणं ॥३७॥ यदाहुः परममुनयः—“अनिअवासो समुआणचारिआ, अन्नायउंछं पयरिकया  
य । अप्पोवही कलहविवज्जणा य, विहारचरिआ इतिणं पसत्था ॥ ३८ ॥” तथा—“पडिबंधो लहुअत्तं न जणुवयारो न देस-  
विस्साणं । नाणाईण अयुद्धी दोसा अविहारपक्खंमि ॥ ३९ ॥ किंच—“मासं च चउम्मासं परं पमाणं इहेगपासंमि । बीयं तइयं

नरवाहनवृ-  
त्ते तत्त्वत्रयी

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१४५॥

च तर्हि मासं वासं च न वसिञ्जा ॥४०॥” अन्येऽप्याहुः—“श्रीष्महेमंतकान् मासानष्टौ भिक्षुः सदा चरेत् । दयार्थं सर्वभूतानां,  
वर्षास्वेकत्र संबसेत् ॥४१॥ तथा मार्कण्डेऽपि—सर्वसंगपरित्यागो, ब्रह्मचर्यमक्रोपिता । जितेन्द्रियत्वमावासे, नैकस्मिन् वसतिथिरम्  
॥४२॥ आरंभनियत्तार्णं धम्मसरीरस्त रक्खणनिमित्तं । भिक्खोवजीरगतं पसंसिअं नशु महेसीणं ॥४३॥ यदुक्तं—‘चरेन्माधुकरिं  
वृत्तिमपि प्रांतकुलादपि । एकाग्रं नैव भुञ्जीत, बृहस्पतिसमादपि ॥ ४४ ॥ अवधृतां च पूतां च, मूर्खाद्यैः परिनिदिताम् । चरेन्  
माधुकरिं वृत्तिं, सर्वपापप्रणाशिनीम् ॥४५॥ अथ प्रयोगः—इय गुणजुत्ता अममत्तणेण भावमलसुद्धिहेऊओ । भुणिणो पसंसणिञ्जा  
सुत्तिथगमणाइयं व सया ॥४६॥ यद् व्यासः—साधूनां दर्शनं श्रेष्ठं, तीर्थभूता हि साधवः । तीर्थं पुनाति कालेन, सद्यः साधुस-  
मागमः ॥४७॥ कह अपसन्नाउ फलं लब्धंति मई ? असंगया जेण । सुमणाण फलंति अचेयणावि चिंतामणिप्पमुहा ॥४८॥ ता  
नाणाइमयत्ते पुञ्जा कोवप्पसायविरहाओ । नियमणपसायहेउं नाणाइगुणे व जिणचंदो ॥४९॥” इय जुत्तिजुत्तमुत्तो गुरुणा पडि-  
उत्तराखमो राया । सुपउद्धमणो बहु तज्जणाइ काउं समारद्धो ॥ ५० ॥ यतः—अप्रशांतमत्तौ शास्त्रसद्भावप्रतिपादनम् ।  
दोषाणाभिनयोदीर्घो, शमनीयमिव ज्वरे ॥५१॥ अह तं नाउं पियदंसणा य देवी सुओ अमोहरहो । आगम्भ भणंति निवं  
पहु ! नहु इह काउमुत्तिअमिणं ॥ ५२ ॥ जओ—इह हीलिया उ ह्वाणिं दिंति रिस्सी रोइयव्वगं हसिआ । अफोसिआ  
उ गहयंभणारं पुण ताडिया मरणं ॥ ५३ ॥ किंच-तपस्विनि क्षमाशीले, नातिकर्कशमाचरेत् । अतिसंचर्प-  
णात्सिभंदनादपि जायते ॥ ५४ ॥ जइ इय ता मह विसए धम्माधम्माइ अकहमाणेहिं । ठायव्वमिमेहिं भणित्तु  
भिंओ मओ गगिहमणुपत्तो ॥५५॥ हेडाउएण केणवि कथाइ अत्थाणगस्स अह रण्णो । एरो करी अगाहिअसिक्खविसेसो उव-

नरवाहन-  
वृत्तं

॥१४५॥

द्विविओ ॥५६॥ निवपुट्टा गयलक्खणविउसा पुरिसा वयंति देव! इहं। भदो मंदो य मिगो मिस्सा चउहा गया हुंति ॥ ५७ ॥  
 तत्थ-सेयनहदीहपुच्छुन्नयग्गसव्वंगसुंदरो धीरो। महुपिंगल्लो भदो सरयमदो हणइ दंतेहिं ॥ ५८ ॥ धूलसिरदंतनहवालवालही  
 मिहपिंगलो मंदो। चलवहलविसमचंमो करेण पहरइ वसंतमदो ॥ ५९ ॥ हेमंतमदो तासणसीलो गत्तावरेहिं हणइ मिगो। तत्थु-  
 विगते तणुदंतदेहवयकंठनहकेसो ॥६०॥ अणुहरइ थोवथोवं रूवं सीलं च जो इमाण गथो। सो मिस्सो सव्वंगिहिं हणेइ मज्जइ अ  
 सयकालं ॥६१॥ भदो सवायलक्खं तपद्धमुल्लं लहेइ मंदकरी। तस्सद्धं मिगहत्थी तयद्धमवि मिस्सजाइगओ ॥६२॥ तो सोउमिणं  
 निचई तं भइगयं गहेइ तुट्टमणा। हेडाउअं विसज्जइ दाऊण मणिच्छिअं मुल्लं ॥६३॥ तंमि निवो अह चडिऊण रायवाडीइ निग्गओ  
 तत्तो। सरिय वणं धावित्था विंझाभिमुहो जवेण करी ॥६४॥ अंकुसभिन्नसिरोऽविहु ता सो हयहत्थिजोहनिवहेहिं। सुनिकाइयकम्म-  
 चउव पारिओ नेव पडिखलिउं ॥६५॥ सेरिहवराहमज्जाररिद्धरूवाणि दूरगमणेण। धारंतो सो हत्थी खणेण अदंसणं पत्तो ॥६६॥  
 अडविगयाउ गयाओ उत्तरइ निवो विलगिगओ रुक्खे। गहिऊण य मिछेहिं पुच्छिओ कोऽसि कत्तो तं? ॥६७॥ नियमकहंतं ताडित्तु  
 जट्टिमुट्ठीहिं वंधिय गया ते। अह कहवि निवो निसि छित्तु वंधणे लंधिउं अडविं ॥६८॥ लुहत्तण्हाइकिलंतो रज्जउरे गंतु मिक्खिउं  
 भुत्तो। तहि वासं अलहंतो निसि उज्जाणे वहिं पत्तो ॥ ६९ ॥ तत्थ य नरवाहननिव! नणु करिहरिओ इहागओ सित्ति।  
 बुत्तो सुहंमगुरुणा भणइ ममं मुणह कह तुब्भे? ॥७०॥ नणु धम्माइ सविसए वारंतो सबहिंपि पयडो सि। इअ बुत्तो सो लज्जा-  
 नमिरो गुरुणा पुणो भणिओ ॥७१॥ “धम्माइफले पयडेऽवि राय! रक्खाइए किहइ जीवा। परलोअनिप्पिवासा मूढा मग्गाउ  
 मस्संति ॥ ७२ ॥ निंदता गुरुदेवे लोअविरुद्धंपि तह विहेमाणा। अत्तुकरिसा तंपिव अणत्थसत्थं निव! लहंति ॥ ७३॥ अज्जवि

श्रीदे०  
 चैत्य० श्री-  
 धर्म० संपा-  
 चारविधौ  
 ॥१४६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१४७॥

किंपि न नष्टं विसुद्धमग्नं भयाहि भूनाह ॥ दूरं गयावि लच्छी अणुसरइ नरं नयपवन्नं ॥७४॥ अह जायकम्म-  
विवरो अणुतावपरो निवो चरणलग्नो । विन्नवइ गुरुं भयवं ! कइ पावा मुच्चिहमिमाओ ? ॥७५॥ “भणइ गुरु जिणमुणिवंदणेण  
पावमिह नासइ जमुत्तं । भत्तीइ जिणवराणं खिजंति पुरा कया कम्मा ॥७६॥ तथा-अभिगमणवंदणनमंसणेण पडिपुच्छ-  
णेण साङ्गणं । चिरसंचिअंपि कम्मं खणेण विरलत्तणमुवेइ ॥ ७७ ॥ जिणवरपणिहाणाओ जायइ जीवाण सयलसुहहेऊ ।  
सुहगुरुजोगो मग्गाणुसारिया भवविरागित्तं ॥७८॥ तह गुरुजिणबहुमाणो इह परलोए अहिठ्ठफलसिद्धी । लोयाविरुद्धकरणं परोव-  
वयारित्तणाईवि ॥७९॥” अह निवई नमिय गुरुं गयमिच्छतो गहेवि सम्मत्तं । जिणमुणिपणिहाणपरो गमइ दिणे दुकयनिंदाए  
॥८०॥ अह अणुपत्ते सबले नमिय गुरुं भणइ पट्टु ! पसीय कया । वइदिसिपुरीइ एअइ इय वुत्तु निवो गओ सपुरं ॥८१॥ पिय-  
दंसणाइ देवीइ पुच्छिओ हत्थिहरणमाईयं । जिणधम्मलामपेरंतमाह निवई नियचरित्तं ॥८२॥ तत्तो सुइसंमत्तो मुणिपयभत्तो जिण-  
च्चणुज्जुत्तो । कयधम्मियवहुमाणो पालइ रअं सुपणिहाणो ॥८३॥” श्रीमत्सुधम्मसूर्यागमने चोद्यानपालविज्ञप्ते । सर्वद्ध्या भूमर्ता  
विनिर्यथो मुनिपतेर्नंतुम् ॥८४॥ दयितासुतादिसहितो भक्त्या प्रणिपत्य तत्पदद्वंद्वम् । विहितांजलिः सविनयं विज्ञपयामास सूरिमसौ  
॥८५॥ अचिराय प्राप्सौदत्तं न किं स्वचरणारविंदवंदनतः । अस्माकमुपरि भगवन् ! मुनिः-गाढं व्यग्रा नृपाः स्म वयम् ॥ ८६ ॥  
राजा-त्यक्तसमारंभाणां भवतामपि सर्वसंगविरतानाम् । किं व्याकुलत्वमेतद् ? मुनिः-वसुधाधव ! विद्धि युद्धकृतम् ॥८७॥ राजा-अहइ  
समशत्रुमित्र ! क्षेत्रादिविरोधकारणलवित्र ! । प्रशमधन गतयोधन ! किमिति तवायोधनविधानम् ! ॥८८॥ महदाश्चर्यं भगवन् !  
कथय कथं केन कलिरजनि वोऽत्र । गुरुरथ जगौ गवेश्वर ! शृणु तदिह गुरुः प्रबंधोऽयम् ॥८९॥ तथाहि-श्रुत्वैकदा गतं मां प्रम-

श्रीदि०  
पैत्य० श्री  
पर्म० सपा  
चारविधौ  
॥१४८॥

तस्यतपने प्रमादचरात् । सत्त्वरमभ्यपिपेणद् भववक्रव्यूहतो मोहः ॥९०॥ तत्राग्रिमधारायां तस्थुरनंतानुबंधिनो योधाः । वामे  
दर्शनमोहश्चरित्रमोहस्तदपसव्ये ॥ ९१ ॥ पार्श्वत आयुर्नाम्नी वेद्यं गौत्रं च पृष्ठधारायाम् । अग्रारकेषु कामः सनोकपायो जगद्दीरः  
॥९२॥ पश्चिमपार्श्वारेषु द्यावरणीयातरायमामंताः । भ्रमचक्रसुदृढनाभौ मोहनरेन्द्रः प्रबलवीर्यः ॥९३॥ राजा-भगवन् ! भवता  
त्रिभुवनहितेन मोहस्य किमिति वैरमिदं ? । गुरुः-शृणु नृप ! ममास्य यद्वैरकारणं सावधानमनाः ॥९४॥ पूर्वं दत्त्वाऽनेकासुखानि  
चरमागतामहास्त्रेण । अत्रधिपमस्य सुरायुर्नरकायुस्तिर्यगायुषि ॥ ९५ ॥ राजा-ततः ततः, गुरुः-मोहनृपविजयदक्कासु वाद्यमानासु  
विविधविक्रथासु । समरभरायोच्छलितो विषयादिभटौघतुमुलरवः ॥९६॥ किमिदमहमिति हि विमृशन्नुपयोगचरेण सर्वमज्ञायि ।  
तदनु द्रुतं व्यसन्नप तत्क्षपकश्रेणिसुव्यूहम् ॥ ९७ ॥ तत्र चरित्रनरेन्द्रो मध्ये तदक्षिणेऽस्य वरपुत्रः । तस्थौ दशसुभटयुतो यति-  
धर्माख्यो महारथिकः ॥९८॥ वामे तु सप्तदशभटयुतोऽतिरथिकश्च संयमो नामा । अन्तर्महाव्रताख्याः प्रोस्फुरदुरुतेजसो रथिकाः  
॥९९॥ सतोपमहावीरो बाह्याभ्यन्तरतपश्चरणयोधः । चरणसुभटसप्ततिरेकतोऽन्यतरेऽन्यसप्ततिका ॥१००॥ शीलंगाष्टादशमहस्रसं-  
ख्याः पदातयसादनु । शुभभाससचिन्वचनादारोहमहमप्रमत्ताश्चम् ॥१०१॥ निजचित्तवृत्तिसत्रे ध्यानाहतपरशुशोधितक्षेत्रे । स्वाध्याय-  
भेरिनादनपूर्वं प्राविशमथ रणाय ॥१०२॥ पद्मः पद्मेन निपादेन निपादी च सादिना सादी । कुंताकुंति शराशरि युयुधाते ते बले  
सुचिरम् ॥१०३॥ दुष्टामिसधितुरगा डुडौकिरे सापरायिकाः म्लेच्छा । त्वरितं न्यपीपतं तान् विशुद्धियोगत्रिसेल्लहतान् ॥१०४॥  
सञ्जीवितयोधगुणाच्छुभवर्माद् ज्ञानसर्वलोहेन । मुक्तेन हतो हृदये पपात मिथ्यात्मभिल्लपतिः ॥१०५॥ तदनु प्रधावितो मिश्रजातिको  
मिश्रदृष्टिमांताः । तत्रविनिश्चयखड्गेन खंडशोऽर्धमहमपि तम् ॥१०६॥ सम्यग्दर्शननृपतिः शिरसि हतस्तन्नरुचिरुचिरवप्या ।

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सघा  
चारविधौ  
॥१४९॥

सत्यक्तपुद्गलो मा शरणमशिथियत नाथतया ॥ १०७ ॥ इति सपरिकरे दर्शनमोहे वरमण्डलेशिनि विनष्टे । गयभीतमोहकटक  
पथात् किचिदपचक्राम ॥ १०८ ॥ तीत्रविशुद्धाध्ययसायदडपतिर्दौकित समारोहम् । रथपरमपूर्वकरण परमलपाष्णिप्रहाराय  
॥१०९॥ यध्नाति तथा स्थिति स्थितिघातान् मयि विदधति हतरसाथ रिपून् । गुणसंक्रमाद् गुणश्रेणिवर्णना प्रावृत्ततत्र ॥११०॥  
निजवीर्यापितमारोहमतुलमनिवृत्तिबादरसितेभम् । यात्रदरिहति कृते मामभि चचले तापदहितबलम् ॥१११॥ चतुरोऽप्रत्याख्या-  
नान् प्रत्याख्यानान्वितान् महावीरान् । यात्रद्वेदं भेदं हन्मि विरतिनिश्चिततीरेभिः ॥११२॥ मायायुद्धप्रवणाः खेचर्यस्तात्रदंतरा  
न्यपतन् । निद्रानिद्राप्रचलाप्रचलास्त्यानर्द्धिनामानः ॥११३॥ ताः सर्वतोऽन्धयत्यः सद्रोधोद्यतनास्त्रकृतविफलाः । चिक्षिपुरिमाश्र  
तदनु त्रयोदश प्रकृतयो नाम्नः ॥ ११४ ॥ तिर्यग्दुर्गतिगत्यानुपूर्विका जातयथतमश्च । मावारण उद्योतस्तथाऽऽतपः स्थापरः  
सूक्ष्मः ॥११५॥ स्त्रीनररूपी वेदोऽथ धावितः प्रतिदहन्नलशस्त्रैः । दमधाराधरधारासारैरकलग्न्य सोऽपि हतः ॥ ११६ ॥ मुंच-  
नथाक्षिविक्षेपलिप्तविशिरान् मृगोक्षणारूपी । वेदो व्यपाद्यत विरागतार्द्धचंद्रांतरास्तासु ॥ ११७ ॥ शूरोऽसीति सहामा रतिररतिः  
प्रहरमेति च मशोका । अहह कथं मारयतीतिजुगुप्सा प्रापतत् मभया ॥ ११८ ॥ अध्यारोप्य तथा ताः माधुसमाचारचक्रके  
भ्रमिताः । मुखरुधिरमुद्गिरत्यः प्रत्यस्वि यथा च शशरुर्द्राः ॥११९॥ रे तिष्ठ तिष्ठ निष्ठुर ! निहत्य दयितादि मे क यामीति । जल्प-  
निनक्रमजानन्नागात् सकल्पयोनिरथ ॥१२०॥ निहतः सुदुस्तपस्तपःशक्त्याऽमौ निष्ठुर जसामीरुः । घूर्णितविलोचनो भुवि पपात  
पुष्पायुधो जगिति ॥१२१॥ भेतुमथ तपःशक्तिं नृवेद्य उत्पाद्य विषयवशपरशुम् । निपतन् मदनोऽन्तरभूत् सुशीलमुद्गरहतः कणशः  
॥१२२॥ ज्वलन इव संज्वलन्नथ युधे प्रधावन्नुदायुधः क्रोवः । निधनमधत्ताशु मया क्षातिडगा(गदा)खंडितकरोटिः ॥ १२३ ॥



श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१५०॥

मानमपि मटमन्यं यथेष्टपुष्टीकंगानमूनमतिः । मार्दवगदया पटु कुटकगालवत् कुड्डयामास ॥ १२४ ॥ इति मे द्वेषगजेन्द्रो निरर्ग-  
लोऽतुच्छमत्मरोऽत्यर्थम् । मध्वन् चलं यथेच्छं सुसाम्यतापरिधया पिपिपे ॥ १२५ ॥ अथ-मायाव्याघ्रीं ग्रसितुमुत्थितां विकृत-  
विकटकपटास्याम् । सरलत्वशब्दकीलितनालजघनर्जुतश्चूर्याम् ॥ १२६ ॥ लोभस्तु खंडशः खण्डितोऽपि भूयो विवर्द्धयन्नुच्चैः ।  
संतोषशंकुना कीलितो मया प्रेतवन्मंत्रः ॥१२७॥ एवं चरित्रमोहे त्रिकरणशुद्धिश्चिलसंभिन्ने । मोहनरेन्द्रोऽदौकिष्ट रागकेसरिस-  
मारूढः ॥१२८॥ स्फुटमुत्कटविकटाटोपभीषणस्तप्तताग्रताम्राक्षः । पटु घटितललाटनटभ्रकुटिरमौ मामिति ततर्ज ॥१२९॥ एहोहि  
तिष्ठ तिष्ठात्र गच्छ गच्छाद्य मुंच मुञ्चास्त्रम् । मा रे मुधा म्रियस्व म्रियस्व युध्यस्व युध्यस्व ॥ १३० ॥ श्रीचारित्रनरेन्द्रप्रहितमितः  
घस्नसंपरायाग्यम् । सरभमभंगुरमासाद्य सपदि तस्याभ्यसार्पमहम् ॥१३१॥ युद्ध्वा क्षणादहं सूक्ष्मसंपरायोप्रचरणचक्रेण । आरुष्य  
मोहमौलिं लघु लुलुवे कमलनालमिव ॥१३२॥ मोहनृपं च विनष्टं दृष्ट्वाऽरिचलं विनायकं नश्यत् । तत्क्षतचे शिप्रं क्षीणमोहभुव-  
मगममुत्प्लुत्य ॥ १३३ ॥ निद्राप्रचलाख्ये अंधकारपद्यावधांतरे कृत्वा । सहसा प्रच्छन्नीभूय तस्थिवत्तदरिचलमखिलम् ॥ १३४ ॥  
मुमुचे तदनु मयोल्काशतानि मुंचंति तडत्तडिति कुर्वन् । सुप्रणिधानवता शितकोटिसितध्यानशतकोटिः ॥१३५॥ तेन च निर्दह्य  
तके श्मिति युगपन्न्यदाहि तृणदाहम् । दर्शनचतुष्कविभ्रकपंचज्ञानावरणपंचत् ॥१३६॥ भूयामश्चारिभटाः चारभटा अपि जगन्नय-  
जयेऽथ । तत्तेजोऽपि निरीक्षितुमपि नालंभूष्णवोऽभूवन् ॥१३७॥ रंभ्रेषु केऽपि शंषामदुर्निकुंजेषु लिलिपरे केऽपि । बुब्रूदुरंबुनि केऽपि  
प्रविशिशुरपरेऽंग ! गिरिदरिषु ॥१३८॥ तत्यजुरितरेऽस्त्राणि प्रामुंचन्नेकके तु वस्त्राणि । केऽपि मृतीभूयेवास्थुरवनिलुठिताः सुनिश्चेप्यः  
॥१३९॥ तदनु च गगनेऽभ्रामं ध्यानांतरिःपटीमहं यावन् । तावन् केवललक्ष्म्या वनेऽवर्षन् सुमानि सुराः ॥१४०॥ इति वैरि-

नरवाहन-  
वृत्तं

॥१५०॥

विघातार्थं सयोगिनो व्यग्रता मम नृपासीत् । नष्टाऽरिषु निःशेषं गतेषु नु स्यादयोगित्वम् ॥१४१॥” श्रुत्वेति नृपो मुदितोऽस्तो-  
दिति भगवन्निमे हताः स्थाने । अहिताहितजगदहिता भवता जगदेकरीरेण ॥१४२॥ गण्याऽथ नृपः स्वगृहे राज्ये विन्यस्य सुतम-  
मोघरथम् । ससमाधानो दीक्षां सुधर्मगुरुसंनिधौ जगृहे ॥१४३॥ विहितानशनविधानः सुप्रणिधामः सदोज्जितनिदानः । प्राप्त-  
तृतीयकल्पे मुक्तिं गंता तृतीयभवे ॥ १४४ ॥ एवं निशम्य नरवाहनभूमिपालवृत्तं सुवृत्तंजनसंमदकारि हारि । श्रीजैनचैत्यसुमुनि-  
प्रणिधानयत्नं, भव्याः ! कुरुष्वमचलीकृतयोगजाताः ॥१४५॥ इति नरवाहनराजवृत्तान्तम् ॥ इत्युक्तं प्रणिधानत्रिकमिति  
दशमं पिकं । अथ श्रोतुं त्वरमाणः शिष्यः प्राह-अथ तावद्भगवद्भिः पद् त्रिकाणि व्याख्यातानि, शेषाणां तु का वार्तेत्याशंका-  
समुद्धरणाय गाथाचतुर्थपादेनाह—

सेसतिपत्थो उ पयडुत्ति ॥ १९ ॥

शेषत्रिकाणां पदक्षिणानिकप्रणामत्रिकदिक्रयनिरीक्षणविरतित्रिकपदभूमिप्रमार्जनत्रिकलक्षणानां अर्थः पुनः प्रकटः—  
सुगम एवेति भाष्ये नोक्तः, विवृतौ तु यथागस्तायं भावित एवेति समाप्तानि दशापि त्रिकाणि । एषां चैवं करणफलं लघुभा-  
ष्योक्तं-कम्माण मोहणीयं जं बलियं तीसठाणगनिबद्धं । तक्खवणट्ठा एवं तिगदसगं होइ नायबं ॥१॥ इय दहतियसंजुत्तं वंदणयं  
नो जिणाण तिक्कालं । कुणइ नरो उवउत्तो सो पावइ सासयं ठाणं ॥२॥” इति व्याख्यातं दशत्रिकाख्यं प्रथमद्वारं, अत्र च प्राह  
गाणश्रावकादिवहुरामानेत्याद्युक्तं, तत्र चैत्यादि वंदितुकामः थावकः कथित् महर्द्धिको भवेत् श्रीपेणनृपादिवत्, कथित् सामान्य-  
विषयः श्रीगतिपेष्ठिवत्, तत्र यदि राजादिस्तदा ‘सद्धाए इड्डीए सद्धाए दित्तीए मववलेणं सद्धपुरिसेणं’ इत्यादिवचनात्

धीदे०  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१५२॥

प्रभारनानिमित्तं महद्दुःखं चैत्यादिषु याति, अथ सामान्यविभक्तदौर्द्धत्यादिपरिहारेण लोकापहासं परिहरन् प्रजति, तत्र चैत्ये  
प्रविशन् पंचविधाभिगमं करोति, इत्येतत्संबंधायातं द्वितीयं 'अभिगमपणगं'ति द्वारं विष्टुष्वन्नाह—  
सचित्तद्रव्यमुज्झणं१ मचित्तमणुज्झणं२ अणोगत्तं३ । इगसाडिउत्तरासंगं४ अंजली सिरसि जिणदिट्ठे५ ॥ २० ॥  
मचित्तद्रव्याणां स्वागाश्रितानां कुमुमतामूलादीनां उज्झनं-परित्यागः १ अचित्तानां-कटककुंडलकेयूरहारादीनां द्रव्याणां  
इत्यत्रापि योज्यं अतुज्झनं--अपरित्यागः २ मनोःकाम्यं रागद्वेषाभावेन मनःममाधिरनन्योपयोगितेतियात् ३ एकशाटक  
उत्तरासंगः ४ एकः-एकसंख्यो न द्वयादयः शाटको देशांतरप्रसिद्धः पृथुलपटादिरूपो यत्र म उत्तरासंगः-उपरितनं रत्नं, प्राप्-  
रणवत्त्वमित्यर्थः, उक्तं च आचाराद्गच्छं- 'एगसाडो, यदुक्तं भवति-एगपापरणु'ति तेन कृत्वा उत्तरासंग-उत्तरीयकरणं' कल्प-  
चूर्णानिष्पुक्तं- 'उत्तरिजं नाम पापरण,' कचित् उत्तरिजं नाम पंगुरणमिति पाठः, एवं च एगेण पंगुरणवत्त्वेण उत्तरासंगो किञ्चिद्  
इति भणियं होइ, 'अनेन च निरमनसस्त्रेणोत्तरामङ्गकरणनिषेधमाह', निरमनवसनस्यांतरीयशब्दवाच्यत्वात्, तथा च कल्पनि-  
शीभचूर्णा 'उत्तरिजं नाम निषमणं'ति, एगग्रहणं पुनरुत्तरामङ्गेऽनेकमस्त्रनिषेधार्थं, न तु सर्वथोपरितनप्रापरणवत्त्वस्य, एवं च  
परिहितरूपस्यो द्वितीयेन रत्नेण उत्तरासंगं कुर्याद् इत्युक्तं भवति, यदुक्तं पंचाशकवृत्तौ- 'एकमस्त्रपरिधानः एकेन चोपरितन  
रत्नेण रत्नोत्तरासंग' इति, माकं गेयपुराणेऽप्युक्तं- 'नैकमस्त्रेण भुञ्जीत, न कुर्याद्देवतार्चनम्' इत्यादि, एतच्च पुरुषमाश्रित्योक्तं,  
स्त्री तु विशेषप्राप्तार्द्धी विनयापनततनुलतेति, तथा चागमः- "विणओणयाए गायलट्ठीए"ति, एतावता शकस्तयादावप्यासां  
शिरस्यं न लिन्पामो न युज्यते, इदादिप्रमत्तेः, यत्तु फरयल जाय रुदुदु एवं ययासीत्युक्तं द्रौपदीप्रस्तावे तद् भक्त्यर्थं न्युच्छादिरदं-

अभिगम-  
पंचकं

॥१५२॥

जलिमात्रभ्रमणसूचनपरं, न च पुरुषैः सर्वसाम्यार्थं, न च तथास्थितस्यैव सूत्रोच्चारख्यापनपरं, अन्यत्रापि नृपादिविज्ञापनादाव-  
प्यादौ तथा भणनादित्याद्युक्तप्रायं, परिभाव्यमत्रागमाद्यविरोधि, वृद्धसंप्रदायात्तु संप्रति स्त्रीणां वस्त्रत्रयं विना देवार्चा कर्तुं न कल्पते,  
तथा अन्यैरप्युक्तं—‘न कंचुकं विना कार्या, देवार्चा स्त्रीजनेन च’ इति ४, अंजलिबंधश्च कार्यः शिरसि—मस्तके जिने दृष्टे—जिन-  
चिबदर्शने सति इति गाथार्थः ॥ १७ ॥

इयं पंचविहाभिगमो अहवा मुञ्चन्ति रायचिह्वाहं । खगं छत्तोवाणह मउडं चमरे अ पंचमए ॥ २१ ॥

इति—पूर्वोक्तप्रकारेण पंचप्रकारोऽभिगमो भवति, उक्तं च श्रीपंचमाङ्गे—“पंचविहेण अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा—सच्चि-  
त्ताणं दद्याणं विउसरणयाए १ अचित्ताणं दव्याणं अविउसरणयाए २ एगमाडएणं उत्तरासङ्गकरणेणं ३ चक्खुप्फासे अंजलि-  
पग्गहेण ४ मणसो एगत्तीभावकरणेण ५” क्वचित्तु ‘अचित्ताणं दव्याणं विउसरणयाए’त्ति पाठः, तत्राचित्तानां—छत्रादीनां  
व्यवसरणेन, व्युत्सर्जनेन इत्यर्थः, अन्यत्राप्युक्तम्—‘पुष्पतंबोलमाईणि, सचित्ताणि विवज्जए। छत्तवाहणमाईणि, अचित्ताणि  
तहेव य ॥१॥’त्ति ॥ एतदर्थप्रतिपादनार्थमाह—‘अहवे’त्यादि, यद्वा यो महर्द्धिको—राजादिश्चैत्यं प्रविशति स पंचविधाभिगमसमये  
राजचिह्नान्यपि मुञ्चतीत्यत आह—अहवेत्यादि, अथवा विकल्पांतरसूचको, न केवलं सचित्तान्येव द्रव्याणि मुच्यंते, किं तर्हि ?,  
अचित्तान्यपि द्रव्याणि मुच्यंते—दूरीक्रियंते, कानि ?—राजचिह्नानि—राजलक्षणानि, तान्येवाह—खड्गः—कृपाणः १ छत्रं—आतपत्रः  
२ उपानहौ—पादुके ३ मुकुटं—किरीटः ४ चामरा—बालव्यजनानि पंचमकाः ५ इति, तथा च सिद्धांतः—अवहट्टु रायक-  
कृहाइं पंच वसरायककुहभूयाइं । खगं छत्तोवाणह मउडं तह चामराओ य ॥ १ ॥त्ति । श्रीपेणनृपतिश्रीपतिश्रेष्ठिकथा

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
पर्म० संया  
वारविधौ  
॥१५४॥

चयम्—मकलरसालंकारं भरतक्षेत्रेऽस्ति सुकविशास्त्र इव । सद्बृत्तं सुयतिगणं बह्वर्धयुतं वसंतपुरम् ॥ १ ॥ तत्राभवद्वनि-  
धवः श्रीपेणः स्फुरद्गुरुप्रतापरविः । जिनराजवंदनाभिगमकरणविधिसेवनप्रगुणः ॥२॥ तस्याजनि जिनवचनैककौशलः क्षितिपतेः  
परं मित्रम् । प्रवरश्रियां निवासः श्रीद इव श्रीपतिः श्रेष्ठी ॥ ३ ॥ विहितप्रभातकृत्यः श्रीपेणनरेश्वरोऽन्यदाऽऽस्थाने । उद्भट-  
भट्टवादभट्टौघसंकटे यावदास्ते स्म ॥४॥ तावद् भूलिभूगरचरणेन स्वेदसार्द्रसिचयेन । आगत्यैकेन द्रुतमिति विज्रप्तधरनरेण ॥५॥  
दंव ! त्रिविक्रम इवोरुविक्रमो विक्रमध्वजो राजा । रणरमिकमनाम्त्वां प्रति संप्रत्यत्रापतन्नस्ति ॥ ६ ॥ इति चरवचनं श्रुत्वा  
ललाटतटघटितभृकुटिग्वनिपतिः । किंकरगणेन महमा रणभेरीं ताडयामास ॥७॥ तच्छब्दाकर्णनज्ञगितिमिलितचतुरङ्गसैन्यपरिक-  
रितः । श्रीपतिसहितः क्षितिपतिरभिपेणयति स्म तं शीघ्रम् ॥८॥ अविलंबितप्रयाणैः कतिभिरपि प्राप यावदटवीं सः । तावदख-  
ण्डितधारासाराधाराधरा वष्टपुः ॥ ९ ॥ अवहन् सरितो वाहा वाहा इव वेगिनो घननृपस्य । ग्रंथा इव निष्ठीका अभवंश्च सुदुर्गमा  
मार्गाः ॥१०॥ तदनुच नृपः स्वशिविरावासान्निरुपद्रवे कचिद्देशे । विक्रमनृपोऽपि कुत्राप्यरण्यशैले स्थितिमधत्त ॥११॥ अवहत्विधि-  
ललितवशाच्छ्रीपेणनृपस्य सकलसैन्येऽपि । अत्यंतमशिवमभवत् ततो भ्रियंतेऽथगजवृषभाः ॥१२॥ रौरुदति पामरनरा विलापमात-  
न्वते वणिग्वर्गाः । विपमाद मन्त्रिमंडलमजनि महीजानिरपि दुःस्थः ॥१३॥ नृपवेश्मन्यथ हाहारवविरसप्रलपितध्वनिं श्रुत्वा ।  
द्रागागुर्लघुमचिवश्रीपतिसामंतमुख्यजनाः ॥१४॥ मूर्च्छामीलितनयनं वीक्ष्य नृपं विगतचेतनं श्रेष्ठी । स्वगृहादानीय चवंध नृपभुजे  
स्त्रकेयूरम् ॥१५॥ तन्माहात्म्यादुन्मिलिताशिशुगलः सचेतनः क्षितिपः । श्रीपतिपृष्ठः प्रोचे निजकं वैधुर्यवृत्तांतम् ॥१६॥ श्रेष्ठिवर ! वे-  
त्रिसुभटास्त्रलितः कश्चिन्नरः समेत्याग्रे । उत्कटचपेटया मां कपोलकलके प्रणिजघान ॥१७॥ अपि त्वङ्गन्यग्रकरस्ततोऽमवं मूर्च्छितो

श्रीपतिश्री-  
पेणवृत्तम्

॥१५४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१५५॥

विगतचित्तः । इयतः स्मरामि परतः सर्वं भवतां विदितमेव ॥१८॥ किंतु मयीचितस्मिन् कटकजनेऽप्युपकुरुष्व सत्करुण! । श्रेष्ठीति  
नृपतिभणितोऽस्मरदमरं पूर्वसांगतिकम् ॥१९॥ सोऽप्यागत्य द्रुतमत्र नृपचले मकलमशिमपजहे । प्रकटीकृतनिजरूपः प्रणनाम च  
श्रेष्ठिनं मुदितः ॥२०॥ अथ तुष्टो भंश्रिजनो विसिष्मये राजकं जनो हृष्टः । सर्वेरपि सैन्यजनैः प्रशंसितः श्रीपतिः स बहु ॥२१॥  
विस्मयरसपरिपूरितहृदयो राजा जगाद हे देव ! । श्रेष्ठिवरिष्ठेन समं भवतामिह को नु संबंधः? ॥२२॥ स प्राह नरेन्द्र ! पुरा हेम-  
पुरे ममभवत् विजयनामा । वामात्मा सर्वेषां मलिम्लुचः सोऽन्यदा स्वपुरात् ॥२३॥ आगत्य भवन्नगरे रजनौ धननामविभविनी  
भवनात् । आदाय बहु द्रविणं त्वरितपदं निर्गतो यावत् ॥२४॥ तावदवितर्कितागतभवदीयारक्षकैरसौ दृष्टो । नीत्वा प्रलपन्नलमथ  
तवाज्ञया वध्यवमुधायाम् ॥२५॥ क्षिप्तो विडम्ब्य बहुधा कृतांतरसनासमानशूलायाम् । अत्रांतरे समृज्ज्वलवेपेण विराजमानतनुः  
॥२६॥ अल्पमहर्षाभरणो गृहीतपूजोपचारसंभारः । मक्तिभरभ्राजितपुत्रमित्रसुकलत्रपरिवारः ॥ २७ ॥ पितृवनसमीपदेशे बहु-  
वापीरूपकुसुमफलरम्ये । स्वारामे चैत्यगृहे समागमच्छ्रीपतिश्रेष्ठी ॥२८॥ त्यक्त्वा सचित्तवस्तून्यमुक्तमुद्राद्यचित्तवस्तुगणः । वैकक्ष्य-  
मेकशाटकमाधाय कृतांजलिमौलौ ॥२९॥ एकाग्रमनाः सम्यक् पंचविधाभिगममिति विनिर्माय । प्रभणन्नमो जिनेभ्यश्चैत्यगृहांत-  
र्विवेश मुदा ॥३०॥ निर्माल्यादिकमुत्तार्य वर्यकुसुमैर्जिनेन्द्रमर्चिता । परिपूर्णचैत्यवंदनविधिना देवांश्च वंदित्वा ॥३१॥ यावन्निर-  
गाधैत्यात् कंठस्वितजीवितेन विजयेन । तावदयाचि श्रेष्ठी गाढं तृपितेन जलपानम् ॥३२॥ तदनु स चौरः क्रूरोऽप्यगण्यकारुण्य-  
नीरनीरधिना । एतेन महामनसा द्रुतमुदकं पाययामासे ॥ ३३ ॥ भणितश्च भद्र ! मुखदं संप्रति परलोकसंबलं लाहि । मधुमांस-  
रजनिभोजनमदिरापानाद्यधं निंद ॥ ३४ ॥ जीववधानृतभाषणपरधनहरणान्यदारसुरतानि । वचनमनस्तनुविहितं स्वदुष्कृतं विजय !

श्रीपतिश्री-  
पेणवृत्तम्

॥१५५॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१५६॥

गर्हस्व ॥३५॥ सर्वः पूर्वकृतानां स्वकर्मणां फलविशेषमिह लभते । इतो निमित्तमात्रं सर्वत्र भवेत्ततो भद्र ! ॥ ३६ ॥ मा कुरु  
खेदं मा गच्छ दीनतां मा व्रज क्वचित् कोपम् । जिनसिद्धसाधुधर्मान् कुरु शरणं त्रिभुवनशरण्यान् ॥ ३७ ॥ क्षुद्रोपद्रवविद्रवकरणं  
शरणं समस्तसिद्धीनाम् । सर पंचनमस्कारं सर्वापसारविसारम् ॥ ३८ ॥ इत्यमुनाऽसौ विजयः समाधिमासादितः सरन् मनसि ।  
पंचपरमेष्ठिभंत्रं मृत्वा प्रथमां दिवं प्राप ॥ ३९ ॥ यतः—“हिंसादाननृतप्रियः परधनाहर्ता परस्त्रीरतः, किंचान्येष्वपि  
लोकगर्हितमहापापेषु गाढोद्यतः । मंत्रेशं स यदि स्मरेदविरतं प्राणाल्यये सर्वथा, दुष्कर्माजितदुर्गदुर्गतिरपि  
स्वर्गाभवेत् मानवः ॥४०॥ उत्पादानंतरविलसदवधिविदितात्मपूर्वभवचरितः । बहुपरिकरपरिकरितः स्वर्गादवतीर्य भूषीठम्  
॥४१॥ पूर्वभवकथनपूर्वं महात्मनोऽमुष्य पदयुगं नत्वा । आर्पयदंगदमेतद्विजयसुरः स त्वहं भूपः ॥४२॥ किंचामिगमादिकविधि-  
युतजिनवंदनकमुख्यसुकृतवशात् । भविताऽयमग्रजन्मनि सुदृढप्रेमा परिवृढो मे ॥४३॥ इत्येनमेनमां ध्वंसकारकं नायकं कृतोप-  
कृतिम् । बहुशः संवेशवशादिह चैत्य वंदे स्तुवे सेवे ॥४४॥ पूर्वभवोद्भववैरात् कटके भवतोऽशिवं मया विदधे । इत्वा कपोल-  
पालौ चपेटयाऽचेतनस्त्वं च ॥ ४५ ॥ सरणादेतस्य पुनर्भवतः सैन्यं भवान् कृतः सुस्थः । इत्युक्त्वा विजयसुरः सहसा यावत्ति-  
रोऽधत् ॥४६॥ विज्ञप्तं गुप्तनरैस्तावन्नृपतेः पुरो यथा नाथ ! । अद्य यदि देवपादाः ससैन्यमायाति परसैन्ये ॥४७॥ भवति भव-  
तन्तदानीं लक्ष्मीरखिलाऽपि शात्रवी नूनम् । यद्विक्रमध्वजोऽयं नरपतिरप्रतिमपृतनोऽपि ॥४८॥ रे रे हताश ! नरनायकाधम !  
स्वपुरमद्य गच्छ त्वं । स्थगयित्वा कर्णां नूनमूनपुण्योऽन्यथा नासि ॥४९॥ यदिह दिनद्वयमध्ये श्रीपेणः क्षितिपतिः समागता । आदा-  
स्यते स राज्यं प्राज्यं सप्तांगमङ्ग ! तव ॥ ५० ॥ साटोपकोपकलितः कदर्थयिष्यति भृशं भवंतं च । विशतः पात्तालेऽपि न भविता

श्रीपतिश्री-  
पेणवृत्तम्

॥१५६॥

भवतः पुनर्मोक्षः ॥ ५१ ॥ आकाशवाचमुच्चैः श्रुत्वेति स्वपुरगमनशरणोऽसौ । अनमिलपन्नपि विहितोऽस्ति तव रिपुर्मंत्रिसामन्तैः  
 ॥५२॥ श्रुत्वेवं श्रीपेणः प्रमोदमदमेदुरो मनसि दध्यौ । श्रीपतिसुचरितरंजितसुपूर्वविलसितमिदमवश्यम् ॥५३॥ सरभसताडितजय-  
 भेरिशब्दसंनिहितसकलबलकलितः । अथ निकटमेत्यसुभटैरभाणयन्नृपतिरिति शत्रुम् ॥५४॥ भो भो नरेन्द्र ! पूर्वं मदोजितं गर्जितं  
 प्रहरणाय । अवसर्पतस्तु सांप्रतमहो तव श्मश्रुधारित्वम् ॥५५॥ द्विरसन इव निजमंदिरदरीं प्रवेक्ष्यति कथं भवान् भूप ! । श्रीश्रीपेण-  
 नरेन्द्रानुधाविनि प्रबलमंत्रबले ॥ ५६ ॥ रुदतो हसतोऽपि तव प्राघूर्णक एष तावदायातः । हसतैव ततो भवता समयोचितमस्य  
 फर्त्तव्यम् ॥५७॥ भग्नोऽपि श्वाऽपि करोति दशननिष्कर्षणं ततोऽपि त्वम् । सहसा नश्चन्नूनं न्यूनत्वं स्वस्य दर्शयसि ॥ ५८ ॥  
 श्रुत्वेति विक्रमनृपः कोपवशादवगणय्य कारणिकान् । श्रीपेणमभ्यपेणयदतुलोत्साहः स्वबलकलितः ॥ ५९ ॥ तत उभयोरपि  
 बलयोरग्रानीकं समारभत योद्धुम् । हरिकरिमुख्यासुमतां श्रीपेणो वीक्ष्य संहारम् ॥६०॥ गुरुकरुणारसरंजितहृदयः सदयं जगाद  
 रिपुमेवम् । ननु हंत किमेभिः क्षुद्रजंतुभिर्वहुरपि निहतैः? ॥६१॥ उर्ध्वोभव त्वमाशु क्षणं पुरो मम कृपाणमादाय । येन झटित्यपि  
 भवतो हरामि दोर्दण्डकंहृतिम् ॥६२॥ एवं निशम्य कोपारुणेक्षणो विक्रमः कृपाणकरः । भुवि समरस्य नियुद्धश्रद्धानुरवातरघानात्  
 ॥६३॥ उत्तीर्य सपदि यानात् परिमंडितमंडलाग्रहस्ताग्रः । रणभ्रमलमलमकृत श्रीपेणोऽपि क्षमानाधः ॥६४॥ तौ जात्यताम्रचूडाविव  
 नृपचूडामणी नियुद्धेन । विस्मयगुपजनयंतौ युयुधाने सुचिरमन्योऽन्यम् ॥६५॥ अथ दक्षतया श्रीपेणनरपतिर्विक्रमध्वजनरेन्द्रम् ।  
 लघुहस्ततया गुदं वबंध निजकोचरीयेण ॥६६॥ स्वाज्ञाकरणप्रवर्णं कृत्वा मुक्त्वा च विक्रममहीशम् । श्रीपेणनृपः क्रमशो महावि-  
 भृत्या स्वपुरमागात् ॥६७॥ अन्येद्युः प्रातः कृतमजनकस्फारसारशृंगारः । उद्धुरकंधरसिंधुरमधिरूढः प्रौढभरपुण्यः ॥६८॥ उदंड-



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०सधा  
चारविधौ  
॥१५८॥

पुडरीकेण लक्ष्यमाणः सुदूरतोऽपि जनैः । सुरसिंधुमलिलनिर्मलचलचामरवीज्यमानतनुः ॥ ६९ ॥ उन्नमितदक्षिणरैर्मगधगणैः  
पल्लयमानरिपुविजयः । परितः प्रसुमरहरिकरिरथभटसकृद्वितनृपमार्गः ॥ ७० ॥ मधुमधुरस्वरसुंदरगायनजनगीयमानकीर्तिभरः ।  
श्रीपेणनराधीशो युगादिदेवस्य चैत्यमगात् ॥ ७१ ॥ चतुर्भिः कलापकं ॥ वीक्ष्य जिनत्रिमुमुक्षु चामरच्छत्रखड्गमुकुटगनान् ।  
श्रद्धालुमारपरिकरसहितो विहितोत्तरासंगः ॥ ७२ ॥ विधिना जिनमदनातः प्रविश्य सपूज्य भगवतः प्रतिमाम् । एकाग्रमना नृपति-  
देवानभिषंदते यावत् ॥ ७३ ॥ श्रावकवेपास्तावत् कैऽपि नरास्तत्र कथमपि समेत्य । अकृपाः कृपाणिक्राया घातं राजानमभि मुमुक्षुः  
॥ ७४ ॥ विविशुद्धचैत्यचंदनविधानतत्परनरेन्द्रवासनया । रजितमनसा शासनदेव्या ते स्तमिताः सर्वे ॥ ७५ ॥ अथ किमिदं किमि-  
दमिति प्रभणंस्तत्रागमजनः सर्वैः । नृपतिरपि पलङ्गुग्रीवस्तथाश्रितास्तान्निरीक्षिष्ट ॥ ७६ ॥ अभयप्रदानपूर्वं नृपपृष्टस्तेऽभणन् यथा  
देव ॥ भवतो घाताय वयं प्रहिता विक्रमनरेद्रेण ॥ ७७ ॥ धिक् कथमदयं त्वा नृपतिलक ! निहतुं समुद्यताः पापाः । इति मन्मनमः  
सर्वे ते द्रुतमुचंभिता देव्या ॥ ७८ ॥ अथ नृपतिरप्रदर्शितप्रदनविकारः स्वयाममागत्य । तानानाद्य यथोचितकृतसत्कारान् विसृज्य  
ततः ॥ ७९ ॥ दध्यावभिमरतस्करत्रिपधरजलमलादिरोधाद्यैः । बह्वन्तं कैरतं न नीयते जीवितं यावत् । ८० ॥ तावद् विमुक्तसंगै-  
रङ्गीकृतचरणगुणगणैर्भव्यैः । सज्जानाधिगमपरैस्तुर्यपुमर्थाय यतितव्यम् ॥ ८१ ॥ इति चिंतयतो नृपतेः मत्वरमुद्यानपालका एत्य ।  
श्रीभुवनभानुसुगुरोरागमनमचीरुथल्लुचैः ॥ ८२ ॥ श्रुत्वेति नृपस्तेभ्यो दद्या दानं सुतादिपरिकलितः । गत्या नत्वा च गुरुन्  
अश्रुणोदिति देशना सम्यक् ॥ ८३ ॥ “यावन्न जरा न रुजा न विघ्नसंघो न चेन्द्रिये हानिः । तावदलममलमतिना स्पृहितकृतावु-  
द्यमः कार्यः ॥ ८४ ॥” इत्याकर्ण्य सकर्णः क्षितिपः पुत्रं सुलोचनं राज्ये । कृत्वा जगृहे दीक्षां पार्श्वे श्रीभुवनभानुगुरोः ॥ ८५ ॥ श्रीपेण-

श्रीपतिश्री-  
पेणवृत्तम्

॥१५८॥

मुनिः सुचिरं परिपालितनिरतिचारचारित्रः । निष्ठागिताष्टकर्मा स्थानकमपुनर्भवं प्राप ॥ ८६ ॥ विहितयथाविधगृहमेधिधर्मकः  
श्रीपतिः पुनः श्रेष्ठी । अभ्यगमत् प्रथमदिवं क्रमाद्गमिष्यति ततः स शिवम् ॥ ८७ ॥ धुद्रोपद्रवविद्रवेहितफलान्याकर्ण्य भूमीभृतः,  
श्रीपेणस्य जिनानिति प्रणमतः स श्रीपतिश्रेष्ठिनः । द्विः पंचाभिगमादिशुद्धविधिना श्रीअर्हतां वंदने, सर्वत्राभ्युदयप्रदायिनि जना !  
यत्नं कुरुष्वं सदा ॥ ८८ ॥ इति अभिगमपंचके श्रीपेणनरेन्द्रश्रीपतिश्रेष्ठिकथा ॥ सिद्धान्तोदधितोऽधिगम्य सुगुरोः श्रुत्वा  
सदास्नायतोऽविच्छिन्नागतसत्क्रियाक्रमविधेः सम्यक् समासाद्य च । संघाचारविधौ हि चैत्यनमनाख्याद्याधिकारेऽर्हतां, चैत्यादि-  
प्रविवेशवर्णनपरः प्रस्ताव आद्यः स्मृतः ॥ १ ॥ इति श्रीदेवेन्द्रसूरिशिष्यमहोपाध्यायश्रीधर्मकीर्तिसमुत्कीर्तिते श्री-  
सङ्घाचारनाम्नि चैत्यवन्दनादिविवरणे चैत्यवन्दनाभिधानप्रथमाधिकारे चैत्यप्रवेशादिविधिवर्णनो नाम प्रथमः  
प्रस्तावः समर्थितः ॥

ॐ नमः प्रावचनिकेभ्यः ॥ प्ररूपितमभिगमपंचकमिति द्वितीयं द्वारं, तत्प्ररूपणेन च प्रदर्शितो जिनभुवनादिप्रवेशविधिः,  
संप्रति चैत्यवन्दनाकरणविधिरुच्यते, तत्र यैर्यद्द्विसंख्यैश्चैत्यवन्दना विधेया तत्प्रतिपादनाय तृतीयं 'तिदिसी'ति द्वारं गाथापूर्वाद्धिनाह-  
वंदन्ति जिणे दाहिणादिसिद्धिया पुरिस वामदिसि नारी ।

वंदन्ते-स्तुवंति प्रणमन्ति च जिनान्-जिनप्रतिमाः दक्षिणदिशि-मूलबिंबदक्षिणादिभागस्थिताः पुरुषाः, पुरुषप्रधानत्वात् धर्मस्य,  
तथा वामदिशि-मूलबिंबवामदिग्भागे स्थिता नार्यो, वंदन्ते जिनानित्यत्रापि योज्यमिति नैसर्गिको विधिः ॥ विधिप्रधानमेव च

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१६०॥

विधीयमानं सर्वमपि चैत्यवन्दनवदनकादिधर्मानुष्ठानं महाफलं भवेद्, अन्यथा सातिचारतया श्रीदत्ताया इव कदाचिदनर्धमपि जनयेत्, आह च—“धर्मानुष्ठानवैतथ्यात्, प्रत्यपायो महान् भवेत् । रौद्रदुःखौघजनको, दुष्प्रयुक्तादिवौषघा ॥१॥”दिति, अत एवाविधिनाऽस्य विधाने सातिचारत्वात् प्रायश्चित्तमप्युक्तमागमे, तथा च महानिशीथसप्तमाध्ययनसूत्रं ‘अविहीए चेइयाइ वंदिजा तस्स णं पायच्छित्तं उवइसिज्ज, जओ अविहीए चेइयाइ वंदमाणो अन्नेसिं असद्धं जणेइ इइ काळणं” इदमेव चावैतथ्येन विशुद्धधर्मानुष्ठानकरणं श्रद्धालोर्लक्षणं, तथा—विहिसारं चिअ सेवइ (सिद्धान्ता) सत्तिमं अणुट्ठाणं । दवाइदोसनिहओवि पक्खवायं वहइ तंमि ॥१॥त्ति, ललितविस्तरायामप्युक्तं—‘एवं हि कुर्वता आराधितं वचनं, बहुमतो लोकनाथः, परित्यक्ता लोकहेरिः, अगीकृता लोकोत्तरप्रवृत्तिः, समासादिता धर्मचारितेति, अतोऽन्यथा विपर्ययः, आलोचनीयमिदं सूक्ष्मधियामेव, शास्त्रोक्तमुपदेशमुल्लंघ्य पुरुषमात्रप्रवृत्तोऽपरो न हिताप्त्युपायः स्यात्’ ननु तर्हि चैत्यवन्दनादिविधरपपादो गतानुगतिकरूपः स्यात्, नैवं, यत उक्तं ‘अपपादोऽपि सूत्रानावाधया गुरुलाघवालोचनपरोऽधिकदोपनिवृत्त्या शुभः शुभानुवंधी महासत्त्वासेवित उत्सर्गभेद एव । उत्सर्गस्थानापन्नत्वेनोत्सर्गफलहेतुत्वात्, यदागमः—उन्नयमविक्रव निन्नस्स पसिद्धी उन्नयस्स निन्नं व । इय अच्चुन्नाविक्रवा उस्सग्गववाय दो तुल्ला ॥ १ ॥ अत एवोक्तं—“अविहिक्रया वरमकयं असूयवयणं भगंति समयन्नु । पायच्छित्तं अकए गुरुयं वितहे कए लहुयं ॥१॥” न पुनः सूत्र एव वाधया, गुरुलाघवचिन्ताऽभावेन, तद्धि परमगुरुलाघवकारिक्षुद्रसत्त्वविजृम्भितं संसार-श्रोतसि कुशकाशावलंबनप्रायमहितमिति भाव्यं सर्वथा, निरूपणीयं प्रवचनगामीर्यं, यतितव्यं उत्तमनिदर्शनेष्विति श्रेयोमार्गः” ॥ श्रीदत्ता कथा पुनरेवं—

चैत्यवन्द  
नदिश

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥१६१॥

अत्थिह पुष्विदेहे विजए रमणिजए विअडुनगे । सिचमंदिरं पुरवरं कित्तिधरो तत्थ खयरनिवो ॥ १ ॥ तस्म सुओ  
दमिआरी जाओ देवीइ अनिलवेगाए । गयवसहकलसतिसुमिणसुइयपडिवासुदेवत्तो ॥ २ ॥ कइआ सुयस्स रअं दाऊणं गंतु  
अन्नविजयंमि । सिरिसंतिजिणसमीवे कित्तिधरो गिण्हई दिक्खं ॥३॥ अह नमियखयरनखरचको चक्काणुगो पसाहेइ । दमि-  
आरी पडिविण्ह तं विजयडुं सवेयडुं ॥ ४ ॥ दमिआरिनिवस्स इओ मयरादेवीइ अश्रया जाया । नामेणं कणगसिरी सकंति-  
णिज्जिणिअकणगसिरी ॥५॥ कइआ नहसा सहसा नारयमितं निएवि दमिआरी । अब्भुद्धिय सकारिय तमासणाईहिं पुच्छेइ ॥६॥  
मुणि ! किं दिट्ठमपुव्वं अच्छरिअं कत्थवित्ति भणइ मुणी । निव ! सग्गेऽवि असंभवि दिट्ठं अजेव तं इकं ॥७॥ रत्ता कहिंति वुत्ते  
पुण भणइ मुणी सुभापुरीइ इहं । संति निवा अपराइअअणंतविरिआ महाविरिआ ॥८॥ ताणऽग्गे किअंतं नट्टं वव्वरिचिलाइ-  
चेडीहिं । मणनयणाणंदयरं दिट्ठं से दिसिअणयणफलं ॥९॥ जह सोहम्मे सको तह विजयडुंमि तमिह भूसको । अच्छरिअभूयव-  
त्थूण भायणं होइ नहु अन्नो ॥१०॥ अघिय--तेणं नट्टेण विणा किं निव ! रत्ताईणावि अवरणे । इअ भणिउं उप्पइउंनहसा सहसा  
गओ स रिसी ॥११॥ अह दमिआरी दयं आइसई सुभपुरीइ सो गंतुं । पभणइ ते अपराइअअणंतविरिआओ वलविण्ह ॥१२॥  
भो इह जमब्भुअ वत्थु होइ दमिआरिणे तयं नूणं । पेसह चेडीरयणाणिमाणि ता रायरायस्स ॥१३॥ “सहसा विदधीत न  
क्रियामविवेकः परमापदां पदम् । वृणते हि विमृश्यकारिणं, गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः ॥१४॥” इअ आलोइअ अचिरा  
चेडीओ पेसिमोत्ति ते हुत्तो । गंतुं दूओ साहइ पडिहरिणो सिद्धमिव कअं ॥१५॥ अह निसि ते वलविण्ह भणिआ पन्नत्तिपमुहविजाहिं ।  
पुष्वभवसाहियामो सिद्धासयमेव भे इण्हि ॥१६॥ तो ते जाव सहरिसा गोसे पूयंति ताओ विजाओ । तो दमियारिस्स पुणो पत्तो

श्रीदत्ता-  
कथा

॥१६१॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१६२॥

दूओ भणइ एवं ॥१७॥ भो निल्लजा नऽत्रवि पेसह चेडीउ ताउ नियपहुणो । बलिणा समं विरोहं कुणमाणा मा विणस्सेह ॥१८॥  
यतः—“अनुचितकम्मरिंभः प्रकृतिविरोधो बलीयसा स्पर्द्धा । प्रभुवचनेऽपि विमर्शो मृत्योर्द्वाराणि चत्वारि  
॥ १९ ॥” सामेण तेहिं भणियं नणु दमिआरिस्स सन्वमवि देयं । जइ चेडीहि विभूसइ ता गच्छऽजेव गहिय इमा ॥ २० ॥  
इय भणिय दाउ दूयस्स मंदिरं तो दुवेविए बंधू । सामरिसा दिट्ठवो सो दमिआरिच्चि मंतन्ति ॥ २१ ॥ कुलमंतिसु रज्जभरं  
आरोविअ काउ चेडिरूवं तो । सह दूएण गया ते दुन्निवि दमियारिनिवपासे ॥ २२ ॥ संभासिअ तेषुचिअं मायाचेडीउ ताउ  
भणियाओ । कणयसिरिं मह धूयं वरनट्टेणं रमावेह ॥२३॥ आमंति भणिय ताओ गंतुं तीए पुणो अभिनयंति । वरनट्टं तस्सग्गे  
अणंतविरियं च गायंती ॥२४॥ कणगसिरी भणइ हला गिज्जइ पुरिसुत्तमो इमो को णु ? । कहइ परा इय चेडी मयच्छि ! इह  
अत्थि सुभनयरी ॥ २५ ॥ तत्थासि थिमियसागररण्णो अपराजिओत्ति जिट्ठसुओ । गय १ वसह २ ससी ३ सागर ४ चउ-  
सुमिणयसइयवलत्तो ॥२६॥ सिरि १ हरि २ रवि ३ घड ४ रयणो ५ जलहि ६ सिहि ७ सुमिणसइयहरित्तो । वीओ सुओ  
अवीओ गुणेहि सेऽणंतविरिउत्ति ॥२७॥ नियरूवविजियमारो कयरिउमारो थिरत्तगिरिसारो । लच्छी इव सागरो जह भुवि अन्नो  
तारिसो नत्थि ॥२८॥ इअ सोउ पुलइआ सा साहइ नारी पुरीइ सा धन्ना । सो जीइ पहु अहमवि तं पासिस्सं नणु कयावि ॥२९॥  
आह बलो तो विजाइ तं इहाणेमि सुयणु ! सा भणई । लहु पसिअ कुणसु एवं तो ते पयडंति निअरूवं ॥ ३० ॥ सा दट्ठुणं-  
तविरिअं जंपइ निअसेविगाइ आइसह । भणइ हरी ता उट्टह सुभगे ! जामो सुभं नयरिं ॥३१॥ भणइ कुमरीवि पभवह पाणाण  
व किंतु मह पिआ काही । विजाबलिओऽणत्थं तुम्हं न निएमि निरवायं ॥३२॥ मा वीहि भीरु कयरो सो तुज्ज पिआ इहऽम्ह

श्रीदत्ता-  
क

॥१६२

पुरउत्ति । भणिआ कुमरी हरिणा रइअं सुविमाणमारुहइ ॥ ३३ ॥ अह ठाउ हरी गयणे भणेइ दमिआरिपमुहननिवहा ! । भो  
 मुणहऽणंतविरिओ भायजुओ नेइ कणयसिरिं ॥३४॥ मा भणिहिह निरभूयं चोरित्त गयत्ति होउ सत्थधरा । लहु एह मोयह इमं  
 नियह ससत्ति उवैहह मा ॥३५॥ इय घोसिय ते चलिया सपुरिं पइ तं च सोउ दमियारी । आरागहिउव गओ कोउजुओ सयलवलकलिओ  
 ॥३६॥ चलिओ सिं पिट्टीए कोऽयं महिगोयरोत्ति भणमाणो । अह तेसि तया जायाणि सीरधणुहाइं रयणाणि ॥ ३७ ॥ तो विजाइ रएउं  
 दुगुणवलं ते ठिया चलियऽमिमुहा । भग्गं तेहिं परवलं दमियारी जुज्झइ मयं तो ॥३८॥ सरियागए उ चके भणइ हरे! रे मरिस्ससि इहं  
 तो । अज्जवि मह धूयं मुत्तु जाहि दुब्बुद्धि ! मुक्कोसि ॥३९॥ पाणेऽवि तुह सुयंपिय गहिय गमिस्संति स भणिओ हरिणा । मुंचइ चकं  
 तत्तुंवाहओ मुच्छिओ विण्हू ॥४०॥ बलवीरिओ पुणुद्धिय तं चकं पासगा गहिय भणइ । दमियारि ! जाहि अज्जवि कणयसिरि-  
 पियत्ति मुक्कोसि ॥४१॥ दमियारी भणइ अरे ववहरियधणेण धणवमवमण्णे । लहु मुंच इमं चकं सपोरिसं वावि मा मरसु ॥४२॥  
 अह तच्चकेण हरी पडिविण्हूसिरं लुणेइ कुदो तो । उप्पणो विण्हू इय भणिया कुसुमे किरंति सुरा ॥ ४३ ॥ तो नभिरनिरइनिवहा  
 सपुरिं पइ गच्छिरा बलहरी ते । कणयसिरिस्स समीवे पत्ता खयरेहिं इय बुत्ता ॥४४॥ मा पहु आसायणमिह करेह जिणचेइआणि  
 संति जओ । ताणि उ जहाविहीए वंदिय गच्छंतु पहुपाया ॥ ४५ ॥ तो हरिसविअसियमुहा सपरिरुरा ते नहाउ ओयरिउं ।  
 मत्तीइ चेइआइं ण्हवंति पूयंति पणमंति ॥४६॥ वरिसोववासपडिमं तह कित्तिधरं नियंति तत्थ मुणिं । अमरेहि महिज्जंतं तक्कालुप्प-  
 न्नररनाणं ॥४७॥ तं दटठु सुदटठु तुट्ठा तिपयाहिणपुत्तयं नमिय नाणिं । निसियंति उच्चियठाणे तो भयवं कहइ इय धम्मं ॥४८॥  
 “इह निब्बुइपरमंगाणि जंतुणो दुल्लहाणि चत्तारि । मणुपत्तं धम्मसुइं सद्धानं संजमे विरियं ॥ ४९ ॥ चुलसीइलक्खजोणिसु बहु-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१६४॥

कुलकोडीसु भमिय कहवि जिओ । इह लहइ माणुसत्तं सुदेससुकुलाइसुपवित्तं ॥५०॥ तत्थवि कुतित्थवहुले लोए दुलहा विसुद्ध-  
धम्मसुई । जीइ अहिंसगधम्मं पडिवज्जिय तरइ भवजलहिं ॥५१॥ धम्मसुवि दुल्लहा तत्तरुई मिच्छत्तसेवए लोए । जं नेयाउयमग्गा  
वहवे भस्संति मूढमई ॥५२॥ सदहणेऽविहु धम्मस्स फासया दुल्लहा उ काएण । कामगुणमुच्छिया जं विरमंति जिया न पावाओ  
॥५३॥ जो उ मणुयत्तपत्तो सुद्धं धम्मं सुणित्तु सदहिउं । जहविहिणा उ अणुट्ठइ सो इह लहु धुणइ कम्मरयं ॥५४॥ ता धम्मा-  
णुट्ठाणे करेह जत्तं सया विहिपहाणे । धारेह सुद्धभावं भविआ ! वज्जेह वितहभावं ॥ ५५ ॥ जं विहियमणुट्ठाणे वितहत्तं कुणइ  
दंसणं समलं । समले तंमि तवनियमवयगुणा हुंति न बहुफला ॥५६॥ किंच-धम्मगयं वितहत्तं थोवंपि विसं व हणइ सुहनिचयं ।  
वडेइ दोसजालं जणेइ बहुऽणत्थवित्थारं ॥ ५७ ॥ उक्तं च-“धर्मानुष्ठानवैतथ्यात्, प्रत्यपायो महान् भवेत् । रौद्र-  
दुःस्वौघजननो, दुष्प्रयुक्तादिवौपधात् ॥५८॥” अह पुच्छइ कणयसिरी भयवं ! किं मे पुराकयं कम्मं । पत्तामि जेणऽणत्थं  
इय पियवहवंधुविहराई ॥५९॥ भणइ मुणी पुण भदे ! धायइसंडस्स पुव्वभरहंमि । संखउरनामगामे स्मिरिदत्ता इत्थिया आसी  
॥६०॥ सा आजम्मदरिदा जीवइ कारुण परगिहे कम्मं । रंधणखंडणपीसणगिहलिंपणवारिवहणाई ॥ ६१ ॥ परगिहकम्मअभावा  
कयाइ सा कट्टकारणेण गया । स्मिरिपच्चयंमि सेले सच्चजसं नियइ तत्थ मुणिं ॥ ६२ ॥ तो सा चिंतइ जाणामि जम्मभिगमप्पणो  
सचरिएहिं । न कयं सुकयं पुवं तेण इहं दुक्खिया जाया ॥६३॥ सइदुकम्मनिदड्ढाइ मे न थोवंपि इह कयं सुकयं । ता परभवेऽवि  
मज्झं दुहमेव हि केवलं होही ॥ ६४ ॥ आजम्मउयरपूरणचित्ताइ मयाइ मंदभग्गाए । भवकोडिदुल्लहं हारियं हहा माणुसं जम्मं  
॥६५॥ ता अज्जवि मुणिमेयं नमिउं सोउं च एयउवएसं । सहलीकरेमि जम्मं निएवि तह एयमुहकमलं ॥ ६६ ॥ इय चित्तिय

श्रीदत्ता  
व

॥१६४॥

सा गंतुं तत्थ मुणिं तं नमेइ तेण पुणो । दिअंभि धम्मलाहे हरिसियदियया भणइ एवं ॥६७॥ जइवि अजुग्गा भयवं ! निअग्गाऽहं  
 तहवि किंपि उवइसह । जेणं न होमि पुणरवि भवंनरे एरिसी दुहिया ॥६८॥ तो तीइ जुग्गयं सो वियारिउं धम्मचक्कवालतवं ।  
 उवइसइ चिइवंदणविहाणपुच्चं सयलसुहयं ॥६९॥ तह तेणुत्तं भदे ! इय धम्मं तुइ सयावि साहीणं । विहीणा साहंतीए होही  
 दुहमेरिसं न पुणो ॥७०॥ तो सिरिदत्ता इत्थं पमणिय नमिउं मुणिं गया सगिहं । विहिणा वंदिअ देवे आरंभइ तं तवं काउं ॥७१॥  
 तहिं कुणइ अट्टमदुगं पढमं तो सत्ततीस उववासे । अह तप्पभावओ सा सुभोयणं लहइ पारणए ॥७२॥ तवचिइवंदणनिरयत्ति तीइ तह  
 देइ अडुसइदजणो । वरवत्थाणि तहा कम्मवेयणं दुगुणतिगुणंपि ॥७३॥ कइयाइ पडियनियघरकुट्टेगपएसओ बहुदविणं । सा लहइ  
 तेण कुणई उज्जवणं तस्स सुतवस्स ॥ ७४ ॥ तवअंतपारणदिणे दिसावलोयं विहेइ जा ताव । मासक्खवणकिसंगं सुवयसाहुं  
 नियइ इंतं ॥७५॥ हरिसंसुपुन्ननयणा तं पडिलाहइ तओ गए तंभि । धअंमन्ना मुणिदत्तसेसभत्तेण पारेइ ॥ ७६ ॥ अह सा गंतुं  
 सुवपसाहुं नमिउं गहेवि गिहिधम्मं । दंसणमूलं पालइ किच्चियकालं निरइयारं ॥ ७७ ॥ कइयाइ कम्मवसओ चिंतइ जिणयम्म-  
 फलमिइप्पवरं । जं गिजइ किं तु तयं सचं होही ममवि एवं ? ॥७८॥ नअइ न किंपि तह इह पयाहिणादिसु गहाइभमणफलं ।  
 सुवति य बहुत्तामन्नवंदणा लद्धपवरफला ॥७९॥ इच्चाइ विचिगिच्छा जं जाया तीइ तारिसे सक्खं । दिट्ठेऽवि ह्नु धम्मफले तदहो  
 भवियवया यलिया ॥८०॥ ततो सिट्ठिलियधम्मा विहिकरणअणायरा य सा कइया । सोउं सघजस्तमुणिं समागयं वंदिउं चलिया  
 ॥८१॥ दइदु विमाणारूढं खयरदुगं अंतरे तओ चलिउं । जायणुरागा वररूवमोहिया सा गया सगिहे ॥८२॥ णालोइयपडिकंता  
 गा गरिउं फणयसिरी तुमं जाया । पियमरणबंधुविरहाइ पाविया तेण दोसेण ॥८३॥ यदागमः—“जह चेव उ सुक्खफला



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१६६॥

आणा आराहिया जिणिंदाणं । संसारदुक्खफलया तह चेव विराहिया होइ ॥ ८४ ॥” इय मुणिउं कणगसिरी  
विण्हुं पइ भणइ जहा जले नावा । छिड्ढेणऽप्पेणवि दुक्कएणवि तह जिओऽवि भवे ॥८५॥ अप्पेणवि दुक्कएणं जइ एवं लब्भए दुइं  
दुसहं । ता सयलदुकयखाणीहि मह अलं कामभोगेहिं ॥ ८६ ॥ सामि ! पसीय दयावह मह दिक्खं सयलदोसखयदक्खं ।  
वीहेमिमाउ भवस्खसाउ एरिसल्लपराउ ॥८७॥ भणइ हरी होउ इमं सुयणु ! परं इण्हि मुहपुरिं जामो । तत्थ संगंपहजिण-  
वरपासे दिक्खं गहिज्ज तुमं ॥ ८८ ॥ एवंति तीइ बुत्ते तो पत्तो सुभपुरीइ नमिय मुणिं । विजयन्न निवेहिं तओ अहिसिच्चो  
अद्धचक्किचं ॥ ८९ ॥ अन्नदिणे तत्थागयसयंपहजिणंतियंमि कणयसिरी । गिण्हइ दिक्खं वलविण्हुविहियनिक्खमणवरमहिमा  
॥ ९० ॥ कणगावलिमुत्तावलिरयणावलिभद्दपमुह विविहतवो । विहिणा उ तवेमाणा धम्माणुट्टाणविहिनिरया ॥९१॥ उप्पन्नना-  
परयणा वरदंसणदिट्ठसयलवत्थुगणा । सा कणयसिरी सिद्धा अणंतसुहवीरियसमिद्धा ॥९२॥ भो भो भव्या भव्यभावप्रधानाः,  
श्रीदत्ताया वृत्तमेतन्निश्चय । मा वैतथ्यं स्वल्पमप्यत्र घत्तानुष्ठाने श्रीतीर्थकृद्वंदनादौ ॥९३॥ इति श्रीदत्ताकथा ॥ इत्युक्तं द्विदिशि  
इति तृतीयं द्वारं, संप्रति द्विदिक्स्थितैरपि मूलविंशस्य कियत्यग्रहात् देवा वंदनीया इत्याशंकायां चतुर्थमवग्रहद्वारं गाथोत्तरार्द्धेनाह-  
नवकर जहन्नु सट्टिकर जिट्ठु मज्जुग्गहो सेसो ॥ २२ ॥

मूलविंशत् नव हस्तान् जघन्यो-जघन्योऽवग्रहः, जघन्यतोऽपि उच्छ्वासनिश्वासादिजनिताशातनापरिहाराय नवहस्तवहिःस्थितैः  
देववंदना कार्या, षष्टिश्च हस्तान् ज्येष्ठ-उत्कृष्टोऽवग्रहः, तत्परतः उपयोगासंभवात्, मध्ये-मध्यमे शेषो नवकरेभ्य ऊर्ध्वं षष्टेश्चार्वाग्  
अवग्रहो मूलविंशवंदनाम्यानाम्यंतरालभूभाग इति ॥ अन्यैः पुनर्द्वादशभेदोऽयमुक्तो । तथा च पंचस्थानकेऽभिहितं—उक्तोस

श्रीदत्त  
कथ

॥१६६॥

सद्वि१ पंनार चत्तारे तीसा४ दसद्व५ पणदसगंद । दस७ नव८ति९ दु१०एग११द्वं१२ जिणुग्गहं वारसविभेयं॥१॥ति, एतावता चार्धहस्तादारम्य पट्टिहस्तेभ्यश्चार्वाक गृहचैत्ये चैत्यगृहे वा यथा जिनचिं वस्याशातना न भवति तथा यथासमयमवग्रहचहिःस्थितै- रमिततेजःखेचरेश्वरवद् देववंदना कार्या इत्युक्तं भवति । अमिततेजःखेचरेश्वरदृष्टांतश्चायम्—अत्थिह भरहे वेयद्वपव्यओ पवरपुरनिहो जो उ । वरराजओ सुखयरो सेणिजुओ देवउलकलिओ ॥ १ ॥ दाहिणसेदीएँ तहिं रहनेउरचक्कवालपुरमत्थि । जं च दुहाविहु सुसरणसुमालसुपरिहसुरमणीयं ॥२॥ तत्थऽत्थि अपरिमियनिययतेयअंतरियतिमिररिउतेओ । नमिरमिरखयरनियरो खेयरराया अमियतेओ ॥३॥ जो उ दुहावि सुधम्मो सुकरो सुगओ सुआमओ सुचलो । वरकंतो वरवासो वरचरणयणो पवरचरणो॥४॥ पोयणपुराहिवस्स उ सिरिविजयनिवस्स तेण परिणीआ । जोइप्पहाभिहाणा भइणी रयणीरमणवयणा ॥५॥ सिरिविज- यनिवइणा पुण तस्स सुतारा सुतारतारच्छी । भइणी परिणीया इय परुप्परं तेसि पडिबंधो ॥६॥ कइआ सिरिविजयनिवो कीलेउ गओ समं सुताराए । जोइवणं नाम वणं ससावयं जं जिणगिहं च ॥७॥ कज्जलकसिणखुरग्गो मरगयसिं गो सुवन्नसरिसंगो । अह तेहिं तत्थ चंगो दिट्ठो एगो वरकुरंगो ॥८॥ नीलुप्पलदलनयणं तं तरलविलोयणं निएवि निवं । भणइ सुतारा कीलणकए इमं गिण्ह मह नाह ! ॥९॥ तन्नेहमोहिअमई महणत्थं तस्म जा निवो चलिओ । ता जाओ स कुरंगो रंगायरिउव बहुभंगो ॥१०॥ कत्थइ आसन्नगमेण कत्थइ अंतरिअदुमठिएण तओ । कत्थविय गयणगमणेण तेण नीओ निवो दूरं ॥११॥ अह एहि एहि लहु नाह ! अहो अहं कुक्कुडाहिणा डका । अकंदरवं इय सवणदुस्सवं सुणइ सिरिविजओ ॥१२॥ तो झत्ति कुरंगच्छीकए कुरंगं विमुत्तु सो वलिओ । जं संतेच्चिय कुसले कुसला लाहं अहिलसंति ॥१३॥ रण्णा पउंजिअं दिट्ठपचयं मंततंतमणिमाई । तीए जायं विहलं

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संथा  
चारविधौ  
॥१६८॥

वरंपि दाणं जह अपत्ते ॥१४॥ सुमिलाणवयणनयणा अह विहडियसंधिबंधणा धणिअं । थरथरहरंतगत्ता देवी पंचत्तमणुपत्ता ॥१५॥  
तं निच्चिट्ठं ददत्तुं राया मुद्दुधुब सुदत्तु पलवित्ता । चित्तइ पाणेहिं कयं इमीइ पाणप्पियाइ विणा ॥१६॥ ता दारुभारनिचियं चियं  
निवो सह इमीइ आरुहिउं । जालेइ सयं जलणं जलिरुज्जलविरहजलणोऽवि ॥ १७ ॥ अह दिव्वयत्थजुअला विलुलंतसकुंडला य  
गयणयला । ओयरिया खयरा दुन्नि झत्ति घोलंतलंकारा ॥१८॥ तत्थेगेणं विज्जानिमंतियजलेण जा चिया सिता । उप्पइय गया  
देवी विमुत्तु अट्टट्टहासं ता ॥१९॥ तो विम्हियहियएणं निवेण भणियं अहो अहो किमिणं ? । जंपंति जोडियकरा ते खयरा जह  
पहु ! सुणेहि ॥२०॥ सिरिअमियतेयविजाहराहिरायस्स दोऽवि पियपुत्ता । संभिन्नसोयदीवसिहनामया मो निमित्तविऊ ॥२१॥  
जा अज्जवि दो अम्हे समागया इत्थ कीलणनिमित्तं । ता सुणिमो करुणसरं गयणे एगाइ इत्थीए ॥२२॥ हा नाह ! नाह ! सिरि-  
विजयराय हा हा सयंपहे अंमो ! । हा अमियतेयखयरिंदभाय महवीर मह वीर ॥२३॥ अहह अणाहव्य ममं हरेइ खयराहमो इमो  
कोऽवि । ता एह एह मोयह इमाउ पावाउ मं झत्ति ॥२४॥ नाउ नियं नाह ! भइणिं तो रे रे ठाहि ठाहि इय भणिरा । तप्पुट्ठि  
लग्गा मो कड्डियसुककालकरवाला ॥२५॥ णे ददत्तु असणिघोसो भणिओ रे खेयराहम ! अणज्ज । पुरिसो हवेसु सत्थं करेसु इंत  
णु विणट्ठोसि ॥ २६ ॥ ता देवीए भणिया पुज्जइ कजेण जाह जोइयणं । चइहि वेयालिणिविज्जमोहिओ मा पहु पाणे ॥ २७ ॥  
पत्तेहिं तयणु लहु इह मयदेवीरूवधारिणीइ तुमे । वेयालिणीइ सहिया दिट्ठा जलियानलपविट्ठा ॥२८॥ पच्चक्खं चिय सेसं तुम्भं  
इय सोउ जा निवो अहियं । जाओ दुहिओ ता तेहिं पभणिओ मा पहु ! विसीय ॥२९॥ जं कित्तियमित्तो सो तुम्हाणं अग्गओ  
असणिघोसो । गम्मउ परं वियडे पुरइ-जमम्हं इय निमित्तं ॥३०॥ तो तेहिं तत्थ नीओ नायपबंधेण अमियतेएणं । संभासिओ

अमिततेजः  
कथा

य संमाणिजो य गुरुगतरवेण तओ ॥ ३१ ॥ अह रस्सिवेगपमुहेहिं पंचनियसुयसएहिं बल्लिएहिं । अणवज्जविज्जविजाहरेहिं  
इयरेहिं तह महिओ ॥ ३२ ॥ सत्थापरणिं तह दाउ वंधणिं भोयणिं च महविजं । सिरिविजओऽमियतेएण पेसिओ असणिघोसुवरिं  
॥ ३३ ॥ हिमवंतनगे उ सयं गओ सहसरस्सिणा सुएण समं । साहेउ महाजालं विजं परविज्जयेकरिं ॥ ३४ ॥ मासियमत्तेण तहिं  
धरणस्म जयंतकेवलिस्स तहा । पडिमाण पुरो चउदिसि ठिओ स सगराइयं पडिमं ॥ ३५ ॥ इय विजं साहंतं निपपियरं रक्खए  
महसरस्सी । एवं च ताण मासो संजाओ तत्थ किंचूणो ॥ ३६ ॥ अह सिरिविजओ राया तुरियं गंतूण चमरचंचाए । बहि आवा-  
सिय पेसइ दूयं मज्झंमि मारीचिं ॥ ३७ ॥ तेण इय अमणिघोसो भणिओ नरवर ! तुमे जइवि देवी । अन्नाणओ अवहिया वंपिय  
सिरिविजयनिरसीहं ॥ ३८ ॥ तहवि हु सा अप्पिज्जउ देवी अम्हाण सयणविचीए । नहु सयणस्स अणत्थो उवेक्खियघो उ अम्हेहिं  
अह फुरियगरुयरोसोऽसणिघोसो भणइ दूय ! रे नूनं । जमगेहं गंतुमणो इय वंके तुह पह भणिरो ॥ ४० ॥ ता गच्छ तुच्छ नऽप्पेमि  
कइपि देविं स होउ रणसज्जो । लहु एस एमि इय भणिय ज्जत्ति निक्कासिओ दूओ ॥ ४१ ॥ आगम्म तओ दूओ सव्वं रणो कहेइ  
जा ताव । मुक्कदुमहहुंकारा सुहडा समरुज्जया जाया ॥ ४२ ॥ तहाहि-कोवि नियइ कोदंडं असिदंडं कोऽवि कोऽवि भुयदंडं । कोऽविहु  
दित्तं कुंतं सिद्धं भल्लं व वावल्लं ॥ ४३ ॥ इय सिरिविजयनिरवल्लं ताडिय रणतूरमुट्ठियं जाव । ता पेसइ नियपुत्ते बहुबलजुत्ते असणि-  
घोसो ॥ ४४ ॥ जयलच्छिंछिराइं तत्तो मिलियाइं दुन्निवि बलाइं । उक्खित्तपहरणाइं अञ्जुवं हकमाणाइं ॥ ४५ ॥ साहाविएण विजा-  
कएण ममरेण ताण दुण्ह गओ । जा किंचूणो मासो ता भग्गा असणिघोमसुया ॥ ४६ ॥ नासेइ असणिघोसो अह विज्जबलेण  
अमियतेयणरे । पहरह खणेण सुणेमि जेण भे दप्पमिय भणिरो ॥ ४७ ॥ ददुट्ठमिणं सिरिविजओ दप्पिट्ठो उट्टए इय भणंतो । रे

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१७०॥

जाहि दुष्ट ! पाविष्ट ! धिष्ट निल्लज अज्जवि य ॥४८॥ अन्नह जं मं वंचिय मह दइया अवहिया तए तेण । दुव्विणयफलं दंसेमि  
तुम्भ पुरिसो अरे होसु ॥ ४९ ॥ जइ नियमणियं काहिसि होसि धुवं ता तुमं इहं पुरिसो । इय भणिरोऽसणिघोसो झडत्ति  
सिरिविजयममि चलिओ ॥५०॥ वग्गन्ति दोवि भजंति दोवि हकंति दोऽवि अञ्चुन्नं । पहरंति दोऽवि वंचंति दोऽवि सत्थे अइ-  
समत्था ॥५१॥ अह रुसिय सिरिविजओ खग्गेणाहणिय कुणइ दोखंडं । जा असणिघोसरायं ता जाया दुन्नि ते सहसा ॥५२॥  
रोसेण जा दुहंडइ स तेऽवि जाया तओ य ते चउरो । इय खंडियदुगुणेणं जायाऽसणिघोस बहुप्रहया ॥ ५३ ॥ खंडंतो सिरि-  
विजओ परिसंतो जाव ता अमियतेओ । संसिद्धमहाजालाविओ पत्तो रणे वेगा ॥५४॥ हरिणोव गयकुलं दट्टु नासिरं रिउवलं  
अमियतेओ । भणइ महाजालं न हु दायवमिमस्स नासेउं ॥५५॥ तो तीइ मोहियं तं अल्लीणं सरणममियतेयनिवं । राया उ अस-  
णिघोसो तमागयं नाउ लहु नट्टो ॥५६॥ दूराओऽविहु एसो आणिअवो तए प्रहापावो । इय भणिआ सा विजा पहाविया तस्स  
पिट्ठीए ॥५७॥ तीए पारब्भंतो सरणट्ठी एस ओयरइ जाव । इह दाहिणभरहडे ता पिच्छइ सीमणगसेलं ॥५८॥ तदुवरि सिरिरिस-  
हजिणिंदमंदिरं सुंदरं पुरो तस्स । समवसरणप्पएसे महाज्जयं ज्ञयसहस्सजुअं ॥५९॥ तस्स समीवे चउदसपुव्विस्स बलस्स अयल-  
नामस्स । इगराइयं पडिमट्ठिअस्स केवलनाणमुप्पन्नं ॥६०॥ केवलमहिमं काउं सुरासुरे आगए स दट्टु तहिं । ओयरिओ सरण-  
कए अलिब अयलस्स पयपउमे ॥६१॥ अह नियकज्जअकरणा विलक्खवयणा गया वलिय विजा । जं केवलपरिसाए न वज्जि-  
वज्जस्सधि पवेसो ॥६२॥ अयलवलमहकेवलमरणगए णंमि तीइ कहियम्मि । सिरिअमियतेयराया सहरिसवियसियवयणनयणो  
॥६३॥ सिरिविजयाइसमेओ सीमणगनगंमि ज्ञत्ति संपत्तो । गिण्हिअ तुमं सुतारं इज्जत्ति मरीचिमाइसिउं ॥६४॥ तत्थ सिरि-

अमिततेजः  
कथा

॥१७०॥

सहपडिमं उचिआवग्गदठिओ नमंसित्ता । सिरिअयलं केवल्लिणं अमिबंदित्ता थुणइ एत्तं ॥ ६५ ॥ भयवं ! अयलवल ! तुमं सन्नं  
चिअ इत्थ होसि अयलवलो । विज्जुम्मुहीमुहाओवि रक्खिओ जं असणिघोसो ॥६६॥ अन्नेऽवि अयलकेवल्लिनमणत्थं आगए  
पवरचरणे । अभिनंदणाइचारणमुणिं नमिअ निवसइ तद्धिं सो ॥ ६७ ॥ अह अगणिघोसमाया मारीत्तिमुहाउ अमियतेयगिरा । सोउं  
गहिय सुतारं अप्पइ आगम्म तेसिं तद्धिं ॥६८॥ भणइ इमा मह पासे निम्मलसीला ठिआ तवरयचि । भयवं तु अयलवलभइ  
केवली कहइ इअ धम्मं ॥ ६९ ॥ तथादि—“संसारो दुदहेऊ दुक्खफलो दुसदुपक्खरूतो य । नेहनियलेहिं षट्ठा न चयंति तद्दावि  
सं जीवा ॥७०॥ जह न तरइ आरुद्धिउं पंके रुणो करी थलं कहवि । तह नेहपंकरुणो जीवो नारुहइ धम्मथलं ॥ ७१ ॥ छिउं  
सोसं मलणं मंभं निप्पीलणं च लोयग्गि । जीवा तिला य पिच्छइ पावंति सिणेहपडिपट्ठा ॥ ७२ ॥ थोवोवि जाव नेहो जीवाणं  
सार निन्नुई कथो ? । नेहहरागंभि पाणइ पिच्छइ पइगोवि निवाणं ॥७३॥ दूरुज्झयमज्जाया धम्मचिरुद्धं च जणचिरुद्धं च । किम-  
फज्जं अं जीवा न कुणंति सिणेहमहगहिया ? ॥७४॥” अह भणइ असणिघोसो जयंससिद्धाराये अहं भयवं ! । भामरिविज्जं तादिषु  
सपरचोवपासेण ॥७५॥ चलिओ मि चमरचंचं पइ जोइण्णे विलोइय सुतारं । जाओ नेहो न चणमि जेण गंतुं इमं भुत्तुं ॥७६॥  
येपालिणीय मोहिय सिरिगिज्जं तो मए इमा नेउं । सुक्का माउसमीचे असोहणं किंपि नहु भणिया ॥७७॥ ता किं इमीइ उवरिं  
पइ अइनेहुचि तो भणइ स भुणी । रग्गणपुरे तुज्ज पुरा इमा पिया खशभामास्वी ॥ ७८ ॥ ता पुणभयन्भारा इमीइ विसए  
एत्तं इमो जेहो । इय सोउं मुणिवरणं वेस्सग्गओ असणिघोसो ॥७९॥ खामिय नियमाराहं सिरिविज्जं अमियतेगरागं च । निप-  
पिअग्गुओ गिण्हइ दिक्खं सिरिअयलपयमूले ॥८०॥ अह पुच्छइऽमियतेओ किं भविओऽभविओ वड्हं ? भयवं ! तो भणइ केवली

निव ! मुण संखेवेण नियचरियं ॥८१॥ रयणपुरे आसि तुमं सिरिसेणनिवोऽभिनंदियादइओ । पढमभवे वीए पुण उत्तरकुरु  
नरजुयल आसी ॥८२॥ तथाहि-कविला दिओ अचलगा चउदसविजाविउत्तपयडणओ । रयणपुरे परिणइ सच्चभाममुज्झाइ सबइ  
सुयं ॥८३॥ वरिसंतघणअतिम्मियवसणो नियसत्ति पयडणपरेऽवि । अपडागउत्ति निच्छिय अकुलीणे तंमि विरया सा ॥८४॥ अचला  
गया गयघणा पिहुपंतिठिआ उ धरणिजढसुसुरा । मह कविलादासिसुओ एस उवसइपट्टिअवेओ ॥८५॥ इअ सोउ भिसं विलिया  
सिरिसेणनिवेण कविलओ अप्पं । मोआविउं निवगेहे सीलपरा ठाइ सा उ इओ ॥८६॥ गणिआणंतमइकए जुज्झंते इंदुधिंदुसेण-  
सुए । दट्टुमखमेऽभिनंदिअसिहिनंदियापियजुअंमि निवे ॥८७॥ विमभाविअपउमं जिंघिउं मए सावि मरइ तह काउं । निवसिहि-  
नंदिमिनंदिअभामुत्तरकुरु जुअलआसी ॥८८॥ तो होउ सोहंमनुरा कमेण ते अमियतेयजोइपहा । तह सिरिविजयसुतारा जाया  
अन्नुन्नअणुराया ॥ ८९ ॥ कविलो असच्चभामो सकज्जलग्गो अखीणणेहदसो । दीवुव बहुभव भमिय चमरचंचाइ तं जाओ  
॥९०॥ इअ पुवभवन्भासा इमीइ विसये तुमे इमो नेहो । इअ सोउं मुणिवयणं वेरग्ग गओ असणिघोसो ॥९१॥ निअमवगाहं खामिअ  
सिरिविजयं अमियतेयरायं च । निवनिवहंजुओ गिण्हइ दिक्खं सिरिअयलपयपूले ॥९२॥ अमिततेजाः-पहु भविओ मि१ सुदिट्ठी२ प-  
रित्तसंसारिओ३ सुलहचोही४। आराहओ५ अचरिमो६ इअरो वा१ २मुणनिवाह मुणी ॥९३॥ “सिरिविस्ससेणअइरासुयं मयंकं थुणामि  
संतिजिणं । वारसभवक्कित्तणओ सगणहरं चत्तधणुमाणं ॥९४॥ रयणपुरे आसि तुमं सिरिसेणनिवोऽभिनंदियादइओ । पढमभवे वीए  
पुण उत्तरकुरुजुअलनर दोऽवि ॥ ९५ ॥ तइए सोहम्मसुरा चउत्थए अमियतेअसिरिविजया । इह जाया भे होहिह पंचमए पाणए  
अमरा ॥९६॥ छट्ठे सुभापुरीए अवराइअणंतविरियवलविण्ह । सत्तमए तं अच्चुयइंदो इयरो पढमनरए ॥९७॥ तो उवट्ठिय होउं विज्जा-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१७३॥

हररायगेहनाउत्ति । होही अञ्चुअकप्पे सो तु सामाणिओ देवो ॥९८॥ तं वज्जाउहचकी अट्टमएरणसंचयाइ इमो । सहसाउहो  
तुह सुओ नवमे दो तइअ गेविज्जे ॥९९॥ पुंडरिगिगीइ मावकभायरा मेहरहदढरहत्ति । दममे इकारसमे दोन्निवि देवा उ सवण्ठे  
॥१००॥ चरिगे पंचमचकी संती सोलसजिणो गयउरे तं । चक्काउहुत्ति एसो सुओ गगहरो य तुह पढमो ॥१०१॥ पोससिअ-  
नवमि नाणं तुह भइववहुलसत्तमीचवणं । जिट्टस्स बहुलतेरसि जंमु सावणचउदसीइ वयं ॥१०२॥ एवं देविदमुणिदवंदिओ संति-  
नाहतित्थयरो । ससिहरसधम्मकित्ती भवेसि भवियाण संतिकरो ॥१०३॥ सोउमिय हरिसिया ते इक्किं तत्थ चेइअं काउं ।  
नमिअ मुणिं गिहिधम्मं गहिउं पत्ता सयं ठाणं ॥ १०४ ॥ जिणवरभवणसमीवे पोमहसालाइ पोसहोवगओ । विजाहराण धम्मं  
कहेइ कयावि अमियतेओ ॥१०५॥ भणिअं च-“वंदइ पडिपुच्छइ पज्जुवासई माहुणो सययमेव । पढइ गुणइ सुणेइ अ जणस्स धम्मं  
परिकहेइ ॥१०६॥” अह चारणमुणिजुयलं समदमतवनियमसंजमुज्जुत्तं । गच्छइ गयणयलेणं सासयजिणपडिमनमणत्थं ॥१०७॥  
रययगिरिसिहरसरिसे नरवइभवणंमि अह निएइ तयं । तुंगं अदब्भमरदब्भविब्भमं जिणहरं रंमं ॥१०८॥ तो ज्ञत्ति पहट्टमणं  
जिणनमणत्थं तयं समोसरिअं । तं ददहं अञ्चुट्टिय नमइ निवो सुदहु अइतुट्टो ॥१०९॥ तेजविअ चारणसमगा तो तिकखुत्तो  
पयाहिणं काउं । वंदित्तु जिणवरिंदे विहीइ निवइं भणंति इमं ॥ ११० ॥ उक्तंच वसुदेवहिं डिण्णिकोक्कविंशतितमलंमे-ते चिअ  
चारणसाहू वंदिऊण जिणवरिंदे तिकखुत्तो पयाहिणं च काऊण रायाणं इमं वदासी” “देवाणुप्पिय १-दुलहं मणुपत्तं लहिय इह  
पमायं मा । काहिसि जिणवरधम्मे जम्मजरामरणभयहरणे ॥ ११२ ॥ अविअ-जिणाणं पूअजत्ताए, साहूणं पज्जुमासणे । आव-  
स्सयंमि सज्जाए, उज्जमेज्ज दिणे दिणे ॥११३॥ जओ-कदाचिन्नातंरुः कृपित इव पश्यव्यभिमुखं, विदूरे दारियं चकित्तमिव

अमिततेजः  
कथा

॥१७३॥



धीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१७४॥

नश्यत्यनुदिनम् । विरक्ता कांतेव त्यजति कुगतिः संगमुदयो, न मुंचत्यभ्यणं सुहृदिव जिनाचां रचयतः ॥ ११४ ॥ आरंभाणां  
निशुचिर्द्रविणसफलता संघयात्सल्यमुद्यैर्नैर्मल्यं दर्शनस्य प्रणयिजनहितं जीर्णवैत्यादिकृत्यम् । तीथौन्नत्यप्रभावं जिनवचनकृति-  
स्तीर्थकृत्वकर्मकल्यं, सिद्धेरामन्नभावः सुरनरपदयी तीर्थयात्राफलानि ॥ ११५ ॥ तत्रांभोजप्रकाशं रचयति रविवन्नेमिवहुःखलक्षं,  
स्फूर्जवृक्षं छिनत्ति प्रकटयति लसद्दीपवन्मोक्षमार्गम् । भव्यानां भक्तिभाजां जनयति घनवत् पापनाशाय शान्तिं, साधूनां पर्यु-  
पास्तिर्विषटयति तमःस्तोममिदुप्रभेव ॥ ११६ ॥ सावद्यं दलयत्यलं प्रथयते सम्यक्त्वसिद्धिं परां, नीचैर्गोत्रमघः करोति सुयमच्छिद्रं  
पिषधे धणात् । मद्घ्यानं चिनुते निकृंतति ततं वृष्णालतामण्डपं, वश्यं सिद्धिसुखं करोति भविनामावश्यकं निर्मितम् ॥ ११७ ॥  
कालुष्यं कलयाऽपि नो कलयति स्वातं प्रशांतं भवेद्, विश्वं पाणितले स्थितामलकवत् प्रत्यक्षमेवाखिलम् । आसन्नाऽपि कुवासना  
न भवति स्वाध्यायमभ्यस्यतः, पुंसः पुंसितमेव दुर्मतिगतिस्थानादिकं सर्वतः ॥ ११८ ॥” इत्थंति भणेऊणं निवेण नमिआ तओ  
अ ते समणा । गयणयले उप्पइया तवप्पहावं पयासंता ॥ ११९ ॥ सिरिविजयअमियतेजा तो नरविज्जाहराहिवा सययं । वरिसे  
वरिसे तिन्नि उ महिमाउ कुणंति रम्माउ ॥ १२० ॥ तथा च वसुदेवहिन्डी-‘तिन्नि महिमाउ करेमाणा ते हरिसेण कालं गमं-  
ति’त्ति । तथोत्तराध्ययनवृत्तौ-‘दो सासयजत्ताओ तत्थेगा होइ चित्तमासंमि । अट्टाहियाय महिमा वीआ पुण अस्सिणे भासे  
॥ १२१ ॥ एयाओ दोवि सासयजत्ताउ करंति सबदेवावि । नंदीसरम्मि खयरा नरा य नियएमु ठाणेसु ॥ १२२ ॥ तइआ अमासया पुण  
करंति सीमणगनगे इमे दोऽवि । नामेयस्साययणे वरणाणुप्पत्तिठाणे य ॥ १२३ ॥ सिंहासणोवविट्टो सपरियणो अन्नया अमिय-  
तेओ । मासकूपवणकिसंगं मागिहं इंतं नियइ साहुं ॥ १२४ ॥ तो सहरिसमन्धुट्टिय सपरियणेण निवेण नमिय मयं । पडिलाहिओ

अमिततेजः  
कथा

॥१७४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१७५॥

स एसणियभत्तपाणेण भत्तीए ॥१२५॥ तो रयणवुद्धिमाईणि पंच दिवाणि तत्थ जायाणि । अन्नत्थ गओ साह मुणीण एगं  
न जं ठाणं ॥१२६॥ कइयावि नंदणवणे पत्ता सिरिविजयअमियतेयनिरा । सासयसुहत्तल्लिच्छा सासयपडिमाउ पूएउं ॥१२७॥  
ठाउं अवग्गह बहिं निरवग्गहहरिसपुलइअसरीरा । संपुन्नचेइवंदणविहिणा वंदेवि देवे य ॥१२८॥ चारणमुणीण नमिउं विउलमइ-  
महामईण पयपउमं । इय भवनिव्वेयकरिं सम्भं निसुणंति धम्मकहं ॥१२९॥ “देहो धुरं विणासी तवसंजमसाहणं फलं तस्म ।  
वच्चइ हुलियं जीयं ता मा धम्मे पमाएह ॥ १३० ॥ सिद्धंपि महाविज्जं अमरंतो निष्फलं जहा कुणई । तह धम्मपमाइल्लो हारइ  
पत्तंपि मणुयत्तं ॥१३१॥ जइ दुलहं कप्पतरुं लहिउं मग्गइ वराडिअं मूढो । मुक्खफले मणुअत्ते तह अबुहो मग्गए विसए ॥१३२॥”  
अह तेहिं मुणी पुट्ठा निआउसेसं भणंति ते उ दिणे । उव्वीसं तं सोउं शूरन्ति बहुं इमे एवं ॥ १३३ ॥ विसयसुहभोहिएहिं न  
कयं अम्हेहिं सबविरइवयं । इण्हि आउअसेसे किं काहामो हहा भयवं ! ॥ १३४ ॥ हा हा पमत्तयाणं किह सयलं जीवियं गयं  
अम्हं ? । कक्खीकया न दिक्खा सयदक्खा दुक्खलक्खाणं ॥१३५॥ इय खेयंता भणिआ मुणीहि मा भो बहुं विअरेह । इण्हिपि  
सबविरइं पडिरज्जइ सयलसुहजगणिं ॥१३६॥ भणियं च-“अप्पेणवि कालेणं केइ जहा गहियसीलसामन्ना । सारिंति निपयकज्जं  
पुंडरियमहारिसिब जहा ॥१३७॥” तथा-“पच्छावि ते पयाया खिप्पं गच्छंति अमरभवणाइं । जेसिं पिओ तवो  
संजमो य खंती अ यंभचेरं च ॥१३८॥” किंच-“एगदिवसंपि जीवो पव्वज्जमुवागओ अणत्तमणो । जइवि न  
पावइ मुक्खं अबस्स वेमाणिओ होइ ॥१३९॥” तो मुणिणो अभिवंदिय आगंतुं नियपुरे सपुत्तेसुं । रज्जाइं ठविय अट्टा-  
हियाउ काउं जिणहरेसु ॥ १४० ॥ अभिनंदणजगनंदणसाहुसगासंभि गहियपव्वज्जा । पाओवगमणविहिणा मरिउंअमियतेय-

अमिततेजः  
कथा

॥१७५॥

सिरिविजया ॥१४१॥ पाणयकल्पे देवा संजाया दिव्वचूलमणिचूला । वीसअयराउ नंदावत्तयसुत्थियविमाणेसुं ॥१४२॥ इदं  
इदि विवेकिनः समधिगम्य वृत्तं वरं, सदाऽप्यमिततेजसः सकलखेचरस्वामिनः । अवग्रहवहिःस्थिता विगतविग्रहावग्रहं, जिनेद्रपद-  
वंदनं कुरुत निर्वृतेः कारणम् ॥ १४३ ॥ इत्यवग्रहत्रिके अमिततेजःखेचरेश्वरदृष्टान्तः॥ निगदितस्त्रिधा अवग्रह इति चतुर्थं  
द्वारं, तद्गणनेन च प्रदर्शितचैत्यवंदनाकरणविधिः । संप्रति कतिप्रकारा चैत्यवंदना इत्याशंकायां तत्स्वरूपामिधित्सया 'तिहा उ  
वंदणय'न्ति पंचमद्वारं अमिधित्सयाऽऽह—

नयकारेण जहन्ना चिइवंदण मज्झ दंठथुइजुयला । पणदंठथुइचउक्कगथयपणिहाणेहिं उक्कोसा ॥२३॥

नमस्कारेण-अंजलिवद्धशिरोनमनादिलक्षणप्रणाममात्रेण यद्वा 'नमो अरिहंताण'मित्यादिना अथवा-'पुरवरकवाडवच्छे  
फलहभुए दुंदुहीधणियघोसे । मिरिवच्छंक्रियवच्छे वंदामि जिणे चउव्वीस॥१॥'मित्यादिनैकेन श्लोकादिरूपेण, नमस्कारेण इति  
जातिनिर्देशाद्वा बहुमिरापि नमस्कारैः, अभिधास्यति च-'सुमहत्थनमुक्कारा इगदुगे'त्यादि, यद्वा नमस्कारेण प्रणिपातापरनामतया  
प्रणिपातदंडकैनेकेनेतियावत् जयन्या-स्वल्पा, पाठक्रिययोरल्पत्वात्, चैत्यवंदना भवतीति गम्यं, एतावता "एगनमुक्कारेणं चिइ-  
वंदणया जहन्नयजहन्ना । बहुहिं नमुक्कारेहिं च नेया उ जहन्नमज्झमिआ ॥ १ ॥ सच्चिय सकथयंता जहन्नउक्कोसिआ मुणेयन्ना  
(१२४-०॥ अर्थतः) इति त्रिविधोक्ता जयन्यवंदना व्याख्याता, ईर्यापथिकीनमस्कारोऽपि प्रणिधानं, तेनापि शक्रस्तवेन जयन्या  
चैत्यवंदनेति तात्पर्यार्थः ॥ एतावताऽप्यवस्थात्रयभावनासिद्धेः, एतदर्थमेव चात्र शक्रस्तवांते 'जे य अईया'इत्यादि गाथापाठाद्,  
उक्तं च लघुभाष्ये-जे य अइयगाथाए वीयऽहिगारेण दव्वअरिहंते । पणमामि भावसारं छउमत्थे तिसुवि कालेसु ॥ १ ॥"

भीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१७७॥

एषाऽपि यदेकदंडकस्तुत्यादिसहिता स्यात् तदा मध्यमा भवतीत्यत आह—'मज्झ दंडधुइजुयला' मध्यमा च अजघन्योत्कृष्टा, पाठ-  
क्रिययोस्तथाविषत्वात्, दंडश्च—अरिहंतचेइआणमित्यादिः एकस्तुतिश्च श्लोकादिरूपा प्रतीता, चूलिकात्मिका एका तदंत एव या  
दीयते, ते एव युगलं—युगमं यस्यां सा दंडस्तुतियुगला, चैत्यवंदना इत्यत्रापि योज्यं घंटालालान्यायेन, एतच्च 'चेइअदंडधुइ-  
एगसंगया सव्वमज्झमिआ' ( १५६ ) ॥ तथा—'नमुकाराइ चिइदंडइगधुई मज्झमज्झमिआ' ( १५६ अर्थात् ) इत्याद्युक्तितो  
ज्याख्यातं, अन्यथा 'सकत्थयाइयं चेइयवंदण'मित्यागमोक्तप्रामाण्यात् शक्रस्तवोऽप्यत्रादौ भण्यते, तथा च बृहद्भाष्येऽपि—  
'मंगल सकत्थय चिइदंडकधुईहि मज्झमज्झमिया' अथवा दंडकश्च—चैत्यस्तवरूप एकः स्तुतियुगलं च वक्ष्यमाणनीत्या चूलिके-  
तरस्तुतिद्वयरूपं यत्र सा दंडस्तुतियुगला चैत्यदंडककायोत्सर्गानंतरं दीयमानश्लोकादिका चूलिका स्तुतिः 'लोगस्स उज्जोअगरे'  
इत्यादिद्वितीया नामस्तवसमुच्चारस्वरूपेत्यर्थः, यदा तु 'सकत्थयाइयं चेइवंदण'ति वचनादत्राप्यादौ शक्रस्तवो भण्यते तदा युगल-  
शब्दो दंडशब्देऽपि योज्यते, यथा दंडकयोः—शक्रस्तवचैत्यस्तवरूपयोर्युगलं—युगमं स्तुत्योश्च वक्ष्यमाणरीत्या चूलिकेतरस्तुतिरूप-  
योरधुवधुवस्तुत्योरितियावद् युगलं—द्विकं यत्र सा दंडकस्तुतियुगला मध्यवंदना, इह च स्तुतियुगले एका स्तुतिश्चैत्यदंडककायो-  
त्सर्गानंतरं दीयमाना चूलिकानाम्नी अधुवात्मिका श्लोकादिरूपा याऽन्यान्यजिनचैत्यविषयतया बहुस्तुतिवंदनाकर्तृमध्ये चैकेन  
दीयमानतया चाधुवात्मिका चूलिका, तदनंतरं चान्या द्वितीया धुवा, यत्रस्तुतिरूपत्वात् वंदनाकर्तृभिः सर्वैरपि भण्यमानत्वात्  
नामस्तवस्वरूपतया अनन्यविषयत्वात् श्लोकादिरूपत्वेन पराधुचेरभावात्, यथा 'लोगस्स उज्जोअगरे जाव सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु'त्ति,  
उक्तं च व्यवहारे 'एगदुतिभिसिलोगा धुइओ अणेसिं होइ सत्त'त्ति भाष्यं, चूर्णिश्च . 'केसिंचि आयरियाणं एगसिलोगाइ

धादे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१७८॥

जाय सत्तसिलोगा धुई जहा उज्जोअगरोत्ति, एवं चात्र व्याख्यातं—‘वेलं व चेइयाणि य नाउं इक्किया वावि’त्ति कल्पनियुक्ति-  
मणितत्वात्, यतः—मर्वचैत्येषु सर्वजनेन भणनीया नियतधिया नियतस्य लोगस्स उज्जोअंगरे? पुक्खवरद्वीवड्ढे २ सिद्धाणं बुद्धाण ३-  
मित्याद्यपदामिधानजिननामस्तुतिश्रुतस्तुतिसिद्धस्तुतिरूपसूत्रस्तुतित्रयस्य मध्यात् सर्वसामान्यादिकायोत्सर्गाद्य(ग्रन्थाग्र ३५००)-  
नंतरं सर्वयंदनारुर्वभिः प्रथमं देवस्तुतितया लोगस्स उज्जोअंगरे इत्यस्या एवोपलब्धत्वात्, तथैवावश्यकचूर्णो भणनात्, तथाहि—  
भणइ य धुई जेहि इमं तित्थं इमाइ ओमप्पिणीए देसियं नाम, दंसणचरित्तस्स य उवएसो, तेसिं महइए भत्तीए बहुमाणओ संघवो  
कायवो, एएणं काउस्सग्गेणं अणंतरं चउवीसत्थउ’त्ति, व्यवहारससमोदेशके त्वेवं—‘चेइयवंदियाणं गयाणं पढमधुइआढत्ताणं  
गं अग्गाओ आगयाओ ताओ पडिच्छंतीओ उण्हेण परिताविज्जंतीओ कसाइयाउ’त्ति, अत्र चायं परमार्थः—यदि वेलातिक्रमादिना  
मध्यमोत्कृष्टादिबंदनां कर्तुं न पारयति तदोक्तनीत्या लोगस्म उज्जोयगरांतां करोतु, एवमपि चतुर्विधार्हतां बंदनासद्भावात्,  
एवं च सर्वयंदनारुर्वणामेरुस्याः सूत्रस्तुतेर्दानापत्तेश्च चूलिकास्तुतिस्त्वेकेनैव देयत्वात् शेषाणां तद्दानाभावः, एवमेव करणविधावा-  
यातत्वात् वृहद्भाष्यादौ तथाभणनाच्च, - तथाहि—“जइ एगो देइ धुई अइण्णेगे तोऽवि पढमधुइमेगो । अन्ने उस्सग्गठिआ  
मुणंति जा सा परिअमत्ता ॥१॥ इत्थं य पुरिमधुइए वंदइ देवे चउविहो संघो । इत्थिधुइए दुविहो समणीओ साविया चेच ॥२॥  
( ४९९-५०० ) करणविधिस्तु द्विधा धर्मानुष्ठानागमनं भणताऽऽवश्यकचूर्णिकृताऽप्याश्रयणात्, तथाहि—“आयरियपरं-  
परएण आगयं आणुपुवीए—रुमपरिगाडिए मुत्तओ ? अत्थओ २ करणओइय”त्ति यद्वा दंडकाः—शक्रस्तमादयः पंच स्तुति-  
युगलं च—सामयिकभाषया स्तुतिचतुष्टयमुच्यते, यत आद्याः तिस्रोऽपि चूलिकास्तुतयो बंदनादिरूपत्वादेका चूलिकास्तुतिर्गण्यते ?

चैत्यवन्द-  
नाभेदाः

॥१७८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१७९॥

‘इअ अप्पपरे उमए अणुसद्धिधुइत्ति एगट्ठे’ति निशीथिभाण्यवचनात्तु चतुर्थी चूलिकास्तुतिरनुशास्तिरूपत्वाद् द्वितीया चूलिका-  
स्तुतिरुच्यते इति, वंदनास्तुत्यनुशास्तिस्तुतिरूपस्तुतियुगले चूलिकास्तुतिचतुष्टयं भवति, अत एवाधिकारिणोऽपि वंदनीयस्तं-  
नीयमेदाद्विधोक्ताः, अथैका स्तुतिः चैत्यवंदनादंडकक्रायोत्सर्गानंतरमन्यान्याधिकृततीर्थकृद्विषयतया अन्यान्यपरानर्चनेना-  
नियतगोचरत्वात् आद्या चूलिकास्तुतिरधुवा, द्वितीयाद्यास्तु तिस्र चूलिकास्तुतयः, सर्वचैत्येषु सर्ववंदनाकर्तृभिः धुवमणीयाः  
लोगस्त १ पुक्खरवर २ सिद्धाणं बुद्धाणमित्याद्यपदाभिधाननामस्तुतिः श्रुतस्तुति २ सिद्धस्तुति ३ रूपदंडकत्रयकापोत्सर्गानंतरं  
दीयमाना सकलार्हत्स्तुति १ प्रचनस्तुति २ प्रचनभक्तदेवतास्तुति ३ रूपा नियतगोचरत्वात् ध्रुवचूलिकाः, एताथ तिस्रो-  
ऽपि ध्रुवत्वसाम्यादेका द्वितीया ध्रुवा चूलिका स्तुतिर्गण्यते, एवं ध्रुवाध्रुवरूपचूलिकास्तुतियुगले चूलिकास्तुतिचतुष्टयं भवति,  
ततो दण्डकाः पंच स्तुतियुगलं च-पूर्वोक्तनीत्या स्तुतिचतुष्टयरूपं यस्यां अभ्रादित्वादप्रत्यये दण्डस्तुतियुगला मध्यमे चैत्यवंदना ।  
“वंदित्वा द्वितीयप्रणिपातदंडकावसाने” इति पंचवस्तुकोक्तविधिवचनादंते द्वितीयशक्रस्तवपाठे द्वितीयशक्रस्तवांता स्तवप्रणि-  
पानादिरहिता, एकवारवंदनां वंदित्वा इत्यर्थः, उक्तं च-“दंडपंचगधुइजुयलपाइओ मज्झिमुकोसा” एतच्च-“निस्सकडमनिस्स-  
फडेयापि चेइए सषहिं पुई तिचि”ति कल्पनिर्युक्तिमणितत्वाद् व्याख्यातं, यतः शुई तिचिचि कोऽर्थः ?-सकत्थयाइयं चेइय-  
वंदणमित्यागमवचनात् शक्रस्तवादिचैत्यदंडकक्रायोत्सर्गानंतरमधिकृतजिनाश्रिताधुवाद्यचूलिकास्तुतिदानेन प्रस्तुतदेवगृहस्थिताऽ-  
र्हता चैत्यवंदनं विधाय पथादशेपजिनादिवंदनाद्यर्थं लोगस्तुज्जोय १ पुक्खरवर २ सिद्धाणं बुद्धाणमिति दंडकत्रयरूपाः स्वस्वका-  
योत्सर्गान्तास्तिस्रः सूत्रस्तुतयः ‘उत्सर्गो पारियम्मि शुई’ति निर्युक्तिवचनात् तत्क्रायोत्सर्गानंतरं दातव्यसर्वजिनस्तुतिः सिद्धांत-

चैत्यवन्द-  
नामेदाः

॥१७९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
पर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१८०॥

स्तुतिर सम्यग्दृष्टिदेवतास्तुतिरूपनियतद्वितीयतृतीयचतुर्थीचूलिकास्तुतित्रयसहिता सर्वचैत्येषु दातव्या इत्यर्थः, एताश्च तिस्रः  
प्रथमाधुवचूलिकास्तुतिसहिताश्चतस्रः चूलिकास्तुतयो भवन्ति, ताश्चतस्रोऽपि ध्रुवाधुवस्तुतिभेदेन द्विधा भवतः, ते च युगलशब्दे-  
नोच्येते इति स्तुतियुगलं स्तुतिचतुष्टयमुक्तं, तथा तुलादंडवत् मध्यग्रहणादाद्यंतयोरपि ग्रहणमिति न्यायात् इह यथाऽऽदौ शक्र-  
स्तवचैत्यदंडकायोत्सर्गादि नियतं भण्यते तथा अंतेऽपि चतुर्थकायोत्सर्गस्तुत्यंते शक्रस्तवादि ध्रुवं भणनीयं, करणविधौ तथा-  
ऽऽयातत्वात्, उक्तं च पंचवस्तुके-“सेहमिह वामपासे ठविचु तो चेइए य वंदंति । साहृहि समं गुरवो धुइवुड्डी अप्पणा चेव  
॥१॥” आचार्या एव च्छंदपाठाभ्यां वर्धमाना स्तुतीर्ददति ‘वंदिय पुणुट्टिआणं गुरूण तो वंदणं समं दाउं । सेहो भणई इच्छाकारेणं  
संदिसावेह ॥१॥’ वंदित्वा-द्वितीयप्रणिपातदण्डकावसाने” तथा ललितविस्तरायां चतुर्थकायोत्सर्गसूत्रस्तुती तु सूत्राधुक्तत्वाद-  
वश्यमेव भणनीये, तथा च ललितविस्तरायां उक्तम्-“केचिच्चन्या अपि पठंति, न च तत्र नियम इति न तद्व्याख्या न क्रिये”ति,  
अयमर्थः-अन्या अपीति उक्तानुक्तादिसंग्रहरूपत्वेनात्र पंचमदण्डके स्थानत्वात् तत्तदपाठेऽपि सूत्रसंधानादिदोषानापत्तेः, न च तत्र  
नियम एका द्वे तिस्र इत्यादि, क्षेत्रकालाद्यपेक्षया कापि तीर्थं कासांचित् पाठादित्यनियतत्वात् तद्व्याख्यानाभाव एव, एतावता यदत्र  
व्याख्यातं तन्निपमेन भणनीयमिति प्रतिपादितं, व्याख्यातं प्रसिद्धाधिकृततीर्थेशस्तुतिवत् सूत्रतया नियमभणनीयत्वेन वेयावचग-  
राणमित्यादिचतुर्थकायोत्सर्गसूत्रस्तुत्यादि तत्र, यथा-एवमेतत् सिद्धाणं बुद्धाणं पठित्वा उपचितपुण्यसंभारा उचितेपूपयोगफलमेत-  
दिति ज्ञापनार्थं पठंति वेयावचगराणमित्यादि, कायोत्सर्गविस्तरः पूर्ववत्, स्तुतिश्च, नवरमेपां वैयावच्यकराणां तथा तद्भाववृद्धेरित्युक्तं  
प्रयोजनं, प्रशंसितः प्रमत्तकार्याय प्रोत्सहत् इति प्रमिद्धमेवेत्यर्थः, तदपरिज्ञानेऽप्यस्मात् तच्छुभसिद्धाविदमेव च सूत्रं ज्ञापकं, न चामि-

चैत्यवन्द-  
नामेदाः

॥१८०॥

धीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१८१॥

द्वमेतद्, अभिचारकादौ मंत्रवादे तथेक्षणात्, सदाचित्यप्रवृत्त्या सर्वत्र प्रवर्तितव्यमित्यैदंपर्यमस्य", एषा ध्रुवं भणनीया, अत्र चतुर्थीचू-  
लिकास्तुत्यंता पंचमदंडकरूपा तृतीया सूत्रस्तुतिः, संपूर्णा चैत्यवंदना, चूर्णिकादात्रप्येतदंतं व्याख्यायोक्तं यथा सिद्धत्यदंडयधिरणं  
संमत्तं", तथा पाक्षिकचूर्णौ 'विरइपडितिकाले चिइंदणमाइणोत्रयारेण अवस्सं भहासंनिहिया देवया संनिहाणंमि भवन्ति अतो  
देवसक्खिअं भणियं" इहापि वंदनामध्ये देवाद्युपचारस्तत्क्रापोत्सर्गस्तुत्यादि विना कोऽन्य इति, पाक्षिकाद्यागमोक्तत्वाद् नियतसु-  
दृष्टिदेवताक्रापोत्सर्गस्तुत्यादि सिद्धाणबुद्धाणमित्तिनाम्न्याः तृतीयसूत्रस्तुत्या अंते अत्रयं भणनीयं, उक्तानुक्तादिसंग्रहरूपादस्याः  
सिद्धस्तत्रापरनाम्न्या सूत्रस्तुतेः, एषैव चैतद्वत्तत्तत्सुदृष्टिसरणाभिधदादशमाधिकारांतः पंचमदण्डक उच्यते, भणितं च—"इह ललि-  
यवित्थराविचीइ वरूखायमुत्तअणुसारा । सुचुत्त नर अहिगारा दु दस इगारम सुताचरणा ॥१॥ आत्रइपकचूर्णिंकारादिघहुश्रुतसंमता  
इत्यर्थः, आह च—"आरस्सयचुण्णीए जं भणियं सेसया जहिच्छाए । तेण उअंताइवि अहिगारा सुयमया चेर ॥ १ ॥" एतावता  
भाष्यांतरोक्तजघन्यादिभेदा मध्यमापि व्याख्याता, यतो बृहद्भाष्ये-उक्कोसा तिविहावि हु कायवा सत्तिओ उभयकालं । सेसा  
पुण छब्भेया चेइयपरिवाडिमाईसु ॥१॥ (१६२-१६३) भणितं च कल्पभाष्ये-'निस्सकडमनिस्सकडे'त्यादि ॥ एवं प्रागुक्त-  
युक्त्या निस्सकडेतिगाथया मध्यमा चैत्यवदना भणिता दण्डकस्तुतियुगलपाठरूपेति स्थितं, अन्यत्राप्युक्तं-"चिइंदणं तु नेयं  
सुत्तथुअओगओ समाहीए । अक्खलिआइगुणजुअं दंडगपंचगममुत्तरणं ॥१॥" नैव चेत् ततोऽन्त्यक्रापोत्सर्गादिप्रदादिशकस्तत्र-  
क्रापोत्सर्गाद्यप्यभणनीयं स्यात्, निस्सकडेत्यादौ अनुक्तत्वात्, एव चान्यत् स्तुतिस्तोत्रप्रणिधानादि सर्वमपि अभणनीयं प्राप्नोति  
भवतां चैत्यमध्ये, उक्तयुक्तेरेव, उक्तं च-"जइ इत्तिअमित्तं चिअ चिइवंदणमणुमयं सुए हुंतं । थुइथुत्ताइपविची निरत्थिआ हुज

चैत्यवन्द-  
नाभेदाः

॥१८१॥



थीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१८२॥

सन्नापि ॥१॥" परिमाव्यमत्र सम्यग् कुग्रहविरहेण, यदागमः—जं जह सुचे भणियं तहेव तं जइ विआरणा नत्थि । किं कालिआणु-  
ओगो दिट्ठो दिट्ठिप्पहाणेहिं ? ॥ १ ॥" इह च सर्वत्राप्यादौ प्रथममीर्यापथिकी प्रतिक्रमितव्याः, तथा चागमः—ता गोयमा !  
अप्पडिकंताए ईरियावहिषाए न कप्पइ चेव किंचि चिइवंदणासज्झायज्झाणाइअं फलासायमभिकंखुगाणं" दशवैकालिकेऽपि द्विती-  
यचूलिकायां 'अभिकरणं काउसग्गकारी'ति सूत्रस्य वृत्तिः—“अमीक्ष्णं गमनागमनादिषु कायोत्सर्गकारी भवेत्, ईर्यापथप्रतिक्रमणम-  
कृत्वा न किंचिदन्यत् कुर्यात्, तदशुद्धतापत्ते”रिति भावः, यदि परमत्रोत्कृष्टशब्दवर्जिते बहुश्रुतसामाचारी तां निरुंभति, नान्य-  
दिति ॥ उक्ता सप्रभेदा मध्यमापि वंदना, इयमेव च स्तवप्रणिधानादिपर्यंतोत्कृष्टा भवतीति, उक्तं च बृहद्भाष्ये—“उक्कोसज-  
हन्ना पुण सच्चिय सक्कथयाइपज्जंता (१५७) एतदर्थप्रतिपादनायाह—

पणवंडथुइचउक्कगथपणिहाणेहिं उक्कोसत्ति पश्चाद् ।

पंचभिर्दंडकैः शक्रस्तवादिसुदृष्टिकायोत्सर्गपर्यंतैः स्तुतिचतुष्टयेन वंदनानुशास्तिस्तुतिरूपचूलिकास्तुतिचतुष्टयेन द्वितीयदंड-  
कादिकायोत्सर्गचतुष्कांतदातव्यस्तवेन जघन्यतोऽपि चतुःश्लोकादिना मानेन 'चउसिलोगाइ, परेणं थओ चेव" इति व्यवहार-  
पूर्णिभणनात् द्वितीयशक्रस्तवांते भणनीयेन, तदादौ भण्यमानस्य नमस्कारतापत्तेः, प्रणिधानैश्च—वक्ष्यमाणस्वरूपैः वंदनांते विधे-  
यैरुत्कृष्टा-संपूर्णा, चैत्यवंदना इत्यत्रापि योज्यं, उक्तं च चैत्यवंदनाचूर्णौ—“सक्कथयाइदंडगपणगथुइचउक्कगपणिहाणकर-  
णाओ उक्कोम"त्ति, तथाऽन्यत्र—“सक्कथयाइदंडगपणगथुइचउक्कगपणिहाणा । संपुन्ना चेइअवंदणा उ हवई जओ भणिअं  
॥ १ ॥ दुब्भिमंगंधमलस्मावि, तणुरप्पेसऽण्हाणिया । उभओ याउउहो चेव, तेण वृत्ति न चेइए ॥२॥ तिच्चि वा कइवई जाव, थुइओ

चैत्यवन्द-  
नाभेदाः

॥१८२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया  
चारविधौ  
॥१८३॥

तिसिलोद्भा । ताव उत्थ अणुन्नायं, कारणेणं परेणवि ॥ ३ ॥ ” एतयोर्भावार्थः—साधवश्चैत्यगृहे न तिष्ठति, अथवा चैत्यवन्दनांत्य-  
शक्रस्त्वानंतरं तिस्रः स्तुतयः श्लोकत्रयग्रमाणाः प्रणिधानार्थं यावत् कर्ष्यते प्रतिक्रमणानंतरं मंगलार्थं स्तुतित्रयपाठवत् तावच्चैत्य-  
गृहे साधूनामवस्थानमनुज्ञातं, न निष्कारणं परतः, शालिसूरीयभाष्येऽप्युक्तम्—दंडगपंचगधुइजुयलपाठपणिहाणसहिअ  
उक्कोसा । अहव पणिवायदंडग पंचगधुअविहिजुआ वेसा ॥ १ ॥” प्रथमं मतं चेह उक्तं, तिथि वा कइइई जावेत्यादिभावार्थः  
प्रागुक्त एव, सिद्धादिश्लोकत्रयमात्रांतपाठे तु संपूर्णवन्दनाया अभाव एव, प्रथममते श्लोकत्रयपाठानंतरं चैत्यगृहेऽवस्थानाननुगतेन  
प्रणिधानासद्भावात्, भणितं च आगमे वंदनांते प्रणिधानं, यथा ‘वंदइ नमंसइ’ति सूत्रवृत्तिः—वंदते ताः प्रतिमाश्चैत्यवन्दनविधिना  
प्रसिद्धेन, नमस्करोति पश्चात् प्रणिधानादियोगेने”ति वंदनांते तिस्रः स्तुतयोऽत्र प्रणिधानरूपा ज्ञेयाः, सर्वथा परिभाष्यं अत्र  
पूर्वापराविरोधेन प्रवचनगांभीर्यं मुक्त्याऽभिनिवेशमिति, यद्वा पंचदंडकैः द्विरुक्तैरिति गम्यं, स्तुतिचतुष्केण स्तुतियुगलद्वयगतेन  
एकैकयुगले वंदनानुशास्त्रस्तुतिरूपस्तुतिद्वयद्वयगणनेन युगलद्वये स्तुतिचतुष्टयभावात्, शेषं प्राग्वत्, उत्कृष्टा वंदना इति, उक्तं  
च—जा धुइयुगलदुगेणं दुगुणियचिइवंदणाइ पुणो । उक्कोसमज्झिमा सा” अथवा पंचदंडकैः शक्रस्त्वरूपैः स्तुतिचतुष्केण प्रागु-  
क्तनीत्या स्तुतियुगलद्वयेन गतेन, शेषं प्राग्वत्, उत्कृष्टा वंदना, भणितं च—“उक्कोसुक्कोसिया य पुण नेया । पणिवायप-  
णगपणिहाणतियगधुत्ताइ संपुत्ता ॥ १ ॥ सक्कत्थओ य इरिया दुगुणियचिइवंदणाइ तह तिन्नि । सुत्तपणिहाणसक्कत्थओ अ इय  
पंचसक्कथया ॥२॥ एतावता ‘तिहा उ वंदणया’ इत्याद्यद्धारगततुशब्दव्यचिंतं नवविधत्वमप्युक्तं द्रष्टव्यं, उक्तं च घृहदूभाष्ये—  
“चिइवंदणा तिमेया जहन्निया मज्झिमा य उक्कोसा । इक्किक्कावि तिमेया जहन्नमज्झिमियउक्कोसा ॥१॥ (१५३) नवकारेण जहन्ना

चैत्यवन्द-  
नामेदाः

॥१८३॥

धीदे०  
वैत्य० श्री-  
पर्म० संया-  
चारविधौ  
॥१८४॥

इद्याई जं च वणिआ तिविहा । नवभेयाणमिभेसिं नेयं उवलकखणं तं तु ॥ २ ॥ एसा नवप्पयारा आइण्णा वंदणा जिणमयंमि ।  
कालोचियकारीणं अनग्गहाणं सुहा सच्चा ॥३॥ (१६३)"रत्नसारनरेन्द्रवत् । बहुभेया पुण एसा भणियत्ति बहुस्सुएहिं पुरि-  
सेहिं । संपुन्नमन्नायंतो मा कोइ चइअ मवंपि ॥१॥ भणियं च-विभिकिरियाऽविरोहो अववायनिबंधणं गिहत्थाणं । किरियंतर-  
कालाविकसयाइ भावो सुमाहूणं ॥ १ ॥ अहवा चिइवंदणया निच्चा इअरत्ति होइ दुविहा उ । निच्चा उ उभयसंझंमि इयरा चेइअ-  
गिहाईसु ॥२॥ निच्चा संपुन्नच्चिय इयरा जहसत्तिओ य कायवा । तविसयमिमं सुत्तं मुणंति गीआउ परमत्थं ॥ ३ ॥ उप्पन्नसंभया  
जे सम्मं पुच्चंति नेव गीयत्थे । चुकंति सुद्धमग्गा ते पल्लवगाहिपंडिच्चा ॥४॥ किंच-गीयत्था विहिरसिआ संविग्गतमा य सूरिणो  
पुरिसा । कह ते सुत्तविरुद्धं सामायारं परूवंति ? ॥ ५ ॥ पूर्वञ्चितरत्नसारनरेन्द्रकथा त्रियं-इह अत्थि हत्थिणपुरं पुरं पुरंदर-  
पुरं व बहुविबुहं । तत्थ निवो सिरिसेणो सिरिचइनामा पिया तस्स ॥१॥ ताण सुओ जयविस्सुअगुणरयणो रयणसार इय  
कुमरो । जिणपरयणकुसलमई सुमई नामेण से मित्तो ॥२॥ तत्थागया कयावि हु सिरिसंगमसूरिणो पणमिउं ते । पत्ता निवाइ-  
लोआ गुरुणोऽवि कहंति इय धम्मं ॥ ३ ॥ "इह जलनिहिभुअचित्तरयणं व सुदुल्लहं मणुअजम्मं । रोरस्स निहाणंपिव तत्थवि  
सम्मत्तमइदुलहं ॥ ४ ॥ कहकहवि तंपि लहिउं तस्सुद्धिकए करेह पइदिवसं । मज्झजहल्लुकोसं चिइवंदणयं जहासमयं ॥ ५ ॥  
तत्थ-एगनमुक्कारेणं बहुविहसकत्थएण व जहन्ना । इरियनमुक्काराईपणिहाणंतेण विइगेणं ॥ ६ ॥ सच्चिअ इगचूलधुई उज्जोअगरंति  
जाव मज्झिमया । पणदंडधुइचउक्कगपणिहाण विणत्ति जं भणियं ॥७॥ 'निस्सरुडमनिस्सरुडे'त्यादि ॥ सकरुत्थयचिइवंदणथ-  
यनामथयाइ तिच्चि पुइदंडा । एवं पणदंडा चउधुइजुया अंतसक्कथया ॥ ८ ॥ जा थयपणिहाणंता उक्ककोसा दुगुणपंचदंडा वा ।

रत्नसारकथा

॥१८४॥

पणसक्कत्थया वा थयपणिहाणत्तियथुइतिगंता ॥९॥ भणितं च—‘दुब्धिगंधमलस्सावि, तणुरप्पेसण्हाणिया । उभओ वाउवहो च्चव,  
 तेण ङ्खंति न चेइए ॥१०॥ तिन्नि वा कइई जाय, थुईओ तिसिलोइया ।—चैत्यवंदनांते प्रणिधानरूपा, ताव तत्थ अणुन्नायं, कारणेण  
 परेणवि ॥ ११ ॥ जओ—सुरभवंणं नियभवंणं व होइ तह किंकरिच्च चक्कसिरी । सुइरं विलसंति य सतणुम्मि उग्गसोहग्गपमुहगुणा  
 ॥१२॥ सुहउत्तारो गुप्पयजलं व अवि एस हुअ भवजलही । सिद्धिसुहंपि अभिमुहं नराण चिअवंदणपराणं ॥१३॥ अविअ—विसमंपि  
 समं सभयंपि निब्भयं दुअणोवि सुयणिव्व । विहिविहियचेइवंदणभावओ जायइ जिणाणं ॥१४॥’ इअ सोउ निवो कुमरो अन्नोऽवि  
 जणो ससत्ति गहिऊणं । चिइवंदणाइनियमे नमिय गुरुं सगिहमणुपत्तो ॥१५॥ कइयावि मित्तजुत्तो कुमरो चउरंगसिन्नपरियरिओ ।  
 जा जाइ रायवाडीइ निययनगराउ दूरेण ॥१६॥ ता नियइ कंपि पुरिसं कसिणमुहं उप्पहेण वचंतं । रायालंकारधरं परिमियपरि-  
 वारपरियरिअं ॥ १७ ॥ तो पसिऊण कुमारो तं पइ इअ भाणए नियनरेहिं । नणु किहणु दिसह तुब्भे विसायभरपूरिअमणुव्व  
 ॥१८॥ किह उप्पहेण वच्चह निवरूवधरावि ? तयणु इयरेण । णुन्नाओ वरपुरिसो एगो इय भणइ जह भदा ! ॥१९॥ सोवीर-  
 देसपड्डुणो पयावसूराभिहाणनरवइणो । दइआसि मयणरेहा रेहा इव रूववंतीसु ॥२०॥ सा अन्नदिणे केणवि सुहसुत्ता अवहदा  
 तओ निवइं । तद्दुसहविरहदुहिअं इअ जंपइ कोइ जोइसिओ ॥२१॥ देव ! मणे मा तम्मसु अट्टंगनिमित्तओ मए नाया । देवीइ  
 मयणरेहाइ विमलसीलाइ नणु सुद्धी ॥२२॥ तथाहि—अप्पडिरूवं रूवं देवीए निसुणिऊण ऊणमई । मयणसरपसरविहुरो कल्लि-  
 गपहुसीहसेणनिवो ॥२३॥ सुरसम्मनामकावाल्लिएण आकिट्टिलद्धिजुत्तेण । निसि सुहमिन्ति(सुत्तं) देविं हरावए दाउ बहुदवं  
 ॥२४॥ तं सोउ ज्ञत्ति ताडियजयढकासइमिलियसयलभलो । अक्खलियपयाणेहिं राया पत्तो सदेसंते ॥२५॥ इयरोऽविहु चरन-

शीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१८६॥

रवयणमवणविन्नायसयलयुत्तंतो । नियसीमंतं पत्तो हयगयरहसुहडकोडिजुओ ॥ २६ ॥ तो सरहसताडियसमरतूरस्वनस्समाणमी-  
रुनरं । कुंतग्गामिन्नगयतुरयघट्टरुहिरुल्लाससमरधरं ॥ २७ ॥ उन्मडमडंतमडकोडिमुक्कसरविसरपिहियनरविमरं । दुण्हवि अग्गा-  
णीए तेमिं जायं महाममरं ॥ २८ ॥ अह लद्धोग्गासेणं कलिंगसामिस्स वीरवाएण । भग्गं खणेण सिन्नं पयावसूरस्म निवइस्स  
॥२९॥ इत्थंतरंमि नेमित्तएण एगेण झत्ति आगंतुं । भणिओ सुजुत्तिजुत्तं पयावसूरो निवो एवं ॥३०॥ संपइ न तुज्झ जुत्तं जुज्झिउ-  
मुज्झियदयं महीदइयं । निययप्पवायनिज्जियरविणा इमिणा समं रिउणा ॥३१॥ किंतु लहु गयपुराहिवसिरिसेणसुएण रयण-  
सारेण । सारपलेण एणेणं कज्जमिणं तुज्झ सिज्झिहिइ ॥ ३२ ॥ इय सोउं सचिवेहिं सुवहु विन्नविय णिज्जमाणोऽवि । कहमवि  
पयावसूरो समरधराओ अवक्कमिओ ॥३३॥ सो एम इत्थिणपुरं वचइ सिरिरयणमारपासंमि । तं सोउ तेऽवि हसिरा कहंति कुमरस्स  
आगम्म ॥३४॥ अविहियवयणवियारो कुमरोपि हु तस्स पासमामज्ज । जंपइ नरिंद ! करिहिसि तेणं किं रयणसारेण ? ॥३५॥  
तुइ कजं माहिस्सं अहंपि अह इंगिआइकुमलो सो । भण्णइ कुमर महायस एवं चिअ आगओसि तुमं ॥३६॥ तो कुमरो तेण निवेण  
संजुओ सीहसेणममि चलिओ । जा जाइ कंपि भूमिं ता केणवि इय नरेणुत्तो ॥३७॥ मइ सारहिंमि एयंमि रद्वरे आरुहिय कुमर !  
तुमं दलमु । दप्पं एयस्म लहुं तहत्ति पडिवज्जए कुमरो ॥३८॥ अह पउरसमरसंपन्नविजयगवो कुमारपरमितं । सोऊण कलिंगपहू  
सजीहोउं ठिभोऽमिमुहो ॥३९॥ तो दोऽवि कोपउक्कडमिउडिणो ते भिडंति वरसुहडा । निसिअसरधोरणीहिं तिरयंता तरणि-  
तेयभरं ॥४०॥ खणमित्तेण कुमारो रहाउ पाडित्तु सीहसेणनिं । दद्वंधेहिं वंधिय पक्खिवई कट्टपंजरए ॥४१॥ पणयं च सत्तुवग्गं  
संठविउं पविसए पुरे तस्स । अप्पइ पयावसूरस्म विमलसीलं मयणरेहं ॥४२॥ दावइ कलिंगविसए नियथाणं कट्टपिंजरे खित्ते ।

रत्नसारकथा

॥१८६॥

निवहंमि सीहसेणे तह उचिअं असणपाणाई ॥ ४३ ॥ रहिउं गओ सदेसं पयावसरो तदा निवा अत्रे । निअनिअधुअ आणित्तुं  
दिति परिणेइ कुमरोऽवि ॥४४॥ कइयावि रयणसारो पयावसरेण निगइणा भणिओ । पडु ! कट्टपंजराओ मुअसु इमं सीहसेणनिवं  
॥४५॥ भुज्जो इय अन्नायं कयावि नहु काहिई धुनं एसो । सप्पुरिसाण य कोहो जइ हुज्ज परं पणामंतो ॥४६॥ अविअ—  
अचराहकारयंमिवि जणे सुहं चिय कुणंति सप्पुरिसा । सुरहेइ चंदणतरू परसुसुहं छिज्जमाणोवि ॥४७॥ अन्नं  
च-उपकारिणि वीतमत्सरे, सदयत्वं यदि तत्र कोऽतिरेकः ? । अहिते सहसाऽपराधिनि, सघृणं यस्य मनः  
सतां स धूर्यः ॥ ४८ ॥ इय बहुविहं कुमारो भणिज्जमाणोऽवि तेण अन्नेहिं । निगईहि देइ न किंपि उत्तरं जंति इय दिवसा  
॥ ४९ ॥ तत्थऽन्नदिणे चउनाणसंजुओ बहुसुसीसपरिवारो । सिरिविमलयोहसूरी दूरीकयतमभरो पत्तो ॥ ५० ॥ पत्ता महया  
भडचडगरेण निवकुमरपमुहबहुलोआ । गुरुणो नमिय निसन्ना इय सूरी कहइ धम्मकहं ॥५१॥ “कोहो पीइं पणासेइ, माणो विण-  
यनासणो । माया मित्ताइं नासेइ, लोभो सन्वविणासणो ॥५२॥ कोहो य माणो य अणिग्गहीया, माया य लोहो य पउद्दमाणा ।  
चत्तारि एए कसिणा कसाया, सिंचंति मूलाइं पुणन्भवस्स ॥५३॥ उवसमेण हणे कोहं, माणं महवया जिणे । मायं चऽअवभावेणं,  
लोभं संतोसपोसओ(ओ जिणे) ॥५४॥” अह समए कुमरवरो पुच्छइ मह सीहसेणनरवइणा । को इह विरोहहेऊ ? भणइ गुरु सुणसु भो  
मह ! ॥५५॥ आसी पुन्वविदेहे पुक्खलवईविजय पुंडरिणीए । आणंदो नाम निगो दईआ पउमावई तस्त ॥५६॥ पुत्ती  
य विमलसीला सीलवई नाम सा सिमुत्तेऽवि । जिणचिइरंदणनिरया लद्धद्धा जइणसमयंमि ॥५७॥ तस्म य रन्नो विइअंअ आमयं  
आसि खयरमणिचूडो । सो पेमवसा मुत्तुं नियनयरं ठाइ निवपासे ॥५८॥ भणणोवरिं कीलंतिं सहिया सहियाजणेण सीलवई ।

धीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संध्या-  
चारविधौ  
॥१८८॥

अन्नदिणे अवहरिया अणंगसिहनामखयरेण ॥५९॥ तो पुक्करिअं सहिआजणेण उप्पिच्छ पिच्छ नणु ताय ! । खयराहमेण केंणत्रि-  
निअइ गयणंमि सीलवई ॥६०॥ तं सोउ सोयविहुरं आणंदनिवं कहांपि संठविउं । उप्पइओ मणिचूडो तप्पिट्ठीए नहपहंमि ॥६१॥  
रे ठाहि ठाहि अविदिन्नकन्नयाहरणसज निह्लज्ज । इअ तजंतो पत्तो तो दोवि भिडंति ते सुहडा ॥६२॥ तेसिं जुज्झंतानं सीलवई  
निवडिआ विमलसेले । अन्नन्नं पहरिय ते उ दोवि पंचचमणुपत्ता ॥ ६३ ॥ अह सीहरुदसदूलरुदभयभेरवं पएसं तं । दट्ठुं भय-  
लोललोयणतारा पलवेइ इय बाला ॥६४॥ हा ताय ! तायसु ममं हा जणणि जणसु ज्ञत्ति मह सारं । हा हा नरचूडामणिमणि-  
चूड गयोऽसि कमवत्थं ? ॥ ६५ ॥ जं जीव ! कयं तुमए पुव्वभवे तं मुहागयं इण्हि । परिदेविण्ण तो किं इयऽप्पणा संठवइ  
अप्पं ॥६६॥ न य वंधुणो न पट्टुणो न य सुहिणो पक्खवाइणोऽवि परा । कज्जं न सरइ विमुहे विहिंमि दिट्ठं तए  
सक्खं ॥६७॥ ता इकं चिय सुकयं ताणं सरणं जियाण इत्थत्ति । चित्ति एगपएसे सा तत्थालिहइ जिणपडिमं ॥६८॥ तं  
सायंती निचं तिविहाए वंदणाए वंदंती । हत्थसयमज्झभागे निम्मियदेसावगासिवया ॥ ६९ ॥ तत्थट्ठिअतरुनिवडिअफलभरसर-  
सलिलधरियनियपाणा । उग्गतवसोसियंगी अंगीकयविविहवयनियमा ॥ ७० ॥ जीवियमरणेषु समा समाहिणा गहियअणसणा  
कइया । जा चिट्ठइ सा बाला मुमरंती पंचनमुकारं ॥ ७१ ॥ तो तेण पएसेणं गच्छंतो सासए जिणे नमिउं । तं नियइ कोऽवि  
खयरो गसिजमाणं अयगरेणं ॥७२॥ तो सो फुरंतरोसो आकट्ठिअउग्गमंडलग्गो य । जा तं कयंतमीसणदेहं हयअयगरं इणिही  
॥७३॥ ता करुणाभरमंधरगिराइ बाला भणेइ अहहहहा । एयस्स मज्झ तणुणो कए सया पडणधम्मस्स ॥ ७४ ॥ कहकहवि  
पत्तभक्खं जीविअअमिकंखिरं दुहकंतं । अयगरमिमं वरायं मा मा मारेसु खयरवर ! ॥७५॥ किंच-अथिरेण थिरो समलेण

रत्नसारकथा

॥१८८॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री०  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१८९॥

निम्मलो परयसेण साहीणो । कीरइ परोवयारो तणुणा जइ तो न किं पज्जत्तं ? ॥७६॥ एईइ अहो करुणा अहो  
विवेओ अहो तयो य धिई । इय चिंतंतो तत्तो पत्तो खयरो सठाणंमि ॥७७॥ साऽविहु अयगरगसिआ पंचनमुक्कारसुमरणपदा-  
णा । मरिऊण पदमकप्पे जाओ सामाणिओ देवो ॥ ७८ ॥ विहरंतजिणवराणं निसुणंतो देसणं सवणसुहयं । विहिणा उ वंदणाए  
वंदंतो सासयजिणिंदे ॥७९॥ अट्टाहियाइमहिमं नंदीसरपमुहगिरिसु कुब्बंतो । केवल्लिमुणी नमंतो नियमाउं पूए तत्थ ॥ ८० ॥  
कालेण चविय तत्तो तो सो सिरिसेण नरवरंगरुहो । पडिपुन्नपुन्नसारो जाओसि तुमं रयणसारो ॥ ८१ ॥ सो पुण समरम्मि  
मओ अणंगसिहसेयरो भवे भमिउं । अजिणिय किंपि सुकयं संजाओ सीहसेणनिवो ॥८२॥ जो अयगरं हणंतो खयरो उ तथा भवं  
ममिय तत्तो । किंचि कयसुकयवसओ जाओऽसि पयावसूर ! तुमं ॥८३॥ पुब्भवन्भासाओ इत्थीलोलेण सीहसेणेण । सोउं रूवं  
आणाविया उ एसा मयणरेहा ॥८४॥ इय कुमर ! तुह पओसो फुरिओ निम्मुएवि सीहसेणनिवे । तह पटमं चिय दिट्ठे पयावसूरे  
अइसिणेहो ॥८५॥ सो चिय अयगरजीवो मरिउं भमिउं भवअरन्मि । काऊण किंपि कट्टाणुट्टाणं पुव्वजम्मंमि ॥८६॥ जाओ  
पदमे कप्पे सीलयइसुरस्स किंकरो अमरो । सो चेव तथा समरे कुमर ! तुह अकासि साहिज्जं ॥८७॥ इय सोउ जायजाईमरणो कुमरो  
लुहुं म्भयावेइ । निवइं कलिंगनाहं पुव्वभयं सोउ सोऽवि नियं ॥ ८८ ॥ भुज्जो शुज्जो खामिय पयावसूरं निवं तहा कुमरं । वेर-  
ग्गओ गिण्हइ दिक्खं चउनाणिगुरुपासे ॥ ८९॥ दाउ कुमरस्स रज्जं गुरुवेरग्गा पयावसूरोऽवि । दइयाइ मयणरेहाइ संजुओ  
गिण्हए दिक्खं ॥९०॥ अह रयणसारराया ते रायरिसी नमित्तु गुरुणेहा । कयकिच्चं अप्पाणं मन्नंतो सगिहमणुपत्तो ॥ ९१ ॥  
कइयावि सो नरिंदो अदन्भसरयन्भविन्भन्नजसोहो । दिसिज्जत्ताए चलिओ कलिओ चउरंगसिसेण ॥९२॥ अनमंते नामंतो पणयाणं

रत्नसारकथा

॥१८९॥



धीदे०  
धैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
धारविधौ  
॥१९०॥

वच्छिपाइ पूरतो । चूरतो रिउदपं कमसो पत्तो विणीयपुरिं ॥ ९३ ॥ तत्थेगं गिरिमुत्तुंगचंगसिगग्गभग्गरविमग्गं । पिच्छवि  
पुच्छइ सुमइं मित्तं को एम गिरिपवरो ? ॥ ९४ ॥ “सो आह सामि ! एसो अट्टावयपव्वओ जयपसिद्धो । इह दससहस्समुणिवर-  
महिओ सिद्धो रिसइनाहो ॥ ९५ ॥ एयस्सुपरिं सिरिभरहकारियं एगजोयणपमाणं । जिणभवणमत्थि कलियं चउवीसजिणिंदप-  
डिमाहिं ॥ ९६ ॥ तह एगो मह धूमो नमनवईभायनमनवइ धूमा । संति इह सामिइइखागसेसमुणीणं तिधूमा य ॥ ९७ ॥ तह  
सत्तुंजयसिद्धा भरहंमनिवई सुबुद्धिणा मिट्ठा । जह मगरसुयाणऽट्टावएत्थ तह किच्चियं धुणिमो ॥ ९८ ॥ (इह अट्टावयसेले  
सगरसुयाणं सुबुद्धिसच्चिवेण । जह भरहंसजनिवा सिट्ठा तह किंचि किंचेमि) ॥ ९९ ॥ आडच्चजसाइ सिवे चउदसलक्खा उ एगु  
सव्वट्ठे । एवं जा इक्किक्का असंख इय दुगतिगाईवि ॥ १०० ॥ जा पन्नासमसंखा तो सब्बंमि लक्खचउदसगं । एगो सिवे तहेव  
य अस्संखा जाय पण्णासं ॥ १०१ ॥ तो दो लक्खा मुक्खे दुलक्ख सव्वट्ठि मुक्खि लक्खतियं । इय इगलक्खुत्तरिया जा लक्ख  
असंख दोसु समा ॥ १०२ ॥ तो इगु सिवे सव्वट्ठि दुत्ति ति सिवंमि चउर सव्वट्ठे । इय एगुत्तरखुड्ढी जाय असंखा पुढो दोसु  
॥ १०३ ॥ तो इगु मुक्खे सव्वट्ठि तिन्नि पण मुक्खि इय दुरुत्तरिया । जा दोसुऽविय असंखा एमेय तिउत्तरा सेढी ॥ १०४ ॥ विसमुत्त-  
रसेढीए हिदक्खरि ठविय अउणतीस तिया । पढमे नत्थिक्खेयो सेसेसु सिया इमो खेयो ॥ १०५ ॥ दुग पण नमगं तेरस सतरस बावीस  
छच्च अट्ठेव । बारस चउदस तह अट्ठवीस छव्वीस पण्णीसा ॥ १०६ ॥ एगारम तेवीसा सीयाला सयरि सत्तहत्तरिया । इगदुगसत्ता-  
सीइ इगहत्तरिमेय पायट्ठी ॥ १०७ ॥ अउणुत्तरि चउ(ग्रंथ ३००?) नीमा छायाला तह सयं तु छवीमा । मेलित्तु इगंतरिया सिद्धीए  
तह य मव्वट्ठे ॥ १०८ ॥ उत्तिहंअं आई ठविउं नीयाइ खेयगा तहय । एयमसंखा नेया जा अजियपिया ममुप्पन्नो ॥ १०९ ॥

रत्नसारकथा

॥१९०॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥१९१॥

अस्सखमोडिलक्खा सिद्धा सञ्जङ्गावि ठविय तओ । गिण्हियचरणा देविंदरदिया सित्रपयं पत्ता ॥ ११० ॥” किं बहुणा नणु  
इमिणा गिरिणा सुरअसुरखयरनिलएण । सयलेऽवि महीएलए अन्नो तुल्लो गिरी नत्थि ॥१११॥” इति मित्रवचः श्रुत्वा, राजा  
त्रिम्मितमानसः । तत्रारोहद् गिरौ भक्तिभारस्फारपरिच्छदः ॥११२॥ प्रविश्य विधिना चैत्ये, स्नपयित्वा प्रपूज्य च । चतुर्विंशतितीर्थे-  
शानिति स्तोत्रं प्रचक्रमे ॥११३॥ “श्रीनाभिमरुदेवाग्रभवं कनकतिपम् । शृषांकं वृषभं वंदे, पंचचापशतीमितम् ॥११४॥ गजांको  
रुक्मरुत्सार्धचतुर्धन्वशतोन्नतः । श्रिये स्तादजितस्वामी, विजयाजितशत्रुभूः ॥ ११५ ॥ चतुश्चापशतोत्तुंगं, हेमाभं वाहनाहनम् ।  
जितारिराजसेनांगसंभवं शंभवं स्तुवे ॥११६॥ निष्कृतिपं पुत्रंगाकं, सिद्धार्थसंवरांगजम् । सार्धत्रिशतधन्वाङ्ग, सेपेऽहमभिनंदनम्  
॥११७॥ कोदंडत्रिशतीमानः, क्रौंचलक्ष्माऽऽर्जुनद्युतिः । मुदे मुमतिनायोऽस्तु, मंगलामेषभूपभूः ॥११८॥ मार्द्धत्रिशतचापोद्यं,  
सुसीमाधरनंदनम् । सरोजलक्षितं शोणप्रभं पद्मप्रभं स्तुवे ॥११९॥ पृथ्वीप्रतिष्ठसंभूतिर्द्विधन्वशतविग्रहः । सुपार्थनाथ ! रौचिः,  
स्वस्ति स्वस्तिः कचिह्व ! ते ॥१२०॥ चंद्राभं चंद्रलक्ष्माणं, लक्ष्मणामहसेनजम् । सार्द्धचापशतोच्छ्रायं, नौमि चंद्रप्रभं प्रभुम् ॥१२१॥  
सुग्रीवरामातनयं, मकरांकं हिमच्छविम् । सुविधिं विधिना वंदे, धनुःशतनमूत्रयम् ॥१२२॥ पायान्नप्रतिधन्वोद्यः, स्वच्छः श्रीर-  
त्सलांचितः । नदाददरथोद्भूतः, शीतलः कनकद्युतिः ॥ १२३ ॥ कल्याणनातिः श्रीविष्णुपिष्णुदेवीतनूरुहः । धन्वशीतिमितः  
पातु, श्रेयांसः खड्गिलांचनः ॥१२४॥ वसुपूज्यजयानुर्महिपाकोऽरुणप्रभः । चापसप्ततिदेहोऽव्याद्, वासुपूज्यजिनेश्वरः ॥१२५॥  
श्रीश्यामाकृतवर्मांगजन्मा पट्टिधनुस्तनुः । शूरुकांको हिरण्याभः, शिवाय विमलोऽस्तु मे ॥१२६॥ पंचाशद्वनुरुच्छ्रायः, सुयशः-  
मिहसेनजः । श्येनांकः स्वर्णवर्णः स्तादनंतोऽनंतसंपदे ॥१२७॥ सुत्रताभानुभूः पंचचत्वारिंशद्वनुर्मितः । जातरूपरुचिर्वचचिह्नो-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥१९२॥

ऽव्याद् धर्मतीर्थकृत् ॥१२८॥ चत्वारिंशद्बुद्धेहो, हेमधामा मृगध्वजः । विश्वसेनाचिराद्बुधुः, श्रीशांतिः शांतयेऽस्तु नः ॥१२९॥  
छागांकः स्वर्णरुक् पंचत्रिंशत्कार्मुकमूर्तिभृत् । श्रीकुंभुः श्रेयसे सूरश्रीराज्ञीतनयोऽस्तु मे ॥१३०॥ नंदावर्ताकितं त्रिंशद्बन्धमानं वसु-  
च्छविम् । अरनाथं स्तुवे देवीसुदर्शनसमुद्भवम् ॥ १३१ ॥ नीलं कुंभाकितं कुंभप्रभावत्यंगसंभवम् । पंचविंशतिकोदंडमूर्तिं मल्लि-  
मुपास्महे ॥१३२॥ पद्मासुमित्रयोः पुत्रं, घनाभं कूर्मलक्षणम् । चापविंशतिमानांगं, स्तवीमि मुनिसुव्रतम् ॥१३३॥ वप्राविजय-  
संभूतं, नमिं नीलोत्पलांकितम् । शातक्रौंभप्रभं पंचदशधन्वतनुं श्रये ॥१३४॥ शंखांको दशचापोचः, समुद्रविजयात्मजः । शिवा-  
यास्तु शिवाद्बुधुर्नैर्निर्भवधनत्विषिः ॥ १३५ ॥ नवहस्तवपुर्वालतमालदलदीधितिः । वामाश्वसेनभूर्भूत्यै, श्रीपार्श्वोऽस्तु फणिध्वजः  
॥१३६॥ सप्तहस्तमितं सिंहलांछनं कांचनत्विषम् । सिद्धार्थत्रिशलाद्बुधुः, श्रीवीरं प्रणिदध्महे ॥१३७॥ एवं स्तुताः स्ववर्णाकमानां-  
चापितृनामभिः । स्युः सदा धर्मकीर्तिश्रीनायका जिननायकाः ॥१३८॥ पंचांगस्पृष्टभूषणः, प्रणिपत्य पुनर्जिनान् । ततः चैत्य-  
ध्रियं पश्यन्, निर्ययौ नृपतिर्वहिः ॥१३९॥ गुणमाणिक्यसिंधूनां, बंधूनां भरतेशितुः । स्तूपेषु तत्र सिद्धानामर्चा आनर्च भक्ति-  
भाक् ॥१४०॥ कुतूहलवशोचानलोचनः क्षितिपथ ताम् । यावन्निरिधुमाणोऽस्ति, सर्वतः पर्वतश्रिम् ॥१४१॥ ता केणवि खय-  
रेणं विमाणमारोविद्धुण लहु नीओ । वेयद्बुनागसिरिपुरसामिरयणचूडनिवपासे ॥१४२॥ सप्पणयं तेषुत्तो नरवर ! कुलदेवयाइ कहि-  
ओऽसि । मह रिउकोसलपुरसामिविजयवम्मनिवविजयखमो ॥१४३॥ ता गिण्ह लहु इमा गयणगामिणीपभिइ विज्ज अह सोउं । तं  
साहिय बहुविज्जं इंतं खुद्धो विजयवम्मो ॥१४४॥ अतुच्छलच्छिविच्छड्डमंडियं छंडियं गओ रज्जं । तं गहिय रयणसारो महिय-  
रिऊ सिरिपुरं पत्तो ॥ १४५ ॥ द्विष्टेण रयणचूडेण निवइणा नियसुयं कणयमालं । सिरिसेणनिवंगरुहो विवाहिओ गुरुविभूर्इण

लसारकथा

॥१९२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥१९३॥

॥१४६॥ तयणु विमाणारूढो राया खेयरसमूहपरियरिओ । प चो केलासनगे पिच्छइ नियसिन्नमइसुत्रं ॥ १४७ ॥ निअदंसण-  
अंमएणं तेसिं हरिउं विसायविसपसरं । नमिय जिणे उत्तरिउं नगाउ पत्तो विणियपुरिं ॥१४८॥ अह सरिय नमिय पिउणं भिस-  
मुकंठियमणो महीनाहो । सेविजंतो वहुमउडबद्धनरवरसहस्सेहिं ॥ १४९ ॥ गयणयलं धरणियलं खेयरनिवहेहिं निययसेनेहिं ।  
पूरंतो तूंतो नियनियराभिमुहमह चलिओ ॥१५०॥ एगेणं खयरेणं सिरिसेणनिरो पुरो समागम्म । वद्धाविओ य सिरिरयणसार-  
आगमणकहणेणं ॥१५१॥ एत्तो गरुयविभूइं इय निउं संमुहं सुयस्स निरो । इयरोवि दट्ठ जणयं ओयरिओ लहु विमाणाओ  
॥१५२॥ तो विहियदट्ठसोहे संभंतखलंतपउरजणनिग्हे । सपुरंमि ते पविट्ठा पहिट्ठचित्ता जयणतणया ॥१५३॥ पणमित्तु जणणि-  
पायाण रयणसारो तत्रो जहाउचियं । सक्कारिय सम्माणिय विसज्जए खेयरे ते उ ॥ १५४ ॥ अह सिरिसेणनिवइणा पुट्ठो समए  
नियंगरुहमित्तो । सुमई साहइ सबं वुत्तंतं रयणसारस्स ॥१५५॥ इत्तो निउत्तपुरिसाउ सोउं अकलंकस्सुरिआगमणं । गुरुनमणत्थं  
पत्तो सिरिसेणो पुत्तमित्तजुओ ॥१५६॥ धम्मं सोउं रज्जे पुत्तं ठावित्तु गहियपव्वजो । सिद्धो सिरिसेणरिसी अन्नत्थ गुरुवि विहरित्था  
॥१५७॥ राया उ रयणसारो पवलपयावो पयाउ पालंतो । जणयंतो साहम्मियलोयाण अतुच्छवच्छल्लं ॥१५८॥ जिन्नाइं उद्धरंतो  
नवाइं जिणमंदिराइं कारित्तो । चिइवंदणापहाणो तिवग्गसारं कुणइ रजं ॥ १५९ ॥ वेरग्गमग्गलग्गो अन्नदिणे तणयनिहियरज्ज-  
भरो । अकलंकस्सरिपासे गहियवओ मुखमणुपत्तो ॥१६०॥ इति फलमतिरम्यं रत्नसारस्स राज्ञो, विदधत इह जैनीं वंदनां त्रिप्र-  
कारान् । स्वमनसि परिभान्य श्रेयसामेकगेहे, कुरुत भविकलोकास्तत्र यत्नं सदापि ॥१६१॥ इति श्रीत्रिविधचैत्यवंदनायां  
रत्नसारनरेन्द्रकथा ॥ अथ वाचनांतरोक्तत्रैविध्यादिप्रदर्शनतरं भव्यजनानुग्रहाय किंचिदुच्यते—

रत्नसारकथा

॥१९३॥

धीदे०  
पेत्य० श्री-  
पर्म० संपा-  
पारविधौ  
॥१९४॥

अत्रे चिति इगेणं सक्रथणं जहन्नवंदणया । तदुगतिगेण मज्झा उक्कोसा चउहि पंचहिं वा ॥ २४ ॥  
इत्यसयाओ मज्झे हरियावहियाअभावओ दुन्नि । एवं उक्कोसाए चउरो सक्रथया नेया ॥ १ ॥ (१७०) भणिऊण नमुक्कारे  
सक्रथयदंडयं अपडिऊणं । इरियं पडिकमंते दो चउरो वावि पणिवाया ॥२॥ (१७१) इरियाए पुबं वा पणिहाणंते व सक्रथय  
भणणे । दुगुणचिइवंदणाते व हुंति सक्रथया तिन्नि ॥३॥ इगवारवंदणे पुब पच्छा सक्रथएहिं ते चउरो । दुगुणिअवंदणाए पुवी  
पच्छा व सक्रथए ॥४॥ सक्रथओ अ इरिया दुगुणिअचिइवंदणाइ तह तिन्नि । थुत्तपणिहाण सक्रथओ य इय पंच सक्रथया  
॥५॥ पाडकिरियाणुसारा भणिआ चिइवंदणा इमा नवहा । तिविहाहिगारिमावा तिहावि सा इय भवे नवहा ॥ ६ ॥ उक्तं च-  
अहमाणि अपुणवंधगविरयाविरयाण भिन्नभावाणं । तिण्हइहिगारीण पिहो तिविहावि भवे तओ नवहा ॥ ७ ॥ मिच्छत्तुक्कोसठिइं  
न वंधिही अपुणवंधगो जेण । समयकुमलेहिं सो पुण इमेहिं लिगेहिं नायवो ॥८॥ पावं न तिषभावा कुणइ न चहुं मन्नई भवं घोरे ।  
उचियट्टिइं च सेवइ सव्वंधवि अपुणवंधोत्ति ॥९॥ तत्तथे रोयंतो सम्मदिट्ठी असग्गहच्चाया । देसेअरविरइजुओ चारिती तुलिय-  
सामत्यो ॥१०॥ सुस्सुम धम्मराओ गुरुदेवाणं जहासमाहीए । वेयावचे नियमो सम्मदिट्ठिस्स लिंगाई ॥११॥ भग्गणुसारी सइदो  
पन्नवणिओ किआवरो चेव । गुणरागी सक्रारंभसंगओ तह य चारिती ॥१२॥ तथा-वंदणकहासु पीई अमवण निन्दाइ निंदगऽणु-  
कंपा । मणसो निचलनासो जिन्नासा तीए परमा य ॥१३॥ गुरुविणओ तह कालाविकखा उचिआसणं च सह कालं । उचियस्सरो  
य पाढे उउत्तो तहय पाढंमि ॥१४॥ लोगपियत्तमनिंदियचिट्ठा वमणंमि धीरया तहय । सत्तीए तह चाओ य लद्धलक्खणत्तणं  
चेव ॥१५॥ एएहिं लिगेहिं नाऊणइहिगारिणं तओ सम्मं । चिइवंदणपाढाइवि दायवं होइ विहिणा व ॥१६॥ भणिअं च-अत्यो

वन्दनाम्  
तान्तरापि

॥१९४॥

धीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥१९५॥

विहिकहणं वा अञ्ज चिद्वंदणाइ दूरेण । पाढोवि तीइ देइ उ अहिगारिणो अपुणवंधाई ॥१७॥ दिआ उ अणहिगारिणि अवि-  
हिअवन्नाइसेवणा जस्स । दुपउत्तओसहंपिव होइ अकल्लाणजणगत्ति ॥ १८ ॥ तम्हा उ अपुणवंधगअविरयविरएहि होइ कायवा ।  
विहिउचियवित्तिवहुमाणभत्तिकलिएहिं सयकालं ॥ १९ ॥ साहूहिं गिहत्थेहि अ अणन्नचिद्वेहिं जत्तकलिएहिं । जहसंभवं गिहीहिं  
कयजिणपूयोवयारेहिं ॥२०॥ तह दहभावभेया दुहा इमा दहओ पुणो दुविहा । अपहाणा य पहाणा हेऊभावस्सिह पहाणा ॥२१॥  
तत्थ पहाणा एसा होउ पुणो अपुणवंधगाईणं । अपहाणच्चिअ सेसाण इत्थ सइबंधगाईणं ॥२२॥ ताण सइबंधगाणं मग्गाभिमुहाण  
मग्गवडियाणं । इयराणवि अपहाणा चिद्वंदण दवओ होइ ॥ २४ ॥ उवओगअत्थच्चित्तणगुणराया लाहविम्हओ चेव । लिंगाणि  
विहिअमंगो भावे दब्बे विवज्जओ ॥२४॥ वेलाविहाणतग्गयमणत्तणुवयणाणि तह य लिंगाणि । रोमंचभावबुड्डीइ भावचिद्वंद-  
णाइ भवे ॥२५॥ सुत्ते एगविहच्चिअ भणिआ तौ पेगसाहणमजुत्तं । इय धूलमई कोई भन्नइ सुत्तं इमं सरिउं ॥२६॥ तिन्नि वा  
कड्डी जाव, थुइओ तिसिलोइया । ताव तत्थ अणुत्तायं, कारणेण परेणवि ॥ २७ ॥ भणइ गुरू तं सुत्तं चिद्वंदणविहिपरूवगं न  
भवे । निक्कारणजिणमंदिरपरिभोगनिवारगत्तेण ॥ २८ ॥ जं वासदो पयडो पक्खंतरसुयगो तहिं अत्थि । संपुन्नं वा वंदइ कड्डी  
या तिन्नि उ थुइओ ॥२९॥ एसोऽवि हु भावत्थो संभाविज्जइ इमस्स सुत्तस्स । तो अन्नत्थं सुत्तं अन्नत्थ न जोइउं जुत्तं ॥३०॥  
किंच-जइ इत्तियमित्तं चिअ जिणवंदणमणुमयं सुए हुंतं । थुइथुत्ताइपवित्ती निरत्थिया हुज्ज सत्तावि ॥ ३१ ॥ अन्नं च-गीयत्था  
विहिरसिया संविग्गतमा य सरिणो पुरिसा । कह ते सुत्तविरुद्धं सामायारिं परूवित्ति ॥ ३२ ॥ अहवा चिद्वंदणया निचा श्य-  
रित्ति होइ दुविहा उ । निचा उ उभयसंज्ञं इयरा चेइयगिहाईसु ॥३३॥ निचा संपुन्नच्चिय इयरा जहसत्तिओ उ कायवा । तवि-

चन्दना-  
मेदाः

॥१९५॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारपिथी  
॥१९६॥

सयमियं मुक्तं मुणंति गीया उ परमत्थं ॥ ३४ ॥ संममवियारिऊणं सओ य परओ य समयसुचाई । जो पवयणं विगोवइ सो  
नेओ दीहसंसारि ॥३५॥ दूमदोसा जीवो जं वा तं वा मिसंतरं पप्प । चइय बहुं करणिअं थोवं पडिवजइ सुहेण ॥३६॥ इक्कं न  
कुणइ मूदो सुयमुदिसिउं नियकुवोहंमि । जणमन्नंपि पवत्तइ एयं वीयं महापावं ॥३८॥ उप्पन्नसंसया जे सम्मं पुच्चंति नेव गीयत्थे ।  
सुक्कंति सुद्धमग्गा ते पल्लवग्गाहिपंडिच्चा ॥ ३९ ॥ बहुभेया पुण एसा भणियत्ति बहुसुएहिं पुरिसेहिं । संपुन्नमचायंतो मा कोइ  
चइल सन्वावि ॥३९॥ इत्यमिहितं त्रिधा चंदनेति पंचमं द्वारं, तत्र जघन्या चंदना प्रणिपातनमस्कारेत्युक्तं, अतस्तावत्प्रणिपात-  
स्वरूपाभिधित्तया षष्ठं द्वारं गाथापूर्वाद्धिनाह—

पणिवाओ पंचंगो दो जाणू करदुगुत्तमंगं च ।

अथवा प्राक् 'अंजलिवंधो? सिरसो णमणे? पंचंगओ इय तिपणामा' इति जघन्यादिभेदेन प्रणामत्रयमुक्तं, तत्र तृतीयः प्रणामः  
किमेकांगादिः पंचप्रकार उत भूस्पृष्टांगपंचकलक्षण इति जिज्ञासायां तद्व्यक्त्यर्थमिदमाह, यद्वा ननु लोके अष्टांगप्रणामोऽपि श्रूयते  
तन् कथं पंचांग एवोत्कृष्ट इत्यारेकायां जिनसमयप्रसिद्धसिद्धयर्थमेवमभिधीयते—प्रणिपातः—प्रणामः 'पंचांगः' पंचांगानि शरीरा-  
वयना नम्राणि यत्र स पंचांगप्रणामः समये, सुरेन्द्रदत्तकुमारचत्, पंचमिरंगैर्भूमिः स्पर्शनीयेत्यर्थः । तथा चोक्तमाचारा-  
द्वयपूर्णं—“कहं नमंति?, सिरपंचमेण काएण”ति, कानि तानीत्याह—द्वे जानुनी—अष्टीवती करद्विकं—हस्ततलद्वयं उत्तमांगं च—  
मस्तकं चेति, एतेन सिद्धान्ताप्रसिद्धत्वादित्वाद्दष्टांगो न्यपेधि, उक्तं च भाष्ये—“अन्ने अद्भुत्रयारं भणंति अहुंगमेव पणिवायं ।  
सो.पुण सुए न दीसइ आइचो नय जिणमयंमि ॥ १ ॥ (२११)ति, यद्वा प्रणिपातः पंचांगः—पंचप्रकारः शिरःप्रभृत्येकाद्यंग-

प्रणाम-  
भेदाः

॥१९६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥१९७॥

योगत एकांगादिमेदात्, यदुक्तं-एकांगः शिरसो नामे, स द्व्यंगः करयोर्द्वयोः। त्रयाणां नमने त्र्यंगः, करयोः शिरसस्तथा ॥१॥  
चतुर्णां करयोर्जान्वोर्नमने चतुरंगकः। शिरसः करयोर्जान्वोः, पंचांगः पंचभो मतः ॥ २ ॥ सुरेन्द्रदत्तकुमारकथा चैवम्-  
अस्थिह नयरी महुरा महुरालवणप्पमोयलयजुया। नयवंतपढमलीहो तत्थ नरिंदो समरसीहो ॥ १ ॥ तस्स य ललिया  
दइया सुरिन्ददत्तो सुओ स अन्नदिणे। कीलाकए समित्तो पत्तो कुसुमागरुजाणे ॥२॥ सेसं व खमाहारं हारं सारं व मुत्तिरम-  
णीए। तत्थ बहुसिस्ससहियं पिच्छेइ गुणंधरायरियं ॥ ३ ॥ असरिसहरिसुक्करिसो कुमरो पणमेइ तस्स पयकमलं। जलभार-  
भरियजलहरगिराइ कहई गुरू धम्मं ॥४॥ “पंचांगचंगमतिरंगभरेण भव्यो, यो वंदते जिनपतिं विगतप्रमादः। तेनेऽत्र तेन वसु-  
धावलये यशः खं, दौर्गत्यदुःखतरुखंडमखंडि शीघ्रम् ॥ ५ ॥ तं प्राज्यराज्यकमला कमलीकरोति, तस्मै सदा स्पृहयति त्रिदशा-  
सुरश्रीः। तस्सेन्दुकाशकुसुमोज्ज्वलपुण्यराशेरद्वैतसौरुयपदवी न दवीयसी स्यात् ॥ ६ ॥ (प्रत्यन्तरे-पंचांगभंगमतिरंगभरं नमेद्यो,  
निःसंगिनं जिनमनंगजितं समंतात्। स स्यादिह त्रिजगताऽपि सदा नमस्यस्तं प्राज्यराज्यकमला कलयत्यवश्यम् ॥ १ ॥ दौर्गत्य-  
दुःखतरुखंडमखंडि तेन, तस्मै सदा स्पृहयति त्रिदशासुरश्रीः। तस्माद् द्रुवं द्रवति रौद्रदरिद्रमुद्रा, तस्य प्रकर्षपदवी न दवीयसी  
स्यात् ॥२॥) एवं निसम्म कुमरो पंचंगं मे जिणेसरो निचं। नमियत्तो इय गिण्हिय अभिग्गहं जाइ सट्ठाणे ॥७॥ कइयावि समर-  
सीहो अणेयमंडलियमंडियत्थाणो। जा चिट्ठइ कुमरजुओ ता भणिओ वित्तिणा एवं ॥८॥ देव! कुसत्थलपुरपहुहरिवाहण-  
निवइणो पहाणनरो। पहुदंसणं समीहइ चारे को तस्स आएत्तो? ॥९॥ लहु मुंचसुत्ति रत्ता वुत्ते सो तेण तत्थ आणीओ। नमिय  
निचं उवचिद्धो हिद्धो विन्नवइ वयणमिणं ॥१०॥ देवऽह्म सामिणो सिरिहरिवाहणनिवइणोऽह्म धूयाओ। रयणवईपमुहाओ उवण-

प्रणामे  
सुरेन्द्रदत्त-  
कथा

॥१९७॥



श्रीदे०  
वैत्य० श्री  
पद्म० संपा  
शरविषी  
॥१९८॥

जोषणममणुपचा ॥ ११ ॥ ताओ सुणिय गुणगणं सुरिंददचस्त कुमरतिलयस्त । खयरीहिं गिजंतं ससंककंतं पसंतं च ॥ १२ ॥  
कुमरे ददाणुरागा मणमावि अपत्थिरी उ अन्नं तु । णे पद्दुणा कुमरकए सयंधरा ताउ इह पहिया ॥१३॥ इय सोउ निवो तुड्डो तं  
सक्कारिय निसं पहाणनरं । कुमरीण जहाउचिए अप्पावइ पवरआवासे ॥ १४ ॥ देवञ्चुदिनदिवसे महाविभूर्ईइ समरसीहनिवो ।  
कुमरीण पाणिगहणं सुरिंददत्तेण कारेइ ॥१५॥ सक्कारिय संमाणिय महरिहवत्थाइणा पहाणनरे । नियनयरेसु विसज्जइ जहोचियं  
लोयमन्नंपि ॥ १६ ॥ अट्टहिं पियाहि सहिओ सुहासओ बहुसुपवकयहरिसो । कालं वोलइ सहिओ सुरेंददत्तो सुरिंदुव्व ॥ १७ ॥  
जन्दिणे तत्त्वागपञ्जुगंधरायरियपायनमणाय । पत्तो पद्धिच्चित्तो राया कुमराइपरियरिओ ॥१८॥ कयपंचविहाभिगमो संगय-  
पंचंगपुट्टमहिबट्टो । नमिय गुरुं उवविट्टो इय भयवं वज्जरइ धम्मं ॥ १९ ॥ “यः सर्वांगगुरुप्रमोदपुलकः पंचांगभूस्पर्शनो, दुष्टा-  
नंगविपातिनो जिनपतेः पादद्वयं वंदते । भुज्जाऽशेषपदंतरंगरिपुजित् सप्तांगराज्यश्रियं, इत्थाऽष्टांगमशेषकर्मपटलं ग्रामोत्थसंगं  
पदम् ॥२०॥” अइ पुच्छइ नरनाहो पद्दु! मह तणएण किं कयं सुकयं ? । पुव्वभवे जेण इमो पत्तो एयारिसं रिद्धिं ॥२१॥ भणइ  
गुरु भो नापर ! तुणेहि इह जंबुदीवमरहंमि । गांमि पारिभे अहेसि सीहुत्ति कुलउत्तो ॥ २२ ॥ जं जं करेइ कम्मं तं तं  
सयलंपि होइ से विहलं । देसंतरगमणाई पुज्जो तो चित्तए चित्ते ॥२३॥ किमहं करेमि निम्भग्गसेहरो हयमणोरहं विहीणो । सीहोऽवि  
हहा होऊण जंबुओवि हु न निदडिओ ॥ २४ ॥ देसंतरंमि जाही मम रुद्धरिद्धदुक्खदंदोली । अहह हहा सा उ ममं तत्थवि  
पुरओ पडिक्खेइ ॥२५॥ दीसंति भंवसिद्धा अंजणसिद्धावि कहवि दीसंति । दारिदजोगसिद्धा पुरओवि ठिया न दीसंति ॥ २६ ॥  
अहव अनिच्चोचिय सिरीइ मूलंति चित्तिउं पुइवि । इत्तो त्तो ममिरो सो पत्तो रोहणगिरिम्मि ॥२७॥ अरगणियरयणिदित्तो

प्रणामे.  
सुरेन्द्रदत्त-  
कथा

॥१९८॥

धीदे०  
वैत्य० धी-  
पर्म० संपा  
चारिषो  
॥१९९॥

कहंपि सो खणियखाणिखोणीओ । अज्जइ अवज्जवजाइं वज्जपमुहाइं रयणाइं ॥ २८ ॥ ताइं जरदंडिखंडे वंधिय नियगामहुत्तमह  
चलिओ । कत्थवि संतो बुचो य सत्थरे जाव पयलाइ ॥२९॥ ताव सहसत्ति तं दंडिखंडमादाय मक्कडो नट्टो । सीहस्म गंठिपदा  
पाणह गयाइं रयणाइं ॥३०॥ उदंडदंडखंडं उप्पाडिय घाविओ स पुट्टीए । रे उक्कडमक्कड कत्थ जासि मारेमि इय भणिरो ॥३१॥  
अकरावरतरुपरसिहरसेणिसंचरणओ लहु पवंगो । कत्थवि निवडियगंठी नयणाण अगोयरं पचो ॥३२॥ हा हा हओ म्हि रे दिव !  
दारुणो बुज्जणस्स व तुहेसो । निक्कारणओ निक्करुण कोऽवि मइ वइरवावारो ॥३३॥ रयणुच्चएण इमिणा पूरिस्सं किर मणोरहे  
नियए । कइ कविरूपेण अरे सुट्टो थट्टो य दुट्ट वए ॥ ३४ ॥ हिययं असरिसहरिसेण विलसइ हयविही उ विहडेइ । विलसइ  
सयसकत्ताइं कत्तानिही गिलइ अहह तमो ॥ ३५ ॥ इय श्रंतो दट्टुं कुओऽवि आगम्म जोगिणा एसो । फालुणिएण व बुत्तो  
पच्च ! तुमं फीस दीपोसि ? ॥३६॥ तेणवि नियपुचंतो बुचो तो जोगिणा इमो भणिओ । लहु एहि मए सद्धि रससिद्धि जेण  
सुइ देमि ॥३७॥ तो षेण सभं पलिओ सीहो पचो कमा विपरमिककं । रसकूवीइ पविट्टो मंचीए गहिय रसतुवं ॥३८॥ रसभ-  
रियतुंपओ सो पचो रज्जइ विररारंमि । चित्तेइ ताव जोगी लेमि रसं मरउ एस इहं ॥३९॥ अह भणइ इमो अप्पसु रसमुत्तारेमि  
जेण सं पच्चा । असइ रतस्त सुग्ग प उभयस्स प होद्धिइ पमाओ ॥४०॥ नियभुयवलउत्तिओ सरसो भुवणं तणं व मधंतो । जा  
जा जोगिणा सह वा पुण चित्तेइ इमो पावो ॥४१॥ मारेमि इमं उररीकरेमि रसमेयमसरिसपहावं । मारिजंतो जइ पुण मारइ तो किं  
ओ पाही ? ॥४२॥ ममुत्तामत्थेऽवि परंमि अतुल्लिए को मुहो थएइ समुहो ? । विवरं विसहररहियंपि जणेइ हियगस्स  
आरंमि ॥४३॥ वा अइसययीससिथं फाउमिमं वंधिसुधि चित्तंओ । भणइ इमो जइ नऽज्जवि इमिणावि रसेण तुइ तोसो ॥४४॥

प्रणामे  
सुरेन्द्रदच-  
कथा

॥१९९॥

धीदे०  
शैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥२००॥

ता कदसु कणयपुरिसं देमि इय जंपिए गया दोऽवि । गामस्तेगस्स वहिं नग्गोहयले निसन्ना य ॥४५॥ भत्तस्स कए कयकइयवेण  
अह तेण जोगिणा सीहो । दीणारदुगं अप्पित्तु पेसिओ गाममज्झंमि ॥४६॥ वीससिएण तं तेण तुंबयं मुक्कमेयपासंमि । सो उण  
तस्सव जीयं गिण्हिय तं कत्थइ पलाणो ॥ ४७ ॥ अह गहियभूरिमतो पत्तो कुलपुत्तओ तहिं जोगिं । अनिएवि मणे खुद्धो हा  
हा मुद्धो हयासोऽहं ॥४८॥ अतणुमणिरयणपुत्तं पवरनिहिं दंसिउं न दंसेइ । खणमित्तेणेव जणाण इंदयालं अहो विहिणो ॥४९॥  
एमाइ वहुं शूरिय दरभुत्तो चेव तस्स जोगिस्स । सुद्धिकए परिभमिरो जा जाह गिरिम्मि एगम्मि ॥५०॥ देवेहिं महिजंतं तक्कालुप्प-  
मकेलंनानं । पिच्छिवि पहाससाहुं नमिय निसत्तो सुणइ धम्मं ॥५१॥ यथा—“इह तुल्लेवि नरत्ते एगे पहुणो पयाइणो अन्ने ।  
धम्माधम्मफलं ता नाउं भविया ! कुणह धम्मं ॥५२॥ जह इहलोइयकजे सब्वत्थामेण उज्जमइ लोओ । तह जइ लक्खंसेणावि पर-  
लोए ता सुही होइ ॥५३॥ धम्मेण विणा जइ चिंतियाइं लब्भंति इत्थ सुक्खाइं । ता तिहुयणेऽवि सयले न कोऽवि इह दुक्खिओ  
हुज्जा ॥५४॥” इय सोउ भणइ सीहो सच्चमिणं ते मुणिंद ! निदिट्ठं । किंतु पसिऊण मज्झं उचियं धम्मं समाइससु ॥५५॥ जंपइ  
मुणीवि भो सीह ! सीहसरिसं कुक्कम्मगयदलणे । निच्चं जिणिंदचंदं नमिज्ज पंचंगनमणेण ॥५६॥ अन्नाण १ कोह २ मय ३ माण ४ लोह ५ मा-  
या ६ रई ७ य अरई ८ य । निहा ९ सोय १० अलियवयण ११ चोरिया १२ मच्छर १३ भया १४ य ॥५७॥ पाणिवह १५ पिम्म १६ कीलापसंग १७-  
हासत्ति १८ अट्टदस दीसा । जस्स गया तं देवं नमिज्ज पंचंगनमणेण ॥५८॥ जो वंदिज्जइ सययं देविंदनरिंदवंदविंदेहि । तं भइ ! तुमं  
देवं नमिज्ज पंचंगनमणेण ॥५९॥” अह सीहो मुणिपासे नियममिमं गिण्हए मए अरिहा । पंचंगनमणपुवं जा ण नओ ता न भुत्तवं  
॥६०॥ तयणु अणुत्तरनाणो मुणी विहारं अकासि अन्नत्थ । इयरोऽवि पहिड्डमणो तत्तो सेलाउ ओयरिओ ॥६१॥ जिणनमणमंतरेणं

प्रणामे  
सुरेन्द्रदत्त-  
कथा

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२०१॥

अकयाहारो तयं महद्द्वानं । लंघित्तु दिणदुगेणं मलयपुरे कद्ववि सो पत्तो ॥६२॥ तत्थुज्जाणे सिरिरिसहनाहपडिमं पद्विट्तुट्टमणो ।  
उप्फुल्लवयणनयणो पणमइ पंचंगपणिवायं ॥ ६३॥ तन्भत्तिरंजियमणो गोमुहजक्खो भवित्तु पचक्खो । वरसु वरंति भणेई तहवि  
अणीहस्स तेण तओ । (प्रत्यन्तरे-चित्तइ सीहो वरेणं किं? ॥६४॥ जं न रसाइ ठियं मे तह दुलहं लद्धमिण्हि लद्धवं । जिणपयवं-  
दणमसमं अहरियचित्तामणाइगुणं ॥६५॥ भणियं च-एक्कावि जा समत्था जिणभत्ती दुग्गइं निवारेउं । दुलहाइं लहावेउं  
आसिद्धिं परंपरसुहाइं ॥६६॥) ॥६४॥ विसमे पलायमाणो सो जोगी निग्गिओ भओ तइया । तं कोडिवेहरसतुं वमाणित्तं अप्पियं  
तस्स ॥६५॥ कविचावलावहरियं मम्मप्पियं तं पि रयणनियरं तं । नेऊण पारिभद्दे गामे मुक्को स जक्खेण ॥६६॥ तत्थ य परं  
पसिद्धिं पत्तो वित्थरियविहवसंभारो । मज्झिमगुणेहिं जुत्तो जिणवंदणपूयणुज्जुत्तो ॥६७॥ सो मरित्तं तुह पुत्तो सुरिंदत्तो इमो  
इहं जाओ । जिणनमणपहावेणं पत्तो एयारिभिं रिद्धिं ॥६८॥ इय मुणिवयणं मुच्चा पुब्बमं सुमरित्तं नमिय गुरुणो । जिणनमण-  
मिग्गहजुयं गिहिधम्मं गिण्हए कुमरो ॥६९॥ पिउदिन्नरजभारो सुइरं परिपालिऊण गिहिधम्मं । पडिवन्नसमणभावो जाओ अमरो  
महासुक्के ॥७०॥ तो सत्तट्टभवेसुं अमरनरगणसु सुहमणुहवेउं । जीवो सुरिंदत्तस्स पाविही अक्खयं ठाणं ॥७१॥ इत्यवधार्य  
कुकार्यनिवृत्तं, क्षितिपतिसमरसिंहसुतवृत्तम् । भव्याः! पंचांगप्रणिपातं, कुरुत जिनेभ्यः कृतसुखजातम् ॥७२॥ इति सुरेन्द्रदत्त-  
कुमारवृत्तं ॥ इति भणितं प्रणिपात इति षष्ठं द्वारं, संप्रति नमस्कार इति सप्तमं द्वारं गाथोत्तरार्धेनाह—

सुमहत्थनमुक्कारा इग दुग तिग जाव अट्टसयं ॥२५॥

‘सुमहार्थाः’ शोभनो वैराग्यादिजनको महांश्च श्लेषोपमारूपकक्रियागुप्तकयमकानुप्रासविरोधालंकारादिगोचरो विचित्रोऽति-

प्रणामे  
सुरेन्द्रदत्त-  
कथा

॥२०१॥

धीदे०  
 ऐत्य० श्री-  
 पर्न० संपा-  
 धारिणी  
 ॥२०२॥

शाक्ययो येषां ते सुमहार्थाः नमस्कारा-मंगलवृत्तानि, कियंतश्चैते भण्यंते इत्याह-एको द्वौ त्रयो वा यावदुत्कृष्टतः अष्टोत्तरं शतं, एवं यथायोगं नमस्कारान् भणित्वा पश्चाद्यथाविधि प्रागुक्तस्वरूपं प्रणिपातं कुर्यात्, तथा चागमः-“पयत्तेण ध्वं दाऊण जिणव-  
 राणं अट्टमयविमुद्गंयजुत्तेहिं अपुणरुत्तेहिं महावित्तेहिं संथुणइ’ विजयकुमारवत्, तत्कथा चैवम्—

इह अत्थि हत्थिणपुरे विजियऽन्नवलो विजयवलो राया । सोहृग्गसुंदरी तिलयसुंदरी दोय से भज्जा ॥१॥ पडमाइ पडम-  
 नामो पुत्तो वीयाइ विजयअभिहाणो । बालोच्चियकीलाहिं कीलंता दोऽवि वट्ठंति ॥२॥ कइयावि तिलयसुंदरीदेवीइ जलोदरं दढं  
 जायं । विहिया बह्वयारा मणंपि जाओ परं न गुणो ॥३॥ ता बुन्नमणाइ अणाइ अंसुपुन्नाइ पभणिओ राया । सामिय ! मं कारावसु  
 परलोयहियं पसीय लहं ॥ ४ ॥ भणइ निवो दीणमुहो किं इमिणा मज्झ देवि ! रज्जेण ? । किं वा चउरंगवलेण जीविण्णावि किं  
 बहवा ? ॥५॥ जं सुयणु ! तुज्झ विरहे ता तइ काहं अहं पयत्तेण । जह तं होसि अरोगा सजीवियवंपि दाऊण ॥६॥ इय पणयप-  
 उणयणेहिं पिययमं संठवेवि नियगेहे । रत्ताऽऽगम्म सुमरिया कुलदेवी भणइ नरनाहं ॥७॥ किं सुमरियऽमिह रायाऽऽइ पसीय  
 दइयं करेसु नीरोगं । देवी-सक्केणावि नहु सक्का देवी काउं अरोगत्ति ॥८॥ जं पुब्बभवे जीवेणऽणुट्ठियं रागदोसदुट्ठेण ।  
 अन्नाणपरिगएणं च अस्तुहकम्मं अणिट्ठफलं ॥९॥ तं ओसहेहिं विविहेहिं विबुहनिवहेहिं दाणवगणेहिं । अवहरिउं  
 नहु सफइ अचेइयं निययदेहेण ॥१०॥ राया जंपइ भयवइ ! इमीइ किं दुक्कयं कयं पुत्तिं ? । देवी भणेइ चंगाविसण नयरे  
 पडमसंते ॥११॥ अभयकुमारो सिट्ठी संतिमई नाम आत्ति से भज्जा । दुत्तिवि जिणधम्मपसा गुरुजणसुस्सयणरया य ॥१२॥  
 अइ संतिमई केणपि विसमपओगेण विरसभावगयं । जाणंतीविहु अन्नं धम्मजसमुणिसस वियरइ ॥ १३ ॥ सोऽवि उवस्तयमा-

नमस्कारे  
 विजयनूपः

॥२०२॥

श्रीदे०  
शैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२०३॥

गम्म गुरुसमीचे पडिक्कमिय इरियं । करमत्तदाइवावारमाइ विहिणा समालोए ॥१४॥ सरिऊणं जिणनाहे गुरुगणगुरुणो तम-  
ऽन्नमहगुरुणो । कयवालगिलाणाईचिंतो भुत्तुं समारद्धो ॥ १५ ॥ अह सवियारे परिवागदोसभावाउ तंमि आहारे । भुत्तंमि तस्स  
समणाहिवस्स देहंमि संकंता ॥१६॥ अइदुसहदाहवेयण जराइसाराइमाइणो रोगा । साहूहि य पडियरिया जाया कहकहवि पउण-  
ठणू ॥१७॥ पडियोहिय बहुयजणं परिकम्मिय अप्पयं च जिणकप्पे । पजंतकयाणसणा गुरुणो सुरलोयमणुपत्ता ॥१८॥ संतिमई  
दुट्टमई अचंतविरुद्धभत्तदाणेण । अज्जियगिरिगरुयकिलेसजालजलणुज्जलियदेहा ॥१९॥ नरयतिरिक्खगईसुं निंदियज्जाईसु दुस-  
हदुहकलिया । दाहजरकाससासाइपरिगया भमिय भूरिभवे ॥ २० ॥ दारिदकूले जाया वड्डुकुमारीवि केणवि अणूढा । वेरग्गगया  
गिण्हियमहबया विहियविहत्तवा ॥ २१ ॥ सरिऊणं सा जाया तुह भज्जा तिलयसुंदरी एसा । पुब्रकयदुक्कयवसा रोगेणिमिणा  
विणास्सिहीहि ॥२२॥ इय जंपिअ कुलदेवी तिरोहिया तं निरो कहइ सबं । दइयाइ सावि सरिउं पुब्रभवं शूरए हियए ॥२३॥ हा  
पाव जीव ! किमिमं तए कयं अप्पणा अणत्थकरं । जं तह अणुचियभत्तप्पयाणओ अज्जियं पावं ? ॥२४॥ वरमणलंमि पवेसो  
अहिमुहकुहरे वरं करो खित्तो । वरमिह मियारिदाढाकडप्पकंडूयणं विहियं ॥ २५ ॥ न उणो अविमरिसिय-  
वत्थुसत्थकरणं अणत्थसयजणगं । तो सरसु जीव ! इत्तो जिणधम्मं पुन्वपडिवत्तं ॥२६॥ इय देवी दुच्चरियं भुज्जो  
भुज्जो पुराभवसमुत्थं । निंदंती संवेगं परं गया राइणा भणिया ॥२७॥ देवि ! कुलदेविकहिओ तुत्तंतो अवितहो किमेषुत्ति ? ।  
तीए भणियं सामिय ! सबमिणं अवितहं नूणं ॥२८॥ ता इत्तो परभवपत्थभूयकिचंमि उज्जमो जुत्तो । रत्ता पयंपियं देवि ! कुणसु  
जं तुज्ज पडिहाइ ॥२९॥ देसु धणं धम्मत्थं सत्तसु खित्तेसु पुनखित्तेसु । दीणाईणं च तहा करेसु अन्नंमि करणिज्जं ॥३०॥ सो

नमस्कारे  
विजयनूपः

॥२०३॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥२०४॥

एसो पत्थासो राहावेहोवमो य पुत्रेहि । जो न तरइ साहेउं ता देवि ! समुजया होमु ॥३१॥ इय भणिए रत्ना आहवित्तु सोहग्ग-  
सुंदरिं देवि । ठनिय तदंके विजयं निपपुत्तं तह स्वमावेउं ॥३२॥ खामेवि सयलसंधं पूयं कारेवि जिणवरगिहेसु । अणसणविहाणओ  
तियलसुंदरी मग्गमणुपत्ता ॥ ३३ ॥ निम्मलकलाकलावो कलानिहीविव क्रमेण विजओऽवि । निरुवमसुंदरिमरूवउव्वणं जुव्वणं  
पत्तो ॥३४॥ अह पिउआणाअगरणपरायणं कालसेणपल्लिवइं । निवऽणुन्नाओ चउरंगवलजुओ गंतु तप्पल्लि ॥३५॥ विग्गहिऊणं  
पिउआणकरणपवणं ठवेवि तत्थेव । पत्तो विजओ सपुरे भंभाए वज्जमाणीए ॥३६॥ तो तुट्ठेण निवेणं जुवरायपयंमि ठावियं विजयं ।  
दइट्ठण मणे सोहग्गसुंदरी चिंतए एव ॥३७॥ इह एयंमि जियंते न भाविं मह नंदणस्स नणु रज्जं । इय चित्तिय सा पावा वियरइ  
से कम्मणं दुमहं ॥३८॥ तो तस्म जायमंगं विहुरममारं पणडरूववलं । तयणु घणसोगभरिओ कुमरो इय चित्तिउं लग्गो ॥३९॥  
रे जीव ! मा विस्तूरसु दुट्ठाण पुराकडाण कम्ममाणं । न हु अशुभवणेण विणाऽयि विज्जए निच्छियं मुक्खवो ॥४०॥  
जह संपत्तीइ मणं तहा विवत्तीइ जाण परितुल्लं । तेच्चिय धीरा ते चेव पंडिया तेच्चिय गरिट्ठा ॥४१॥ एगंत-  
सुही भुवणेवि कोऽवि मन्ने न विज्जए नूणं । ता जीव ! मा विहिज्जसु मणयंपि मणंमि संतावं ॥४२॥ जइ चक्कि-  
णोऽयि रहिणोऽवि अहव हलिणोऽवि अमरपह्णोऽवि । पावंति कम्मवसओ आवइमियराण का गणणा ? ॥४३॥  
केवलमित्यावत्थाणमणुचियं गरुयरोगविहुरम्म । सहपंसुकीलियाणवि उव्वेयं मह जणंतस्स ॥४४॥ ता जामि तहिं देसे जत्थ मयं  
मं न याणई कोई । इह पुण दृज्जणकरअंगुलीण को दरिमणं महिही ? ॥४५॥ एवं चित्तिय सणियं मणियं अवगणिय परियणं  
मयलं । कुमरो रयणीइ पुताउ निग्गओ एगदिसिहुत्तं ॥ ४६ ॥ कममो पत्तो पत्ताळयाभिहे पुरधरंमि तस्म बहिं । हिमगिरि-

नमस्कारे  
विजयचूपः

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२०५॥

सिद्धरुतुंगं अद्वावयचेइयमरित्थं ॥४७॥ उज्झंतधूवमहमदसमंतजगुरुमधमधंतगंभङ्गं । कणकणिरकिंकिणिजालमहुरघणरावरमणीयं  
॥२८॥ सक्कावयारनामं चउवीमजिणालयं जिणिंदगिहं । दद्दं पडिद्वचित्तो पविसिय विहिणा त्तिं कुमरो ॥४९॥ ठाउं उचिय-  
पएसे आसायणभीरु अत्थजुत्तेहिं । सारनमुवकारेहिं इय धोउ जिणे समाढत्तो ॥५०॥ तथाहि—“नद्यान्नामिसुतः सुरेश्वरनतः संसार-  
पारं गतः, क्रोधाद्यैरजितं स्तुवेऽहमजितं त्रैलोक्यसंपूजितम् । सेनाकुक्षिभवः पुनातु विभवः श्रीसंभवः शंभवः, पायान्माममिनन्दनः  
सुवदनः स्वामी जनानंदनः ॥५१॥ लोकेशः सुमतिस्तनोतु नमति श्रेयःश्रियं सन्मतिर्दंभद्रोः कलभं मदेभशरभं प्रस्तौमि पद्यप्रभम् ।  
श्रीपृथ्वीतनयं सुपार्श्वमभयं वंदे विलीनाभयं, श्रेयस्तस्य न दुर्लभं शशिनिगं यः स्तौति चंद्रप्रभम् ॥५२॥ बोधिं नः सुविधे ! विधेहि  
सुविधे कर्मद्रुमौघस्रजे(प्रघे), जीयादंशुजकोमलक्रमतलः श्रीमान् जिनः शीतलः । श्रीश्रेयांस ! जय स्फुरद्गुणचयः श्रेयःश्रियामा-  
श्रयः, संपूज्यो जगतां श्रियं वितनुतां श्रीवासुपूज्यः सताम् ॥५३॥ मोक्षं वो विमलो ददातु विमलो मोहांशुवाहानिलोऽन्तोऽन्तगुणः  
सदा गतरणः कुर्यात् क्षयं कर्मणः । धम्मो मेऽविपदं जवाच्छिवपदं दद्यात्सुखैकास्पदं, शांतिस्तीर्थपतिः करोत्विभगतिः शांतिं कृता-  
पथतिः ॥५४॥ कुंशुर्मेघरवो भवादवतु वो मानेभकंठीरवो, भक्त्यानमनरामरं जिनवरं प्राप्तसरं नौम्यरम् । श्रीमल्लेखनतक्रमोज्झित-  
तमो मल्लेस्तु तुभ्यं नमो, विश्वाचर्यो भवतः स पातु भवतः श्रीसुव्रतः सुव्रतः ॥५५॥ लोभांभोजतमेश्वरोपम ! नमे धम्मं धियं  
धेहि मे, वंदेऽहं धृपगामिनं प्रश्रामिनं श्रीनेमिनं स्वामिनम् । श्रीमत्पार्श्वजिनं स्तुवेऽस्तवृजिनं दंताक्षदुर्वाजिनं, नौमि श्रीशिलांगजं  
गतुरुजं मायालताया गजम् ॥५६॥ दूरापास्तसमस्तनलमप(कुत्सन)तमावीताखिलांतारजावामोल्लसयिनाश्रुतसुमहान् (लासशोमन-  
महा) मृदाग्रिमौकावलम् । स्फुर्जद्भाबुपभाभिरामनयनिर्दग्धाशुभैघावरं, गातां मुक्तिपदप्रदं जिनपृषा वृद्धं प्रसादं मम ॥५७॥ एक-

नमस्कार  
विजयनृपः

॥२०५॥



यीदे०  
रेत्य० धी-  
पर्म० संभा-  
पारविधौ  
॥२०४॥

पचनं द्विवचनं बहुवचनं च तुल्यं ॥ इत्थं धर्म्यत्रचोवितानरचितं वर्ज्यं स्तवं मुद्युतः, सद्धर्मद्रुमसेकसंवरमुचां भक्त्यार्हता नित्यशः।  
त्रेषः कीर्तिकरं नरः स्मरति यः संसारमाहृत्यसोऽतीतार्तिः परमे पदे चिरमितः प्रामोत्यनंतं सुखम् ॥ ५८ ॥ नामगर्भमष्टदलं  
रुमलं ॥" इचाइयमदृगयं जा जिणपुरओ इमो नमुकारे । पभणइ ता मणिचूलो खयरिंदो तत्थ संपत्तो ॥५९॥ सो ददुदु विजयकुमरं  
नारनमुक्कारभणणपणिहाणं । साहम्मियवच्छंमि उज्जुओ पमुइओ हियए ॥६०॥ नमिय जिणं जिणभाणाउ निग्गयं निवमुयं  
विगयरोगं । काउं खयरो वंदिय देवे पत्तो सठाणंमि ॥६१॥ कुमरोऽवि पाडलिपुरे पत्तो जा वीसमेइ तरुमूले । तो तत्थ मओ निग्गई  
अमुओऽरुम्हा उ ग्रलेण ॥६२॥ रज्जपहाणनरेहिं अहिवासियदिच्चपंचगेणं तो । विजयकुमरोऽभिसित्तो रज्जे गुरुपुत्तसंपुत्तो ॥६३॥  
पगविदियदुदुदणिदुदुयसामंतपणयपयक्रमलो । निजं जिणं धुणंतो पप्रनमुकारनिग्गेहिं ॥६४॥ ठाणट्ठाणपयट्टियरहजत्तमहूसवं  
पयंपेण । रजं तिग्गमारं परिपालइ विजयनरनाहो ॥६५॥ इत्तो विजयवलनिवो विजयकुमारस्म दुमहविरहुत्थं । दुक्खभरमणु-  
द्वंतो अइविरसे वागरे खिवइ ॥६६॥ अह खासमामजरपमुहउग्गरोगेहिं परिगयसरीरो । निहणं पत्तो पउमो किजंतुवयारनिग्-  
गोऽवि ॥६७॥ तो गरुअदुक्खभरनिग्गरेण अंतेउरेण सो राया । वाहजलाविलनयणो मयकिच्चं काउ पउमस्स ॥ ६८ ॥ भणइ  
नचिवे अथग्गे इत्थो कत्थवि मुओ पउत्थो मे । वीओ पुणो अकाले कालमकामी हहा किहऽहो ॥६९॥ अह चिंति मंतिपवरा देहकिलेसं  
च कज्जहाणिं च । देव ! परिदेविण्णं मुत्तु न अन्नं किमपि ताणं ॥७०॥ उप्पायविगमधुवभावपरिगयं मयलवत्थुत्तिथारं । खणदिदुदुनदु-  
दुत्तं मामिअ ! मा किमिह गोएण ? ॥७१॥ किंच विजओ कुमारो रजं पालेइ कुमुमनंपरंमि । इय तत्तो आगयवहुत्तणेण पे सयलमक्खायं  
॥७२॥ इय मोउ अप्पमोओ राया मुयमरणदुक्खवत्तियाण । सोहग्गमुंदरीए पासे अणुत्तामिउं पत्तो ॥७३॥ सुअमरणवत्तज्जअरि-

नमस्कारे  
विजयचरुपः

॥२०६॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२०७॥

अदेहमुग्धसुखआहारं । दइअं भणइ नरिंदो सोइअद् देवि ! किं एवं ॥७४॥ जायस्स धुवो मच्चू न य दीसइ कोइ सा-  
सओ अत्थ । चक्खिहरिहलहराई जमणंता तेवि अकंता ॥ ७५ ॥ देवी-तं वा किंपि अणजाएँ अज्ज ! अकज्जं कयं मए  
पोरं । जं न कहिउं न सहिउं न चेव पच्छाइउं सका ॥७६॥ दुविलसिअस्स तस्स उ फलं अकाले इमं मए पत्तं । रायाऽऽहनेव  
किंपिहु मुणेमि इहऽकज्जमज्जमहं ॥७७॥ दइए किंनु अकज्जं विहियं तुमए जओ दुहं एयं ? । परमत्थमित्थ वित्थरिय कहसु पा-  
णप्पिए ! खिप्पं ॥७८॥ तो हिययंतो गुज्झं तीए धरिउं अपारयंतीए । कहिओ सयलो कम्मणवुत्तंतो विजयसुयविसओ ॥७९॥  
तह तिलयसुंदरीए सब्बस्संपिअ सुओ विजयकुमरो । बहुपणयअणपुवं उवणीओ पहु तथा मज्झ ॥८०॥ तीएविहु नहु वयणं मणंपि  
पावाइ मणसि मे ठविअं । अकयन्नुयलोयाणं हाहा पढमा अहं जाया ॥८१॥ उपकारिणि विश्रब्धे आर्यजने यः समाचरति  
पापम् । तं जनमसत्यसंधं भगवति वसुधे ! कथं चहसि ? ॥८२॥ किंच सुयमरणदुहं न तथा पीडेइ मह मणं नाह ! । जह  
संतइवुच्छेयप्पचयं हिययकालुस्सं ॥८३॥ अप्पा न केअलुच्चिय मए अणजाइ पाडिओऽणत्थे । विजयसुयनासणेणं तुमंपि पाणे-  
स ! निब्भंतं ॥८४॥ तो तीइ मणो दुक्खं अवणेउं विजयकुमरवुत्तंतं । वररजालाभपेरतमक्खए नरवरो सब्बं ॥८५॥ तं विजयराय-  
वुत्तंतमुत्तमं निसमिउं इमा पावा । ईमाइ फुडियहियया झडत्ति पंचत्तमणुपत्ता ॥८६॥ अह काउ पेयकिच्च तीसे राया फुरतवेरगो ।  
चित्तइ अरो महेला सवाणत्थाण पत्थारी ॥८७॥ सोयसरी दुरियदरी कवडकुडी महिलिया किलेसकरी । चइरवि-  
रोयणअरणी दुक्खक्खयपक्खपडिक्खवा ॥८८॥ ते घन्ना सप्पुरिसा अणत्थवहुलाउ पयइकुडिलाओ । दूरेण  
वज्जियाओ भुयगीउच जेहिं ललणाओ ॥८९॥ एवं चित्तिय राया निययपहाणेहिं कुसुमनयराओ । आहूय विजयनिअइं ठावेऊणं

नमस्कारे  
विजयनृपः

॥२०७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२०८॥

निग रज्जे ॥९०॥ सिरिपुरिसुत्तमवरिस्स पायमूले गहेवि सामन्नं । सिरिविजयधलो राया पत्तो अपुणम्भवं ठाणं ॥९१॥  
विजयनरिंदोऽपि चिरं रज्जदुगं पालिउं तयं ठविउं । पुत्ते पवन्नदिकखो जाओ सोहम्मसग्गसुरो ॥ ९२ ॥ तो चविउं इह भरहे  
पामजिणिदस्म गणहरो होउं । जयनामा उप्पाडियकेवलनाणो सिवं पत्तो ॥९३॥ श्रुत्वेति वृत्तं विजयस्य सम्पत्, यथाऽवबोधं  
विबुधा! जनौषाः । एकादिकैरष्टगतावसानैः, स्तुष्यं नमस्कारवरैर्जिनेन्द्रान् ॥९४॥ इति विजयकुमारकथा ॥ इत्यंगोपांगमुख्य-  
थुत्तरिदधिभूमाप्यनिर्युक्तिचूर्णार्थव्याख्याप्रकारान् करणविधिसमेताननेकान् निरीक्ष्य । श्रीसंघाचारविध्यादिषु जिननमना-  
स्याधिकारे द्वितीयः, प्रस्तावः ख्यापितोऽर्हलुतिकरणविधानस्वरूपादिवर्णः ॥ २ ॥ इति श्रीदेवेंद्रसूरिशिष्यमहोपाध्याय-  
श्रीधर्मकीर्तिसमुत्कीर्तिते संघाचारनाम्नि चैत्यवंदनाविवरणे चैत्यवंदनाभिधानप्रथमाधिकारे चैत्यवंदनाकरण-  
विधिस्वरूपादिवर्णनो नाम त्रितीयः प्रस्तावः ।

ॐ नमः॥ प्रयचनाय, इत्युक्तं नमस्कार इति सप्तमं द्वारं, एवं च भणितं चैत्यवंदनास्वरूपं, संप्रति चैत्यवंदनासूत्रार्थविवरणः,  
सूत्रं पुनरहीनाश्रत्वादिगुणयुक्तं पठनीयं, हीनाश्रत्वाद्युपेते सूत्रे समुच्चार्यमाणे दोषसंभवात्, यतो लोकेऽपि तावद् विद्यामंत्रादा-  
पश्रहीनत्वाद्युपेते समुच्चार्यमाणे विवक्षितफलवैकल्यमनर्थावाप्तिश्च दृश्यते, किं पुनः परममंत्रकल्पे जिनप्रणीतसूत्रे ? अत्र चानु-  
योगचूर्णिमणितं विद्याधग्जातं, तथाहि-मगद्वाजणवयमज्जे रायगिहे पुरउरंमि रमणिजे । ममवमरणंमि रए सुरेहिं सिरिवीर-  
नाहस्म ॥ १ ॥ अमरनरतिरियसंगममोहिले तंमि सेणिओ राया । अभयकुमाराइजुओ समागओ वंदणनिमित्तं ॥२॥ धम्मं  
मोऊण पिणिग्गयाइ परिमाइ खेपरो इको । गयणंमि किंपि गंतुं पुणो पुणो पडइ धरणीए ॥३॥ तो सेणिओ जिणिदं पुञ्चइ किं

नमस्कारे  
विजयनृपः

॥२०८॥

श्रीदे०  
वेद्य० श्री-  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥२०९॥

एत उप्पयनिवाए । विदुरियपक्खो पक्खिक्ख खेयरो कुणइ? जयनाह ! ॥४॥ अह भणइ जिणपरिंदो अक्खरमिक्कं इमस्स पग्गुसियं ।  
नहगामिणीइ विजाइ तेण गंतुं इमो न समो ॥ ५ ॥ अमयकुमारो सोऊग भासियं तं जिणस्स तो खिप्पं । गंतूण भणइ खयरं  
मो तुह विजाइ पग्गुहं ॥६॥ लहिऊण अक्खरमहं कहेमि जइ देसि मह इमं विज्जं । पडिक्खे खयरेणं पयाणुसारित्तलद्धीए ॥७॥  
अमयकुमारो तं कहइ अक्खरं तो इमस्स दाऊण । विज्जं तुहो खयरो उप्पइओ गयणमग्गंमि ॥८॥ इति खेचरस्य थुत्वा हीनाधर-  
विधया फलाभावम् । संपूर्णफलावाप्त्यै तदहीनां चैत्यवंदनां कुरुत ॥ ९ ॥ इति विद्याधरकथा ॥ अक्षराणि च पदसंपदगतानि  
इत्यतोऽधरपदसंपदिति द्वारत्रयं प्रस्तावायातं, तत्र च प्रथमं तावद् पंचपरमेष्ठिनमस्कारमाश्रित्य तदाह—

षट्सदृसद्वि नव पय नवकारे अट्ट संपया तत्थ । सग संपय पयतुह्ला सतरक्खर अट्टमी दुपया ॥ ३० ॥  
अथ कोऽस्य व्याख्याने अवसरः चैत्यवंदनाविधानस्याधिकृतत्वात्, सत्यं, यदा जिनविंशभावे स्थापना तदा चित्रादिषु साकारस्थापनया  
परमेष्ठिभंशेणानाकारस्थापनयाऽक्षादिषु जिनादयः स्थाप्यंते, यदुक्तं बृहद् भाष्ये—“जिनविंशभावे पुण ठवणागुरुसक्खियावि कीरंति।  
चिरंरंराश्चि इमा तत्थवि परमिद्धिठवणाउ ॥१॥ ति(१३) यद्वा श्रेयोभूतं चैतत् स्तुतिस्तोत्रादिप्रधानचैत्यवंदनाविधानं स्वर्गापवर्गाव-  
प्यनिबंधनं सम्यग्दर्शनादिहेतुत्वात्, तथा चागमः—“थयधुइमंगलेणं भंते! जीवे किं जणयइ?, थइधुइमंगलेणं नाणदंसणचरिसं बोहिलामं  
ष अणयइ, नाणदंसणचरिसंपत्ते पं जीवे अंतकिरियं कप्पविमाणोक्खचियं आराहणं आराहेइ(श्रीउत्त०)” ति, अतो निर्विघ्नेनैतद्विधा-  
नसिद्ध्यर्थं प्रथमं पंचमंगलमेव न्यावर्त्तते, तथा चोक्तं महानिशीये चतुर्थाध्ययने—“तस्स य सयलसुक्खहेउभूयस्स न इट्टदेवया-  
णाकारपिरिइए केइ पारं गन्डेजा, इड्डेवयाणं च नमुक्कारो पंचमंगलमेव गोयमा!, नो णमभंति, ता नियमओ पंचमंगलस्सेव

हीनाधरदो-  
षे विद्याधरः

॥२०९॥

धी०  
पेन्य०  
धर्म०  
पारिषी  
॥२१॥

परमं नार विजओरहाणं कायवं"ति, अलं विस्तरेण, संप्रति भाष्यगाथा व्याख्यायते-वर्णा-अक्षराणि अष्टपष्टिः नमस्कारे-पंचपरमेष्ठि-  
नहामंश्रुते भान्तीनि शेषः, इत्तं च नमस्कारपंजिकासिद्धचक्रादौ-"पंचपयाणं पणतीम वण्ण चूलाइ वण्ण तितीसं । एवं इमो  
ममण्डः फुडमसगरअट्टगट्टीण ॥१॥" तथा अष्टप्रकाश्यां-"आग्नेयादिविदिग्ब्यवस्थितेषु दलेषु पादचतुष्कं 'एगो पंचनमुकारो,  
मवसारणनामणो । मंगलाणं च सवेमि, पदमं हरइ मंगलं ॥१॥'ति ध्यायेत्, तथा नर पदानि विवक्षितावधियुक्तानि नमोऽरिहंता-  
पनिव्यादीनि, न तु न्यायानि, भणितं च-"मत्त पण मत्त मत्त य नर अट्ट य अट्ट अट्ट नर हुंति । इय पय अक्खरसंखा  
अस्व इ पूरेइ अट्टगट्टी ॥१॥" त आऽष्टौ संपदो-विश्रामस्थानानि, न चैवं श्लोकच्छंदो मंग इति वाच्यं, छंदोऽन्तरूपत्वादस्य, उक्तं  
च छंदःशास्त्रे-"विपमःधरपादं वा पादैरगमं दशधर्मवन् यच्छन्दो नोक्तमत्र गाथेति तत्सुरिभिः प्रोक्ता" एवंविधाश्च त्रयस्त्रिंश-  
श्चाप्रमाणा अनेरुअ आगमे दृश्यन्ते-जहा दूमम्म पुष्केणु, भनरो आणियइ रसं' तथा 'अहं च भोगरायस्म, तं चणि अंवगा-  
ण्डिणो' इत्यादि, तथा अष्टौ संपदो महापदापरनामानि विश्रामस्थानानि, उपधानविधायष्टाध्ययनात्मकतया प्रत्यध्ययनार्थैकैका-  
पामाग्लरूपेनाष्टानामेवाचामाग्लानां भणनान्, शेषविशेषस्तु प्रागुक्तसंपदद्वारव्याख्यानुमास्तो बोध्यः, अथ कथं नवसु पदेषु अष्ट  
संपद इत्याह-"नन्व"ति नास्तासु संपदसु मध्ये क्रमेण सप्त संपदः पदः पूर्वोक्तस्वरूपैस्तुल्याः-ममाना, अष्टमी पुनः संपदु मत्त-  
रनाधरप्रमाणा पर्यंतानिपट्टयान्मिहापयस 'मंगलाणं च सवेमि, पदमं हरइ मंगलं', यदुक्तं चैन्य-यदनाभाष्यप्रवचनस्वा-  
रोदुशागदिषु 'पंचपरनिष्टिगंते पण पण मत्त गंपया क्रमगो ॥ पजंत मत्तरक्खरपरिमाणा अट्टमी भणिया ॥१॥' तथा एवं वा  
पानु संपदस्य पाठः 'नरसगर अट्टमि दूपय इट्टी' अष्टमी संपन् 'पदमं हरइ मंगल'मिति नवाऽग्रप्रमाणा षोषा, षष्ठी पुनः 'एगो

नमस्कारे  
वर्णादि

पंचनमुकारो, सबपापपणान्णो'त्ति द्विपदमाना, अभ्यधायि च नचकारपञ्जिकासिद्धचक्रादौ—“अतिमचूलाइ तियं सोलट्ट-  
नचक्खराड्जुयं चेव । जो पढड भत्तिजुत्तो सो पापइ मामयं ठाणं ॥१॥” एवं त्रयस्त्रिंशदक्षरप्रमाणचूलिकामहितो नमस्कारो भण-  
नीय इत्युक्तं भवति, तथा चोक्तं वृहन्नमस्कारफले—“सत्त पण सत्त सत्त य नचक्खर पमाण पयडपंचपयं । तितीसक्खरचूलं  
मुमरह नचक्खररमतं ॥१॥” मिद्वान्तिऽपि स्फुटाक्षरैः ‘हवइ मंगल'मिति भणितं, तथाहि—महानिशीथचतुर्थाध्ययनसूत्रं—तहेण  
य तदत्थाणुगमियं इकारसपयपरिच्छिन्नं तिआलागगतितीसक्खरपरिमाणं एसो पंचनमुकारो, सबपापपणायणो । मंगलाणं च  
मन्वेसिं, पढमं हवइ मंगलमियचूलं'ति ‘अहिजंती'ति तत्र प्रकृतं, तदेवं ‘हवइ मंगल'मित्यस्य साक्षादागमे भणितत्वात् प्रभुश्री-  
वन्नस्यामिप्रभृतिसुगद्गुरुश्रुतसुविहितसंविग्नपूर्वाचार्यसंमतत्वाच्च पढमं हवइ मंगलमिति पाठेन अष्टपष्टिअक्षरप्रमाण एव नमस्कारः  
पठनीयः, तथा च महानिशीथे—“एयं तु जं पंचमंगलमहासुअक्खंधस्म चक्खवाणं तं महया पंथेण अणंतगमपञ्जवेहिं सुत्तस्म  
पिहम्भूयाहिं निज्जुत्तिभासचुणीहिं जहेण अणंतनाणदंमणधरेहिं तित्थयरेहिं चक्खवाणिअ तहेण ममामओ चक्खवाणिजंतं आमि, अ-  
हअन्तया कालपरिहाणिदोसेण ताओ निज्जुत्तिभासचुणीओ बुच्छिन्नाओ, इयो य चन्तेणं कालमएणं महिड्डीपत्ते पयाणुमारी उइ-  
रमामी दुआलसंगसुअहरे समुप्पत्ते, तेणेओ पंचमंगलमहासुअक्खंधस्म उट्टारो मूलसुत्तस्म मज्जे लिहिओ, मूलसुत्तं पुणसुत्तत्ताए  
गणहरेहिं अत्थत्ताए अरिहंतेहिं भगंतंतेहिं धम्मतिन्धगरेहिं तिलोयमहिएहिं वीरजिणिंटेहिं पन्नविअत्ति एव बुइसंपयाओ, इत्थ जत्थ  
पयं पएणाणुलगं सुत्तालागं न संवज्जइ तत्थ तत्थ सुयट्टरेहिं कुलिहियदोसो न दाववुत्ति, किं तु जो सो एयम्म अचित-  
चितामणिरूपभूयस्म महानिशीथसुयक्खंधस्म पुढायरिणो आमि महुराए सुपासनाइथूहे पनरमहिं उरपासेहिं विहिएहिं

श्रीदे०  
वैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२१२॥

सासणदेवीए मम अप्पिउत्ति तर्हि चैव खंडाखंडीए उदेहियाएहिं हेऊहिं वहवे पत्तगा परिसडिया तहावि अचंतसुमहत्थाइसयं  
इमं महानिसीहसुअक्खंधं कसिणपवयणस्स परमं सारभूयं परं तत्तं महत्थंतिकलिऊण पवयणवञ्छल्लत्तणेणं तहा भव्वसत्तोवयारयं  
च काउं तहा य आयहियड्डयाए आयरियहरिभदेणं जं तत्थायरिसे दिट्ठं तं सव्वं समईए सोहिऊण लिहिअंति,अन्नेहिंपि सिद्धसेण-  
दिवायरवुड्डुवाईजक्खसेणदेवगुत्तजसवद्धणखमासमणसीत्तरविगुत्तनेमिचंदजिनदासगणिखमणसच्चसिरिपमुहेहिं जुगप्पहाणसुअहरेहिं  
बहुमन्नियमिणं”ति, अन्यत्र तु संप्रति वर्तमानागमसूत्रमध्ये न कुत्राप्येवं नवपदाष्टसंपदादिप्रमाणो नमस्कार उक्तो दृश्यते, यतो  
भगवत्यादौ चैवं पंच पदान्युक्तानि ‘नमो अरिहंताणं नमो सिद्धाणं नमो आयरियाणं णमो उवज्झायाणं णमो [लोए] सव्वसाहूणं  
नमो वंमीए लिवीए’ इत्यादि, क्वचिन्नमो लोए सव्वसाहूणंति पाठ इति तद्वृत्तिः, प्रत्याख्याननिर्युक्तौ तु नमस्कारसहितप्रत्या-  
ख्यानपारणप्रस्तावे चूर्णाविदमुक्तं-नमो अरिहंताणं५ भणित्वा पारयति, नवकारनिर्युक्तिचूर्णौ त्वेवमुक्तं, तथाहि-सो नमुकारो कमा  
पयाणि वा दस वा, तत्थ छ पयाणि नमो अरिहंतसिद्धआयरियउवज्झायसाहूणंति, दश त्वेवं-नमो १ अरिहंताणं २ नमो३-  
सिद्धाणं ४ इत्यादि, यत्पुनर्नमस्कारनिर्युक्तावशीतिपदमाना विंशतिर्गाथाः संति यथा-“अरिहंतनमुकारो जीवं मोएइ भवसह-  
स्साओ इत्यादयस्ता नवकारमाहात्म्यप्रतिपादका न पुनर्नवकाररूपा भवितुमर्हति, बहुपदत्वात् तासां, नवकारस्य तु नवपदात्मक-  
त्वात्, किंच-तास्वपि गाथासु वर्षशतात्तद्द्वयाच्च पूर्वपूर्वतरप्रतिपु हवइ इति पाठो दृश्यते, श्रीमलयगिरिणाऽप्याचश्यकवृत्तिं  
कुर्वता वृत्तिमध्ये ता गाथा हवइ इति पाठत एव लिखिताः, एतन्निश्चयार्थिना तद्वृत्तिर्निरीक्षणीया इति परमार्थं ज्ञात्वा कदाग्रहा-  
भिनिवेशादिविलसितकल्पितं आगमे तूक्तं होइ इति मुक्त्वा साक्षात् परमागमसूत्रान्तर्गतं श्रीवज्रस्वामिप्रमृतिदशपूर्वधरादिबहु-

चूलाक्षर-  
विचारः

॥२१२॥

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२१३॥

श्रुतसंविप्रसुविहितव्याख्यासमाहृतं हवइचि पाठयुतं अष्टपष्टिवर्णप्रमाणं परिपूर्णनवकारसूत्रमध्येतव्यं, तच्चैवम्-नमो अरिहंताणं नमो  
सिद्धाणं नमो आपरियाणं नमो उवज्झायाणं नमो लोए सव्वसाहूणं । एसो पंचनमुकारो, सव्वपावप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसिं,  
पढमं हवइ मंगलं ॥१॥ अस्य च व्याख्यानं यदेव श्रीवज्रसाम्यादिभिश्छेदग्रंथादिमध्ये लिखितं तदेव भक्तिबहुमानातिशयतो  
विशेषतश्च भव्यसस्वोपकारकमिति दर्शयते, तथाहि-“से भयवं! किमेयस्त अर्चितचित्तमणिकप्पभूयस्त पंचमंगलमहासुअक्खं-  
घस्त सुत्तत्थं पन्नत्तं, गोयमा! इय एयस्म अर्चितचित्तमणिकप्पभूअस्त पंचमंगलमहासुअक्खंघस्स णं सुत्तत्थं पन्नत्तं, तंजहा-जे णं  
पंचमंगलमहासुअक्खधे से णं सयलागमंतरोपवती तिलतिष्ठ २ कमलमयरंद २ सव्वलोअपंचत्थिकायमिव जहत्थकिरियाणुवाय-  
सभूयगुणकित्तणे जहिच्छियफलपसाहगे चैव परमथुइवाए, सा य परमथुइ कायव्वा सव्वजगुत्तमाणं, सव्वजगुत्तमे य जे केइभूए  
जे फेइ भवंति जे फेइ भविस्संति ते सव्वेपि अरहंतादओ चैव, नो णमत्थेत्ति, ते य पंचहा-अरिहंते १ सिद्धे २ आपरिए ३ उव-  
ज्झाए ४ साहुणो ५, तत्थ एएसिं चैव गम्भत्थसम्भावो इमो, तंजहा-सनरामरासुरस्स णं सव्वस्सेव जगस्स अट्टमहापाडिहेराइपू-  
याइउवलक्खिअं अणत्तसरिसमचित्तमप्पमेयं केवलाहिद्धिअं पवरुत्तमत्तं अरहंतत्ति वंदणादि च ‘अरिहंति वंदणनमंसणाणि अरहंति  
पूअसक्कारं । तिद्धिगमणं व अरहंता अरहंता तेण बुवंति ॥१॥ एतदर्थः-वंदणत्ति सामान्येन वचःकायादिकृतस्तुत्यवनामनादीनि,  
उक्तं च चूर्णौ-प्रशस्तवागादीनां दानं वंदणं, नमस्यनानि अंजलिबंधादिबहुमानादिप्रणिधानादिभिः सम्यग्ज्ञा(ग्या)नादीनि, पूय-  
त्ति गंधमाल्यादिभिः, उक्तं च उमास्वातिवाचकेन “पूजापि गंधमाल्याधिवासधूपपदीपाद्यैः जुवलिकाभरणादिभिः” तथाभव्य-  
परपरिपाकादिना परमाहृत्यज्ञानमोपयोगपूर्वं सिद्धिगमनार्हास्तेभ्योऽर्हद्भ्यः नमो-नमरकारो द्रव्यतो भावतश्च, नदीयो भवत्विति

नमस्कास्-  
व्याख्या

॥२१३॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२१४॥

गम्यं, भणितं च-इत्थं नमुत्तिपर्यं दब्बभावसंकोयरूवपूयत्थं । करसिरमाई दब्बे पणिहाणाई भवे भावे ॥ १ ॥” नमो, नमोयोगे  
चतुर्थीप्राप्तौ पण्ठीह प्राकृतवशाद्, बहुवचनं सर्वकालिकार्हत्प्रतिपत्त्यर्थं, तत्रातीताः केवलज्ञानिप्रभृतयः अनागताः पद्मनाभादयः  
वर्तमाना ऋषभादयः सीमंधरादयो वा, अथवा अर्हतेभ्यः स्तवनादियोग्यानां सर्वेषामपि मध्ये प्रधानेभ्यः, सर्वगुणसम्पूर्णतया  
सर्वोत्तमत्वाद्, आह च-“देवासुरमणुएसुं अरिहा पूआरुहुत्तमा जम्हा” तथा-अरिहा जुग्गा उचियत्ति सुगुणपुन्नत्तणा थयार्इणं ।  
तेसुवि अन्ना पगरिसपत्ता जमिहेवमासन्ने ॥१॥ भीमभवगहनभ्रमणमीतभूतानामनुपमानंदरूपपरमपुरुषपथप्रदर्शकत्वेन सार्थवाहा-  
दिभ्यः परमोपकारित्वाच्च, उक्तं च निर्युक्तौ—“अडवीइ देसिअत्तं तहेव निज्जामया समुद्दस्स । छक्कायरक्खण्डा महगोवा तेण  
वुच्चंति ॥१॥ अडविं सपच्चवायं बोलित्ता देसिओवएसेणं । पावंति जहिड्डपुरं भवाडविं अपि तहा जीवा ॥२॥ पावंति निव्वुइपुरं  
जिणोवइडेण चेव मग्गेण । अडवीइ देसिअत्तं एवं नेयं जिणिंदाणं ॥३॥ जह तमिह सत्थवाहं नमइ जणो तं पुरं तु गंतुमणो ।  
परमुवगारित्तणओ निव्विग्घत्थं च भत्तीए ॥४॥ अरिहो उ नमुक्कारस्स भावओ खीणरागमयमोहो । मुक्खत्थीणंपि जिणो तहेव  
जम्हा अओ अरिहा ॥५॥ संसाराअडवीए मिच्छत्तन्नाणमोहिअपहाए । जेहिं कयं देसिअत्तं ते अरिहंते पणिवयामि ॥६॥ सम्म-  
इंसणनिट्ठो नाणेण य तेहिं सुट्ठ उवलद्धो । चरणकरणेण पहओ निव्वाणपहो जिणिंदेहिं ॥७॥ सिद्धवसहिमुवगया निव्वाणसुहं  
च ते उ अणुपत्ता । सासयमव्वावाहं पत्ता अयरामरं ठाणं ॥ ८ ॥ पारिविंति जहा पारं सम्मं निज्जामया समुद्दस्स । भवजलहिस्स  
जिणिंदा तहेव जम्हा अओ अरिहा ॥९॥ मिच्छत्तकालियावायविरहिए संत गिज्जागपवाए । एगसमएण पत्ता सिद्धिवसहिपट्ठणं  
पोआ ॥ १० ॥ निज्जामगरयणाणं अमूढनाणमइक्कन्नधाराणं । वंदामि विणयपणओ तिविहेण तिदंडविरयाणं ॥११॥ पालंति जहा

नमस्कार-  
व्याख्या

॥२१४॥

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२१५॥

गावो गोवा इह सावयाइदुग्गेहिं । पउरतणपाणिआणि य वणाणि पावंति तह चेव ॥ १२ ॥ जीविकाया गावो जं ते पालंति ते  
गहागोवा । मरणभयाओ भट्टा निव्वाणसुहं च पावंति ॥ १३ ॥ परमुवगारित्तणओ नमोऽरिहा भवियजीवलोयस्स । सव्वेसिंपि  
जिणिंदा लोगुत्तमभावओ तहय ॥१४॥" उपदेशित्वादेव च प्रथममर्हतां नमस्कारः, आह च—"अरिहंतुवएसेणं सिद्धा नजंति तेण  
अरिहाई" । अथवा अरिहंताणंति पाठः, तत्राह-निम्महिय निदयनिदलिय पेछिय निव्वविअ अभिभूअ सुदुज्जयासेसअट्टपयार-  
कंमस्स रिउत्ताओ वा अरिहंता, अरुहंता वा पाठः, असेसकम्मक्खएणं निदुद्धुभवंकुरत्ताओ न पुणेह रुहंति-जंमंति उववज्जंति  
वा, एवमेए अणेगहा पन्नविज्जंति परुविज्जंति आघविज्जंति पन्नविज्जंति निदंसिज्जंति" तच्चानेकविधत्वमेवं भगवत्यादावुक्तं,  
'अरहयद्भ्यः' अविद्यमानं रहः-एकान्तरूपो देशोऽन्तरञ्च-मध्यं गिरिगुहादीनां सर्ववेदितया समस्तवस्तुस्तोमगतप्रच्छन्नत्वस्या-  
भावेन येषां ते अरहोऽन्तरस्तेभ्यः, यदाह-"नत्थि व रहो य छन्नं अंतो मज्झं च सयलवत्थुणं । परअवरभागवेइत्तणेण जेसिंति  
अरहंता ॥३॥" अथवा अत्यर्थं राजन्ते समसस्रणादिवहिलक्ष्म्या सज्ज्ञानाद्यांतरलक्ष्म्या वा रांति सदृशनादि भ्रान्ति च मोहादीन्  
गच्छंति वा तदुपकृत्यै ग्रामानुग्रामं तन्वंति च धर्मदेशनां तायंते तारयंति वा सर्वजीवानिति निरुक्तिवशादरहंतास्तेभ्यः, अथवा  
अरहयद्भ्यः प्रकृष्टरागादिहेतुभूतमनोज्ञेतरविषयसंपर्केऽपि कचिदप्यासक्तिमगच्छद्भ्यः क्षीणरागत्वात्, यद्वा अरहयद्भ्यः सिद्धि-  
गतावप्यनन्तज्ञानमयत्वात् आत्मस्वभावमत्यजद्भ्यः 'रह त्यागे इति वचनात्, अनेकार्थत्वाद्वा धातूनामवस्थितार्थः, अरहयद्भ्यः  
सर्वकर्मक्षयानंतरसमय एव लोकाग्रगमनाद् भवमध्येऽतिष्ठद्भ्यः भणितं च-"न रहंति न चयंति नाणाइ सिवेवि तओ य अरिहत्ति ।  
न रहंति न चिहंति य भवंमि जं तेण अरिहंता ॥१॥ यद्वा 'अरथांतेभ्यः' अविद्यमानो स्थः-स्यंदनः सरुलपरिग्रहोपलक्षणभूतोऽ-

नमस्कार-  
व्याख्या

॥२१५॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
पर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२१६॥

तद्य-विनाशो जराद्युपलक्षणभूतो येषां ते अरयांताः 'त्वघधधभा'मितिप्राकृतसूत्रात् थस्य हत्वे अरहंता, भणितं च-"संगुवल-  
दखणभूजो रहो अ जाणं न जेसि अंतो य । सो अ जराईउवलदखणं तु ते हुंति अरहंता ॥८॥ अरममानेभ्यो वा-अतुच्छस्वच्छता-  
दिमात्रमयत्वेन रामसिद्ध्यादिनिवृत्तेभ्यः इत्यादिव्याख्यांतराण्यपि भावनीयानि, अरिहंताणमिति वा पाठे इंद्रियविषयाद्यरिहं-  
त्वभ्यः, न्यगादि च—"इंद्रियविसयकप्पाए परीसहे वेयणा य उवसगो । रागदोसे कम्मे अरी हणंतीति अरिहंता ।१॥"अरिणा  
वा धर्मचक्रेण भांतस्तेभ्यः, अरिसमुपलक्षिताखिलहेतिहतिसंहतिकृद्भ्यो वा, आह च-"अरिणा वा धम्मचक्रेण भंति सोहंति ते उ  
अरिहंता । अरिउवलक्खित्तये जहंति य चयंति अरिहंता ॥१॥" अरुहंतागंति तु पाठः-दग्धे चीजे यथाऽत्यंतं, प्रादुर्भवति नां-  
कुरः । कर्मचीजे तथा दग्धे, प्रादुर्भवति नाकुरः(न रोहति भवांकुरः)॥१॥ अरुहपलक्षितपीडादि तत्कारणकर्मादिभूतं च प्रंतीति  
च अरुहंत्वभ्यः, अरुंधद्भ्यो वा वारणाभावेन पुनर्मथे अवरोधाभावादित्यादि । तथा 'नमो सिद्धाणं' परमानंदमहूसवमहाकृष्णाण-  
निरुयममुस्ताणि सिद्धाणि निष्पकंपमुकज्जाणाइअर्चितसत्तिसामत्थजो सजीववीरिएणं जोगनिरोहणा महापयत्तेणमेसिति सिद्धा१,  
अट्टपयारकम्मक्खएण वा सिद्धी सद्धाम एसिति सिद्धा, सियं-चद्धं कम्मं शायं-भसमीभूयमेएसिमिति वा सिद्धाः३, अत्र गाथाः-  
"दीहल्लारयं जंतुकम्मं से सिअमट्टहा । सिअं धंतंति सिद्धस्म, सिद्धचमुवजायइ ॥१॥ सिद्धे निट्टिए पडीणे सयलपओयणजाए  
कयं वा एसिमिति वा सिद्धा ॥ एवमेए इत्थीपुरिसनपुंसगमुणिलिंगअन्नलिंगगिहिलिंगपत्तेयबुद्धबोहिय जाव णं कम्मक्खय-  
सिद्धाइनेएहि णं अणेगहा पन्नविअंति' इत्यादि, अत्र गाथा-तित्थातित्थ जिणाजिण गिहिऽन्नमुणिलिंग थीनरनपुंना । पत्तेयसयं-  
पुद्धा पुद्धबोहिय अप्पेगइगसिद्धा ॥ १ ॥ प्राग्वद् विशेषाव्याख्येया, यद्वा पिधूगत्यां पेधति स-अपुनरावृत्त्या निर्वृत्तिपुरीसगज्जन्

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२१७॥

अथवा 'पिधूं च संरादौ' सिध्यन्ति स-निष्ठितार्था भवंति स्म यदिवा 'पिधू शास्त्रमांगल्ययोः', सेधन्ति स-शासितारोऽभूवन् मांगल्यरूपतां चानुभवन्ति सेति सिद्धाः, अथवा सिद्धा-नित्या अपर्यवसानस्थितिकत्वात् प्रत्याख्याता वा भव्यैरुपलब्धगुणसंदोहत्वात्, उक्तं च-  
ध्मातं सितं येन पुराणकर्म, यो वा गतो निर्वृत्तिसौधमूर्ध्नि । ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो, यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमंगलो मे ॥२॥ तेभ्यो नमः इत्यादि प्राग्वत्, नमस्करणीयता चैषामविप्रणाशिज्ञानसुखवीर्यादिगुणयुक्ततया स्वविषयप्रमोदप्रकर्षोत्पाद-  
नेन भव्यानामतीवोपकारहेतुत्वादिति ॥ तथा 'नमो आयरियाणं' तथा-अट्टारससीलंगसहस्साहिद्वियतणू छत्तीसइविहमायारं ज-  
हद्वियमगिलाए अहन्निसाणुसमयं आयरन्ति पवत्तअन्ति आयरिया १, अत्र गाथा-"नाणाई छत्तीसं तस्सायरणदेणासणाओ अ । जे  
ते भावायरिया भावायारोवएमा य ॥१॥ परमप्पणो अ हियमायरन्ति आयरिया २ सबसत्ते सीसगणाण वा हियमायरन्ति आयरिया ३  
पाणपरिच्चाएऽवि य पुढ्वाइणं समारंभं नायरन्ति नारभन्ति नाणुजाणन्ति वा आयरिया ४ सुहुमा(हुमे)वारुट्टेवि न कस्सइ मणसावि  
पावमायरन्ति वा आयरिया ५ एवमेए नामद्ववणाईहिं अणेगहा विज्जन्ति ३। तत्र प्राग्वदर्थविशेषः, आ मर्यादया तद्विषयविजय-  
रूपया चर्यते-सेव्यते जिनशासनार्थोपदेशकतया तदाकांक्षिभिरित्याचार्याः, उक्तं च-"सुत्तथविऊ लक्खणजुत्तो गच्छस्स मेढि-  
भूओ य । गणतत्तिविप्पमुक्को अत्थं भासेइ आयरिओ ॥१॥" अथवा आचारो ज्ञानाचारादिपंचधा आ मर्यादया वा मासकल्पादि-  
रूपया चारो-विहारः तत्र साधवः स्वयंकरणादन्यदर्शनाच्चेत्याचार्याः, आह च-"पंचविहं आयारं आयरमाणा तहा पयासंता ।  
आयारं दंसंता आयरिया तेण बुच्चन्ति ॥१॥" अथवा आ-ईपत् चारा-हेरिकाः अपरिपूर्णा इत्यर्थः युक्तायुक्तविभानिरूपणनिपुणाः  
तेषु साधवो यथाशास्त्रोपदेशकत्वात् आचार्या अतस्तेभ्यो नमः, नमस्करणीयता चैतेषां आचारोपदेशकतयोपकारित्वात् ॥ तथा

परमेष्ठि-  
पदार्थः

॥२१७॥

मुसंडुडासवदारै मणोवइकायजोगत्तउवउत्ते विहिणा सरवंजणमत्ताविंदुपयक्खरविसुद्धं दुवालसंगं सुयमज्झयणज्झावणेणं परमप्प-  
णो य मुक्खोवायं ज्ञायंतित्ति उवज्झाया १ ॥ अत्र गाथा—चारसंगो जिणक्खाओ, सज्जाओ कहिओ बुहेहिं । तं उवइसंति जम्हा,  
उज्झाया तेण बुचंति ॥१॥ चिरपरिचियमणंतगमपज्जवत्थेहि वा दुवालसंगं सुयनाणं चिंतंति अणुसरंति एगग्गमाणसा ज्ञायंतित्ति  
वा उवज्झाए २ एवमेए अणेगहा पन्नविजंति ४ । तहा अघंतकट्टउग्गतरोस्तवचरणाइअणेगवयनियमोववासनाणाभिग्गहविसेस-  
संजमपरिपालणेण सम्मं परीमहोवमग्गाहियासणेणं सव्वदुक्खविमोक्खं साहयंति साधवो ५ । अयमेव इमाए चूलाए भाविजइ-  
एएसिं नमुक्कारो एसो पंचनमुक्कारो, किं करिज्जा ?—सव्वं पावं—नाणावरणीयाइरुम्मं निम्सेसं तं पयस्सेणं दिसोदिसिं नासइ  
सव्वपावप्पणासणो, एस चूलाए पढमो उद्देसओ—एसो पंचनमुक्कारो सव्वपावप्पणासणो, किंविहो उ ?—मग्गो निव्वाणसुखसाह-  
णिक्खमो सम्मदंसणाइआराहओ अहिंमालक्खणो धम्मो तं मे लाइज्जत्ति मंगलं १, ममं भवाओ—संसाराओ गलिज्जा तारिज्ज वा  
इति मंगलं २ वद्धपुट्टनिद्धत्तनिकाइयट्टपयारकंमरासिं मे गालिज्जा विज्झविज्जंत्ति मंगलं ३, एएसिं सव्वेसिं अच्चेसिं च मंगलाणं किं?,  
पढमं आइए, अरिहंताईणं थुई चैव मंगलंति पूर्वोक्कार्थं, भावमंगलतया एकान्तिकत्वात् आत्यन्तिकत्वाच्च, एवं प्रयोजनाद्यप्युक्तं,  
तथा निर्युक्तिः—इत्थं य पओयणमिमं कम्मक्खयमंगलागमो चैव । इहलोयपारलोइय दुव्विहफलं तत्थ दिट्ठंता ॥ १ ॥ इहलोइ  
अत्थकामा आरुग्गं अभिरईइ णिप्फत्ती । सिद्धी य सग्गसुकुले उववाओ ईय परलोए ॥२॥ किंच—ताव न जायइ चित्तेण चित्तियं  
पत्थियं च वायाए । काएण समादत्तं जाव न सुमरिओ नमुक्कारो ॥१॥ एस समासत्थुत्ति, विस्तरार्थिना नवकारपटलसिद्ध-  
चक्रघृह्णमस्कारफलादीन्पवलोकनीयानि अत्र बंधुदत्तकथा—

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२१९॥

अत्थित्थ भरहवासे नागपुरी वरपुरी सुरपुरी च्चसुहसुपविचा सुगयाणुगया विबुहेहिं संजुत्ता ॥१॥ परदोसदंसणंधो परदव्वव-  
हारपंगुलो जत्थ । वसइ जणो लोभिल्लो गुणगणरयणज्जणंमि सया । २॥ निदलिअसयलपडिव रुखलरुखतेओ य सरतेउव्व । नामेण  
सूरत्तेओ तत्थ नरिंदो अहेसीया ॥३॥ रयणयरो पउरधणो धणवइ सिट्ठी तहिं धणवइव्व । आसी वरप्पहो रायसंमओ किंतु न  
कुवरो ॥४॥ सीयव्व दामरहिणो मणनयणाणंददायिणी तस्स । वरसीलमुंदरी सुंदरिचि नामेण वरभज्जा ॥ ५ ॥ गुणवंतो गुरु-  
पणओ विसुद्धवंसो धणुव्व ताण सुओ । नामेण चंधुदत्तो किं तु सया चकिमाहियओ ॥६॥ नपनवकलाउ निच्चं कलयंतो कलनि-  
हिव्व सियपक्खे । जुण्हाजुय रयणियरो सो पत्तो तारतारुण्णं ॥७॥ अइ वसुनंदो सेट्ठी धणवइणा मग्गिओ सुयस्स कए । पुत्तिं च  
चंदलेहं अणुमन्नइ सोऽवि तव्वयणं ॥८॥ तो सुपसत्थे लग्गे नरुखत्तमुहुत्तदिवससोहिच्छे । ताणं पाणिग्गहणं पवत्तियं परमरिद्धीए  
॥९॥ वरकंकणं कियकरा वीयदिणे चेष चंदलेहा उ । गिहमज्जे पविसंति डक्का दुट्ठेण सप्पेण ॥ १० ॥ खद्धा खद्धत्ति पजंपिरी  
उ विसमविसवेगविहुरंगी । तो सा झडत्ति पडिया कयंतअंकिव्व भूमियले ॥ ११ ॥ हा विहि निग्घिण किमिणं कयं अकंडे तइत्ति  
पलवंतो । वियलियतोसो तो से मिलिओ सयलोऽवि सयणज्जणो ॥१२॥ तो सयलदिणं विहियाउ मंतवाईहिं विविहकिरियाओ ।  
जायाउ ताव विहलाउ ऊसरे मेहउट्ठव्व ॥ १३ ॥ सूरु गोवो मित्तो नूणं मुच्चइ न मच्चुणा कोवि ! इय सुयंतु व्व रयी  
इत्तो अत्थमणमणुपत्तो ॥१४॥ एयारिसे अवसरे न हु जुत्ताइं कुमुभरागाइं । इय भणिउवित्र संज्ञा संज्ञारागं गहिय मुपई ॥ १५ ॥  
हरगलगवलकरालो तिमिरभरो पसरिओ दुरायारो । जइ उट्ठिओ कयंतो हरिउमणो जीवियं तीए ॥१६॥ पिच्छंतस्सवि पियमाय-  
भायपमुहस्स सयणलोयस्स । गयसरणा अत्ताणा सा पंचत्तं तओ पत्ता ॥१७॥ जउ मंतेहिं तंतेहिं विज्जेहिं ओसहेहिं सय-

चन्धुदत्त-  
कथा

॥२१९॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
पारविधौ  
॥२२०॥

नेहिं । न य देवदाणवेहिं वि रक्खिज्जइ मच्चुणो पाणी ॥१८॥ तथा-जम्मजरामरणभएहिं विहुए वाहिवेयणा-  
विहुरे । मुत्तुं जिणवरवयणं संसारे अत्थि नहु सरणं ॥१९॥ अविय-बहुविहआवइमज्जे जं जीविज्जइ खणंपि  
तं चुज्जं । न चिरं खुहियमुहत्थं सरसफलमवट्ठियं चिट्ठे ॥२०॥ जं जेण कयं कम्मं सो तं अणुहवइ अप्पणो  
चेव । इय अमुणंतो मूढो सयणजणो विलवए बहुयं ॥२१॥ काउं मयकिचाइं तीसे जाओ कमेण गयसोगो । जं जीवाणं  
पायं पिम्मं सोगो य पंचदिणा ॥२२॥ ततो अन्नं कन्नं परिणावइ धणवई नियं पुत्तं । साविहु विमूइयाए विवाहणंतरदिणंमि मया  
॥२३॥ अन्नं चित्तेइ जणो अप्पाणं सासयं व मप्रंतो । पडिऊण अंतराले कुवियकयंतो कुणइ अन्नं ॥२४॥ इय परि-  
णियमित्ताओ परिणयणाणंतरियिदिणंमि । छम्भज्जाउ मयाओ उदयेणं असुहकम्मस्स ॥२५॥ जओ-“पविसउ विवरं आरु-  
हउ गिरिवरं मंतमाइ सिक्खेउ । आराहउ देवं वा तहवि न छुट्टइ पुरकयाणं ॥२६॥ दड्ढोवरि पिडगममं विसहत्थो बंधुदत्तु  
इय नामं । से पिहियं लोएणं बलवंतो खल्लु जणो जेणं ॥२७॥ अब्भत्थणापरस्सवि धणेण बहुणाऽवि से न को देइ । नियकन्नं किं  
कज्जइ कन्नच्छेएण कणगेण ? ॥२८॥ ततो विमन्नचित्तो चित्ते चित्तेइ बंधुदत्तुत्ति । किमिमीइ पीवराइ व सिरीइ मह दइयरहियाए ।  
॥२९॥ जओ-कैरिसया व विलासा का वा हिययस्स निव्वुई तस्स । जस्स न समसुहदुहिया पिया थिला न  
यमइ घरंमि ॥ ३० ॥ न चैवं भावयति-पत्नी प्रेमवती सुतः सुविनयो भ्राता गुणालंकृतः, स्निग्धो बंधुजनः  
सग्याऽतिचतुरो नित्यं प्रसन्नः प्रभुः । निर्लोभोऽनुचरः परार्तिशमने प्राक्षोपयोगं धनं, पुण्यानामुदयेन संततमिदं  
कस्यापि संपद्यते ॥३१॥ तो सो चित्तासंतावतावियंगो पहीणसच्चाओ । दिवसे दिवसे सिअइ चंदो इव किण्हपक्खंमि ॥ ३२ ॥

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२०॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२२१॥

जओ-अग्गीइ विणा दाहो उसाससमणिणयं इमं मरणं । रज्जूइ विणा बंधो चिंता दुक्खाण रिंछोली ॥३३॥ तथा-  
वारियवाम्मा सच्छंदगामिणी अन्नमन्नमणुरत्ता । नारिद्व च लसहावा चिंता जीयं कयत्येइ ॥ ३४ ॥ ददुमह तं  
सचितं घणवइ चितइ दुही सुओ मरिही । तो दुहविस्सरणकए वावारे कंमिवि खिवामि ॥३५॥ इय चितिय सो भणिओ घणवइणा  
वच्छ ! गच्छ अत्थत्थं । देसंतरं विणा तेण जेण पुरिसो न किंचि जओ ॥३६॥ नियभुयविदत्तविह्वो मणोरहे मग्गणाणऽवि  
पुरंतो । सलहिअइ जो न लोए चलंतथाणू न सो पुरिसो ॥ ३८ ॥ तथा-जाई कुलं च रूवं तिन्निवि निवडंतु कंदरे  
विउले । अत्युच्चिय परियुद्धुज जेण गुणा पायडा वृत्ति ॥३८॥ अह पिउणो आएसं एवं सोऊण बंधुदत्तो य । चितेइ न संपजइ  
सुहेण लच्छी जओ भणियं ॥३९॥ जा जीवियं जणेणं घडावियं नेव संसयतुलाए । ता किं संपजइ संपयाउ जा चिं-  
तिया चित्ते ॥ ४० ॥ इय चितिय पिउआणाइ गिण्हितं बहुयविविहभंडाई । आरुहिय पवहणं तरिय जलनिहिं सिंहलेहिं स गओ  
॥४१॥ सारेणुवयारेणं उवयरिओ सिंहलेसरो तुट्टो । मिल्लेइ सुंकदाणं सबस्सवि तस्स पणियस्स ॥४२॥ बहुलाभेणं पणियं विक्कि-  
णितं गिण्हितं च पडिपणियं । सो नियनयराभिमुहं अह चलिओ जाव जलहिंमि ॥४३॥ पवलपडिकूलपवणप्पणुल्लियं तस्स पवहणं  
तत्थ । तो चुट्टं तुट्टगुणं पावेण भवणवे व जिओ ॥४४॥ सुहकंखिरोवि पडिओ अणत्थसरथंमि अहह किह अहवा । अत्थं पत्थे-  
माणा दुहदंदोलिं लहंति जिया ॥४५॥ भणियं च-“अर्धानामर्जने दुःखमर्जितानां च रक्षणे । आये दुःखं व्यये  
दुःखं, धिगर्थं दुःखभाजनम् ॥४६॥ आसाइयसुहफलएण तेण अह मच्छगाइयंमि तहिं । संसारे मणुयभवुव फहवि पत्तो रय-  
णदीयो ॥४७॥ खणसंजोगविओगावहाइं ग्वणवसणऊसवमयाइं । ग्वणदिट्टनट्टपिम्माइं जेण चिहिणो विलसियाइं

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२१॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारिणो  
॥२२२॥

॥४८॥ अह तत्थ स वावीए ण्हाउं पाउं पर्यं समुत्तिन्नो । कयविविहफलाहारो पलोयए जाव दिसिवलयं ॥४९॥ ता तत्थ रोहणगिरी  
ओपरिओ दिट्ठिगोयरे तस्म । अइतुंगो रमणिज्जो मुत्तिमंतो विवेउच्च ॥ ५० ॥ पिच्छइ य तेयनियरं तस्स सिरे दसदिसिप्पया-  
सपरं । तिमिरभरं हणमाणं वीसमिपंवित्र रविविमाणं ॥५१॥ तइंसणुस्सुओ जाव आरुहई तत्थ ताव पिच्छेइ । जिणभरणं पसरिय-  
कंतिपरवररणनिम्मवियं ॥५२॥ पविसित्तु वंधुदत्तो तत्थ य अमयंजणं व नयणाणं । वंदइ पडिमं निप्पडिममणिमयं नेमिणो  
गुणइ ॥५३॥ “इन्द्रश्रीरहमिन्द्रश्रीशक्रिश्रीरपराः श्रियः । त्वद्भक्तेस्तु त्रिलोकश्रीः, शिवश्रीरप्यवाप्यते ॥५४॥” अच्छरिए खित्तमणो  
निणइ जा सच्चओ तयं भवणं । ता तत्थेगपएसे दिट्ठो साह समुवट्ठो ॥५५॥ विज्जाहरनियरेणं परियरिओ साहुपुंगवो सहइ ।  
मुरविमरेण व मक्को मोमो तारागणेणं व ॥५६॥ गंतु तहिं तं नमिउं उवविट्ठो साहुणा इमो पुट्ठो । को भइ ! तं सि ? तो सो साहइ  
नियवइयरं सच्चं ॥५७॥ “अह भणइ मुणी इहयं भइ ! भवीणं भवंति भदाणि । पुण्णेण सुचिण्णेणं पावेणं पुण अभदाणि ॥५८॥  
तथा “सुकुलुप्पत्ती सोहगगखुवआरुगगकंतिरिद्धिवलं । दीहाउ पडुत्तजसो सग्गसिचसुहाइं धम्मफलं ॥५९॥ दालिइं  
दोहगं उधे यविओपसोयसंतायं । असमाहिवाहिदुहआवयाउ सधं पि पावफलं ॥६०॥ जीवगईवि विचित्ता सुहासुहो  
यावि जीवपरिणामो । बंधइ य तेण कम्मं तं पुण नेयं चउब्भेयं ॥६१॥ पुण्णअणुबंधि पुण्णं तहेव पावाणुबंधि पुण्णं च । पुण्णाणुबंधि  
पावं पावं पावाणुबंधि तथा ॥६२॥ तत्थ विहियजिणधम्मा निरवायं निरुमं च भवसायं । भरह्चच्च लहंति जओ पुण्णं पुण्णाणुबंधि  
तयं ॥६२॥ नीरोगाइगुणजुया महिड्डिया कोणिउच्च पावरया । पावाणुबंधिपुन्ना हवंति अन्नाणकट्टेण ॥६३॥ जं पुण पावस्सु-  
दया दरिदिणो दुक्खियावि पावंति । जिणधम्मं तं पुण्णाणुबंधिपावोदयाइलवा ॥६४॥ पावा पर्यंडकम्मा निद्वम्मा निग्घिणा निर-

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२२॥

धीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२२३॥

पुतावा । दुहियावि पाचनिरया पावं पावाणुबंधि तयं ॥ ६५ ॥ बहिरंतरंगरिद्धी जाणइ पुण्णाणुबंधिपुण्णेण । इक्कावि न जेसि  
पुणो धिद्धी मणुयत्तणं तेसिं ॥६६॥ जे खंडभावणं पुण करंति न जिया अखंडियं पुण्णं । ते अन्नमवे पावंति संपया आवयाहिं  
जुया ॥६७॥ ता भो णाऊणमिमं सुद्धे धम्मे विसुद्धभावेणं । उज्जमह झत्ति जइ इह मुहाइं पुण्णाइं वंच्छेह ॥ ६८ ॥” सोउमिमं  
गिहिधम्मं गिण्हइ संमत्तमूलमह एसो । अणुमोयंतो सहलं तत्थ य निययं समागमणं ॥६९॥ जओ-“तो आवयाउ संपयस-  
माउ कुक्खंपि सुक्खवतुल्लं तं । पाविज्जइऽणंतसुहो जिणधम्मो जत्थ दयरम्मो ॥७०॥” तं ददुं अह तुट्ठो खयरो  
चित्तंगओ भणइ भइ । तं परमबंधवो मे इमिणा जिणधम्मगहणेण ॥७१॥ भणियं च-“अन्नदेसजाया अन्नहारचड्डिय-  
सरीरा । जिणसासणं पवना सघे ते बंधवा नेया ॥७२॥ ता गयणगामिणिं किं विज्जं तुह देमि नेमि व सठाणं । दावेमि  
पररुसं व साहु साहम्मिय ! भणेषु ? ॥७३॥ जओ-“तं अत्थं तं च सामत्थं, तं विण्णाणं सुउत्तमं । साहम्मि-  
याण कज्जंभि, जं विचंति सुसावया ॥७४॥” अह भणइ बंधुदत्तो जा विजा तुज्ज सा हु मज्ज वसा । जं बंधवाण अत्थो  
सादीणो लोयसिद्धमिणं ॥७५॥ सुत्तं इमं सुठाणं चित्ते अन्नं न मे चमकेइ । जत्थ किल एरिसाणं सुगुरूणं दंसणं होइ ॥ ७६ ॥  
“पुज्यकपसुक्कगबिहियं भविस्ससुहकारणं हरइ दुरियं । सुगुरूण दंसणं जं पयडेइ तिकालजोगित्तं ॥ ७७ ॥  
इय पुत्तं तुण्डिके तंभि उिए खेपरो विचिंतेइ । अहिलसइ एस कम्मं अणिसेहे जं धुमाऽणुमई ॥ ७८ ॥ जा परिणीया संती कम्मा  
इमिणा न संपयं मरई । संमं विण्णाय तयं दाविस्समवस्समेयस्स ॥७९॥ इय निच्छिऊण तुरियं चित्तंगयखेपरो समणुपत्तो । वेपट्टे  
रणणपुरंभि बंधुदत्तं गहेऊण ॥ ८० ॥ सकारिय तं गुरुगउरवेण चित्तंगओ अह सदाए । पयडियवन्नुत्तंतो पुच्छइ विजाहरे एवं

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२३॥

धीदे०  
वेत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२२॥

॥८१॥ भो अत्थि कावि कन्ना इमस्म जा अरिद्वइत्ति इत्ताहे । तन्भायअंगयसुया मयंरुलेहा तहिं पत्ता ॥८२॥ सा भणइ किं  
न याणेह ताय ! पियदंसणा सही मज्झ । का सत्ति खेयरिन्देण जंपिए भणइ पुणवि इमा ॥८३॥ अत्थि हु वच्छाविसए कोसं-  
वीए य पवरनयरीए । विहियारिमाणभंगो भूवालो भाणभंगुत्ति ॥८४॥ सिट्ठी य मुणियत्ततो बहुवित्तो आसि तत्थ जिण-  
दत्तो । साहम्मियजिणभत्तो दढसंगत्तो पवरमत्तो ॥८५॥ तस्स समुन्नयवंसा सुवन्नरयणा य मेरुमुत्तिव । वसुम्मइ नामेण पिया  
धूया पियदंसणा नाम ॥८६॥ रूवेण रइसुरूया जम्पणाए सरस्सई सकखा । लायण्णेण य लच्छी ललियपयन्नासजिणहंसी ॥८७॥  
महियाए सहियाए महियाइ इमाइ मज्झ सहियाए । सम्मं अणुदिणकरणिज्जकज्जच्छकेण जंति दिणा ॥ ८८ ॥ भणियं च—  
“देवपूजा गुरूपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः । दानं चेति गृहस्थानां, पद् कर्माणि दिने दिने ॥८९॥” जा अन्नया उ  
तीए सद्धि मद्धम्मरुम्मनिरयाहं । चिट्ठामि ता पविट्ठं भिक्खुवट्ठं तत्थ मुनिजुयकं ॥९०॥ अह नाणवरिट्ठेणं जिट्ठेणं साहुणा तयं  
ददट्ठं । सिट्ठो मुणी कणिट्ठो गरिट्ठयणं इमं छणं ॥९१॥ जिणदत्तसिट्ठिधूया एसा पियदंसणा सुयं एगं । पसविय पडिवज्जि-  
स्मइ पयज्जं वज्जिअ अवज्जं ॥९२॥ तं सोउ हरिसियाज्जं मह सहियच्चिय जहा इहं सहिया । जा इह भवसुहमणुहविय पाविहिइ पर-  
मयसुहंपि ॥ ९३ ॥ इत्तियदिणाणि एयं कस्मवि न मयाइ साहियं ताय ! । सा परमिमस्स जोगत्ति जमुच्चियं किज्जउ तमिण्हि  
॥९४॥ तं मोउं अभियगईपमुहे चित्तंगओ भणइ खयरे । दावेह तत्थ गंतुं तं कन्नं बंधुदत्तम्म ॥९५॥ गहिऊण बंधुदत्तं कोसंवीए  
इमे तओ पत्ता । सिरिपामनाहचेइयविभूसिए वाहिरुजाणे ॥९६॥ काउं तत्थावासे ण्हायत्रिलित्तो अलंक्रियसुगतो । तत्तो य बंधु-  
दत्तो रिजाहरनियरसंजुत्तो ॥९७॥ गंधवगीयनाइयरकाहलरोलमुहलियदियंतो । पवरविमाणारूढो पत्तो जिणमंदिरदुवार ॥९८॥

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
।र्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२२५॥

जिणदिहीगोयरे तो मुत्तु विमाणं तहिं पविसमाणो । कयपंचविहाभिगमो करेइ निसीहिया तिस्सि ॥ ९९ ॥  
भणिउं नमो जिणाणं काउं अद्धोणयं पणामं च । पूयंगपाणिपरियणजुओ पढंतो नमोक्कारे ॥१००॥ करघरिय-  
जोगमुहो पणं पणं पाणिरक्खणाउत्तो । देइ य पयहिणतियगं सुभत्तिजुत्तो इमो तत्तो ॥१०१॥ निसीहियाइ  
पविसित्तु मंडवे काउ तह पणामतिगं । हरिसवसवियसियमुहो सम्मं वियरेइ सुहकोसं ॥१०२॥ ण्हवणवि-  
लेवणआभरणवत्थपुप्फफलधूवदीवेहिं । काउं जिणंगपूयं नेवज्जेणग्गपूयं च ॥ १०३ ॥ दाहिणदिसा जहो-  
चियअवग्गहे तिप्पमज्जिउं च भुवं । निसीहियं विहेउं मुहातियगं च सच्चवियं ॥१०४॥ अनिरिक्खंतो तिदिस्सिं  
उवउत्तो वण्णमाइतियगंमि । भावंतोऽवत्थतियं वंदिय पासं इय थुणेइ ॥ १०५ ॥ “जय जय जिणिंद ! तियस्सिं-  
दविंदवंदियपयारविंदजुया । सिरिपासनाह मणवंछियत्थसंपायणसमत्थ ॥१०६॥ सामि ! न याणामि अहं अहेस्सि तुह कितियं  
तु लायणं ? नयणाइगंति तुह नामधारण पत्थिवेऽवि चिरं ॥१०७॥ नयणा निरत्थया ते जयदमयंजण न जेहिं दिहोऽस्सि । वायावि  
वंचिया सा सुरसंधुय ! जीइ नहु थुणिओ ॥१०८॥ हिययं हियआणंदं हिययाणंदं न जं तुमं झाइ । सवणावि सवणा ते नहु तुह  
गुणमवणपवणा जे ॥ १०९ ॥ नाह ! सिरं तं असिरं तिहुयणनमियस्स जं न ते पणयं । भालंपि भग्गभग्गं तुह पयपीठे न जं  
लग्गं ॥११०॥ अकयत्था ते हत्था जे तुह कमकमलसेवअसमत्था । पायावि बहुअपाया गंतूण न वंदिओ जेहिं ॥१११॥ जम्मो-  
ऽवि सो अरम्मो जंमि न संमाणिओ तुमं सामी । लच्छीवि सा अलच्छी तुहत्थवंज्ञा न सच्छाया ॥ ११२ ॥ किं बहुना ? नाह  
इहं तुह सेवावज्जियस्स जं किंपि । तं मधंपि निरत्थयमणत्थसत्थप्पयाणाउ ॥ ११३ ॥ ता विन्नत्तो समिकरमधम्मकित्तिभर पास-

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२५॥

धीदे०  
धैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२२६॥

तित्थयर ! । तुह सेवाए सहलाणि हुंतु मह लोयणाईणि ॥ ११४ ॥” तं एवं पासजिणं वंदंतं पुव्वमागओ तत्थ । दट्ठुं चित्तइ  
साहम्मियप्पिओ सिद्धिजिणदत्तो ॥११५॥ एयस्स अहो बोहो अहो विवेओ अहो य बहुमाणो । विहिकोसल्लं च अहो जिणपूया-  
आयरो अ अहो ॥११६॥ अविय—धन्नाणं विहिजोगो विहिपक्व्वाराहगा सया धन्ना । विहिवहुमाणी धन्ना विहि-  
पक्व्वअट्ठसगा धन्ना ॥ ११७ ॥ एवं पहिट्ठचित्तो साहम्मियवच्छलत्तउज्जुत्तो । अब्भत्थिय नियगेहे नेइ तयं खेयरेहिं जुयं  
॥११८॥ जओ—“साहम्मियाण वच्छल्लं, कायवं भत्तिनिब्भरं । देसियं सव्वदंसीहिं, सासणस्स पभावणं ॥११९॥”  
किंच—“धम्मियजणेहिं न विणा तित्थं तित्थं विणा न धम्मो ता । साहम्मियवच्छल्लेण तित्थसंधाणणा नूणं  
॥१२०॥ अविय—साहम्मियम्मि पत्ते नियगेहे जस्स होइ नहु नेहो । जिणसासण भणियमिणं सम्मत्ते तस्स  
संदेहो ॥१२१॥ तम्हा सव्वपयत्तेणं, जो नमुक्कारधारओ । सावओ सोऽवि दट्ठवो, जहा परमबंधवो ॥ १२२ ॥”  
ता मज्जणभोयणमाइणा उ सम्माणित्तं सव्वहुमाणं । अवगतव्वुत्तंतो सिद्धी अब्भत्थए वंधुं ॥१२३॥ जह मह सुयाइ पाणिग्गहणेण  
पसीयसुत्ति लहु तत्तो । जाणावइ अमियगई खयरो चित्तंगयस्स तयं ॥१२४॥ अह चित्तंगयस्खयरंमि जन्नजत्ताए आगए सिद्धी ।  
कारेइ पाणिग्गहणं ससुताए बंधुदत्तस्म ॥१२५॥ वित्ते महसवंमि चित्तंगयस्खेयरो सपरिवारो । सट्ठाणे संपत्तो अणुसासिय बंधुदत्तं तो  
॥१२६॥ पियदंसणाए पियदंसणाए पियदंसणाए तीए समं । विलसंतो सपियाए भोए सो तत्थ चेव ठिओ ॥१२७॥ जिणधम्ममब्भसंतो  
माधुजणं चेव पज्जुवासंतो । रक्खंतो पाणिगयं अहऽन्नया चित्तए एवं ॥१२८॥ अप्पस्स भावणाओ पभावणाओ फलं  
परेसिंषि । एएण पगारेणं पभावणा भावणाउ चरा ॥१२९॥ इय चित्तिय कारवई एमो सिरिपासनाहरदजत्तं । सुरहिचउधि-

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
र्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२२७॥

हमल्लेहिं जिणरहे कुणइ फुल्लहरं ॥१२९॥ रदपुरओ नाणाविहफलेहिं वरखजभुजगाईहिं । कारेइ स उकिरणे उकिरणेविव सपुत्तस्स  
॥१३०॥ सिरिसयलसंपसहिओ मग्गणजणसद्मरियभुजणयलो । भमई तत्थ जिणरहो तत्तो तियचचराईसु ॥१३१॥ सन्नायरेण  
इय सो बहुसो जिणवासणं पभाचितो । सम्माणंतो साहम्मिण य तहिं वसइ चउवरिसे ॥१३२॥ कल्पेऽपि रथयात्राविधिरुक्तः—  
“रथप्रतिविम्बयुक्तं गीतयुक्तं सकलवाजित्रवाद्यमानं दानदीयमानं बहुजीवरक्षणेन सकलजिनभक्तिक्रियमाणं यथा स्यात् सकल-  
संघयतनापरिणामशुभोपयोगयुक्ताः सर्वत्र नगरे परिभ्रमन्ति ग्रयचनविधिना जिनशासनं प्रभावयन्ति शोभां विदधति, पुनरपि  
प्रोक्तं निशीथचूर्ण्या—जाईकुलरूवधणवलसंपन्ना इड्ढिमंतनिरूखंता । जयणाजुत्ता जइणो एयं तित्थं पभावंति ॥ १ ॥ जो जेण  
गुणेणऽहिओ जेण विणा वा न सिज्झए जंतु । सो तेण तंमि कज्जे सच्चत्थामं न हावेइ ॥२॥ इत्युक्तीत्या रथयात्राऽभिहिता, अन्यदा  
च—अह पविसंते वयणे पासइ पियदंसणा तथा सुभिणे । वरपुत्तजम्मपिसुणं चउदसणं वारणं धवलं ॥१३३॥ साहेइ बंधुदत्तो सठाणगम-  
णुस्सुयं निपं पित्तं । अन्नंमि दिणे पियदंसणाइ तं सावि निषपिउणो ॥१३४॥ तो भूरिविभूईए संवाहिता पुरो तयं तस्स । पियदंसणं  
विहेउं जिणदत्तेणं भणियमेयं ॥१३५॥ पुत्ति ! पवित्तं सीलं पालिज्जसु मा करिज्जसु कुसंगं । अणुमन्निज्जसु गुरुजणम-  
वणिज्जसु दुच्चिणयभावं ॥१३६॥ सेविज्जसु नयमग्गं मियमहुरक्खरगिरं वयेज्जासि । आराहिज्जसु सपियं देवो  
भत्ता कुलवह्णं ॥१३७॥ बंधूवि इमं पुत्तो एसा इक्का महं गुया इट्ठा । मन्न सरइ तह कुजा इय भणिय विसज्जिओ सपिओ ॥१३८॥  
आघोसणाइ मिलियं जणमग्गे काउ नागपुरिमुवरिं । गच्छंतो सो पत्तो पउमानामं महाअडविं ॥१३९॥ कत्तियहत्थनिसायरगुरुतम-  
सीद्दमहच्चिरिक्खजुया । विलसियधणुमियसिरकोडलुद्धया जा नहसिरिब ॥१४०॥ अइआयरेण सत्थं रक्खंतो सो दिणत्तएण तयं ।

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२२८॥

अडविं लंघिय कस्तवि सरस्स तीरंमि आविद्धो ॥१४१॥ तत्थट्टियस्म सत्थस्स-तस्स रयणीइ चरिमपहरंमि । पडिया धाडी पल्ली-  
वइस्स अह-चंडसेणस्स ॥ १४२ ॥ चोरेहि विलोडित्ता तत्थ गहियं च सत्थसन्वस्सं । पियदंसणं च नेउं समप्पिया चंडसेणस्स  
॥१४३॥ अह दुद्धरसोगभरावरुद्धकंठक्खलंतवयणा सा । निवडंतवाहसलिलप्पवाहधोयाणणा रुयई ॥१४४॥ रे दइव ! तस्स सिट्ठि-  
स्म जइ गिहेऽहं तए विणिम्मविया । ता कीस एरिसाऽऽवयमहण्णवे दुत्तरे खित्ता? ॥१४५॥ सा कत्थ सिरी सो जयणिजणय-  
सन्भावनिन्भरो नेहो? । कह सव्वंपि पणद्धं गंधव्वपुरंव वेगेण? ॥१४६॥ खणमुल्लसंति उड्डं खणेण निवडंति हेट्ठओ सहसा । खरप-  
वणुद्धुयधयवडसमाई रे तुहविलसियाइं ॥१४७॥ इय सोयसंकुलं दीणमाणसिं पिच्छिऊण पल्लिवई । चित्तेइ झाइ करुणो नेमि इमं  
किं सठाणंमि ॥१४८॥ इय चिंतंतो तप्पासवत्तिणिं चेडियं स चूयलयं । पुच्छइ का एसा कस्स वत्ति? सावि य कहेइ इमं ॥१४९॥  
कोसंघीए पियदंसणत्ति जिणदत्तसिट्ठिणो धूया । इय सोउं सो सहसा निमीलियच्छो गओ मुच्छं ॥१५०॥ सिसिरपवणाइणा तो  
गयमुच्छो अहह मे कयमकज्जं । इय जंपंतो पुट्ठो तीए किमिणंति ? सो भणइ ॥१५१॥ पियदंसणि ! मा वीहसु जहऽहं जीवाविओ  
तुहं पिउणा । तह सुणसु इओ कइया उ निग्गओ चोरियाइ अहं ॥ १५२ ॥ पत्तो वच्छाविमए गिरिगामे निसिमुहे सचोरजुओ ।  
पियमाणो तत्थ सुरं पत्तो आरक्खिगनरेहिं ॥१५३॥ धरिऊण माणभंगस्स निवड्ढो तेहिं अप्पिओ तत्तो । तेणवि हणाविओऽहं तो  
नीयंतो वहनिमित्तं ॥१५५॥ पोसहपज्जंते पारणाय गच्छंतएण ते पिउणा । दिट्ठो दयालुणा तो मोयाविय चित्तवत्थाणि ॥१५५॥  
दाउं विसज्जिओऽहं ता आइस भइणि ! किं करेमि तुह ? । सा भणइ इह विउत्तं मेलसु मे बंधुदत्तपइं ॥१५६॥ ओमंति मणियं  
मो तं गिहे सदेवै व सुत्तु भत्तोए । नीहरइ बंधुदत्तं पलोइउं चंडसेणो उ ॥१५७॥ अह भमिओ. पल्लिवई तं अडविं चिरमपाविउ

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२८॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
शर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२२९॥

बंधुं । गिहमागम्म विलक्खो भणेइ पियदंसणाइ पुरो ॥१५८॥ जइ ते छमासमज्जे नाणेमि पियं विसामि ता अगणिं । इय विहिय-  
पइत्तो तो सो पेसइ सव्वओ सनरे ॥१५९॥ कोसंबीनागपुरीसु बंधुदत्तं पलोइउं ते उ । आगम्म कइदिणेहिं भणंति बंधू न लद्धोत्ति  
॥१६०॥ चित्तेइ चंडसेणो पियविरहत्तो इमो मओ नृणं । चउरो पइन्नमासा गया विसामिण्हि ता अगणिं ॥१६१॥ पियदंसणा उ  
अहया जा पसवइ ताव ठामि तीइ सुयं । कोसंबीए नेउं पच्छा अगणिंमि पविमिस्सं ॥१६२॥ एवं चित्तेमाणस्स तस्स आगम्म भणइ  
पत्तिहारी । वद्धाविज्जसि सामिय ! जाओ पियदंसणाइ सुओ ॥१६३॥ दाऊण तुट्ठिदाणं तीइ तओ चंडसेणपल्लीसो । नामेण चंडसेणं  
भणेइ पउमागइं देवीं ॥ १६४ ॥ जइ मासं ससुयाए कुमलं भइणीइ मे तथा तुब्भं । दाहं दसनरवलिमह पणनीसदिणा सिवेण  
गया ॥१६५॥ तो पइदिसि तेण नरा पहिया वलिनरकए इओ तइया । सत्थे ल्हडिज्जंते नट्ठो बंधू सजियगाहं ॥१६६॥ पियविर-  
हणो चित्तइ मइ विरहे सा मया हविज्ज तओ । मज्झवि मरणं जुत्तं काए आसाइ जीवामि ? ॥ १६७॥ जा सत्तछए पासं दाही  
ता कंमि सरवरे एभं । इंसं पियविरहं पिच्छइ तक्खणमिलियदइयं ॥ १६८॥ तं ददट्ठु बंधुदत्तो चित्तइ मे जीवयो पियाजोगो ।  
होइ भणियं नरो जं जीवंतो निगइ भइसए ॥१६९॥ ता जामि नियं नयरिं धणेण रहिओ व तत्थ कह गच्छे ? । कोसंबीइवि  
पियदंसणं पिणा जुज्जइ न गंतुं ॥१७०॥ जा गंतुमंतीए समाउलाओ धणं गहिय दाउं । पल्लिवइणो सपियं मोयाविय जामि नाग-  
पुरिं ॥ १७१ ॥ तो माउलस्स दाइं सगिइउ भणंति चित्तिउं चलिओ । पुव्वमुहो विइयदिणे पत्तो टाणे गिरिथलंमि ॥ १७२ ॥  
जा गो मग्गासखे जक्खगिहे विसमई तदिं ताव । पत्तो पदिओ एगो सो पुट्ठो बंधुदत्तेण ॥१७३॥ कत्तो तमागओ ? सो भणइ अयं-  
भीउ तो तदिं इसली । धणदत्तसत्थराहोपि बंधुणा सो पुणरि पुट्ठो ॥१७४॥ तो दीणमुहो पहिओ भणइ गए ववहरित्तु धणदत्ते ।

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२२९॥



धीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२३०॥

तप्पदमसुएण गिहे पियाएँ सह कीलमाणेणं ॥१७५॥ कइया उ गच्छमाणो राया अवगण्णिओ तओ तेण । सबस्सहरणओ सो खिचो  
गुत्तीएँ सकुहुंबो ॥ १७६ ॥ धणदत्तेणं दत्तो दंडो सकुहुंबमोयणट्टाए । आणीय धणं सधं न पहुप्पइ एगकोडी से ॥१७७॥ तीइ  
निमित्तं चलिओ स भइणिसुयबंधुदत्तपासंमि । आगच्छंतो मुक्को कल्लदिणे सो मए भइ ॥१७८॥ चित्तेइ बंधुदत्तो किमहो दइवेण  
विहियमासा मे । अत्थासी सोऽविहु जेण पाडिओ वमणजलहिमि ॥१७९॥ अन्नह चित्तेइ नरो सहरिसकंडुज्जुएण हियएण ।  
परिणमए अन्नहचिय कज्जारंभो विहिवसेण ॥ १८० ॥ होउ इहेव ठिओच्चिय मिलेमि नियमाउलस्म तस्सऽत्थ । साहिस्सं  
नागपुरी गयोत्ति चित्तिय ठिओ तत्थ ॥१८१॥ पंचमदिवसे सत्थेण तत्थ अह आगओ कइसहाओ । धणदत्तो जकखगिहासन्नंमि ठिओ  
तमालतले ॥ १८२ ॥ उवलक्खेउं तं भणइ बंधुदत्तो समागया कत्तो ? । गमिहिह कत्थ व ? स भणइ अवंतिओ जामि नागपुरिं  
॥१८३॥ तत्थऽत्थि बंधुदत्तो मे भइणिसुउत्ति अह भणइ बंधू । सो मज्झ बंधुदत्तो मित्तो अहमविय तत्थगमी ॥ १८४ ॥ नाउं  
स माउलं तं गोवंतो अप्पयं तओ बंधू । तत्थ ठिओ तेण समं मिलिओच्चिय भुंजई सुयइ ॥१८५॥ अह बंधू सोयत्थं गओ पभाए  
नईएँ पासेइ । भूमिं कयंपगहणे रयणच्छायाए रत्तरजं ॥१८६॥ जा खणइ तं भुवं सो ताव करंडं निएइ तंबमयं । रयणविभूसणभरियं तं  
गहिय भणेइ धणदत्तं ॥ १८७ ॥ कप्पडियाउ पविची तुह लद्धा मित्तमाउल ! मया ता । गिण्हसु सपुन्नलद्धं इमंति तं गंतुमुअेणिं  
॥ १८८ ॥ मोएसु माणुमाणि य नागपुरिं जा स भणइ धणदत्तो । पिच्छिस्सं तुह मित्तं पढमं तो सोच्चिय पमाणं ॥१८९॥ अह  
नमिय बंधुदत्तो निययुत्तं कहेइ जहवित्तं । धणदत्तो भणइ इहा विसमदसं कहमिमं पत्तो ? ॥ १९०॥ मोएयवा मिलेहि वच्च !  
पढमं अणेण तुज्झ पिया । इय भणइ जाव सो ता उदाउहा निवमडा पत्ता ॥१९१॥ सबे पहिया धरिया तत्थवि घातेहि चोर-

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३०॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२३१॥

संकाए । बंधू समाउलो तेहिं करंडगोवणपरो दिट्ठो ॥१९२॥ किमिणंति तेहिं पुच्छिय तुम्ह भया नियधणं ठएमुत्ति । जंपंता सक-  
रुण्डा नीया ते मंतिपासंमि ॥१९३॥ मुत्तु परिकुखिय अन्ने पहिए मंती भणेइ ते के मे ? । कत्तुष्वा किमिणंतिय ? ते चिंति अवं-  
त्तिओ पत्ता ॥१९४॥ चलिया मो पुबज्जियधणमहुणा गहिय लाडदेसंमि । मंती भणेइ जइ इय कहेह भो लहु किमित्थऽत्थि ?  
॥१९५॥ खुहिया तमजाणंता भणंति ते चोरिओ इमो जइ ता । उग्घाडिय जोइअउ तमुग्घाडइ तो सयं मंती ॥१९६॥ पिच्छिय  
करंडमज्जे नियनामंकियविभूसणे सरइ । चिरनट्टुधणाणमिणं निहीकयं नूणमेएहिं ॥ १९७ ॥ एएहिं ताडिएहिं चोरा लहिहिति  
चिंतिउं सत्थो । सधो धराविओ सो नरेहिं ताडावियां ते उ ॥ १९८॥ गाढप्पहारविहुरा भणंति ते मो समागया कल्ले । सत्थेण  
जइ न एवं मारिअ वियारिउं ताण ॥ १९९ ॥ अह बंधुदत्तमुद्दिस्स ठाणपुरिसो पयंपए एगो । सत्थे इमंमि पंचमदिणंमि दिट्ठो  
इमो खलु मे ॥२००॥ जाणसि इमंति पुट्ठो सत्थाहो मंतिणा भणइ सत्थे । एरिसए कप्पडिए वहमाणे जाणई को णु ? ॥२०१॥  
तं सोऊणं कुविओ मंती ते भाइणिअमाउलए । नरयावाससमाणे कारागारंमि पक्खिई ॥२०२॥ तत्थ य गिरिथलनयरे काराए  
ठियाण तेसि दुहियाण । माउलभाणिअणं बोलीणा कहवि छम्मासा ॥ २०३ ॥ पत्तो महाभुयंगो निशाए आरक्खगेहिं अह  
तइया । परिवायगो सदधो बंधिय मंतिस्स उवणीओ ॥२०४॥ परिवायगाण न धणं एरिसमिय तक्करो धुवं एसो । इय निच्छिउण  
मंती आइसइ तयं वहनिमित्तं ॥२०५॥ नीयंतेण वहत्थं अणुसयमाणेण तेण चिंतित्ता । होइ न यन्नहा रिसिभासियंति पयडंपि तं  
भणियं ॥ २०६ ॥ तं सोउ भणइ मंती किमिणं ? स भणइ किमित्थ मे कज्जं ? । मं मुत्तुमिह न अन्नो चोरो ता कुणह जं इट्ठं  
॥२०७॥ नवरं सबं गिरिनइआरामाईसु अत्थि हरियधणं । तं अप्पिय धणियाणं निहणिअह मं तओ तुम्हे ॥ २०८॥ ओमंति

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३१॥

धीदे०  
धैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२३२॥

मंतिणुत्ते सबं दरिसइ विणा करंडं सो । मंती भणइ इमा का चिट्ठा ते दंमणचिरुद्धा ? ॥२०९॥ परिवायगोऽवि जंपइ विसयास-  
त्ताण निद्वणाण अहो । इणमेव कम्ममुचिअं जइ अच्छरियं तओ सुणसु ॥२१०॥ इह पुंडवद्वणपुरे आसि सुओ सोमदेवविप्पस्स ।  
नारायणोत्ति कइया स नियइ चोरित्ति धरिय नरे ॥२११॥ निहणह महाभुयंगे इमेत्ति भणियंमि तेण निक्करुणं । हा अन्नाणं कट्टंति  
भणइ तइया गुणी एगो ॥२१२॥ किमनाणंति तओ तेण नमिय पुट्टो गुणी भणइ जं भो । पीडाकरं परस्स उ असंतदोसाधिरो-  
वणयं ॥२१३॥ पुबजियकम्मवसा पडिया वसणंमि जइ इमे ता भो । पयडसि एसु असंतं महाभुयंगत्तदोसं किं ? ॥२१४॥ अन्नं  
च-पुबजियफलसेसं लहिहिसि अचिरेण ता अलियदोसं । मा देहि परेसु तओ पुट्टो किं किंति ? तेण गुणी ॥२१५॥ अइमयनाणी  
स गुणी करुणारससागरो भणइ आसी । गंजणपुरंमि पिप्पो आसाढो से पिया रज्जू ॥२१६॥ पुत्तो य चंददेवो पिउणा वेओ  
पदाविओ सो उ । अइविउममाणिणं तं बहु मन्नइ वीरसेणनिवो ॥२१७॥ परिवायगो अहेसी जोगप्पा नामओ तहिं तस्स । भत्ता  
उ बालविहवा वीरमई विणियसिट्ठिसुया ॥२१८॥ एसा उ गया सिंहलमालिण सह दइवओ उ तंमि दिणे । जोगप्पावि अ-  
कहिउं निस्संगत्ता कहिंचि गओ ? ॥२१९॥ अह कत्थवि वीरमई गयत्ति जायं पुरंमि सयलेऽवि । जोगप्पणा सह गया नूणं  
चितइ स विप्पसुओ ॥२२०॥ रायकुलेवि गिराए तीए जंपइ स एममेवंति । दाराइसंगरहिओ सोत्ति निवुत्तेऽवि भणइ इमं ॥२२१॥  
इत्तोच्चिय परदारो गिण्हइ पासंडधारओ सो उ । तं सोउ जणो जाओ धम्मे मंदादरो धणियं ॥२२२॥ तो जोगप्पा वज्झो विहिओ  
परिवायगेहिं अन्नेहिं । कम्मं तिबविगं निक्काइयं चंददेवेण ॥२२३॥ तो मरिउं एडिको जाओ कुल्लागसन्निवेसे सो । तक्कम्मदोसओ  
तत्थ कुहियजीहो दुहेण मओ ॥२२४॥ कुल्लागस्मऽडवीए होउं जंयू मओ कुहियजीहो । जाओ अ उम्भनियारवेमकामज्झयापुत्तो

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३२॥

धीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२३३॥

॥२२५॥ तरुणो स सुरामनो निवमायरमेगया उ सवमाणो । रायसुणं सिद्धो स वेइ तो तंपि अहिययरं ॥२२६॥ तो तेण छिभ-  
जीहो लजाए अणमणेण मरिऊण । तं नारायण ! जाओ अत्थिऽऽवि कम्मसेसं ते ॥२२७॥ तं सोउं मुणिवयणं सहिओ नारा-  
यणो सुसंविग्गो । गहियपरिवायगतवो गुरुसुस्समणपरो जाओ ॥ २२८ ॥ मरमाणेण य गुरुणा तालुग्घाडिणिखगामिणीओ य ।  
वरवेजाओ दाऊण सायरं सिक्खिओ एवं ॥२२९॥ धम्मनियदेहरक्खं मुत्तुं अन्नंमि गाढवसणेऽवि । ण इमा पओजियवा हासेऽवि  
मुसं न वत्तव्वं ॥२३०॥ जइय पमायाउ मुसं वइज्ज तो नाहिपरिमियजलंमि । ठाऊण उडुभुओ अट्टमहस्सं जविज्ज इमा ॥२३१॥  
विहियं विवरीयमिणं विसयामत्तेण तेण तद्द भणियं । कल्लदिणंमि असन्नं आरामठिण्ण य तद्दाहि ॥२३२॥ ण्हाऊण गिहे जुवईउ  
आगया काउ देवपूयत्थी । वयगहणकारणं सो वेरग्गं पुच्छिओ ताहिं ॥ २३३ ॥ सहसा सिद्धो तेणं वयहेऊ इट्ठवल्लहाविरहो । न  
कओ पुच्चुत्तविही तु मंति । नारायणो सोऽहं ॥२३४॥ सायरसिद्धिगिहे चोरियाए दइवाउ अपिहियदुवारे । निसि माणुव्व पविद्धो  
गहिउं कणगाइ गच्छंतो ॥ २३५ ॥ आरक्खगेहिं गहिओ खगामिणी सुमरियावि नप्फुरिया । तं च सरिऊण भणियं न अन्नहा  
साहुभणियंति ॥ २३६ ॥ मंती भणइ वयं भो विस्सरियं कत्थ भूमणकरंडो ? स भणइ निहत्तठाणा केणवि नाऊण सो गहिओ  
॥२३७॥ अह सचिवपरो मुंचइ तयं परिव्यायगं सरेइ तद्दा । ते माउलमाणिजे करंडगहरे विचिंतइ य ॥२३८॥ नूणमजाणंतेहिं तेहिं  
न लद्धो करंडओ नवरं । भीएहिं अन्नहुत्तं अभणं पुच्छियव्वा तो ॥२३९॥ आहूय तओ पुच्छिय सचिवेण जहातहं भणंती ते ।  
मुक्का खामेऊण उ दुदिणं ठाउं तओ चलिया ॥२४०॥ दसनरपलोयगेहिं अह गहिआ चंडसेणपुरिसेहिं । खित्ता य चंदसेणाचलि-  
हेउं वेदिऊणमज्जे ॥२४१॥ पियदंसणं सपुच्चं वेडीजुत्तं गहित्तु पल्लियई । देवीपूयाहेउं समागओ तत्थ सपरियणो ॥ १४२ ॥

चण्डिका-  
कथा

॥२३३॥

धीदे०  
चैत्य० थी-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२३४॥

ददृत्तं देविं एयं भीमं न स्वमा इमा वणियधूया । इय चीवरेण बंधइ एसो पियदंमणानयणे ॥२४३॥ तीए सुयं सयं गहिय चंड-  
सेणो उ दिट्टिसन्नाए । आणावइ दइवाओ पढमं चिय बंधुदत्तं तो ॥२४४॥ देवीपएसु पाडिय सुयमप्पिय रत्तचंदणाइ तओ । अचसु  
देविं पियदंसणेत्ति भणिया इमा तेण ॥ २४५ ॥ नित्तिसो नित्तिसं कोसाओ कट्टिउं सयं तु ठिओ । पियदंसणा उ दीणा चितइ  
मइ जीवियं धिद्धी । २४६॥ पियदंसणाकए नरबलीकओ देवयाइ इय अयसो । पावेण समं मइ भो पमरिस्सइ रक्खसी इव मे  
॥२४७॥ जाणित्तु बंधुदत्तो विसुद्धबुद्धी समागयं मरणं । कुणइ नवकारुणणं दुहदलणं दुविहसिवजणणं ॥ २४८ ॥ उक्तं च—  
“संग्रामसागरकरीन्द्रभुजंगसिंहदुर्व्याधिवाहुरिपुबंधनसंभवानि । चौरग्रहभ्रमनिशाकरशाकिनीनां, नश्यंति  
पंचपरमेष्ठिपदैर्भयानि ॥२४९॥” तं सोउ झडित्ति तओ अहह अकजं सुसावयविणासो । इय जंपिरीइ पियदंसणाए उग्वा-  
डिया दिद्धी ॥२५०॥ ददृत्तं सपियं जंपइ पल्लिवइं भाय ! सच्चसंधोऽसि । जेणेस बंधुदत्तो तुह भइणिवइं इहं पत्तो ॥२५१॥ पडिओ  
पाएसु तओ पल्लिवइं बंधुदत्तमिय भणइ । अन्नाणकयवराहं सहमु समाइमसु तं सामि ! ॥२५२॥ किमिणंति बंधुदत्तेण पुच्छिओ  
भणइ चंदसेणोवि । उद्धाइयपजंतं तं वुचंतं समग्गंपि ॥२५३॥ अह भणइ बंधुदत्तो पल्लिवइं भइ ! जुजइ न हिंसा । सा सयलदुह-  
निहाणं जेषुत्ता सब्बसत्थेसु ॥२५४॥ भणितं च महाभारते आनुशासनिकपर्वणि, बृहस्पतिः—अहिंसकानि भूतानि, दंडे-  
नैव निहंति यः । आत्मनः सुखमन्विच्छन्, न स प्रेत्य सुखी भवेत् ॥२५५॥ भीष्मः—पशवो ये तु हिंसंति, गृद्धा द्रव्येषु मानवाः ।  
मृतास्ते नरकं यान्ति, नृशंसाः पापकारिणः ॥२५६॥ व्यासः शांतिपर्वणि—यावंति रोमकूपानि, पशुगात्रेषु भारत ! । ताव-  
द्वर्षसहस्राणि, पच्यंते पशुघातकाः ॥२५७॥ भीष्मः—पातको बध्यते नित्यं, तथा बध्येत बंधिकः । आक्रोष्टा शप्यते राजन् !, देष्टा

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३४॥

श्रीदे०  
वेत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२३५॥

बन्धुदत्त-  
कथा

द्रेष्यमवाप्नुयात् ॥२५८॥ येन येन शरीरेण, यद्यत् कर्म करोति यः । तेन तेन शरीरेण, तत्तत्फलमथाश्रुते ॥२५९॥ अपिच-  
प्रातारं नाधिगच्छन्ति, रौद्राः प्राणिविहिंसकाः । उद्वेजनीया भूतानां, यथा व्यालमृगास्तथा ॥२६०॥ आत्मोपमस्तु भूतेषु, यो वै  
भवति पुरुषः । अस्तदंडो जितक्रोधः, स प्रेत्य सुखमेधते ॥२६१॥ रूपमत्यंगतामायुर्बुद्धिं सख्यं बलं स्मृतिम् । प्राप्तुकामैर्नरैर्हिंसा  
वर्जितव्या कृपात्मभिः ॥ २६२ ॥ नहि प्राणैः प्रियतरं, लोके किंचन विद्यते । तस्माद्ध्येयं नरः कुर्याद्, यथाऽऽत्मनि तथा परे  
॥२६३॥ तथाहि ग्रन्थान्तरे दयास्वरूपमुक्तं-आत्मदया कथं स्याद् ? उच्यते, यः स्वकीयमात्मानं जानाति, निरावरणस्वरूपोऽय-  
मात्मेत्यात्मस्वरूपं जानन् मा ममात्मानं कर्मावृणोत्विति जानन् कर्मबन्धहेतुतो यो जीवो यतनां करोति सा स्वदयेति, या परप्राण-  
रक्षा सा परदया, यस्य स्वदयाऽस्ति तस्य नियता परदया, परदयायां तु स्वदया भाज्येति । मृत्युतो भयमस्तीति, विदुषां भूतिमि-  
च्छताम् । किं पुनर्हन्यमानानां, चेतसा जीवितार्थिनां ॥२६४॥ व्यासः-कंटकेनापि विद्वस्य, महती वेदना भवेत् । चक्रकुंतासि-  
शुष्याद्यैर्भिद्यमानस्य किं पुनः ? ॥ २६५ ॥ दीयते मार्यमाणस्य, कोटिं जीवितमेव वा । धनकोटिं न गृह्णीयात्, सर्वो जीवितु-  
मिच्छति ॥ २६६ ॥ यतः-अमेध्यमध्ये कीटस्य, सुरेन्द्रस्य सुरालये । समाना जीविताकांक्षा, तुल्यं मृत्युभयं द्वयोः ॥ २६७ ॥  
श्रीधर्मः-उदेतदुचमं धर्मं, अहिंसालक्षणं शुभम् । ये चरन्ति महात्मानो, नाकष्टेषु वसन्ति ते ॥ २६८ ॥ यतः-धर्मस्यायतनं श्रेष्ठं,  
स्वर्गस्य च सुखस्य च । अहिंसा परमो धर्मः, तथाऽहिंसा परं तपः ॥२६९॥ अहिंसस्य तपोऽक्षय्यमहिंसो जायते सदा । अहिंसः  
सर्वभूतानां, यथा माता यथा पिता । २७०॥ किंच-अहिंसालक्षणो धर्मः, इति धर्मविदो विदुः । यदहिंसं भवेत्कर्म, तत् कुर्या-  
दान्मवाप्स्यः ॥२७१॥ सर्वयज्ञेषु वा दानं, सर्ववेदेषु वा श्रुतं । सर्वदानफलं वापि, नैतत् तुल्यमहिंसया ॥ २७२ ॥ तद् देवयाण

॥२३५॥

दि०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२३६॥

पूयानिमित्तमपि नेव जुञ्जए हिंसा । कुगइगमत्ता तेसिं उवभोगाभावओ य तहा ॥२७३॥ यदाह व्यासः—देवानामर्थतःकृत्वा,  
घोरं प्राणवधं नराः । ये भक्षयन्ति मांसं च, ते ब्रजंत्यधमां गतिम् ॥ २७४ ॥ शुक्रशोणितसंभूतममेध्यं मांसमुध्यते । यस्माद-  
मेध्यसंभूतं, तस्मात् शिष्टैर्विवर्जितम् ॥ २७५ ॥ अमेध्यत्वादभक्ष्यत्वान्, मानुषैरपि वर्जितम् । दिव्योपभोगभोगित्वान्, मांसं  
देवा न भुंजते ॥२७६॥ भीष्मः—स्वाहासुधाऽमृतभुजो, देवाः सत्यार्जवप्रियाः । क्रव्यादान् राक्षसान् विद्धि, जिह्वाऽनृतपराय-  
णान् ॥२७७॥ किंच—नैतान् व्यालमृगा घ्नन्ति, न पिशाचा न राक्षसाः। भुञ्चन्ति भयकालेषु, मोचयन्ति च ये परान् ॥२७८॥ न भयं  
विद्यते जातु, नरस्येह दयावतः। दयावतामिमे लोकाः, परे चापि तपस्विनाम् ॥२७९॥ अभयं सर्वभूतेभ्यो, यो ददाति दयापरः।  
अभयं तस्य भूतानि, ददतीत्यनुशुश्रुमः॥२८०॥ कृतं च स्वलितं चापि, पतितं क्लिष्टमाहतम् । सर्वभूतानि रक्षन्ति, समेषु विपमेषु  
च ॥२८१॥ अवयरिऊणं पत्ते अह देवी भणइ चंडसेणाऽवि । अऊण्णभिई पूया मह कुसुमाईहिं कायवा ॥२८२॥ तं सोउं संजाया  
भइगभावा खणेण बहुमिह्ला । पडिवज्जइ पल्लिवई हिंसामंमाइया विरई ॥२८३॥ तं पुच्छिय मोयावइ बंदिग्गहिण नरे तओ बंधू ।  
पियदंसणाएँ पुत्तो समप्पिओ बंधुदत्तस्म ॥२८४॥ तेणवि धणदत्तस्स उ भणिया सा माउलो मम इमोत्ति । कयनीरंगी पणमइ दूरत्था  
मावि तो ससुरं ॥२८५॥ दत्तासीसो साइइ सोऽवि जहा नंदणस्म अभिहाणं । जुञ्जइ काउं अजेव ते तओ तं तह कुणंति ॥२८६॥  
जीवियदाणाओ बंधणण जेणं अपेण आणंदो । विहिओ तो होउ इमो अमह सुओ बंधवाणंदो ॥२८७॥ तो सगिहे भुंजाविय  
बंधुस्सऽप्पियं धणं तथा हरियं । पल्लिवई तह दोयइ चामरगयदंतमुत्ताइं ॥२८८॥ बंधू तओ विमज्जइ चंडं बंधुव उचियदाणेणं ।  
कयकिच्चं धणदत्तं काउं पेसइ तह अवंति ॥२८९॥ मत्थजुओ पुत्तकलत्तसंजुओ चंदसेणसहिओ य । पत्तो य बंधुदत्तो नागपुरि-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२३७॥

तयण नियनयरिं ॥२९०॥ अहिगम्ग हरिसिएहिं सयणेहिं निवेण सुबहुमाणेणं । कुंजरमारोवित्ता पवेसिओ नयरिमज्झंमि ॥२९१॥  
सयणाण गुरुपमोयं दिंतो दाणं व मग्गणगणाणं । सगिहंमि बंधुदत्तो संपत्तो गुरुविभूईए ॥२९२॥ भुत्तुत्तरंमि बंधू बंधुणं कहिय  
नियययुत्तंतं । साहइ अरिहंताई मुत्तुमसारमिह सवंपि ॥२९३॥ भणियं च—मुत्तूण जिणं मुत्तूण जिणमयं जिणमयट्टिए  
मुत्तुं । संसारकत्तवारं चित्तिज्जंतं जगं सेसं ॥२९४॥ तं सोऊणं जाओ तो जिणसासणरओ बहू लोओ । सक्कारिय पल्लिवई  
विसज्जिओ बंधुदत्तेण ॥२९५॥ संवच्छराई वारस समइकंताई वंधुदत्तस्स । तत्थ ठियस्स सुहेणं अहागए सरयसमयंमि ॥ २९६ ॥  
सइ अरुयअरयमलसेयरहिओ वररूवगंधसुइदेहो । चम्ममयचक्खुअदिस्समाणआहारनीहारो ॥२९७॥ गोकखीरधवलनिच्चिस्समं-  
सरुद्धिरो सुगंधनिस्सासो । सहजाइसयसमेओ समोसदो तत्थ पासजिणो ॥२९८॥ गंतूण महिड्डीए सहिओ पियदंसणाए बंधूवि ।  
वंदित्तु पासनाहं एवं थोउं समाढत्तो ॥२९९॥ “जह तुह दंसणरहिओ कायट्टिइभीसणे भवारण्णे । भमिओ भवभयभंजण ! जिणिंद  
तह विन्नविस्सामि ॥३००॥ अब्बहारियमज्झे भमिऊण अणंतपुग्गलपरट्टे । कहवि ववहाररासिं संपत्तो नाह ! तत्थऽविय ॥३०१॥  
उक्कोसं तिरियगई असन्निएगिंदिवणनपुंसेसु । भमिओ आवलियअसंखभागसमपुग्गलपरट्टा ॥३०२॥ सामन्नं सुहुमत्ते उस्सप्पिणीउ  
असंखलोगसमा । भमिओ तह सुहुमेगिंदिपुढविजलजलणपवणवणे ॥३०३॥ ओहेण वायरत्ते तह वायरवणस्सईसु ताउ पुण ।  
अंगुलअसंखभागे दोसइढ परिट्टयनिगोए ॥ ३०४ ॥ वायरपुढविजलजलणपवणपत्तेयवणनिगोएसुं । सत्तरिकोडाकोडी अयरारणं  
नाह ! भमिओऽहं ॥३०५॥ संखिज्जवाससहसे पित्तिचउरिंदीसु ओहओ य तहा । पज्जत्तवायरेंगिंदिभूजलानिलपरित्तेसु ॥ ३०६ ॥  
वायरपज्जऽग्गिवित्तिचउरिंदिसु संखदिणा वासदिणमासा । संखिज्जवासअहिया तसेसु दो सागरसहस्सा ॥ ३०७ ॥ अयरसहस्सं

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३७॥



श्रीदे०  
श्री  
भर्म० संया  
चारिणी  
॥२३८॥

अहियं पंचिदिमु इगभवो उ मुरनरा । मन्निमु तह पुरिसेसुं अयरसयपुहुत्तमभहियं ॥३०८॥ सण्णितिरिनरेसु भवद्वगंति पल्लमग  
पुषकोडिमियं । दमहिय पलियमयं थीमृ पुषकोडीपुहुत्तजुयं ॥३०९॥ अत्थि नपुंसे समओ जहन्तु अंतोमुहुत्त सेसेसु ॥ अपजेसु-  
तोसंपिय पजमुहुमे धूलज्जंतेवि ॥३१०॥ इय कायठिई भमिओ सामिय ! तुह दंसणं विणा चहुसो । दिट्ठोऽसि संपयं ता अका-  
यपयसंपयं देसु ॥३११॥ मुरमरिजलपसरियमधम्मकिचिभरणं जिणं थुणिय एवं । उचियट्ठानिसन्नो वंधू इय सुणइ धम्मकहं  
॥३१२॥ "इह चउगइभगहणे कहंपि लद्धूण माणुसं जम्मं । जे नहु कुणंति धम्मं ते नूणं अत्तणो अहिया ॥ ३१३ ॥ जेणं  
करयलपरिकलियसलिलविंदुव्व परिगलइ आउं । दारंति दारुणा दारुयं व रोगा पुणो देहं ॥३१४॥ बहुविहकिलेसपत्तावि चोर-  
जलजलणनिगइपमुहेहिं । संपासंपायचला रणेण खलु नासए लच्छी ॥३१५॥ पियमायपुत्तसुकलत्तमित्तसयणाइइट्ठसंजोगो । खण-  
दिट्ठनट्ठरूओ जलनिहिकल्लोलसंकामो ॥३१६॥ पडुपणुप्पाडियअकतूलतरलं सयावि तारुणं । चंपयकुसुमुकरंगभंगुरं इत्थ विमय-  
मुहं ॥३१७॥ ता मामयसुहहेउंमि मयलभप्रदुक्खलक्खदलणसहे । भविया ! मुत्तु पमायं सद्धम्मे आयरं कुणइ ॥३१८॥" पडुमह  
पुच्छइ गंधू परिणियमित्ता मया पिया छ उ मे । कम्मेण केण भयवं ! वंदिदुहं पियवियोगं च ॥३१९॥ भणइ पडु इह भरहे भदासि  
सिहरसेण सवरवई । विज्झगिरिसिहरमासी अइहूरो विसयलोलो य ॥ ३२० ॥ भजा तस्स स्तिरिमई तीएँ समं सो उ गिरि-  
निउंजेसु । विलसेई हिंमंतो चट्ठप्यारं विविहजीवे ॥३२१॥ हरिणवरादाईणं जूहे सव्वत्तओ विओयंतो । तह चक्रयायतित्तिरमपूर-  
पमुहे मउणिसंघे ॥३२२॥ सत्थवभट्ठो तेणं अन्नदिणे साणुकंपहियएण । मुणिगच्छो अडवीए भमिरो तत्थागओ दिट्ठो ॥३२३॥  
नमिउं मुणिणो पुट्ठा किं इय भे भमइ ? तेऽवि पचाहु । पडुभट्ठा मो तो तेण दंसिओ तेसि सरलपहो ॥३२४॥ मुणिणोऽवि तस्स

बन्धुदत्त-  
कथा

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२३९॥

सपियस्स धम्ममकहिंसु जीवदयमूलं । तह पंचनमुकारं विहिफलजुत्तं इह कहिंसु ॥३२५॥ अत्र च पूर्वाचार्यप्रणीतगाथाः—“अरि-  
हंताई पंचवि पयाई वीयाई परममंताणं । एयाणुवरिं चूला एसो पंचत्ति एमाई ॥३२६॥ तिचीसक्खरमाणा इमा य तस्सत्तिपय-  
डणपहाणा । एवं इमो समप्पइ फुडमक्खरअट्टसट्ठीए ॥ ३२७ ॥ एवं पठिओ एसो विहीइ लक्खेण सेयसुरहीणं । कुसुमाणं पुण  
जविओ भविण्ण तदेगचित्तेण ॥३२८॥ वियरइ भुवणंभहियं तित्थंकरचक्किगणहरपयंपि । जह तह सुलहाणं पुण का वत्ता सेस-  
वत्थुणं ॥ ३२९ ॥ अन्नं च इमाउच्चिय न होइ मणुओ कयाइ संसारे । दासो पेसो दुहिओ नीओ विंगलिदिओ चेव ॥ ३३० ॥  
अविय-अंतोऽरिहंतविन्नास दाहिणावचसिद्धमाईणं । झाणं च इत्थ किंच निधं परमिट्ठिमुदाए ॥३३१॥ करआवत्ते जो पंचमंगलं  
साहुपडिमसंखाए । नववारा आवत्तइ छलंति नो तं पिसायाई ॥३३२॥” किंच-पक्खस्सेगम्मि दिणे भइ! परिचत्तपावकम्मेण । रह-  
सिट्ठिण्ण तुमए सरियव्वो एस नवकारो ॥३३३॥ अवयारकारिणोऽविहु तया तुमं मा मणंपि कुप्पिजा । इय तुह कुणओ धम्मो  
होही मणवंछियाई तहा ॥३३४॥ भणितं च-ताव न जायइ चित्तेण चित्तियं पत्थियं च वायाए । काएण समाढत्तं जाव न सरिओ  
नमुकारो ॥ ३३५ ॥ ओमंति भणिय नमिऊण मुणिररे सो गओ निए ठाणे । महुमज्जपाणविरओ मिगयावसणाओ विणियत्तो  
॥३३६॥ नवकारसुमरणपरो कयावि सो सीहदंसणाउ मिसं । भीयं संठविय पियं गिण्हइ कोदंडमुदंडं ॥३३७॥ सुमराविओ पियाए  
नियमं सो पुण विनिबलो जाओ । हरिणा असिया दोविहु जाया देवा सुहंममि ॥ ३३८ ॥ जओ-“जेणेस नमुकारो पत्तो  
पुण्णाणुबंधिपुण्णेण । नारयतिरियगईओ तस्सावस्सं निरुद्धाओ ॥३३९॥ अपिच-पंचनमुकारसमा अंते वचंति  
जस्स दस पाणा । सो जइ न जाइ मुक्खं अवस्सममरत्तणं लहइ ॥३४०॥” चविउं अवरविदेहे चक्कपुरनिवस्स कुरु-

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२३९॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२४०॥

मयंकस्म । सवरमयंकुत्तिसुओ जाओ सो सवरवइजीरो ॥ ३४१ ॥ तत्तो इयरीवि मुया तत्थ सुभूसणनिवस्स संजाया ।  
तणया वसंतसेणा सवरमयंकेण परिणीया ॥ ३४२ ॥ जणयंमि गहियतावसवयंमि सो चेव नरवई जाओ । तीइ दइयाइ सद्धि  
ललंतओ चिट्ठइ सुहेण ॥ ३४३ ॥ अन्नदिणे पल्लिइईभवुग्गवं तिरिविजोयणं कम्मं । उदएण समणुपत्तं सवरमयंकस्स नरवइणो  
॥३४४॥ तो तच्चिजयविभूमणजयपुरनाहेण चद्धणनिवेण । निक्कारणकुद्वेणं भणाविओ सो नियनरेहिं ॥३४५॥ मह सासणं पडि-  
च्छसु तहा पयच्छसु वसंतसेणं मे । तो भुंजसु निअरज्जं अन्नह जुज्जेसु मह सद्धि ॥३४६॥ तो अमरिसेण नयरा निग्गओ गयतिओ  
पलजुओ सो । असउणनिरिक्खणाउ वारिजंतोवि लोएण ॥३४७॥ तइया चद्धणराया भग्गो समरंगणाओ लहु नट्टो । तो तत्तो  
नामनिवो तेण समं जुज्झिउं लग्गो ॥३४८॥ सवरमियंको नरवइ तत्तनिवेणं खणेण खीणवलो । निहणं गमिओ पत्तो छट्ठीए नर-  
पपुट्ठीए ॥३४९॥ काउं जलणपवेसं वसंतसेणावि पियपिरहदुहिया । मरिउं तमपुट्ठीए उववन्ना नारयत्तेण ॥३५०॥ उव्वट्ठित्ता  
तत्तो मालिग्गागे सुनंदसिद्धिसुओ । सो सवरमियंकजिओ संजाओ पुन्नभदुत्ति ॥ ३५१ ॥ जाया वसंतसेणावि जसवई नाम  
तत्थ इन्भकुले । सा दट्ठु जायरागेण पुन्नभदेण परिणीया ॥३५२॥ अइपिम्मपरिगएहिं हम्मतले तेहिं कीलमाणेहिं । अन्नदिणे  
विहरंतो समणीसंघाडओ दिट्ठो ॥३५३॥ पडिलाहिय सद्धाए पुट्ठो धम्मं स तेहिं तेषुत्तं । भो गोयरचरियाए धम्मो कहिउं न कप्पेइ  
॥३५४॥ यदागमः—“गोयरग्गपविट्ठो उ, न निसीइज्ज कत्थई । कहं च न पबंधेजा, चिट्ठित्ताण व संजए ॥३५५॥” आणंदसिद्धि-  
गेहे नरं अग्गहि चालचंदुत्ति । गुरुणी सा धम्ममुत्तस्सयंमि पत्ताण मे कहिही ॥३५६॥ अविप--धन्ना नियंति एयं धन्ना वंदंति  
परममचीए । धन्ना इमीइ वयणं निसुणंति कुणंति सत्तीए ॥३५७॥ अच्चन्भुयं च जीए सुत्तिसाले माणसे मनालीए । विमलदल-

वन्धुदत्त-  
कथा

॥२४०॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥२४१॥

कलियंमिवि न रायहंसो पयं कुण्ड ॥३५८॥ इय भणिय निग्गयाओ समणीओ तग्गिहाउ तेऽवि तओ । मज्झण्हे गंतुमुवस्सयंमि  
वंदंति तं गुरुणि ॥३५९॥ तप्पासे गिहिधम्मं सोउं सम्मत्तमूलमवि चित्तुं । सट्ठाणे संपत्ता पालंति तयं निग्गयारं ॥३६०॥ ता मरिय  
दोऽवि जाया पंचमकप्पे सुरा तओ चण्डिं । सो सिहरसेणजीओ जाओ तं बंधुदत्त इहं ॥३६१॥ सो पुण सिरिमइजीवो पंचमकप्पाउ च-  
विय तुज्झ पिया । जिणदत्तसिद्धिधूया जाया पियदंसणा एसा ॥३६२॥ तो बंधुदत्त ! तइया तुमए पल्लीवइस्स जम्मंमि । जं तिरिय-  
विओयाइं कम्मं अइदारुणं विहियं ॥३६३॥ तक्कम्मसेसएणं जाओ इह तुज्झ छण्ह भजाणं । घाओ तह विरहाई पत्तं तुब्भेहिं गुरु  
दुक्खं ॥ ३६४॥ सोऊण बंधुदत्तो एयं पियदंसणाइ संजुत्तो । संजायजाइमरणो पत्तो संवेगवेरम्मं ॥ ३६५ ॥ विसमिव विसए  
लच्छि अलच्छिमिअ बंधणं अ बंधुजणं । संसारं चारंपिव पासं अ विमुत्तु गिहिवासं ॥ ३६६ ॥ वित्तं सुपत्तपत्तं काउं पियदंसणाइ  
संजुत्तो । सिरिपासनाहपासंमि बंधुदत्तो गहेइ वयं ॥ ३६७ ॥ दुन्निरि निक्खणचरणा पंचनमुक्कारसुमरणप्पवणा । ते जाया सहसारे  
महिद्धिअमरा सहसारे ॥ ३६८ ॥ तत्तो चुया विदेहे दुन्निवि भुंजित्तु चक्खिवरभोए । चरिऊण चारुचरणं लहिंहिंति सिवं विगय-  
कम्मा ॥३६९॥ इत्यचैत्य गतकर्मकश्मलं, बंधुदत्तचरितं सुनिर्मलम् । हे जनाः ! सास्त पंचमंगलं, सर्वदाऽपि कृतमर्धमंगलम् ॥३७०॥  
इति बंधुदत्तकथा ॥ इति व्याख्यातः पंचपरमेष्ठिनमस्कारः, सांप्रतं ईर्यापथिकी व्याख्यायते, पाठक्रमायातत्वात्, ईर्यापथिकी  
प्रतिक्रमणपुरस्सरं च सकलस्यापि चैत्यवंदनादेर्धर्मानुष्ठानस्योक्तत्वात्, इत्थमेव चित्तोपयोगेनानुष्ठानस्य साफल्यभावात्, अन्यथा  
प्रायश्चित्तैकाग्रताया अप्यभावात् सूत्रश्रामाण्याच्च, तथा च महानिशीथसूत्रं—“से भयवं ! एवं जहुत्तविणओवहाणेणं पंचमंगल-  
सुयक्खंधमहिज्जित्ताणं पुद्धानुपुद्दीए सरवंजणमत्ताविंदुपयक्खरविसुद्धं थिरपरिचियं काऊण महया पबंधेणं सुत्तत्थं च विण्णाय

बन्धुदत्त-  
कथा

॥२४१॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
भर्म० संपा  
वाग्विधो  
॥२४२॥

तत्रो य णं किमहिज्जिजा ?, गोयमा ! इरियावहिया, से भयवं केणट्टेणं एवं चुच्चइ जहा णं पंचमंगलमहासुयक्खंधं अहिज्जिजाणं  
पुणो इरियावहियं अहीण ? , गोयमा ! जेणं एस से णं जया गमणागमणाइपरिणामपरिणए अणेगजीवपाणभूतसत्ताणं च अणुव-  
उत्तपमत्ते संघट्टणं अवदानणं किलामणं काऊण अणालोइयअपडिक्कंते चेव असेसकम्मक्खयट्ठाणं किंचि चिइवंदणसज्जायझाणाइ-  
एसु अभिग्गिज्जा तथा से एग्गच्चित्तसमाही हविज्जा न वा, जया उण गमणागमणाइअणेगअत्तवावारपरिणामामत्तचित्तयाए  
केई पाणी तमेव भावंतरमच्छट्टिय अट्टुदुहट्टुज्जवसिए य कंचि कालक्खणं विरत्तिजा ताहे तं तस्म क्खेणं विसंवड्जा, जया पुण  
रिंचिवि अघ्राणमोहपमायदोसेणं महसा एग्गिदियार्इणं संघट्टणं परितावणं वा कयं हविज्जा तथा य पच्छा हा हा दुट्टु कयं कम्मं  
अग्गेहिं पणरागदोसमोहमिच्छत्तअन्नाणंधेहिं अदिट्टपरलोगपचवाएहिं कूरकम्मनिग्घिणेहिंति परमसंवेगमावण्णे सुपरिफुडं आलो-  
इत्ताणं निंदित्ताणं गरिहित्ताणं पायच्छिप्तमणुचरित्ताणं नीसल्ले अणाउलचित्ते असुहकम्मक्खयट्ठा किंचि आयहियं चिइवंदणाइ  
अणुट्टिजा तथा तयट्टे चेव उवउत्ते से भविजा, जया णं से तयट्टोवउत्ते भविजा तथा तस्स णं परमेग्गच्चित्तममाही हविजा,  
तथा चेव गणजगजीवपाणभूयसत्ताणं अदिट्टसंपत्ती हविजा, ता गोयमा ! णं अप्पडिक्कंताए इरियावहियाए न कप्पड चेव  
किंचि चिइवंदणमज्जायाइयं काउं फलामायममिक्खगाणं, एणं अट्टेणं गोयमा ! एवं चुच्चइ जहा णं गोयमा ! ससुत्थत्तोभयं  
पंचमंगलं धिग्परिचियं काऊणं तत्रो इरियावहियं अज्झीएज्ज”त्ति, भाए्ये त्वेवं-“पुप्फामिमपूयाओ काउं युइपूयकरणहेऊओ ।  
विहिणा इरियावहियं पडिक्कमिय पठंति पणिवार्यां॥१॥”ति, तथा “जेणिह इरियावहियावण्णाई तेण तीइ पुवं तु । चिइवंदणसज्जायाइ  
कीर्इ जेण भणियमिणं ॥१॥ किंच-“अप्पडिक्कंताए इरियावहियाएण कप्पड काउं चिइवंदणसज्जायाइ फलासायामिक्खीणं”ति,

पूर्वमीर्या-  
पथिकी

॥२४२॥

मूलावश्यकेऽप्युक्त-इरियावहिया पडिकमिअइ, तओ चेइयाइं वंदिजति," एवं च सिद्धान्ताद्युक्तत्वादीर्यापधिकीप्रतिक्रमणपृ-  
विकैर चैत्यवंदनेत्यायात, वृद्धाः पुनरेवमाहु.—उत्कृष्टा चैत्यवंदना ईर्यापधिकीप्रतिक्रमणपुरस्सरैव कार्येति, ईर्यापधिकी च क्षमा-  
श्रवणपूर्विका प्रतिक्रम्यते इति तदक्षरसंग्याप्रतिपादनसमर्थकं गाथापादमाह—

पणिवाय अक्कराई अट्टावीसं

इह प्रणिपातशब्दन क्षमाश्रमणमुच्यते, प्रायस्तत्पूर्वकत्वात् तस्याः, तत्र प्रणिपाते-क्षमाश्रमणे अष्टाविंशतिरक्षराणि, तथा  
चैतत्सूत्रम्—'इच्छामि त्वमामभणो! वंदिउ जावणिज्जाण निसीहियाण मत्थण्ण वंदामि' इच्छामि, अनेन गुवादेशस-  
तण्णतायुचकस्वामिप्रायनिवेदनगर्भेण स्वच्छंदत्व परिहृतं, यतः—“किञ्चाकिञ्चं गुरुणो वियति विणयपडिवत्तिहेउ च । ऊमासाई  
मुत्तु तयणापुच्छाइ पट्टिसिद्धं॥१॥”ति, किञ्च-स्वच्छंदेन क्रियमाण शोभनमपि भवाय भवति, भणित च—“जिणाणाए पुणंताण,  
नूण निवाणकारण । सुदरपि मवुद्धीए, मव्व भगनिबंधणं॥१॥”ति, परोपरोधादिना वंदनाकरण च, परोपरोधादिना च क्रियमाणस्य  
द्रव्यवदनत्वात् इति, गुरोः स्वाभिप्राय निवेद्य तमेवामंत्रयते-हे 'क्षमाश्रमण!' क्षमोपलक्षितदशविधश्रमणप्रधान नाधो!, उक्तं  
च—स्वती महव अज्जव मुत्ती तव सजमे य गोद्धवे । सच्च मोय आकिञ्चण च बंध च जडधम्मो ॥ १ ॥” अथवा क्षमाया  
एव असे-ग्रहणे 'अपी असी गत्यादानयोश्चे'ति वचनात् मनो यस्य स क्षमासमनाः तस्यामन्त्रणं हे क्षमासमन, यद्वा क्षमयैव नत्व-  
शक्त्या श्रमनः-उपशमी स क्षमाश्रमनः, एवमेव यतिधर्मोपलंभान्, 'क्षमा मूलं तपस्विना'मिति वचनात्, एतावता यतिधर्म-  
शून्यानां शाक्यादिश्रमणानामालापनाद्यपि निषेधयति, आह च—“आलावो संलावो वीसंभो संथवो पसगो य । हीणायारेहिं ममं

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२४५॥

गुणं, कथमित्याह-नैपेधिक्या-तन्वा, उक्तं च चूणा-निसीहित्ति आलओ, सो ससरीरस्स वसही थंडिं च, सरीरं तु जीवस्म”त्ति,  
कायतः प्रणामेन, दुष्करणेत्यर्थः, न तु वचोमात्रेण, किंविशिष्टया ? यद्वा यापनीयया उक्तार्थया तन्वेति शेषः, किंविशिष्टया ?-  
नैपेधिक्या-चामेयरपिंडीजाणुभूमियतलभूपाणिलेहणानिसेहियपावो इति वचनात् निपिद्धपापकर्मणा तन्वा इत्यर्थः, एतेनाविधिना  
वंदनकरणनिषेधः, उक्तमावश्यकचूर्णौ-“जम्हा अपच्छंदेणं अविसए अरत्तस्स अविहीए करणं न वट्टइ”त्ति, तदयं समुदायार्थः-  
हे क्षमाश्रमण साधो ! यतस्त्वं यथोक्तगुणः अहं चेदानीं शक्तियुक्ततनुः अतस्त्वां निपिद्धपापकर्मां सन् वंदितुमिच्छामि, एवं हि संजात-  
सामग्याः साफल्यात्, यतः-“ओयह दडुकलेवरह, जं वहिहइ तं सारु । जइ उट्टुभहि नो कुहइ, अह जुज्जइ तो सारु ॥१॥” तथा-  
“सुतवस्सियाण पूया पणामे”त्यादि गाथाद्वयं, एवं मनोऽभिप्रायं निवेद्याप्रतिषेधादिनाऽनुमते वाचा मस्तकेन वंदे इति वचनेन  
उचरन् कायेन पंचांगप्रणिपतितः सत्यापयति, सोमसूरवत्, तत्कथा चैवम्—

बहुरयणे रयणउरे आसी कुरुदत्तनामसिद्धिस्स । दो सोमसूरनामा पुत्ता भत्ता जमलजाया ॥१॥ दविणज्जणत्थमंमि  
वासरे ते गहेवि बहुपणियं । चलिया पुवाहुत्तं पत्ता एगाइ अडवीए ॥ २ ॥ तत्थ य खमाइनिलयं मद्दवदंभोलिदलियमाणगिरिं ।  
अज्जवजवजलतुल्लं दुहावि गुत्तीइ कयचित्तं ॥ ३ ॥ दित्तवतेयतरणिं संजमपालणपहाणसंकप्पं । सच्चस्स केलिभवणं सयावि  
सोएण कयसोहं ॥४॥ निक्किचणवणमेहं अजिंभवंभवणण रायंतं । कयकाउस्सग्गमेगं चारणसमणं नियंति इमे ॥ ५ ॥ तं दट्टु  
पहिट्टमणा महिमंडलललियलुलियपंचंगा । काउं पयाहिणतिगं वंदंति नमंति भत्तीए ॥६॥ जंपंति वयं धन्ना जं पडु ! तुह पणमियं  
चलणजुपलं । दुल्लहवल्लहवंछियपयत्थसंपत्तिदारं व ॥ ७ ॥ तुह गुणिपडु पयंपंकयपणामवसविष्फुरंतपुन्नभरा । न हु मन्नेमो

लघुप्रणि-  
पांतः

॥२४५॥

धीदे०  
वेत्य० धी-  
धर्म० संया-  
वाग्विधौ  
॥२४६॥

गुप्तं वयं पि संपद वयं किंपि ॥ ८ ॥ एतं भुणिय मुनिन्दं अडवीड इओ तओ परिभमंता । तरुनिग्गयपारोहेण निच्छिउं कत्थवि  
निहाणं ॥९॥ ते जायलोहखोदा तफालं गलियमयलपडिवंधा । असिधेणुकरा रुडनिविडभिउडिणो मिडिउमाढत्ता ॥ १० ॥ अह  
नाणेण विपाणिय तचरियं [ग्रन्थाग्रम्-५०००] ते पयंपिया मुणिणा । किंनु न मुएह अज्जवि भो वइरं पुबभवपभवं ? ॥ ११ ॥  
हि भो अतुच्छमच्छरमुच्छागिच्छोलिच्छलियसुहभावा । काउं वइरं नणु पावपुंजमज्जेह भूओऽवि ॥१२॥ तं सोउं मुणिपणमणपभा-  
यओ सुःयनिरिउदुरियभरा । ते गयवेरा उज्झियदुरिया नमिउण मुणिचरणे ॥१३॥ पुच्छंति कइणु पइणे एम पिरोहो पुरावि ?  
तो म गुणी । पभणइ कोसंवीण विजयधणा उंधुणो आसि ॥१४॥ धणियं धणज्जणमणा कयावि ते रोहणायले पत्ता । घणखा-  
णित्थोणियणणेण रहवि लडिउ रयणजायं ॥ १५ ॥ तं काउ गंठिवद्ध चलिया नियनयरसंमुहं कमसो । पत्ता इह अडवीए उ-  
च्छलिओ मिट्टहलगोलो ॥१६॥ तन्मयभरतरलच्छा निहुयं निहणंति रयणगंठि जा । एयस्म तरुस्स तले ता पत्ता भिच्छसंधाया ॥१७॥  
नम्मंता नेहि इमे धरिउं पट्टीवइस्स उवणीया । पक्खित्ता गुत्तीए दविणं किंपि इ अमन्नंता ॥१८॥ विणिवारियञ्जपाणा सेहि-  
अंता पइं मरेउण । इत्थेय य निदिटाणे मुच्छाए मूसगा जाया ॥ १९ ॥ अन्नुन्नं मिडिय मया तत्थ धणो तामलिच्चिनयरीए ।  
जाओ जयसत्थाहो विइओ पुण इत्थ चेव हरी ॥ २० ॥ कइयावि दिव्वमओ मत्थेणं जंतओ हओ इहयं । हरिणा हणिओ  
जाओ इह नियदग्गामि कुळउत्तो ॥ २१ ॥ सीढोऽवि हओ मरहेण अहह इह चेव वानरो जाओ । अह कुलपुत्तो पत्तो कइया  
इत्थेय दारुए ॥२२॥ तेणं कविणा मरनिसियनहरनियरेण मारिओ एसो । इमिणावि सियपरमुणा हओ कई तो मया दोवि ॥२३॥  
जाया वराहहरिणा इहेय कइयावि म्यरेण मिगो । हणिओ इत्थ चरंतो इयरो पंचाणणेण पृणो ॥२४॥ वृद्धागमन्निवेसे जाया ते

ईयापथिकी



धीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२४७॥

दोऽवि रोरदियपुत्ता । वित्तिनिमित्तं सत्थेण सह इहं अन्नया पत्ता ॥ २५ ॥ चिरसंनिद्धियं न निहिं मुणंति मणयंपि तहवि ताण  
मणो । अन्नन्नवहपरिणयं जायं खित्ताणुभावेण ॥२६॥ अन्नन्नदिण्णनिरविकखतिकखअसिबुत्तिघायगा जीया । किंपि सुहमाणसा ते  
भो भद्दा ! इह तुमे जाया ॥२७॥ इय सुणमाणच्चिय जायजाईसरणा रणाउ विणियत्ता । नियकम्मं निंदंता भूमिलियसिरा नमंति  
मुष्णि ॥२८॥ जंपंति कइसु भयवं ! इमाउ पावाउ कइ वयं इण्हि । मुच्चिस्सामो साहेइ साहुसीहो सुणह भद्दा ! ॥२९॥ “अणव-  
रयं मुणिनमणेण सिरिजिणिंदाण पूयकरणेण । कोहाइनिग्गंहेणं पावमिणं भे स्वयं गमिही ॥३०॥” इच्छंति भणिय गिण्हिय तं  
निद्धियं नियधणं गया सपुरे । तेण दविणेण विद्धिणा खिप्पं कारित्ति जिणभवणं ॥ ३१ ॥ ठावंति तत्थ सिरिरिमहपडिममंचंति  
तिसु य संज्ञासु । अक्षरणभवियणसरणे वंदंति सया खमासमणे ॥३२॥ ते सोमसूरनामे सिद्धिसुए सुवहुधम्मवयनिरए । ददुं अच-  
यंतीए पावाए मोमपत्तीए ॥३३॥ दिन्नं विममेएसिं तव्वसओ दोवि मरणमासज्ज । अट्टवसट्टा जाया सिहंढिणो चित्तसेलंमि ॥३४॥  
तत्थ पडिवन्नपडिमं निएवि तं चेव चारणमुणिंदं । जाइमरा हरिसेणं ते गायंता नमंति मुष्णि ॥३५॥ नाणवलेण वियाणिय तच्च-  
रियं साहुणाऽणुकंपाए । संमं विइन्नअणमणनवकारा दोवि मरिऊण ॥३६॥ वेयडुनगे भद्विलपुरपहुसिरिरयणसेहरनिवस्स । जाया  
तणया सुकलाण पारया पत्ततारुत्ता ॥३७॥ उज्जाणे कीलंता कयावि तंचिय णिएवि मुणिपवरं । संभरियपुव्वजाई हरिमवसुछ-  
सियरोमंचा ॥३८॥ कइकइमवि मोयाविय पिउणो तम्मुणिसमीवगहियवया । जाणियजिणागमत्था खमाइगुणरयणरयणनिही ॥३९॥  
शुरुआराहणपवरा कमसो संपत्तसूरिपयविहवा । निट्टवियअट्टकम्मा पत्ता अपुणव्वभवं ठाणं ॥ ४० ॥ इत्यवेत्य गतकर्मकइमलं,  
सोमसूरिचरितं सुमेघसः । मत्क्षमादिगुणराजिराजिनः, सन्मुनीन् प्रणमत प्रयत्नतः ॥ ४१ ॥ इति सोमसूरकथा ॥ इति

ईर्यापथिकी

॥२४७॥

श्रीदे०  
शैल्य०श्री-  
भर्म०संया  
पाविषी  
॥२४८॥

व्याख्यातं धमाश्रमणश्रुतं, तदनंतरं च 'उद्धितु असंभंतो तिविहं पायंतरं पमज्जिता । जिणमुदाठियचलणो इरियावहियं पडिकमइ  
॥१॥ (च. ३३४) तं च ईर्यापथिकया वर्णपदसंपत्प्रतिपादनाय गाथापादत्रयमाह—

तद्वा य इरियाए । नवनउअ अक्खरसयं दुतीस पय संपया अट्ट ॥ ३१ ॥

तथा ईर्यापथिकयां नवनवत्यधिकमक्षराणां शतं ठामि काउस्सग्गमिति यावत्, एतदंतत्त्वादष्टम्याः संपदः, उक्तं च—“अट्टमी  
तस्म उत्तरी”त्यादि ठामि काउस्सग्गमिति पर्यंतमिति, परतः कायोत्सर्गदंडकत्वाच्च, तद्वर्णसहितानि तु त्रीणि शतानि चत्वारिं-  
शदधिकानि भवंति, उक्तं च—“नवनवइमयं इरियावहियाए होइ वन्नपरिमाणं । उस्मग्गवन्नसहिआ ते तिन्नि सया उ चालीसा  
॥१॥” अपरे तु मिच्छामि दुक्कडमिति पर्यवमानं वन्नाण सड्डमयमिति भणंति, तथाऽत्र द्वात्रिंशत् पदानि अष्टौ संपदो—महापदानीति  
॥३१॥ अथ यस्यां संपदि यावन्ति पदानि संति तत्संख्या आद्यपदपरिज्ञाने च शेषपदानि सुखेन ज्ञाप्यते इत्याद्यपदानि च ईर्या-  
पथिकीसंपदां प्रतिपिपादयिपुराह—

दुग१दुग२ इग३ चउ४ इग५ पण६इगार७ छग८ इरियसंपयाइपया ।

इच्छा१ इरि२ गम३ पाणा४ जे मे५ एगिदि६ अभि७ तस्स८ ॥ ३२ ॥

द्वे च द्वे च इत्यादि द्वंद्वः ततो द्विद्वशेकचतुरेकपंचैकादशपद् पदानि यासु ताथ ता ईर्यापथिकीसंपदश्च 'ते लुग्वे'ति पदपथिकी-  
शब्दयोर्लोपः, तामामाद्यपदानि यथा इच्छा च इरिश्च इत्यादेर्द्वंद्वः इत्याद्यक्षरघटना, एवं अन्यत्रापि कार्या, भावार्थस्त्वयं—इच्छेति  
वर्णद्वयप्रचिताद्यपदा इच्छामि१ पडिकमिउ२मिति पदद्वयपरिमाणा प्रथमा संपत्, ईरीत्यक्षरद्वयघटिताद्यपदा ईरियावहियाए १

ईर्यापथिकी

॥२४८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधो  
॥२४९॥

विराहणाए २ इति पदद्वयनिष्पन्ना द्वितीया संपत्, गमेत्याद्याक्षरद्वयलक्षणा गमणागमणे इत्येकपदैव तृतीया संपत्, पाणेतिद्विवर्ण-  
वर्ण्यादिमपदा पाणकमणे १ वीयकमणे २ हरियकमणे ३ ओसाउत्तिंगपणगदगमट्टीमकडासंताणासंकमणे ४ इति पदचतुष्टयनिष्टं-  
किता चतुर्थी संपत्, जे मे इत्याद्यव्यंजनद्वयव्यंजिता जे मे जीरा विराहिया इत्येकपदपरिमिता पंचमी संपत्, एगेंदीतिव्यक्षर-  
सूचिताद्यपदा एगिदिया १ वेइंदिया २ तेइंदिया ३ चउरिंदिया ४ पंचेंदिया ५ इति पदपंचरूपपरिनिष्ठिता षष्ठी संपत्, अभीतिवर्ण-  
द्वयवर्णिताद्यपदा अभिहया १ वत्तिया २ लेसिया ३ संघाइया ४ संघट्टिया ५ परियाविया ६ किलामिया ७ उइविया ८ ठाणाओ  
ठाणं संकामिया ९ जीवियाओ ववरोविया १० तस्स मिच्छामिदुक्कडं ११ इत्येकादशपदपरिच्छिन्ना सप्तमी संपत्, तस्मत्ति आद्य-  
पदोल्लिगिता तस्स उत्तरीकरणेणं १ पायच्छित्तकरणेणं २ विसोहीकरणेणं ३ विसह्ठीकरणेणं ४ पावाणं कम्माणं निग्घायणट्टाए ५  
ठामि काउस्सग्गमिति पदपट्टकघटिताऽष्टमी संपत्, परतः कायोत्सर्गसूत्रत्वाद्, भाष्यांतरेऽन्त्यपदोल्लिगनेनास्या एतदंतभणनाच्च  
उक्तं च—“जीवा विराहिया पंचमी उ पंचिंदिया भवे छट्टी । मिच्छामि दुक्कडं सत्तमी अट्टमी ठामिकाउसग्गं ॥१॥” एवं चासां  
पदैः परिगणनमर्थसांगत्येन यथार्थतापरिज्ञानात्, उच्यते—

अब्भुवगमो ? निमित्तं २ ओहे ३ यरहेउ ४ संगहे ५ पंच ।

जीव ६ विराहण ७ पडिकमण ८ भेयओ तिन्नि चूलाए ॥ ३३ ॥

अस्या अर्थ उक्तानुसारेणोन्नेयः, वाचनांतराणि त्वर्थमांगत्याभावेन यादृच्छिकान्येवेति मत्वोपेक्षितानि ३३ ॥ अत्र चैवं  
बृहद्भाष्योक्तो विधिः—“संनिहिअं भावगुरुं आपुच्छिता खमाममणपुवं । इरियं पडिकमिज्जा ठवणाजिणसकखियं इहरा ॥१॥

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२४९॥

श्रीदे०  
नेत्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥२५०॥

(३६५) न तु जिनविंशत्यापि पुरतः स्थापनाचार्यः स्थापनीयः, यतस्तीर्थकरे सर्वपदमणनात् तद्विवेऽपि सर्वपदस्थापना अवसीयत  
एव, उक्तं च व्यवहारभाष्ये—“आयरियग्गहणेणं तित्थयरो इत्थं होइ गहिओ अ । किं न भवइ आयरिओ ? आयारं उवइसंतो य  
॥१॥ निदरिसणमित्थं जह खंदएण पुट्ठो य गोअमो भयवं ! । केण तुहं सिट्ठंति य ? धम्मायरिण पचाह ॥२॥ स जिणो जिणा-  
इसयओ सो चेव गुरु गुरुवएसाओ । करणा य विणयणाओ सो चेव मतो उवज्झाउ ॥ ३ ॥”ति, आचारांगचूर्णावप्युक्तं—  
“आयरिया तित्थयरा गुणे आयरियसंमए”ति सूत्रचूर्णेः आयरिया तित्थयरत्ति, स्कंदकमुनिकथानकं पुनरिदं—तेणं कालेणं  
तेणं समएणं कयंगला नामं नयरी हुत्था, वण्णओ, तीसे णं कयंगलाए २ वहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए छत्तपलाए नामं  
चेइए हुत्था, वण्णओ, तएणं ममणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे १ अरहा २ जिणे ३ केवली ४ तीयपदुप्पन्नमणागयवि-  
याणए ५ मच्चन्नु ६ सच्चदरिसी ७ आगासगएणं चक्रेणं १ आगासगएणं छत्तेणं २ आगासगयाहिं चामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं ३  
आगासगएणं फलियामएणं मपायपीदेणं सींहासणेणं ४ धम्मज्झएणं पुरओ पकद्धिज्जमाणेण ५ चउदसहिं समणसाहस्सीहिं  
छत्तीसाए अज्जियासाहस्सीहिं सद्धिं संपरिबुडे पुवाणुपुविं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे कयंगलाए  
नयरीए छत्तपलासए चेइए अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिण्हित्ताणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, परिमा निग्गच्छइ,  
रोयमाइ समणे ३ भयवं गोयमं एवं वघासी—दच्छिस्ति णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं, कं भंते ? खंदयं नाए, से काहे वा  
किइ वा ? माक्षादर्शनतः श्रवणतो वा कियच्चिरेण वा ? एवं खलु गोयमा ! इभीसेणं कयंगलाए नयरीए अदूरसामंते सावत्थी  
नामं नयरी होत्था, वण्णओ, तत्थं णं सावत्थीए नयरीए गहभालिस्स अंतेवासी खंदए नामं कचापणसगुत्ते परिवायए

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५०॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५१॥

परिवसइ, रिउव्वेयजउव्वेभमामवेयअथव्वणवेयइतिहासपंचमाणं निग्धंडुल्लट्टाणं चउण्हं वेयाणं संगोयंग्गाणं सरहस्साणं सारए धारए  
पारए वारए सडंगरी सट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोइसामयणे अत्तेसु अ बहुसु वंभचएसु परिवा-  
यएसु नएसु परिनिट्टिए आवि भविस्मइ(भवइ), तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए नामं नियंठे वेसालिसावए-महावीरशिष्यः  
परिवसइ, तए णं से पिंगलए अन्नया कयाइ जेणेव खंदए कच्चा० तेणेव उवागच्छइर खंदयं च इणमक्खेवं-प्रश्रं पुच्छेइ-मागहा !  
किं सअंते लोए अणंते लोए ? सअंते जीवे अणंते जीवे ? सअंता सिद्धी अणंता सिद्धी ? सअंते सिद्धे अणंते सिद्धे ? केण वा मरणेणं  
मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा ? एताव ताव आइक्ख वुज्झमाणा एवं, अन्यदपि पश्चात् प्रक्ष्यामि, तएणं खंदए क० ३ पिंग-  
लएणं ३ इणमक्खेवं पुच्छिए ममाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेयसमावण्णे कलुससमावण्णे नो संचायइ पिंगलयस्स ३  
किंचिवि पमुक्खं-उत्तरं अक्खाइउं, तुमिणिए संचिट्टइ, तए णं से पिंगलए ३ खंदणं क० ३ दुच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे, मागहा !  
किं सअंते लोए जाव वुज्झमाणा एवं, तएणं से खंदए क० २ पिंगलएणं ३ दुच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए  
जाव तुमिणिए संचिट्टइ, तएणं मावत्थीए नयरीए संघाडगतिगचउक्कचचरचउमुहमहापहेसु महया जणसंमद्देइ वा जणवूहेइ वा  
जणभोलेइ वा जणकलकलेइ वा जणुम्मीइ वा जणुकलियाइ वा जणसंनिवाएइ वा बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ एवं भासइ  
एवं पन्नवइ एवं परूवेइ-एवं खलु देवाणुप्पिया ! समाणे भगवं महावीरे आइगरे जाव संपाविउकामे पुच्चाणुपुत्तिं चरमाणे ३  
जाव विहरइ, तं महाफलं खलु भो देवाणुप्पिया ! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं नामगोयस्सवि सवणयाए, किमंग पुण अमि-  
गमणवंदणनमंसणपडिपुच्छणपज्जुवासणयाए ? , एगस्सवि आयरियस्स सुवयणस्स मवणयाए, किमंग पुण विउलस्स अट्टस्स

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५१॥

श्रीदे०  
धैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२५२॥

गदणयाए ? तं गच्छामो णं देराणुप्पिया ! समणं ३ वंदामो नमंसामो सक्कारेमो सम्माणेमो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जु-  
वासेमो, एयं णे पेच्चभवे हियाए सुहाए खमाए निस्सेयसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइत्तिकदट्टु बहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं भो-  
गार राइण्णा २ खत्तिया २ माहणार भडार जोहार मल्लई ३ लिच्छई २ अन्ने य बहवे राईसरतलवस्माडं वियकोडुं वियइब्भसिद्धिसं-  
णावइमत्थवाहपभिइओ अप्पेगइया वंदणवत्तियं ४ अप्पेगइया कोउहलवत्तियं अप्पेगइया असुयाइं सुणिस्सामो सुयाइं निस्सं-  
किथाइं करिस्सामो पंचाणुवइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जिस्सामो, अप्पेगइया जिणभत्तिराएणं अप्पेगइया  
जीयमेयंतिकदट्टु ण्हाया कयवलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सिरसाकंठे मालकडा आविद्धमणिसुवन्ना कप्पियहारद्वहारति-  
सरयपालंबपलंबमाणकडिसुत्तयसोभाभरणा पवरवत्थपरिहिया चंदणुह्छित्तगतसरीरा अप्पेगइया हयगया एवं गयरहसिवियासंदमा-  
णियागया अप्पेगइया पायविहारचारिणो पुरिसवग्गुरापरिकुखित्तामहया उक्किट्ठिसीहनायवोलकलयलरवेणं पक्खुब्भियसमुदं-  
रंवित्र करेमाणा सानत्थीए नयरीए मज्झंमज्जेणं निग्गच्छंति, तएणं तस्स खंदयस्स क० २ बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सुच्चा  
निमम्म अयमेयारूवे अब्भत्थिए चित्तिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था-सेयं खलु मे समणं ३ वंदित्ता ४ कल्लाणं जाव  
पज्जुवासित्ता इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेउइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छित्तएत्तिकदट्टु एवं संपहेइ २ जेणेव परिवाय-  
यावसहे तेणेव उवागच्छइ २त्ता तिदंढं च कुंडियं च कंबणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च छन्नालयं च अंकुसयं च  
पयत्तियं च गणेत्तियं च पाहणाओ य धाऊरत्ताओ य गेण्हेइ २ परिवायावसहाओ पडिनिकखमइ २त्ता तिदंढकुंडिय जाव गणित्ति-  
पहत्थगए छत्तीराणइसंजुत्ते धातुरत्तवत्थपरिहिए मावत्थीए २ मज्झंमज्जेणं निग्गच्छइ २ जेणेव कयंगला २ जेणेव छत्तपलासए

ईर्यापथिकी

॥२५२॥

धीदे०  
चैत्य०भी-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥२५४॥

सिओ उ जो नव उ । माणुम्माणपमाणं तिविहं खलु लक्खणं एयं ॥ १ ॥ सिरीए अईव २ उवसोहेमाणं चिड्डइ, तएणं से खंदए  
क० २ समणस्स ३ वियडभोइस्स सरीरयं उरालं जाव उवसोभेमाणं पासइ २ हट्टतुट्टचित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणसिए  
हरिसरसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे ३ तेणेव उवागच्छइ २ समणं ३ तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ जाव पज्जुवासइ,  
खंदयाइ समणे ३ खंदयं क० २ एवं वयासी-से नूणं तुमं खंदया ! सावत्थीए न० पिंगलएणं ३ इणमक्खेवं पुच्छिए, मागहा ! किं  
सअंते लोए एवं तं चेव जाव जेणेव मम अंतिए तेणेव हवमागए, से नूणं खंदया ! अट्टे समट्टे ? , हंता अत्थि, जेविय ते खंदया !  
अयमेयारूवे अब्भत्थिए ४ संकप्पे समुप्पज्जित्था-किं सअंते लोए (जीवे)अणंते लोए (जीवे) ? तस्सविय णं अयमट्टे, एवं खलु मए  
खंदया ! चउच्चिहे लोए पं०, तं०-दब्बओ ४ दब्बओ णं एगे लोए सअंते खित्तओ णं एगे लोए असंखिज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ  
आयामविकखंभेणं असंखिज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पं०, अत्थि पुण से अंते, कालओ णं लोए न कयाइ न आसि  
न कयाइ न भवति न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु य भवइ य भविस्सइ य धुवे नियये सासए अक्खए अवट्टिए निच्चे, नत्थि पुण  
से अंते ३ भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा एवं गंधरसफाससंठाणगरुपलहुपज्जवा, नत्थिणं पुण से अंते, से तं दब्बओ  
लोए सअंते खित्तओ लोए सअंते कालओ भावओऽवि अणंते, जीवे य ते खंदया ! अयमेयारूवे जाव अणंते जीवे तस्मऽवियणं  
अयमट्टे-एवं खलु जीवे दब्बओ णं एगे जीवे सअंते ? खित्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए असंखिज्जपएसोगाटे अत्थि पुण से अंते २  
कालओ णं जीवे न कयाइ आसि जाव निच्चे, नत्थि पुणाइ से अंते ३ भावओ णं जीवे अणंतनाणपज्जवा एवं अणंता दंसणच्चरित्ता  
गरुपलहुयअगरुपलहुया, नत्थि पुण से अंते, से तं दब्बओ खित्तओ जीवे सअंते, कालओ भावओ अणंते, जेविय ते खंदया !

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५५॥

अयं पुच्छा जात्र अणंता सिद्धी तस्सविय जात्र दब्बओ णं एगा भिद्धी सअंता? खित्तओ णं सिद्धी पणयालीसं जोयणमयसहस्साइ  
आयामविकखंमेणं एगा जोयणकोडी वायालीसं च सयसहस्साइ तीसं च सहस्साइ दुब्बि य अउणापन्ने जोयणसए किंचिविसे-  
साहिए किंचिन्न्यूनगव्युतद्वयाधिके इत्यर्थः परिवेवेणं पं०, अत्थि पुण से अंते, कालओ भावओ य जहा लोए, से तं दब्बओ  
खित्तओ सिद्धी सअंता, कालओ भावओ य अणंता २, जेवि य ते खंदया! अयं जात्र अणंते सिद्धे तत्थवि य जात्र दब्बओ णं  
एगे सिद्धे सअते, खित्तओ णं सिद्धे असंखिअपएसिए जहा जीवे, कालओ णं सिद्धे साइए अपअवसिए, नत्थि पुण से अंते,  
भात्रओ णं सिद्धे अणंता नाणपअवा एणं दंमणचरित्तअगुरुपलहुयप० नत्थि पुण से अंते, से तं दब्बओ खित्तओ सिद्धे सअंते,  
कालओ भात्रओ य अणंता २, जेविय ते खंदया! अयं जात्र केण वा मरणेणं मरमाणे जीविए वड्ड वा हायइ वा तस्सवि य जात्र  
खंदया०! मए दुविहे मरणे पणत्ते, तं०—वालमरणे य पंडियमरणे य, से किं तं वालमरणे १, २ दुमालविहे पं०,  
तं०—उलायमरणे १, उमट्टमरणे २, अंतोसहम० ३, तम्मम० ४, गिरिपडणे ५, तरुपडणे ६, जलपवेसे ७, जलणपवेसे  
८, विसभक्खणे ९, सत्थोराडणे १०, वेहाणसे ११, गद्धापट्टे १२, इच्चेतेणं खंदया! दुमालसविहेणं वालमरणेणं मरमाणे जीवे  
अणंतेहिं नेरदयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ, एवं तिरियमणुयदेव० अणाइयं च जं अणत्रयग्गं चाउरंतं संमारकंतारं अणुपरिय-  
ट्टिहिइ, से तं मरमाणे वड्डइ, से तं वालमरणे, से किं तं पंडियमरणे १, २ पंडियमरणे दुविहे पणत्ते, तं०—पाओउगमणे य भत्तपा-  
णपचरुत्ताणे य, से किं तं पाओउगमणे १, २ दुविहे पं०, तं०—नीहारिमे य अनीहारिमे य अपडिकमे, से तं पाओउगमणे, से  
किं तं भत्तपचरुत्ताणे १ २ दुविहे पं० तं०—नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमा सपडिकमे, से तं भत्त०, इच्चेणं खंदया! दुविहेणं

स्कन्द-  
मुनिवृत्तं

॥२५५॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५६॥

पंडियमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ जाव वीइवयइ, से तं मरमाणे हायइ २, से तं पंडिय-  
मरणे, इच्चेएणं खंदया! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा, इत्थ णं से खंदए क० संबुद्धे समणं भगवं महावीरं  
वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी-इच्छामिणं भंते! तुज्झं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्ताए, अहासुहं देवाणुप्पिया!, मा पडि-  
बंधं, तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स क० तीसे य महइमहालियाए सदेवमणुयासुराए परिसाए धम्मं परिकहेइ, तए णं  
से खंदए कचायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सुच्चा निसम्म हट्टतुट्टे जाव हयहियए उट्टेइ २ समणं भगवं  
महावीरं तिकखुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ २ एवं वयासी-सद्धामि णं भंते! निग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते! निग्गंथं  
पावयणं, रोएमि णं भंते! निग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते! तइमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! इच्छियमेयं  
भंते! जहेयं तुज्झं वयहत्तिकट्टु समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ उत्तरपुरच्छिमं दिसिभायं अवक्कमइ २ तिदंडं च कुंडियं  
च जाव धाउरत्ताउ य एगंते एडेइ २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवं महावीरं तिकखुत्तो आया-  
हिणं पयाहिणं करेइ २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ जाव नमंसित्ताणं एवं वयासी-आलित्ते णं भंते! लोए  
जराए मरणेण य, से जहानामए कोई गाथावती अगारंसि झियायमाणंसि जे तत्थ भंडे भवइ अप्पसारे गुह्यगुरुए तं गहाय आया-  
ए एगंतमंतं अवक्कमइ एस मे नित्थारिए समाणे पच्चा पुरो य हियाए जाव आणुगामियत्ताए भविस्सइ, एवमेव देवाणुप्पिया!  
मज्झवि आया एगे भंडे इट्टे कंते पिए मणुण्णे मणामे थेज्जे वेसासिए संमए बहुमए अणुमए भंडकरंडगसमाणे मा णं सीयं मा  
णं उण्हं मा णं खुहा मा णं पिवासा मा णं चोरा मा णं बाला मा णं दंसा मा णं मसया मा णं वाइयपित्तियसेंभियसन्निवाइय

स्कन्दक-  
मुनिपुत्रं

॥२५६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५७॥

विविहा रोगायंका परिसहोवसग्गा फुसंतुत्तिकट्टु एम नित्थारिए समाणे परलोयंस्स हियाए सुढाए रामाए नीसेसाए आणुगा-  
मियत्ताए भविस्सइ, तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! सयमेव पव्वाविउं सयमेव मुंडाविउं सयमेव सेहाविउं सयमेव सिक्खाविउं  
सयमेव आयारगोयरविणयवेणइयचरणकरणजायामायावित्थियं धम्ममाइरुखिउं, तएणं समणे ३ खंदयं क० २ सयमेव  
पव्वावेइ जाव धम्मं आइक्खइ, एवं देवाणुप्पिया ! गंतवं एवं निसीइयवं एवं तुयट्टियवं एवं भुंजियवं एवं उट्ठाय २ पाणेहिं ४  
संजमेणं संजमियवं, अस्मि च णं अट्ठे नो किंचि पमाइयवं, तए णं से खंदए क० २ समणस्सरे इमं एयारूयं धम्मियं उवएसं  
संमं संपडिवज्जइ, तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ जाव नो पमाएइ, तए णं से खंदए क० अणगारे जाए ईरियासमिए भामास-  
मिइए एसणासमिइए आयाणभंडमत्तनिकुखेवणासमिइए उचारपासवणखेच्छजल्लसिंघाणपारिद्धावणियासमिइए मणस० वयस० का-  
यस० गुत्तो मणगुत्तो वयगुत्तो कायगुत्तो गुत्तिदिए गुत्तवंभयारी चाई लहू धण्णे खंतिखमे जिइदिए सोहिए अनियाणे अप्पुस्सुए  
अवहिल्लेसे सुसामण्णए दंते, इणमेव निग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ, तए णं समणे ३ कयंगलाओ० छत्तपलासाओ चेइआओ  
पडिनिक्खमइ बहिया जणवयविहारं विहरइ, तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगरओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए  
सामाइयाइं इकारस अंगाइं अहिज्जइ २ जेणेव समणे ३ तेणेव उवागच्छइ २ समणं ३ वंदइ नमंमइ २ एवं वयासी-इच्छामि णं  
भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं, तए  
णं से खंदए अणगारे समणेणं ३ अब्भणुत्ताए समाणे हट्ठ जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तए णं  
से खंदए अ० मासियं मि० अहासुत्तं १ अहाकप्यं २ अहामग्गं ३ अहात्तच्चं ४ अहासंमं ५ संमं फासेइ १ पालेइ २ सोहेइ ३ तीरेइ

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५७॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५२॥

तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ तए णं खंदए अ० २ तेणं उरालेणं ५ सिवेणं ६ धम्मेणं ७ मंगल्लेणं ८ सस्मिरीएणं ९  
उदग्गेणं १० उदत्तेणं ११ उत्तमेणं १२ उदारेणं १३ महाणुभागेणं १४ तवोकम्मेणं १५ सुक्खे १ लुक्खे २ निम्मंसे ३ अट्ठि-  
चम्मावणद्धे ४ किडिकिडियाभूए ५ किसे ६ धमणिसंतए ७ जाये याविहुत्था, जीवंजीवेणं गच्छइ १ जीवंजीवेणं चिद्धइ २ भासं  
भासिचावि गलाइ ३ भासं भासमाणे गिलाइ ४ भासं भासिस्तामिति गिलायइ य, से जहानामए कट्टमगडियाइ वा ? पत्तसग-  
डियाइ वा २ पत्तिल्लभंगसगडिया इ वा ३ एरंडकट्टसगडिया इ वा ४ इंगालकट्टसगडियाइवा ५ उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससहं  
गच्छइ ससहं चिद्धइ एवामेव खंदए अ० २ ससहं गच्छइ उवचिए तवेणं अवचिए मंससोणिएणं तवतेयसिरीए अईव २ उवसोभे-  
माणे चिद्धइ । तेणं कालेणं २ रायगिहे २ समोसरणं जाव परिसा पडिगया, तएणं तस्स खंदयस्स अ० २ अन्नया कयाइ पुव-  
रत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अब्भत्थिए ५ जाव समुप्पजित्था—एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं  
उरालेणं १५ तवोकम्मेणं सुक्के ८ जाव जीवंजीवेणं गच्छामि ५ से जहा नामए जाव एवामेव अहंपि ससहं गच्छामि ससहं चिट्ठामि,  
तं अत्थि ता मे उट्ठाणे १ कम्मे २ वले ३ विरिए ४ पुरिमकारपरकमे ५ तं जाव मे अत्थि उट्ठाणे ५ जाव मे धम्मायरिए  
धम्मोवएसए समणे ३ जिणे सुहत्थी विहरए ताव ता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मीलियंमि अहा-  
पंडुरे पभाए रत्तासोगप्पगासकिंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडविबोहए उट्ठियम्मि सरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा  
जलंते समणं ३ वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता समणेणं ३ अब्भणुन्नाए समाणे तयमेव पंचमहवयाणि आरोचित्ता समणा  
य समणीओ य खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पच्चयं सणियं २ दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देवसन्निवायं

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२५८॥

४ पूरेइ ५ किट्टेइ ६ अणुपालेइ ७ आणाए आराहइ ८ एवं दोमासियाइ १२, [प्रत्यन्तरे सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहित्ता जेणेव समणे भगणं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणंइ वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी-इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुणाए दोमासियं भिक्षुपडिमं उपसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं, तं चेव, एवं [ दोमासियं ] तेमासियं चउमासियं पंचछसत्त० पढमसत्तराइंदियं दोचमत्तराइंदियं तच्चसत्तराइंदियं अहोराइयं एगराइयं । तए णं से खन्दए अणगारे एगराइंदियं भिक्षुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता जाओ-मासाई सत्तंता ७ पढमा ८ विय ९ तइयसत्तराइदिणा १० । अहराय १ एगराई २ भिक्षुपडिमाण वारसंगं ॥१॥ कमसो पइदिणमेगा दत्ति सत्तसु पुढो जलन्नाणं । तिसु य चउत्थपमाणं छट्टट्टम दोसु चरिमासु ॥२॥ उत्ताणयपासिह्लय नेसज्जिअआसणो उ अट्टमिए । उकुडलगंडसाई दंडाययए य नवमीए ॥३॥ दनमीए गोदो-हिय वीरासणिए य अबखुजे य । इगदसमी अणलंबियपाणी थाणुव उद्धतणू ॥४॥ साहदुदु दोवि पाए अणलंबियपाणि लुक्ख-अणुदिट्ठी । अणिमिसनयणो ईसिंओणयकाओ य वारसमी ॥ ५ ॥ गच्छा विणिकखमित्ता उपसग्गपरीसहाइसहणपरो । पडिषज्जइ एयाओ धीरो इय भिक्षुपडिमाओ ॥६॥ लेइ गुणरयणसंवच्छरं तओ तत्थ सोलमासतवं । एगंतरोववासाइ होइ चउतीसइमअंतं ॥७॥ ठाणुकुडुओ य दिवा सूरामिमुहो य आयवेमाणो । रत्तिं तु अवाउडओ वीरासणिओ कुणेइ तवं ॥ ८ ॥ पनरस १ दम २ अट्ट ३ छठ्ठपंच ५ चउरदतिय ७ तिन्नि ८ तिन्नि ९ तिय १० तिन्नि ११ । दुय १२ तिन्नि १३ दुन्नि १४ दुय १५ दुन्नि १६ पारणा सोलमासि कमा ॥ ९ ॥) तएणं से खंदए अ० २ गुणरयणसंच्छर तत्रोकम्मं अहासुत्तं ५ सम्मं काएणं फासेइ ८ जाव आराहित्ता ८ जेणेव समणेइ उवागच्छइ २ समणंइ वंदइ नमंसइ २ चहूहिं छट्टट्टमदममदुवालसेहिं मासद्वमासखवणेहिं विचित्तेहिं

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२५२॥

तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ तए णं खंदए अ० २ तेणं उरालेणं ५ सिवेणं ६ धन्नेणं ७ मंगल्लेणं ८ सस्सिरीएणं ९  
उदग्गेणं १० उदत्तेणं ११ उत्तमेणं १२ उदारेणं १३ महाणुभागेणं १४ तवोकम्मेणं १५ सुक्खे १ लुक्खे २ निम्मंसे ३ अट्ठि-  
चम्मावणद्धे ४ किडिकिडियाभूए ५ किसे ६ धमणिसंतए ७ जाये याविहुत्था, जीवंजीवेणं गच्छइ १ जीवंजीवेणं चिट्ठइ २ भासं  
भासित्तावि गलाइ ३ भासं भासमाणे गिलाइ ४ भासं भासिस्सामित्ति गिलायइ य, से जहानामए कट्टमगडियाइ वा १ पत्तसग-  
डियाइ वा २ पत्तिल्लभंगसगडिया इ वा ३ एरंडकट्टसगडिया इ वा ४ इंगालकट्टसगडियाइवा ५ उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससहं  
गच्छइ ससहं चिट्ठइ एवामेव खंदए अ० २ ससहं गच्छइ उवचिए तवेणं अवचिए मंससोणिएणं तवतेयसिरीए अईव २ उवसोभे-  
माणे चिट्ठइ । तेणं कालेणं २ रायगिहे २ समोसरणं जाव परिसा पडिगया, तएणं तस्स खंदयस्स अ० २ अन्नया कयाइ पुष-  
रत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अब्भत्थिए ५ जाव समुप्पजित्था-एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं  
उरालेणं १५ तवोकम्मेणं सुक्के ८ जाव जीवंजीवेणं गच्छामि ५ से जहा नामए जाव एवामेव अहंपि ससहं गच्छामि ससहं चिट्ठामि,  
तं अत्थि ता मे उट्ठाणे १ कम्मे २ वले ३ विरिए ४ पुरिमकारपरक्कमे ५ तं जाव मे अत्थि उट्ठाणे ५ जाव मे धम्मायरिए  
धम्मोवएसए समणे ३ जिणे सुहत्थी विहरए ताव ता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मीलियंमि अहा-  
पंडुरे पभाए रत्तासोगप्पगासकिंसुयसुयसुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडविचोहए उट्ठियम्मि सरे सहस्सरस्सिस्सम्मि दिणयरे तेयसा  
जलंते समणं ३ वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता समणेणं ३ अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाणि आरोचित्ता समणा  
य समणीओ य खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पच्चयं सणियं २ दुरुहित्ता मेहवणसंनिगासं देवसन्निवायं

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२५९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
घर्म० सधा  
चारविधौ  
॥२६०॥

पुढविसिलापट्टय पडिलेहिता दम्भसंधारयं संधरिचा संलेहणाञ्जुसणाञ्जुसियस्स भत्तपाणपडियाइक्खियस्स पाओवगयस्म कालं  
अणवकंखमाणस्स विहरित्तएत्ति कट्टु एवं संपेहेइ २ कळं पाउप्पभायाए २ जाव जलंते जेणेउ समणं ३ पज्जुवासइ, खंदयाइ  
समणे ३ खदय अणगार एवं वयासी-से नूण तव खंदया ! पुवरत्तावरत्त जाव जागरमाणस्स इमे एयारूवे अब्भत्थिए जाव समु  
प्पज्जित्था-एव खलु अह इमेण एयारूवेणं उरालेणं १५ सुके ८ त चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तएत्तिकट्टु एवं सपे-  
हेइ २ जेणेउ मम अत्तिए तेणेव हव्वमागए, से नूणं खदया ! अट्टे समट्टे ? , हंता अत्थि, अहासुह देवाणुप्पिया ! मा पडिवंधं,  
तएणं से खदए अणगारे समणेण ३ अब्भणुण्णाए समाणे हट्टतुट्ट जाव हियए उट्टाए उट्टेइ २ समण ३ तिकूखुत्तो आयाहिणं  
पयाहिणं करेइ, जाव नमसित्ता सयमेव पंच महव्वयाइ आरूहेइ २ समणे समणीओ य खामेइ स० तहारूवेहिं धेरेहिं कडाईहिं  
सद्धिं विपुल पव्वयं सणिय २ दुरुहइ २ मेहघणसनिगामं देउसनिवायं पुढविसिलापट्टयं पडिलेहेइउ उच्चारपासवणभूमि पडिलेहेइ  
२ दम्भसंधारय सथरेइ २ पुरच्छाभिमुहे सपलियंकनिसत्ते करयलपरिग्गहिय दसनहं सिरसावत्त मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी-  
नमोत्थुण अरिहताण भगवताण, जाउ सपत्ताण, नमोत्थु ण समणस्स ३ जाव संपाविउक्कामस्स, वंदामि ण भगवंतं तत्थ गयं इह  
गएत्तिकट्टु वंदइ २ एवं वयासी-पुविपि णं मए समणस्स ३ अते सब्बे पाणाइवाए पच्चक्खाए जाउज्जीवाए इयाणिपि य णं  
समणस्स ३ अंतिए सब्ब पाणाइवायं पच्चक्खामि जाउज्जीवाए जाउ मिच्छादंसणमळं पच्चक्खामि जाउज्जीवाए, सब्बं अमणं पाणं  
खाइम साइम चउविहपि आहार पच्चक्खामि जाउज्जीवाए, जपि य इम सरीर इट्ठं कंतं पिय जाव फुसंतुत्तिकट्टु एयपि ण चरि  
मेहिं उसासनीसासेहिं वोसिरामित्तिकट्टु सलेहणाञ्जुमणाञ्जुसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरइ ।

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२६१॥

तएणं से खंदए अ०२ समणस्सरे तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं इकारस अंगाइं अहिजिजा बहुपडिपुन्नाइं दुवालस  
वासाइं सामन्नपरियागं पाउणिजा मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झोसिजा सद्धिं भत्ताइं अणसणाए छेइत्ता आलोइयपडिकांते समा-  
हिपत्ते आणुपुष्पीए कालगए । तएणं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं जाणिजा परिनिव्वाणत्तियं काउस्सगं करंति  
२ पत्तचीवराणि गेहंति २ विउलाओ पच्चयाओ सणियं २ पच्चोरुहंति २ जेणेव समणे ३ तेणेव उवागच्छंति २ समणं ३ वंदंति  
नमंसंति २ एवं वयासी-एवं खलु भो देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइभइए पगइउत्तसंते पगइय पयणुकोह-  
माणमायलोहे मिउमदवसंपन्ने अल्लीणे भइए विणीए, से णं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए स० जाव खामित्ता अम्हेहिं सद्धिं विउलं  
पच्चयं जात्र कालगए, इमे य से आयारभंडए । भंतेत्ति भयवं गोयमे समणं ३ वंदइ नमंसइ २ एं वयासी-एवं खलु भो देवा-  
णुप्पियाणं अंतेवासी खंदए णामं अणगारे कालमासे कालं किचा कहिं गए कहिं उत्तवण्णे ?, गोयमा ! समणे ३ भयवं गोयमं एवं  
वयासी-एवं खलु गोयमा ! मम अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइभइए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए जात्र कालं किचा अच्चुए  
कप्पे देवत्ताए उत्तवण्णे, तत्थ अत्थेगइयाणं देवाणं वावीसं सागरोत्तमाइं ठिई पन्नत्ता, (खंदयरमवि सा चैव)से णं भंते ! खंदए ताओ  
देवलोयाओ आउक्खएणं ठिईक्खएणं भवक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिइहि कहिं उत्तवज्जिहिइ ?, गोयमा ! महाविदेहे  
वासे सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुचिहिइ परिनिव्वाइहि सच्चदुक्खाणमंतं करेहिइ । एवं स्कंदरुमाधुपुंगवपुरः श्रीगौतमेनोदिताः,  
श्रुत्वाऽर्हद्गुरुतादिसर्वपदवीः श्रीवर्द्धमानप्रभोः। बुध्यध्वं भविकाः! स्फुटं तदरिहद्विम्वैप्यपि म्थापनाचार्यत्वादि तथा क्षमाश्रमणके-  
यदिविधिं तत्पुरः॥१॥ इति स्कंदमुनिकथा । इति श्रीमदर्हतामाचार्यत्वादिविधौ स्कन्धमुनिसंवन्धः। (प्रत्यन्तरे त्वियं व्याख्यैवं-

स्कन्दक-  
मुनिवृत्तं

॥२६१॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२६२॥

एवं साक्षात्समासन्नभावाचार्यसद्भावे क्षमाश्रमणपूर्व जिनविम्वाद्यन्यथाऽऽपृच्छय ईर्यापथिकी प्रतिक्रमणीया, न तु तद्विनाऽपि, यदा-  
गमः—“गुरुविरहंमि उ ठरणा गुरुवणसोवदंसणत्थ तु । जिणविरहंमि य जिणधिवसेणामंतणं सहलं ॥१॥” तत्र ‘एवं चिय सवा-  
यस्सयाइं आपुच्छिऊण कजाइं । जाणावियमामंतणवयणाओ जेण सव्वेसु ॥१॥त्ति वचनात् गुर्वादेशानुज्ञाद्यर्थं प्रथमं प्रस्तावनासूत्र-  
मिदं—इच्छाकारेण संदिस्सह भगवन् ! इरियावहियं पडिक्कमामि !, इच्छं,” अस्यार्थः—इच्छाकारेण प्रस्तावौचित्यादि-  
वेदितयोत्पन्नतदादेशदानादीच्छया, न तु बलाभियोगोपरोधादिनाऽपीत्यर्थः, इत्थं चैव धर्मास्थितेः, उक्तं च—“आणाबलाभि-  
ओगो निग्गथाणं न कप्पए काउं । इच्छा पउंजियत्ता सेहे रायणिएवि तहा ॥१॥” ‘संदिशत’ आदेशं दत्त, भगवन् !—प्रिशिष्टज्ञा-  
नाद्युपेतत्वाद् अवसरादिज्ञानविद्, ईर्यापथिकीं विराधनामिति शेषः । कर्माश्रयकारणा वा क्रियां प्रतिक्रामामीति निरर्तयामि १,  
अत्र गुरुवचः—प्रतिक्रामत, ( तवेप्सित ) कुरुतेत्यर्थः, एतेन गुर्वादेशं विना न कल्पते किमपि कर्तुमित्यावेदितं, यदाह—“भिक्वु  
इच्छिजा विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा अन्नं वा जं किचि पओयणं जाव मज्झायं वा करित्तए जागरियं वा जागरित्तए काउ-  
स्सग्गं वा ठाण वा ठाइत्तए नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा उरज्जायं वा थेर वा पवत्तिं वा गणिं वा गणहर वा गणा-  
वच्छेययं वा जं वा पुरओ काउं पिहरइ, क्षेत्रप्रतिलेखनादि, कप्पइ से आपुच्छिउ आयरियं ८ जाव विहरित्तए, इच्छामिणं भंते !  
तुब्भेणं अब्भणुण्णाए समाणे विहारभूमि वा जाव ठाणं ठाइत्तए, ते य से वियरिज्जा एरण्हं कप्पइ, से किमाहु भंते ! आयरिया  
पच्चरायं जाणति”, तथा “नियगमइग्गिगप्पियचिंतिण्णं” गाहा, एवं गुरुवचः श्रुत्वा स्मृत्वा ततः शिष्यः इच्छं—ईप्सितमेतदत्र  
भवद्वचनमित्युक्त्वा अस्वलित्तादिगुणोपेतमीर्यापथिकीसूत्रं पठति ‘इच्छामि पडिक्कमिउ’मित्यादि, इच्छामि—अभिलषामि, अने-

ईर्यापथि-  
कीव्याख्या

॥२६२॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२६३॥

न निजधाछयाऽंगीकृत्य धर्मः क्रियमाणो बहुफलः स्यादित्यावेदितं, किं कर्तुमित्याह—‘प्रतिक्रमितुं’ निर्वर्तितुं, इयं स्वाभ्युप-  
गमार्था द्विपदा प्रथमा संपत् १, कुत इत्यारेकायां द्वितीयां कार्यसंपदमाह—इरियावहियाए विराहणाए २ ईर्या—गमनं  
तद्युक्तः पन्था ईर्यापथस्तत्र भवा ईर्यापथिकी विराधना—जंतुवाधा मार्गे गच्छता या काचिज्जीरविराधनेत्यर्थस्तस्याः, एतापता  
ईर्यापथनिमित्ताया एव विराधनायाः प्रतिक्रमणं स्यात्, न त्वशेषसाधुसामाचार्यतिक्रमादिरूपायाः अतोऽन्यथा व्याख्या—‘ईर्या-  
पथो—ध्यानमौनादिकं मिधुव्रत’मिति वचनादीर्यापथः—साध्याचारस्तत्र भवा ईर्यापथिकी विराधना—तदतिक्रमादिरूपा, नद्युत्तरणादि-  
शयनादिप्रस्रवणपरिष्ठापनादि, किं?, तस्याः प्रतिक्रमितुमिच्छामि इति योगः, यदागमः—“गमणागमणविहारे सुत्ते वा सुमिण-  
दंसणे राओ । नावानइसंतारे इरियावहियापडिकमणं ॥ १ ॥” इत्यादि, इति निमित्तसंपत् ३, कथं वा एवं विराधनेति तृतीयां  
सामान्येन हेतुसंपदमाह—‘गमणागमणे’ गमने च स्थातुं चिकीर्षादिना समाश्रितस्थानादन्यत्र हस्तशतात् परतः, तत्र च स्वाध्या-  
याद्यर्थं कञ्चित्कालं स्थास्तुना ईर्यापथिकी प्रतिक्रमणीया, यदागमः—‘नियआलयाओ गमणं अन्नत्थ उ सुत्तपोरिसिनिमित्तं । होइ  
विहारो तत्थवि पणवीसं हुंति ऊसासा ॥ १ ॥’ तथा ‘भत्ते पाणेव सयणासणे य अरिहंतसमणसिज्जासु । उच्चारे पासवणे पणवीसं  
हुंति ऊसासा ॥१॥’ आगमने च पुनरन्यतो व्यावृत्त्य स्वाश्रितस्थाने तत्रापीर्यापथिकी प्रतिक्रम्यते, अथवा गमने च पथि नद्या-  
दिषु च, यदाह—“हत्थसयादागंतुं गंतुं च मुहुत्तमं जहिं चिट्ठे । पंथे वा भत्ते वा नइसंतरणे पडिकमई ॥ १ ॥” अतिष्ठन्नपि,  
नावाए उत्तरिउं वहमाई तह नईण एमेव । संतारेण चलेन व गंतुं पणवीस ऊमासा ॥ १ ॥ आगमने च हस्तशतमध्येऽपीत्यर्थः  
भणितं च—“पडिलेहिउं पमज्जिय भत्तं पाणं च वोसिरेऊण । वमही कयवरमेव तु नियमेण पडिकरुमे साहू ॥१॥” उच्चारं पासवणं

ईर्यापथि-  
नीव्याख्या

॥२६३॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२६४॥

भूमीण् वोमिरितु उवउत्तो । वोसिरिऊण य तत्तो इरियावहियं पडिकमइ ॥ २ ॥ वोसिरइ मत्तगे जइ तो न पडिकमइ मत्तगं जो  
उ । साहू परिट्टवेइ नियमेण पडिकमे सो उ ॥३॥ एवमन्यथापि जलादेश्चतुरंगुलमाने रिल्लकेऽपि जाते, अगमने वा शयनादिनाऽऽग-  
नाबोधे कुबोधे वा, नञः कुत्सार्थत्वादितस्ततो भ्रमणे चेत्येवमन्यत्रापि, यद्वा गमनामने तत्रैव प्रवृत्तिनिवृत्त्यात्मके नवरमौत्सुक्या-  
दिना बहिरीर्यापथिकी प्रतिक्रम्यैवागमने यथागमं, इह च गमनागमने च गमनागमने चेति विगृह्यैकशेषे गमनागमनं तत्र,  
एतावता च दिनमध्येऽनेकविषयत्वात् अनियतबहुवारप्रतिक्रमणीया ईर्यापथिकी प्रातःप्रदोषसंध्यानियमितैकैकवारकरणीयं रात्रिकं  
दैवगिकमितिनामकं प्रतिक्रमणं न भवति इत्यावेदितं, अन्यच्च—देवसिकारात्रिके सामायिकादिषडध्ययनात्मके व्रतातिचारविशोधि-  
विषये न 'पडिकमणेणं वयच्छिड्डाईं पिहेइ'त्ति वचनात्, ईर्यापथिकी तु केवलाऽपि पृथक्श्रुतस्कन्धरूपा प्रायः प्राणातिपातविराध-  
नानिवृत्तिविषया च, किंच—सर्वत्र सर्वदा सर्वेषामपि धर्मानुष्ठानानामादौ यथैषा प्रतिक्रम्यते न तथा दैवसिकादिप्रतिक्रमणमित्यादि  
बृहद्भिदेषात् सर्वथा पृथग् अनुष्ठानादुभयसंध्यावश्यकरणीयतालब्धयथार्थनामदैवसिकादिप्रतिक्रमणस्वरूपेयमिति वक्तुमपि न  
युज्यते, किं पुनः तत्स्थाने कर्तुं ?, दैवसिकादिनाम्ना क्वचिदपि आगमेऽनुपलभ्यमानत्वाच्च, विचारणीयमिदं मध्यस्थदृष्ट्या सम्यग्  
चदृष्टुतेरभिनिवेशादिविरहेण । एषा सामान्या हेतुसंपत् वृत्तीया । अथ गमनादौ सत्यपि कथं विराधनेति चतुर्थी विशेषहेतुसंपद-  
माह—'पाणकमणे वीयकमणे हरियकमणे ओसाउत्तिंगणगदगमद्विमक्कडासंताणासंकमणे' इह सदा (जीव)-  
गतिप्रमाद्यात्मविराधनानां जीवविराधना गरीयसी, जीवाश्च व्रमाः प्रायो लोकेऽपि प्रतीता एव, यतः कृमिकीटपतङ्गादीन् दृष्ट्वा  
वक्तारो भवन्ति—जन्तुकोऽयं गच्छतु वराकः, त्वं मा मारय, पापं स्यात्, मारय चैनं वैरिणमित्यादि, न चैवमाहुः—पञ्चभूतात्मकः

ईर्यापथि-  
कीव्याख्या

॥२६४॥

पिण्डोऽयं गच्छत्वित्यादि, इति बालादीनामपि त्रसेषु सुखेन जीवत्वप्रतिपत्तेः यश्चानुपूर्व्यां प्रथमं त्रसविराधनार्थमाह—पा णक्कमण उच्छासाधुरिन्द्रिययोगबलरूपाः प्राणाः यथायोग्यं सन्त्येषां ते प्राणाः प्राणिनो वा जीवाः एकेन्द्रियाणामग्रे भणिष्यमाणत्वाद्त्र प्राणिनः कृमिकीटपतङ्गमण्डकिकाद्याः द्वीन्द्रियादयो ज्ञेयाः तेषामाक्रमणे वक्ष्यमाणअभिहयइत्यादिप्रकारेण पीडने या विराधना—प्रतिकूला-चरणा तस्याः प्रतिक्रमितुमिच्छामीति योगः, तथा बीजानां—सर्वकणकुलिकामिज्जादिरूपाणां पक्कापक्कशुष्कार्द्रविरूढादिभेदभिन्नानां स्वपरकायादिशस्त्रांशुपहतानामिति शेषः आक्रमणे प्राग्बत्, तथा हरितानां—कन्दमूलत्वकाष्ठपत्रपल्लवकिसलयाङ्कुरपुष्पफलवृ-णाद्यशेषवनस्पतीनां छिन्नादिभेदानामशस्त्रोपहतानां, आक्रमणे पूर्ववत्, आभ्यां च सर्वबीजानां शेषवनस्पतीनाश्च जीवत्वमाह, प्रागुक्तबालगोपालाङ्गनादिप्रतिपन्नजीवत्वत्रसकायवत्, तथा चाचारांगसूत्रम्—“से वेमि इमं पि जाइधम्मयं एयं पि जाइ-धम्मयं इमं पि आहारमंतयं एयं पि आहारमंतयं इमं पि अनिययं एयं पि अनिययं इमं पि चओवचइयं एयं पि चओवचइयं इमं पि विपरिणामयं एयं पि विपरिणामयं” अत्र गाथा—“इह जाइवुद्धिधम्मं चित्तं छिन्नं मिलाइ आहारं । अनियय चओवचइयं विप-रिणामी तसतणुवणंगं ॥ १ ॥” प्रयोगथात्र—सचेतना वनस्पतयः आहारादिसद्भावे वृद्धिमत्त्वात् बालकशरीरवत्, इह य आहा-रादिसद्भावे वृद्धिमान् स सचेतनो यथा बालकशरीरं, वृद्धिमन्तश्च आहारादिसद्भावे ( वनस्पतयः ) अतः सचेतनाः, इतश्च—सात्मका वनस्पतयः सर्वत्वगपनयने मरणात् गर्दभवत्, एवं स्वापादिधर्मत्वादित्यादि, आहूश्च—“आगमश्चोपपत्तिश्च, संपूर्णं बुद्धिलक्षणम् । अतीन्द्रियाणामर्थानां, सद्भावः प्रतिपत्तये ॥१॥ आगमो ह्याप्तवचनमाप्तं दोषक्षयाद् विदुः। वीतरागोऽनृतं वाक्यं, न ब्रूयाद्वैत्वसंभवात् ॥ २ ॥ रागाद्वा द्वेषाद्वा मोहाद्वा वाक्यमुच्यते ह्यनृतम् । यस्य तु नैते दोषास्तस्यानृतकारणं किं स्यात् ?

धीदे०  
 पैत्य० श्री-  
 पर्म० मंपा-  
 पारविधौ  
 ॥२६६॥

॥ ३ ॥" अथ गमनादौ प्रायस्तेजोपागोरविषयत्वात् तौ विमुच्य जलादिविराधनार्थमाह—“ओसे”त्यादि, अवश्यायः—ब्रेहः  
 ठार इति यः प्रसिद्धः, प्रायः प्रातःप्रदोषनिशासु सदाऽऽपाती, यदागमः—“से नूनं भंते! मया समियं सुहुमे सिणेहकाये पवडइ?,  
 हंता पवडइ,से नूनं भंते! किं उद्धं पवडइ अहे पवडइ तिरिये पवडइ?, गोयमा! उद्धं पवडइ अहोवि पवडइ तिरियंपि पवडइ”।  
 सूक्ष्माप्लायोपलक्षणत्वादस्य, पणगेतिशब्दयोगाद्वा हिमकरगधूमरीहरतणुकाद्यपि ज्ञेयं, उक्तं च—“से किं तं सिनेहसुहुमे?, सिनेह-  
 सुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—करगा हरतणुए” एतत्संक्रमणे इति योगः, एवमग्रेऽपि पृथग् पृथग् योज्यम्, एतद्ग्रहणं च  
 बहुजीवाश्रयत्वेन सूक्ष्मोऽप्यप्लायः परिहार्य इति ज्ञापनार्थं, यदाह—जत्थ जलं तत्थ वणं जत्थ वणं तत्थ निच्छिओ तेऊ। तेऊ-  
 याऊ महगया तमा य पच्चरुखया चेव ॥ १ ॥” तथा “उदये पुढवी तस सेवालकं” यथा बह्वाश्रयत्वात् सूक्ष्माप्लायः परिहार्यः  
 तथा अन्येऽपि जीवा ज्ञेया इत्याह—‘उत्तिगा’ जीवावस्थितिस्थानानि, तत्पञ्चकं यथा, यदाह—से किं तं लेणसुहुमे?, लेणसुहुमे  
 पंचविहे पण्णत्ते, कीटिकानगरादीनि दरकान्निश्चित्य पट्टिकादौ स्फुटिकाराजी वेलुकांतः संचरज्जीवकृता दाली रेखेत्यर्थः गर्दभा-  
 कृतिजीवकृता वृत्तगर्तका ये भूयाः इति प्रसिद्धाः, सघुणकाष्ठादि च, यद्वा पुनरावृत्त्या पणगत्ति पंचवर्णा फुल्लिः सेवालः सलिल-  
 मप्ये सेमलमित्यादि। दकं भौमान्तरिक्षाप्लायः, शेषजलं स्वपरकायादिशस्त्रानुपहतं, एतेनास्यापि सजीवत्वमुक्तं, यदागमः—  
 “आऊ चित्तमंतमरुखाया अनेकजीवा पुढोसत्ता अन्नत्थ सत्थपरिणयेणं” “अन्येऽप्याहुः—“कुसुमकुंकुमांभोवन्निचितं सूक्ष्मजंतुभिः।  
 न रटेनापि वग्नेण, शक्यं शोधयितुं जलम् ॥ १ ॥” युक्तिश्च सात्मकं जलं भूमिखातस्वाभाविकसंभवात् दर्दुरवत्, तथा मष्टीति  
 कृष्णपीतरक्तधेतादिभेदात् अशस्त्रोपहता रजोरेणुर्करशीलातुवरीलवणोपलाद्यशेषपृथ्वीकायोपलक्षणमिदं, एकग्रहणे तज्जातीयग्रहण-

ईर्यापथि-  
 कीव्याख्या

॥२६६॥

मिति न्यायात् अनेनासावपि सजीवेत्याह, यदागमः—“पृथ्वी चित्तमंतमक्त्राया अनेकजीवा पुढोसत्ता अन्नत्थ सत्थपरिणयेणं”  
युक्तिथ—सात्मका विद्रुमलवणोपलादयः पृथ्वीविकाराः समानजातीयाङ्कुरोत्पत्तिप्रत्युपलम्भात् देवदत्ताशोमांसाङ्कुरवत्, अथवा  
दगमद्विचि क्षेत्रधाराद्यनुपहतभूमौ चिक्खिल्लः तत्र सङ्क्रमणे, एवं वणमद्वि तसमद्वि वणोदग तसोदगेत्यादयः शेषा नव द्विकत्रिकादि-  
संयोगा ज्ञातव्याः, तदुपलक्षणत्वादस्य, भणितं च—“तेऊवाउविहूणा एवं सेसाधि सबसंजोगा । नच्चा विराहणदुगं वजंतो जयसु उवउत्तो  
॥१॥” इह तेजोवाय्वोरग्रहणं गमनागमनादौ प्रायोऽसंभवात्, संभवे वा दावानलनद्यादौ स्वल्पविषयत्वेनाविवक्षणात्, एगेंदियेत्यत्र  
जातौ ग्रहीष्यमाणत्वाच्च, एतयोश्चैवं सात्मकत्वं—सात्मकोऽग्निः अथायोग्याहारोपादानेन वृद्धिविशेषतद्द्विकारवत्त्वात् पुरुषवत्, आहारेण  
वृद्धिदर्शनाद् चालकवत्, तथा सात्मकः पवनः पराग्रेरितनिगततिर्यग्गमनात् गोवत्, अन्यैरप्येषां पण्णां सात्मकत्वमभिधाय वि-  
राधनापरिहार उक्तः, तथा च भागवते पुराणे—“पृथिव्यामप्यहं पार्थ !, वायावग्नौ जलेऽप्यहम् । वनस्पतिगतश्चाहं, सर्वभूतगतो-  
ऽप्यहम् ॥१॥ यो मां सर्वगतं ज्ञात्वा, नैव हिंस्येत् कदाचन । तस्याहं न प्रणश्यामि, न चासौ मे प्रणशयति ॥२॥” संयोगास्त्र-  
सान्त्वा इहेति पुनस्तद्विशेषानाश्रियाह—मर्कटः लूताकोलिक इत्येकोऽर्थः निवेलिकारव्यो वृत्तापिपीलिकादि, लालाजंतूपलक्षणमिदं,  
सन्तानस्तल्लालाजालकं, प्राकृतत्वात् स्त्रीलिंगः, यद्वा सन्तानः—परस्परानुलम्भा कृमिकीटिकादिश्रेणिः, हारीति याः प्रसिद्धा, यदुक्तं  
आचारांगचूर्णौ—“अहया संताणओ पिपीलियाईणं” । तेषु संक्रमणे चक्रमणे या विराधना तस्याः प्रतिक्रमितुमिच्छामीति विशेषे-  
पहेतुसंपत् ४ । अथ कियन्तः शृंगग्राहिकया कथयितुं शक्यन्ते इति पञ्चमीं संग्रहसंपदमाह—‘जे मे जीवा विराहिया’ किं  
वद्दुता ?—ये केचनान्येऽपि सूक्ष्मा वादराः त्रमाः स्थावरा ज्ञाता अज्ञाता लक्ष्या अलक्ष्या मे—मया इहाऽऽत्मनिर्देशेन स्वकृतफल-

धीदे०  
वेत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२६८॥

भोजिनः प्राणिनः इति ज्ञात्वा स्वकृतपरिज्ञया आलोच्यमानं दुष्कृतं विफलीभवतीति ज्ञापयति, उक्तं च—“कयपावोवि मणुस्सो  
आलोइअ निदिउं गुरुसगासे । होइ अइरेगलहुओ ओहरियभरुव भारवहो ॥१॥” जीवा-उच्छ्वासायुष्कादिप्राणभाजिनः विराधिताः—  
प्रतिहूलमाचरिताः आभोगानाभोगसहसाकारादिना दुःखे स्थापिताः, एतस्या विराधनायाः प्रतिक्रमितुमिच्छामीति पूर्वेण योगः,  
तस्या वा दुष्कृतं मिथ्या मे भवत्वित्युत्तरेण वा संबन्धः, उक्तश्च—“आभोगमणाभोगे सहसाकारे य पडिकमणं” इति सर्वसंग्रहसंपत् ५।  
पताः प्रतिक्रमणश्रुतस्कन्धे पञ्च मूलसंपदः, तिस्रश्च उक्तानुक्तार्थसंपत्संग्राहितया चूलिकासंपदः, उभयमीलनेऽत्राष्टौ संपदः ।  
अभाणि च “अब्भुवगमो १निमित्तं २ओहे ३अरहेउ ४संगहे ५पंच । जीवविराहणपडिकमणभेयओ तिन्नि चूलाए ॥१॥” ते च के  
जीवा इति जीवभेदप्रतिपादका मूलतः षष्ठीसंपदमाह—एगिंदिया वेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया एकमेव स्पर्श-  
नलक्षणमिन्द्रियं येषां ते एकेन्द्रियाः—पृथग्व्यप्तेजोवायुमाधारणप्रत्येकजनस्पतयः, एवं स्पर्शनरसननामेन्द्रियद्वयोपेता द्वीन्द्रियाः  
कृमिशंखदयः, स्पर्शनरसनघ्राणारुख्येन्द्रियत्रयान्वितास्त्रीन्द्रियाः—मत्कुणयूकापिपीलिकादयः, स्पर्शनरसघ्राणचक्षुरूपेन्द्रियचतुष्टय-  
युक्ताश्रतुन्द्रियाः—कोलिकशुक्रनिहालादयः, स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्रसंज्ञेन्द्रियपञ्चकोपेताः पञ्चेन्द्रियाः—मत्स्यपशुपक्षिसर्पनरामरा-  
दयः, एषा जीवभेदसंपत् ६, अमी एकेन्द्रियादयः कथं कथं विराधिता इति विराधनाप्रकारप्रख्यापिका सप्तमी संपदमाह—“अभिहया  
वत्तिया लेसिया संघाइया संघट्टिया परियाविया किलामिया उइविया ठाणाओ ठाणं संकामिया जीवियाओ  
वचरोविया” सफेडघातपदास्फालिताः पश्चात्कृता वा प्रतिस्खलिता वा प्रतिक्षिप्ता वेत्यादि, अभिहता वत्तिता अकणत् पुञ्ज-  
पुञ्जीकृता अक्षरवद्वा इतस्ततो न्यस्ताः कर्पासादिवत् गाढाक्रान्ता वा कंटकादिवद् वा, धूल्यादिना निरुद्धा वृत्तिकृताः, श्लेषिता भूम्यादौ

ईर्यापथि-  
कीव्याख्या

॥२६८॥

लगिता ईपत् पिष्टा वा अन्योऽन्यगात्रादिभिर्वा लिङ्गनकादिवत् मीलिताः, संघातिताः घृतेलिकादिवत् पिण्डीकृताः, लोलावटीकृता इत्यर्थः निरुद्धाद्यर्थं स्वमल्लादिवद् वा मिथो गात्रैर्मिलिताः, संघट्टिता मनाक् पीडिताः, यदागमः—“जरजझरो य थेरो तरुणाणं जमलपाणिमुच्छहओ । जारिस वेयण देहे एगिंदियघट्टणे तहय ॥१॥” परितापिताः सर्वाङ्गं पीडिताः कृताल्पपीडा वा, कृमिताः कृतगाढपीडा ग्लानिं प्रापिता, जीवितावशेषीकृता यावत् अमद्राविताः, उट्टाविता वा—उत्त्रासिता भयात् केचित् उत्कर्णाभूय स्थिताः केचिच्च पलायन्ते स केचिच्च पिण्डीकाचटनादिना मूर्च्छिता इव निश्चेष्टाः संजाताः इत्यर्थः, स्थानात् स्थानं स्थानादपस्थानं वा संक्रामिता वा—उत्पत्तिस्थित्यादिना ईप्सितत्वेन स्वस्थानात् शुभस्थानाद्वा अनुत्पत्त्यादिना अनाश्रितत्वेन परस्थानं सञ्चारिता—नीताः स्थानभ्रष्टा कृताः, रोलविया भोलविया इत्येकोऽर्थः ‘जीवितात् व्यपरोपिताः’ प्राणेभ्य उत्पन्निता भ्रंशिता मारिता इत्यर्थः, एषा विराधना ७, ततः किमित्याह—‘तस्स मिच्छामिदुक्कडं’ पूर्वं यस्य विराधनाप्रकारस्य आलोचना कृता तस्याधुना मिच्छामिदुक्कडं, देमि इति शेषः, तस्स पडिकमामि इत्युक्तं भवति, आह च—“वोसिरिय पडिकमइ तस्स मिच्छुक्कडं देइ” यद्वा तस्य—उक्तार्थस्य विराधनाप्रकारस्य मिथ्यावशात् मूढत्वेन यन्मे दुष्कृतं—दुष्टु अयतनया विधानं तत्पुनरावृत्त्या दुष्कृतं—तदुत्थं पापं मिथ्या—विफलं भवत्वित्यर्थः, एषा विराधनाप्रकारसंपत् । इयं च अस्या गाथातः एवं व्याख्याता—“जीवा विराहिया पंचमी उ पंचिदिया भवे छट्टी । मिच्छामि दुक्कडं सत्तमीऽट्टमी ठामि उस्सगं ॥ १ ॥ ” अन्ये तु ववरोविया इत्यन्तां सप्तमीं मिच्छामिदुक्कडमित्यष्टमी-माहुः, भवति च सम्यग् मिथ्यादुष्कृतकर्तुर्विक्रमकुमारस्येवाशुभकर्मक्षयात् समीहितफलावाप्तिः, तथा चागमे—“जया ऊण किचि अन्नाणमोहपमाइयाइदोसेणं सहसा एगिंदियाईणं संघट्टाइ फयं हविआ तथा य पच्छा हा हा हा दुदुक्कयमम्हेहिं घणराग-

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२६९॥

दोगमोहमिच्छतत्राणांधेहिं अदिष्टपरलोपपचपावेहिं कूरकम्मनिग्धिणेहिंति परमसंवेगमात्रणे सुपरिष्फुटं आलोइत्ता निंदित्ता  
गरहित्ता पापच्छित्तमणुचरित्ता नीसल्ले अनाउलचित्ते असुहकम्मकूखयट्ठा किंचि आयहियं चिइवंदणाइ अणुट्टिजा तया तयट्ठे  
चेव उउत्ते से भविजा, तया य सेयतया तस्स णं परमेगग्गचित्तसमाही हवेजा, जया परतया चेव सच्चजगज्जीवपाणभूयस-  
चाणं अदिष्टफलसंपत्ती हविजा” अत्र चैवं निरुक्तोऽर्थः—मिच्छि मिउमद्वत्ते छत्तिय दोसाण छायणे होइ । मिच्छि य मेराइ ठिओ  
दुनि दुगुंछामि अप्पाणं ॥१॥ कत्ति कटं मे पावं दुत्तिय देवेमि तं उवसमेणं । एसो मिच्छाउकडपयकूखरत्थो समासेणं ॥२॥  
अथ ईर्यापधिकीग्रं व्याख्यायते, तच्चेदम्—‘इच्छामी’त्यादि, इच्छामि—अमिलपामि प्रतिक्रमितुं—निवर्तितुं, कुतः?—इरियावहि-  
याण १ विराहणाण २, ईर्या—गमनं तद्युक्तः पंथाः ईर्यापथः तत्र भवा ईर्यापधिकी विराधना—जंतुवाधा, मार्गे गच्छतां विराधनेत्यर्थः,  
तस्याः, अस्मिन् व्याख्याने ईर्यापथनिमित्ताया एव विराधनायाः प्रतिक्रमणं स्यात्, न तु शयनादेरुत्थितस्य, अतोऽन्यथा व्याख्या-  
तत्र ईर्यापथः—माघ्याचारः यदाह—“ईर्यापथो ध्यानमौनादिकं मिक्षुवतं” तत्र भवा ईर्यापधिकी विरोधना नद्युत्तरणशयनादिभिः  
प्राणातिपातादिका माघाचारातिक्रमरूपा तस्याः प्रतिक्रमितुं इच्छामीति योगः, क्व सति विराधना?—गमणागमणे, गमने च स्वस्था-  
नादन्यत्र आगमने च पुनः तत्रैव, तत्रापि कथं विराधना?—पाणकमणे इत्यादि, प्राणिनो द्वीन्द्रियादयः तेषामाक्रमणं—संघट्टनं एवं  
वीर्यकमणे, वीजानि—शाल्यादीनि हरियकमणे—हरितानि—शेषवनस्पतयः, आभ्यां च सर्ववीजानां शेषवनस्पतीनां च जीवत्व-  
माह, प्रयोगधात्र—सचेतना वनस्पतयः आहारादिमद्भावे वृद्धिमन्त्रादालकशरीरवत्, यो य आहारसद्भावे वृद्धिमान् स स सचेतनो  
यथा चालकशरीरं, वृद्धिमंतश्चैते आहारसद्भावे अतः सचेतना इति, इतश्च—सात्मका वनस्पतयः सर्वत्रगपहरणे मरणात् गर्दभवत्,



तथा ओसेत्यादि अवश्यायः—त्रेदः, अस्य च ग्रहणं बहुजीवाश्रयत्वेन सूक्ष्मोऽप्यपकायः परिहार्य इति ख्यापनार्थं, यदाह—जत्थ जलं तत्थ वणं जत्थ वणं तत्थ निच्छओ तेऊ । तेऊ वाऊ सहगया तसा य पचक्खया चेव ॥१॥ उदए पुढवितसवालकंटयेचि, उत्तिगा—भूमौ वृत्तविवरकारिणो गर्दभाकारा जीवाः कीटिकानगराणि वा, हरतनुकान्यन्ये, पनकः—पंचवर्णां फुल्लिः, तथा दगमृत्तिका अनुपहतभूमौ चिक्खल्लुः, यद्वोदकमपकायो मृत्तिका पृथ्वीकायः, एतेनानयोरपि सजीवत्वमुक्तं, तथाहि—सात्मका विद्भुमलवणोपलादयः पृथिवीविकाराः समानजातीयांकुरोत्पच्युपलंभाद्देवदत्ताशोमांमांकुरवत्, तथा सात्मकं जलं भूमिखातम्बाभाविकसंभवात् दर्दुरवत्, मर्कटसंतानः—कोलिकजालं यद्वा संतानः—कीटिकासमुदायः, यदुक्तमाचारांगचूर्णो—“अहवा संताणओ पिवीलियाईणं”ति, तेषां संक्रमणे—आक्रमणे, एतावता च पृथ्वीजलवनस्पतित्रसेति चतुर्जीवनिकायविराधनोक्ता, न तु तेजोवातयोः, तयोर्गमनाममने प्रायेणा संभवात्, एतयोस्त्वेवं सात्मकत्वं—सात्मकोऽग्निर्यथायोग्याहारोपादानेन वृद्धिविशेषतद्विकारवच्चात्, पुरुषवत्, आहारेण वृद्धिदर्शनात् चालकवत्, तथा सात्मकः पवनः पराप्रेरिततिर्यगनियतगमनात् गोवदिति, अन्यैरप्येषां पण्णां सात्मकतमभिधाय विराधनापरिहार उक्तः, यथा—पृथिव्यामप्यहं पार्थ !, वायावमौ जलेऽप्यहम् । वनस्पतिगतश्चाहं, सर्वभूतगतोऽप्यहम् ॥१॥ यो मां सर्वगतं ज्ञात्वा, न च हिंस्यात् कदाचन । तस्याहं न प्रणश्यामि, स च मे न प्रणशयति ॥ २ ॥” इति, अथ कियन्त्यः शृंगग्राहिकया कथयितुं शक्यंते इत्याह—‘जे मे जीवा विराहिया’, किं बहुना ?—सर्वथा ये केचन मया जीवा विराधिताः—दुःखे स्थापिताः, ते च के इत्याह—‘एगिंदिये’त्यादि, एकमेव स्पर्शनलक्षणमिन्द्रियं येषां ते एकेन्द्रियाः—पृथिव्यादयः एवं स्पर्शनरसनोपेता द्वीन्द्रियाः—शंखादयः स्पर्शनरसनघ्राणयुक्तास्त्रीन्द्रियाः—कीटिकादयः स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुस्समन्विताश्चतुरिन्द्रियाः—वृथिकादयः स्पर्शनरसन-

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२७१॥

धीरे०  
नेत्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥२७२॥

प्राणशुःश्रोत्रसहिताः पंचेन्द्रियास्तिर्यग्नरामरादयः, विराधनाप्रकारमाह—‘अभिहये’त्यादि, अभिमुखमागच्छंतो हताः—पादेन ताडिताः उत्थिष्य क्षिप्ता वा अभिहताः, रतिवाः—पुंजीकृता धूल्यादिना वा स्थगिता गाढाक्रांता वा श्लेषिता—भूम्यादौ लगिता ईपत् पिष्टा वा अन्योऽन्यालिगनं वा कारिताः संघातिता—मिथो गात्रैः पिंडीकृताः पुंजीकृता वा संघट्टिता—मनाक् स्पृष्टाः परितापिताः—मर्षतः पीडिता ईपत् कृतपीडा वा क्लामिताः—कृतवहुपीडाः ग्लानिं प्रापिता जीवितावशेषाः कृता इत्यर्थः, अपद्राविता—उप्रासिताः कृतमूर्छा वा स्थानात् स्थानान्तरं संक्रामिताः—स्वस्थानात् परस्थानं नीताः, जीविताद्यपरोपिताः मारिता इत्यर्थः, ‘तस्म’त्ति अभिहयेत्यादिविराधनाप्रकारस्य ‘मिच्छा मे दुक्कडं’ति मिथ्या मे दुक्कृतं, एतदुक्कृतं मिथ्या—विफलं मे भवत्वित्यर्थः, अस्य चैतन्निरुक्तं—“मिति मिउमदत्ते छत्तिय दोसाण छायणे होइ । मेत्ति य मेराइ ठिओ दुत्ति दुगुंछामि अप्पाणं ॥१॥ कत्ति कडं मे पावं डत्तिय डेवेमि तं उरममेणं । एसो मिच्छादुक्कडपयक्खरत्थो समासेणं ॥ २ ॥” सम्यग्मिथ्यादुक्कृतकर्तुर्विक्रमसेन-दुमारस्येव शाम्येत अशुभं कर्म, तत्कथा चैवं—

अत्थि सयलामरहियं सुरपुरमिण सुरपुर जईकलियं । तत्थासि नमिरनरवरवक्को चक्काउहो राया ॥ १ ॥ कमलदलच्छी लच्छीय नदीणया नम्मया पिया तस्त । विक्रमसेणो पुत्तो सो उण जूएण रमइ सया ॥ २ ॥ मज्जपसंगी वेयाइ परिगओ मंगभक्कणपयट्ठो । पारिद्धीलुद्धयुद्धी विडंवेए परकलत्ताइं ॥३॥ मितिं काऊण तलररेण निसि पट्टणं मुयावेइ । गुत्तनरेहिं नाओ तुत्ततो एस नरवइणा ॥४॥ तत्तो निडालतडघडियधुडिलफुडभिउडिभासुरमुहेण । रत्ता भणिओ कुमरो रे पात्र ! अणज्ज निह्छज्ज ॥५॥ दुजाय मुक्कमजाय मायापिउलोयजणियदुक्खोहो । ओमर ओमर कहु मह दिट्ठिपहाओ महापात्र ! ॥ ६ ॥ इय तज्जिओ

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२७३॥

स पिउणा लहु नयरा निग्गओ अमरिसेण । पत्तो कमेण एगं पलिं पल्लीवई तत्थ ॥ ७ ॥ तस्सागिइउब्भडभणियवयणरयणाइरं-  
जिओ बाढं । तं पल्लिवई भणइ भो इह चिट्ठसु सया सुहिओ ॥८॥ कइयावि हरिणइणा विणासिए तंमि पल्लिनाहंमि । भिल्लज-  
णपणयचलणो जाओ सो चेव तत्थ पहू ॥ ९ ॥ अणरयसत्तसंघायघायउप्पज्जमाणगुरुहरिसो । थीवालबुद्धवीससियपमुहजणवं-  
चणप्पवणो ॥१०॥ पयईइच्चिय निस्संमच्चिट्ठओ पावधत्थबुद्धी य । किं पुण तविहवहुपापपयइज्जणजणियसंतोसो ॥ ११ ॥ इत्तो  
कुसुमपुराओ वेसमणो नाम सत्थवाहवरो । उग्घोसणपुव्व चलिय विविहजणनिग्रहसंजुत्तो ॥ १२ ॥ बहुपणियपुन्नखरकरहवसह-  
गुरुगंतिवेसरसमूहो । नियजीवियं व सत्थं महया जत्तेण रक्खंतो ॥१३॥ कयतोसो बहुमुणिणा मुणिवइणा सिरिसमंतभद्दे-  
ण । कुंभपुर पइ चलिओ तं पल्लिपएसमणुपत्तो ॥ १४ ॥ अह उद्धामरतडिदडडंवरो जलहरो जलभरेण । सवत्थ पसरिएणं  
करेइ जलहिं व महिवलयं ॥ १५ ॥ तो मुणिवइणा मुणिणो भणिया भो नियह महियलं एयं । पयपयहनवयअंकुरपूरतससहससं-  
किन्न ॥१६॥ एयारिसमि काले समणाणं नेव विहरिउं जुत्तं । तो इहयं पल्लीए उरस्मयं किंपि जाएह ॥१७॥ इय जा कहिति  
गुरुणो ता विकमसेणसंतिया धाडी । पडिया तीइ खणेणवि सत्थो गलहत्थिओ सबो ॥१८॥ नवर विकमसेणस्स वड्डणाभिह-  
पदाणपुरिसेण । पिउणो गुरुत्ति काउं भिल्लेहिं रक्खिया गुरुणो ॥१९॥ नियनियपल्लिपएसे मुक्का एगंमि समुच्चियनिहंमि । मुणिवइणा  
सह मुणिणो ठति तहि विविहतनिरया ॥२०॥ सिरिममंतभद्दस्स सूरिणो सुक्कज्ञाणजोगेण । अन्नदिणे उप्पन्नं संपुन्नं केवलं नाणं  
॥२१॥ अह सन्निहियसुरेहिं पहयाओ दुंदुहीउ गयणंमि । पणवन्नकुसुमबुद्धी मुक्का ज्ञणज्ञाणिरभसलउला ॥२२॥ सुरसुंदरीहिं नइं पय-  
ट्टियं तयणु पल्लिनाहेण । पुट्ठा पल्लिनरा किमिणंति तेऽवि तं कज्जममुणंता ॥२३॥ अन्नमुहनिरिक्खणपारा जाव किंपि नहु विति ।

विक्रम-  
सेनकथा

॥२७३॥

श्रीदे०  
चैत्र० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२७४॥

ता वदनेन युक्तं एगमणो सुणसु निरपुत्त ! ॥२४॥ पुच्चुल्लूरियसत्थस्स मज्झओ इय ठिया इमे मुणियो । एसिं गुरुणो जायं  
संपइ किर केवलं नाणं ॥२५॥ तम्महिमकए एए देवा इत्थागया सदेवीया । तो विम्हयरसभरिओ पल्लिवई तत्थ लहु पत्तो ॥२६॥  
ददुं मुणिदचंदं वदनकिरणेहिं तममवहरन्तं । तह अमरोहं सोहंतकुंडलं परमसुंदरं ॥ २७ ॥ तो नमिय केवलमुणिं निवतणओ  
पुच्छए कइ मुणिंद ! । गम्मइ एरिसअमरेसु तहय नरतिरिक्खजोणीसु ? ॥२८॥ “आइ गुरु निवनेदण ! जिपरक्खासच्चवयणवंभेहिं ।  
मंगाइवअणेण य गम्मइ एयारिसमुरेसु ॥ २९ ॥ पयईइ तणुऊसाओ दाणरओ सीलसंजमविहूणो । मज्झिमगुणेहिं जुत्तो जीवो  
अजेइ नरजम्मं ॥३०॥ उम्मग्गदेसओ मग्गनासओ गूढहिययमाइल्लो । सढसीलो य ससल्लो तिरिआउं वंधए जीवो ॥३१॥ जी-  
यवहणेण पलमक्खरणेण पारिद्विपमुहवसणेहिं । परघणहरणाईहि य गम्मइ जीवेहिं नरएसु ॥३२॥” इय सुणिय गुरुगिरं गुरुऽणु-  
तापपरिगयमणो भणइ कुमरो । गंतवं केवलपावकारिणा मे धुवं नरए ॥३३॥ नत्थिहु कोऽवि उवाओ जेणं एयाउ पावपडला-  
ओ । अप्पाणं सोधाविय पडेमि नहु नरयकूवंमि ॥ ३४ ॥ “गुरुराह मृण उवायं कुमार ! तं देसु पावखवणकए । नियदुकडेसु  
मिच्छामि दुक्कटं अपुणकरणेण ॥३५॥ जहा विसं कुट्टगयं मंतमूलविसारया । विजा हणंति मंतेहिं, तो तं हवइ निविसं ॥३६॥ एवं  
अट्टविदं कम्मं, रागदोससमखियं । आलोयंतो य निंदंतो, सिप्यं हणइ सुसावओ ॥३७॥ आवस्सएण एएण सावओ जइवि बहुरओ  
होइ । आलोयंतो य निंदंतो सिप्यं हणइ सुसावओ ॥ ३८ ॥ तथाहि-पाणिवहालियचोरियमेहुणघणमुच्छरयणिभत्तेहिं ।  
कुमर ! विहियंमि पावे तं मिच्छादुकुडं देसु ॥ ३६ ॥ महुमंसभवत्तणेणं सुराइपाणेण सत्तवसणेहिं । कुमर !  
विहियंमि पावे तं मिच्छादुकुडं देसु ॥३७॥ गुदकोयमाणमायालोभेहिं रागदोसमोहेहिं । कुमर ! विहियंमि पावे

विक्रम-  
सेनकथा

॥२७४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
वर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२७५॥

तं मिच्छादुक्कडं देसु ॥ ३८ ॥ जिणदिट्ठनाणदंसणचरणगुणाइसु पओसकरणेहिं । कुमर । विहियंमि पावे तं  
मिच्छादुक्कडं देसु ॥३९॥ साहूण साहुणीण य धम्मियलोयाण धम्मभंसेण । कुमर ! विहियंमि पावे तं मिच्छा-  
दुक्कडं देसु ॥४०॥ मिच्छत्तं अहिगरणं अन्नंपि हु जं कयं तए पावं । असुहमणवयतणूहिं सव्वत्थवि तत्थ नि-  
वत्तणय ! ॥४१॥ हा दुइदु कयं हा दुइदु कारियं अणुमयंपि या दुइदु । इय पच्छायावपरो तं मिच्छादुक्कडं देसु  
॥४२॥ इय मिच्छादुक्कडसुद्धसुगुरुपयडियविसल्लसोहीए । तरणिपहाए व तमं तुह पावं खिज्जिही नूणं ॥ ४३ ॥ किंच-मिच्छादु-  
क्कडदाणंमि विहियचित्तस्स पाणिणो सययं । सग्गापवग्गलच्छीवि दुल्लहा होइ नहु भइ ! ॥४४॥ यदागमः-“जस्स य इ-  
च्छाकारो मिच्छाकारो य परिचिया दोवि । तइओ य तहकारो न दुल्लहा सोगई तस्स ॥४५॥” ततो अतुच्छप-  
च्छायावो गुरुणा जहा जमाइदं । तह तं सव्वं काउं कुमरो गिण्हेइं गिहिधम्मं ॥ ४६ ॥ यज्जइ सत्तवि वसणे नियसीमाए करावइ  
अमारिं । अणवरयं केवलिणो सुस्ससाए दिणे गमइ ॥४७॥ वित्ते वासारत्ते अन्नत्थ विहारउज्जुए गुरुणो । कित्थियमित्तंपि भुवं  
अणुवइउं भणइ दीणमणो ॥ ४८ ॥ मुणिपहु नहु पुवभवे पुण्णमखंडं मए कयं नूणं । जं होउ तुम्ह जोगो पुणवि विओगो इमो  
होइ ॥४९॥ यतः-“महद्धिः पापात्मा विरलमपि संगं न लभते, वियोगं प्राप्नोति क्षणमपि न तैः पुण्यसहितः ।  
अतः किंचित्पापं सुकृतमपि शंके स्वविषये, भवद्धिः संसर्गः कथमथ कथं चैप विरहः? ॥५०॥” ता अंसुपुण्णन-  
यणो पुणो पुणो नमिय सरिणो मुणिणो । पच्छामुहं नियंतो कुमरो पत्तो सए थाणे ॥५१॥ निचं पसंसए धम्मवद्धणं वद्धणं निय-  
पहाणं । परोवयारकारित्तणेण जणयं व तं नियइ ॥५२॥ पुवकयदुक्कए सरिय सरिय मिच्छामिदुक्कडं देइ । निंदेइ निययच-

विक्रम-  
सेनकथा

॥२७५॥

श्रीदे०  
शैल्य०श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२७६॥

रियं गरिहद् धिजीप्रियं पुष्टिं ॥ ५३ ॥ प्रिचिगिच्छद् निचअकिच्चकारिणं वेरिणं पिव कुसंगं । खिसइं पल्लिनिगासं स मणोरहे  
कुणइ इय हियए ॥ ५४ ॥ कइया सुतित्थपडिमा मुणिणो संनाणिणो अहं नमिहं ? । मंदरगिरिसिहरसिरं कयाइ  
जिणमंदिरं दच्छं ॥ ५५ ॥ कुसमयमइनिम्महणं जिणपवयणमहं कया निसामिस्सं ? । कइया पूइस्सं धम्मका-  
रिलोयं चरालोयं ॥ ५६ ॥ इय फुरियसुद्धभावो जिणधम्मे ठविय निययपरिवारं । जा गमइ दिणे कुमरो ता पत्ता तत्थ पिउपु-  
रिना ॥ ५७ ॥ ते वेत्तिणा विमुक्का काउं उचियं कुमारमिणमाहु । रायसुय ! तुज्झ चरियं चित्तकरं सुणिय देवेण ॥ ५८ ॥ तुम्हाण-  
यणनिमित्तं अम्हे इह पेसिया तओ तुब्भे । लहु एह निययनयरे नीईए कुणइ नियरजं ॥ ५९ ॥ तो वद्धणमंतेणं पल्लीं सुत्थं करेवि  
कुमरपरो । जणयपुरिसेहिं सहिओ सपरियणो सुरपुरं पत्तो ॥ ६० ॥ पणओ पिउचलणेसुं गाढं आलिं गिऊण हरिसेण । भणिओ  
पिउणा मिउणा वयणेणं वच्छ ! तुह कुमलं ॥ ६१ ॥ अम्हच्चिय पुत्तेहिं जाओसि तमिण्हि एव धम्मपरो । अइदुक्करं च पयईइ  
रुंभणं ते कयं किहणु ? ॥ ६२ ॥ यतः-उब्भडसडाकडप्पो हरीवि रुंभई करीवि गुरुदप्पो । गुरुएहिवि नहु तीरइ  
पयईए रुंभणं काउं ॥ ६३ ॥ आह कुमारो तायप्पसायओ कुसलमत्थि मज्झ सया । गुरुपायपसाएणं पयईए रुंभणं जायं ॥ ६४ ॥  
पिउणा पुट्टो मधं नियउत्तंतं कहेइ जा कुमरो । ता सिरिम्ममंतभद्दा सुखिरिट्ठा तहिं पत्ता ॥ ६५ ॥ अह चक्काउहराया विक्रम-  
सेणो अमंदआणंदो । सारपरिवारसहिया पत्ता गुरुचरणनमणकरा ॥ ६६ ॥ हरिसंसुपुन्ननयणो वियसियवयणो पसन्नमणकरणो ।  
भत्तिवहुमाणसारो धुणेइ गुरुणो इय कुमारो ॥ ६७ ॥ तथाहि-“संरूपोऽपि न कल्पतल्पजतरौ चिंता न चिंतामणौ,  
कामः कोऽपि न कामकुंभविषयो नो चित्रकृचित्ररुः । मन्ये कांचनपुरुषोऽपि पुरुषो नो कामधेनौ मनो, यत्ते श्री-

विक्रम-  
सेनकथा

॥२७६॥

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२७७॥

मुनिराजपादकमलद्वंद्वं मया वंदितम् ॥६८॥ अंहःसंहतिमाशु लुंपति धृतिं धत्ते विधत्ते शिवं, चारित्रं चिनुते  
निहंति कुमतिं भिन्ते भृशं दुर्गतिम् । पुष्पात्यद्भुतशुद्धबुद्धिमहिमाः श्रीधर्मकीर्तिप्रभाः, श्रीवाचंयमराज ! भ-  
व्यभविनां पादप्रसादस्तव ॥ ६९ ॥” तयणु-निवकुमरप्पमुहाए सयलपरिसाइ गरुयहरिसाए । दुंदुहिउदामसरं इय धम्मकहं  
कहइ भयवं ॥७०॥ “भो भो भयणवे इह निमज्जमाणेण सबसत्ताणं । नित्थारणे समत्थो धम्मुच्चियस्तुच्छवोहित्थो ॥७१॥ सो  
दुविदो मुणिगिहिधम्मभेयओ तत्थ समणधम्मो य । सावज्जकजवज्जनिरवजासेवणपहाणो ॥ ७२ ॥ इच्छा मिच्छा तहकार  
आवस्सहिया तहय निसीहिया । पडिपुच्छ छंदण निमंतणा य उवसंपया दसमी ॥७३॥ इय सामायारिपरो  
(प्र० तहकारो आवस्सिया य निसीहिया । आपुच्छणा य पडिपुच्छ छंदणा य निमंतणा ॥७४॥ उवसंपया य  
संमं गामकुलाइसु ममत्तपरिहारो । अप्पडिबंधविहारो आहारोवहिपमुहसंसुद्धी ॥७५॥ गुरुभत्ती तवसत्ती निहं-  
कियनिघकिचअणुरत्ती । अत्थमियविसयतत्ती सव्वत्थाणुचियविणियत्ती ॥ ७६ ॥ बालाईपडियरणं उवसग्ग-  
परीसहाण निरुसहणं । एमाइ समणधम्मो सिग्घं सिवलच्छिसंजणगो ॥ ७७ ॥ एयअसत्ताणं पुण सत्ताणं वीयओ  
दुवालसहा । होइ गिहीणं धम्मो कमेण सिवदायगो सोऽवि ॥७८॥” तो संवेगोवगओ पिउणोऽणुन्नवियं कहवि पवज्जं । केवल-  
नाणिसमीवे विक्कमसेणो पवजेइ ॥७९॥ गुरुणा सह विहरंतो पंचविहायारहारकयसोहो । मिच्छामि दुक्कडं मुहुदितो थोवेऽवि  
अवराहे ॥८०॥ निवभग्गमयणसेणो विक्कमसेणो मुणी समयविहिणा । परिचइऊणं पाणे पाणयकप्पे सुरो जाओ ॥८१॥ तो चविउं  
महिलाए पुरीइ नमिणो निवस्स संजाओ । पुत्तो जसोहराए पियाइ सो चारिसेणुत्ति ॥८२॥ बहुनिवइतणयसहिओ सिरि-

विक्रमसेन-  
वृत्तं

॥२७७॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संग-  
चारिणी  
॥२७८॥

पामजिणिंदस्स पास गहियवओ । होउं गणहरदेवो सिद्धिं पत्तो धुयकिलेसो ॥८२॥ एवं विक्रमसेनवृत्तमतुलं संचित्य चित्ते चिरं,  
पथात्तापहुताशभासुरशिखानिर्दग्धपापद्रुमाः । निःशेषार्जितकर्मजालहतये मोक्षैकवद्वस्पृहा, मिथ्यादुष्कृतमावधानमनसो भव्या !  
भांतु स्फुटम् ॥८३॥ इति मिथ्यादुष्कृते विक्रमसेनकुमारदृष्टांतः ॥ २६ ॥ एवमालोचितप्रतिक्रांतः कायोत्सर्गप्रायश्चित्तेन  
पुनरात्मविशुद्धयर्थं प्रतिक्रमणविशेषरूपां अष्टमीसंपदमाह-तस्स उत्तरीकरणेणं ( पायच्छित्तकरणेणं ) विसोहीकरणेणं  
विसह्रीकरणेणं पायाणं कम्माणं निग्घायणट्टाए ठामि काउस्सग्गं ॥ तस्स-आलोचनाप्रतिक्रमणादिनाऽशुद्धातिचारस्यो-  
त्तरीकरणादिना ठामि काउस्सग्गमिति योगः, यद्वा तस्सत्ति प्राकृतत्वात्तेषां गमनादिप्रभयानां पापानां कर्मणां निर्घातनार्थं कायो  
त्सर्गं करोमीति योगः, यद्वा ष्यं-तेमिं गमागमाईममुत्थपात्राण घायणनिमित्तं । उस्सगे ठामि अहं उत्तरकरणाइहेऊहिं ॥ १ ॥  
(३८३) तत्रानुत्तरस्योत्तरस्य करणं पुनः संस्कारद्वारेणोपरिकरणं शलाकादिशोधितदेहव्रणादेः पिंडीबंधप्रलेपादिनत् उत्तरीकरणं  
तेन हेतुना, तदर्थमित्यर्थः, 'अपराहसल्लपभजो भावणो होइ नायव्वो' इति वचनात् तस्यालोचनाप्रतिक्रमणादिना शोधितस्य  
विरागनाप्रकारान्यभाषणस्य संरोहणार्थं प्रलेपादिकल्पं ध्यानमौनांगचेष्टानिवृत्त्यादि करोमि १, एतच्च प्रायः प्रायश्चित्तकरणेन  
संस्कारि स्यात्, प्रायश्चित्तं च यथा द्रव्यत्रणे कृतेऽपि प्रलेपादौ लावणिकाद्युद्भाव्यदोषप्रसंगमीत्या रक्तचंदननीलितिलकादि  
क्रियते तथाऽप्राप्यनप्रत्याद्यनुत्पत्तये पंचविंशतिउच्छ्रामादिना कायोत्सर्गाख्य पंचमं प्रायश्चित्तं, भणितं च-"तस्स य पायच्छित्तं जम्म-  
ग्गविऊ गुरू उवइसंति । तं तं आयरियव्वं अणत्थपसंगभीएणं ॥१॥ इकेण कयमरुज्जं० गाहा, तथा-करोत्यादौ तावत् सघृणहृदयः  
निदिदशुभं, द्वितीयं सापेक्षो विमृशति कार्यं च कुरुते । तृतीयं निशंको विगतघृणमन्यत् प्रकुरुते, ततः पापाम्यामात् मततम-

तस्म उत्त-  
रीव्याख्या

॥२७८॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२७९॥

शुभेषु प्ररमते ॥ १ ॥ निरुक्तोऽर्थस्त्वयं-पावं छिंदइ जम्हा पायच्छित्तं तु भन्नए तेण । पाएण वावि चित्तं जीवमओ वावि सोहेइ ॥१॥ तेण पायच्छित्तं आर्पत्वात् फल्काद्युना प्रक्षालनात् भूतभाविपूत्यादिशुद्धिः क्रियते, तथा अत्रापि निंदागर्हादिनाऽतिचारम-  
लक्षालनतः आत्मनो नैर्मल्यकरणं तेन हेतुना, न विशोधिः कृताऽपि विशल्यत्वं विना किञ्चिदित्याह-विसोहीकरणेणं विसल्ली करणेणं,  
यथा दीपांक्रूरकिलीकापातादि विना धाव्यमानमपि घणादि न प्रसरन् निरोद्धुं शक्यते तथेदमपि भावतः परिकुञ्चितं सनिदानमिध्या-  
भावं वाऽऽलोचनानिंदादिविधानं पूत्यादिकल्पदुर्लभघोषित्वादि कृत्वा दीर्घसंसारतया प्रसरदुर्निवार्यमित्यविशल्यस्य विशल्यस्य करणं  
विशल्यीकरणं, मायादिशल्यानुद्धृत्येत्यर्थः, उक्तं च-“ता उद्धरंति गारवरहिया मूलं पुणभवलयाणं । मिच्छादंसणसल्लं मायासल्लं  
नियाणं च ॥१॥” तेन हेतुना किं ?-पावेत्यादि, पापानां-अशुभानां अशुभबंधहेतूनां कर्मणां प्राणाक्रमणाभिहननादिक्रियालक्ष-  
णानां तत्कार्याणां वा ज्ञानावरणीयादीनां निर्घातनार्थं-विनिवृत्त्यर्थं चिलातिपुत्रचत्तिष्ठाभि, धातूनामनेकार्थत्वात् करोमि कायो-  
त्सर्ग, ‘ठिओ निसन्नो निवन्नो वे’ति वचनाद्धर्षस्थित्याशासनविशेषं, उक्तं च-“प्रलंचितभुजठंढमूर्ध्वस्थस्यासितस्य वा । स्थानं काया-  
नपेक्षं यत्, कायोत्सर्गः प्रकीर्तितः ॥१॥ वागंगव्यापारनिपेधेनाशुभकर्मच्छित्त्यै दुष्टनेष्टितस्य कायस्य त्यागं करोगीत्यर्थः, यदाह-  
“काउस्सग्गे जह सुद्धियस्स भजंति अंगमंगाइ । इअ भिजंति सुविहिया अट्टविहं कम्मसंघायं ॥१॥ जह करगओ निकितइ दारुं  
इतो पुणोवि वचंतो । इअ कचंति सुविहिया काउस्सग्गेण कम्माइ ॥२॥ पूर्वश्रुतचिलातिपुत्रचरित्रभिदम्—

रायगिहे भद्दाए धणसिद्धिस्सासि सुंसुमा दुहिया । पणसुयअणुजाया तीइ चालहारो चिलाइसुओ ॥१॥ वहवे बहुवेराइं  
जणे कुणंतो धणेण मोणयरा । नयराइआउ निकासिओ गओ सीहगुहपल्लि ॥२॥ तहिं पल्लिअइमि मए जाओ पल्लीवई कयाइ तओ ।

तस्स उच-  
रीव्याख्या

॥२७९॥

चोरे भणइ जह धणो रायगिहे अरिध भूरिधणो ॥३॥ धूया य सुंसुमा से सा मज्झ धणं तुहंति वुत्तु गओ । तेहिं समं रायगिहे  
 रायगिहे सयललच्छीणं ॥४॥ ओसोवणिं पउंजिय जा पविसइ धणगिहे धणो ताव । पणसुअसहिओ नट्टो मुट्टो से तकरेहिं धरो ॥५॥  
 तह करगइ नित्तिसो नित्तिसो गहियकमलनित्तिसो । तं सुंसुमं चिलाइ व लाउ गओ भणिय इय सइ ॥६॥ जो अन्नमाउदुद्धं पाउमणो  
 एउ सो इहं मुहडो । सधणं हरिय धणमुअं एसो गच्छइ चिलाइसुओ ॥७॥ अह आणेह सुयं मे हरिअधणं वोत्ति भणिय पुररक्खे ।  
 पुत्तेहिं तलवरेहि य सह तप्पुट्टीइ जाइ धणो ॥८॥ इय पीयं इय वुत्थं इय भुत्तं सुत्तमिति भणिरेहिं । पइएहिं लहु नीया चोरासन्नं  
 तलवरा से ॥९॥ अह हण अह हण अह गिण्ह २ सीउं तु तग्गिरं चोरा । मिल्हिअ धणं पलाणा सव्वस्सवि वल्लहं जीअं ॥१०॥  
 तं गहिय धणं विउलं वलिआ आरक्खगा तओ इत्ति । जं होइ सिद्धकज्जो सव्वोऽविहु अन्नहामइओ ॥११॥ तरुणो लया थलं  
 जलमन्नपिहु सुंसुमामयं पस्सं । पीयकणउव्व कणयं चलिओ पुरओ धणो ससुओ ॥१२॥ अह आसन्नमि धणे मा हवउ इमा इमस्स-  
 वित्ति वुट्टीए । छित्तु सिरं से गहिअं गओ निअंतो चिलाइसुओ ॥१३॥ तो सुंसुमाकवंधं ददुट्टु धणो विलवए वहुं ससुओ । नयणं-  
 जलीहिं दितो तीइ जलं वंऽसुपूरेण ॥१४॥ हा सुअणवच्छले ! वच्छि ! उच्छवं मोइओ सुवच्छल्लो । काहं नियवच्छीए इअ वंछा  
 आसि मह वच्छे ! ॥१५॥ हा जइ न दुदुट्टु वुद्धिं अकरिस्सं ता कयाइ बहुधणओ । निअपुत्तिममोइस्सं ता कह जायत्ति अमई मे  
 ॥१६॥ इअ सोगसंकुकीलिअहिययो सो इरिउं पडिनियत्तो । पत्तो रणं जं जिणगिहं व बहुसाययाइणं ॥१७॥ चितइ सव्वस्सखओ  
 कह ? कह व मया सुया य पाणापिआ ? । कह आवया व ससुअस्स मह हा हा विलसिअं विहिणो ॥१८॥ सो असमत्थुण्हतण्हा-  
 मज्झण्हिअतावतापिओ पत्तो । संतविअपणग्गितवो तो रायगिहं व रायगिहं ॥ १९ ॥ अह तत्थ समोसरिअं वीरजिणं नमिय

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२८१॥

विन्नवेइ धणो । पइ ! केण कम्मणा एअमावयं सुंसुमा पत्ता ? ॥२०॥ भणइ पइ आसि पुरे खिइप्पइट्टंमि जण्णदेवदिओ । पंडि-  
अमाणी निंदइ जिणं च जिणसासणं च वहुं ॥२१॥ अइ तं पबोहखुडो असहंतो सुत्थियायरियसीसो । गुरुणा वारिजंतोवि  
उवट्ठिओ तस्स वाएण ॥२२॥ जो जेण जिप्पई सो तस्सीसो ठाविउं इय पइन्नं । भण किंचित्ति असुड्ढेण तो खुड्ढेणं भणइ इमो ॥२३॥  
नत्थि धुवं सव्वन्नू इति पक्षः, पमाणपंचगअगोयरत्तेण इति हेतुः । जं जं पमाअगिज्झं तं तमसंतं इति व्याप्तिः खपुप्फं व इति  
दृष्टांतः ॥२५॥ उवलब्भइ न पमाहिं सव्वन्नू इत्युपनयः, तेण नत्थि नूणं सो इति अवसायः । अथ दोपोद्धारः—एस अदूसो पक्खो  
लोयविरुद्धाइरहिओ जं ॥ २५ ॥ हेऊवि असिद्धाईरहिओ देसाइअंतरेवि जओ । नत्थि परो सव्वन्नू इति नासिद्धः, तहउणेण न  
सिज्झइ विरुद्धं इति न विरुद्धः ॥२६॥ तह तस्स नत्थि सत्ता अविय सदा अणुवलब्भमाणस्स इति नानैकांतिकः । सचमयधिय  
वित्थरदिट्ठंतोवणयअवसाया ॥२७॥ तह नहु पच्चक्खेणं उवलब्भइ इत्थ कोइ सव्वन्नू । जं सइरुवरसगंधफासरुवो न इट्ठो सो ॥२८॥  
ता सहेण न सुव्वइ भंभाइसरुव्व सो उ चक्खूहिं । तह रूव्व न दीसइ आसाइअइ नहु रसुव्व ॥२९॥ गंधव्व न जिंधिअइ चेइ-  
अइ नेव धूलिफरिसुव्व । इअ पच्चक्खअविसओ अणुमाणेणवि न सो गिज्झो ॥३०॥ जं हेउभाअओ तं नत्थि अ सव्वन्नूसाहगो  
हेऊ । धुत्तकयउन्नन्नविरुद्धआगमो साहइ न एअं ॥ ३१ ॥ कइ सारिस्सअभावा पवइ उवमावि एयसिद्धिकए । अत्थापत्तीवि न  
अत्थसाहगा गुणअदंसणओ ॥ ३२ ॥ इअ पंचपमाईओ जिणो अभावप्पमाणविसयगओ । तदभावे किं जिणसासणंति चिच्छय !  
पइण्णा मे ॥३३॥ युल्लेइ चिच्छओ जन्नदेव ! इह किं तया न सव्वन्नू । दिट्ठो उय अत्तेहिवि ? जइ भवया तो नणु सदोसो ॥३४॥  
जं माउविवाहपियामहादि दिट्ठा न ते न ते जाया इति विरुद्धः । तह दूरदेससंठिअगिरिनगराई न किं संति ? ॥३५॥ इय सव्वन्नूवि

चिलाति-  
पुत्रकथा

॥२८१॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२८३॥

धोक्स्वरेहिं मह कहसु अन्नदा तुहवि । सकिवाणेण किवाणेण छिदिहं सिरमिमीएव्व ॥५३॥ सालिब बोहिवीयं खित्तं इह पल्ले  
व वड्ढिहिइ । इय मुणिभणियं उवममविवेयसंवर इह विहेया ॥ ५४ ॥ चारणमुणी लहु गओ गयणे गरुडुव्व तो इमस्स इमे ।  
मंतुव्व परावत्तंतस्सुल्लसिओ इमो अत्थो ॥ ५५ ॥ कोहाईण उवसमो स्वममउ पज्जवविमुत्तिओ किचो । दव्वचयणं विवेओ स हवउ  
असिए य सिरचाया ॥ ५६ ॥ मणकरणाण निवित्तिं विसएहिं संवरो करेमि तथा । इय चित्तिरो अविचलं काउस्सग्गा इमो ठाइ  
॥५७॥ सरुहिरमंगंति तओ व कीडीहिं कयं घुणेहिं दारुव्व । कयपावकम्मघाओ दिवं गओ सड्डुदिणं सो ॥५८॥ जो तिहिं पएहिं  
सम्मं समभिगओ संजमं समभिरूढो । उवसमविवेयसंवर चिलाइपुत्तं नमंसामि ॥ ५९ ॥ अहिसरिया पाएहिं सोणियगंधेण जस्स  
कीडीओ । खाइंति उत्तमंगं तं दुक्करकारयं वंदे ॥६०॥ धीरो चिलाइपुत्तो मूइंगलिआहिं चालिणिव्व कओ । जो तहवि खजमाणो  
पडिवन्नो उत्तमं अट्ठं ॥६१॥ अट्ठाइजेहिं राइंदियेहिं पत्तं चिलाइपुत्तेण । देविंदामरभवणं अच्छरगणसंकुलं रम्मं ॥६२॥ थुत्वा चिला-  
तेस्तनयस्य कायोत्सर्गादहो पातककर्मघातम् । कुर्वीत चेष्टामिभवस्वरूपे, द्विधापि तस्मिन् करणाय यत्नम् ॥६३॥ इति कायोत्स-  
र्गात् पापनिघतिं चिलातिपुत्रचरित्रम् ॥ किं सर्वथा कायोत्सर्गं करोति?, नेत्याह—‘अन्नत्थ ऊससिएण’मित्यादि, एतदर्थ-  
श्रैत्यस्तवदण्डकेऽभिधास्यते, ‘इरिउस्सग्गपमाणं पणवीसुस्सासे’ति वचनात् पंचविंशत्युच्छ्वासपूरणार्थं ‘चंदेसु निम्मलयरा’इत्यंतं  
चतुर्विंशतिस्तवं मनसा विचिंत्य नमो अरिहंताणंति भणन् कायोत्सर्गं पारयित्वा पुनश्चतुर्विंशतिस्तवं सकलं वाचोचरति । एवमी-  
र्यापथिकीं प्रतिक्रम्य क्षमाश्रमणं दत्त्वा इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! चैत्यवंदनं करुं?, इच्छंति भणित्वा नमस्कारांश्च शक्रस्तगा-  
दिभिश्चैत्यवंदनां विधत्ते, यदागमः—“सकत्थयाइयं चेइयवंदणं”ति, तत्र शक्रस्तवसंपदासंख्यां आद्यपदानि च प्रतिपिपादयिपुराह—

चिलाति-  
पुत्रकथा

॥२८३॥

धीदे०  
वेत्य०भी  
धर्म०संघा  
चारविधौ  
॥२८२॥

सया अत्थि विदेहेसु इत्यनैकांतिको अह न दिट्टो सो । अनेहिवि नणु एवं विऊ तुमं चेव सवन्नू ॥३६॥ इय तुह सज्जनिरासे  
निरस्सिआ चेव तुह पइण्णाई । तो सिद्धो सवन्नू अत्थि धुवं तत्थ पच्चक्खो ॥३७॥ अणुमेओवि इमो जं अणुभावो जोइसोसहा-  
ईणं । पयडो न होइ तं विणु जह धूमधयं विणा धूमो ॥३८॥ इय जुत्तिजुत्तमुत्तो दिओ जिओ गाहिओ य जइणवयं । खुड्डेण  
तओ सामणदेवीइ थिरीकओ एवं ॥३९॥ भो भो मुख! पच्चक्खसक्खिणिं दुक्खलक्खयकरणिं । पत्तं दिक्खमसट्टाणनाणाओ  
माऽवमाणेसु ॥४०॥ तो जाओ चरणरओ सो तवनिरओवि विहियजाइमओ । निंदइ वत्थंगमलं सुदुच्चया पुव्वपगई जं ॥४१॥  
वंजुलसंगा व अही नगरा नगरासया जणा जाया । सग्गापवग्गजायाणुलग्गया तस्स संसग्गा ॥४२॥ अह जन्नदेवदइया अणुरइया  
पुण गिहागमणहेउं । बहुजोगकम्मणा तस्म कम्मणं देइ पारणए ॥४३॥ जिज्झंतो कम्मणकम्मणाऽमुणा किण्हपक्ख इव चंदो । स  
मओ मुणी लहु गओ पढमदिअं तरणिविं व ॥४४॥ तो चइअ जन्नदेवो देवो जाइमयऽतुच्छमललेवो । तुह दासिचिलाइसुओ जाओ  
एसो बहुअदोसो ॥ ४५ ॥ तह जन्नदेवमरणा गयसरणा सिरिविधायसंसरणा । जायाऽणुतापओ सा जाया से संजई जाया ॥४६॥  
णालोइअपाडिकंता कालं कत्ताऽऽदिमं दिवं पत्ता । तवसो नत्थि दुरप्पं दुस्सज्झं नय दुरारज्झं ॥४७॥ तो सा चइअ सुहम्मा  
चइपसुहंमा इमा तुमं जाया । भजाए भदाए धूआ धूआखिलसुहोहा ॥ ४८॥ अह रिसिअहुत्थपावेण तेण पत्ता इमं नणु अवत्थं ।  
धण ! तुह दुहिया दुहिया जाया भमिही भवरुडिछे ॥४९॥ इय सोउ भउविग्गो गहिअ जिणते वयं सुवेरग्गा । अच्छरविहिय  
सुरमे सो धणमाहू गओ सग्गे ॥५०॥ अह सो चिलाइपुत्तो मुहं मुहं सुंसुमासुहं पस्सं । अमुणिअपरिस्ममो जाअ जाइ दक्खिणदिसं  
कंपि ॥५१॥ ता पिच्छिय विच्छायं तं उविग्गो मणंमि सज्जायं । छायातरुं व पिच्छइ संताअहर मुणिं मग्गे ॥५२॥ भणइ य धम्मं

चिलाति-  
पुत्रकथा

॥२८२॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२८३॥

धोक्त्वरैर्हि मह कहसु अन्नहा तुहवि । सकियाणेण क्वाणेण छिदिहं सिरमिमीएव्व ॥५३॥ सालिब बोहिवीयं खित्तं इह पल्ले  
व वड्ढिहिइ । इय मुणिभणियं उवसमविवेयसंवर इह विहेया ॥ ५४ ॥ चारणमुणी लहु गओ गयणे गरुडुव्व तो इमस्स इमे ।  
मंतुव्व परावत्तंतस्सुल्लसिओ इमो अत्थो ॥ ५५ ॥ कोहाईण उवसमो स्वममउ पज्जवविमुत्तिओ किचो । दव्वचयणं विवेओ स इवउ  
असिए य सिरचाया ॥ ५६ ॥ मणकरणाण निविस्सिं विस्सएहिं संवरो करेमि तथा । इय चित्तिरो अविचलं काउस्सग्गा इमो ठाइ  
॥५७॥ सरुहिरमंगंति तओ व कीडीहिं कयं घुणेहिं दारुव्व । कयपावकम्मघाओ दिवं गओ सड्डुदिणं सो ॥५८॥ जो तिहिं पएहिं  
सम्मं समभिगओ संजमं समभिरूढो । उवसमविवेयसंवर चिलाइपुत्तं नमंसामि ॥ ५९ ॥ अहिसरिया पाएहिं सोणियगंधेण जस्स  
कीडीओ । खाइंति उत्तमंगं तं दुक्करकारयं वंदे ॥६०॥ धीरो चिलाइपुत्तो मूइंगलिआहिं चालिणिव्व कओ । जो तहवि खजमाणो  
पडिवन्नो उत्तमं अट्टं ॥६१॥ अट्टाइजेहिं राइंदियेहिं पत्तं चिलाइपुत्तेण । देविंदामरभवणं अच्चरगणसंकुलं रम्मं ॥६२॥ श्रुत्वा चिला-  
तेस्तनयस्य कायोत्सर्गादिहो पातककर्मघातम् । कुर्वीत चेष्टाभिभवस्वरूपे, द्विधापि तस्मिन् करणाय यत्नम् ॥६३॥ इति कायोत्स-  
र्गात् पापनिर्घाते चिलातिपुत्रचरित्रम् ॥ किं सर्वथा कायोत्सर्गं करोति?, नेत्याह—‘अन्नत्थ ऊससिएण’मित्यादि, एतदर्थ-  
श्चैत्यस्तपदण्डकेऽभिधास्यते, ‘इरिउस्सग्गपमाणं पणवीसुस्सासे’ति वचनात् पंचविंशत्युच्छ्वासपूरणार्थं ‘चंदेसु निम्मलयरा’इत्यंतं  
चतुर्विंशतिस्तवं मनसा विचिंत्य नमो अरिहंताणंति भणन् कायोत्सर्गं पारयित्वा पुनश्चतुर्विंशतिस्तवं सकलं वाचोच्चरति । एवमी-  
र्यापथिकीं प्रतिक्रम्य क्षमाश्रमणं दत्त्वा इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! चैत्यप्रंदनं कर्हं?, इच्छंति भणित्वा नमस्कारांश्च शक्रस्तवा-  
दिभिश्चैत्यवंदनां विधत्ते, यदागमः—‘सकत्थयाइयं चेइयवंदणं’ति, तत्र शक्रस्तवसंपदासंख्यां आद्यपदानि च प्रतिपिपादयिपुराह—

चिलाति-  
पुत्रकथा

॥२८३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥२८४॥

दु१ति२ चउ३ पण४पण५पण६दु७चउ८ति९ पयसकत्थयसंपयाइपया ।

नमु१ आइगर२ पुरिसो ३ लोगु ४ अभय ५ धम्मदप्प७ जिण८ सव्वं ९ ॥ ३४ ॥

अक्षरघटना प्रागुक्तानुमारेण कार्या, भावार्थः पुनरयम्-नमोत्थुणं अरहंताणमित्याद्यपदा पदद्वयप्रमाणा प्रथमा संपत् १, आइगराणमित्यादिपदत्रयनिष्पन्ना द्वितीया २ पुरिसुत्तमाणमित्यादिपदचतुष्कचर्चिता तृतीया ३ लोगुत्तमाणमित्यादिपंचपदपूरिता चतुर्थी ४ अभयदयाणमित्यादिपदपंचकपरिमाणा पंचमी ५ धम्मदयाणमित्यादिपदपंचकनिष्पन्ना षष्ठी ६ अप्पडिहतेत्यादिपदद्वय-निर्वर्तिता सप्तमी ७ जिणाणमित्यादिपदचतुष्टयघटिताऽष्टमी ८ सव्वन्नूणमित्याद्यालापकत्रिकपरिकलिता जियभयाणमिति पर्यंता नवमी संपत् ९॥ अथास्यैव वर्णादिसंख्यार्थं गाथापूर्वार्द्धमाह—

दो सगनउआ वण्णा नव संपय पय तिच्चीस सकत्थए ।

द्वे शते सप्तनवत्याधिके वर्णाः-अक्षराणि शक्रस्तवदण्डके इति योगः, सव्वे तिविहेण वंदामीति यावत्, एतदंतस्यैव वर्णागण-स्थापना चेयं—

२९७	शक्र०
२३०	चैत्य०
४९०	नाम०
४३८	श्रुत०
३४६	सिद्ध०

नस्य वृद्धसंप्रदायेन प्रणिपातदण्डकतया रूढत्वात्, तथा च चैत्यवंदनाचूर्णौ तिविहेण वंदा-मीत्येतदंतं व्याख्याय भणितं 'सकत्थयविवरणं सम्मत्तं', श्रीलघुभाष्येऽप्युक्तम्-दो दो चउ चउ तिसया सगनवई तीस नवइ अब्भहिया । अडतीसा छायाला दंडेसु जहकमं वण्णा ॥१॥ अस्वार्थः स्थापनातोऽवसेयः-तथा नव संपदः पदानि च त्रयस्त्रिंशत् शक्रस्तवे । अथ सूत्रं व्याख्यायते, तच्चेदम्-नमोत्थुणं अरहंताणं भगवंताणमित्यादि, इह नम इति नमस्कार-

शक्रस्तव-  
पदादीनि

॥२८४॥

श्रीदे०  
 २२० श्री  
 धर्म० संघ  
 धारविधौ  
 ॥२८५॥

पापकं पदं, नमस्कारश्च द्रव्यसंकोचभाषसंकोचभेदाद् द्विधा, तत्र द्रव्यसंकोचनं शिरोनमनांजलिबंधपादविन्यासादि, भाषसंकोचनं  
 ता भीतिपणिधानादिविधानतो विशुद्धमनसा नियोगः, एतेन नमस्कारचातुर्धिष्यमुक्तं, तथाहि-द्रव्यतो-नामैको नमस्कारो न  
 भावतो निष्कण्डरूपलिङ्गिपालकादीनामनुपयुक्तसम्यग्दृष्ट्यादीनामपि च 'अनुपयोगो द्रव्य'मिति वचनात्? अन्यस्तु भावतो नम-  
 स्कारो न द्रव्यतः अनुपयुक्तसम्यग्दृष्ट्यादीनां च २ द्रव्यतो भावतश्च नमस्कारो यथाविधि शिरोनमनादि-  
 क्रियानिष्ठोपयुक्तसम्यग्दृष्ट्यादीनामेवै नो द्रव्यतो नो भावतश्च कपिलादीनामिव नमस्काराभाव एव ४, उक्तं श्रीभद्रबाहु-  
 र्वाभिना-निष्ठाद् दृष्ट भाषोवत्त जं कुज सम्मदिष्टी उ । नेषादयं पदं दृष्टभावसंकोचण पयत्यो ॥१॥" अस्तु-भवत्विति प्रार्थ-  
 नार्था क्रिया, सुरापो हि परमप्रकर्षप्राप्तो भावनमस्कार इत्यमाशंसावीजाधानेन साध्यते इति ज्ञापनार्थं, आह च-"अत्युत्ति पत्थणा  
 बुद्धो उ उक्तोसभाननमुक्तारो । लब्ध इ पीयाहाणा इय आसंसाइ तं नु भवे ॥ १ ॥" भावनमस्कारप्रकर्षवांश्च वीतरागो 'नमस्ती-  
 पथि'तिनिराशंसमेवेति भणति, उपशांतगोहादौ हि पूजाकारके अविकलाप्तोपदेशपरिपालनरूपप्रतिपत्त्यमिधानचतुर्थपूजायाश्च  
 भावात्, भणितं च-"मिति अणासंसंचिय तित्थस्स नमोसि उवसमजिणार्ह । अविगलआणापालणपहाणपडिवत्तिपूयपरा ॥१॥"  
 पशुक्तगुराराध्ययनेषु-अरहंता तित्थयरा, तैसिं चैव भत्ती कायव्वा, सा पूआवंदणाईहिं भवइ, पूअंमि पुष्फामिसथुईपडिवत्ति-  
 भेगओ पउविंमि जहासपीए कुजा"तथाऽन्यत्र "पुष्फामिपस्तुतिप्रतिपत्तिपूजानां यथोत्तरं प्राधान्यं" णमितिवाकपालंकारे, केभ्यः?—  
 'अरहंताने' 'पशुर्भ्यः पृष्ठी'ति प्राकृतवशेनाप पृष्ठी, नमोऽर्हद्भ्यः सुरासुरादिकृताशोकवृक्षाद्यष्टमहाप्रातिहार्यरूपधर्मध्वजधर्म  
 पालावतिसापरास्पनिष्ठपनातिशायिमहिमार्हेभ्यः, उक्तं च-"जिणअट्टपाडिहेरा असोगतरू चमर कुसुम जलबुद्धी । दिव्वज्जुणी

शुक्रस्तवार्थः

॥२८५॥



धीदे०  
पैत्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥२८६॥

मिहासण छत्तय मेरि भायलयं ॥१॥ तथा—“क्षय१ चक्र२ पउम३ सुरकोडि४ सुमनाइं५ चउमुहंगय६ तिवप्पा ७। रिउ ८  
विमय९ अंपु१० कंटय११ पणणऽणुकूलकज्ज १२ नहवठिई १३ ॥१॥” यद्वा मर्त्यादिविहितवंदनाद्येभ्यः, भणितं च—“अरहंति  
वंदणनमंसणाणि अरहंति पूअसकारं । सिद्धिगमणमरिहंति जे ते अरिहंत तेसिं नमो ॥१॥” अहांतेभ्यो वा—सहजातिशयादिसर्वो-  
त्तमगुणसंपूर्णतया सर्वान्यस्तवनादियोग्यानां मध्ये प्रधानेभ्यः, अभ्यधायि च—“अरहा जुग्गा उचियत्ति सुगुणपुण्णत्तणा थया-  
ईणं । तेसुवि अंता पगरिमपत्ता जमिहेरिसा नत्ते ॥१॥ अथवा ‘अरहद्भ्यः’ सिद्धिगतावप्यनंतज्ञानमयत्वात् आत्मस्वभावमत्यजद्भ्यो  
‘रह त्याग’ इतिवचनाद्, अनेकार्थत्वाद्वा धातूनां अरहद्भ्यः, भणितं च—“न रहंति न चयंति णाणाई सिवेवि तेऽवि अरहंता ।  
न रहंति न चिहंति व भवंमि जं तेण अरहंता ॥५॥ अरहोतेभ्यो वा, सर्वत्र सर्वथा सर्वदा सर्वतोऽप्यपगतप्रच्छन्नभावाभावज्ञानम-  
येभ्यः स्तवनीयत्वाद्, अभाणि च—नत्थि व रहो य छन्नं अंतो नामोत्ति जेसिं नाणस्स । ते अरहंता तेसिं नाणाइमयाण होउ नमो  
॥१॥” अरहंतेभ्यो वा, यदाह—‘नत्थि व रहो उ छन्नं अंतो मज्झं च सयलघत्थूणं । परअवरभागवेइत्तणेण जेसि अरहंता ते ॥१॥”  
एवं अरथांतेभ्यः, रथाद्युपलक्षितवाहनांतसंगरहितेभ्यः, भणितं च—“संगुवलक्खणभूओ रहो अ जाणं न जेसि अंतो य । तो सो  
जराइउवलक्खणं तु ते हुंति अरहंता ॥१॥ अरभमानेभ्यो वा अतुच्छस्वच्छत्वादिभावमयत्वेन राभसिकवृत्त्यादिनिवृत्तेभ्यः, इत्या-  
दिज्याख्यांतराण्यपि भावनीयानि, अरिहंताणमिति वा पाठः, इंद्रियविषयाद्यरिहंतृभ्यः ‘इंद्रियविसयकसाए परीसहे वेयणा य  
उवमग्गे । रागहोसे कम्मे अरी हणंतीति अरिहंता ॥ १ ॥” अरिणा वा—धर्मचक्रेण भांत्यरिभांतस्तेभ्यः, अरिमनु(पदो)पल-  
क्षितासिलादितिसंहतिसंहतिदानिकृद्भ्यो वा, आह च—“अरिणा व धम्मचक्रेण भंति सोहंति ते उ अरिहंता । असिउवलक्खण-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२८७॥

सत्ये जहंति व चयंति अरुहंता ॥१॥ अरुहंताणं ति वा पाठः, न रोहंति दग्धकर्मबीजत्वात् पुनः संसारपल्लवे न जायंत इत्यरो-  
हंता, उक्तं च—“दग्धे बीजे यथाऽत्यंतं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः । कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाङ्कुरः ॥ १ ॥” अरुहपलक्षित-  
पीडादिकृद्दोगादितत्कारणभूतकर्मादि वा भंतीति वा अरुहंतृभ्यः अरुहद्भ्यो वा, चरणाभावे न पुनर्भवोऽवरोधाभावादित्यादि,  
बहुवचनं क्षेत्रकालभेदेनार्हद्बहुत्वख्यापनार्थं, एते च नामाद्यनेकधेति नामार्हत्प्रतिपत्त्यर्थमाह—“भगवंताणं” भगः—ऐश्वर्यादिः  
पद्विधो येषां ते भगवंतस्तेभ्यः, भणितं च—“ईसरिअ जसो रूवं सिरी य धम्मो तहा पयत्तो य । एए जेसि पगट्ठा ते भगवंते  
नमो तेसि ॥१॥” तत्र—“ईसरियमिह पट्टुत्तं समुरासुरमणुयजीवलोगस्स । तिहुयणगिज्झो चंदुअलो जसो रूवमइरम्मं ॥२॥” यदा-  
गमः—“सवसुरा जइ रूवं अंगुट्टपमाणयं विउषिआ । जिणपायंगुट्टं पइ न सोहए तं जहिं गालो ॥३॥ वहिलच्छी ओसरणाइ अंत-  
रंगा उ केवलईआ । धम्मो फलरूवो जं न जिणत्ता धम्मफलमन्नं ॥ ४ ॥ धम्मज्जमो पयत्तो पयडोचिअ सो जिणाण संपुत्तो ।  
करसंठिएवि मुक्खे परोपयारिकनिरयाणं ॥५॥ अत्र संप्रदायः—

एकदा समवसार्पात्, प्रतिष्ठानपुरे प्रभुः। श्रीसुव्रतजिनो विश्वमेयोज्ज्वलयशोभरः॥१॥ स ज्ञानचक्षुपाऽद्राक्षीन्, मित्रं प्राग्जन्मनः  
स्वकम् । भृगुकच्छपुरेशस्व, बोधयोग्यं तुरंगमम् ॥२॥ ततोऽमितगतिर्भव्यराजीराजीवभास्करः । प्रतस्थे भुवनस्वामी, भृगुकच्छपुरं  
प्रति ॥३॥ आक्रम्यैकनिशा पट्टियोजनीं भृगुकच्छके । प्राप कोरंटकोद्यानं, कोटिसंख्यसुरैर्वृतः॥४॥ तत्र योजनमात्रे च, क्षेत्रे वापु-  
कुमारकैः । शोधिते समवसृतौ, रचितायां सुरासुरैः॥ ५ ॥ राजमानो महाप्रातिहार्यैर्वर्यैः सदाऽष्टभिः । सिंहासनमलंचक्रे, धर्मचक्री  
भवांतकृत् ॥६॥ गत्वाऽथोद्यानपालेन, तत्पुरेशाय सत्परम् । जिनागमनमानंदाद्यवेदि जितशत्रवे ॥७॥ तत्रस्थोऽपि जिनं नत्वा,

अश्राव-  
बोधः

॥२८७॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री  
धर्म० संग-  
चाविधौ  
॥२८८॥

दक्षाऽसौ पारितोषिकम् । तमारुह्य हरिं राजा, नंतुमर्हन्तमभ्यगात् ॥ ८ ॥ मुक्त्वाऽश्वं रूप्यवप्रांतः, प्रविवेश विशां पतिः । भक्त्या  
समवसृत्यंतर्ववंदे विधिवजिनम् ॥ ९ ॥ क्रमेण च निपण्णासु, पर्पत्सु द्वादशश्वपि । दिदेश धर्मं विश्वेशः, सुव्रतः सुव्रतो जिनः  
॥१०॥ मुधाभां कर्णयोर्जैनीमाकर्ण्यार्कण्यं भारतीम् । उत्कर्णः सोऽभवत् तूर्णं, हयो हर्पाश्रुपूर्णदृक् ॥११॥ प्रभुं पुनः पुनः पश्य-  
क्षुत्पश्यः पशुरप्यसौ । तदन्ते जातया जातिस्मृत्या प्राग्जातिमस्मरत् ॥१२॥ हर्षप्रकर्षतस्ताक्षर्योऽनिमेषाक्षस्तथोन्मुरवः । हेपा-  
निर्घोषमातन्वन्, ययौ मंशु जिनांतिकम् ॥१३॥ सोऽनमत्स्वामिनं भूमौ, न्यस्तमौलिर्मुहुर्मुहुः । स्ववाचोवाच दुःखार्तविश्वरक्षक !  
रक्ष माम् ॥१४॥ जितशत्रुरथोवाच, नैतच्चित्रीयते विभो ! । यत् तिर्यचोऽपि बुध्यन्ते, भारत्या श्रीमदर्हतः ॥१५॥ हरेर्हर्षप्रकर्षोऽयं,  
किन्तु तद्दहेतुरत्र कः । इत्यादिश मम स्वामिन् !, सर्ववेदी ततोऽचदत् ॥१६॥ राजन् ! जन्मांतरे मित्रमेष वाजी ममाजनि । बोधाया-  
स्पागमो मेऽत्र, पूर्वजन्माधुना शृणु ॥१७॥ श्रेष्ठी सागरदत्तारुयः, स्वमित्रं नैगमाश्रणीः । त्यागी महेश्वरो माहेश्वरश्चोवास त-  
त्पुरे ॥१८॥ शिवस्त्रायतनं पूर्वं, कारयामास सोऽन्यदा । उपसाधु गतः साद्धं, सख्याऽश्रौपीदिदं यथा ॥ १९ ॥ जिनानां मंदिरं  
कुर्यान्, यो जितांतरवैरिणाम् । स प्रेत्य लभतेऽवश्यं, बोधिरत्नं सुदुर्लभम् ॥ २० ॥ श्रुत्वेत्यकारयत् सोऽथ, मुंदरं जिनमंदिरम् ।  
तत्र चाप्रतिमां जैनीं, प्रतिमां प्रत्यतिष्ठपत् ॥२१॥ जिनधर्मस्य संसर्गाजिनधर्ममतिस्ततः । मिथ्यात्वमथनं सोऽथ, बोधिबीजमुपार्ज-  
यत् ॥२२॥ शिवगेहेऽन्यदा शैवैः, सर्पिणा लिंगपूरणे । कृतेऽसौ द्रष्टुमाहृतस्तत्र गत्वा निपेदिवान् ॥ २३ ॥ तदा च तत्र सर्पती-  
र्षृतगंधा घृतेलिकाः । शैवानां चरणन्यासात्, मृताः प्रेक्ष्य सहस्रशः ॥ २४ ॥ युक्तमेतद्यतीनां किं, तानेवं सोऽब्रवीन्ननु । भवतां  
पादपातेन, कीटिकाः कोटिशो मृताः ॥ २५ ॥ क्रुद्धास्तमभ्यधुस्तेऽपि, त्यक्त्वा धर्मं क्रमागतः । सेंद्रियेभ्योऽपि जिहेपि, किं न

अश्वावबोधः

॥२८८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२८९॥

धर्मं नवं दधत् ॥२६॥ त्वयैवं कुर्वता सर्वे, नूनमद्य स्वपूर्वजाः । बालिशशक्तिरे तत्ते, अहो ज्ञत्वकुलीनते ॥२७॥ हिंसास्थानेऽत्र  
धर्मिष्ठ !, त्वमागात् त्वद्विनेश्वरः । न विश्वार्यो ह्यनर्च्यः स्यादुत्तिष्ठ स्वगृहं व्रज ॥२८॥ सुप्रतिष्ठोऽपि तैः श्रेष्ठी, सोऽप्रतिष्ठं प्रजल्पितः ।  
लज्जाम्लानमुखांभोजो, निर्ययौ सपरिच्छदः ॥२९॥ मिथ्यात्वमपि संशीतिगतं सोऽथ दधत्ततः । तद्वाचिकापमानं च, स्मरन्नत्यर्चि-  
संगतः ॥ ३० ॥ वदुध्वा तिर्यग्भवायुष्कं, स्वायुःशेषमतीत्य च । श्रेष्ठी सागरदत्ताख्यो, मृत्वा तिर्यग्जायत ॥ ३१ ॥ भवान्  
भ्रांत्वाऽथ भृयिष्ठानार्तध्यानाद्भवोदधौ । राजन्नजनि स श्रेष्ठिजीवोऽयं तेऽधुना हयः ॥३२॥ यः कारयति जिनानामित्यादि प्राग्भव-  
श्रुतम् । असन्मुखान्निशम्यासौ, जातिसरणमाप्तवान् ॥३३॥ इत्याकर्ण्य नृपो वाजिचरित्रं चिचमत्कृतः । संवेगाद्द्रुदध्वानः, प्रति-  
हारं समादिशत् ॥३४॥ द्रागुत्सारय पर्याणमस्मादश्वात्तथा कविम् । इतःप्रभृत्यसौ धर्मवांधवो नस्तुरंगराद् ॥ ३५ ॥ सोऽथोऽथ  
स्वामिपार्श्वे चागहीद्धर्ममगारिणाम् । संन्यासेन विपद्याभूत्, सहस्रारेऽष्टमे सुरः ॥ ३६ ॥ प्राच्यं जन्मावधेर्ज्ञात्वा, भक्त्या चैत्य  
जिनं स तु । वंदित्वा विधिवन्नाट्यं, विदधे विबुधः सुधीः ॥३७॥ कांचनैः कुसुमैस्तीर्थभूमिं तां परिपूज्य च । स्वं प्रकाश्य च  
तीर्थेशं, पुनर्नत्वा दिवं ययौ ॥ ३८ ॥ अश्वजीवस्ततस्तत्र, स्वःसुरवान्यनुभूय सः । च्युत्वाऽत्रैव समुत्पद्य, लप्स्यते पदमव्ययम्  
॥३९॥ अथ लोकोपकाराय, भगवान् भृगुकच्छतः । विजहार महीमेनामहीनमहिमा प्रभुः ॥४०॥ भृगुकच्छे तथा स्वामी, स्वां-  
द्धिभ्यां यामपावयत् । भुवं तत्र सुराः स्तूपं, स्वर्णरत्नैर्वैर्वैर्यधुः ॥४१॥ प्रतिमां स्थापयामासुः, तत्र श्रीसुव्रतार्हतः । तीर्थमथावबोधं  
तत्, प्रावर्तत ततश्चिरम् ॥४२॥ सुदृशाममृतांजनमिति सुयशा मुनिसुव्रतः प्रभुः श्रीमान् । सृचिरं दिदेश धर्मं परोपकृतये प्रय-  
तमानः ॥४३॥ इति मुनिसुव्रतस्वामिकथा ॥

अश्वावबोधः

॥२८९॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥२९०॥

एवंविधा एव भगवंतो विवेकिनां स्तोतव्या इत्याभ्यामालापकाभ्यां प्रथमा स्तोतव्यसंपदा उक्ता, संप्रत्यस्या एव द्वितीयां त्रिपथा हेतुसंपदमाह—‘आङ्गराण’मित्यादि, केवलज्ञानोत्पत्यनंतरं स्वस्वतीर्थेष्वदादौ—प्रथमतः समस्तनीतिचारित्रहेतुश्रुतधर्मस्य करणशीलाः तदर्थप्रणायकत्वेनादिकरास्तेभ्यः, यदागमः—अत्थं भामइ अरिहा सुत्तं गंधंति गणहरा निउणं । सामणस्म हियट्ठाए तओ सुत्तं पवत्तई ॥ १ ॥ (आ० नि०) आदिकरत्वाचामी किंविधा इत्याह—‘तित्थयराणं’ तीर्थः—प्रवचनाधारश्चतुर्विधः संघः प्रथमगणधरो वा तत्कर्तृभ्यः, यदागमः—“तित्थं भंते ! तित्थं तित्थयरे तित्थं ?, गोयमा ! अरिहा ताव नियमा तित्थगरे तित्थं पुण चाउवण्णे समणसंघे पढमगणहरे व”त्ति, तीर्थकृत्त्वं च एषां नान्योपदेशादित्याह—‘स्वयंसंबुद्धाणं’ स्वयं—परोपदेशमंतरेणैव सम्यग्—अविपर्ययेण बुद्धा—ज्ञाततत्राः स्वयंसंबुद्धास्तेभ्यः ३ संपद्, एतच्चाभीपां न प्राकृतत्वे सति इत्याद्याया एव हेतुविशेषसंपदमाह—‘पुरिसोत्तमाण’मित्यादि, पुरुषाणां—विशिष्टसंसारिमत्त्वानां मध्ये तथास्वाभाव्यात् सर्वकालमसाधारणगांभीर्यादिगुणप्राप्तयोगादुत्तमाः—पूज्याः, संसारेऽपि तीर्थकरजीवानां तथा प्राधान्यात् पुरुषोत्तमास्तेभ्यः, उत्तमत्वमेवोपमानत्रयेण समर्थयति—‘पुरिससीहाणं’ पुरुषाः कर्मशत्रून् प्रति खरतया सिंहा इव पुरुषसिंहाः तेभ्यः, यद्वा—“वीहंति न चेव जओ उवमग्गपरीसहाण घोराणं । वियरंति असंयमणा भन्ति ततो पुरुषसीहा ॥ १ ॥”त्ति ३ ‘पुरिसवरपुंडरीयाणं’ पुरुषा वरपुंडरीकाणीव—प्रधानसितपद्मानीय, यथैतानि पंके जातानि जले प्रष्टुद्धानि तद्द्वयं विहायोपरि वर्तते तथाऽहंतोऽपि कामपंके जाता भोगजले प्रष्टुद्वास्तद्वयं विहाय वर्तते इति पुरिसवरपुंडरीयाणि, धवलत्वं चैषां सर्वाशुभरहितत्वात् सर्वैश्च शुभानुभावैः सहितत्वात् तेभ्यः ३, यद्वा “पुरिमावि जिणा एवं पत्ता वरपुंडरीयउवमाणं । सामाइसुरभिगंधे वहंति वरपुंडरीयत्तं ॥ १ ॥ वट्टंति य उवयारे नरतिरिआणं निरीहपरि-

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥२९१॥

णामा । धारिजंते सिरसा नरामरेहिं नमिरेहिं ॥२॥” अथवा पुरुषाणां तत्सेवकादीनां वरपुंडरीकमिव वरच्छत्रमिव ये संतापातंप-  
निवारणसमर्थत्वात् छायाकारणत्वाच्च । पुरिसवरगंधहृत्थीणं पुरुषावरगंधहस्तिन इव पुरुषवरहस्तिनस्तेभ्यः४ यद्वा गंधहस्ति-  
गंधेनेव क्षुद्रगजा भज्यंते तद्वदीतिदुर्भिक्षाद्युपद्रवगजाः सपादयोजनशतमध्येऽर्हद्विहारपत्रनगंधादेव नश्यंति, उक्तं चेत्युपमात्रयात्  
पुरुषोत्तमाः, संपन् ३, न चैवं लोकस्यार्वांगिति, किंतु लोकस्याप्युत्तमा इति आद्याया एव सामान्येनोपयोगसंपदमाह-‘लोगुत्त-  
माण’मित्यादि, लोकस्य-भव्यप्राणिरूपस्य मध्ये उत्तमाः-सकलकल्याणसमासन्नसिद्धिगामित्वलक्षणतथाभव्यत्वभावात् ऊर्ध्व-  
वर्तित्वात् प्रधानाः लोकोत्तमास्तेभ्यः ‘लोगनाहाणं’ लोकानां-विशिष्टासन्नसिद्धिकभव्यसत्त्वानां सम्यक्प्रवीजाधानादियोजनेन  
रागाद्युपद्रवरक्षणेन च योगक्षेमकारिणः अलब्धबोधिवीजादिलाभलब्धसद्दर्शनादिगुणग्रामरक्षाविधायिनो नाथा लोके नाथारस्तेभ्यः,  
नाथत्वं च हितकरणात् स्यादित्याह-‘लोगहियाणं’ लोकाय-सकलेन्द्रियादिप्राणिवर्गाय पंचास्तिकायात्मकाय वा सम्यग् लक्ष-  
णप्ररूपणादिना(रक्षादिना)वा लोकहितास्तेभ्यः, हितत्वं च यथावस्थितवस्तुप्रकाशनादेवेत्याह-‘लोगपईचाणं’ लोकस्य-विशिष्ट-  
संज्ञितिर्यग्नरामरूपस्य सदेशनांशुभिर्मिथ्यात्वादितमोऽपनयनेन यथावस्थितपदार्थसार्थप्रकाशनेन च प्रदीपा इव लोकप्रदीपास्ते-  
भ्यः, इदं च विशेषणं द्रष्टृलोकमाश्रित्योक्तं, अथ दृश्यलोकमाश्रित्याह-‘लोगपज्जोअगराणं’ लोकस्य-लोकयत इति व्युत्पत्त्या  
लोकालोकस्वरूपस्य केवलालोकपूर्वकप्रवचनप्रभापटलेन सूर्यवत् प्रद्योतकराः तेभ्यः ५, अत्र संप्रदायः—

वारस वासे छम्मास अद्धमासं च तवमणुचरित्ता । निज्जिअउवसग्गपरीमहस्म सिरिवद्धमाणस्स ॥ १ ॥ जंभियवहि उज्जुवा-  
लियतीरि वियावत्तसामसालअहे । छट्ठेणुक्कडुयस्स उ उप्पन्नं केवलं नाणं ॥ २ ॥ चउविहसुरेहिं रइए ओसरणे तत्थ कप्पमिइ

शक्रस्तव-  
व्याख्या

॥२९१॥

काउं । सायं पद्द अभावियपरिसाइवि कुणइ धम्मकहं ॥३॥ जओ-सव्वं च देमविरइं संमं चित्थइ व होइ कहणाओ । इहरा अमूढ-  
 लखो न कहेइ भविस्मइ न तं च ॥४॥ चउविहसुरपरियरिओ रयणीए वारजोयणेहिं तओ । पत्तो मज्झिमपावा वहि महसेणय-  
 वणुजाणे ॥ ५ ॥ तहिं भुवणवईवंतरजोइमवेमाणिआवि ओसरणे । सविड्डीइ सपरिसा कासी नाणुप्पयामहिमं ॥ ६ ॥ तत्थ किर  
 सोमिलज्जोत्ति माहणो तस्स दिक्खकालंमि । पउरा जणजाणवया समागया जन्नवाडंमि ॥७॥ तह इंदभूतिऽगणिभूइवाउभूइवियत्तय  
 सुहम्मा । मंडियमोरियपुत्ता अकंपिओ अयलभाया य ॥८॥ मेयज्जपहासा इय इगार वेयाइविउ महुज्जाया । उन्नयविसालवंसा समागया  
 जन्नवाडं तं ॥९॥ तं दिव्वदेवघोसं सोऊणं माणवा तहिं तुट्ठा । अहो जन्निएहिं जुट्टं देवा किर आगया इहयं ॥१०॥ सोऊण कीर-  
 भाणिं महिमं दंवेहिं जिणवरिंदस्स । अह एइ अहंमाणी अमरिसिओ इंदभूइत्ति ॥११॥ मोत्तूण ममं लोगो किं धावइ एस तस्स  
 पामूलं । अन्नोऽवि जाणइ मए ठिअंमि ? कत्तोच्चयं एयं ? ॥१२॥ वञ्चिज्ज व मुक्खजणो देवा कहऽणेण विम्हयं नीया ? । वंदंति  
 संथुणंति य जेणं सब्बन्नुवुद्धीए ॥१३॥ अहवा जारिसउच्चिस सो नाणी तारिसा सुरा तेऽवि । अणुसरिसो संजोगो गामनडाणं व  
 मुक्खाणं ॥१४॥ काउं हयप्पयावं पुरओ देवाण दाणवाणं च । नासेहं नीसेसं खणेण सब्बन्नुवायं से ॥१४॥ इय वुत्तूणं पत्तो ददंठुं  
 तेलोक्कपरियुडं वीरं । चउतीसाइसयनिहिं स संकिओ चिट्ठिओ पुरओ ॥१५॥ भणियं च—“साक्षाद्दृष्टेन्द्रभूतिः समवसृतिभुवो भूप-  
 णस्यांतिकस्थानायातानंगनामिः सह विबुधवरान् पंचवर्णैर्विमानैः । रूपं चाश्वर्यरूपं जगति दश दिशो भासयन् स्फारकांत्या, तस्यौ  
 क्षोभात् सशंको मुनिपतिपुरतो हा किमेतत् किमेतत् ? ॥१७॥ हे इंदभूइ गोयम सागयमुत्ते जिणेण चित्तेइ । नामंपि मे विआ-  
 णइ अहवा को मं न याणेइ ? ॥१८॥ जइ वा हिययगयं मे संसयमुत्तिज्ज अहव छिदिज्जा । तो हुज्ज विम्हओ मे इय चित्तंतो पुणो

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥२९३॥

भणिओ ॥१९॥ किं मन्नि अत्थि जीवो उआहु नत्थित्ति संसओ तुज्झ । वेयपयाण य अत्थं न याणसी तेसिमो अत्थो ॥२०॥ हे  
इंद्रभूते किं मन्यसे—अस्ति जीवः, स वै आत्मा ज्ञानमय इत्याद्युक्तत्वात्, उताहो किं वा नास्ति, यतो विज्ञानघन एवैतेभ्यो  
भूतेभ्यः समुत्थाय तान्येवानु विनश्यति, न प्रेत्य संज्ञाऽस्तीत्युक्तं, विज्ञानं—चैतन्यं तदेव घनो नीलादिरूपत्वात् समुत्थाय—उत्पद्य  
पुनस्तान्येवानुसृत्य विनश्यति—तत्रैवाव्यक्ततया संलीयते, न प्रेत्यसंज्ञा—मृत्वा पुनर्जन्म, भूतानां परलोके गमनाभावात्, इत्युभ-  
यास्तित्वे किं प्रमाणमितिसंशयः, अर्थं पूर्वापरवाक्याविरोधलक्षणं चशब्दाद्युक्तिं हृदयं च, अयं अंतःस्फुरत्तयाऽध्यक्षः विज्ञानं  
ज्ञानदर्शनोपयोगरूपं ततोऽनन्यत्वादात्मा विज्ञानघनः, एवावधारणे, समुत्थाय कथंचिदुत्पद्य, यथा घटादिविज्ञानपरिणतो ह्यात्मा  
घटादिर्भवति तद्विज्ञानक्षयोपशमस्य तत्सापेक्षत्वाद् अन्यथा निरालंबनतया तस्य मिथ्यात्वप्रसक्तेः, तान्येवानु विनश्यति तेषु  
विवक्षितेषु भूतेषु व्यवहितेषु अपगतेषु वा आत्मापि तद्विज्ञानघनात्मना उपरमते, अन्यविज्ञानात्मना उत्पद्यते, यदिवा सामान्य-  
चैतन्यरूपतयाऽवतिष्ठते इति न प्रेत्यसंज्ञाऽस्ति—प्राक्तनी घटादिविज्ञानसंज्ञाऽवतिष्ठते, मांप्रतीनविज्ञानोपयोगविघ्नितत्वात्, छिन्नमि  
संसयंमी जिणेण जरमरणविप्पमुकेणं । सो समणो पव्वइओ पंचहिं सह खंडियसएहिं ॥ २१ ॥ तं पव्वइयं सोउं सुह(बुत्तं)अग-  
णिभूइणा अमरिसेणं । वच्चामि णमाणेमी पराजिणित्ताण तं समणं ॥२२॥ छलिओ छलाइणा सो मन्ने माइंदजालिओ वावि । को  
व मुणइ कह वत्तं इत्ताहे वट्टमाणिं से ॥२३॥ सो पक्खंतरमेगंपि जाइ जइ मे तओ मि तस्सेव । सीसत्तं हुज्ज गओ बुत्तुं पत्तो जिण-  
सगापं ॥२४॥ हे अग्गिभूइ गोअम ! सागयमिइ नामगोअओ बुत्तो । विम्हइओ पुरिमिछो व चित्तिरो पुण जिणेणुत्तो ॥२५॥ किं  
मन्ने अत्थि कम्मं उआहु नत्थित्ति संसओ तुज्झ । वेयपयाण य अत्थं न याणसी तेसिमो अत्थो ॥२६॥ हे अग्गिभूते ! किं मन्यसे

गणधरवादः

॥२९३॥



कर्मास्ति, यथा पुण्यः पुण्येन पापः पापेन कर्मणेत्यादि, उत नास्ति यतः कर्मप्रकृतीश्वरादिसर्वव्युदासेनोक्तं 'पुरुष एवेदं त्रिं सर्वं यद्भूत यच्च भाव्यं उतामृतस्येशानो यदन्नेनातिरोहति यदेजति यन्नेजति यद् दूरे यद् अतिके यदंतरस्य सर्वस्यास्य बाह्यत' इत्यादि, इदं प्रत्यक्षं वर्तमानं त्रिं वाक्यालंकारे सर्वं चेतनादि उतोऽप्यर्थे अमृतत्वस्य-मोक्षस्येशानः-प्रभुः अन्नेन-आहारेण तिरोहति-अतिशयेन वृद्धिं याति एजने अश्वादि नैजते पर्वतादि आर्पत्वादिष्टरूपं दूरे मेर्वादि अतिके-समीपे यदन्तः-मध्ये अस्य चेतना-चेतनस्य सर्वस्यास्य बाह्यतः सर्वपुरुष एवेति कर्मसत्ता न श्रद्धेयेति ते संशयः, अर्थं विषयविभागात्मकं, यथा त्रिधा वेदपदानि 'अग्निहोत्रं जुहुया'दित्यादीनि विधिनादपराणि, स्तुत्यर्थनिन्दार्थनादार्थाद् द्विधा, तत्र स्तुत्यर्थनादप्रधानानि यथा 'स सर्वविद्यस्यैषा महिमा सुविदितेत्येव त्रक्षपुरे होष व्योम्नि आत्मा सुप्रतिष्ठितस्तमक्षर चेतयते अथ स यस्तु सर्वज्ञः सर्ववित् सर्वमेवाविश'इत्यादि, निन्दार्थनादप्रधानानि यथा-एष नः प्रथमो यज्ञो योऽग्निष्टोमः, योऽन्नेनानिष्ट्वा अन्येन यजते स गतामभ्यपतदि'त्यादि, अत्र पशुमेधादीनां करणं निघते इत्ययं निन्दार्थनादः, द्वादश मामाः सप्तमरः अग्निरुष्णोऽग्निर्हिमस्य भैषजमित्यादीनि त्वर्थनादप्रधानानि, लोके प्रसिद्धस्यैषार्यस्यैतैरनुनादः, ततश्च पुरुष एवेत्यादीनां जप्ययमर्थो-यदेतानि पुरुषस्तुतिपराणि, यदिवा जात्यादिमद-त्यागायैतद्भाषनाप्रतिपादकानि न कर्मसत्ताप्रतिषेधकानि, इत्य चैतदंगीकर्तव्यं, न रत्नरुर्मण आत्मनः कर्तृत्वोपपत्तिः एकां-तशुद्धतया प्रवृत्तिनिरंधनाभावात् गगनगत । छिन्नंभि समयमी जिणेण जरमरणविष्पमुक्केण । सो समणो पव्वइओ पंचहिं सह खंडियसण्हिं ॥२७॥ ते पवइए सोउं अपसेसा नयपि भित्ति चितति । वचामो वदामो तं सुमुणिं पज्जुयासामो ॥२८॥ सीसत्तेणोव- गया संपइ इंदग्गिभूइणो जस्म । तिहुयणअयप्पणामो न महाभोगोऽभिगमणिज्जो ॥२९॥ तयभिगमअणनभंसणाइणा हुज्ज पूअपावा

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥२९४॥

मो । वुच्छिन्नसंसया वा वुत्तुं पत्ता जिणसगासं ॥३०॥ आभट्टा य जिणेणं नामगोएहिं सागयंति इमे । विम्हइया पुण वुत्ता चिरसंसय-  
पयत्थकहणेण ॥३१॥ जीवे१ कम्मे२ तज्जीव३ भूय४ तारिमय५ वंधमुक्खो य६ । देवा७ नेरइयाविय८ पुण्णे९ परलोय१० निव्वाणे११  
॥३२॥ तत्रैवं तृतीय उक्तः—हे वाउभूइ गोयम ! मन्नसि तज्जीवतच्छरीरंति । संमइओ वेयत्थं न याणसी तं इमं जाण ॥३३॥ स एव  
जीवस्तदेव शरीरं इति माननान् 'विज्ञानघन एवैतेभ्य' इत्यादि प्राग्दर्शः, नरं न प्रेत्यसंज्ञाऽस्ति—न देहातिरिक्त आत्मसंज्ञाऽस्ति  
अभेदाद्वैरतादिवद् भूतसमुदायमात्रधर्मत्वाच्चैतन्यस्येति वेदार्थक्लृप्तेः, संशयश्च 'सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येव ब्रह्मचर्येण नित्यं ज्योतिर्मयो  
हि शुद्धो यं पश्यन्ति धीरा यतयः संयतात्मान' इत्यादिश्रुत्वात् देहातिरिक्तात्मप्रतिपादनपरात् तथारूपोपचाराच्च, तत्र देहे आत्मोपचारो  
यथा किंचित् पिपीलिकादि सत्त्वं प्रतीत्य यथा ब्रवीति लोको यथैतं जीवं मा मारयेति शरीरव्यतिरिक्ते च यथा कंचिन् मृतं दृष्ट्वा लोको  
ब्रवीति—गतः संज्ञी यस्येदं शरीरमिति, तथा वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि । तथा शरीराण्यपरापराणि,  
जहाति गृह्णाति च पार्थ ! जीवः ॥१॥ इत्यादेश्च, अस्त्येतत् सौम्य !, भगवन्नस्त्येतत्, वेदपदानामयं परमार्थः—विज्ञानघन एवात्मा  
प्रतिप्रदेशमनंतज्ञानदर्शनपर्यायात्मरूत्वात्, भूतेभ्यः क्षित्युदकादिभ्यः कथंचिद्धत्वा घटाद्यर्थाश्रयेण विशेषतो नीलादिविज्ञानोत्पत्तेः  
अनुपिनश्यति, घटादिनाशे तदाश्रितोद्धूतनीलादिविज्ञानोपरमात्, शेषं प्राग्भूत् इति, देहेन्द्रियव्यतिरिक्तात्मा तद्विगमेऽपि  
तदुपलब्धार्थानुमरणात्, मया दृष्टं श्रुतं स्पृष्टं, घ्रातं आस्वादितं स्मृतम् । इत्येककर्तृका भावा, भूतचिदादिनः कथं ? ॥१॥ निर्वाधोऽस्ति  
ततो जीवः, स्थित्युत्पत्तिव्यप्यात्मकः । ज्ञाता द्रष्टा गुणी भोक्ता, कर्ता कायप्रमाणरुः ॥२॥ चतुर्थस्त्वेवं—भारदायवियत्ता ! मन्नसि  
ण्ण भूय अत्थि नत्थित्ति । संमइयो न वियाणसि वेयत्थं तं इमं सुणसु ॥३४॥ 'स्वप्नोपमं वै मकलमित्येव ब्रह्मविधिरंजसा विज्ञेय'

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संग-  
चारविधौ  
॥२९६॥

इत्यादि तथा 'घावापृथिवी' इत्यादि 'पृथिवी देवता आपो देवते'त्यादि भूतासत्तासत्तापराणि वेदवाक्यादीनि ते संशयहेतुः,  
ब्रह्मविधिः-परमार्थप्रकारः अंजसा-प्रगुणन्यायेन विज्ञेयो-भाव्यः, तत्रायं भावार्थः-स्वप्नोपमं इत्यादि अध्यात्मचिंतायां मणि-  
कनकांगनादिसंयोगस्यानियतत्वादस्थिरत्वादसारत्वाद् विपाककडुकत्वादास्थानिवृत्तिपरं, नतु तदत्यंताभावप्रतिपादकं, स्वप्नबु-  
द्धेरप्यनेकनिबंधनत्वात्, अणुभूय दिष्टचित्तिव सयपयइवियार देवयाऽनूवा । सुविणस्स निमित्ताइं अणुतरो चैव नाभावो ॥३५॥  
पंचमथैरम्-सुहमा अगणित्रिमायण ! मन्नसि जो जारिसो इह भवेऽवि । सो तारिसो परभवे वेयपयत्येसु संसइओ ॥३६॥ यथा  
'पुरुषो वै पुरुषत्वमश्रुते पशवः पशुत्व'मित्यादि, युक्तं चैतत्, कारणानुरूपकार्यत्वात्, कथं त्वेतत्, तथा 'शृगालो वै एष जायते'  
इत्यादि, तथा 'ब्रह्मादिषु तृणांतेषु, भूतेषु परिवर्तते । जले भुवि तथाऽऽकाशे, जायमानः पुनः पुनः ॥१॥ इत्यतः संशयस्ते, तत्र  
नायं नियमः, कारणानुरूपकार्यस्यापि दर्शनात्, यथा शृगाच्छरो जायते, तस्मादेव सर्पपानुलिप्तात् तृणानि गोलोमअविलोमभ्यो दूर्वा  
गोमयाच्छान्दरः, इयं तु वस्तुस्थितिः-आयुष्कर्मपेक्षया जीवानां गतिः, तस्य नरकायुष्कत्वादिचित्रत्वात् कार्यवैचित्र्यं, यथा-मिच्छा-  
दिद्वी महारंभपरिग्गहो तिबजोहनिस्सीलो । नरयाउयं निबंधइ पावमई रुदपरिणामो ॥३७॥ उम्मग्गदेसओ मग्गनासओ गूढहिययमा-  
इओ । सदसीलो अ ससओ तिरिआउं वंधए जीवो ॥३८॥ पयईइ तणुकसाओ दाणरओ अज्जवाइगुणजुत्तो । तह सच्चयाइनिरओ मणुआउं  
बंधई जीवो ॥३९॥ अणुवयमहवएहिं बालतवोऽकामनिज्जराए उ । देवाउअं निबंधइ सम्मदिद्वी य जो जीवो ॥४०॥ तथा-रज्जुग्गहणे  
विसमकरणे अ जलणे अ जलप्पवेसे य । तण्हाल्लुहाक्किलंता मरिऊण इवंति वित्तिया ॥४१॥ तथा-जया मोहोदओ तिबो अन्नाणं खु मह-  
भयं । अमारं वेयणिअं तु, तथा एगिंदियत्तणं ॥४२॥ अविद्य-भूदगवणसुरनिरया दोगइया चउगई तिरिपणिदि । संखवासाउ मणुआ

गणधरवादः

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२९७॥

पणगइआ सेस इगगइआ ॥४३॥ एवं दानदयादि सर्वमेव वैयर्थ्यमिति संप्रधः॥ वासिष्ठ भंडियसुआ किं मन्नसि बंधमुक्त्व अत्थि नरा? ।  
ससइओ वेयत्थे परमत्थं तत्थिमं सुणसु ॥४४॥ 'स एष विगुणो विभुर्न बध्यते संसरति वा न मुच्यते मोचयति वा', न वा एष बाल्यम-  
भ्यंतर वा वेद'इत्यादि, विगतमन्त्रादिगुणो विभुः सर्वगो न बध्यते पुण्यपापाभ्या, न मुच्यते-कर्मणा न वियुज्यते बंधाभावात्, न  
मोचयत्यन्यमकर्तृत्वात्, बाल्यमात्मभिन्नमहंकारादि अभ्यंतर-स्वरूपं वेद-विजानाति प्रकृतिधर्मत्वात् ज्ञानस्य, प्रकृतेश्चाचेतनत्वाद्ब-  
धमोक्षाभाव इति ते मतिः सशरीरस्य संसारिणः अत्र यतः, तन्न, मुक्तिजीवापेक्षमिदं, तत्र भावार्थः-स एष मुक्तात्मा विगतच्छा-  
द्यस्थिरज्ञानादिगुणो विभुः-ज्ञानात्मना सर्वगो न बध्यते मिथ्यात्वादिबंधकारणाभावात्, ततो न संसरति भवे कर्मवीजा-  
भावात्, 'दग्धे बीजे यथे'ति श्लोकः, न मुच्यते मुक्तत्वात्, न मोचयति तदा खल्वपदेशादानात्, सांसारिकसुखनिवृत्त्यर्थमाह-  
न वा एष मुक्तात्मा बाल्यं स्वरूचंदनादिसुखं अभ्यंतर मानवादि न वेद-नानुभवात्मना जानाति, संसारिणः बंधमोक्षौ स्तः, आह  
च-"न ह वै सशरीरस्य प्रियाप्रिययोरपहतिरस्ति, अशरीर वा वसंतं प्रियाप्रिये न स्पृशत'इत्यादि, तत्र सशरीरस्य-संसारिणः,  
अशरीर-मुक्तं वसंतं-मुक्तं प्रियाप्रिये-पुण्यपापे न स्पृशतः, कारणाभावादित्यर्थः, तथा जीवकर्मणोरप्यनादिमानेय संयोगो, धर्मा  
स्तिकायाकाशसंयोगवत्, वियोगस्तु यथा कांचनोपलयोः क्षारमृत्पट्टपाकादिना तथा जीवकर्मणोरपि ज्ञानतपःसंयमादिना, मूर्त्त-  
मूर्त्तसंयोगघटना तु घटाकाशसंयोगवत्, कपायादिपरिणामाभावाच्च मुक्तानां पुनः कर्मबंधाभावात्, उच्यते-जोगा पयडिपएसं ठिइ  
अणुभाग कमायओ कुणइ ।" न चेत्यं भव्योच्छेदः, अनागतकालवत् तेषामानंभ्यात्, परिमितक्षेत्रे चैषामवस्थितिरमूर्त्तत्वात्  
प्रतिद्रव्यमनतरेणलज्ञानादिसंतानवत्, नर्त्तकीनयने विज्ञानवद्वा, उच्यते च-"आसंसार सरियासहस्सलकरोहि बुज्झमाणामि ।

गणधरवादः

॥२९७॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
गर्म० संपा-  
पारविधौ  
॥२९८॥

पुहरी न निद्वियचिय उदहीवि थली न संजाओ ॥४५॥ यथाऽस्तीतकालो वर्तमानत्वमनुभूय जातः अनादिः एवं वार्तमानिकः, मिथ्या-  
त्वादिसव्यपेक्षात्मोपात्तं कर्म कृत्यमनादि वोच्यते, इति षष्ठः संबंधः ॥ मंडियपुत्ता ! कामव मन्नसि देवा किमत्थि वा नत्थि ?।  
वेपत्ये संमइओ दुहाविऽणुवलंमसग्गाया ॥४६॥ 'स एष यज्ञायुधी यजमानोऽजसा स्वर्गलोकं गच्छती'त्यादि 'अपाम सोमं अमृता  
अभूम अगमाम जोतिरविदाम देवान् किं नूनमग्मान् तृणवदरातिः किमभूर्त्तिरमृतमर्त्यस्ये'त्यादि, सोमं सोमलतारसं ज्योतिः स्वर्गा  
अविदाम देवान् देवत्वं प्राप्ताः सः अस्मान् तृणवत् किं करिष्यतीति गम्यं, अरातिः-व्याधिः धुत्तिः-जरा अमृतमर्त्यस्य-अमृतत्वं  
प्राप्तस्य पुरुषस्य, अमृतधर्मणो मनुष्यस्य किं करिष्यतीत्यर्थः यदीदं सत्यं तदेतत् कथं ? 'को जानाति मायोपमान् गीर्वाणान् इद्र-  
यमपरुणकुवेरादी'नित्यादि द्विधाऽप्यनुपलब्धः सतां परमाणुमूलोदकपिशाचादीनां असतां शशविपाणादीनामिति ते मतिः, नैनान्  
अमंस्याः, मृणु देवस्वरूपानागमागमहेतून्-अणिमिसनयणा मणकजसाहणा पुष्फदामअमिलाणा । चउरंगुलेण भूमिं न छिविंति सुरा  
जिणा विंति ॥४७॥ संकंतदिच्चपेमा विमयपसत्ता समत्तरुत्तव्वा । अणहीणमणुअकज्जा नरभवमसुहं न इंति सुरा ॥४७॥ पंचसु जिण-  
यछापेसु चैर महरिसितपाणुभायाओ । जंमंतरनेहेण य आगच्छंती सुरा इहयं ॥४८॥ यथा चेदानीं इमे तवापि प्रत्यक्षाः, तथा  
शेषकालमपि चंद्रादिविमानालयदर्शनात् तथा सिद्धिः, यच्च 'को जानाति मायोपमा'नित्यादि तत् परमार्थचिन्तायां सर्वथा सर्वमनित्यं  
मायोपमं इति शोधकं, नतु देवनास्तिव्यस्यैवेति संबुद्धः सप्तमः ७ ॥ हे गोयमा अकंपिय ! मन्नसि निरया किमत्थि नत्थि वा ।  
वेपत्यो संदिद्धो दुहाविऽणुवलंमसग्गाया ॥४९॥ 'नारको वै एष जायते यः शूद्रान्नमश्नाति' इत्यादि 'एष ब्राह्मणो नारको भवति  
यः शूद्रान्नमसि 'नह वै प्रेत्य नरके नारकाः संती'त्यादि गतार्थः, केवलं त्वन्मतिः-देवा हि चन्द्रादय इव भवंतु प्रत्यक्षाः अन्ये-

गणधरवादः

॥२९८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥२९९॥

ऽप्युपयाचितादिफलदर्शनानुमानतो अचगम्यंते, नारकास्त्वभिधानव्यतिरिक्तार्थशून्याः कथं गम्यंत इति?, तत् प्रकृष्टपुण्यफलभाजि-  
सिद्धिदुत्कृष्टपापभाजिनस्ते मंतव्या इत्यष्टमः संबुद्धः८॥ हे अयलभाय हारिय! किं मन्नसि पुन्नपात्र अत्थि न वा । वेयत्थे संस-  
इओ विपडिवत्तीहि य बहूहिं ॥५०॥ 'पुरुष एवेदंभि' इत्यादि विधिवादस्तुत्यर्थवादानुगादादिपरतयाऽनेकधा वेदवाक्येष्विदं जात्या-  
दिमदत्यागापाद्वैतभाजनार्थं पुरुषस्तुतिपर, परमेकान्तशुद्धतयाऽऽकाशवत् प्रवृत्त्याद्यभावात् कर्मसचिवस्यैवैजनादिकर्तृत्वं नात्मनो  
जाघटीतीत्यस्तु कर्म, केवलमेतत् कथं 'पुण्यः पुण्येन पापः पापेन' त्यादि यदेवं विप्रतिपत्तयः-आचार्यमतानि तत्राहुः केचित्-  
पुण्यमेवैकं चयापचयक्षयैः सुखासुखापरगदं आरोग्यानारोग्यमृत्तिप्रदपध्याहारवत्, अन्ये त्वाहुः पापमेवैकमपध्यवत् वैपरीत्यदं,  
अन्ये उभयमपि संमिश्रफलं संसारिणामेकान्ततः सुखाद्यभावात्, नारकाणामपि पंचेन्द्रियादिपुण्यप्रकृत्यनुभावात्, अपरे तु स्वतंत्र-  
मुभयं विविक्तमुखासुखहेतुः क्षयाच्च मुक्तिरिति किमत्र तच्चमिति तेऽभिप्रायः, सौम्य! स्वल्पमपि पुण्यं न दुःखाय, पापं च न  
सुखाय, स्वभाजनतिवृत्तेः, उभयमिश्रं तु सर्वथाप्यसंभवि, अत्यंतपुण्यापुण्यातिशये युगपत्स्वर्गनरकादिसुखदुःखानुभवभावात् ।  
विविक्तपुण्यापुण्ये तु संगते एव स्वस्योदयोपशमनतो जंतूनां सुखदुःखयोर्वैचित्र्यसिद्धेरिति नवमः संबुद्धः९॥ मेयञ्जा कोडिन्ना !  
किं मन्नसि अत्थि नत्थि परलोओ । वेयपयाण य अत्थं विसयं च न याणसी सुणसु ॥ ५१ ॥ 'स वै अयं आत्मा ज्ञानमय'  
इत्यादि प्रेत्य-मृत्वा न पुनर्जन्म-परलोकसंज्ञाऽस्ति विज्ञानघनात्मनो भूतान्यनु विनाशादित्यभिप्रायस्ते, तन्न, क्वचिद् देहोपलब्धा  
यपि चैतन्यसंशयादिति, प्रेत्य-परत्र स्वान्येहाश्रिता संज्ञा नास्तीति, देहादन्यचैतन्यं चलनादिचेष्टानिमित्तत्वात् मारुतः पादपादि-  
नेति, चैतन्यमात्मधर्मस्तस्य चानादिमत्कर्मसंतत्यालिंगितत्वेन कर्मपरिणामापेक्षमनुष्यादिपर्यायांतरावाप्तिः अविहृद्वा, आरण्य-

गणधरवादः

॥२९९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३००॥

केऽपि ब्रह्मादियु तृणांतेषु श्लोकः, तथा वामांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि । तथा शरीराण्यपरापराणि,  
जहाति गृह्णाति च पार्थ ! जीवः॥१॥ इति दशमः१०॥ हे कोडिन्न पभासा ! मन्त्रसि निवाणमत्थि किं वा नो । अमुणंतो वैयत्थे विस-  
यविभागं तयं मुणसु ॥५२॥ 'जरामर्यं वा एतत्सर्वं यदग्निहोत्र'मिति, अत्राम्युदयफलमग्निहोत्रमिति, सदाकरणोक्तेः शिवावाप्तेः  
फियारंभकालाभावात् मोक्षाभावः, उक्तथासौ—'द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये परमपरं च, तत्र परं सत्यं, अपरं च ज्ञानमनंतं ब्रह्मे'ति ते  
मतिः, तन्न, यतो 'जरामर्यं वा' वाऽप्यर्थो यावज्जीवमपि, नतु नियोगत इति, शिवावाप्तिहेतुज्ञानादिक्रियाकालास्तित्ता दुर्वारेत्यस्ति  
मोक्षः, उच्यते च—'नाणं पयामगं सोहओ तवो संजमो अ गुत्तिकरो । तिण्हंपि समायोगे मुक्खो जिणसासणे भणिओ ॥ १ ॥  
(आ० नि०) तिर्यगादिभवस्य चात्मपर्यायत्वेन भवनिवृत्तौ न सर्वथा निवृत्तिः, कुंडलनिवृत्तौ हेम इव इति भवनिवृत्तावप्यनिवृ-  
त्तेर्भवादन्यो मुक्तात्माधारो वस्तुरूपो मोक्षोऽस्ति, शुद्धपदवाच्यत्वात्, जीवादिपदार्थवत्, व्यतिरेके खरविषाणादीत्येकादशोऽपि  
संचुद्धः ११ ॥ इय छिन्नमंमया ते जिणेण पन्नाविया पुणो पुच्चं । चउरो सह पंचसएहिं शुट्टेहि य तिहिं सएहिं कमा ॥५३॥  
तिउदं पुच्छा पुच्चरुयचारसंगा असंगिणा पट्टणा । भुवणन्महिण गणहरपयंमि संठाविआ मव्वे ॥ ५४ ॥ इय गणहरलोयस्स व  
मुद्दुमपपत्थप्पयानणेण जिणा । लोगप्पजोयगरा जे हुंति रविन्न तेसि नमो ॥ ५५ ॥ एंरिवा मिहिरादयोऽपि तर्चीर्थिक्रमतेन  
स्युरिति तद्विशेषाय उपयोगसंपद एव हेतुसंपदमाह—'अभयदयाण'मित्यादि, अभयं—इहलोकपरलोकादानाकस्माजीवितमर-  
णाश्लोकलक्षणमस्रमयाभायं दयंत इत्यभयदास्तेभ्यः ३ 'सरणदयाणं' रागादिभयभीतसन्धानां शरणं—त्राणं दयंत इति शरण-  
दयास्तेभ्यः ४ 'बोहिदयाणं' बोधिं—भवांतरे शुद्धधर्ममंश्राप्तिं दयंत इति बोधिदयास्तेभ्यः ५, एतानि च यथोत्तरं पूर्वपूर्व-

गणधरवादः

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३०१॥

फलभूतानि, तथाहि-अभयफलं चक्षुः चक्षुःफलं मार्ग इत्यादि संपत्, अथाद्याया एव विशेषोपयोगसंपदमाह-‘धम्मदयाण’-  
मित्यादि, धम्म-देशसर्वचारित्रलक्षणक्रियापरिणामगर्भं यथाह दयंत इति धर्मदयास्तेभ्यः ३ अत्र हेत्वंतराणां सद्भावेऽपि भग-  
वन्त एव धर्मप्रदाने प्रधानहेतव इति, धर्मदयत्वं च धर्मदेशनयैव स्यादित्याह-‘धम्मदेसयाणं’ धर्मं प्रस्तुतं यथायोग्यमवन्ध्य-  
तया देशयन्तीति धर्मदेशकास्तेभ्यः, ‘धम्मनायगाणं’ धर्मस्य वशीकरणात् फलभोगात् प्रवर्धनात् व्याघातरक्षणाच्च नायका-  
स्तेभ्यः ‘धम्मसारहीणं’ प्रस्तुतधर्मस्य भव्यापेक्षया सम्यग्दर्शनप्रवर्तनपालनयोगात् सारथयो धर्मसारथयस्तेभ्यः, जह सारही  
सुकुसलो रहं तुरंगे तहा पयट्टेइ । जह नवि होइ अवाओ तुरंगमाणं रहस्सावि ॥ ५६ ॥ एवं जिणुत्तमेहिवि उस्सग्गववायपमुहजु-  
चीहिं । एगंतहिओ धम्मो उवइट्ठो धम्मधम्मीणं ॥५७॥ इह धम्मो होइ र्हो तुरंगमा तस्स धारगा पुरिसा । उभयहियमुवइसंता  
जिणनाहा धम्मसारहिणो ॥५८॥ ( ३३७-३३८-३३९ ) ‘धम्मवरचाउरंतचक्खवट्ठीणं’ धम्म एव वरं-प्रधानं चतसृणां  
गतीनामंतकरणाच्चक्रमिव चक्रं मिथ्यात्वादिभावशत्रुलवनाद्धर्मचक्रं तेन वर्त्तत इत्येवंशीला धम्मवरचातुरंतचक्रवर्तिनस्तेभ्यः ४,  
‘अतः समुद्धवादावा’इति (हैम० ८-१पा०) प्राकृतयज्ञवशादाच्यं, यथा-उत्तरओ हिमवंतो पुषावरदाहिणा तओ अंता । लवणसमुदं  
पचा तो भरहं चाउरंतमिणं ॥ ५९ ॥(३४१)एयस्स सामिणो जह भरहाई चक्खवट्ठिणो हुंति । धम्मवरचाउरंतस्स तह जिणा चक्ख-  
वट्ठिस्समा ॥६०॥(३४२)अहवा चउदिसि धारं चउरंतं चक्खमुचइ तहेव । दाणतवसीलभावणचउधारं धम्मचक्खमिणं ॥६१॥ (३४३)  
संपत् ६। अथाऽऽद्ययोरेव सकारणस्वरूपसंपदमाह-‘अप्पडिहये’त्यादि, अप्रतिहते-सर्वत्राप्रतिस्खलिते वरे-क्षाधिकत्वात् प्रधाने  
ज्ञानदर्शने-विशेषज्ञानान्यावबोधरूपे धारयंतीत्यप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधराः तेभ्यः, ‘वियट्ठउमाणं’ छादयतीति छन्न-ज्ञानावर-

शक्रस्तव-  
व्याख्या

॥३०१॥



श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥३०२॥

णीयदर्शनारणीयमोहनीयांतरायेतिघातिरुर्मचतुष्टयं तद्व्यावृत्तं-अपगतं येभ्यः ते व्यावृत्तच्छदानः तेभ्यः२, नष्टु अद्वि कम्माइं  
जिणाण नट्टाइं किं चउकेण ? । सचं ओसरणत्थे पडुच्च छउमक्खओ भणिओ ॥६२॥ संपत् ७। अथ स्वतुल्यपरफलकर्तृत्वमाह-  
'जिणाण'मित्यादि, जिनेभ्यः-स्वयं च रागादिजेतृभ्यः, जापकेभ्यः अन्येषामप्युपदेशादिना रागादिजयकारयितृभ्यः, तीर्णेभ्यः  
स्वयं भवार्णपरगतेभ्यः परेषामपि ततस्तारयितृभ्यः बुद्धेभ्यः स्वयंज्ञाततत्त्वेभ्यः बोधकेभ्यः अपरेषामपि तत्रज्ञापकेभ्यः मुक्तेभ्यः  
स्वयं भवहेतुरुर्मपाशनिर्गतेभ्यः मोचकेभ्य इतरेषामपि ततः प्रमोचयितृभ्यः ४, संपत् ८, एतावता केवल्यवस्थाभावनोक्ता, सांप्रतं  
सिद्धान्स्थामाश्रित्य नवर्मी संपदमाह-'सघन्नूण'मित्यादि, सर्वं वस्तु सामान्यविशेषात्मरूपमपि प्रथमसमये विशेषात्मकतया जानं-  
तीति सर्वज्ञास्तेभ्यः, ततो द्वितीयसमये सर्वं वस्तु सामान्यात्मकतया पश्यंतीत्येवंशीलाः सर्वदर्शिनस्तेभ्यः, आह-इत्यमेपां  
दर्शनसमये ज्ञानस्यासत्त्वात्सर्वज्ञताप्रसंगः, नैवं, सर्वस्य केवलिनः सदैव ज्ञानदर्शनलब्धिसद्भावेऽपि तत्स्वाभाव्यान्न युगपदेकस्मिन्  
समये उपयोगद्वयसंभवः, क्षायोपशमिरुसंवेदनेऽपि तथा दर्शनात्, न च चतुर्ज्ञानिनोऽप्येकस्मिन् ज्ञानोपयोगे सति शेषज्ञानाभावः  
स्यात्, अत्र बहु वक्तव्यं, तत्तु नोच्यते (तच्च बृहत्कल्पतो ज्ञेयं) ग्रंथगौरवभयात्, तथा अत्रतिहतवरेत्याद्युक्त्वा पुनरिह विशेषण-  
द्वयोपादानं मुक्तापस्थापेक्षं 'सिवमलयं चे'त्यादि, शिवं सर्वोपद्रवाभयात् अचलं स्वाभाविकप्रायोगिकचलनक्रियाविरहात् अरुजं रोग-  
यजित्वात्, अनंतं अनंतसिद्धमानात् (अनंतज्ञानान्मत्त्वाद्वा), अक्षयं विनाशहेतुभावात् अव्यायधं देहमनोव्याधाधारहितं अमूर्त्त-  
त्वात् न पुनर्भवे आशुक्तिः-आगमनं यस्मात् तदपुनरावृत्ति भवभ्रमणहेतुरुर्माभावात्, उक्तं च-दडुंमि जहा धीए न होइ पुण  
अटुरस्स उप्पत्ती । तह कम्मपीपरिह्हे भण्डुरस्सापि नो भायो॥६३॥(२८६)त्ति, सर्वत्र मिद्विगतजीवानामिति गम्यं, आवेयवशा-

शक्रस्तव-  
व्याख्या

॥३०२॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३०३॥

दाधारस्यापि तद्व्यपदेशो न दुष्ट आधाराधेयोरभेदोपचारात् मंचाः क्रोशंतीत्यादिव्यपदेशवत् शिवगतिनामधेयं लोकाग्रं स्थानं-  
निवासं सम्यक् सर्वकर्मोन्मूलनेन, नतु एकेंद्रियादिवत्सकर्मकत्वेऽपि, प्राप्ता-गतास्तेभ्यः 'नमो जिणाणं जियभयाण'मिति  
तृतीय आलापकः सुगम एव, अत्र च भाष्यं—“सबन्नूयाइ पढमो वीओ सिवमयलमाइ आलावो । तइओ नमो जिणाणं जिय-  
भयाणंति निदिट्ठो॥१॥त्ति, एवं च त्रयस्त्रिंशदालापकप्रमाणोऽयं जीवाभिगमादिसिद्धांतललितविस्तरावृष्याद्यनुसारेण व्या-  
ख्यातः, पुनरंते नमस्कारामिधानं मध्यपदेऽप्यनुवृत्त्यर्थं, अत्र च स्तुतित्वान्न पौनरुक्त्यं, यदागमः—“सज्झायज्ञाणतवओतहेसु  
उवएसधुइपयाणेसु । संतगुणकित्तणेसु य न हुंति पुणरुत्तदोसा उ ॥ १ ॥ अनेन च जिनजन्मादिषु शक्रो जिनान् स्तौतीत्ययं  
शक्रस्तवोऽप्युच्यते, अथ चूर्णिः—“एस भावारिहंतसब्भूयगुणकित्तणंति पढमो अहिगारो, इयाणि कालत्तयवत्तिदवारिहंतसंथवणंति  
पीयोऽहिगारो भन्नइ, यद्भाष्यम्—“विसयवहुत्ते किरिया भायुल्लासाउ बहुफला होइ । पणिवायदंडगोवरि भन्नइ तम्हा इमा  
गाशा॥१॥(३६२)॥जे य अइयासिद्धा जे य भविस्संतीऽणागए काले । संपइ य वट्टमाणा सञ्चे तिविहेण वंदामि ॥१॥  
चे ष अनंजा अति जिनाः अतीताः सिद्धाः—अनंता अतिक्रान्तकाले मुक्ताः, ये च अनंता जिना भविष्यंति सिद्धा इत्यत्रापि योज्यं  
अनागतानि काले. संप्रति वर्तमानाः, इदानीमपि येऽनासादितभावार्हत्पदा वर्तते, छद्मस्था इत्यर्थः, एतेन छद्मस्थभावनमप्युक्तं,  
तथा च लघुभाष्यम्—जे य अइयगाहाए वीयहिगारेण दवअरिहंते । पणमामि भावसारं छउमत्थे तिसुवि कालेसु॥१॥त्ति, तान्  
सान्ति तिविधेन-विहरणविशुद्धं वंदे नमामि स्तवीमि च, ननु किं द्रव्याहंतो नरकादिगतिगता अपि भावार्हद्वंद्वनार्हाः?, कामं,  
॥१॥मिति चेइ उच्यते—आगनपानाप्यात्, तथा चावश्यकचूर्णिष्वपि उक्तं—‘उक्कोसपएणं सत्तरं तित्थयरसयं जहणयपएणं

शक्रस्तव-  
व्याख्या

॥३०३॥

धीदे०  
पैत्य० श्री-  
पर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३०४॥

वीसं तित्थयराणं तत्र एगकाले भवन्ति, अइया अणागया अणंता, ते तित्थगरे नमंसामि"ति, किंच-सर्वत्र नामस्थापनाद्रव्या-  
हंतो भागार्हदग्ध्यां हृदि व्यवस्थाप्य नमस्कार्याः, एतद्ज्ञापनार्थमेव च पूर्वाधिकारोक्ता अतीता अरिहंता जे य अइया सिद्धा इति  
पुनर्भणनं, भणितं च चैत्यवंदनाचूर्णौ—“पुष्पाहिगाराभिहियअतीतारिहंताणं पुणो जे य अइया सिद्धत्तिपएण भणणं भविस्स-  
यद्दमाणजिणा हि पत्तभागरिहंतभागा एव वंदेयत्ता, न नरगाइभववत्तिणोत्ति जाणावणत्थं”ति, भरताधिपेनापि च इत्थमेव नम-  
स्सकृतत्वात्, तद्दृष्टान्तथायम्—

अत्थि अउज्झानयरी नव्वकुलालंक्रिया नवपुरिव्व । जाए करवालुप्पाडणं तु समणाण न जणाणं ॥ १ ॥ अविद्य-सत्तमुणि-  
मित्तगच्छियमणेगमुणित्तं कुला सुरपुरिं पि । एगवुहं भूरिपुहा हसइव जा तूरसिएहिं ॥ २ ॥ साहियअखंडछकखंडभारहो तत्थ भरह-  
चत्तयई । आखंडलुव्व अक्खंडमागणो पालए रज्जं ॥ ३ ॥ तथा 'छन्नवइगामकोडीण वाणवइदोणमुहसहसाणं । विसयरिपुरसह-  
माणऽट्टनत्तपट्टणमहस्साणं ॥ ४ ॥ तहय चउवीसकव्वडसहसाणं सोलखेडसहसाणं । वीमाऽऽगरसहसाणं चउदससंबाहसहसाणं  
॥ ५ ॥ छप्पन्न तूरजाणं गुणवत्तासंतरोदयाणं च । सामित्तं कुणइ तहा चउवीसमडंबसहसाणं ॥ ६ ॥ सवणसुहकारिदत्तदिसिविसा-  
रिजयमइपंनमो कइया । उच्छलिओ गयणयले चउव्विहाऽऽउज्जगहिरमरो ॥ ७ ॥ तं सोउ संभमुव्वभंतलोयणेणं निवेण पडिहारो ।  
किमिणंति पुत्तिओ मणइ इय सिरे अंजलिं काउं ॥ ८ ॥ देवाणुपिया सइजस्स दंसणं अहिलसंति कंखंति । जन्नामस्सत्तणेणवि हय-  
हियया हुंति ग जयगुरू ॥ ९ ॥ आगागणेण छत्तत्तयेण चमरेहिं धम्मचक्रेण । सह पायपीडसीहासणेण धम्मज्झएण तहा ॥ १० ॥  
कमकमलअक्षिद्धियकणयनलिणनत्तणेण नमिरमिगररेहिं । पवणेणऽणुहूलेणं पयाहिणावत्तसउणेहिं ॥ ११ ॥ दिट्टमुहकंठएहि य गयण-

मरीचि-  
दृष्टान्तः

॥३०४॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
भर्म० संघा-  
चारिणी  
॥३०५॥

यलविसारिदुंदुहिसरेण । इह अट्टाचयसेले सिरिरिस्सहजिणो समोसरिओ ॥ १२ ॥ तं सोउ हट्टतुट्टो अद्धत्तेरम सुवन्नकोडीओ ।  
पीईदाणं दलयइ भरहो विचिस्स तस्स तओ ॥ १३ ॥ सह अंगरक्खलक्खेहिं अंगरक्खेहिं तह य जक्खेहिं । सोलमहिं सहस्सेहिं य  
परियरिओ सहसकिरणोव्व ॥ १४ ॥ देसाण विमाणणव सामीणं मउडवद्वराईणं । वत्तीससहस्सेहिं सेविओ सहसनयणोव्व ॥ १५ ॥  
रयणेहिं चउदसहिं मणोरमेहिं विरायमाणो सो । कयदेहसंगहोविव जंजुदीओ महनईहिं ॥ १६ ॥ तत्थ-चम्ममणि कागिणी सिरिहरम्मि  
दंडासिचक्कत्ताणि । जायाणि आउहगिहे इय सत्तेगेदिरयणाणि ॥ १७ ॥ उत्तरसेटीए थीरयणं हयगय वियदुगिरिमूले । सेणाइ  
गाहाइ पुरोहि वडुइ विणीयाए ॥ १८ ॥ पयतलगेहिं निहीहिं य विहरंतजिणुव्व नरहिं कमलेहिं । तिसएहिं तिसट्टेहिं य ख्वेहिं  
दिणेहिं वरिसोव्व ॥ १९ ॥ वत्तीसहिं लक्खेहिं वत्तीमत्तिवद्वपवरनट्टाणं । तह निउररक्कनाणं जणययकल्लाणयाण तहा ॥ २० ॥ हय-  
गयरहाण चुलसीलक्खेहिं छन्नपतिकोडीहिं । पाईक्काण तहउट्टारसेहिं सेणिप्पसेणीहिं ॥ २१ ॥ अन्नेहिवि राईमरतलउरकोडुंविसि-  
ट्टिमाईहिं । परियरिओ भरहनिवो नमणत्थं निग्गओ नयरा ॥ २२ ॥ पविसिचु समोसरणे विहीए भरहो नमिय जयनाहं । सुणइ  
इय सयलमलमलिलसंनिहं देसणं पट्टणो ॥ २३ ॥ “भत्तिवहुमाणपूयाथुइसेमानमणवंदणाईहिं । लहइ जिणाईण जिओ तित्थयर-  
त्ताइवररिद्धी ॥ २४ ॥ नियमइ य तित्थगुत्तं नियमा मणुओ तिहावि सुहलेसो । आसेविएहिं बहुसो वीमाए अन्नपरएहिं ॥ २५ ॥  
जओ-जिण १ सिद्ध २ पवयण ३ गुरु ४ थेर ५ बहुस्सुय ६ तउस्सी ७ वच्छं । नाणु ७ वओगो ८ दंसण ९ पिनया १०-  
वसयविहि ११ सीलवयं १२ । ३० ॥ अणइक्कमो खणलव १३ तउ १४ चय १५ वेयावच १६ विहिसमाही य १७ । अप्पुव्व-  
नाणगहणं १८ सुयभत्ति १९ पभावणा वीसं २० ॥ ३१ ॥ अह नरवइणा पुट्टो पट्ट कहित्थित्थ भावजिणचक्की । तहय अपुट्टे

मरीचि-  
दृष्टान्तः

॥३०५॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
नर्म०सधा  
चारविधौ  
॥३०६॥

बलहरिपडिहरि तह किंपि जपेमि ॥३२॥ तथाहि-नमिय जिणं उच्छं जिण ? चक्कि २ हरि ३ उलाणधनाम?पुररपिभरो ४ ।  
सुमिण५ कुल६ गुत्त७ वन्ने८ माणा९धु१०गदं११ तराईणि१२ ॥१॥ उमभो अजिओ संभत्र अभिनन्दण सुमइ सुप्पह मुपामा ।  
चदप्पह सुत्रिहि सीयल सिञ्जंसो वासुपुञ्जो य ॥२॥ विमलमनंतइ धम्मो संती कुंधू अरो य मल्ली य । मुनिसुवय नमि नेमी पामो  
वीरो य जिणनामा ॥३॥ जम्मपुरी दो त्रिणिया सावत्थी दो अउज्झ कोसंवी । वाणारसी चंदउरी कायंदी भदिलपुर च ॥ ४ ॥  
सिंहपुर चप कंपिह्जउज्झ रयणउर तिगयपुर मिहिला । रायगिह मिहिल सोरियपुराणाससी य कुंडपुर ॥ ५ ॥ नाही जियमतु  
जिआरि सवरो मेइ धर पईट्टनिवो । महसेन सुगीर ददरथ विण्हू उसुपुञ्ज कयवम्मा ॥६॥ सिंहरह भानु विमसेण छर सुदरिसण  
कुंभ य सुमिच्चा । विजये समुद्विजयाऽऽससेण सिद्धत्थ जिणपिओ ॥ ७ ॥ मरुदेवी विजयादेवा सेणा सिद्धत्थ मंगल मुसीमा ।  
पुहरी लक्ष्मण रामा नदा विण्हू जया साम्भा ॥८॥ सुजमा सुवय अइरा सिरिदेवि पभापई य पउमवई । उप्पा भिच्चा य चामा  
तिमलादेवी य जिणमाया ॥९॥ गयवसहसिंहअभिसेय दाम ससि दिणयर झयं कुम्भं । पउमसर सागर त्रिमाणभरण रयणऽग्गि  
सुमिणत्ति ॥१०॥ निरउव्वट्टाण इह भवणं सग्गच्छुआण उ विमाण । वीरुपहसेमजणणी नियंसु ते हरिउमहगपाई ॥११॥ दुनरय  
कप्पगिविच्चा हरि य तिनरयत्रिमाणएहिं जिणा । पढमा चक्कि दुनरया बला चउसुरेहि चक्किबला ॥ १२ ॥ जिणचकीणं जणणी  
नियंति चउदस गयाइ वरमुमिणे । सगचउतिगएगाइ हरिबलपडिहरिमडडियमाया ॥१३॥ गोयमगुत्ता हरिवससंभवा नेमिसुवया  
दोवि । कामवगुत्ता इवखागवसजा सेसवावीस ॥१४॥ पउमउसुपुञ्ज रत्ता ससिसुत्रिही सेय नमिमुनी काला । पामो मल्ली नीला कण-  
यनिहा सोल सेसु जिणा ॥१५॥ पणधणुमय पन्नऽट्टसु दम पणमु पन्नऽट्टसु य धणुहाणी । नउमत्तकरुस्सेहे आयगुलिगीससउ सव्वे

मरीचि  
दृष्टान्तः

॥३०६॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म०संघा  
नारविधौ  
॥३०७॥

॥१६॥ चउधणुवारसदुगागयमायंगुलपमाणअंगुलयं । ते उसहो वीससयं वारंगुलहाणि जा सुविही ॥ १७ ॥ वीसंसदुअंगुल जाव  
हाणिऽनतो तयद्धु जा नेमी । सगवीसंसा पासो इगवीसंसो महावीरो ॥ १८ ॥ आऊ चुलसी विसयरी मट्टी पन्नाय चत्त तीस वीस । दस  
दो इगपुव्वलक्खा सग चुलसी विसयरी सट्टी ॥ १९ ॥ तीस दस एग लक्खा वंरिमाणं सहसपणनपइ चुलसी । पणपन्ना तीम दस  
एगु सहस सय च दुगसयरी ॥ २० ॥ चुलसीइ वरिसलक्खा पुव्वंगं तग्गुणं भवे पुव्वं । सत्तरिकोडी लक्खा वरिसा ठप्पन्न सहस  
कोडि ॥ २१ ॥ पुव्वगहयं पुव्वं तुडियंगं वासकोडिकोडीओ । गुणमट्टि लक्खसगरीस सहस्स चत्तारि य सया उ ॥ २२ ॥ अट्टा-  
वयंमि उसहो वीरो पायाइ रेवये नेमी । चंपाए णसुपुजो सम्मेये सेसजिणमिद्धा ॥ २३ ॥ इह पन्न तीस दस नत्रकोडिलक्खा कोडि  
सहस नत्रनवई । नत्र अयरकोडिमई नत्रकोडि नत्रकोडि इगकोडि ॥ २४ ॥ अयरमयपरिसल्लवट्टिलक्खलव्वीससहस्म ऊणयर ।  
चउपन्न तीस नव चउ तिय अयरा पउणपलिऊणा ॥ २५ ॥ पलियद्धं कोडिसहस वरिससऊणो य पलियचउभागो । वरिसाण कोडि-  
सहसा लक्ख चउपन्न छप्पंच ॥ २६ ॥ पउणचुलसीइ सहमा अट्टाइसयत्ति अतरत्तिवीसे । अयरेग कोडिकोडि वायालसहस्सवरिखणो  
॥ २७ ॥ इगइगतिगइगतिय इगइगसयरी इगार पलियचउभंगो । सुविहाइसगतरयंमि तित्थच्छेओ न सेसेसु ॥ २८ ॥ चक्की भरहो  
सगरो मधव सणंकुमार संतिक्कुथुअरा । सुभुम महपउभ हरिसेण जउनियो वंभदत्तो य ॥ २९ ॥ चक्किजमपुरि विणीया अउज्झ  
सावत्थि गयउरे पंच । वाणारसी कंपिल्ले रायगिहे चेव कंपिल्ले ॥ ३० ॥ चक्किजणणी सुमंगल जसपइ भइ सहदेवी अइर सिरिदेवी ।  
देवी तारा जाली मेरा वप्पा य चुलणी य ॥ ३१ ॥ उसभे सुमित्तविजए समुदपिजए य आससेणे य । तह वीससेण छरे सुदरिसणे  
कित्तिविरिए य ॥ ३२ ॥ पउमुत्तरे महाहरि विजये वंभे पिया उ चक्कीणं । इक्खागपंसकासग्गुत्ताण सुवन्नवन्नाणं ॥ ३३ ॥ पणधणु-

मरीचि-  
दृष्टान्तः

॥३०७॥

पणमय मट्ट दुचत्त सट्टेगच्च पणतीमा । तीस अड्डीस वीसा पनरस चारमयधणुत्तणुणो ॥ ३४ ॥ निग्गआऊ चुलसी विसयरि  
 पुच्चलक्खवाण तिण्ण समलक्खवा । पणनवड् चुलसी सट्टी तीस दस तिसहस विति सत्तसया ॥३५॥ अड चकी पत्त सिवं सुभूम  
 वभो य अप्पइट्ठाणे । मघवं सणंकुमारो सणंकुमारगया कप्पं ॥३६॥ उसभे भरहो अजिए सगरो मघवं सणंकुमारो य । सिरिधम्म-  
 संतिअतरि संतिकुथुअरजिण चकी ॥३७॥ अरमल्लिमज्झि सुहूमो सुणए पउमो नमिम्मि हरिसेणो । नमिनेमिअंतरि सुजओ नेमि-  
 पासंतरे वंभो ॥ ३८ ॥ नेसप्पे पंडुयए पिंगलए सव्वरयण महपउमे । काल महकाल माणव संखे चकीण नपनिहिणो ॥ ३९ ॥  
 पलिओवमाउ तन्नामसुरगिहा वेरुल्लियमणिकवाडा । कक्केयणमयमज्जूससंठिया जण्हवीड मुहे ॥४०॥ घरघन्नभूसणमणीत्थकालद्ध-  
 जुड्डनट्टविही । चक्कट्टिया जोयण अड नग्गारुच्च पिहुड्डदिहा ॥ ४१ ॥ सेणावइ गाहापइ पुरोहि वड्डइ गयत्थिहयचकं । दंडासि  
 छत्तकागिणि चम्माणि पणिदिग्गिंदी सग ॥४२॥ असि वत्तीसंगुल दुकर चम्मू वामपम चक छगुदंडं । हुंति पुण चारजोयण चम-  
 छत्ता चक्किणा पुट्टा ॥४३॥ चउरगुलप्पमाणो सुग्गन्नरकागिणी छलंसो य । चउरगुलमणि तस्सद्ववित्थडो रयणचउदसगं ॥४४॥  
 जक्ख सोल सोलसहसदुगुणानि निवि३२यर३२ कन्न३२ वेस३२ देमपुरा । छन्नवइ कोडिसुहडा गयहयरहचकचुलसीई ॥४५॥  
 वत्तीमसहस्मा नाडयाण वत्तीसविहिनिवट्टाणं । सुवा तिमयतिवट्टा अटार सेणी पसेणी य ॥४६॥ कव्वडमडं चउवीसमहस दुत्ति-  
 गुणिय पट्टणाइपुरा । छप्पन्न अतरोदग गुणन्न कुरज्ज तह भरहे ॥ ४७ ॥ छन्नवई गामकोडी दोणमुहा९९ऽऽगरय२० खेड१६  
 संवाहा १४ । नवनवइ वीम सोलस चउदसहसाइ छरुखंडा ॥४८॥ एयाण वियड्डुस्सवि दसहियसयदेसपुरदुसेट्ठिस्स । सामिचाइ  
 करता चक्कधरा हुंति इय वलिणो ॥ ४९ ॥ वत्तीस निग्गसहस्मा सव्वग्गलेणं तु संकलनिवट्ट । अज्जंति चक्कट्टिं अगडवडंमी ठियं

संतं ॥५०॥ घिचूण संकलं सो वामगदत्थेण अंछमाणणं । भुंजिज्ज विलिम्पिज्ज व ते तंभुठिया न चायंति ॥५१॥ विण्हु तिविद्वु  
दुविद्वु सयंभु पुरिसुत्तमे पुरिससीहे । तह पुरिसपुंडरीए दत्ते लक्खमण कण्हे य ॥५२॥ विण्हुवलजम्मनयरे पोयणपुरवारवई-  
तिगस्सपुरं । चकपुरं वाणारसी रायगिहं महुरनयरी य ॥५३॥ हरिमायाउ भिगावइ उमा य पुहवी य सीय अम्मयया । लच्छि-  
वई सेसवई केगई देवई चेव ॥५४॥ हवइ पयावइ बंभो रुदो सोमो सिवो तह सिवो य । अग्गिसिहो य दमरहो वसुदेवो विण्हु-  
वलपियरो ॥५५॥ कासवगुत्ता इक्खागवंसजा पउमलक्खणा दोत्ति । हरिवंसकुला गोयमगुत्ता सेसट्टजुयलाओ ॥ ५६ ॥ चक्कि-  
द्धरिद्धिबलिया चक्कधणुगयासिसंखमणिमाला । सग रयणा गरुडझया नीलतणूसी(पी)यवमण हरी ॥ ५७ ॥ विण्हुवलदेहमाणं  
असीइ सत्तरी य सट्टि पन्नासा । पणयाला गुणतीसा वीस सोलस दस धणूणि ॥ ५८ ॥ हरिआउ वरिगलक्खा चुलसी दुग-  
सयरि सट्टि तीस दस । सहस्साइं पंचसट्टी चउप्पन्ना चारसेगं च ॥ ५९ ॥ पढमो अपइट्टाणे पंच य छट्टीइ पंचमी एगो । एगो  
य चउत्थीए चरिमहरि बालुयपभाए ॥६०॥ सेयंसंमि तिवद्वु वसुपुज्जि दुविद्वु सयंभु विमलंमि । पुरिसुत्तमो अणंते धम्मजिणे  
पुरिससीहहरी ॥६१॥ अरमल्लिअंतरे सुभुम मल्लोए पुरिसपुंडरिय दत्ता । सुणिसुव्वयनमि अंतर लक्खमणो कण्ह नेमिमि ॥६२॥  
॥६२॥ चक्किदुगं हरिपणगं चक्की पण केसवो य चक्की य । केमव चक्की केसव दुचक्कि केसी य चक्की य ॥६३॥ जिण चक्कीदुग  
अड जिण जिणहरिपण दुचक्किजिण हरि चक्की । हरि जिण जिण जिणचक्की चक्कि चक्किजिण हरिचक्की जिणा ॥६४॥  
हरिजिट्ठभायरो नव बलदेया अयल विजय भदा य । सुप्पभ सुदंसणाऽऽणंद नंदणा राम बलभदा ॥ ६५ ॥ बलजणणीओ भदा  
मुभद सुप्पह सुदंसणा विजया । विजयंती य जयंती अपराजिय रोहिणी चेव ॥६६॥ हरिअद्वंतपुराईवला चला नीलवसण ताल-



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१०॥

श्या । हलमुसलवामकुंडलमणिमालारयणी सेयतणू ॥६७॥ पंचासी पन्नत्तरि पणसट्टी पणपन्न सत्तरसमलकूखा । पणसि पणट्टी  
पनरम सहस सय वारसवलाऊ ॥६८॥ अट्ट वलदेव सिद्धा नमो उ दसायराउ वंभ चुओ । नियभायकण्हजियअममतित्थि इह  
सिज्झिही भरहे ॥६९॥ चउपलुत्तमपुरिसा इह एवं हुंति जीवपन्नासं । नवपडिविण्हूहि जुआ तेसट्टि सलागपुरिस भवे ॥७०॥ इह  
आसगीप तारग मेरय महु केढवे निमुंभे य । बलि पल्हाए रागण जरसिंधू हुंति पडिविण्हू ॥७१॥ पुब्बुत्तहरीण अरी एए वल-  
सामिणो य चक्कधरा । पज्जतसमयंमि य चक्कि हरिहया नरयमुवयंति ॥७२॥ भणियं च—“अनियाणकडा रामा सब्बेविय केसरा  
नियाणकडा । उडुगामी रामा केसव सब्बे जहोगामी ॥७३॥ पणपंती तीसधरा तिरि उडुं छ चउतीसरेहाहिं । आइघरपणगि अरिहंत  
चक्की हरि नाममाणाउ ॥ ७४ ॥ आइमपंतीइ जिणा पनरस दो सुन्न तिजिण सुन्नतिग । दोन्नि जिणा सुन्नजिणा सुन्नजिणो सुन्न  
जिण सुन्नं ॥७५॥ वीयाइ दुचक्की सुन्न तेर पण चक्कि सुन्न चक्की य । दोमुन्न चक्कि सुन्नं दुचक्कि सुन्नं चक्किदुसुन्नं ॥७६॥  
तियपंती दत्त सुन्नं केमवा पच पच सुन्न हरी । सुन्न हरि दोसुन्ना हरि दोसुन्ना हरि तिसुन्ना ॥७७॥ भरहुसहा सगराऽजिय समग  
मुणिपउम नेमिहरियेणा । सिंलंभाइतिवट्टाइ पणसमं नेमिकण्हा य ॥७८॥ अडसंभवाइ संति पितिग मल्लिपासदुगपिहुघरा एए ।  
तिचउ अडिगार वारस चक्क छसगट्टमहरी य ॥७९॥ मघसणं धम्मतित्थे अरनमिनेमीण सुभुम जय वंभा । अरतित्थि पुरिस-  
पुडरिय दत्त लक्खणुमुयतित्थे ॥८०॥ पणसय धणुपन्नऽट्टसु दस पंचसु पण अढाइ एगूणा । चत्तपणतीसतीसे गुत्तीस अडवीस  
छव्वीसा ॥८१॥ पणवीस तीस सोलस पनरस वार दस सत्त धणूणि नव । सगरयणी तणुमाणं दुतीसधर एस तह आऊ ॥८२॥  
चुलसी विसयरि सट्टी पन चत्ता तीस वीस दस दु इगं । पुब्बलक्ख वरिसलक्खा चुलसी विहत्तर सट्टि तीस दस ॥ ८३ ॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३११॥

पणतिगलकृषु महसा पणनवई चुलसी पणसट्टी सट्टी य । छप्पन्न पणपन्ना तीस बार दस तिन्नि इग सहसा ॥८४॥ सयसत्तएगु  
हरि सविस विहत्तरि एवमिह समासेणं । उत्तमनरपंचासी सिरिविज्जाणंदसुरिथुया ॥८५॥ इय गुणसट्टिजियाणं इमाण तेसट्टिसला-  
गपुरिसाणं । चउपत्तुत्तमपुरिसा सोउमइहरिसिओ हियए ॥८६॥ (प्रत्यन्तरे अरिहंत१ सिद्ध२ पवयण३ गुरु४ थेर५ बहुस्सुए६  
तवस्सीसु७ वच्छल्लया य एसिं अभिक्खनाणोवओगे८ य ॥८७॥ दंसण९ विणए१० आवस्सए११ य सीलव्वए१२ निरइयारो । खण-  
लव१३ तव१४ चियाए१५ वेयावच्चे१६ समाही१७ य ॥८८॥ अप्पुव्वनाणगहणे१ सुयभत्ती१९ पवयणे पभावणया २० । एएहिं कार-  
णेहिं तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥८९॥” अह नरवइणा पुट्टो जिण चकी इत्थ भाविणो भयवं ! । इय कहइ तहा य अपुच्छिएवि बल-  
विण्हुपडिविण्हू ॥९०॥ तथाहि-होही अजिओ संभव अभिनंदण सुमइ पउमपह सुपासो । चंदप्पह सुविहि सीयल सिजंसो वासुपुज्जो  
अ ॥९१॥ विमल अणंतइनाहो धम्मो तह संति कुंथु अर मल्ली । मुणिसुव्वय नमि नेमी पासो चउवीसमो वीरो ॥ ९२ ॥ होही  
सगरो मघवं सणंकुमारो य संति कुथु अरो । चक्की सुभूम महपउम तहय हरिसेण जय बंभा ॥९३॥ अयले विजये भदे, सुप्पमे  
य सुदंसणे । आणंदे नंदणे पउमे, रामे य नवमे बले ॥९४॥ विण्हू-तिविट्टय सयंभू, पुरिसुत्तमे पुरिससीहो । तह पुरिसपुंड-  
रीए, दत्ते नारायणे कण्हे ॥९५॥ आसग्गीवे तारय मेरय महु केढवे निमुंभे य । बलि पल्लहाय दससिरे पडिविण्हू तह जरासिंधू  
॥९६॥ गुणसट्टिजियाण इमाण कहइ तेसट्टिसलागपुरिसाणं । पियमाइपुरपमाणाउवण्णपरियायगुत्तगई ॥९७॥ पुण भणइ निवो  
नणु पहु ! इमीइ सुरअसुरमणुयपरिसाए । सो अत्थि जिओ जो इहज्वसप्पिणीए जिणो होही ? ॥ ९८ ॥ भणइ पहु तुह पुत्तो  
पढमपरिव्वायगो मरीइ इमो । होही चउवीसइमो तित्थयरो इह महावीरो ॥९९॥ पढमो य वासुदेवो तिविट्टुनामेण पोयणा-

हिरई । मूकापुरीइ चक्की पियमित्तो तं (मह) विदेहेसु ॥१००॥ तं वयणं सोऊणं राया अंचियतणूरुहसरीरो । अभिवंदिऊण पियरं मरीइमभिवंदिउं जाइ ॥ १०१ ॥ तं भणइ गंतुमिय ते न य वंदे चक्किअद्धचक्कित्तं । नवि ते पारिव्वज्जं वंदे न इमं च ते जम्मं ॥१०२॥ किंतु जमुत्तो ताएण तंसि चरिमो जिणो महावीरो । इण्हिपि तुज्झ वंदे तं अरिहत्तं तिजयऽपुव्वं ॥१०३॥ यदागमः—  
“सो विणएण उवगओ काऊण पयाहिणं च तिकखुत्तो । वंदइ अभित्थुणंतो इमाहिं महुराहिं वग्गूहिं ॥१०४॥ लाभा हु ते सुलद्धा जंसि तुमं धम्मचक्कवट्टीणं । होहिसि दसचउदसमो अपच्छिमो वीरनामोत्ति ॥ १०५ ॥ एवं णं थोऊणं काऊण पयाहिणं च तिकखुत्तो । आपुच्छिऊण पियरं विणीयनयरिं अह पविट्ठो ॥१०६॥ श्रुत्वैवं भरताधिपेन विहिता द्रव्यार्हतो वंदना, श्रीनाभिप्रभव-  
प्रभोर्वचनतथाष्टापदे स्थापनाम् । तद्धो भव्यजनास्त्रिकालभविनामेपां सदा वंदनां, कुर्वीध्वं प्रतिमाश्च भावजनिताध्यारोपतो यत्नतः ॥१०७॥ इति भरतकथा ॥ तदेवं द्रव्यार्हतां नमस्करणीयत्वात् भाष्यकारादिभिः समर्थित्वादावश्यकचूर्णिंकृद्द्रव्याख्यातार्थ-  
त्वाद् संवेगादिकारणत्वात् सम्यक्त्रनैर्मल्यहेतुत्वादशठबहुबहुश्रुतपूर्वाचार्याचरितत्वात् जीतकल्पानुपातित्वाच्च युक्तेयं जे य अइ-  
येति गाथेति । ‘एष द्रव्यार्हद्वंदनार्थं द्वितीयोऽधिकारः, शक्रस्तवधिवरणं समाप्त’मिति चूर्णिः, एवं शक्रस्तवाख्यप्रथमदंडकेन भावद्रव्यार्हतोऽभिवंदय स्थापनार्हद्वंदनार्थमुत्थाय साधुः श्रावको वा चैत्यस्तवदंडकं विधिवद् भणति, उक्तं च—“उट्टिय जिणमुदा-  
ठियचलणो विहियकरजोगमुदो य । चेइयगयथिरदिट्ठी ठवणाजिणदंडयं पढइ ॥ १ ॥ (३३२)” तत्रास्य संपद्गतपदसंख्याद्य-  
पदपरिज्ञानार्थमाह—

बुद्धसगनयतियच्छउच्छप्पय चिइसंपया पया पढमा । अरिहं वंदण सद्धा अन्न सुहुमा एव जा ताव ॥३७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सपा-  
चारविधौ  
॥३१३॥

अक्षरघटना प्राग्बत्, भावार्थस्त्वयं-अरिहंतचेइयाणमित्याद्यपदद्वयप्रमाणा प्रथमा संपत्, वंदनवत्तियाए इत्यादिपदपदक-  
परिमाणा द्वितीया संपत्, सद्भाए इत्यादि सप्तपदमाना तृतीया संपत्, अन्नत्थ ऊमसिएणमित्यादिपदनवरुनिर्मिता चतुर्थी संपत्,  
सुद्धुमेहिं इत्यादिपदत्रययुता पंचमी संपत्, एवमाइएहिं इत्यादिपदपूरिता षष्ठी संपत्, जाव अरिहंताणमित्यादिपदचतुःसप्तमी संपत्,  
ताव कायमित्यादिपदपदरुघटिताऽष्टमी संपत् इति । अथ सूत्रं विव्रियते, तच्चेदम्-‘अरिहंतचेइयाण’मित्यादि,  
नरादिकृतं वंदनपूजनादि सिद्धिगतिं च अर्हतीत्यर्हतः, यदागमः-“अरहंति वंदनमंसणाणि अरिहंति पूयसकारं । सिद्धिगमणं  
च अरिहा अरहंता तेण वुञ्चंति ॥१॥” यद्वा-नत्थि व र्हो य छन्नं अंतो य खउत्ति जेसि नाणस्स । ते अरहंता जं वा न र्हंति  
भवे न चिद्धंति ॥१॥”त्ति, तेषा चैत्यानि-प्रशस्तचित्तसमाधिजनकानि विंबानि अरिहंतचेइयाणि, जिनासिद्धप्रतिमा इत्यर्थः, तथा  
चाचइयकचूर्णिः-“सिद्धाई अरहंता, चेइयाणि य तेसिं चेव प्रतिकृतिलक्षणानि”इत्यादि, एतावता च सिद्धप्रतिमानामप्यग्रेऽयं  
दंडको भणनीय इत्यायातं, तेषां किं?—‘करेमि काउस्सग्गं’ करोमीत्याद्याभ्युपगमं दर्शयति, कायो-देहस्तस्योत्सर्गः-स्थान-  
मौनध्यानक्रियां विना अन्यक्रियामाश्रित्य परित्यागस्तं, कायेन क्रियांतर न करोतीत्यर्थः २ संपत्, जिनादिप्रतिमानां किमर्थं  
कायोत्सर्गः क्रियत इत्याह-‘वंदणवत्तियाए’इत्यादि, वंदनं-नमनस्तवनानुचितनादिप्रशस्तकायवाचनःप्रवृत्तिस्तत्प्रत्ययं-तन्नि-  
मित्तमिति तत्फलं, याद्वग्वंदनात् कर्मक्षयादि फलं स्यात् तादृग् कायोत्मगादिव मे भूयादित्यर्थः, एवं सर्वत्र भाव्यं, वत्तियाएत्ति  
आर्पत्वात्सिद्धं १, ‘पूयणवत्तियाए’ पूजनं-गंधमाल्यादिभिरभ्यर्चनं, उक्तं चोभास्वात्तिवाचकमुख्येन-‘पूजा च गंधमाल्या-  
धिवासधूपप्रदीपाद्यैः’ तत्प्रत्ययं, ‘सकारवत्तियाए’ सत्कारः-प्रवरवस्त्राभरणादिभिरलक्षणं तत्प्रत्ययं, नन्यत्र पूजासत्कारौ

चैत्यस्तर-  
दंडकार्यः

॥३१३॥

ॐ  
नैत्य० श्री-  
पर्म० संग-  
नारविधौ  
॥३१४॥

द्रव्यस्तवत्वात् साधोः छजीवकायसंजमो इत्यादिवचनप्रामाण्यात् कथं नानुचितौ ? श्रावकस्य तु 'विहवस्स फलं सुपत्तविणिओ-  
गि'त्ति वचनात् द्रव्यस्तवप्रधानतया साक्षात् ते कुर्वतः कायोत्सर्गद्वारेण तत्प्रार्थने कथं न नैरर्थक्यं ? उच्यते, साधोर्द्रव्यस्तव-  
निषेधः स्वयं करणमाश्रित्य, नतु कारणानुमती, यतः—'अकसिणपवत्तगाण'मित्याद्युपदेशदानतः कारणसद्भावः भगवतां च पूजादि-  
दर्शनतः प्रमोदादिनाऽनुमतिरपि, भणितं च—'पूयाफलपरिकहणा पमोयणा चोयणाउ कारवणं । अणुमोयणावि जायइ पमोय-  
उववूहणाईहिं ॥ १ ॥ ( ४११ वृ० ) सुव्वइ य वइररिसिणो कारवणंपिय अणुट्टियमिमस्स । वायगगंथेसु तहा एयगया देसणा  
चेव ॥१॥ जइ मप्पभए माया सुयस्स गत्ताउ कड्डुणोवायं । लहु अन्नं अलहंती षिसंतीविहु न दोसिल्ला ॥२॥ तह दोसवन्न साह  
गिहिणो दव्वत्थयं उवइसंतो । बहुपावइंदियत्थाइदोसनियरं निवारित्तो ॥३॥ जं पुण सुत्ते भणियं दव्वत्थए सो विरुज्झई कसिणो ।  
तविसयारंभपसंगदोसविणिवारणत्थं तं ॥४॥ ( ४१४ वृ० ) श्रावकस्य भावस्तवांगतया सदारंभरूपत्वेन यथाविभवं तौ संपादय-  
तोऽपि भक्त्यतिशयादाधिक्यसंपादनार्थं प्रार्थयमानस्य न नैरर्थक्यं, जिनपूजादिकारणाकांक्षातिरेकस्वभावत्वात् श्रावकधर्मस्य, श्रूयते  
च—सुश्रावकाणां सिद्धांतादिषु भानुश्रेष्ठिन इव पुष्पप्रदीपादिभिर्द्रव्यपूजां विधाय स्तुत्यादिभिर्भावपूजायां प्रवृत्तिरिति, भानुश्रेष्ठी-  
कथा त्वियम्-तेणं कालेणं तेणं नमएणं चंपा नामं नयरी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं चंपाए नयरीए भाणू नामा सिद्धी समणो-  
वामओ परिवसइ, अड्डे दित्ते वित्ते विउलभवसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणवहुजायरूवरयए आओगपओगसंपउत्ते विच्छ-  
ट्टियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसीगवेलगप्पभूए अहिगयजीवाजीवे उवलद्धपुण्णपावे आसवसंवरनिज्जरकिरियाहिगरण-  
बंधमुक्खकुगले अमहिज्जदेवासुरनागसुवण्णजक्खरक्खगकिंनरकिंपुरिगगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पवय-

चैत्यस्तव-  
दंडकार्यः

॥३१४॥

णाओ अणइकमणिजे निग्गंथे पावयणे निस्संकिए निक्कंखिए निव्वितिगिच्छे लद्धट्टे गहियट्टे पुच्छियट्टे अभिगयट्टे अट्टिमिजपे-  
 म्माणुरागरत्ते अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्टे, परमट्टे, सेसे'अणट्टे, ऊसियफलहे अवंगुयदुवारे २? चियत्तंतेउरपरघरप्पवेसे  
 चाउदसट्टमुदिट्टपुंनिमासिणीसु पडिपुन्नं पोपहं सम्मं अणुपालेमाणे २ समणे निग्गंथे फासुएमणिजेणं असणपाणखाइमसाइमेणं  
 वत्थपडिग्गहकंवलपायपुच्छणेणं ओसहभेसजेणं पाडिहारिएण य पीढफलगसिआसंथारएणं पडिलाहेमाणे २ बहूहिं सीलन्वय-  
 गुणवेरमणपच्चक्खणपोसहोववासेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' इत ऊर्ध्वं घसुदेवहिंदिअक्षराणि लिरुयंते—“तस्स णं तुल्लकुल-  
 संभवा भदा नामं भारिया हुत्था, सा उच्चप्पसवा, सा सुतमलभमाणी देवयनमंमणतवस्सिपूयणनिरया पुत्तत्थिणी विहरइ, कयाइं  
 च सिट्ठी सह घरणीए जिणपूयं काऊण पञ्जालिएसु दीवेषु पोसहिओ दन्भसंथारगओ थयधुइमंगलपरायणो चिट्ठइ, भयवं च  
 गयणचारी अणमारो चारुनामा ओवइओ, सो कयजिणसंथवो कयकायविउस्सग्गो आसीणो सिट्ठिणा पच्चमिण्णाओ, तओ ससं-  
 भमुट्ठिएण सायरं वंदिओ चारुमुणिणोत्ति भणंतेण, तेणवि महुरभणिएण भणिओ—सावग ! सुहसमाहाणोसि अविग्घं च ते भवउ  
 वयविहीसुत्ति, सिट्ठिणा भणियं—तुम्ह चलणपसाएणं, तओ तित्थयरस्स नमित्तामिणो चरियसंबद्धं कहं कहिउमारुद्धो, यथा-  
 जंबुदीवे भरहे सावत्थीए निवो उ सिद्धत्थो । नंदगुरुं पडिलाहिय पन्वयइ इगारसंगधरो ॥१॥ वीसयराऊ पाणयकप्पा आसोय-  
 पुनिमाय जुओ । मिहिलाए वप्पाविजयनियसुओ नमिजिणो जाओ ॥२॥ सावणकसिणट्टमीए नीलुप्पललंछणो सुवण्णाभो । कास-  
 यगुत्तो इक्खागवंसओ पणरसधणुच्चो ॥३॥ कुमरत्तं पणवीसं वासमए पण्ण पालिउं रज्जं । आसाढकसिणनवमी अवरण्हे देवकुरु-  
 मिवियं ॥४॥ चडिउं सहसंबवणे पन्वइओ छट्टएण सहसजुओ । वीयदिणे वीरपुरे दित्तो पारउइ परमन्नं ॥ ५ ॥ मिगसिरसिय-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१४॥

द्रव्यस्तवत्वात् साधोः छजीवकायसंज्ञमो इत्यादिवचनप्रामाण्यात् कथं नानुचितौ ? श्रावकस्य तु 'विहवस्स फलं सुपत्तविणिओ-  
गि'त्ति वचनात् द्रव्यस्तवप्रधानतया साक्षात् ते कुर्वतः कायोत्सर्गद्वारेण तत्प्रार्थने कथं न नैरर्थक्यं ? उच्यते, साधोर्द्रव्यस्तव-  
निषेधः स्वयं करणमाश्रित्य, नतु कारणानुमती, यतः—'अकसिणपवत्तगाण'मित्याद्युपदेशदानतः कारणसद्भावः भगवतां च पूजादि-  
दर्शनतः प्रमोदादिनाऽनुमतिरपि, भणितं च—'पूयाफलपरिकहणा पमोयणा चोयणाउ कारवणं । अणुमोयणावि जायइ पमोय-  
उववूहणाईहिं ॥ १ ॥ ( ४११ वृ० ) सुच्चइ य वइररिसिणो कारवणंपिय अणुट्टियमिमस्स । वायगगंथेसु तहा एयगया देसणा  
चेव ॥१॥ जह सप्पभए माया सुयस्स गत्ताउ कड्डणोवायं । लहु अन्नं अलहंती विसंतीविहु न दोसिच्छा ॥२॥ तह दोसवन्न ताहु  
गिहिणो दव्वत्थयं उवइसंतो । बहुपावइंदियत्थाइदोसनियरं निवारितो ॥३॥ जं पुण सुत्ते भणियं दव्वथए सो विरुज्झई कसिणो ।  
तविसयारंभपसंगदोसविणिवारणत्थं तं ॥४॥ ( ४१४ वृ० ) श्रावकस्य भावस्तत्रांगतया सदारंभरूपत्वेन यथाविभवं तौ संपादय-  
तोऽपि भक्त्यतिशयादाधिक्यसंपादनार्थं प्रार्थयमानस्य न नैरर्थक्यं, जिनपूजादिकारणाकांक्षातिरेकस्वभावत्वात् श्रावकधर्मस्य, श्रूयते  
च—सुश्रावकाणां सिद्धांतादिषु भानुश्रेष्ठिन इव पुष्पप्रदीपादिभिर्द्रव्यपूजां विधाय स्तुत्यादिभिर्भावपूजायां प्रवृत्तिरिति, भानुश्रेष्ठि-  
कथा त्वियम्-तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं चंपाए नयरीए भाणू नामा सिद्धी समणो-  
वासओ परिवसइ, अड्ढे दित्ते वित्ते विउलभवसयणासणजाणवाहणाइण्णे बहुधणवहुजायरूवरयए आओगपओगसंपउत्ते विच्छ-  
ट्टियपउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसीगवेलगप्पभूए अहिगयजीवाजीवे उवलद्वपुण्णपावे आसवसंवरनिजरकिरियाहिगरण-  
बंधमुक्खकुसले अमहिजदेवासुरनागसुवण्णजक्खरक्खसकिंनरकिंपुरिगगरुलगंधव्वमहोरगाइएहिं देवगणेहिं निग्गंथाओ पवय-

चैत्यस्तव-  
दंडकार्यः

॥३१४॥

श्रीदे०  
चैत्र० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥३१५॥

णाओ अणइकमणिजे निग्गंथे पावयणे निस्संकिए निक्कंखिए निवितिगिच्छे लद्धट्टे गहियट्टे पुच्छियट्टे अभिगयट्टे अट्टिमिजये-  
म्माणुरागरत्ते अयमाउसो ! निग्गंथे पावयणे अट्टे, परमट्टे, सेसे अणट्टे, ऊसियफलहे अवंगुयदुजारे २? चियत्तंतेउरपरघरप्पवेसे  
चाउइसट्टमुट्टिद्वुपुनिमासिणीसु पडिपुन्नं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे २ समणे निग्गंथे फासुएमणिजेणं असणपाणखाइमसाइमेणं  
वत्थपडिग्गहक्कंवलपायपुच्छणेणं ओसहभेसजेणं पाडिहागिणं य पीढफलगासिआसंधारणं पडिलाहेमाणे २ बहूहिं सीलव्वय-  
गुणवेरमणपच्चक्खाणपोसहोउवासेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' इत ऊर्ध्वं वसुदेवहिं डिअक्षराणि लिख्यंते—“तस्स णं तुल्लकुल-  
संभया भदा नामं भारिया हुत्था, सा उच्चप्पसवा, सा सुतमलभमाणी देवयनममणतवस्सिपूयणनिरया पुत्तत्थिणी विहरइ, कयाइं  
च सिट्ठी सह घरणीए जिणपूयं काऊण पज्जालिएसु दीवेषु पोसहिओ दब्भसंधारगओ थयधुइमंगलपरायणो चिट्ठइ, भयं च  
गयणचारी अणगारो चारुनामा ओवइओ, सो कयजिणसंधवो कयकायविउस्सग्गो आसीणो सिट्ठिणा पच्चभिण्णाओ, तओ ससं-  
भमुट्टिएण सायर वंदिओ चारुमुणिणोत्ति भणंतेण, तेणवि महुरभणिणं भणिओ—सावग ! सुहसमाहाणोसि अविग्घं च ते भवउ  
वयविहीसुत्ति, सिट्ठिणा भणियं—तुम्ह चलणपसाएणं, तओ तित्थयरस्स नमिसामिणो चरियसबद्ध कह कहिउमारुद्धो, यथा-  
जवुहीवे भरहे सावत्थीए निवो उ सिद्धत्थो । नदगुरु पडिलाहिय पव्वयइ इगारसंगधरो ॥१॥ वीसयराऊ पाणयकप्पा आसोय  
पुन्निमाय चुओ । मिहिलाए वप्पाविजयनिवसुओ नमिजिणो जाओ ॥२॥ सावणकसिणट्टमीए नीलुप्पललंछणो सुवण्णाभो । कास  
वगुत्तो इक्खामवंसओ पणरसधणुच्चो ॥३॥ कुमरत्तं पणवीसं वासमए पण्ण पालिउं रज्जं । आसाढकसिणनवमी अवरण्हे देवकुरु  
मिविय ॥४॥ चडिउ सहसबवणे पव्वइओ छट्टएण सहसजुओ । नीयदिणे वीरपुरे दिन्नो पारइ परमन्नं ॥ ५ ॥ मिगसिरसिय

मानुकथाः

॥३१५॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥३१६॥

इकारसीपुष्पहे वडलतरु श्रहो नाणं । छट्टेणुप्पन्न तो गधारीभिउडिजक्खनओ ॥६॥ वीसं समणसहसे काउ इगच्च सहमसम-  
णीओ । सत्तरस गणहरेऽविय पणवीसं वामसयअते । ७॥ समेए सहसजुओ वग्धारियपाणि मासमतेण । पंचऽस्सिणि सिद्धिगओ  
पिमाहसियदसमिपररत्ते ॥८॥ कहंते य भाणुघरिणीए ऋयजलीडडाए विण्णविओ भयवं ! अत्थि णे त्रिउलो अत्थो, जो तस्म  
कुलसताणहेऊ लोगदिट्ठिए सो णे पुत्तो हुज्जा !, सदिसह, तुब्भे अमोहदंसी, तओ मयवया चारुमुणिणा भणियं-भदे ! भविस्सइ  
ते पुत्तो अप्पेण कालेणति वुत्तूण सावय ! अप्पमाई हुज्जा सीलव्वएसुत्ति गओ अदरिसणं, तओ केणइ कालेण घरिणीए आहूओ  
गब्भो, तिगिच्छगोवइट्ठेण भोयणविहिणा वडिओ, अपिमाणियदोहला य पमवन्नमए पयाया दारय, कयजायकम्मस्म य नाम  
करणदिग्गसे ऋयं च से नाम गुरुणा चारुमुणिणा वागरिओ दारओ भउ चारुदत्तोत्ति, गहियविज्जो य पिउणा सायधम्मं  
गाहिओ, पणयससहिओ अच्छइ, रुयाइ च कोमुइयचाउम्मासिणीए वासुपुञ्जजिणाययणपुष्कारुहणनि भेतं निग्गओ सयमो अग-  
मदिर उज्जाणं, तत्थ चेइअमहिमा उट्ठइ, उग्गओ अगमंदिर, पविट्ठा जिणाययणं, चेहेहिं उग्गीयाणि पुष्पाणि, कयं अच्चण  
पडिमाणं, थुईहिं वंदण कयं, निग्गओ जिणभण्णाउत्ति । जह अमियगइं खयर कासि पिमच्छं जहा परिणिओवि । सोयाइभोगवि-  
मुहो खित्तो दुल्ललियगुट्ठीए ॥११॥ दिण्ण उसु सोलकोडी वसंतसेणाइ वारवरिसते । अरुइ ऋड्ढिओ जह भमिओ देसेसु अत्थत्थं  
॥ १२ ॥ त चारुदत्तचरियं सव्वपि धम्मरयणवित्तीओ । नेयं इह पुण पगयं पईवथुइमाइपूयाए ॥ १३ ॥ इय देसविहिय  
दव्वच्चणादि भावच्चणो वणी भाणू । पडिवज्जियपव्वज्जो जाओ मज्जियसुगयम्भो ॥ १४॥ स्तुत्यादेरिति भाउपूजनमहं पुष्पप्रदी-  
पादिभिः, सद्रव्यार्चनपूर्वमत्र त्रिधिना श्रुत्या कृतं भानुना । कुर्वाण्य तदिदं त्रिशुद्धमनसः श्रद्धादिभिर्वर्द्धिभिः, भो भव्या ! उप-

भानुकथा

॥३१६॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१७॥

सर्गवर्गहतये सद्बोधिलाभाय च ॥ १५ ॥ इति भानुश्रेष्ठिकथा ॥

तथा 'सम्माणवत्तियाए' सन्मानो—मानसप्रीतिपरिगतोचितविनयप्रतिपत्तिः, स्तवादिभिः सद्गुणोत्कीर्तनमित्यन्ये, अथ वंदनाद्याः किमर्थमित्याह—'बोधिलाभवत्तियाए' बोधिलाभः—प्रेत्यजिनधर्मावाप्तिस्तत्प्रत्ययं, यद्यप्ययं साध्यादेरस्त्येव तथापि क्लिष्टकर्मोदयवशेन बोधिलाभस्य प्रतिपातसंभवात्, जन्मान्तरे युक्तैवास्व प्रार्थना, किंनु प्राप्तभ्रष्टस्यापि?, यत्तप्राप्यत्वात् तस्य, संभवति चैवं भावातिशयेन रक्षणमपि, तदाशंसाऽपि किमर्थमित्याह—'निरुवसग्गवत्तियाए' निरुवसर्गो—जन्माद्युपसर्गरहितो मोक्षस्तत्प्रत्ययं, संपत् २ । अयं च कायोत्सर्गः श्रद्धादिभिर्विना क्रियामाणोऽपि नेष्टार्थसाधक इत्यत आह—'सद्दाए' इत्यादि, श्रद्धया—स्वामिलापेण, न परोपरोधबलाभियोगादिना १ मेधया—जिनोक्तमर्यादावर्तितया, नासमंजसतया, हेयोपादेयपरिज्ञान-रूपया वा, नतु जडतया, हृदयपदुतयेत्यर्थः २ धृत्या—मनःस्वास्थ्येन, मनःसमाधिविशेषितप्रीत्येत्यर्थः, न तु रागाद्याकुलत्वेना-न्यचित्ततया ३ धारणया—अर्हदादिगुणाविसरणरूपया, न तद्गुणतया ४ अनुप्रेक्षया—अर्हद्गुणानामेव पुनःपुनश्चित्तनेन, न तद्वै-कल्येन ५ वर्धमानया—वृद्धिं गच्छन्त्या, नानवस्थितया, प्रत्येकं चैतत् श्रद्धादिभिः संबध्यते, यथा वर्धमानया श्रद्धयेत्यादि, एवं चैषामुपन्यास इति लाभक्रमेण, यथा श्रद्धासद्भावे मेधा तत्सद्भावे धृतिरित्यादि, वृद्धिरप्यासामेवमेव, एवमेतैर्हेतुभिस्तिष्ठामि—करोमि कायोत्सर्गं स्थानादि, अन्यव्यापारवच्छरीरत्यागमित्यर्थः, इह यत् प्राक् करोमि कायोत्सर्गमित्युक्तं तत् 'सत्सामीप्ये सद्बदे'ति (हं० ५-४-१) सूत्रात्, करोमि—करिष्यामीति क्रियाभिमुख्यमेवोक्तं, संप्रति त्वासन्नतरत्वात् अस्य करणमेवाह । 'अकए काउस्सग्गे नणु कयकरणंति भन्नए एत्थ । अइआसन्नत्तणओत्ति कज्जमाणं कडं जम्हा ॥ १ ॥' (४२५ अर्थतः) अनेनाभ्युपगमपूर्वं श्रद्धादि-

चैत्यस्तव-  
व्याख्या

॥३१७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥३१६॥

इकारसीपुष्पहे वउलतरु अहो नाणं । छट्टेणुप्पन्न तो गधारीमिउडिजक्खनओ ॥६॥ वीसं समणसहसे काउ इगच्च सहमसम-  
णीओ । सत्तरस गणहरेऽविय पणवीसं वामसयअते । ७॥ समेए सहसजुओ वग्घारियपाणि मासभत्तेण । पंचऽस्सिणि सिद्धिगओ  
निसाहसियदसमिवररत्ते ॥८॥ कहते य भाणुघरिणीए कयजलीडडाए विण्णविओ भयवं ! अत्थि जे त्रिउलो अत्थो, जो तस्म  
कुलसताणहेऊ लोगदिट्ठिए सो जे पुत्तो हुज्जा ?, सदिसह, तुब्भे अमोहदंसी, तओ भयवया चारुमुणिणा भणिय-भदे ! भविस्सइ  
ते पुत्तो अप्पेण कालेणति वुत्तूण सावय ! अप्पमाई हुज्जा सीलव्वएसुत्ति गओ अदरिसणं, तओ केणइ कालेण घरिणीए आहूओ  
गब्भो, तिगिच्छगोवइट्ठेण भोयणविहिणा वडिओ, अग्गिमाणियदोहला य पमवन्नमए पयाया दारय, कयजायकम्मस्म य नाम  
करणदिवसे कयं च से नाम गुरुणा चारुमुणिणा वागरिओ दारओ भउउ चारुदत्तोत्ति, गहियविज्जो य पिउणा सायधम्मं  
गाहिओ, पणयससहिओ अच्छइ, कयाइ च कोमुइयचाउम्मासिणीए वासुपुज्जजिणाययणपुप्फारुहणनि मेतं निग्गओ सवयसो अग-  
मंदिर उज्जाणं, तत्थ चेइअमहिमा वट्टइ, उरगओ अगमंदिर, पविट्ठा जिणाययणं, चेडेहि उरणीयाणि पुप्फाणि, कयं अच्चण  
पडिमाणं, थुईहि वंदण कयं, निग्गओ जिणभउणाउत्ति । जह अमियगइं खयर कासि रिमल्लं जहा परिणिओवि । सोयाइभोगवि-  
मुहो खित्तो दुल्ललियगुट्ठीए ॥११॥ दिण्ण उसु सोलकोडी वसंतसेणाइ बारवरिसंतं । अक्काइ ऋट्टिओ जह भमिओ देसेनु अत्थत्थं  
॥ १२ ॥ त चारुदत्तनरिय सव्वपि धम्मरघणवित्तीओ । नेय इह पुण पगयं पईवथुइमाइपूयाए ॥ १३ ॥ इय देसविहिय  
दव्वच्चणादि भावच्चणो वणी भाणू । पडिवज्जियपव्वज्जो जाओ मज्जियसुगयउज्जो ॥ १४॥ स्तुत्यादेरिति भारपूजनमहं पुष्पप्रदी-  
पादिभिः, सद्रव्यार्चनपूर्वमत्र विधिना श्रुत्या कृत भानुना । कुर्वाध्व तदिदं त्रिशुद्धमनसः श्रद्धादिभिर्वर्द्धिभिः, भो भव्या ! उप-

भानुकथा

॥३१६॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१७॥

सर्गवर्गहतये सद्बोधिलाभाय च ॥ १५ ॥ इति भानुश्रेष्ठिकथा ॥

तथा 'सम्माणवत्तियाए' सन्मानो—मानसप्रीतिपरिगतोचितविनयप्रतिपत्तिः, सत्वादिभिः सद्गुणोत्कीर्तनमित्यन्ये,  
अथ वंदनाद्याः किमर्थमित्याह—'बोधिलाभवत्तियाए' बोधिलाभः—प्रेत्यजिनधर्मावाप्तिस्तत्प्रत्ययं, यद्यप्ययं साध्यादेरस्त्येव  
तथापि क्लिष्टकर्मोदयवशेन बोधिलाभस्य प्रतिपातसंभवात्, जन्मान्तरे युक्तैवास्य प्रार्थना, किंनु प्राप्तभ्रष्टस्यापि ? यत्तप्राप्यत्वात् तस्य,  
संभवति चैवं भावातिशयेन रक्षणमपि, तदाशंसाऽपि किमर्थमित्याह—'निरुवसग्गवत्तियाए' निरुपसर्गो—जन्माद्युपसर्गरहितो  
मोक्षस्तत्प्रत्ययं, संपत् २ । अयं च कायोत्सर्गः श्रद्धादिभिर्विना क्रियमाणोऽपि नेष्टार्थसाधक इत्यत आह—'सद्भाए' इत्यादि,  
श्रद्धया—स्वामिलापेण, न परोपरोधवलाभियोगादिना १ मेधया—जिनोक्तमर्यादावर्तितया, नासमंजसतया, हेयोपादेयपरिज्ञान-  
रूपया वा, नतु जडतया, हृदयपटुतयेत्यर्थः २ धृत्या—मनःस्वास्थ्येन, मनःसमाधिविशेषितप्रीत्येत्यर्थः, न तु रागाद्याकुलत्वेना-  
न्यचित्ततया ३ धारणया—अर्हदादिगुणाविसरणरूपया, न तद्गूढतया ४ अनुप्रेक्षया—अर्हद्गुणानामेव पुनःपुनश्चित्तनेन, न तद्वै-  
कल्येन ५ वर्धमानया—शुद्धिं गच्छन्त्या, नानवस्थितया, प्रत्येकं चैतत् श्रद्धादिभिः संबध्यते, यथा वर्धमानया श्रद्धयेत्यादि, एवं  
चैपायुपन्यास इति लाभक्रमेण, यथा श्रद्धासद्भावे मेधा तत्सद्भावे धृतिरित्यादि, शुद्धिरप्यासामेवमेव, एवमेतैर्हेतुभिस्तिष्ठामि—करोमि  
कायोत्सर्गं स्थानादि, अन्यव्यापारवच्छरीरत्यागमित्यर्थः, इह यत् प्राक् करोमि कायोत्सर्गमित्युक्तं तत् 'सत्सामीप्ये सद्बद्धे'ति (हे०  
५-४-१) सूत्रात्, करोमि—करिष्यामीति क्रियाभिमुख्यमेवोक्तं, संप्रति त्वासन्नतरत्वात् अस्य करणमेवाह । 'अकए काउस्सग्गे  
नणु कयकरणंति भन्नए एत्थ । अइआसन्नत्तणओत्ति कजमाणं कडं जम्हा ॥ १ ॥' (४२५ अर्थतः) अनेनाभ्युपगमपूर्वं श्रद्धादि-

चैत्यस्तव-  
व्याख्या

॥३१७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सधा  
चारविधौ  
॥२१६॥

इकारसीपुव्वण्हे वउलतरु अहो नाण । छट्टेणुप्पन्न तो गधारीभिउडिजक्खनओ । ६॥ वीसं समणसहसे काउ इगच्च सहमसम-  
णीओ । सत्तरस गणहरेऽविय पणवीसं वामसयअते । ७॥ समेए सहसजुओ वग्धारियपाणि मासभत्तेण । पचऽस्सिणि सिद्धिगओ  
प्रिमाहसियदसमिवररत्ते ॥८॥ कहंते य भाणुघरिणीए ऋयंजलीडडाए त्रिण्णपिओ भयवं ! अत्थि णे त्रिउलो अत्थो, जो तस्म  
कुलसताणहेऊ लोगदिट्टिए सो णे पुत्तो हुज्जा ? , सदिसह, तुब्भे अमोहदंसी, तओ भयवया चारुमुणिणा भणिय-भदे ! भविस्सइ  
ते पुत्तो अप्पेणं कालेणति वुत्तूण सावय ! अप्पमाई हुज्जा सीलच्चएसुत्ति गओ अदरिसणं, तओ केणइ कालेण घरिणीए आहूओ  
गब्भो, तिगिच्छगोवइट्टेण भोयणविहिणा वड्ढिओ, अत्रिमाणियदोहला य पम्बनमए पयाया दारयं, कयजायकम्मस्म य नाम  
करणदिवसे ऋयं च से नाम गुरुणा चारुमुणिणा वागरिओ दारओ भउउ चारुदत्तोत्ति, गहियविज्जो य पिउणा सावयधम्मं  
गाहिओ, पणययससहिओ अच्छइ, रुयाइ च कोमुइयचाउम्मासिणीए वासुपुज्जजिणाययणपुष्कारुहणनि मेत्तं निग्गओ सत्रयसो अग-  
मंदिर उज्जाणं, तत्थ चेइअमहिमा उट्टइ, उउगओ अगमंदिर, पविट्ठा जिणाययणं, चेडेहि उवणीयाणि पुष्पाणि, कयं अच्चणं  
पडिमाणं, थुईहि वंदणं कयं, निग्गओ जिणभचणाउत्ति । जह अमियगइं खयर कासि त्रिमल्लं जहा परिणिओवि । सोयाइभोगवि-  
मुहो खित्तो दुल्ललियगुट्ठीए ॥११॥ दिण्ण उसु सोलकोडी वसंतसेणाइ वारवरिसंतं । अक्काइ ऋड्ढिओ जह भमिओ देसेनु अत्थत्थं  
॥ १२ ॥ त चारुदत्तचरियं सव्वपि धम्मरयणवित्तीओ । नेयं इह पुण पगय पईवथुइमाइपूयाए ॥ १३ ॥ इय देसविहिय  
दव्वच्चणादि भावच्चणो वणी भाणू । पडिवज्जियपव्वज्जो जाओ मज्जियसुगयऋज्जो ॥ १४॥ स्तुत्यादेरिति भाउपूजनमहं पुष्पप्रदी-  
पादिभिः, सद्रव्यार्चनपूर्वमत्र त्रिधिना श्रुत्या कृत भानुना । कुर्वाध्वं तदिदं विशुद्धमनसः श्रद्धादिभिर्वर्द्धिभिः, भो भव्या ! उप-

भानुकथा

॥२१६॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१७॥

सर्गवर्गहतये सद्बोधिलाभाय च ॥ १५ ॥ इति भानुश्रेष्ठिकथा ॥

तथा 'सम्माणवत्तियाए' सन्मानो—मानसप्रीतिपरिगतोचितविनयप्रतिपत्तिः, स्तवादिभिः सद्गुणोत्कीर्तनमित्यन्ये,  
अथ वंदनाद्याः कियर्थमित्याह—'बोधिलाभवत्तियाए' बोधिलाभः—प्रेत्यजिनधर्मावाप्तिस्तत्प्रत्ययं, यद्यप्ययं साध्यादेरस्त्येव  
तथापि क्लिष्टकर्मोदयवशेन बोधिलाभस्य प्रतिपातसंभवात्, जन्मान्तरे युक्तैवास्य प्रार्थना, किंनु प्राप्तभ्रष्टस्यापि?, यत्नप्राप्यत्वात् तस्य,  
संभवति चैवं भावातिशयेन रक्षणमपि, तदाशंसाऽपि किमर्थमित्याह—'निरुवसग्गवत्तियाए' निरुपसर्गो—जन्माद्युपसर्गरहितो  
मोक्षस्तत्प्रत्ययं, संपत् २ । अयं च कायोत्सर्गः श्रद्धादिभिर्विना क्रियामाणोऽपि नेष्टार्थसाधक इत्यत आह—'सद्दाए' इत्यादि,  
श्रद्धया—स्वामिलापेण, न परोपरोधवलाभियोगादिना १ मेधया—जिनोक्तमर्यादावर्तितया, नासमंजसतया, हेयोपादेयपरिज्ञान-  
रूपया वा, नतु जडतया, हृदयपटुतयेत्यर्थः २ धृत्या—मनःस्वास्थ्येन, मनःसमाधिविशेषितप्रीत्येत्यर्थः, न तु रागाद्याकुलत्वेना-  
न्यचित्ततया ३ धारणया—अर्हदादिगुणाविसरणरूपया, न तद्गुणतया ४ अनुप्रेक्षया—अर्हद्गुणानामेव पुनःपुनश्चित्तनेन, न तद्वै-  
कल्येन ५ वर्धमानया—धृद्धिं गच्छन्त्या, नानवस्थितया, प्रत्येकं चैतत् श्रद्धादिभिः संवध्यते, यथा वर्धमानया श्रद्धयेत्यादि, एवं  
चैषामुपन्यास इति लाभक्रमेण, यथा श्रद्धासद्भावे मेधा तत्सद्भावे धृतिरित्यादि, धृद्धिरप्यासामेवमेव, एवमेतैर्हेतुमिस्तिष्ठामि—करोमि  
कायोत्सर्गं स्थानादि, अन्यन्यापारवच्छरीरत्यागमित्यर्थः, इह यत् प्राक् करोमि कायोत्सर्गमित्युक्तं तत् 'सत्सामीप्ये सद्द्वे'ति (हे०  
५-४-१) घत्रात्, करोमि—करिष्यामीति क्रियाभिमुख्यमेवोक्तं, संप्रति त्वासन्नतरत्वात् अस्य करणमेवाह । 'अकए काउस्तग्गे  
नणु कयकरणंति भन्नए एत्थ । अइआसन्नत्तणओत्ति कज्जमाणं कडं जम्हा ॥ १ ॥' (४२५ अर्थतः) अनेनाभ्युपगमपूर्वं श्रद्धादि-

चैत्यस्तव-  
व्याख्या

॥३१७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३१८॥

समन्वितं च सदनुष्ठानं भवतीति श्रद्धादिमानेव चास्याधिकारीति च दर्शितम् संपत् ३ । किं सर्वथा कायोत्सर्गो ? नेत्याह—‘अन्नत्थ ऊसस्सिएण’मित्यादि, अन्यत्र व्यापार इति शेषः, कायोत्सर्गं करोमि, कुतः ?—उच्छ्रसिताद्—ऊर्ध्वश्वासग्रहणात्, पंचम्यर्थे तृतीया, उच्छ्रसादन्यं व्यापारं न करोमीत्यर्थः १ उच्छ्रसितेन तु अभग्नोऽविराधितो भवेत् मम कायोत्सर्ग इति योगः, एवमुत्तरत्रापि योज्यं, निःश्वासितात्—श्वासमोक्षणात् २ कासितात् ३ क्षुतात् ४ प्रतीतावेतौ, जंभायितात्—विवृतवदनस्य प्रबलवातनिर्गमात् ५ उड्ढायितात्—वातोद्धारितात् ६ वातनिसर्गाद्—अधोनिर्गमात् ७, कासितादिषु च जीवादिरक्षार्थं मुखे हस्तदानादियतना कार्या, ‘भमलीए’ अकस्माद्देहस्य भ्रमणान्निपतनाद्वा ८ ‘पित्तमुच्छ्राए’ पित्तसंक्षोभाद् मूर्च्छा—ईपन्मोहो, भ्रमसहितं चैतन्यमित्यर्थः, पित्तमूर्च्छा तस्याः ९, एतयोः सत्योरुपवेष्टव्यं, मा भूत् सहसा पतने संयमात्मविराधनेति, संपत् ४ । ‘सुहुमेही’त्यादि, सूक्ष्मेभ्यः—अल्पेभ्यो लक्ष्या- लक्ष्येभ्य इत्यर्थः अंगसंचारेभ्यः—रोमोत्कंपादिभ्यः, सूक्ष्मेभ्यः खेलसंचालेभ्यः खेलः—श्लेष्मा तच्चलनेभ्यः, सूक्ष्मेभ्यो दृष्टिसंचा- रेभ्यो—निमेषादिभ्यः, संपत् ५ । एवमाइएही’त्यादि, एवं—पूर्वोक्तप्रकारा आकारा आदिर्येषामग्न्यादिस्पर्शनपंचेन्द्रियच्छेदनचौरादि- संभ्रमसर्पदशनाद्यन्यापवादानां ते एवमादिकास्तैः, तत्राग्न्यादिस्पर्शने प्रावरणं गृह्यतोऽन्यतो वा गच्छतोऽपि मार्जारादेः पुरतो गमनेऽग्रतः सरतोऽपि हस्तं वा पुरः कुर्वतोऽपि राजचौरादिसंभ्रमे पलायमानस्यापि अस्थानेऽपि च नमस्कारमुच्चारयतोऽपि सर्प- दष्टे आत्मनि परे वा साध्वादौ अपूर्णमपि कायोत्सर्गं पारयतोऽपि न भंगः, यदागमः—“अगणीओ छिदिज्ज व योहीखोभाइ दीह- डको य । आगारेहि अभग्गो उस्सग्गो एवमाईहिं ॥१॥” किमुक्तं भवति ?—एतैरुच्छ्रसितादिभिराकारैः—छिडिकाभिरभग्नः—सर्वथा अखंडितः अविराधितो—देशतोऽप्यविनाशितः भवेन् मे—मम कायोत्सर्गः, संपत् ६ । सर्वोपाधिविशुद्धं धर्मानुष्ठानं निःश्रेयसनिवन्धन-

चैत्यस्तव-  
व्याख्या

॥३१८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३१९॥

मिति ज्ञापनार्थं इहाकारोपन्यासः यथार्थः, 'वयभंगे गुरुदोसो०' इत्यादि, कियंतं कालं यावत् तिष्ठामीत्याह—'यावदि'ति काल-  
प्रमाणावधौ, यावता कालेनेत्यर्थः, अरिहतां भगवतां संबन्धिनां नमस्कारेण—'अरिहंताणं' इत्युच्चाररूपेण न पारयामि—न पारं  
गच्छामि कायोत्सर्गस्येति शेषः, तावत् किमित्याह—'तावे'त्यादि, तावंतं कालं यावत् कायं—देहं स्थानेनोर्ध्वस्थानादिप्रकारेण कृत्वा  
एवं मौनेन—वाग्निरोधन ध्यानेन—नमस्कारादिशुभवस्तुचिंतनादिजनितमनःसुप्रणिधानेन 'अप्पाणं'ति आर्पत्वादात्मीयं कायं  
व्युत्सृजामि—स्थानादि मुक्त्वा शेषव्यापारनिषेधेन त्यजामि । इयं अत्र भावना—नमस्कारपाठं यावत् ऊर्ध्वस्थानादिः प्रलंबभुजो  
निरुद्धवाक्प्रसरः प्रशस्तध्यानानुगतस्तिष्ठामीति ८ संपत् । ततोऽष्टोच्छ्वासमानं कायोत्सर्गं करोति, अध्येष्यति च 'ऊसास अट्ट  
सेसेसु'त्ति, कायोत्सर्गं एकोनविंशतिर्दोषाः वर्ज्याः, तथाहि—नाश्ववद् विषमपादस्तिष्ठेत् १ वाताहतलतावत् न कम्पेत् २ स्तम्भे  
कुड्ये वा नावष्टभीयात् ३ माले नोत्तमाङ्गं निदध्यात् ४ अवसनसवरीवत् नाग्रे करौ कार्यौ ५ नववधूवन्नावनाम्यं शिरः ६ निग-  
डितघत् पादौ न विस्तार्यौ, न वा मेळनीयौ ७ नाभेरुपरि जानुनोः अधश्च प्रलंबमानं निवसनं न विदध्यात् ८ दंशादिरक्षार्थं  
अज्ञानाद्वा हृदयं न प्रच्छाद्यं ९ शकटोर्धिवद् अंगुष्ठौ पाणी वा न मीलयेत् १० संयतीवत् न प्रावृणुयात् ११ कवीकवन्नाग्रे रजो-  
हरणं कार्यं १२ चलचित्तवायसवत् चक्षुर्गोलकौ न आम्यौ १३ कपित्थवत् परिधानं न पिडयेत् १४ यक्षाविष्टवत् न शिरः कम्प-  
नीयं १५ मूकवत् न हृहृकुर्यात् १६ आलापकादिसंख्यानार्थं नाङ्गुली भ्रुवौ वा चालयेत् १७ सुरावत् न घुडबुडयेत् १८ अनु-  
प्रेक्षमाणो वानरवत् न ओष्ठौ चालयेदिति १९, अत्र गाथाः—घोडग १ लय २ थंभाई ३ माल ४ बहू ५ सपरि ६ नियलि ७  
थण ८ खलिणे ९। लंबुत्तरु १० द्वि ११ संजइ १२ भमुहंगुलि १३ वायस १४ कविट्टे १५ ॥१॥ सिरकंप १६ मूय १७ वारुणि

चैत्यस्तव-  
व्याख्या

॥३१९॥



श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२०॥

१८ पेह १९त्ति चइज दोस उस्सग्गे । लंयुत्तर १ थण २ संजई ३ न दोस समणीण सङ्कीणं ॥ २ ॥ ततो 'नमो अरिहंताणंति भणित्वा पारयति, स्तुतिं च पठति, अत्र भाव्यं-अदुत्तुस्सासपमाणा उस्सग्गा सव्व एव कायव्वा । उस्सग्गसमत्तीए नवकारेणं तु पारिजा ॥१॥ परिमिद्धिनमुक्कारं सकयभासाइ पुण भणइ पुरिसो । चरिमाइमथुइ पढमं पाययभासाइवि न इत्थी ॥२॥ जइ एगो देइ सयं अह वहवे ता थुइं पढइ एगो । सेसा उस्सग्गाठिया सुणंति जा सा परिसमत्ता ॥३॥ विंस्स जस्स पुरओ पारद्धा वंदणा थुई तस्स । चेइयगेहे सामन्नवंदणे मूलविम्बस्स ॥४॥ इत्थ य पुरिसथुईए वंदइ देवे चउच्चिहो संघो । इत्थीथुइए दुविहो समणीओ साविया चेव ॥५॥ (पृ० ४९८ तः ५०१) व्याख्यातं वंदनाकायोत्सर्गसूत्रं, एष स्थापनार्हद्वंदनाख्यस्तृतीयोऽधिकारः, द्वितीयो दंडकः । स्तुत्यनंतरं चास्यामेवावसर्पिण्यां ये भारते तीर्थकृतोऽभूवंस्तेपामेवैकक्षेत्रनिवासादिनाऽऽसन्नतरोपकारित्वेन नामोत्कीर्तनाय चतुर्विंशतिस्तवं पठति, तत्र प्रथमस्य लाघवार्थं च श्रुतस्तवादेरप्येकैव गाथया संपदादिप्रमाणमाह—

नामथयाइसु संपय पयसम अडथीस सोल वीस कमा ।

अदुरुत्त वन्न दोसट्ट १ दुसयसोलरट्ट नउयसयं ३ ॥ ३९ ॥

नामस्तवः-चतुर्विंशतिस्तवः आदिशब्दात् श्रुतस्तवसिद्धस्तवग्रहः, एषु दंडकेषु संपदो-विश्रामाः पदसमाः-श्लोकादिचतुर्थ-भागसमानाः, यावन्ति पदानि तावन्त्य एव संपदः, अष्टाविंशतिर्नामस्तवे एकश्लोकगाथापदकमानत्वात् १, षोडश श्रुतस्तवे गाथा-द्वयवृत्तद्वयरूपत्वात् २ विंशतिः सिद्धस्तवे गाथापंचकप्रमाणत्वात् ३, तत् क्रमात्-यथाक्रमं, तथा अद्विरुक्ताः ये एकवेलया गणि-तास्ते पुनर्न गण्यंते इति भावः, वर्णा-अक्षराणि दंडकत्रये क्रमेण भवंति, तत्र द्वे शते पठ्यधिके नामस्तवदंडके, सधलोए इत्य-

नामस्तवा-  
दिसंपत्प-  
दादि

॥३२०॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२१॥

धरचतुष्प्रक्षेपात्, अग्रेतनगणानां अर्हचैत्यस्तवे गणितत्वाद् अद्विरुक्ता इति प्रतिज्ञानाच्च, एवमग्रेऽपि भाव्यं १, तथा द्वे शते  
पोडशाधिके श्रुतस्तवदंडके सुअस्त भगवओत्ति सप्ताक्षरसहितगणनात् दंडकांतःपातित्वादेयां २, तथा अष्टनप्रत्यधिकं शतं सिद्ध-  
स्तवदंडके, सम्मदिष्टिममाहिगराणमिति यावत्, पंचाधिकारप्रमाणत्वात् पंचमदंडकस्य, 'सिद्धथवे पंच अहिगारा' इति वचनात्  
शेषभाजना प्राग्वात्, अथ सूत्र व्याख्या-तत्र नामस्तवसूत्रमिदं-'लोगस्स उज्जोअगरे' इत्यादि, लोहस्य-धर्माधर्माकाश-  
जीवपुद्गलेतिपंचास्तिकायात्मकस्य उद्योतकरान्-केवलालोकैः तत्पूर्वकप्रचनदीपेन वा प्रकाशनशीलान्, अनेन वचनातिशय उक्तः,  
लोकोद्योतकरत्वं च तच्छ्रा(त्स्ता)कानामुपकाराय, न चानुपकारिणः कोऽपि स्तौतीत्युपकारित्वाप्रदर्शनार्थायाह-'धर्मतीर्थकरान्'  
धर्मः-श्रुतचरणात्मकस्तत्प्रधानं तीर्थं नद्यादेः शाक्यादेश्वाधर्मचहुलसा द्रव्यतीर्थस्य निरासेन भगवणोत्तारकं संघादि भारतीर्थं,  
आह च-कुप्पवयणाइ नइआइ तरणसमभूमि दवओ तित्थं । बुद्धति तत्थवि जओ संभइ य पुणवि उत्तरणं १॥ संघाइ भारतित्थं  
जं तत्थ ठिया भवण्णं नियमा । भविया तरति नय पुणवि भवजलो होइ तरियव्वो ॥२॥" तत्करणशीलान्, एतेन पूजातिशय-  
योक्तः, अपायापगमातिशयमाह-'जिनान्' रागादिजेतृन्, अर्हतः अष्टमहाप्रातिहार्यादिपूजार्हान्, विशेषणपदमेतत्, कीर्त्तयिष्यामि-  
स्यनामभिः स्तोप्ये, चतुर्विंशतिं भरतक्षेत्रोद्भवान्, अपिशब्दात् भारतः शेषक्षेत्रसंभवांश्च, ते च राज्यायथासु द्रव्यार्हतोऽपि भवं  
तीति भारार्हत्प्रतिपादनायाह-'केवलिनः' उत्पन्नकेवलज्ञानान्, भारार्हत इत्यर्थः, एतेन ज्ञानातिशयमाह, एवं च सर्वस्वपरसंपत्-  
सर्वस्वकल्पातिशयचतुष्टयोपेतानर्हतः स्तोप्यामीत्यावेदितं भवति । यदुक्तं 'कीर्त्तयिष्यामी'ति तत् कुर्वन् गाथापयमाह-'उसभे'-  
त्यादि, सुगमाः, नामार्थस्तु सामान्यतो विशेषतश्चोच्यते, तत्र सामान्यत 'उसभो'त्ति दुर्बहसंयमधुरोद्बहनाद् वृषभ इव वृषभः,

चतुर्विंश-  
तिस्तवः

॥३२१॥

श्रीदे०  
नेत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२२॥

घृषेण-धर्मेण वा भातीति घृषभः, वर्षति-सिञ्चति वा देशनाजलेन दुःखाग्निना दग्धं जगदिति वृषभः, यद्वा ऋषति—गच्छति परमपदमिति ऋषभः, एवं सर्वेऽप्यर्हतो वृषभाः, प्रथमजिने को विशेषः?, उच्यते, ऊर्वोरन्योऽन्याभिमुखधवलवृषभयुगललाञ्छ-  
नत्वात् मातुश्चतुर्दशस्वमेषु पूर्वं वृषभदर्शनाच्च वृषभः१ एवं सर्वेष्वपि भावनीयं, तत्र परीषहादिभिरजित इत्यजितः गर्भस्थेऽस्मिन् जननी घृते राज्ञा न जितेत्यजितः२ संभवन्ति चतुस्त्रिंशदतिशया अस्मिन्निति शं-सुखं भवत्यस्मिन् श्रुते चेति संभवः गर्भस्थेऽस्मिन् पृथ्व्यामधिका सस्यसंभृतिर्जातेति संभवः३ अभिनंद्यते देवेंद्रादिभिरित्यभिनंदनः, गर्भात्प्रभृत्येवाभीक्षणं शक्रेणाभिनंदित इत्यभि-  
नंदनः ४ शोभना मतिरस्येति सुमतिः गर्भस्थेऽस्मिन् सपत्नीद्वयविवादच्छेदात् निपुणा मातुर्मतिरभृदिति सुमतिः ५

अत्र संप्रदायः-अचिरागयवणिमरणे दुग्धं सवत्तीण दारओ एगो । बालग्राहणविवाओ जाओ सिं मेहनिवपुरओ ॥१॥ जा केणवि न मुणिज्जइ अमुगीइ सुओ इमोत्ति ता रण्णो । विन्नविंयं दासीए जह नाह ! विणस्सई भत्तं ॥ २ ॥ तइयंपिहु विन्नविओ भणइ निवो सरइ भोयणं देवी । न मुणइ मइरहियंति य रज्जं विप्फुरिहिइअ अयसे ॥३॥ दासीमुहाउ नाउं तयं तओ मंगलाइ देवीए । आगम्म सहामज्जे इय ताओ दोऽवि भणियाओ ॥ ४ ॥ रायंगणंमि चिद्धह एसो अहिणवममुग्गय असोओ । पुत्तो य मज्झ उदरे अत्थि महावुद्धिसंपन्नो ॥५॥ एसो जोवणपत्तो इमस्म वरपायवस्स छायाए । एयं तुम्ह विवायं छिंदिस्सइ नेत्थ संदेहो ॥६॥ तत्तियमित्तं कालं ता चिद्धह ताव निव्वुया तुब्भे । पडिवन्नममायाए माया न खमइ मुहुत्तंपि ॥७॥ भणइ य पिऊइ गेहं एवं दोण्हं विमिन्नचित्ताणं । जं वा तं वा दाउं अप्पिज्जउ देवि ! मम पुत्तो ॥ ८ ॥ एसो सगित्ति नाउं पुत्तो वित्तं च तीए दिन्नाइं । निद्धाडिया य इयरी रत्ता अलियत्ति कुविण ॥९॥ गवभगए जं जाया मंगलदेवीए एरिसा सुमई । तुट्ठेण तओ रण्णा जिणस्स

चतुर्विंश-  
तिस्तवः

॥३२२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२३॥

सुमई कयं नामं ॥१०॥ निष्पंकतामाश्रित्य पद्मस्येव प्रभाऽस्येति पद्मप्रभः, गर्भस्थे प्रभोर्मातुः पद्मशयनदोहदो देवतया पूरित इति पद्मवर्णश्रेति पद्मप्रभः ६ शोभनानि पार्श्वानि अस्येति सुपार्श्वः गर्भस्थेऽस्मिन् माताऽपि सुपार्श्वी जातेति सुपार्श्वः ७ चंद्रवत् सौम्या प्रभाऽस्येति चंद्रप्रभः, गर्भस्थेऽस्मिन् मातुश्चंद्रपानदोहदोऽभूदिति चंद्रप्रभः ८ शोभनो विधिरस्येति सुविधिः गर्भस्थेऽस्मिन् माताऽपि सर्वविधिषु कुशला जातेति सुविधिः ९ समस्तसत्त्वानामांतरतापोपशमकत्वात् शीतलः गर्भस्थेऽस्मिन् पितुः पूर्वोत्पन्नोऽचिकित्स्यः पित्तदाहो राज्ञीकरस्पर्शदिवोपशांत इति शीतलः १० विश्वस्यापि श्रेयान् हितकर इति श्रेयांसः गर्भस्थेऽस्मिन् केनाप्यनाक्रांतपूर्वा देवताधिष्ठिता शय्या जनन्या आक्रांता श्रेयश्च जातमिति श्रेयांसः ११ वसवो-देवविशेषास्तेषां पूज्यो वसुपूज्यः, स एव वासुपूज्यः, गर्भस्थेऽस्मिन् वसूनि-रत्नानि तैरभीक्ष्णं वासवो राजकुलं पूजितवान् वसुपूज्यस्य गोत्रापत्यमिति वा वासुपूज्यः १२ विमलानि ज्ञानादीन्यस्येति विगतमलो वा गर्भस्थेऽस्मिन् मातुर्मतिस्तनुश्च विमला जातेति विमलः १३

अत्र संप्रदायः-पद्मरणिं सवत्तीदुगस्त कयवम्भनिवपुरो जाए । पुत्तग्गहणविवाए सामादेवीइ तं नाउं ॥१॥ आणाविय सहमज्जे पुत्तस्सऽद्धे दवाविउं सुत्तं । आणावइ करवत्तं ता जणणी भणइ किमिणंति ॥२॥ देवी जंपइ दाहं पुत्तं वित्तं च णे दुहा काउं । पडिवन्नममायाए मायाए जंपियं देवि ! ॥३॥ मा माऽऽणवेसु देवि ! एवं पुत्तं पि वित्तमेयाए । अप्पेह मज्जे पुत्तं जीवंतं जेण पिच्छामि ॥४॥ तो विमलनियमईए सामा नाऊण तासि परमत्थं । छिंदइ तं ववहारं पुब्बुत्तकमेण नीसेसं ॥६॥ एवं विमलं बुद्धिं कयवंमन-राहिवेण नाऊण । एसो गम्भपभावो सुयस्स विमलो कयं नामं ॥७॥ अनंतकर्मांशजयादनंतानि वा ज्ञानादीन्यस्येति अनंतः गर्भस्थेऽस्मिन् मात्रा रत्नखचितमनंतं महत्प्रमाणं दाम स्वप्ने दृष्टमित्यनंतः १४ दुर्गतौ पतंतं सत्त्वसंघातं धारयतीति घर्म्मः, गर्भस्थे-

चतुर्विंश-  
तिस्तवः

॥३२३॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० सघा-  
चारविधौ  
॥३२४॥

ऽस्मिन् माता दानादिधर्मपरा जातेति धर्मः १५, शात्यात्मकत्वात्कर्तृत्वाद्वा शांतिः अस्मिन् गर्भस्थे पूर्वोत्पन्नाशिशस्य शांति-  
जतेति शांतिः १६ कौ-पृथिव्या स्थितवानिति निरुक्तात् कुथुस्तूप दृष्टवतीति कुंथुः १७ 'सर्वो नाम महासच्चः, कुले य उपजा  
यते । तस्याभिवृद्धये वृद्धैरसावर उदाहृतः ॥१॥ इत्यरः, गर्भस्थेऽस्मिन् मात्रा सर्वरत्नमयोऽरो दृष्ट इत्यरः १८ परीपहादिमल्ल  
जयान्मल्लिः, आर्पत्वादिकारः, गर्भस्थेऽस्मिन् मातुः सर्वतुककुसुममालाशयनीये दोहदो देवतया पूरित इति मल्लिः १९ मन्यते  
जगतस्त्रिकालावस्थामिति मुनिः सुष्ठु व्रतान्यस्येति सुत्रतः, मुनिश्चासौ सुत्रतश्चेति मुनिसुत्रतः, गर्भस्थेऽस्मिन् माता मुनिरिव सुत्रता  
जातेति मुनिसुत्रत २० परिपहादिनामनान्मिः, जन्ममहेऽस्मिन् प्रत्यतनूपैरजरुद्धे नगरे भगवत्पुण्यशक्तिप्रेरितां प्राकारोपरिस्थितां  
भगवन्मातरमलोक्य ते वैरिनृपाः प्रणता इति नमिः २१, तथा च बृहद्भाष्यम्- "मिहिलाए नयरीए विजयनरिंदस्स मदिरे  
सोउ । विबुहनिरहेहिं विहिय सुयजममहामह रम्म ॥१॥ ईसाम छरगरुयत्तणेण आगामिपरिभयभयाओ । रुद्धा पंचतियपरिथवेहि  
तुरिय पुरी मिहिला ॥३॥ पट्टिय(चंचल)चित्ते लोए विजयनरिंदमि वाउलीभूए । मूढंमि मतिवग्गे अइधोरे कोट्टरोहंमि ॥३॥ चित्तइ  
वप्पादेवी सुरवइमहियस्स मज्झतणयस्स । मज्झण्हदिणयस्स च तेय विसहंति कह रिउणो ? ॥ ४ ॥ तम्हा दसेमि इम गोसे  
सव्वेसि दुट्टराईण । पणमति पलायति य सघराह जेण सव्वेऽवि ॥५॥ मग्गाणुसारिपरिणामियाए बुद्धीए भाविउ एव । उच्छगध  
रियवाला सुस्दए सालमारूढा ॥६॥ दट्टूण जिणरिंदं रायाणो माणमच्छरविउत्ता । पणमंति विणयसार सेजगभाव पपन्नत्ति ॥७॥  
ज पणया वेरिनिगा दसियमित्ते जिणंमि तेण नमी । इय नामं एगवीसमजिणस्स विहिय विजयरत्ता ॥८॥" अरिष्टस्य-दुरितस्य  
नेमिः-चक्रधारवेत्यरिष्टनेमिः गर्भस्थेऽस्मिन् माता महानरिष्टरत्नमय उत्पत्तनेमिर्दृष्ट इत्यरिष्टनेमिः, अकारोऽत्र पश्चिमादिशब्दवत्

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२५॥

२२ सर्वभावान् पश्यतीति निरुक्तात्पार्श्वः, गर्भस्थेऽस्मिन् माता शयनीयस्था निशि तमसि सर्पमपश्यदिति पार्श्वः, उत्पत्तेरारभ्य  
ज्ञानादिभिरभिवर्द्धत इति वर्द्धमानः, गर्भस्थेऽस्मिन् ज्ञातकुलं धनधान्यादिभिर्वृद्धिं गतमिति वर्द्धमानः २४, एवं कीर्तयित्वा चित्त-  
शुद्धये प्रणिधानमाह—‘एव’मित्यादि, एवं—पूर्वोक्तप्रकारेण मयाऽभिष्टुता—आभिष्टुख्यतः स्तुताः सादरमिति भावः, किंविशिष्टाः ?—  
विधूतरजोमलाः, बध्यमानं बद्धं ऐर्यापथं वा कर्म रजः, पूर्वबद्धं निकाचितं सांपरायिकं वा मलं, ते विधूते—अपनीते यैस्ते विधूत-  
रजोमलाः, अत एव प्रक्षीणजरामरणाः, कारणभावात्, चतुर्विंशतिरपि जिनवराः, अपिशब्दः प्राग्वत्, जिनवराः—श्रुतादिजिनेभ्यः  
वराः—प्रकृष्टास्तीर्थकरा मे—मम प्रसीदंतु—प्रसादपरा भवंतु । यद्यप्येते वीतरागादित्वात् प्रसीदंति तथापि तानर्चित्यमाहात्म्योपेतान्  
चित्तामण्यादीनि मनःशुद्ध्याऽऽराधयन्नभीष्टफलमवाप्नोति, तथा ‘किञ्चित्थे’त्यादि, कीर्तिताः—स्वनामभिः प्रोक्ताः वंदिता—  
वाग्मनोभिः स्तुताः महिताः—पुष्पादिभिः पूजिता, मह्यत्ति वा पाठः, अत्र मयका—मया, क एते इत्याह—य इति प्रत्यक्षा एते  
ऋषभाद्या लोकस्य—प्राणिवर्गस्य कर्ममलाभावेनोत्तमाः—प्रकृष्टा उच्छिन्नतमसो वा सिद्धाः—निष्ठितार्थाः अरोगस्य भाव आरोग्यं—  
सिद्धत्वं तस्मै बोधिलाभः—अर्हद्ब्रह्मावाप्तिः आरोग्यबोधिलाभस्तं, स चानिदानो मोक्षायेत्यतस्तदर्थमाह—‘समाधिवरं, समाधिः—  
परमस्वास्थ्यरूपं भावसमाधिमित्यर्थः, सोऽप्यनेकधा तारतम्येनात उत्तमं—सर्वोत्कृष्टं ददतु, भावसमाधिगुणाविर्भावकं जिनद-  
त्ताख्यानकं, तथाहि—

छन्नस्य एकदा वीरो, वैशाल्यामाययौ बहिः । तस्थौ प्रतिमया देवकुले काले घनागमे ॥ १ ॥ तत्रासीत् परमश्राद्धो, जिन-  
दत्ताभिधः सुधीः । च्युतः श्रेष्ठिपदाजीर्णश्रेष्ठित्वेन स विश्रुतः ॥२॥ वीरं संवीक्ष्य वंदित्वा, कृत्वोपास्ति चिराद् गृहम् । आगा-

चतुर्विंश-  
तिस्तवः

॥३२५॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३२६॥

दहिंडनेनास्य, तर्कयन्नुपवासिताम् ॥ ३ ॥ एवं प्रतिदिनं कुर्वन्, वर्षारात्रमतीत्य सः । दध्यौ स्वाम्यद्य मद्गोहे यद्यागच्छेत् परेण  
किम्? ॥४॥ ध्यायन्निति गृहस्यांतस्तस्थौ स्वस्थमनाधिरम् । मध्याह्ने तु गृहद्वारे, सोऽथ स्थित्वेत्यर्चितयत् ॥ ५ ॥ यद्यत्रैप्यति  
वीरोऽद्य, कल्पद्रुरिव जंगमः । संमुखस्तस्य यास्यामि, मूर्ध्वद्वंजलिस्तदा ॥६॥ तं त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य, वंदिष्ये सपरिच्छदः । ततो  
नेप्ये गृहस्यान्तर्निधानमिव जंगमम् ॥७॥ अथान्नपानैर्मनोज्ञैः, प्रासुकैरेपणीयकैः । भक्त्या तं पारयिष्यामि, संसारांभोधितारकम् ॥८॥  
पुनर्नत्वाऽनुयास्यामि, पदानि कतिचित्ततः । धन्यमन्यः स्वयं भोक्ष्ये, शेषमुद्धरितं मुदा ॥ ९ ॥ एवं मनोरथश्रेणीं, जिनदत्तस्य  
कुर्वतः । श्रीवीरोऽभिनवश्रेष्ठिगृहे भिक्षार्थमागमत् ॥१०॥ कुलमापा दापितास्तेन, चेत्या चट्टुकहस्तया । सुपात्रदानतस्तत्र, पंच  
दिव्यानि जज्ञिरे ॥ ११ ॥ नृपाद्या मिलितास्तत्र, श्रेष्ठ्यसौ तैः प्रशंसितः । पारयित्वा ततोऽन्यत्र, विहर्तुं प्रभुरप्यगात् ॥ १२ ॥  
जिनदत्तो निशम्याथ, ध्वनंतं दिवि दुन्दुमिम् । दध्यौ धिग् मामवन्योऽहं, यन्नायान्मद्गुहं प्रभुः ॥ १३ ॥ तत्पुर्यामथ तत्राहि,  
केवली समवासरत् । नृपाद्या एत्य तं नत्वाऽपृच्छत् कः पुण्यवानिह? ॥ १४ ॥ सोऽप्याख्यजिनदत्तं तं, राज्ञोचेऽनेन नो जिनः ।  
पारितः पारितः किंतु, श्रेष्ठिनाऽभिनवेन सः ॥१५॥ केवली कथयित्वाऽस्य, भावनां मूलतोऽपि हि । वभापे भावतोऽनेन, पारितः  
परमेश्वरः ॥१६॥ दधानेन समाधिं तं, प्रधानं धीमता तदा । द्वादशस्वर्गसंसर्गयोग्यं कर्म समर्जितम् ॥१७॥ किं चान्यद्यदि नाश्रो-  
प्यत्तदाऽसौ देवदुंदुमिम् । ततस्तदैव संग्राप्स्यत्, केवलज्ञानमुज्ज्वलम् ॥१८॥ अनेन भावशून्येन, नूतनश्रेष्ठिना पुनः । सुपात्र-  
दानतः प्राप्तं, स्वर्णवृष्ट्यादिकं फलम् ॥१८॥ समाधिरहितो जीमः, स्याल्लभेतैहिकं फलम् । समाधिना पुनर्युक्तः, स्वर्गमोक्षाद्यपि  
क्षणात् ॥२०॥ जिनदत्तं प्रशस्याथ, ते सर्वेऽगुर्यथागतम् । जिनास्तदेवं विज्ञेया, नूनं भावममाधिदाः ॥२१॥ तथा 'चंदेस्तु' इत्यादि,

चतुर्विंश-  
तिस्तवः

॥३२६॥

पंचम्यर्थे सप्तमी, यत् चंद्रेभ्यो निर्म्मलतराः कर्ममलकलंकापगमात्, आदित्येभ्योऽधिकं प्रकाशकराः, केवलोद्योतेन  
लोकालोकप्रकाशकत्वात्, यदागमः—“चंदाद्दशगहाणं पभा पयासेइ परिमियं खेतं । केवलिवनाणलंभो लोयालोयं पयासेइ ॥१॥”ति,  
सागरवरः—स्वयंभूरमणांभोधिस्तद्वद् गंभीराः परीपहाद्यक्षोभ्यत्वात्, सिद्धाः—क्षीणाशेषकर्माणः सिद्धि—परमपदावाप्ति मम  
दिशंतु—प्रयच्छन्तु । एष चतुर्विंशतिजिनस्तचारुयश्चतुर्थोऽधिकारः । इह मौलं चैत्यं समाधिकारणमिति मूलप्रतिमायाः प्राक्  
स्तुतिरुक्ता, सांप्रतं सर्वेऽप्यहंतस्तुल्यगुणा इति सर्वलोके अहंचैत्यानां वंदनाद्यर्थं कायोत्सर्गकरणायेदं पठति—‘सञ्चलोए अरि-  
हंतचेइयाणमित्यादि, यावद् वोसिरामि’ अर्थः प्राग्वत्, नगरं सर्वलोके ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्रूपे त्रैलोक्य इत्यर्थः तत्र ऊर्ध्वलोके  
सौधर्मादिस्वर्गगतविमानेषु यथा—वत्तीमलक्ख चेइय सोहम्मे अट्टवीम ईमाणे । नारस सनक्कुमारो माहिंदे अट्ट चउ वंभे ॥१॥  
पंचाससहस्र लन्तगि सुक्के चालीस छच्च सहसारे । आणयपाणय चउसय तिन्नि सया आरणच्चुयए ॥ २ ॥ हिट्टिमतिगे इगा-  
रुत्तरं सयं मज्झिमंमि सत्तहियं । मेविज्जुपरि तिगि सयं पणऽणुत्तरचेइए वंदे ॥३॥ चुलसी लक्खा सगनवइ सहस तेवीस उवरि-  
लोयंमि । चेइयपडिमा वंदे चउ पडिहारट्टसउ मज्जे ॥ ४ ॥ कप्पेसु वासनमयं कोडी चउणवइ लक्खछसहस्सा । मेविज्ज पडिम-  
सहसा अडतीसं सत्तसयसट्टा ॥५॥ अधोलोके चमरादिभवनेषु, तच्च—चउतीस तीम असुरे नागे चउचत्त चत्त चिइलक्खा । वाऊमृ  
पंन छायाल कणगे अडतीस चउतीसा ॥६॥ दीवोदहिविज्जुदिसाथणियग्गिसु विहु चत्त छत्तीसा । वंदे अह जम्मुत्तर चेइ विस-  
यरिलक्ख सगकोडी ॥ ७ ॥ कोडी सगसत्तकोडी तीस असी लक्ख पडिम अहलोए । जम्मुत्तरि कोडिमयं छकोडि अडलक्ख  
असीई य ॥ ८ ॥ तिर्यग्लोके द्वीपानलव्यंतरनगरज्योतिष्कविमानादिषु, तथाहि—मेहंमि सत्तर अडदिग्गणसु चउदस नईसु कुरुसु



श्रीदे०  
नेत्र० श्री  
धर्म० संया  
चारविधौ  
॥३२८॥

दृगं । तस्मिन् दुसय चउतीसा वक्खारदहेसु सोल पुढो ॥९॥ दो सय कणयगिरीसुं कुंडेसु छहचरी छ कुलगिरीसु । अडतीसं वेयड्डे  
चउरगयदंतजमगेसु ॥१०॥ तिरिलोइ जंबूदीवे नमामि इह चेइए छपणतीसे । धायइ १२७० पुक्खरि १२७० दुगुणा चउ रइइसु-  
यारमणुसनगे ॥११॥ नरखित्त वहिं बाणवइ चेइए रायहाणिसु दुतीसा । चउरो कुंडलरुयगे नमामि वावन्न नंदिसरे ॥१२॥ तिय  
लक्ख महस छासी नव सयहीणा नमामि जिणपडिमा । नरखित्ते वाहिं पुण इगारसहसा दुसय असिया ॥१३॥ वंतर सासयचेइय  
असंखता जोइसेसु संखगुणा । वंदे असासयाओवि भरहाइकया व दुविहाओ ॥ १४ ॥ स्तुतिश्चात्र सर्वतीर्थकरसाधारणा, एष  
त्रैलोक्यस्थापनार्हत्स्तवरूपः पंचमोऽधिकारस्तृतीयो वंडकः । अथ येन तेऽर्हतस्तदुक्ताश्च भावा ज्ञायंते तत्प्रदीपकल्पं  
सम्यक्श्रुतमर्हति कीर्तनं, तत्रापि पितृभूततया तत्प्रणेतृन् प्रथमं स्तौति—‘पुक्खरवरदीवड्डे’ इत्यादि, पुक्खरवरद्वीपस्त्वृतीयस्तस्याद्धे  
मानुषोत्तरपर्यतादवांग्भागवर्त्तिनि, तथा घातकीखंडे द्वितीयद्वीपे जंबूद्वीपे प्रथमे, महत्तरक्षेत्रप्राधान्याश्रयणात् पश्चानुपूर्व्या निर्देशः,  
त्रीणि भरतैरावतमहाविदेहानि पंचदश क्षेत्राणि तेषु, प्राकृतत्वादेकवचनं, धर्मस्य—श्रुतधर्मस्यादिकरान्—सूत्रतः प्रथमकरणशीलान्  
नमस्यामि—स्तौमि । एतेन च सर्वत्रामीष्टवस्तुनि प्रवर्त्तमानैः शिष्टैरमीष्टदेवतास्तुतिपूर्वकमेव प्रवर्त्तितव्यमित्यावेदितं भवति, एष पष्ठो-  
ऽधिकारः । एवं दर्शनविशुद्धिं कृत्वा ज्ञानविशुद्ध्यर्थं श्रुतधर्मं स्तौति—‘तमित्तिमिरे’ इत्यादि, तमः—अज्ञानं तदेव तिमिरं तयोर्वा  
पटलं—वृंदं तद् विध्वंसयति—विनाशयतीति तमस्तिमिरपटलविध्वंसनस्तस्य, अज्ञाननिरासेनैवास्य प्रवृत्तेः, ‘सुरगणनरेंद्रमहितस्ये’ति  
आगममहिमां कुर्वन्त्येव सुरादयः सीमां—मर्यादां धारयतीति सीमाधरः, प्रक्रमात् श्रुतधर्मस्तस्य, धारयंत्यागमवंतो मर्यादाम्,  
कर्मण्यत्र पृष्ठी, अतस्तं वंदे, तस्य वा यन्माहात्म्यं तद् वंदे इति संबंधे पृष्ठी, अथवा तस्य वंदे—वंदनं करोमीति । प्रकर्षेण स्फोटितं—

श्रुतस्तवः

॥३२८॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
रम० संघा-  
चारविधौ  
॥३२९॥

विदारितं मोहजालं-मिथ्यात्वादिरूपं येन स तथा, श्रुतधर्मे हि सति विवेकिनां मोहजालं विलयमुपयात्यैव, इत्थं श्रुतमभिव्यंघ  
तस्यैव गुणोपदर्शनद्वारेणाप्रमादगोचरतां प्रतिपादयन्नाह—'जाईजरामरणे'त्यादि, कः सचेतनो धर्मस्य-श्रुतधर्मस्य सारं-  
सामर्थ्यमुपलभ्य-विज्ञाय श्रुतधर्मोदितेऽनुष्ठाने प्रमादं-अनादरं कुर्यात् १, न कश्चिदित्यर्थः, जातिः-जन्म जरा-उपोहानिः मरणं-  
प्राणनाशः शोकः-मानसो दुःखविशेषस्तान् प्रणाशयति-अपनयति जातिजरामरणशोरुप्रणाशनस्तस्य, श्रुतधर्मोक्तानुष्ठानाद्वि-  
जात्यादयः प्रणश्यंत्येव, अनेनास्यानर्थप्रतिघातित्वमुक्तं, कल्यं-आरोग्यं अणति-शब्दयति इति कल्याणं, पुष्कलं-संपूर्णं, न च  
तदल्पं, किन्तु विशालं-विस्तीर्णं, एवंभूतं सुखमाग्रहति-प्रापयतीति कल्याणपुष्कलविशालसुखाग्रहस्तस्य, श्रुतधर्मोक्तानुष्ठानादु-  
क्तलक्षणमपरगसुरगमनाप्यत एव, अनेन चास्य विशिष्टार्थप्रापकत्वमाह, 'देवदानवनरेद्रगणार्चितस्ये'त्येतत् सुरगणनरेंद्रमहि-  
तस्यैवानुवृत्तिफलसमर्थनं व्यक्तं च ।

अत्र संप्रदायः-प्रमाद्यन् सूरिरेकोऽत्र, प्रेत्याभूद् विगतश्रुतः। तत्रोद्यच्छन् स एवाभूत्, पारदृश्या श्रुतांबुधेः॥१॥ तथाहि-एरु-  
सिन् भ्रातरौ गच्छे, गंगाकूलनिवासिनौ । व्रतं जगृहनुः शांतौ, तत्रैकोऽभूद् बहुश्रुतः ॥२॥ सूरिर्जज्ञे क्रमेणासौ, शिष्यैः सूरार्थ-  
मिच्छुभिः । सेव्यमानो दिनं सर्वं, विश्रामं नाश्रुते क्वचित् ॥३॥ निशायामपि सूरार्थं, चिंतनपृच्छनादिभिः । नामसाद सुखान्नि-  
द्रामन्वहं व्यग्रमानसः ॥ ४ ॥ भ्राता तस्य द्वितीयस्तु, नित्यमास्ते यथासुखम् । तं च पश्यन्नसौ सूरिर्दध्यौ दुर्बुद्धिवाधितः ॥५॥  
अहो मे बांधवो धन्यो, योऽयमास्ते सदा सुखी । ज्ञानविज्ञानहीनत्वात्, केनाप्यायास्यते नहि ॥६॥ अजाकृपाणरूपेण, ज्ञानेनाहं  
त्वमाप्नुयाम् । दुःखं तनोऽत्र केनापि, विदुषा सुदितं हृदः ॥७॥ मूर्खत्वं हि सखे ! ममापि रुचितं तस्यापि चाष्टौ गुणा, निश्चितो ?

श्रुतस्तवे  
अशकटा-  
पिता

॥३२९॥

थीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३३०॥

बहुभोजनोऽवपमना३ नक्तंदिवाशायकः४ । कार्याकार्यविचारणांधवधिरो५ मानापमाने समः६ प्रायेणामयवर्जितो७ दृढवपुटमूर्खः  
सुखं जीवति ॥८॥ न पुनर्भावयति यथा-नानाशास्त्रसुभाषितामृतरसैः श्रोत्रोत्सवं कुर्वतां, येषां यांति दिनानि पंडितजनव्यायामखिन्ना-  
त्मनाम् । तेषां जन्म च जीवितं च सफलं तैरेव भूर्भूषिता, शेषैः किं पशुवद् विवेकरहितैर्भूभारभूतैर्नरैः ? ॥९॥ ज्ञानप्रद्वेषतश्चैवं, ज्ञानमा-  
शातयन्नमौ । दुष्टबुद्धिः प्रमादेन, ज्ञानघ्नं कर्म वद्ववान् ॥१०॥ ज्ञानाचारातिचारतमनालोच्य विपद्य च । देवोऽभूद् देवलोकेऽसौ,  
सञ्चारित्रप्रभावतः ॥११॥ च्युत्वाऽऽभीरकुले कसिन्, भरतेऽत्र सुतोऽजनि । पितृभ्यामात्मरूपां स, कन्यामुद्राहितो युवा ॥१२॥  
तस्यैकदा सुता जज्ञे, सुरूपा भद्रकन्यका । यौवनं प्राप सा यूनां, मनोनयनहारकम् ॥१३॥ अनोधुरि निधायैनां, तत्पिता  
नगर प्रति । प्रतस्थे नममाभीरैर्घृतं विक्रेतुमन्यदा ॥१४॥ तामेव पश्यता तेषामनांसि च मनांसि च । उत्पथस्थान्यभद्र्यंत, सद्यः  
प्रस्खल्य कुत्रचित् ॥१५॥ विलक्षीभूय संभूय, तैरित्यौच्यत तावता । नाम्नाऽऽशकटाऽऽशकटापितेति च मुहुर्मुहुः ॥१६॥ शृण्वत-  
स्तस्य वैराग्यं, वभूव लघुऋर्मणः । सुतामुद्वाह्य केनापि, दत्त्वा तस्मै धनादिकम् ॥१७॥ गच्छे कसिन् स निष्क्रम्य, योगोद्बह-  
नमादतः । कुर्वन्नघ्यैष्ट सुस्पष्टमुचराध्ययनत्रयम् ॥१८॥ पठतोऽसंस्कृताख्यं च, तुर्याध्ययनमंजसा । तद् ज्ञानावरणीयाख्यमागात्क-  
र्मोदयं ततः ॥१९॥ अधीयानस्य तत्तस्याचामाम्लाभ्या दिनद्वयम् । नैकोऽप्यालापकोऽस्यागात्कच्छ्रेणाप्यभियोगतः ॥२०॥  
ततोऽसौ गुरुभिः प्रोचे, किं तेऽनुज्ञाप्यतामिदम् ? । स प्राह भगवन्नस्य, योगः कीदृग् ? ततो गुरुः ॥२१॥ ऊचे यात्रदिदं नैति,  
तात्रदाचाम्लमस्य तु । स स्माह कृतमन्येन, श्रुतेन तपसा च मे ॥२२॥ आचाम्लान्यथ सोऽकार्पाद्, द्वादशाब्दीं समाहितः । क्षयमापै-  
तकत् रूर्म, सुखेनाप्यैष्ट तच्छ्रुतम् ॥२३॥ शेषं चापि श्रुतं शिप्रमधीते स महामतिः । श्रुतभक्तेरिहामुत्र, सर्वत्र सुखभागभूत् ॥२४॥

श्रुतस्तवे  
अशकटा-  
पिता

॥३३०॥

यतः सकर्णस्य चारित्रधर्मे प्रमादः कर्तुं न युज्यते ततः किमित्याह—‘सिद्धे भो पयओ’ इत्यादि, सिद्धे—फलाव्यभि-  
 चारेण परिनिष्ठिते, नहतो विधिप्रवृत्तः फलेन वंच्यते इति भावः१, सर्वनयव्यापकत्वेन च प्रतिष्ठिते२ विधिप्रतिषेधा३नुष्ठाना२-  
 मिधेया३ विरोधलक्षणकप१च्छेद२ तापाख्य३त्रिकोटिपरिशुद्धत्वेन च प्रख्याते३, भो इत्यतिशयिनामामंत्रणे, पश्यंतु भवंतः प्रयतो-  
 यथाशक्ति प्रकर्षेण यतोऽहं, लोकव्यवहारवत् धर्मोऽपि ससाक्षिकः सम्यक् स्यादिति ज्ञापनार्थं ‘भो’ इत्युक्तं, नमः अस्त्वितिशेषः,  
 जिनमते—चतुर्थ्यर्थेऽत्र सप्तमी, यस्मिन् मते किं?—नंदिः—समृद्धिः सदा संयमे—चारित्रे, भवति इत्युपस्कारः, यदार्प—“पदमं  
 नाणं तओ दया” इत्यादि, किंविशिष्टे संयमे?—“देवनागसुवर्णकिन्नरगणसवभूअभावचिए इति, देवतानागसुवर्णकि-  
 न्नरगणैः सद्भूतभावेन अर्चिते, संयमवंतो ह्यर्च्यन्ते एव देवाद्यैः, तत्र देवा वैमानिका नागा—धरणादयः शोभनवर्णाः सुवर्णाः—  
 ज्योतिष्काः किन्नरा—व्यंतरविशेषास्तेषां समूहैः, अत्र वकारेऽनुस्वारः प्राकृतत्वात् सकारस्य द्वित्वं च, किंभूते जिनमते?—लोको  
 ज्ञानं यत्र प्रवचने प्रतिष्ठितः—तद्वशीभूतः तथा जगदिदं ज्ञेयतया प्रतिष्ठितमिति योगः, केचिन्मर्त्यलोकमेव जगन्मन्यंत इत्याह—  
 ‘त्रैलोक्यमर्त्यासुरं’ आधाराधेयरूपं, तत्र त्रैलोक्यं—ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकलक्षणं तस्मिन्, मर्त्यासुरमित्युपलक्षणत्वान्नारकतिर्यगादि-  
 परिग्रहः, अथ इत्थंभूतो धर्मः—श्रुतधर्मो वर्द्धतां—वृद्धिं यातु, शाश्वतोऽर्थतो नित्यः विजयतः—परवादिविजयेन धर्मोत्तरं—  
 चारित्रधर्मस्य प्राधान्यं यथा भवति एवं वर्द्धतां, पुनर्वृद्ध्यभिधानं प्रत्यहं मोक्षार्थिना ज्ञानवृद्धिर्विधेयेत्युपदेशार्थं । प्रणिधानमिदं  
 मोक्षबीजकल्पं परमार्थतोऽनाशंसारूपमेवेति, भवति चेत्थं विवेकजलसिक्तं प्रार्थनारोपणाभ्यासेन शालिवृद्धिवत् श्रुतधर्मवृद्धिः, एवं  
 प्रणिधानं कृत्वा तत्पूर्विका क्रिया फलायेति श्रुतस्य वंदनाद्यर्थं कायोत्सर्गाय पठति—‘सुयस्स भगवओ इत्यादि, वोसिरामी’ति

श्रीदे०  
नेत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३३०॥

यद्भुभोजनोऽत्रपमनाऽनक्तंदिवाशायकः४। कार्याकार्यविचारणांधवधिरो५ मानापमाने समः६ प्रायेणामयवर्जितो७ दृढवपुः८ पूर्वः  
मुखं जीवति ॥८॥ न पुनर्भावयति यथा-नानाशास्त्रसुभाषितामृतरसैः श्रोत्रोत्सवं कुर्वतां, येषां यांति दिनानि पंडितजनव्यायामखिना-  
त्मनाम्। तेषां जन्म च जीवितं च सफलं तैरेव भूर्भूषिता, शेषैः किं पशुवद् विवेकरहितैर्भूभारभूतैर्नरैः? ॥९॥ ज्ञानप्रद्वेषतश्चैवं, ज्ञानमा-  
ज्ञातयन्नमौ। दुष्टबुद्धिः प्रमादेन, ज्ञानघ्नं कर्म च द्रव्यान् ॥१०॥ ज्ञानाचारातिचारं तमनालोच्य विषय च। देवोऽभूद् देवलोकेऽसौ,  
सचारित्रप्रभावतः ॥११॥ च्युत्वाऽऽभीरकुले कसिन्, भरतेऽत्र सुतोऽजनि। पितृभ्यामात्मरूपां स, कन्यामुद्राहितो युवा ॥१२॥  
तस्यैकदा सुता जग्ने, मुरुषा भद्रकन्यका। यौवनं प्राप सा यूनां, मनोनयनहारकम् ॥१३॥ अनोधुरि निधायैनां, तत्पिता  
नगरं प्रति। प्रतस्थे सममामीरैर्धृतं विक्रेतुमन्यदा ॥१४॥ तामेव पश्यतां तेषामनांसि च मनांसि च। उत्पथस्थान्यभज्यंत, सद्यः  
प्रस्त्रल्य कुत्रचित् ॥१५॥ त्रिलक्षीभूय संभूय, तैरित्यौच्यत तावता। नाम्नाऽशकटाऽशकटापितेति च मुहुर्मुहुः ॥१६॥ शृण्वत-  
स्तस्य वैराग्यं, वभूव लघुकर्मणः। सुतामुद्वाह्य केनापि, दत्त्वा तस्मै धनादिकम् ॥१७॥ गच्छे कसिन् स निष्क्रम्य, योगोद्भव-  
नमादतः। कुर्वन्नघ्यैः सुस्पष्टमुत्तराध्ययनत्रयम् ॥१८॥ पठतोऽसंस्कृताख्यं च, तुर्याध्ययनमंजसा। तद् ज्ञानावरणीयाख्यमागात्क-  
र्मोदयं सतः ॥१९॥ अधीयानस्य तत्तस्याचामाम्लाभ्यां दिनद्वयम्। नैकोऽप्यालापकोऽस्यागात्कृच्छ्रेणाप्यभियोगतः ॥२०॥  
ततोऽसौ गुरुभिः प्रोचे, किं तेऽनुज्ञाप्यतामिदम्?। स प्राह भगवन्नस्य, योगः कीदृग्? ततो गुरुः ॥२१॥ ऊचे यावदिदं नैति,  
तापदाचाम्लमस्य तु। स स्नाह कृतमन्येन, श्रुतेन तपसा च मे ॥२२॥ आचाम्लान्यथ सोऽकार्पाद्, द्वादशाब्दीं समाहितः। क्षयमापै-  
तकत् कर्म, मुखेनाघ्यैः तच्छ्रुतम् ॥२३॥ शेषं चापि श्रुतं क्षिप्रमधीते स महामतिः। श्रुतभक्तेरिहाश्रुतं, सर्वत्र सुखभागभूत् ॥२४॥

श्रुतस्तवे  
अशकटा-  
पिता

॥३३०॥

यतः सकर्णस्य चारित्रधर्मं प्रमादः कर्तुं न युज्यते ततः किमित्याह—‘सिद्धे भो पयओ’ इत्यादि, सिद्धे—फलाव्यभि-  
 चारेण परिनिष्ठिते, नहतो विधिप्रवृत्तः फलेन वच्यते इति भावः१, सर्वनयव्यापकत्वेन च प्रतिष्ठिते२ विधिप्रतिषेधा३नुष्ठाना२-  
 मिधेया३ विरोधलक्षणकप१च्छेद२ तापाख्य३त्रिकोटिपरिशुद्धत्वेन च प्रख्याते३, भो इत्यतिशयिनामामंत्रणे, पश्यंतु भवंतः प्रयतो-  
 यथाशक्ति प्रकर्षेण यतोऽह, लोकव्यवहारवत् धर्मोऽपि ससाक्षिकः सम्यक् स्यादिति ज्ञापनार्थं ‘भो’ इत्युक्तं, नमः अस्त्वितिशेषः,  
 जिनमते—चतुर्थ्यर्थेऽत्र सप्तमी, यस्मिन् मते किं?—नंदिः—समृद्धिः सदा संयमे—चारित्रे, भवति इत्युपस्कारः, यदार्प—“पदमं  
 नाणं तओ दया” इत्यादि, किंशिष्टे संयमे?—“देवनागसुवर्णकिन्नरगणसंबभूअभावच्चिए इति, देवतानागसुवर्णकि  
 न्नरगणैः सद्भूतभावेन अर्चिते, संयमयतो ह्यर्च्यन्ते एव देवाद्यैः, तत्र देवा वैमानिका नागा—धरणादयः शोभनवर्णाः सुवर्णाः—  
 ज्योतिष्काः किन्नरा—व्यतरविशेषास्तेषा समूहैः, अत्र वकारेऽनुस्वारः प्राकृतत्वात् सकारस्य द्वित्वं च, किंभूते जिनमते?—लोकौ  
 ज्ञानं यत्र प्रवचने प्रतिष्ठितः—तद्वशीभूतः तथा जगदिद ज्ञेयतया प्रतिष्ठितमिति योगः, केचिन्मर्त्यलोकमेव जगन्मन्यंत इत्याह—  
 ‘त्रैलोक्यमर्त्यासुर’ आधाराधेयरूपं, तत्र त्रैलोक्य—ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकलक्षणं तस्मिन्, मर्त्यासुरमित्युपलक्षणत्वान्नारकतिर्यगादि-  
 परिग्रहः, अथ इत्थंभूतो धर्मः—श्रुतधर्मो वर्द्धतां—वृद्धिं यातु, शाश्वतोऽर्थतो नित्यः विजयतः—परवादिविजयेन धर्मोत्तर—  
 चारित्रधर्मस्य प्राधान्यं यथा भवति एव वर्द्धता, पुनर्वृद्धयभिधानं प्रत्यहं मोक्षार्थिना ज्ञानवृद्धिर्विधेयेत्युपदेशार्थं । प्रणिधानमिदं  
 मोक्षरीजकल्प परमार्थतोऽनाशंमारूपमेवेति, भवति चेत्थ विवेकजलसिक्तं प्रार्थनारोपणाभ्यासेन शालिवृद्धिवत् श्रुतधर्मवृद्धिः, एवं  
 प्रणिधानं कृत्वा तत्पूर्विना क्रिया फलायेति श्रुतस्य वंदनाद्यर्थं कायोत्सर्गाय पठति—‘सुयस्स भगवओ इत्यादि, वोसिरामी’ति

श्रीदे०  
चैल० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३३२॥

पात्र, अर्थः प्राग्वत्, नवरं श्रुतस्येति प्रवचनस्य-सामायिकादिचतुर्दशपूर्वपर्यंतस्य भगवतः-समग्रैश्वर्यादियुक्तस्य, स्तुतिश्चात्र  
श्रुतस्य दातव्या ॥ एवं श्रुतस्तवाख्यः सप्तमोऽधिकारश्चतुर्थो दंडकः। ततश्चानुष्ठानपरंपराफलभूतेभ्यः सिद्धेभ्यो नमस्क-  
रणायेदं पठति-‘सिद्धाणं बुद्धाणं’ इत्यादि, सिध्यन्ति स्म सिद्धाः ये येन गुणेन निष्पन्नाः-परिनिष्ठिताः सिद्धौदनवत्, न पुनः  
माधनीया इत्यर्थः, तेभ्यो नमः इति योगः, ते च सामान्यतः कर्मादिसिद्धा अपि भवंति, यथोक्तं-‘कस्मै१ सिप्पे य२ विजाए३,  
मंते जोगे य४ आगमे६। अत्थ७ जत्ता८ अभिप्पाए९ तवे१० कम्मक्खए इअ ११ ॥ १ ॥ अत्रोदाहरणानि-सज्जगिरिसिद्ध १  
कोहामर खवुड३ थंभनमि४ अज्जसमियगुरू५ । गोयम६ मंमण७ बुद्धिय ८ अगए९ दढपहारि१० मरुदेवा ११ ॥ १ ॥ अथ  
कर्मादिसिद्धव्यपोहेन कर्मक्षयसिद्धप्रतिपत्त्यर्थमाह-‘बुद्धेभ्यो’ ज्ञाततत्त्वेभ्यः, बुद्धत्वानंतरं कर्मक्षयं कृत्वा सिद्धेभ्य इत्यर्थः,  
‘पारगतेभ्यः’ पारं-पर्यन्तं संसारस्य प्रयोजनव्रातस्य वा गतास्तेभ्यः, ‘परंपरागतेभ्यः’ परंपरया-चतुर्दशगुणस्थानक्रमारोह-  
रूपया यद्वा कथंचित् कर्मक्षयोपशमादेः सम्यग्दर्शनं ततो ज्ञानं ततश्चारित्रमित्येवंभूतया गता-सुक्तिस्थानं प्राप्ताः लोकाग्रं-सिद्धिक्षेत्रं  
उप-गामीष्येन तदपरामिन्नदेशतया सर्वकर्मक्षयपूर्व्वं गतास्तेभ्यः, ‘इह लाउव्व असंगा एरंडफलं व वंधणच्छेया । सरमिव पुव्व-  
पओगा गइपरिणामाउ धूमं ॥ १ ॥ सिद्धो गच्छइ उडुं जा लोयग्गमिगसमयमविरुद्धं । लोयग्गाओ परं पुण नय जाइ उवग्गहा-  
भाया ॥२॥ तह जोगपओयाणं अभावओ नविय गच्छइ तिरिच्छं । गउरवविगमाओ असंगभावओ नेव हिडुं पि ॥३॥ नमोऽस्तु सदा  
मर्वमाघ्यं सिद्धं येषां ते सर्वसिद्धास्तेभ्यः, यद्वा तीर्थसिद्धादिपंचदशभेदेभ्यः, तथाहि-जिण १ अजिण २ तित्थ३ऽतित्था४ गिहि  
५ अन्न ६ सलिंग७थी८ नर९नपुंसा १० । पत्तेय ११ सयंबुद्धा १२ बुद्धवोहि १३ इग १४ अणेगा१५ ॥१॥’ खलिंगं-साधु-

सिद्धस्तवः

॥३३२॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३३३॥

वेपः, प्रत्येकस्वयं बुद्धयोर्बाह्यप्रत्ययभावाभावबोधि १ कल्परेवर्जितनवधाचोलपट्टमात्रकरहितद्वादशोपधि २ पूर्वभवाधीतश्रुतनियमा-  
नियम ३ देवतागुरुदत्तलिंगकृतो विशेषः, बुधैः-आचार्यैर्बोधिताः संतो ये सिद्धास्ते बुद्धबोधितसिद्धाः, प्रत्येकबुद्धाः पुंल्लिङ्ग एव,  
जिनाः स्त्रील्लिङ्गोऽपि, शेषास्तु नपुंसकेऽपि, एष सिद्धस्तुतिनामाष्टमोऽधिकारः । अथ आसन्नोपकारित्वाद् वर्त्तमानतीर्थाधिपतिं श्रीवीरं  
स्तुवन्नाह-‘जो देवाणवि’ इत्यादि, यो भगवान् देवानामपि-भुवनपत्यादीनां, न मनुष्याणामेवेत्यप्यर्थः, देवः-पूज्यः, अत एवाह-  
‘जं देवा पंजली’ इत्यादि, प्रांजलयो-विनयरचितकरसंपुटा नमस्यंति, एवं शक्राद्योऽपि स्यादित्याह-तं त्रिभुवनख्यातमहिवं देव-  
देवैः-शक्राद्यैः महितं-पूजितं, शिरसा-उत्तमांगेन, आदरप्रदर्शनार्थमिदं, महावीरं भगवन्तं, यद्वा देवदेवं-अधिकं देवं देवाधिदेव-  
मित्यर्थः, स्तुमश्च-“बाल्ये जयेच्छुलघुयानपणायमानः, क्रीडन् सुरैर्द्युतिसमेत इति स्तुतो यः । देव ! त्वमेव भगवन्नसि देवदेवो,  
देवाधिदेवमुदुशंति भवंतमेव ॥१॥” शिरसा-उत्तमांगेन, आदरप्रदर्शनार्थमिदं, महावीरं-भयानकभटैरप्यक्षोभ्यतयेत्यमरकृतनामानं-

अत्र संप्रदायः-अह ऊणअट्टवासस्स भगवओ सुरवराण मज्झंमि । संतगुणुक्कित्तणयं करेइ सको सुहंमाण ॥१॥ बालो अवाल-  
भावो अवालपरकमो महावीरो । नहु सका भेसेउं देवेहिं सइंदएहिंपि ॥२॥ तं वयणं सोऊणं अह एगसुरो असइहंतो य । भणई निसु-  
णेह अमरा ! केरिसमिह साहए सामी ? ॥३॥ मर्त्यः कोऽपि समस्ति मांसनयनो नद्वांगभूर्धातुभिः, सत्त्वं तस्य तु देवताभिरपि  
चाचाल्यं किमप्यद्भुतम् । अथद्वेयमिदं सुधर्मणि सभापीठे द्रुवागः स्वयं, गीर्वाणाधिपतिर्न कस्य कुरुते सक्रोधबोधं मनः? ॥४॥  
किंच-सर्वत्रोक्तिश्च युक्तिश्च, वस्तुतत्त्वानपेक्षिणी । प्राणाः प्रभुत्वं संपत्तिः, प्रथने खलु निश्चिताः ॥५॥ अहवा-खज्जइ जं वा तं वा जंपि-  
ज्जइ जं मणस्स पडिहाइ । किज्जइ जं वा तं वा पडुत्तणं तेण रमणीयं ॥६॥ ता तं लहु भेसेउं इहागयं मं निएइ इय मणिउं । एइ

सिद्धस्तवः

॥३३३॥



धीदे०  
पैत्य० श्री-  
भर्म० संगा-  
चारविधौ  
॥३३४॥

निणसंनिगासं तुरियं सो भेषणट्टाए ॥७॥ आमलकीकीलाए कीलइ कुमरेहिं सह पहवि तया । स कुणइ कसिणभुयंगं फडाकरालं  
मिहरिमिहरे ॥८॥ कुमरेसु मीयतत्थेसु अहपहू पहसिय गहिय तं सत्पं । रज्जुं व खिविय खिपं आरुढइ रविच्च पुग्गतरे ॥९॥  
जो चडइ पदममिह सो वाहइ सज्जेवि इय पणाओ य । जा वाहइ ते कुमरे ता कुणइ सुरो कुमररुवं ॥१०॥ तो पिट्ठिगेण पहुणा  
करालवेयालकालरुवधरो । वडुंतो स सुरो हणिय मुट्ठिणा वामणो विहिओ ॥११॥ इय सक्कसंसियं सो पहुसत्तं ददट्टु पयडियस-  
रुवो । तमिहागि महावीरोत्ति कित्तिउं नमिय सग्गमिओ ॥ १२ ॥

अथ परोपकारात्मभावशुद्धये च स्वामिन एव नमस्कारफलप्रदर्शनायाह—‘इकोऽपी’त्यादि, एकोपि, आपतां बहवः, नमस्कारो,  
द्रव्यभासत्कोचमयत्वात्, क्रियमाणः सन्निति शेषः, कस्मै?—‘जिनवरपृथभाय’ जिनाः—श्रुतावधिजिनादयस्तेषां वराः केवलिनस्तेषां  
पृथमः—तीर्थंकरनामकर्मोदयादुत्तमस्तस्मै, म च ऋषभादिरपि भवतीत्याह—वर्द्धमानाय—अपश्चिमतीर्थंकराय, किं?—संसारणं संसारः—  
तिर्थग्नरनारकामरभवानुभवः स एव भवस्थितिकार्यस्थितिभ्यामनेकधाऽवस्थानेनालब्धपारत्वात् सागर इव संसारसागरस्त-  
स्मात् तारयति—पारं नयति, कीं—नरं वा नारीं वा, नरग्रहणं पुरुषोत्तमधर्मप्रतिपादनार्थं, नारीग्रहणं तासामपि तद्भव एव मुक्ति-  
गमनसापनार्थं, अयमत्र भावः—मति सम्यग्दर्शने परया भावनया क्रियमाण एकोऽपि नमस्कारः तथाभूतस्य भावचरणरूपशु-  
भाप्यवगायस्य हेतुर्भवति यादृशात् श्रेणिसवाप्य निस्तरति भवोदधिं, अतः कार्ये कारणोपचारात् एवमुच्यते । एष वीरस्तुति-  
नामा नवमोऽधिकारः । अथ ‘एएवि तिन्नि सिलोगा मन्नंति य सेसया जहिच्छिण्ण’ इत्याचइयकचूर्णिवचनादन्यदपि पठ्यते,  
यथा ‘उज्जितसेलसिहरे’ इत्यादि, कंठ्या, नवरं निसीदियत्ति मोक्षः, तदुक्तमाचारांगचूर्णौ—‘निसीदियत्ति निषाणं, जहा उज्जित-

महावीर-  
नामकृतिः

॥३३४॥

सेलसिहरे', अथात्र पृद्धसंप्रदायागतं किमप्युच्यते—

आसी गयपुरनयरे अणेगकोडीमरो धणो सिद्धी । जिणसमये लद्धट्टो गहियट्टो पुच्छियट्टो य ॥ १ ॥ सो ऋयावि निसाए जागरमाणो इमं विचितेइ । पुव्वकपसुकयवसओ पत्तं मे मणुयजम्ममिणं ॥ २ ॥ तत्थवि आरियखित्तं जाईकुलरूवविहवसंभारो । रोरेण निहाणंपिव लद्धो सिरिवीरजिणधम्मो ॥३॥ किंतु घरघरिणिपुरुपउरनिवइसयणाइकज्जवग्गेण । न मए सइंपि नमिओ रिस- हजिणो विमलगिरिसिहरे ॥४॥ तह गिरिनारगिरिवरे जायवकुलविमलनहयलमयंको । सिरिनेमिजिणवरिंदो वंदिओ पूइओ नेय ॥५॥ इय चित्तिय विन्नविउं निउइं कारेवि घोसणं नयरे । बहुगामागरनगराइएहिं मेलेवि बहू संघे ॥६॥ सिरिवीरनाहपडिमालं- कियदेवालयं अणुवयंते । पुरओ पयट्टमागहमंडलगिअंतकित्तिभरो ॥७॥ महया विच्छट्टेणं नारीगणगिअमाणमंगल्लो । संघजुओ धण- सिद्धी विणिग्गओ हत्थिणपुरीओ ॥८॥ ठाणे२ महया इड्डीए चेइयाइं पूयंतो । गामागरनगराइसु मुणिकमकमलं पणिवयंतो ॥९०॥ साहम्मिअवच्छल्लं कुणमाणो भत्तिनिअभरो धणियं । दाणं दिंतो दुत्थिजणाण करुणाइ अनियाणं ॥ १ ॥ सहजउदारगुणेणं मणोरहे मग्गणाण पूरंतो । सव्वस्मवि बहुमाणं जणयंतो उचियविनीए ॥ १२ ॥ दंसणविमुद्धिजणगं कुणमाणो पवयणुअइं परमं । पत्तो सुहंसुहेणं कमसो सित्तुअसेलंमि ॥१३॥ तत्थ जुगाइजिणंदं वंदिय पूइय महाविभूईए । अट्टाहियं व काउं पत्तो उअितसेलंमि ॥१४॥ अह तत्थ सुत्तु वाहणमाई धित्तूण सव्वसामग्गि । आरुहिउं उअित्ते पत्तो सिरिनेमिजिणभवनं ॥१४॥ जयजयरवं भणंतो तम्मज्जे पविसिओ सपरिवारो । अइउकंठियहियओ पसारियच्छो नियइ नेमि ॥१५॥ तो तंपि पयाहिणिउं भत्तिभरुल्लसियवहलरोमंचो । पणमित्तु सुरहिसलिलेण ष्हविय भत्तीइनेमिजिणं ॥१६॥ गोसीसचंइणेणं रारसेणं मुरहिणा विलिपित्ता । मणिकणयभूसणेहिं भूसित्ता

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३३५॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
भर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३३६॥

भुवणभूमणयं ॥१७॥ सवत्थविय पसत्थं सकारित्ता पसत्थवत्थेहिं । पूयइ तिहुयणपुञ्जं दसद्ववत्थेहिं कुसुमेहिं ॥ १८ ॥ सयलसु-  
मंगलनिलयस्म अग्गओ नेमिजिणवरिंदस्स । सियसालितंदुलेहिं आलिहइ मंगले अट्ट ॥१९॥ कुसुमेहिं पंचवत्थेहिं पूयए अट्टमंगले  
तत्तो । मरसेण चंदणेणं दलेइ पंचंगुलीतलयं ॥२०॥ सिवसुहफलयं पवरप्फलेहिं नालेरकेलमाईहिं । सीलसुगंधं च पहुं सुगंधिगंधेहिं  
पूइत्ता ॥२१॥ पहुणो तिहुयणदीवस्म देइ मणिरयणदीवयं पुरओ । कणयकडुच्छुयहत्यो धवं उक्खिवइ भत्तीए ॥२२॥ चंदोदयं  
च दाउं महाधयं छत्तचमरचिधधयं । आरत्तियाइं काउं नियए जा नेमिसुहकमलं ॥२३॥ ताव मरहट्टमंडणमलयपुरा बहुसुवन्न-  
कोडिपह । मियपक्खुपओसी वोडियाण भत्तो वरुणसिद्धी ॥ २४ ॥ भडचडगरेण महया नियसंधेण य जुओ तहिं पत्तो । तं  
दट्टु नेमिपूयं अमरिसविवसो इय भणेइ ॥२५॥ हा सियवडभत्तेहिं सड्ढेहिं इमेहिं तत्तविमुहेहिं । निग्गंथवरिद्धोऽविहु मग्गंथो  
कड कओ सामी ? ॥ २६ ॥ तो खिप्पं लंखावइ सो वत्थाभरणकुसुमाइ तया । गयपयपयस्सा सहसा पक्खालावेइ विंवंपि ॥२७॥  
वरुणस्म धणस्म तओ महंतआओहणं तहिं जायं । असरिसअमरिमविवसा तुरियं सेलाओ ओयरिउं ॥२८॥ नियनियउब्भडसुड-  
वायमुहडतुखारवारपरियरिया । ते विक्रमनिवहिट्टियगिरिनयराभिहपुरे पत्ता ॥ २९ ॥ तेण दुहेणं दुक्खियमणंमि निदं अपा-  
यमाणस्म । धणसिद्धिस्म निसाए सासणदेवी भणइ एवं ॥३०॥ वरसिद्धि सिद्ध धम्मिठ जिठ सुपइठसमयलद्धो । भवतठ मा मणा-  
गवि निययमणे कुणसु दुक्खामिणं ॥ ३१ ॥ जं चिइवंदणमज्जे गाहं उज्जितसेल इच्चाई । पक्खिविय निवसहाए जयं धुवं तुज्झ  
दाहामि ॥३२॥ मयलनियसंधमहियो सुदिट्टिदेवाण काउ उस्सग्गं । पत्तो धणो मृतुठो निरस्स पासंमि वरुणोवि ॥३३॥ साहिय-  
नियनुत्तंता भणिया रत्ता दुयेऽपि जह भदे । दुन्निवि जिणसमयविऊ दुवेवि जिणधम्ममद्वान्त् ॥३४॥ दुन्निवि जिणवरपवयणपभा-

उज्जयंते ध-  
नश्रेष्ठीकथा

॥३३६॥

श्रीदे०  
नीत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३३८॥

तथा 'नत्तारि अद्दसे'त्यादि, 'परमदृष्टिनिष्ठिअदृष्टि परमार्थेन, न तु कल्पनामात्रेण, निष्ठिता अर्था येषां ते तथा, शेषं  
न व्यक्तं, अत्रापि संप्रदायः—

चंपायां प्रस्थितं वीरं, नत्वाऽऽपृच्छय सगौतमौ । साधू शालमहाशालौ, पृष्ठचंपां समैयतुः ॥१॥ स्वस्तीयो राट् तयोस्तत्र,  
पितृभ्यां सह गतलिः । यशोमतीपीठरुकाभिधाभ्यां व्रतमाददे ॥ १ ॥ आगच्छतां ततः शालादीनां प्रभुपदान्तिके । केवलज्ञा-  
नमुत्पेदे, पंचानामपि वर्त्मनि ॥ ४ ॥ गौतमोऽपि जिनप्रान्ते, ययौ यावद् वंदिपुः । प्रचेलुस्तेऽथ शालाद्यास्तावत् केवलिपर्पदि  
॥४॥ ततस्नान् गौतमोऽवादीन्, वन्दध्वं किं न भो विभुम् ? । स्वाम्भूचे केवलज्ञानभाजो माऽऽशातयैतकान् ॥५॥ श्रुत्वेति गौत-  
मेनैते, धमपांचक्रिरे ततः । शुश्रुवे प्राग् जिनाख्यातमर्थमेवं जनो ब्रुवन् ॥६॥ यो भूमिगोचरो देवान्, वंदेताष्टपदाचले । केवलज्ञा-  
नमामाय, सः सिध्येत् तत्र जन्मनि ॥७॥ चक्रे मनोरथं यावद्, गौतमस्तावदर्हता । आदिष्टोऽष्टापदे देवान्भंतुं लब्धिनिधे ! व्रज  
॥८॥ सोऽचालीदय तन्नत्यै, श्रुत्वा तत् जनवार्त्तया । मुक्तीच्छवोऽचलंस्तत्र, कौडिन्याद्यास्तपस्विनः ॥९॥ तत्र पञ्चशतीयुक्तः,  
कौडिन्याख्यश्चतुर्थकृत् । आर्द्रमूलफलाहारः, प्रथमां मेखलां ययौ । १०॥ दिन्नः कलापतिः पष्ठभोजी पंचशतीयुतः । शुद्धमूलफ-  
लाहारी, द्वितीयामारुरोह सः ॥११॥ सेवालीत्यष्टमासेवी, शुष्कसेवालभोजकः । सोऽपि तावत्परीवारोऽध्यारुरोह वृतीयकाम् ॥१२॥  
तदूर्ध्वमक्षमा गंतुं, ते निरीक्ष्याथ गौतमम् । दध्युः स्थूलधिपः स्थूलः, कथमेपोऽधिरोक्ष्यति ? ॥ १३ ॥ सूर्यस्यांशन् समाश्रित्य,  
तेषामुत्पश्यतामपि । स गरुत्मानिवोद्गीय, ययौ मंक्षु गिरेः शिरः ॥१४॥ गौतमस्येति शक्त्या ते, विस्मिता इत्यचितयन् । अस्य  
शिष्या भविष्यामः, प्रत्यापाते महात्मनः ॥१५॥ गौतमोऽथ चतुर्द्वारं, चैत्ये दक्षिणदिग्स्थितान् । शंभवादीन् जिनांस्तत्र, चतुरश्रतुरोऽन-

अष्टापद-  
स्तुतिः  
श्रीगौतमः

॥३३८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३३९॥

मत् ॥१६॥ प्रत्यगाशास्थितानष्टौ, सुपार्थादीन् जिनांस्ततः। ततोऽप्युत्तरदिक्संस्थान्, धर्मादींश्च दशार्हतः ॥१७॥ ततः पूर्वदिशासीनं  
नाभेयमजितं तथा। मानवर्णायुतामेवं, चतुर्विंशतिमर्हतः ॥१८॥ ववंदे विधिवद् वृंदारकवृंदाभिवंदितान्। इंद्रभूतिर्दिनं सर्वं, ततः सायं  
विनिर्ययौ ॥१९॥ सोऽथ पृथ्वीशिलापट्टे, निपसाद विशारदः। कुबेरोऽथ तदागत्य, तं वंदित्वा निपेदिवान् ॥२०॥ तस्याग्रे गौत-  
मोऽत्युग्राननगास्त्रुणान् जगौ। शंकाहृत् पुंडरीकाख्यं, तथाऽध्ययनमुत्तमम् ॥ २१ ॥ ततः सामानिको दधे, सहस्रार्द्धमितं सुरः।  
सम्यक्त्वं च क्रमात् सोऽभूद्, वज्रोऽंत्यो दशपूर्विणाम् ॥२२॥ द्वितीयेऽह्नि जिनान्नत्वाऽवतरन्नथ गौतमः। विज्ञप्तस्तापसैर्भक्त्या, देहि  
दीक्षां मुनीश्वर! ॥२३॥ दीक्षितास्तेन ते तस्मादुत्तेरुः पर्वतादथ। केवलज्ञानमाप्नुश्च, तद्दिने शुभभावतः ॥२४॥ गौतमस्तु जिने वीरे,  
निर्वृत्ते प्राप केवलम्। तदेवं गौतमेनेत्थं, चतुराद्या जिना नताः ॥२५॥ एषोऽष्टापदादितीर्थवंदनाख्य एकादशोऽधिकारः।

एवमेतत् पठित्वोपचितपुण्यसंभार उचितेष्वौचित्यप्रणिधानपुरस्सरा प्रवृत्तिरितिज्ञापनार्थमाह—'वेयावचगराण'मित्यादि,  
वेयावृत्त्यकराणां—प्रवचनार्थं व्यापृतभावानां गोमुखचक्रेश्वरीप्रभृतियक्षांवादीनां शान्तिकराणां क्षुद्रोपद्रवेषु सम्यग्दृष्टीनां सामान्येना-  
न्येषामपि समाधिकराणां स्वपरयोर्मानसादिदुःखाभावकरणार्थं, स्वभावोऽयमेवैषामिति वृद्धाः, तेषां संबन्धिनं सप्तम्यर्थे एतद्विषयं  
एतान् वाऽऽश्रित्य करोमि कायोत्सर्गं, अत्र च वंदनादिप्रत्ययमित्यादि न पठ्यते, तेषामविरत्त्वात्, सामान्यप्रवृत्तेरित्थमेव त-  
द्भाववृद्धेरुपकारदर्शनात्, वचनप्रामाण्यात्, अन्यत्रोच्छ्रितेनेत्यादि तु पूर्ववत्, स्तुतिश्च नवरं वेयावृत्त्यकराणां, अथ वृहद्भाष्यं—  
पारियकाउस्तगो परमिद्रीणं च कयनमुकारो। वेयावचगराणं देइ थुइं जक्खपमुहाणं ॥ १ ॥ (७८८) संविग्गभावियभणो  
(अलमेत्थ पसंगेणं) वंदिय सन्निहियचेइयाणेवं। अवसेसचेइयाणं वंदणपणिहाणकरणत्थं ॥२॥ (८३४) पुबविहाणेण पुणो भणित्तं

अष्टापद-  
स्तुतिः  
श्रीगौतमः

॥३३९॥

सकृत्ययं तत्र कुण्ड । जिणचेइयपणिहाणं संविग्गो मुत्तसुत्तीए ॥ ३ ॥ (८३५) 'जावंति चेइयाइं' इत्यादि, यावन्ति-यत्प्र-  
 माणानि चैत्यानि-आधाराधेयरूपत्वेन जिनानां गृहाणि विंवाणि च, क ?-ऊर्ध्वाधश्च तिर्यग्लोके च, तत्र जिनगृहाण्येवं-"सग-  
 कोडिलरूपनिसयरि अहो य तिरिए दुतीस पणसयरा । चुलसीलकूखा सगनवइसहम तेवीसुवरिलोए ॥ १ ॥" प्रतिमास्तु-तेरस  
 कोडिमया कोडिगुणनरई मट्टि लकूरा अहलोए । तिरियं तिलक्ख तेणवइ सहस पडिमा दुसयचत्ता ॥ २ ॥ वावन्नं कोडिमयं चउ-  
 णरई लकूख सहम चउयाला । सत्तसया सट्टिजुया सासयपडिमा उवरिलोए ॥ ३ ॥ किमित्याह-सर्वाणि तानि वंदे, यथा-सवेवि  
 अट्ट कोडी लकूखा मगन्न दुसय अडनउया । तिहुयणचेइय वंदे असंखुदहिदीउजोइवणे ॥ ४ ॥ पनरस कोडिमयाइं कोडिवायाल  
 लकूख अडवन्ना । अटतीस सहस वंदे सासयजिणपडिम तियलोए ॥ ५ ॥ कथं ?-इह-स्वस्थाने सन्-तिष्ठन् तत्र-ऊर्ध्वलोकादिपु  
 सन्ति-प्रियमानानि 'सकृत्यएण इमिणा एयाइं चेइयाइं वंदामि । वियसकृत्ययभणणे एयं खु पओयणं भणियं ॥ ६ ॥ (८३७)  
 पुणरुत्तंपि न दुट्ठं दट्टवमिणं जिणागमन्नूहिं । जिणगुणथुइरूवत्ता कम्मक्खयकारणत्तेणं ॥ २ ॥ (७९०) जह विसविघायणत्थं पुणो  
 पुणो मंतमंतणं मुहयं । तह मिच्छत्तपिसहरं विण्णेयं वंदणाईवि ॥ ३ ॥ (७९३) ततो य भावसारं दाऊणं थोभवंदणं विहिणा । साहुगयं  
 पणिहाणं करेइ एयाइ गाहाए ॥ ४ ॥ (८३८) 'जावंति केवि साहू' इत्यादि, यावन्तः केचित् उत्कृष्टतो जघन्यतश्च यथा-नवको-  
 डिसहम साहू उफोसं केवली उ नवकोडी । वंदे दुकोडी केवली दुकोडिसहमा मुणि जहण्णं ॥ १ ॥ साधवः, क ?, भरतैरवते महाविदेहे  
 च, पंचदशकर्मभूमिप्रित्यर्थः, किं ?-सर्वेषां तेषां प्रणतो-नम्रः त्रिविधेन कायवाङ्मनोभिः त्रिदंडविरतानां-मनोदंडादिरहितानां,  
 भावनाभूनामित्यर्थः, 'ततो अतिचचित्तो जिणिंदगुणपन्नणेण भुजोऽपि । सुकइनिबंधं सुद्धं थयं च थुत्तं च वज्जरइ ॥ १ ॥ (८४०)

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३४१॥

सकयभासाबद्धो गंभीरत्थो थउचि विक्रखाओ। पाइयभासाबद्धं थुत्तं विविहेहि छंदेहि ॥ २ ॥ (८४१) चिइवंदणकियकिचो  
पमोयरोमंचउविहसरीरो। इठफलपत्थणपरं इय पणिहाणं कुणइ तइयं ॥ ६ ॥ (८४५) 'जय धीयराये'त्यादि, जय वीतराग !  
जगद्गुरो इति भगवतः त्रिलोकनाथस्य बुद्धौ प्रणिधानार्थमामंत्रणं, भगवन् ! जायतां ममेत्यात्मनिर्देशः तव प्रभावतः—  
सामर्थ्येन भगवश्रिति पुनः संबोधनं भक्त्यतिशयरूपापनार्थं, किं तदित्याह—भवनिर्वेदः—संसारनिर्वेदः, नहि भवादननिर्विण्णो  
मोक्षाय यतते, अनिर्विण्णस्य च प्रतिबंधात् मोक्षाय यत्नोऽयत्न एव, निर्जीवक्रियाकल्पत्वात्, तथा 'मार्गानुसारिता' अस-  
द्ग्रहविजयेन तत्रानुसारिता, तथा 'इष्टफलसिद्धिः' अभिमतार्थनिष्पत्तिः ऐहिकी ययोपगृहीतस्य चित्तस्वास्थ्यं भवति, तस्मा-  
द्देवपूजाद्युपादेयप्रश्रुतिः, तथा 'लोकविरुद्धत्यागः' सर्वजननिंदादिवर्जनं, यदाह—“सर्वस्स चैव निंदा विसेसओ तहय गुणस-  
मिद्धाणं । उजुधम्मकरणहसणं रीढा जणपूयणिजाणं ॥१॥ बहुजणविरुद्धसंगो देसादाचारलंघणं चैव । उवणभोओ अ तहा दाणाइ  
पयडमझे उ ॥२॥ साहुवसणंमि तोसो सइ सामत्थंमि अपडियारो अ । एमाइयाइं इत्थं लोगविरुद्धाइं णेआइं ॥३॥ महदपाय-  
स्थानमेतत्, गुरुजनस्य-मातापित्रादेः पूजा-उचितप्रतिपत्तिः 'परार्थकरणं च' परहितार्थकरणं, जीवलोकसारं पौरुषचिह्नमेतत्,  
सत्येतावति लौकिके सौन्दर्ये लोकोत्तरधर्माधिकारी भवति, 'सुहृगुरुजोगो' विशिष्टचारिश्रयुक्ताचार्यसंबंधः, अन्यथा अपान्तरालस-  
दोषसिद्धिलाभतुल्योऽयमिति अयोग एव, तथा तद्वचनसेवना-सद्गुरुवचनसेवा, न जातुचिदयमहितमुपदिशति आमवं-आसं-  
सारं अखंडा-पूर्णा, भवतु ममेति शेषः, एतावत्कल्याणावाप्तौ द्रागेवापवर्गः, फलति चैतद् अचिन्त्यचिन्तामणे भगवतः प्रणिधानेनेति,  
इदं च प्रणिधानं न निदानरूपं, प्रायेण निस्तंगामिलापरूपत्वात्, एतच्चाप्रमत्तसंयतादर्चाक् कर्तव्यं, अप्रमत्तादीनां मोक्षेऽप्यनमिलापात्,

प्रणिधान-  
सूत्रं

॥३४१॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
-३-संया-

अत्र भाष्यं-पणिहाणाणि इमाणि य इह कायवाणि निच्छएणेव । पणिहाणंता जम्हा संपुन्ना वंदणा भणिया ॥१॥ (८५०) उवाएस-  
विसेयाओ इत्तो अहिगंपि चित्तउत्तीहिं । पयडियभावाइसयं कीरंतं गुणकरं चैव ॥२॥ (८५१) उक्तं च-मिच्छादंसणमहणं सम्महं-  
सणविसुद्धिहेउं च । चिइयंदणाइ विहिणा पन्नत्तं वीयरगेहिं ॥३॥ (७८४) भावुद्धासेण विणा अहिगपविची न हुज्ज धम्मंमि । सो  
सल्लु सुप्पणिहाणं भण्णइ विन्नायसमएहिं ॥४॥ (८१३) वंदणपणिहाणाओ सुविसुद्धाओ पवडुमाणाओ । सुवइ जिणिंदसमए देवत्तं  
ददुरो पत्तो ॥५॥ (८१५) कयमित्थ पसंगेणं एवं पणिहाणसंगया एसा । संपुण्णा उक्कोसा निदिट्ठा वंदणा लट्ठा ॥६॥ (८७४)  
ददुगंरुदेरकथा त्वियं—

रायगिहे गुणसिलयंमि चेइए अन्नया समोमरिओ । वीरजिणो जा धम्मं कइइ सुरासुरनरसहाए ॥१॥ ता चउसहस्ससामाणिएहि  
चउगुणाइ आयरक्खेहिं । अग्गमहिस्सीहि चउहिं नियनियपरिवारजुत्तेहिं ॥२॥ अन्नेहिं बहुदेवीदेवेहि जुओ महाविभूर्इए । पडुपडह-  
नियचाइयरवेण पूरंतओ गयणं ॥ ३ ॥ तत्थेगो वरअमरो पत्तो तिपयाहिऊण वीरजिणं । वन्दित्तु नमंसित्ता धम्मकहंते भणइ एवं  
॥ ४ ॥ अविगलनिम्मलकेवल्ललेण सयलंपि भुणह पडु ! तुज्जे । गोयमपमुहमुणीणं नट्टविहिं पुण पयंसेमि ॥ ५ ॥ दच्चत्थ-  
यंतिकाउं मोणं मुणिपुंगवो विहेसीअ । अप्पडिसिद्धं अणुमयमिय विहिणा नाडयं काउं ॥ ६ ॥ पुणवि नमंतो भणिओ सो पडुणा  
अमरपरर ! जीयमिणं । किच्चमिणं तो दिट्ठो एसो पत्तो मठाणंमि ॥७॥ अह नमिय जिणं पुच्छइ गोयमसामी सुरेण पडु ! इमिणा ।  
किं कासि पुरा सुरूपं जं लट्ठा एरिसी रिद्धी ॥८॥ जिणवंदणपणिहाणा इमस्स रिद्धी इमत्ति जिणभणियं । पुणरवि गोयमपुट्ठो  
तणरिजं कइइ इअ मामी ॥९॥ इह रायगिहे नपरे मह पासे गदिय सुद्धगिहिधम्मो । नंदमणिआरसिट्ठी पोसहसालाइ कइयावि

दुर्दुरांक-  
कथा



थीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३४३॥

॥१०॥ कयअट्टमभतो गहियपोसहो अइतिसाय परिभूओ । धन्ने जलयरजीवे मन्ततो गमिय कहवि निसा ॥११॥ गोसे सेणिय-  
निवइं विन्नविउं विचिऊण बहु दब्बं । चउदिसि चउवणसंडेहिं मंडिअं करइ.सो चाविं ॥१२॥ सोलसरोगभिभूओ मुक्को वेज्जेहिं  
अट्टझाणेण । मरिउं सो दहुरओ उप्पन्नो निययवावीए ॥१३॥ धन्नो स नंदसिद्धी जेण इमा कारिया पवरवावी । बहुजणसंतावहरा  
वणसंडजुया महुरसलिला ॥१४॥ इअ नरनारिमुहाओ निसमिय सो निययपुबभवनामं । संजायजाइसरणो अणुतावा इय विचिंतेइ  
॥१५॥ अहह अहोऽहमभग्गो हा हारियनरभवो अकयपुन्नो । भट्टो भट्टपइन्नो निग्गंथाओ पवयणाओ ॥१६॥ तो सयमेव पवजे  
गिहिधम्ममभिग्गहं च गिण्हेइ । कप्पइ मे जा जीवं छट्ठंछट्टेण पारेउं ॥१७॥ पारणदिणेवि फासुअउव्वट्टणियाहिं धोणनीरेण ।  
रुप्पइ मह वित्ती खलु सच्चित्तआहारनियमो मे ॥१८॥ अह अम्हे रायगिहे समोसदा सुणिय अम्ह आगमणं । लोअमुहा सो तुट्टो  
चलिओ मे वंदणनिमित्तं ॥१९॥ इतो वंदणहेउं अम्हाणं सेणिओऽवि नरनाहो । चलिओ भडचडगरचाउरंगसेणाइ परियरिओ ॥२०॥  
तस्सेगेण हएणं अकंतो सो उ वामचलणेणं । निग्गयअंतो तुरियं एगंतमवक्कमेऊणं ॥२१॥ अम्हे वंदिय सकत्थएण उच्चरिअ पुणवि  
गिहिधम्मं । जिणवंदणपरिणामा मरिउं अणसणविहाणेणं ॥ २२ ॥ सोहम्मदेवलोए सुविमाणे दहुरावडंसंमि । नामेण दहुरंको  
चउपछठिई सुरो जाओ ॥२३॥ असुअं अदिट्टपुच्चं सुरलच्छि पिच्छिऊण तारिच्छं । अह चिंतिउं पयट्टो अइविम्हियमाणसो एसो  
॥२४॥ किं मन्ने हुअ मए अइउग्गतं तवं समायरिअं ? किं मयलंछणसच्छहमणुचरिअमणुत्तरं सीलं ? ॥२५॥ किं वा दाणं दिन्नं ?  
साहूसु तवनिअमसंयमुज्जुएसु । धणियं सुभावणाए किंच मए भाविओ अप्पा ? ॥२६॥ इय सुवहु वियप्पिय संममोहिणा मुणिय  
भणइ हुं लद्धा । वीरजिणवंदणाए पणिहाणेणं इमा रिद्धी ॥ २७ ॥ ता वीरजिणं तिहुअणसामि वंदामि तह नमंतामि । सो मम

दहुरांक-  
कथा

॥३४३॥

अत्र भाष्यं-पणिहाणाणि इमाणि य इह कायघाणि निच्छएणेव । पणिहाणंता जम्हा संपुन्ना वंदणा भणिया ॥१॥ (८५०) उवएस-  
विसेसाओ इत्तो अहिगपि चित्तउचीहि । पयडियभावाइसयं कीरत गुणकर चेव ॥२॥ (८५१) उक्तं च-मिच्छादंसणमहणं सम्मदं-  
सणविसुद्धिहेउं च । चिइवंदणाइ विहिणा पन्नत्तं वीयरामेहिं ॥३॥ (७८४) भावुल्लासेण विणा अहिगपवित्ती न हुज्ज धम्मंमि । सो  
सल्लु सुप्पणिहाणं भण्णइ विन्नापसमएहिं ॥४॥ (८१३) वंदणपणिहाणाओ सुविसुद्धाओ पवड्डुमाणाओ । सुवइ जिणिंदसमए देवत्तं  
ददुरो पत्तो ॥५॥ (८१५) कयमित्थ पसगेणं एवं पणिहाणसगया एमा । संपुण्णा उक्कोसा निदिट्ठा वंदणा लट्ठा ॥६॥ (८७४)  
दर्दुराकदेवकथा त्वियं—

रायगिहे गुणसिलयंमि चेइए अन्नया समोमरिओ । वीरजिणो जा धम्मं कहइ सुरासुरनरसहाए ॥१॥ ता चउसहस्ससामाणिएहि  
चउगुणाइ आयरक्खेहिं । अग्गमहिंसीहि चउहिं नियनियपरिआरजुत्तेहिं ॥२॥ अन्नेहिं बहुदेवीदेवेहि जुओ महाविभूर्इए । पडुपडइ-  
नियवाईयरवेण पूरतओ गयण ॥ ३ ॥ तत्थेगो वरअमरो पत्तो तिपयाहिऊण वीरजिणं । वन्दित्तु नमसित्ता धम्मकहंते भणइ एवं  
॥ ४ ॥ अविगलनिम्मलकेवलवलेण सयलंपि म्णह पडु ! तुज्जे । गोयमपमुहमुणीणं नट्टविहिं पुण पयसेमि ॥ ५ ॥ दव्वत्थ-  
यंतिकाउं मोण मुणिपुंगवो विहेसीअ । अप्पडिसिद्ध अणुमयमिय विहिणा नाडयं काउं ॥ ६ ॥ पुणवि नमंतो भणिओ सो पडुणा  
अमरपर ! जीयमिणं । किचमिणं तो हिट्ठो एसो पत्तो मठाणंमि ॥७॥ अह नमिय जिणं पुच्छइ गोयमसामी सुरेण पडु ! इमिणा ।  
किं कासि पुरा सुकय जं लद्धा एरिसी रिद्धी ॥८॥ जिणवंदणपणिहाणा इमस्स रिद्धी इमत्ति जिणभणियं । पुणरवि गोयमपुट्ठो  
तच्चरिअ कइइ इअ सामी ॥९॥ इह रायगिहे नयरे मह पासे गहिय सुद्धगिहिधम्मो । नंदमणिआरसिद्धी पोसहसालाइ कइयावि

धीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३४३॥

॥१०॥ कयअट्टमभत्तो गहियपोसहो अइतिसाय परिभूओ । धन्ने जलयरजीवे मन्नंतो गमिय कहवि निसा ॥११॥ गोसे सेणिय-  
निवइं विन्नविउं विच्छिऊण बहु दव्वं । चउदिसि चउवणसंडेहिं मंडिअं करइ.सो वाविं ॥१२॥ सोलसरोगभिभूओ मुक्को वेज्जेहिं  
अट्टज्ञाणेण । मरिउं सो दहुरओ उप्पन्नो निययवावीए ॥१३॥ धन्नो स नंदसिद्धी जेण इमा कारिया पवरवावी । बहुजणसंतावहरा  
वणसंडजुया महुरसलिला ॥१४॥ इअ नरनारिमुहाओ निसमिय सो निययपुव्वभवनामं । संजायजाइसरणो अणुतावा इय विधितेइ  
॥१५॥ अहह अहोऽहमभग्गो हा हारियनरभवो अकयपुन्नो । भट्टो भट्टपइन्नो निग्गंथाओ पवयणाओ ॥ १६ ॥ तो सयमेव पवजे  
गिहिधम्ममभिग्गहं च गिण्हेइ । कप्पइ मे जा जीवं छट्ठंछट्ठेण पारेउं ॥ १७ ॥ पारणदिणेवि फासुअउव्वट्टणियाहिं धोणनीरेण ।  
कप्पइ मह वित्ती खलु सच्चित्तआहारनियमो मे ॥१८॥ अह अम्हे रायगिहे समोसदा सुणिय अम्ह आगमणं । लोअमुहा सो तुट्टो  
चलिओ मे वंदणनिमित्तं ॥१९॥ इतो वंदणहेउं अम्हाणं सेणिओऽवि नरनाहो । चलिओ भडचडगरचाउरंगसेणाइ परियरिओ ॥२०॥  
तस्सेगेण हएणं अकंतो सो उ वामचलणेणं । निग्गयअंतो तुरियं एगंतमवक्कमेऊणं ॥२१॥ अम्हे वंदिय सक्कथएण उच्चरिअ पुणवि  
गिहिधम्मं । जिणवंदणपरिणामा मरिउं अणसणविहाणेणं ॥ २२ ॥ सोहम्मदेवलोए सुविमाणे दहुरावडंसंमि । नामेण दहुरंको  
चउपल्लठिई सुरो जाओ ॥२३॥ असुअं अदिट्टपुव्वं सुरलच्छि पिच्छिऊण तारिच्छं । अह चिंतिउं पयट्टो अइविम्हियमाणसो एसो  
॥२४॥ किं मन्ने हुज्ज मए अइउग्गतं तवं समापरिअं ? । किं मयलंछणसच्छहमणुचरिअमणुत्तरं सीलं ? ॥२५॥ किं वा दाणं दिन्नं ?  
साहसु तवनिअमसंयमुज्जुएसु । धणियं सुभावणाए किंच मए भाविओ अप्पा ? ॥२६॥ इय सुवहु वियप्पिय संममोहिणा सुणिय  
मणइ हुं लद्धा । वीरजिणवंदणाए पणिहाणेणं इमा रिद्धी ॥ २७ ॥ ता वीरजिणं तिहुअणमामि वंदामि तह नमंतामि । सो मम

दुर्दुरांक-  
कथा

॥३४३॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
षर्म०संवा-  
चारविषी  
॥३४२॥

अत्र भाष्यं-पणिहाणाणि इमाणि य इह कायवाणि निच्छण्णेव । पणिहाणंता जम्हा संपुत्रा वंदणा भणिया ॥१॥ (८५०) उवएस-  
विसेसाओ इत्तो अहिगपि चित्तउत्तीहि । पयडियभावाइसयं कीरतं गुणरुर चैव ॥२॥ (८५१) उक्तं च-मिच्छादंसणमहणं सम्महं-  
सणविसुद्धिहेउं च । चिइवंदणाइ विहिणा पन्नतं वीयरगेहिं ॥३॥ (७८४) भावुछासेण विणा अहिगपवित्ती न हुज्ज धम्मंमि । सो  
सलु सुप्पणिहाणं भण्णइ विन्नायसमएहिं ॥४॥ (८१३) वंदणपणिहाणाओ सुविसुद्धाओ पवडुमाणाओ । सुवइ जिणिंदसमए देवत्तं  
ददुरो पत्तो ॥५॥ (८१५) कयमित्थ पसंगेणं एवं पणिहाणसंगया एमा । संपुण्णा उक्कोसा निदिट्ठा वंदणा लट्ठा ॥६॥ (८७४)  
दर्दुगं देवकथा त्वियं—

रायगिहे गुणसिलयंमि चेइए अन्नया समोमरिओ । वीरजिणो जा धम्मं कहइ सुरासुरनरसहाए ॥१॥ ता चउसहस्ससामाणिएहि  
चउगुणाइ आयरक्खेहिं । अग्गमहिस्सीहि चउहिं नियनियपरिआरज्जुत्तेहिं ॥२॥ अन्नेहिं बहुदेवीदेवेहि जुओ महाविभूर्इए । पडुपडह-  
नियवाईयरवेण पूरतओ गयणं ॥ ३ ॥ तत्थेगो वरअमरो पत्तो तिपयाहिऊण वीरजिणं । वन्दित्तु नमंसित्ता धम्मकहंते भणइ एवं  
॥ ४ ॥ अविगलनिम्मलकेवलरलेण सयलंपि मुणह पह ! तुज्जे । गोयमपमुहमुणीणं नट्टविहिं पुण पयंसेमि ॥ ५ ॥ दव्वत्थ-  
यंतिकाउं मोणं मुणिपुंगवो विहेसीअ । अप्पडिसिद्धं अणुमयमिय विहिणा नाडयं काउं ॥ ६ ॥ पुणवि नमंतो भणिओ सो पडुणा  
अमरपर ! जीयमिणं । किच्चमिणं तो हिट्ठो एसो पत्तो मठाणंमि ॥७॥ अह नमिय जिणं पुच्छइ गोयमसामी सुरेण पडु ! इमिणा ।  
किं कामि पुरा मुकयं जं लट्ठा एरिसी रिद्धी ॥८॥ जिणवंदणपणिहाणा इमस्स रिद्धी इमत्ति जिणभणियं । पुणरवि गोयमपुट्ठो  
तच्चरिअं कइइ इअ मामी ॥९॥ इह रायगिहे नयरे मह पासे गहिय सुद्धगिहिधम्मो । नंदमणिआरसिट्ठी पोसहसालाइ कइयावि

दर्दुरांक-  
कथा

॥३४२॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संधा-  
चारविधौ  
॥३४३॥

॥१०॥ कयअट्टमभत्तो गहियपोसहो अइतिसाय परिभूओ । धन्ने जलयरजीवे मन्नंतो गमिय कइवि निसा ॥११॥ गोसे सेणिय-  
निवइं विन्नविउं विच्चिऊण बहु दब्बं । चउदिसि चउवणसडेहिं मंडिअं करइ सो वाविं ॥१२॥ सोलसरोगभिभूओ मुक्को वेज्जेहिं  
अट्टज्ञाणेण । भरिउं सो दहुरओ उप्पन्नो निययवावीए ॥१३॥ धन्नो स नंदसिद्धी जेण इमा कारिया पपरवावी । बहुजणसंताहरा  
वणसडजुया महुरसलिला ॥१४॥ इअ नरनारिमुहाओ निसमिय सो निययपुबभवनामं । संजायजाइसरणो अणुतावा इय विचितेइ  
॥१५॥ अहह अहोऽहमभग्गो हा हारियनरभवो अरुयपुन्नो । भट्टो भट्टपइन्नो निगंथाओ पयणाओ ॥१६॥ तो सयमेव पवजे  
गिहियम्ममभिग्गहं च गिण्हेइ । कप्पइ मे जा जीवं छट्ठंछट्टेण पारेउं ॥१७॥ पारणदिणेवि फासुअउव्वट्टणियाहि धोणनीरेण ।  
कप्पइ मह विची खलु सच्चिआहारनियमो मे ॥१८॥ अइ अम्हे रायगिहे समोसदा सुणिय अम्ह आगमणं । लोअमुहा सो तुट्टो  
चलिओ मे वंदणनिमित्तं ॥१९॥ इतो वंदणहेउं अम्हाणं सेणिओऽवि नरनाहो । चलिओ भडचडगरचाउरगसेणाइ परियरिओ ॥२०॥  
तस्सेणेण हएणं अकंतो सो उ वामचलणेणं । निग्गयअतो तुरियं एगंतमवक्कमेऊणं ॥२१॥ अम्हे वंदिय सकत्थएण उचरिअ पुणवि  
गिहियम्मं । जिणवंदणपरिणामा भरिउं अणसणविहाणेणं ॥ २२ ॥ सोहम्मदेवलोए सुविमाणे दहुरावडंसंमि । नामेण दहुरको  
चउपल्लिठिई सुरो जाओ ॥२३॥ असुअ अदिट्टपुव्वं सुरलच्छि पिच्छिऊण तारिच्छं । अह चित्तिउ पयट्टो अइविभिहयमाणसो एसो  
॥२४॥ कि मन्ने हुअ मए अइउग्गततर तवं समायरिअ ? । किं मयलछणसच्छहमणुचरिअमणुत्तर सीलं ? ॥२५॥ किं वा दाण दिन्न ?  
साहसु तरनिअमसयमुज्जुएसु । धणियं सुभावणाए किंच मए भाविओ अप्पा ? ॥२६॥ इय सुबहु वियप्पिय संममोहिणा सुणिय  
मणइ हुं लद्धा । वीरजिणवंदणाए पणिहाणेणं इमा रिद्धी ॥ २७ ॥ ता वीरजिणं तिहुअणमामिं वदामि तह नमंतामि । सो मम

दर्दुरांक-  
कथा

॥३४३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३४४॥

वंदणहेतुं सपरियरो इत्य लहु पत्तो ॥२८॥ भक्तीए मं वंदिय सो एसो कासि नट्टविहिमेवं । तं सोउं तुट्टमणो गोयमसामी नमइ  
वीरं ॥२९॥ अन्नोवि बहुअलोओ जाओ जिणवंदणाइपणिहाणो । सद्धुयस्सुज्जुयतमो पहवि अन्नत्थ विहरित्था ॥३०॥ सत्प्रणि-  
धानादेवं सुसंपदं दर्दुरस्य विनिशम्य । भो भवत सावधानाः प्रणिधानेऽखिलसुखनिधाने ॥ ३१ ॥ इति दर्दुरांकदेवकथा ॥

अथ प्रणिधानत्रिकवर्णसंख्याख्यापनाय गीतिगाथाप्रथमपादमाह—

पणिहाणि धावनसयं

पणिहाणेति जातावेकत्वं, ततश्च त्रिषु प्रणिधानेषु द्विपंचाशदधिकं शतं वर्णानां भवति, तत्र जावंतीत्यादिके जिनवंदनारूपे  
प्रणिधाने पंचत्रिंशत्, जावंत कैवि इत्यादिके द्वितीये मुनिवंदनालक्षणे त्रिंशत्, जयवीरायेत्यादिगाथाद्वयात्मके तृतीये प्रार्थना-  
स्वरूपे त्वेकोनाशीतिः, सर्वमीलिते द्विपंचाशशतमिति । एषा च चैत्यवंदना गुरुलघुवर्णपरिज्ञानमंतरेण क्रियमाणा न विशुद्धिकारणं  
स्यात्, आह च—गुरुलघुभेदज्ञानं न विद्यते यस्य सर्वथा चित्ते । स विचक्षणोऽपि रक्षां न वृत्तभेदस्य कर्तुमलम् ॥ १ ॥ किंच-  
व्यंजनभेदादर्थभेदोऽर्थभेदे च नाभीष्टसिद्धिः प्रत्युतानर्थप्राप्तिः स्यात्, कुणालकुमारवत्, ततोऽवश्यं गुरुलघुत्वं वर्णानां ज्ञातव्यं,  
एकस्य च परिज्ञाने द्वितीयं सुखेन परिज्ञायते, तत्र चाल्पत्वात् गुरुवर्णसंख्यासंख्यापनार्थं गीतिगाथापादत्रयमाह—

क्रमेण सगतिचउवीसतित्तीसा । गुणतीस अट्टवीसा चउतीसिगतीस चार गुरुवन्ना ॥ २९ ॥

गीतिः, क्रमाद्—यथाक्रमं एषु नमस्कार१क्षमाक्षमणे२र्यापथिकी३ शक्रस्तव४ चैत्यस्तव५ नामस्तव६ श्रुतस्तव७ सिद्धस्तव८  
प्रणिधानेषु ९ नवस्थानेषु गुरुवर्णा ज्ञातव्याः इति शेषः, कियंत इत्याह—सप्त१त्रयः२ चतुर्विंशतिः३ त्रयस्त्रिंशत् ४ एकोनत्रिंशत्

प्रणिधानेषु  
वर्णाः गुरुवः

॥३४४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३४५॥

५ अष्टाविंशतिश्चतुस्त्रिंशत् ७ एकत्रिंशत् ८ द्वादश ९ गुरवो-द्विगुणितरूपाः, नतु संयोगे पूर्वो गुरुरित्यादिलक्षणलक्षिताः वर्णा-  
अक्षराणि, तत्र नमस्कारे द्वितीयपदे द्वा प ४ ज्झा प ५ व्य प ६ का प ७ व्यप्पा प ८ व्वे इति सप्त, अन्ये तु पणासणोत्ति पस्य  
लघुत्वात् पद् गुरुन् भणंति, आह च-ल्लफूणसेस लहुआ नवकारे अक्खर दुसट्टति, च्छेजात्थ इति क्षमणाश्रमणे त्रयः, ऐर्या-  
पथिक्यां प्रथमपदे च्छा प २ फ प ६ ७ ८ प ९ तिंटीक्क प १७ ति प २० ट्टि प २३ इ प २६ स्सच्छाक्क प २७ स्स त  
२८ च्छित्त प ३० छी प ३१ म्माग्घाहा प ३२ स्सग्गं इति चतुर्विंशतिः । केचित् ठाणाओ ट्ठाणंति पंचविंशतितमं भणंति ३ ।  
शक्रस्तवे प्रथमपदे त्थु प ४ त्थ प ५ द्वा प ६ त्त प ९ त्थी प १० त्त प १४ ओ प १६ क्खु प १७ ग्ग प २० म्म  
प २१ म्म प २२ म्म प २३ म्म प २४ म्मक्कट्ठी प २५ प्प प २६ ट्ट प २८ ज्ञा प २९ द्वा प ३० चा प ३१ व्वन्नूष प ३२  
क्खल्लप्पात्तिद्धिच्चा इत्येकान्त्रिंशत् । तथा जे य अईआ सिद्धेत्यादिगाथायां प १ द्वा प २ स्सं ३ ट्ट प ४ व्वे इति चत्वारः,  
उभये मिलिताः सकलशक्रस्तवदंडके त्रयस्त्रिंशत्, केचिन्नतुस्त्रिंशत्तमं विअट्टच्छउमेत्ति च्छकारं मन्यंते ४ । चैत्यस्तवदंडके प २  
स्सग्गं प ३ ति प ४ ति प ५ कात्ति प ६ म्मात्ति प ७ ति प ८ ग्गत्ति प ९ द्वा प १३ प्पे १४ इट्ट प १५ स्सग्गं १६ अ  
त्थ प २१ इट्ट प २२ ग्गे प २४ त्च्छा प २७ ट्टि प ३० ग्गो प ३१ ज्ञा प ३२ स्सग्गो प ३३ का प ४२ प्पा इत्येको-  
नत्रिंशत्, एके तु काउसग्गेत्यत्र सकारस्य लघुत्वं मन्वानाः पटविंशतिं भणंति, तथा च-‘पणवोमं चउवीसं अउणत्तीसं च पंच-  
तीसा य । गुणतीसं इरियावहिसक्कथयाईसु गुरुण्णा ॥ १ ॥ नामस्तवदंडके प १ स्सज्जो प २ म्मत्थ प ३ चस्सं प ७ प्प प  
८ प्प प ९ प्फ प १० अंअं प १२ म्मं प १३ छिं प १४ व्व १५ ट्ट १६ द्द प २० त्थ प २१ ति प २२ स्सत्तद्वा प २३

गुरादि-  
वर्णाः

॥३४५॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३४३॥

गग प २४ त्त प २५ म्म २६ चे प २८ द्वाद्धि, सखलोए इत्यत्र व्य इत्यष्टाविंशतिः, अपरे तु चउवीसंपि केालीत्येकोनत्रिंशं  
पठन्ति ६ ॥ श्रुतस्तनदंडके प १ क्खवेड्डे प ४ म्मा प ५ द्दंस्स प ६ स्स प ७ स्स प ८ प्फोस्स प ९ स्स प १० छाक्खस्स  
प ११ चिस्स प १२ म्मस्सब्भ प १३ द्वे प १४ न्नन्नस्मब्भूच्चि प १५ त्थत्थिक्कचा प १६ म्मोइड्ढम्मुत्तइड्ढ, सुअस्स भगवओ  
इत्यत्र स्म इति चतुस्त्रिंशत्, इतरे तु देवन्नागेति पंचत्रिंशद् वदन्ति, यथा—‘सब्भूयनागसद्दक्खराण पढमाणमित्थ दुब्भावो’त्ति ।  
मिद्धस्तनदंडके प १ द्वाद्दा प ३ ग्ग ४ वद्दा प ९ कोक्का प १० स्सद्धस्स प १३ जिं प १४ क्ख्वास्स प १५ म्मक्कट्ठिं प  
१६ द्ढ प १७ चाट्ठ प १८ वी प १९ ट्ठट्ठिट्ठा प २० द्वाद्धि इति पंचत्रिंशतिः, वेयात्रचेत्यत्र च १ म्महि ३ ट्ठि ४ इति चत्वारः,  
उभयमेकोनत्रिंशत् ८। जापन्ति चेइयेत्यत्र इडेव्वात्थ इति त्रयः, जापन्ति केवि इत्यत्र वे इत्येकः, जयवीयराय इत्यत्र वेग्गाट्ठद्वी  
इति चत्वारः लोमिस्सद्वेत्यत्र ६ द्दच्चात्थव्व इति चत्वारः, मर्धे च प्रणिधानत्रिके द्वादश गुरुवर्णाः, एवं च अपुनरुक्ता नवसु स्थानेषु  
सर्वे गुरुवर्णा एकोने द्वे श्रुते, शेषास्तु चतुर्दशशतान्यष्टचत्वारिंशद्विक्काश्च लघवः—सयोगरहिता, न त्वेकमात्रिका एव, तथाहि—  
नमस्कारे ६१ धमाश्रमणे २५ ईर्यापयिक्या १७५ शक्रस्तवे २६४ चैत्यस्तवे २०० नामस्तवे २३२ श्रुतस्तवे १८२ सिद्धस्तवे  
१६९ प्रणिधाने १४०, अत्र संग्रहगाथा—इगमद्विंश पंचमीनार पणसयर ३ दुचउसठ्ठ ४ दुसयलहू ५ । दो वत्तीसा ६ तिवासी ७  
गुणमयरिमया य ८ चालसयं॥१॥ति, स्तुतिस्वप्नमस्कारादिगतास्तु वर्णा अनियतत्मान्न विचार्यन्ते, तथा चैत्यवंदनायाः सम्यक्-  
करणवांछया अर्हदादिद्वादशपदानामुच्चारविशेषोऽपि ज्ञातव्यः, स चैत्रं पचस्थानके प्रभुश्रीहरि भद्रसूरिपादैरुक्तः—द्विविधमुक्तं—  
शब्दोक्तमर्थोक्तं च, तदेतदर्थोक्तं वर्तते, सक्षिप्य तदुक्तार्थप्रतिपादनात्, तथाहि—अरिहं अरहं अरुहं १ भयं भयं चर उत्तमुत्ति-

गुर्वादि-  
वर्णाः

॥३४६॥



श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० सभा-  
चारविधौ  
॥३४७॥

वयं ३। दंसण दरिसण४ जाणय जावया५ मुत्तमुक्काण६ ॥१॥ अप्पं अप्पाण७ होइ नवा मइआ महिया८पयासग पहासा९। आइचेसुं  
आइचेहि१०य चदेसु चंदेहिं ११ ॥२॥ सासयमहवा तह सासओ य वारम य इत्थ आलावा। अरिहए तिविगप्पा दुविगप्पा हुंति  
सेसेसु ॥३॥ वारसपएसु एसु य पण पुणरुत्ताइं सत्त पय इयरे। अरिहं१ भयवं२ उत्तम३ दंसण४ अप्पाण नोसंतं ५ ॥ ४ ॥ ते  
पुण पुणरुत्तपया दस१ट्ट२चउ३दु४पण ५ वार जहसंख। भयवंतपयवियप्पो तत्थ य राईसुविय नेओ ॥५॥ संपदगतविशेषस्तु पूर्व  
मेवोक्तः। कुणालकुमारकथा चैवं-इह पाडलिपुरनयरे नयरेहिल्ले निवो असोयसिरी। पुत्तो तस्स कुणालो अइमेहापी कला-  
कुसलो ॥ १ ॥ मयमायत्ता रत्तो सो अइइट्ठो सवत्तिजणणिभया। दिन्नाइ कुमरभुत्तीइ वमइ उज्जेणिनयरीए ॥ २ ॥ से सिक्खत्थं  
पेसइ राया बहुसो सयं लिहिअ लेहं। अन्नदिणे पुण एव लिहइ अधीयतु कुमारवरो ॥३॥ एमेव मुत्तु लेहं कहिच्चि कजे समुट्ठिओ  
निवई। विअरइ सवत्तिजणणी अगारउपरिं अणुस्सार ॥४॥ पुण आगओ नरिदो अयाइउ चेव मुदिउ लेहं। पेसइ कुमरस्स न चेव  
वायए जा निउत्तनरो ॥५॥ ता तस्स करा गिण्हइ लेह सयमेव वाइउं कुमरो। जाणिअतप्परमत्थो थिरमत्तो चितइ मणंमि ॥६॥  
तइलुकपसिद्धाण मोरियवंसुब्भवाण अम्हाणं। न हु केणइ गुरुआणा विलघिया पुच्चपुरिसेण ॥७॥ तो साहसिकभरणं वारिजंतोवि  
मंतिपमुहेहिं। तत्तसिलागाइ लहु नयणजुअ अजए कुमरो ॥८॥ इय सोउ सोयजुतोऽसोयसिरी झूरए अहो कट्ठं। किह कूडलेह-  
गेण विणासियं पुरिसरयण मे ॥ ९ ॥ कुमरोऽवि मुणिय जणणीइ विलसिय मरिसिओ मणे धणिय। तस्सऽत्थि पिया सस्यब्भ-  
सुद्धसीला य सरयसिरी ॥ १० ॥ कइयावि तीइ कुसुमियचूयसुमिणसइओ सुओ जाओ। अह सो कुणालकुमरो गंधव्वफ़लाइ  
अइकुमलो ॥११॥ अणवरयगीयसणी गायंतो महियलंमि परिभमइ। तइआ नाउ अणमर पत्तो पाडलिपुरे नयरे ॥१२॥ हाहा-

कुणालकथा

॥३४७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संधा-  
चारिणी  
॥३४८॥

हहतुं वरुं ठो मंतीहिं साहिओ रत्नो । कत्तोवि सामि ! पत्तो अप्पुवो गायणो कोवि ॥१३॥ नवरं नयणविहूणो इय सुणिय कोउगा  
नियो भणइ । आगच्छउ को दोसो ? गायउ मह जवणियंतरिओ ॥१४॥ अह तेण सरससरगाममुच्छणाललियमहुरगीएण । हयहियओ  
भणइ निवो वरसु वरं भणइ तो कुमरो ॥१५॥ चंदगुत्तप्पुत्तो उ, विंदुसारस्म नत्तुओ । असोयसिरिणो पुत्तो, अंधो जायइ कागणि  
॥१६॥ अह नाउ नियसुयं तं अरणेउं जणियं निउच्छंमे । आरोविऊण गग्गरमरेण इइ जंपए राया ॥१७॥ किं वच्छ ! विहि-  
वसेणं एयमवत्थंतरं तुमं पत्तो ? । तेषुत्तं तायपयपमायओ णत्थि मिह खूणं ॥ १८ ॥ किंतु मह गीयवमणं तेणं सइरं भमामिइहं  
घणियं । ता किं पसायदानं थोत्रं ते मग्गियं ? वच्छ ! ॥१९॥ इय जा बुत्तोवि इमो न किंपि जंपेइ भणइ ता मंती । कागणिसइएणं रज्ज-  
माहियं देव ! निवईणं ॥२०॥ रायाऽऽह वच्छ ! ठविउं तुमं विणा को णु जुअए मज्झ । जइ तुह अच्छिविणासो न हुअ ? सो आह  
अह कुमरो ॥२१॥ ताय ! सुओ मह काही रज्जं रायाऽऽह सो कया जाओ ? । कुमरो जंपइ संपइ तो आणाविय तयं राया ॥२२॥  
रजे ठवेइ तह जं संपइ जाओत्ति जंपियं पिउणा । एयस्स संपइच्चिय नामंपि तओ निवेण कयं ॥२३॥ सो वड्ढिओ कमेणं पयाव-  
अकंतमयलदिसिचको । उजेणीनयरीए ठियो पसासेइ रज्जधुरं ॥२४॥ जीवंतसामिपडिमं वंदिउकामा कयावि तहिं पत्ता । भवतरु-  
भंजणहत्थी गुरू सुहत्थी मपरिवारा ॥२५॥ तइआ चउविहआउज्जमज्जपिच्छणयजणियजणहरिसो । ठाणे ठाणे पयडियपयडपुरनारि-  
हल्लीसो ॥२६॥ सद्धावंधुरभवियणपयपयकयलगुडरासमणहरणो । चउदिसि सुसाविगागिजमाणसुमहल्लमंगल्लो ॥२७॥ सो रहिएहिं  
भविण्हें सणियं पकडिजमाणओ पुरओ । पइहट्टं पइगेहं गुरुर्यं पूयं पडिच्छंतो ॥२८॥ अणुगम्मंतो गुरूणा सुहत्थिणा सयलसंघ-  
सहिणं । भमिरो तत्थ जिणरहो पत्तो निरभवणदारंमि ॥२९॥ अह राया तज्जूहे सकम्मविवरिइ वड्ढमाणो सो । ददट्टं सुहत्थिघरिं

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३४९॥

तुद्धमणो चिंतए चित्ते ॥ ३० ॥ मन्ने कत्थवि दिट्ठो एस मुणिदो मया दयाभरणं । जं मह मणजलनिहिणो इंदुब्ब जणेइ उच्छासं  
॥३१॥ इय चित्तिरस्स तस्सासु भासुर जाइसरणमुप्पन्नं । तो मुत्तु सव्वकजे पत्तो गुरुचरणनमणत्थं ॥३२॥ नमिउं गुरुणो पुच्छइ  
जिणधम्मो किंफलो ? भणइ घरी । सो सम्गमुक्खफलो पुच्छेइ पुगोवि नरनाहो ॥३३॥ किं फलमवत्तसामाइयस्स ? रज्जाइ ससइ  
मुणिदो । तो तुट्ठो भणइ निवो किं उवलक्खह ममं ? भयव ! ॥३४॥ तयणु अणुत्तरसुयनाणसुद्धउवओगओ मुणिय घरी । जपइ  
सपइ ! नरवर आसि पुरो मज्झ त सीसो ॥३५॥ तथाहि-कइयावि मासकप्पेण विहरमाणा सम महागिरिणा । अम्हे कोसंविपुर  
पत्ता दुब्बिक्खकालमि ॥३६॥ सकडभावा वसहीण बहुअभावेण मुणिजणस्म तह । सिरिअज्जमहागिरिणो वय च वसहीसु वीसु ठिआ  
॥३७॥ सुत्तट्ठपोरिसिकमेण भिक्खवेलाइ साहुसघाडो । अम्हं कम्मिदि ईसरगिहंमि भिक्खत्थमणुपत्तो ॥३८॥ अत्ताणं सत्ताणं तो  
मन्नंतेण तेण धणवइणा । भत्तीइ भत्तपाण पउर उवढोइयं तस्स ॥३९॥ दिट्ठ च तमेगेणं भिक्खयरेणं तहिं पविट्ठेणं । चितइ इमिणो  
भत्ते अहो अहो धम्ममाहप्पं ॥४०॥ तुल्ले भिक्खपरत्ते इमे सउन्ना लहंति सव्वत्थ । अहय तु पुन्नरहिओ लहामि जइ नउरमकोस  
॥४१॥ इय चित्तिय सो लग्गो मुणीण मग्गमि मग्गए बहुसो । भयव ! तुब्बे सव्वत्थ लहइ ता देह मह किंचि ॥४२॥ तो मुणि  
वरेहि भणियं भो भइ ! न अम्ह सत्तिय भत्त । अम्ह इमस्स य यहुणो गुरुणो चिट्ठति वसहीए ॥ ४३ ॥ तेणासाविवसेण वसहिं  
आगतु जाइया अम्हे । साहहिं तेण कहिओ सव्वोवि हु मग्गवुत्तंतो ॥४४॥ तो नाउ सुएण वय भाविं पयणसमुन्नइकर त । रामा-  
इयसुत्तुचारपुव्वग झत्ति दिक्खिसु ॥४५॥ भोयाविओ जहेच्छ मणुन्नमाहारमः निसाए सो । सुद्धमणो गूढविसइयाइ पंचत्तमणुपत्तो  
॥४६॥ इगविंदुयसमहियलेहदोसउप्पन्नअंधभावस्स । कुमरकुणालस्स स एस भूव ! त नदणो जाओ ॥४७॥ इय सोऊणं राया बहु-

कुणालकथा

॥३४९॥

धीदे०  
वेत्य० श्री-  
धर्म० संग-  
वारविधौ  
॥३५०॥

वद्दुमाशुसंतरोमंचो । भालत्वलमिलियकरो एवं धुणिउं समादत्तो ॥४८॥ जय जय नाणदिवायर परोवयारिकपच्चल मुणिंद ! ।  
गुरुऋणारममायर नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥४९॥ दारिदअमुद्दममुद्दमज्झनिवडंतजंतुपोयाणं । सकलकमलालयाणं नमो नमो तुब्भ  
पायाणं ॥५०॥ सग्गापग्गमग्गाणुलग्गजणसत्थवाहपायाणं । भवियावलंघणाणं नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ५१ ॥ चकंकुसंक-  
वरकलमहुल्लिमकमलाइकरणजुयाणं । असरणजणसरणाणं नमो नमो तुज्झ पायाणं ॥ ५२ ॥ इय थोउं सो गुरुणो गिहिधम्मं  
गहिय मग्गिदमणुपत्तो । सव्वत्थवि नियरजे रहजत्ताओ पवत्तेइ ॥५३॥ यदुक्तं निशीथचूर्णां—अवंतीजणवए उज्जेणी नयरी, 'अणु-  
जाणे अणुयाई पुप्फारुहणाई उकिरणगाणि । पूयं च चेइयाणं तेवि सरज्जेसु कारंति ॥१॥ अणुजाणं—रहजत्ता तेसु सो राया अणु-  
जाई—भडचडगरमहिओ रहेण सह हिंडइ, रहेसु पुप्फारुहणं करेइ, अग्गओ य विविहफले खजगे कवडुगवत्थमाई य उकिरणे करेइ,  
अग्गेमिं च वेअइयघरठियाणं पूअं करेइ, तेऽवि रायाणो सरज्जेसु कारविति । जह सुमरिअ रंकरत्तं सत्तागारा कराविआ तेण । जह  
बोहिया अणजा तदा निस्सीहाउ नेयवरं ॥५४॥ जिणसासणं पभाविथ सुइरं सुगुरुसु सुवहुमाणपरो । सो संपइनरनाहो जाओ  
वेमाणिएसु गुरो ॥५५॥ धम्मफलं पयडेउं भणियं संपइनरिंदरचरियं । इहयं वन्नाहिगारे पगयं तु कुणालकुमरेण ॥ ५६ ॥ एवं  
कुणालस्य निग्गम्य शृत्तं, नमस्कुटीर्पापथिकादिवण्णां । ज्ञात्वा सदोनाधिकदोषमुक्तान्, विधत्त शुद्धं जिनवंदनादि ॥१॥ इति  
कुणालकुमारकथा । इत्युक्तं 'वन्ना सोलसअसीआला १॥ इगसीय सयं तु पयार सगनउई संपयाउ यर'त्ति, अट्टमनवमदस-  
मेति द्वारप्रयं । संप्रति पणदंडेत्येकादशं द्वारं गाथापूर्वाद्धेनाह—

पण दंडा सक्कत्थयचेइयनामसुयसिद्धत्थय इत्थं ।

कुणालकथा

॥३५०॥

दंडकाः-प्रागुक्तशब्दार्थाः, ते च पंचात्र चैत्यवंदनायां, गुणसागरनृपतिवत् सत्यापनीयाः। तत्र प्रथमो दंडकः शक्रस्तवः नमोत्पुणमित्यादि सव्वे तिविहेण वंदामीत्येतदंतः, यतश्चैत्यवंदनाचूष्णावितत्सर्वं व्याख्याय भणितं 'एवं पणिवायदंडगं भणित्ता तओ पंचंगपणिवायं करेइ'त्ति, द्वितीयः चैत्यस्तवः अरिहंतचेइयाणमित्यादिः, तृतीयो नामस्तवः लोगस्स उज्जोअगरे इत्यादिः ३ चतुर्थः श्रुतस्तवः पुक्खरवरदीवेत्यादिः ४ पंचमस्तु दंडकः सिद्धस्तवरूपः, सिद्धाणं बुद्धाणमित्यादिः यावत् अप्पाणं वोसिरामीत्येतत्पर्यंतः, तथा श्रीहरिभद्रसूरिपूज्यैर्ललितविस्तरायामेतदंतं व्याख्याय भणितं यथा 'व्याख्यातं सिद्धेभ्य इत्यादि सूत्र'मिति । अथ गुणसागरनृपकथा-वरदंडो वरदंडइ गोस्खपरो य अत्थि रणवीरो । इह गोवालो गोवालउव्व नयरंमि वीरपुरे ॥ १ ॥ तस्स गुणसायरो सायरुव्व आसी सुओ सुसत्तजुओ । तस्स य मित्तो धरणो मइसागरमंतिवरपुत्तो ॥२॥ कइयाइ रायवाडीइ अइगओ सहसुयाऽपरिवारो । पिच्छइ गुणंधरमुणिं राया कुमुमागरुज्जाणे ॥३॥ उत्तरिय करिवरा तो विणएण मुणीसरं नमइ निवई । परउवयारिकमई मुणीवि इय देसणं कुणइ ॥ ४ ॥ "जं इह जियाण जायइ मणोरमं रूवरिद्धि-माईयं । तं धम्मफलं नूणं विवरीयं पुण अहम्मस्स ॥ ५ ॥ धम्माभासेहिं समाउलंमि लोए जहड्डिअं धम्मं । आसन्नभाविभदा विरलच्चिय केइ जाणंति ॥६॥ विरलाणवि ते विरला धम्मविसेसं वियाणिउं सम्मं । जं जह भणियं तं तह कुणंति जे देहनिरवेइखं ॥७॥ सो पुण धम्मो पंचमपुरिससमो इह अणोवमो नेओ । राजा भयवं ! को सो पंचमपुरिसोवमो धम्मो ॥८॥ मुनिः-नरवर जह वीयंगे भणिअं वीरेण गोअमाईणं । पंचमपुरिससरुवं तहेगचित्तो निसामेहि ॥९॥ तथाहि-से जहानामए पुक्खरिणी सिया बहुउदया बहुसेया बहुपुक्खला लद्धट्ठा पुंडरीणिणी पासाईया दरिसणिजा अभिरुवा पडिरुवा ९, तीसे णं पुक्खरिणीए तत्थर

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
र्म०संया-  
चारविधौ  
॥३५२॥

देसे २ तर्हि २ बहुला पउमवरपुंडरीया बुइआ अणुपुञ्चुट्टिया १ ऊसिया २ रुइला ३ वंनमंता ४ गंधमंता ५ रसमंता ६ फास-  
मंता ७ पासाइया ८ द ९ अ १० पडिरूवा ११, तीसेणं पुक्खरिणीए बहुमज्झदेसभाए एगे महं पउमवरपुंडरीए बुइए अणुपु-  
ञ्चुट्टिए जावपडिरूवे १२, अहपुरिसे पुरिच्छिमाउ दिसाओ आगम्म तं पुक्खरिणीए तीरे ठिच्चा पासइ तं महं एगं पउमवरपुंडरीयं  
अणुपुञ्चुट्टियं जाव पडिरूवं ११, तएणं से पुरिसे एवं वयासी-अहमंसि पुरिसे खेयन्ने १ कुसले २ पंडिए ३ वियत्ते ४ मेहावी ५  
अवाले ६ मग्गत्ये ७ मग्गविऊ ८ मग्गस्म गइपरक्कमण्णू ९ अहमेयं पउमवरपुंडरीयं उन्निक्खविस्सामित्तिक्कदुइ इहागतः, इय वच्चा  
से पुरिसे अभिक्रमे तं पुक्खरिणिं जावं जावं च णं अभिक्रमेण—तदवतरणाभिप्रायेण भवे तावं च णं तीसे पुक्खरिणीए महंते  
उदए महंते सेए पहीणे तीरं अपत्ते पउमवरपुंडरीयं नो हव्वाए नो पाराए, किंतूभयभ्रष्टो मुक्तोलीवदनर्थायैव ग्रभवति, अंतरा  
पुक्खरिणीए सेयंसि निमन्ने पढमे पुरिमजाए । अहावरे दुच्चे पुरिसजाए, अह पुरिसे दाहिणाए आगम्म तं पुक्खरिणिं तीसे  
पुक्खरिणीए तीरे ठिच्चा पासइ तं महं एगं पउमवरपुंडरीयं अणुपुञ्चुट्टियं जावपडिरूवं, तं च इत्थ एगं पुरिसं जाव पासइ ५ पहीण-  
तीर अपत्तं पउमवरपुंडरीयं नो हव्वाए नो पाराए, पासइ अंतरा पुक्खरिणीए सेयंसि निमन्ने, तए णं से पुरिसे एवं वयासी-अहो  
णं इमे पुरिसे अभिक्रमे पुक्खरिणिस्स गइपरक्कमण्णू ९ जण्णं एस पुरिसे एवं मण्णे, अहमंसि पुरिसे खेयण्णे ९ जाव अहमेयं  
पउमवरपुंडरीयं उन्निक्खविस्सामि, नो य खलु एय पउमवरपुंडरीयं एवं उन्निक्खवेयव्वं जहा णं एस पुरिसे, मन्ने अहमंसि पुरिसे  
खेयण्णे जाव परक्कमण्णू ९ अहमेयं पउमवरपुंडरीयं उन्निक्खविस्सामि इय वच्चा से पुरिसे अभिक्रमे तं पुक्खरिणिं जाव सेयंसि  
निमन्ने, दुच्चे पुरिमजाए । अहावरे तच्चे पुरिसजाए, अह पुरिसे पच्चच्छिमाओ दिमाउ आगम्म तं पुक्ख जाव पासइ तं महं पउम०

गुणसागर-  
कथा

॥३५२॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
घारविधौ  
॥३५३॥

जाव पडिरूवं ९, ते य तत्थ दुन्नि पुरिसजाए पहीणे तीरं अपत्ते पउमवरपुंडरीयं नो हव्वाए जाव सेयंसि निसन्ने, तए णं से पुरिसे एवं वयासी-अहो णं इमे पुरिसा अखेयण्णा जाव नो मग्गस्स गइपरकमण्णू ९, जण्णं एए पुरिसा एवं मन्ने-अम्हे तं पउमवर-पुंडरीयं उन्निक्खिविस्सामो, न य खलु एयं पउमवरपुंडरीयं एवं उन्निक्खेवेयवं जहा णं एए पुरिसा, मन्ने अहमंसि पुरिसे खेयण्णे जाव परकमण्णू ९ अहमेयं जाव उन्निक्खिविस्सामि इअ वच्चा अभिक्रमे तं पुक्खं जाव सेयंसि निमण्णे, तच्चे पुरिसजाए । अह पुरिसे उचराउ दिमाउ आगम्म तं पुक्खं जाव पडिरूवं ९ ते य तत्थ तिन्नि पुरिसजाए पासइ पहीणे तीरं अपत्ते सेयंसि निसन्ने, तए णं से पुरिसे एवं वयासी-अहो णं इमे पुरिसा अखेयण्णा? जाव परकमण्णू ९ जणं एए पुरिसा एवं मन्ने अम्हे तं पउमं उन्निक्खिविस्सामो नो य खलु एयं पउमं एवं उन्निक्खेवेयवं, जहाणं एए पुरिसा मण्णे, अहमंसि पुरिसे खेयण्णे ? जाव परकमण्णू ९ अहमेयं पउमं उन्निक्खिविस्सामि इइ वुच्चा से पुरिसे अभिक्रमे तं पु० जाव सेयंसि निसण्णे, चउत्थे पुरिसजाए । अह भिक्खू १ ल्हें २ तीरत्थी ३ खेयण्णे ४ जाव परकमण्णू १२ अन्नयरीए दिसाओ अणुदिसाओ आगम्म तं० तोसे पु० तीरे ठिच्चा पासइ तं महं एगं पउमं जाव पडिरूवं ११, ते य तत्थ चत्तारि पुरिसजाए पासइ पहीणे तीरं अपत्ते प० नो हव्वाए जाव निसण्णे, तएणं से भिक्खू एवं वयासी-अहो णं इमे पुरिसा अखेयण्णा जाव अपरकमण्णू जणं एए पुरिसा एवं मन्ने-अम्हं एयं पउमं उन्निक्खिविस्सामो नो य खलु एयं पउमं एवं उन्निक्खेवेयवं जहाणं एए पुरिसा मन्ने, अहमंसि भिक्खू १ ल्हें २ तीरत्थे ३ खेयण्णे ४ जाव परकमण्णू १२ अहमेयं पउमं उन्निक्खिविस्सामि चिकद्दु इय वच्चा से भिक्खू नो अभिक्रमे तं पुक्खरिणिं, तीसे पुक्खरिणीए तीरे ठिच्चा सहं कुजा उप्पयाहि खलु भो पउमवरपुंडरीया उप्पयाहि०, अह से उप्पइए पउमवरपुंडरीए । तदेवं दृष्टांतं उपदर्श्य दाष्टांतिकं दर्शयितुकामः

गुणसागर-  
कथा

॥३५३॥

धीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३५४॥

श्रीमन्महावीरवर्द्धमानस्वामी स्वशिष्यानाह—कहिण नाए समणाउसो ! अट्टे पुण से जाणियव्वे भवइ भवद्धिरिति गम्यते, अस्य पर-  
मार्यं गृयं न जानीतेत्यर्थः, भगवं हि समणं भयवं महावीरं निर्गन्धीओ निर्गन्धा य वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-  
किट्टिए नाए समणाउसो, अट्टं पुण से नो याणामो, तएणं समणे भगवं महावीरे ते य बहवे निर्गन्धा य निर्गन्धीओ य एवं वयासी-  
हंता मयणाउसो ! आइक्खामि विभावेमि कित्तेमि एवं इमं सअट्टं सहेउं मनिमित्तं सवाकरणं भुञ्जो २ उवदंसेमि, लोयं च खलु मए  
अप्पाहट्टु समणाउसो ! सा पुक्खरिणी बुइया १ कम्मं खलु अप्पाहट्टु मए समणाउसो से उदए बुइए २, कामभोगा य जाव  
से सेंए बुइए ३ जणजाणययं च जाव ते बहवे पउमवरपुंडरीया बुइया ५ अन्नतित्थिया य जाव ते चत्तारि पुरिसजाया बुइया,  
इयेए चत्तारि पुरिसजाया नाणापन्ना नाणाछंदा नाणासीला नाणादिट्ठी नाणारुई नाणारंभा नाणज्झवसाणसंजुत्ता पहीणा पुब्ब-  
संजोगा आपरियं मग्गं असंपत्ता, इय ते नो हव्वाए नो पाराए अंतरा कामभोगेसु निमन्ना ६, धम्मं च जाव से भिक्खू बुइए ७  
धम्मं नित्थं च जाव से सारे बुइए ८ धम्मकहं च जाव से सदे बुइए ९ निव्वाणं च जाव से उप्पाए बुइए १०, एवमेव खलु मए  
अप्पाहट्टु मयणाउसो से एवमेवं बुइयं ॥ स इमो पंचमपुरिसो नरवर ! जेणोवमिज्जए धम्मो । जइगिहिमेया दुविहस्स मूलमिमस्स  
संमत्तं ॥१२॥ अरिहंतो मह देवो जावजीवं सुसाहुणो गुरुणो । जिणपन्नत्तं तत्तं इइ बुद्धी वित्ति संमत्तं ॥१३॥ अंतोमुहुत्तमित्तंपि  
फासियं हुअ जेहिं संमत्तं । तेमिं अट्टुपुग्गलपरियट्ठी वेव संसारो ॥१४॥ किंच-संमत्तंमि उ लद्धे ठइयाइं नरयतिरियदाराइं । दिवाणि  
माणुमाणि य सुफनमुहाइं महीणाइं ॥१५॥ मनुष्यानाश्रित्य पुनरेवं-संमत्तंमि उ लद्धे विमाणवज्जं न बंधए आउं । जइवि न संमत्त-  
जदो अहव न बद्धाउओ पुत्वि ॥१६॥ कायव्वा सुद्धिकए तस्स उ चिहवंदणा जहामत्ती । पणदंडाईहि उ सा संपुण्णा होइ भणियं

गुणसागर-  
कथा

॥३५४॥



च ॥१७॥ चिद्वंदणं तु नेयं सुत्तधुवओगओ समाहीओ । अक्खलियाइगुणजुयं दंडगपंचगममुचरणं ॥ १८ ॥ पढमो सक्कथअं  
इह भणियं पणिवायदंडअं अहवा । चेइयवंदणदंडो वीओ पुण होइ नायव्वो ॥ १९ ॥ चउवीसथओ तइओ सुयनाणथओ भवे  
चउत्थो उ । पंचमओ सिद्धथओ दंडगपंचगमिमं होइ ॥२०॥ इय सोउ हरिसियमणो रणवीरनिवो सनंदणो धणियं । गिण्हइ गिहत्थ-  
धम्मं चिद्वंदणमाइवरनियमं ॥२१॥ नंमिउं गुणंधरगुरुं तत्तो पत्तो निवो सठाणंमि । अह कीलिउं समित्तो पत्तो कुमरो कयाइ वणे  
॥२२॥ तत्थ जुगाइजिणगिहे पविसिय मुक्कासिदंडकोदंडो । वंदिय पणदंडविहीइ गयतियदंडं जिणवरिंदं ॥२३॥ जा निग्गच्छइ  
पिच्छइ अच्छरअच्छेरपिच्छणियरूवं । अंदोलियाधिरूवं एगं कुमरिं वणसिं व ॥ २४ ॥ निद्वच्छित्तन्नियच्छणवरं कुमारं निएवि  
अह धरणो । भणइ सहयारछायाइ इत्थ छणमेगमच्छामो ॥ २४ ॥ तत्थवि यागच्छंतं नियंति रमणिदुग्गमुत्तराहुत्तं । आगच्छंतं च  
खणा ताहि समं तह वरविमाणं ॥२५॥ ओयरिय तओ एगो खयरो आरोविउं च ते उ तहिं । रणवीरनिवगिहे जाइ रायकयउचिय-  
उवयारे ॥२६॥ भणइ निव ! मणिकिरीडो खयरोऽहं रयणपुरपह मज्झ । रयणावलित्ति धूया तदुचियवरमलहमाणस्स ॥२७॥  
दिव्वच्चुणा य कहियं रणवीरसुओ मणोरमुज्जाणे । वंदंतो रिसहजिणं हरिही तीसे मणं स वरो ॥२८॥ इय सोउ पेसिया सा इह जायं  
तस्म सव्वमवि भणियं । लग्गमवि अज्ज ता दुण्हमेसि जोगो हवउ जोगो ॥ २९ ॥ कुमरस्स य संगयमिमं लहु कुणउ प्पहुत्ति सवण-  
मूलंमि । ठाउं धरणेषुत्ते मन्नइ निवई खयरवणं ॥३०॥ परिणयणमहे वित्ते तओ सठाणंमि खेयरो पत्तो । अह कइया विन्नत्तो निवई  
उज्जाणपालेण ॥३१॥ सिरिअमरचंदसूरी बहुसुरविसरेण अमरसूरीव । पुजंतो संपत्तो इह अज्ज मणोरमुज्जाणे ॥३२॥ इय सोउम-  
मुयसित्तोव्व नरवरो जाइ तन्नमणहेउं । नमिय मुणिंदं निसुणइ इय मुणिणा देमणं विहियं ॥३३॥ “जत्थ य विसयविराओ कसाय-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३५६॥

चाओ गुणेषु अणुराओ । करुणाएँ अप्पमाओ सो धम्मो सिवसुहोवाओ ॥ ३४ ॥ जइधम्मो तत्थ समग्गसंगविगमे गयंगिवग्ग-  
वहो । विहियअमायकसायचाओ सिवगमणपवणगुणो ॥३५॥ तदसत्ताणं सत्ताणऽगारधम्मोऽवि होइ गुणहेऊ । लहुभोयणं व लंघण-  
करणासत्तस्स रोगिस्स ॥ ३६ ॥ इय जाणिय जे सम्मं धम्मं धारेंति ते सया धन्ना । जे निरइयारमेयं पालंती ताण किं भणिमो ?  
॥३७॥ जओ-धन्नाणं विहिजोगो विहिपक्खाहारगा सया धन्ना । अन्यच्च-विहिवहुमाणी धन्ना विहिपक्खअदूसगा धन्ना ॥३८॥  
भणियं च-आसन्नसिद्धियाणं विहिवहुमाणो उ होइ सयकालं । विहिचाओ अविहिभत्ती अभव्वजियदूरभव्वानं ॥३९॥” इय सोउ  
निवो रज्जे पुत्तं ठविउं विमोइउं गुत्तिं । भवगुत्तिमोइणिं गिण्हिऊण दिक्खं गओ मुक्खं ॥४०॥ गुणसायरनिवई पुण मित्तजुओ  
सापरो गुणग्गदणे । गिण्हिय गिहत्थधम्मं नमिऊण गुरुं गओ सगिहं ॥४१॥ निसि नियइ कयाइ निवो रमाणिं तणुकंतिहयतमं  
इफं । वसुदंडडमरुयकरं सियवत्थं पाउयारूढं ॥४२॥ इय काऽसि कओ केण व आगया इत्थ ईसि हसिरा सा । कहइ तुह पुव्वभव-  
माहियग्गि पचंगिरा विजा ॥४३॥ जा सिज्झिस्सं विहिविहियपुव्वसेवस्स तुज्झ ता सहमा । निहणं गओसि संपइ धणियं जिण-  
धम्मनिरयस्स ॥४४॥ चिइवंदणापरस्स य उचियपवित्तस्स तुह अहं नूणं । पत्ता किंकरभावं कजविसेसेसु सरियव्वा ॥ ३६ ॥ राजा  
अणणुट्टाणाविणओ अन्नाणभवो महेह खमियव्वो । देवी-को अविरयाइ मइ इह गुणाहियाणं अविणओ भे ॥ ३७ ॥ नियकंठा निवकंटे  
सिप्ता मुत्तावलिं भणिय तहिमं । एयाउ अरीवि वसं जंतित्ति तिरोहियाइ सहसा ॥३८॥ तो मित्तीकयअच्चंतपच्चणीयाहिवो निवो निच्चं ।  
ठविउं धरणामच्चे रजधुरं कुणइ जिणधम्मं ॥ ३९ ॥ धरणो सहसाऽब्भक्खाणरहस्सुब्भक्खाणमाइ दाउ इओ । गिण्हइ लोगाउ  
पहुं दधमनीईइ अह कइया ॥४०॥ पउरेहिं विन्नत्ते स निवेषुत्तोत्ति किं इमं सच्चं ? । भणइ भरंता भंडारमिह तुहाम्हि चिय न

गुणसागर-  
कथा

॥३५६॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
वर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३५७॥

सचा ॥४१॥ पागयजणवयणेहिं मंनसि मं अनयमप्य ता मुदं । सनयस्स इमंति भणित्तु खिवइ सकराउ तं दूरे ॥४२॥ राजा-  
किं मुयसि इमं? तुह किंतु होइ इय वीयवयइयारोवि । संसिज्जइ य पयाओ नएण भंडारवड्डीवि ॥ ४३ ॥ यतः—अर्थात्रिवर्ग-  
निष्पत्तिन्यायोपार्जितवर्द्धनात् । अधर्मानर्थशोकाना, विपरीतात् समुद्भवः ॥४४॥ तो सो अणक्खभरिओ उट्टिय सगिहं गओ हओ  
तइआ । केणय पुव्वविराहियनरेण छुरियाइ लहिय छलं ॥४५॥ अट्टवसट्टो मरिउं तइए नरयंमि नारओ जाओ । तो भमिउं भूरिभवे  
कयाइ पाविहिइ मुक्खंपि ॥४६॥ अह ठवियावरसचिवो निवो करावेइ पवरजिणभवणे । तेसु अअब्भुयभुयं पूअ च महाविभूर्इए  
॥ ४७ ॥ वंदइ तिदंडसुद्धं देवे पणदंडएहिं मिउदंडो । नियविसयंमि अमारिं तह रहजत्ता पवत्तेइ ॥४८॥ कयपवयणवहुमाणण  
वोहिलाभं जिणण वडूंतो । साहम्मियवच्छल्लाइं धम्मकम्माइं कुणमाणो ॥४९॥ सुइर पालिय रज्ज पजंते गिण्हिऊण पव्यजं । पत्तो  
सुहम्मकप्पे तइयभवे सिवसुहं लहिही ॥५०॥ एवं त्रिदंडपरितं शिवदंडकल्पं, यः श्रीजिनं नमति दंडकपंचकेन । शीघ्रं विलंघ्य  
भवदंडमसावदंडं, स्थानं प्रयाति गुणसागरभूमिभृद्भवत् ॥५१॥ इति गुणसागरनृपतिरुथा ॥ इत्यमिहितं पणदंडेत्येकादशं  
द्वार, साग्रत 'वार अहिगार'त्ति द्वादशं द्वार गाथोत्तरार्द्धेनाह—

दो इग दो दो पंच य अहिगारा वारस कमेण ॥ ३० ॥

पूर्वाद्धोक्त इत्थयन्द इहापि सवध्यते, ततश्च इत्थत्ति एषु दंडकेष्वधिकाराः—स्तोतव्यविशेषविषयाः प्रस्तावविशेषा अधि-  
क्रियंते—समाश्रीयते वंदनां कर्तुकामैरिति व्युत्पत्तेः, ते च द्वादश क्रमेण भवंति, तत्र प्रणिपातदंडके द्वात्रिंशदधिकारौ, एकोऽर्हचैत्य-  
स्तवदंडके, द्वौ नामजिनस्तवदंडके, द्वौ श्रुतस्तवदंडके पंच सिद्धस्तवदंडके च, एतानेवाथ पदोल्लिखनया दर्शयति—

अधिकाराः

॥३५७॥

श्रीदे०  
शैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३५८॥

नमु१ जे अइ२ अरिहं३ लोग४सव५पुक्खदतम७सिद्ध८ जो देवो९  
उज्जित१० चत्ता११ वेयावचग१२ अहिगारपढमपया ॥ ३१ ॥

इह सर्वत्र पदैकदेशे पदसमुदाय उपचरितव्यः, ततश्च नमोत्थुणं इति भावार्हद्वंद्वनाख्यस्य प्रथमाधिकारस्य प्रथमं पदं, एवम-  
न्यत्रापि यथायथं प्रयोज्यं, जे अ अईया सिद्धेति द्वितीयस्य २ अरिहंतचेइयाणमिति तृतीयस्य३ लोगस्स उज्जोअगरे इति चतु-  
र्थस्य४ सबलोए अरिहंतत्ति पंचमस्य५ पुक्खखरदीवेति षष्ठस्य६ तमतिमिरपडलेति सप्तमस्य७ सिद्धाणं बुद्धाणमित्यष्टमस्य८ जो  
देवाण वीति नवमस्य९ उज्जितसेलसिहरे इति दशमस्य१० चत्तारि अट्टदसेत्येकादशस्य११ वेयावचगराणमिति द्वादशस्य१२, एतानि  
किमित्याह-अधिकाराणां-प्रागुक्तशब्दार्थानां प्रथमपदानि, उल्लिखनपदानीत्यर्थः ३१ ॥ अत्र संप्रदायः-इह आसी रासीकयमणिरयणो  
तामलित्तिनयरीए । इवभो जिणदत्तअभिहो भद्दा से पणइणी भद्दा ॥ १ ॥ बहुओवाइयलद्धो पुत्तो एएसि वंभदत्तुत्ति । अहि-  
गयकलाकलावो कमेण तरुणत्तमणुपत्तो ॥२॥ अह दट्ठु हीयमाणं नियविहवभरं दिणे दिणे इवभो । पागलमच्छुव्व इमो सुवि-  
गाओ चित्तए चित्ते ॥३॥ किं मह पुव्वभचुव्वभवदुक्कयकम्मेण अहव पुत्तस्स । एयं धणं पणस्सइ पडुपवणेणं व विणपडलं ॥४॥  
मत्थमगुणियंपिअ कह अणिसं मह गलइ रायसंमाणो ? । मुणिमिव चरणविहूणं कह नाढायंति सयणावि ॥५॥ किह परियणोअवि  
एमो पमेहिओविअ वयंमि मइ विमुहो ? । धणभंसमिसेण विही किह किह सं नणु विडंवेही ? ॥६॥ इय चित्ताउलियमणं जणयं दट्ठुं  
पयंपए वंभो । किं ताया ! दीसह मे धणकसिणमुहा निरुच्छाहा ? ॥ ७ ॥ इवभोवि गग्गरगिरं वागरए वच्छ ! इण्हि विहवभरो ।  
निवसकाराइजुओ इक्कपइचिय महं नट्ठो ॥ ८ ॥ वाहप्पवाहधोइयवयणो वंभो भणेइ किं ताया ! । मह पुव्वकुक्कम्मेणं उवट्ठिओ

अधिकार

॥३५८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३५९॥

एस धणनासो ? ॥९॥ इभो तं पइ जंपइ संकसु मा वच्छ ! तुममिममजुत्तं । उदयखयाइभावा कस्सवि जायंति कइयावि ॥१०॥  
यदागमः—“उदयखयखओवसमोवसमाई जं च कम्मणो भणिया । दब्बं खित्तं कालं भावं च भवं च संपप्प ॥ ११ ॥ निघा-  
वट्टियभावा तणुभवभविणो भवंति न भवंमि । ता असुहपघओ धणक्खउत्ति इय जुज्झई वुत्तुं ॥ १२ ॥ निययववसायअकलत्तणेण  
इय निच्छएमि ताय ! इमो । मह पुच्चदुकयहेऊ दोसो इय आह पुण बंभो ॥१३॥ इभोऽवि आह हे वच्छ ! सच्छं नहु निच्छियं  
भवे जमिह । भावियजिणवयणाणं तं कत्थवि वोत्तु नो जुत्तं ॥१४॥ जइ पुण हिययचहुट्टा तुह नो हट्टेइ वच्छ ! संका तो । ता एहि  
कंचणपुरं केवल्लिणं जेण पुच्छामो ॥१५॥ आनंति सुएणुत्ते ते जणयसुया तओ तहिं गंतुं । तं वुत्तंतं सयलं नमिउं पुच्छंति वर-  
नाणि ॥ १६ ॥ भणइ मुणी भो जिणदत्त ! आसि इह कोसलाइ नयरीए । सिरिहरिसनिवस्स सुओ सुविस्सुओ सिद्धदेवुत्ति  
॥१७॥ तस्स य वालवयंसो धम्मजसो नाथ सुजससिद्धिसुओ । ते कइयावि वसंते पत्ता कीलेउमुज्जाणे ॥१८॥ अइदाणविला-  
सपरं तत्थ जणं दट्टु भणइ निवतणुओ । मित्त ! कह धणियतणयव्व इह जणा दिंति विभवंति ? ॥ १९ ॥ पडिभणइ सिद्धिपुत्तो  
कुमार ! सारगिणमेव कमलाए । दाणं भोगा य तहा अन्नह नासुच्चिय हविजा ॥२०॥ किंच-पायं अदिन्नपुव्वं दाणं सुरतिरिय-  
नारयभवेसु । मणुयत्तेऽवि न दिजा जइ तत्तो तंपि नणु विहलं ॥२१॥ अन्नयविहवोवि अल(कुलु)ग्गओऽवि समलंकिओवि रूवीवि ।  
पुरिसो न सोहइ चिय दाणेण विणा गयंदुव्व ॥२२॥ किंतु सिमृत्ते सोहइ न जुव्वणे दुग्गमिणं सुपुरिसस्स । जणणीइ दुद्धपाणं  
पिउलच्छीए य परिभोगो ॥ २३ ॥ अह साहइ निवपुत्तो मित्त ! तए जुत्तमेयमुल्लवियं । देसंतरे अहं खलु गमिहं विहवे समजेउं  
॥२४॥ इयरोऽवि आह एवं अहंपि काउं भणइ तो कुमरो । भो मित्त ! सत्तमंदिर वीसुं देसेसु गंतव्वं ॥२५॥ वीए महुमासे पुण

ब्रह्मदत्त-  
कथा

॥३५९॥

धीदे०  
पैत्य० श्री-  
पर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३६०॥

इह गंतव्यंति तेणवि पवग्ने। कुमरो परियणभवगणिय निग्गओ तयणु नयरीओ ॥२६॥ वच्चंतो पुव्वदिसाहुत्तं पत्तो कुसग्गनयरंमि ।  
तस्म पद्दि उजाणे ददुत्तं सिरिसंतिजिणभवणं ॥ २७ ॥ तम्मज्जे विहिपुव्वं पविसिय संमंज्जिभवंदए देवे । सिवनयरवारअहिगार-  
चिंतणे वाढमुवउत्तो ॥२८॥ इत्थंतरंमि उवलक्खिउण एगेण मागहसुएण । गंतुं कुमरो सिद्धो नरवइणो विजयदेवस्स ॥ २९ ॥  
तो तेण हरिमिणं अइमहया गउरवेण वाहरिओ । भणिओ सुपुरिस ! मह जोइणा पुरा आसि इह कहियं ॥ ३० ॥ पुत्तरहियस्स  
तुम्मं कंचणमालामुयाइरज्जस्स । होही सामी सिरिहरिसनिवसुओ सिद्धदेवुत्ति ॥ ३१ ॥ ता णे धूयं एयं परिणेउं निव्वुए कुणसु  
अग्हे । दक्खिअमारयाए कुमरोऽवि तद्दा कुणइ सव्वं ॥३२॥ अह नियअणेअकारिं करेणुदत्तं निवं विणिग्गहिउं । महया संरंभेणं  
चलियं गिरिदेवविजयनिवं ॥३३॥ कहवि निसेहिय हियकरणपउणचउरंगपवरवलकलिओ । कुमरो नियदेसंते पत्तो अक्खलियपयाणेहिं  
॥३४॥ इयरोऽवि ठिओ समुहो कयावि किं व्वत्तिया रणे विमुहा ? । सो तयणु निवसुएणं दूएण भणाविओ एवं ॥३५॥ जइ  
किंपि चिंतिउं विजयदेवरत्ता उवेक्खिओ तंसि । तो किं तुह जुत्तमिणं असमिक्खियकंमनिम्मवणं ? ॥३५॥ अज्जवि किंपि नहु गयं  
पडिज्जसु मासु अप्पणो गेहं । सरहं सरहसमणुसरिय मरसि किं मयगुलव्व तुमं ? ॥३७॥ इय सोउं दूयवयणं करेणुदत्तो समु-  
च्छलियकोवो । तिवलियतरंगभंगुरवयणो इय भणिउमारद्वो ॥३८॥ अहह भमंतो भिक्खं समागओ देसिओ इमो कोई । दासीधूया-  
दाणेण तोमिओ पोसिओ य मिसं ॥३९॥ उम्मायग इव संपइ पिच्छह अह किहणु जंपए पावो ? । अहवा निम्मेराणं ह्वंति  
एवंविहुद्दाया ॥ ४० ॥ ता रे दूयाहम दुद्ध धिद्ध ओसरसु मज्झ दिट्ठिपहा । साहेहि तस्स वइदेमियस्स गंतुं इमं वयणं ॥४१॥  
एगोऽहमागओचिय मडक्खियं मा गहेवि नस्सिहिसि । कप्पडियाणं वइदेसियाण पायं मुलहमेयं ॥४२॥ अह दयमुहा कुमरो सोउ

ब्रह्मदत्त-  
कथा

॥३६०॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३६१॥

इमं समरसञ्जसयलवलो । वज्रंतविजयदको पत्तो लहु तस्त पासंमि ॥४३॥ तो सो अजुज्झसजो रणसजं पिक्खिऊण निवपुत्तं । खुद्धो विमुत्तु सव्वं श्चि पलाणो चडिय तुरयं ॥४४॥ अह गहिउं रिउलच्छि हत्थे पत्तो कुसग्गनयरंमि । तुट्ठो विजयनरिंदो जुवरायपयंमि तं ठवइ ॥४५॥ कइयावि महिंदजरेण परिगयं अप्पयं मुणिय राया । तं ठाविय नियरज्जे एवं अणुसासणं कुणइ ॥४६॥ वच्छ ! तुमं रज्जमिमं पालिज्जमु तह कंहंपि सयकालं । जह मह न देइ दोसं सहाचकुडिलो खलो लोओ ॥४७॥ अन्नायसहावेणं देसंतरिओ निवो कओ रत्ता । इय जंपिरं जणमिमं इहरा को वारिउं सको ? ॥४८॥ परिभाविज्जसु सययं रज्जं च कुलं च नायमग्गं च । धम्मं च पुषपुरिसक्कमं च किं सुबहुभणिण्ण ? ॥४९॥ इय तं सिक्खविऊणं परलोयपहं गओ विजयदेवो । सोगाउलेण तेणं विहिओ से देहसकारो ॥५०॥ कमसो अ अप्पसोगो धम्महिगारे जणं कुणइ अकरं । वंदेइ जिणे पालइ रज्जं नीईइ सिद्धनिवो ॥५१॥ इत्तो सो धम्मजसो पत्तो वीयभयनयरमह तत्थ । जं जं करेइ किरियं सा सा से बहुफला होइ ॥५२॥ यतः—अइगरुयपुत्तपवभारपरिगया जे हवंति इह पुरिसा । करगोयरं उव्वंति तेसिं जह तह समिद्धिओ ॥५३॥ तच्चिवरीया पुण गुरुसमिद्धिजुत्तावि जंति दोगच्चं । ववसायं च कुणंता लहंति मरणं अणत्थं च ॥५४॥ अह रायसुओ नियरज्जसुत्थयं काउ सरिय चिरमेरं । सव्विड्डीए पत्तो महुमासे कोसलपुरीए ॥५५॥ एवं चिय सिद्धिसुओ तो ते दिंता मणिच्छियं दाणं । लोएण पुज्जमाणा नियनियभवणं अणुपविट्ठा ॥५६॥ तुट्ठा अम्मापियरो वद्धावणयं पयट्ठियं नयरे । सव्वत्थवि वित्थरिओ अक्खलिओ तेसि जसपसरो ॥ ५७ ॥ अह अवसरंमि एगत्य संगया सिद्धदेवधम्मजसा । अकहिंसु हरिसियमणा पुच्चुत्तं निययवुत्तंतं ॥५८॥ तो भणइ निवइत्तणओ मित्त ! मए निच्छियं इमं हियए । पुत्तं निमित्तमिकं मणवंछियअत्थसिद्धीए ॥५९॥ ता तं चेव य पुत्तं जहा जहा जाइ परमवित्थारं । तह तह

ब्रह्मदत्त-  
कथा

॥३६१॥

श्रीदे०  
चेत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३६२॥

अहं संपद् जुञ्जइ खलु उज्जमो काउं ॥६०॥ अह तत्थ पहासगुरू समोसढा इय निसम्म ते हिंढा । तेसिं नमणाय पत्ता एवं  
निसुणंति धम्मकहं ॥६१॥ “जं बुद्धीण अविसयं अगोयरं जं च पुरिसयारस्स । जं इह अइदुस्सज्जं जं च ठियं दूरदेसंमि ॥६२॥  
तंपि हु पुन्नोदयओ संपज्जइ पुच्चविहियसुकयाणं । नहि हेउमंतरेणं कयावि किर जायए कज्जं ॥ ६३ ॥ तं पुण पुन्नं  
अहिगारसुद्धचिइवंदणाविहाणेण । जिणनाहपूयणेणं दाणाइं धम्मकरणेणं ॥६४॥ सुपुणिययसेवणाए निच्चं चिय धम्मसत्थसवणेण ।  
इंदियविणिग्गहेणं निम्मलसंमत्तधरणेणं ॥ ६५ ॥ आसववेरमणेणं साहम्मियवग्गवच्छलत्तेण । कल्लाणमित्तजोगेण गच्छई उवचयं  
परमं ॥ ६६ ॥” इय सुणिय पमुइयमणा निवसिट्ठिसुया गहेवि गिहिधम्मा । अहिगारसुद्धचिइवंदणाइनियमे बहुपयारे ॥ ६७ ॥  
पत्ता नियभवणेसुं कमेण अन्नत्थ विहरिया गुरुणो । अन्नदिणे सिरिहरिसो राया रज्जे ठविय पुत्तं ॥६८॥ विहिणा काउ अण-  
मणं जाओ अमरो मृहम्मकप्पंमि । अह सिद्धदेवराया रज्जदुगं पालमाणोऽवि ॥६९॥ चिइवंदणाइ किच्चं णिच्चं आयरइ न कुणइ  
पमायं । धम्मंमि सुथिरचित्तो असोहणिजो सुरेहिंपि ॥७०॥ धम्मजसो पुण पइदिणवडुंतधणोवि लोभदोसेण । धम्मंमि पमायंतो  
दइं नरिंदेण इय बुत्तो ॥७१॥ ‘दुल्लहो माणुसो जंमो, धम्मो सव्वज्जुदेसिओ । साहुसाहंमियाणं च, सामग्गी पुण दुल्लहा ॥७२॥  
चलं जीयं धणं धन्नं, वंधुमित्तसमागमो । खणेण दुक्कए वाही, ता पमाओ न जुत्तओ ॥७३॥ न तं चोरा विलुंपंति, न तं अग्गी  
विणासए । न तं जूपवि हारिजा, जं धम्मंमि पमत्तओ ॥ ७४ ॥ ता सोम ! तं वियाणंतो, मग्गं सव्वज्जुदेसियं । पमायं जं न  
मिल्हेसि, तं सोइमि भवन्नवे ॥७५॥’ सो भणइ देव ! अच्छा लच्छिविच्छडुमंडिया तुच्चे । पडिपुन्नपुन्नपसरा न दुत्थयं जाणह  
परस्म ॥७६॥ राया जंपद् नियभुयसमजिए पुव्वपुरिसपत्ते य । संतेवि पउरविभवे का तुह मणदुत्थया ? मित्त ! ॥७७॥ किच्च-

ब्रह्मदत्त-  
कथा

॥३६२॥



श्रीदे०  
 वैत्य० श्री-  
 धर्म० संघा-  
 चारविधौ  
 ॥३६३॥

निस्सो धणं धणी रञ्जं, राया चकित्तमिच्छइ । एवं अञ्चिन्नवित्तिञ्चा, खयं वधंति बालिसा ॥७८॥ ता संतोमसमंतेण लोहदोसं लहुं  
 विणिग्गहिउं । मित्त! चइत्तु पमायं समुज्जओ होसु धम्मंमि ॥७९॥ पूयसु जिणपडिमाओ वंदसु देवेऽहिगारपरिसुद्धे । रत्तो दक्खि-  
 न्नेणं एवंति पवजए सोऽवि ॥८०॥ विहिमुद्धधम्मरसिओ संनासं काउ सिद्धदेवनिवो । अञ्चुयकप्पंमि गओ महाविदेहम्मि सिज्झि-  
 हिइ ॥८१॥ जणलजाए रायाणुवित्तिओ भावणविहीइ विणा । चिइवंदणाइ धम्मं जहा तहा काउ धम्मजसो ॥ ८२ ॥ मरिऊणं  
 उवन्नो सोहम्मे आभिओगिओ तियसो । पलियाऊ पउमुत्तरविमाणवासिस्स देवस्म ॥८३॥ अणिसं आणाकारी अणुतप्पंतो पए पए  
 मुपहुं । हा हा किमवरजंमे मए कयं असुहकम्मंति? ॥८४॥ एमाइ झरमाणो गुत्तीखित्तव्व पूरिय नियाउं । तो चविउं सो जाओ  
 जिणदत्त ! तुहेस अंगरुहो ॥८५॥ भो वंभदत्त ! तुमए नरवरमित्ताणुवित्तिवसणेण । भावेण विणा विहिविरहिओ पुरा जं कओ  
 धम्मो ॥८६॥ सो निरणुबंधयाए सुहलेसं दाउ किंपि अमरेसु । इण्हि पुण तुब्भ दोगचदाणेण परिणओ एवं ॥ ८७ ॥ यतः—  
 “विहियंमि भावरहियं कदंमि ईसि मुहं विहिय पुन्नं । जणइ दुरंतमरस्सं भववित्थारं जओ भणियं ॥ ८८ ॥ कायकिरियाइजोगा  
 खविया मंडुफुत्तुत्तुत्ति । ते चेव भावणाए विदइत्तञ्जारतुत्तुत्ति ॥ ८९ ॥ किंच-विहिसुद्धमणुत्तुत्तं सुभापणाभावियं भरीण  
 राणा । निहणेइ कम्मजालं सिद्धस्स व छरदेवस्स ॥९०॥” को एसो? इय पुट्टो जिणदत्तसुएण जंपए नाणी । आसि कुणालानय-  
 रीइ मूरदेवुत्ति पुरसिद्धी ॥९१॥ वसुमित्तधरिपासे बाहुमुवाहुत्ति मांयरो दिक्खं । विगइअभिग्गहजुत्तं गिण्हंते नियइ स कयावि  
 ॥९२॥ अह ते मुणिणो गुरुणा पसंसिया सयलसंघपच्चक्खं । वञ्छा! तुब्भे धन्ना जेहिं कओ विगइनियमोऽयं ॥९३॥ यतः—“विगइं  
 विगईभीओ विगइगयं जो उ भुंजए साह । विगई विगयमहावा विगई विगयं बला नेइ ॥९४॥ वियई पररिणयधम्मो मोहो जमु-

ब्रह्मदत्त-  
 कथा

॥३६३॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३६॥

दिञ्जए उदित्रे य। गुदृवि चित्तजपपरो कंहं अकजे न वट्टिहिइ? ॥९५॥ किंच-विभूसा इत्थिसंसग्गी, पणीयं रसभोयणं। नर-  
स्मत्तगवेमिस्म, तिसं तालउडं जहा ॥ ९६ ॥ ता सबहावि धन्नाण वेव रसचागवासणा होइ। जिचे इमंमि रसणिदियंपि अवलं  
कियं नेत्र ॥ ९७ ॥ अचले य तंमि पायं सवेसि इंदंदियाण अवलत्तं। दट्टव्वं तप्पच्चइयमेव जं तेसि सामत्थं ॥ ९८ ॥ किंच—  
अरुखाण रमणी कंमाण मोहणी तह वयाण वंभवयं। गुत्तीण य मणगुत्ती चउरोऽवि दुहेण जिप्पंति ॥९९॥” ता निच्चला हविज्जह  
पत्थुयमद्दम्मरुम्मविमयंमि। तेऽवि तहत्ति पडिच्छंति सीसवीसंतकरकमला ॥१००॥ ता म्हरदेवसिद्धो गिहिधम्म गहिय नमिय ते  
मुणिणो। पत्तो नियंमि गेहे अन्नत्थ य विहरिया गुरुणो ॥१०१॥ किच्चिरकालं वाहिं विहरिय पत्ता तहिं पुणो गुरुणो। तत्थेणेणं  
मुणिणा पडिअन्नं अणमणं विहिणा ॥ १०२ ॥ तं नंतुं गच्छन्तं राईसरपमुहवहुज्जणं दट्टुं। जिणपवयणपडिकूलो पुरोहिओ भणइ  
मनरनित्रं ॥१०३॥ देव! महंतमजुत्तं पारदं इत्थ सेयमिक्खुहिं। राजा-नणु पयइउवसमीहिं इमेहिं किं कीरइ अजुत्तं? ॥१०४॥  
पुरो-ण्णो मुणी अराले मन्नासेणं करेइ इह कालं। राजा-तं निस्सेयसब्भुदयकारणं गिञ्जए सत्थे ॥१०५॥ तथाहि-द्वावेव पुरुषौ  
लोके, चंद्रमण्डलभेदिनौ। परिव्राड्योगयुक्तश्च, मूरथाभिमुखो हतः ॥१०६॥ ता इह किंपि अजुत्तं न अत्थि पुरो-नणु दट्टु  
किंपि उरपायं। मह वयणं मन्निस्सह इय भणिय ठिओ स मोणेण ॥१०७॥ अह निवपुत्तो मुत्तो डक्को रयणीइ कसिणसप्पेण।  
मुत्तो नरिंदविदारएहिं नणु कालडक्कुत्ति ॥ १०८ ॥ गुरुसोयभारविहुरो राया बुत्तो पुरोहिणणेवं। तं देव! अजुत्तमिणं जं वो  
कहियं मए आसि ॥१०९॥ जइ पुण अज्जयिएए निद्दाडसि समणगे सदेसाओ। ता तुह सुयस्स रक्खा काविहु कइयावि किरहोइ  
॥११०॥ तं सोउं मूढेणं नरवड्ढणा वलचरो समाइट्टो। लहु गंतु इमे समणे नीहारसु मज्झ देसाओ ॥१११॥ जमपुरिससरिस-

ब्रह्मदत्त-  
कथा

॥३६४॥

श्रीदे०  
चेत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३६५॥

असरिसअमरिसवसमिसिमिसंतजोहजुओ । समणे निव्यासेउं उवड्ढिओ तलवरो जाव ॥११२॥ विहिविहियभावसभावसारदुद्धर-  
तवाणुभावेण । ताव समुप्पन्नअगण्णलद्धिवहुसिद्धिकल्लिएण ॥११३॥ चुन्निज्ज चकवड्ढि उप्पन्ने सिंगनादकजंमि । जइ तं न करेइ  
मुणी भवे तथाऽणंतसंसारी ॥११४॥ इय सुयमणुमरमाणेण माणअवमाणतुल्लमणसाऽवि । कुमयगहराहुणा वाहुसाहुणा थंमिआ ते उ  
॥११५॥ तं सोउं भयमीओ संतेउरपरियणो निज्जे तुरियं । गंतूण तत्थ गुरुणो मुणिणो स्वामेइ पुणरुत्तं ॥११६॥ भणिओ निवो  
गुरुहिं तं धम्मो जस्म तुज्झ देसंमि । मुणिणो निप्पच्चूहं कुणंति परलोयहियमेवं ॥११७॥ मा संकेजसु नरवर ! जइजणकिचेण  
जायए असिवं । पुव्वकयअसुहमेवं अवरज्झइ सयललोयस्स ॥११८॥ एवंति भणिय राया राहुमुणिं स्वामए विसेसेण । उत्तंमिओ  
तओ तेण तलवरो सपरिवारोऽवि ॥११९॥ तं दट्ठु मुणिपभावं तप्पयसंफुसियरेणुनियरेण । तच्छायाऽविय कुमरो रण्णा सवंग-  
मामुट्ठो ॥१२०॥ पीऊसपोससित्तुव निवसुओ विसवियारपरिमुक्को । सुत्थो खणेण जाओ राया पुण सावएसु वरो ॥१२१॥ इत्थं-  
तरंमि अणसणपवन्नसाह महिड्ढियजणेण । कीरंतमहामहिमो मरिउं पत्तो तइयकप्पे ॥ १२२ ॥ विहिया परमा जिणपवयणउन्नई  
रायपमुद्दलोएण । तो छरदेवसिद्धी नमिय गुरुं विन्नवइ एवं ॥ १२३ ॥ मुणिनाह ! किहणु वाहसाहुणो बहुविहाउ लद्धीओ । एवं  
विहाउ सुतवे समेऽवि न उणो सुवाहुस्स ? ॥१२४॥ आह गुरु एए खलु लद्धिविसेसा हवंति सुतवेण । विहिभावणापरेणं न कयावि  
जहातहकएण ॥ १२५ ॥ विहिभावविगलयाए कट्ठाणुट्ठाणकारिणोऽवि मिसं । सिद्धि ! इमा लद्धीओ सुवाहुमुणिणो कह हवंतु ?  
॥१२६॥ इय मुणिय छरदेवो संवेगगओ गहेइ पव्वजं । वसुमित्तगुरुसमीवे विहिभावपरो य कुणइ तवं ॥१२७॥ कमसो अहिजि-  
यसुओ विहरंतो संपयं इहं पत्तो । उप्पन्नविमलनाणो धम्मं साहेइ सो उ अहं ॥१२८॥ इममायन्निय जणयं पुच्छेउं केवल्लिस्स पासंमि ।

बन्धुदत्त-  
कथा

॥३६५॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥३६६॥

गिण्हेइ वंभदत्तो दिक्खं सुविमुद्धपरिणामो ॥ १२९ ॥ भावणपहाणविहिपुव्वधम्मअहिगारसारतवनिरओ । केउलकलाइ कलिओ  
सिवं गओ वंभदत्तमुणी ॥१३०॥ इत्येउमाऊण्यं सकण्णलोकाश्चित्रं चरित्रं जिनदत्तसूनोः । सदाऽधिकारस्मरणादिशुद्धे. यत्नं कुरुध्वं  
जिनपंदनेऽसिन् ॥ १३१ ॥ इति ब्रह्मदत्तकथा, इत्युक्तं 'चार अहिगार'त्ति द्वादशं द्वार, संप्रति 'चउवंदणिज्ज'त्ति त्रयोदशं  
द्वार समधिकपूर्णाद्विपदेनाह—

चउ वंदणिज्ज जिणमुणिसुयसिद्धा इह

चत्वारो वंदनीयाः सुमतिकन्यक्येव मंगलोत्तमशरणविधायित्वेन स्तुतिप्रणामाद्यर्हाः, के ते इत्याह—जिनाश्चतुर्विधा वक्ष्य-  
माणस्वरूपाः १, मुनयश्च—साधवो गच्छगतादिभेदभिन्नाः, आचार्योपाध्याययोस्तु साधुत्वाव्यभिचारात् साधुग्रहणात् ग्रहः, उक्तं  
च—“साहुत्तसुट्टिया जं आयरियाई तओ य ते साह । साहुगहणेण गहिय”त्ति २, श्रुतं च—अगानंगप्रविष्टं ३ सिद्धाश्च—क्षीणा-  
शेषकर्मणः ४, इहेति संपूर्णचैत्यवंदनाया जिनशासने वा, यद्वा त्रैलोक्येऽपीति, सुमतिकन्याकथा चैत्रं—अत्थिह पुव्वविदेहे सीया-  
नइदाहिणेण वरविजए । रमणिज्जे वरनयरी सुभगा सुभगामिमणलोया ॥ १ ॥ सरभमनमंतसोलसनिउसहसकिरीडधिट्टपयवीढा ।  
पालंति तमपराइयअनंतवीरियत्ति बलविण्हू ॥ २ ॥ पावऊरणाउ निरया निरया निचंपि धम्मऊरणम्मि । विरयत्ति अग्गमहिसी  
आसी अवराइयवलस्स ॥ ३ ॥ तीसे धूया सुमई बालत्ताओवि धम्मऊरणमई । दुच्चरतउचरणरई चिरण्णलावन्नविजियसई ॥ ४ ॥  
अहिगपजियाइत्ता जिणमुणिसुयसिद्धवंदणपत्ता । जिणधम्मरागरत्ता निरुउमरूवेण संजुत्ता ॥ ५ ॥ पालियवरजीवदया सिसु-  
भावेविहु गहियगिहिसुवया । आवस्सयाइनिरया भावइ सुहभाउणाओ सया ॥६॥ उवत्तासपारणे गंतु चेइए सा कयावि जिणनाहं ।

वन्दनीय-  
चतुष्कं

॥३६६॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री०  
मं० संया०  
पारविभौ  
॥३६७॥

पूँश्य पडिपुत्रविद्विह ए वंदिउं काउ पणिहाणं ॥ ७ ॥ आगम्म नियावासंमि पारणट्टा इमा समुवविट्ठा । चित्तइ पसन्नचित्ता एवं दारं  
पलोयंती ॥ ८ ॥ जइ इत्थ मज्झ गुरुपुत्रपेरिओ कोवि एइ सुमहप्पा । अन्नं धम्मंमन्ना ता एयं दाउ पारेमि ॥ ९ ॥ इत्तो य गय-  
ममत्तो दुघरतवचरणकरणआसत्तो । मलमइलवत्थगतो सयवत्तपवित्तचारित्तो ॥ १० ॥ इरिआए आउत्तो चंदुअलसीलपालणु-  
ज्जुत्तो । तस्स दुवारे पत्तो साहू नामेण चरदत्तो ॥ ११ ॥ तं ददत्तु अहो मह पुत्रपगरिसो एरिसो मुणी जेण । इह इण्हि आगओ  
रयणवृट्टिसरिसो दरिहगिहे ॥ १२ ॥ इय मन्नंती उट्टिय ससंभमं गहिय थालमणुगिण्ह । भयवं ! ममंति भणिरी तं पडिलाभइ पवर-  
सद्धा ॥ १३ ॥ तो चित्तवित्तपत्ताण जोगओ तत्थ पंच दिव्वाणि । पाउब्भूयाइं इओ गओ सठाणं तु स महप्पा ॥ १४ ॥ दददृण रयण-  
वृट्टि समागया रामकेसवा तत्थ । चित्तंति विम्हियमणा धन्नमपुत्रा इमा कन्ना ॥ १५ ॥ जम्माउवि अरुलंका दुरुज्झियसयलपावमल-  
पंका । संमत्ते निस्संका सुहनिजियपुंनिममयंका ॥ १६ ॥ देमो सयंवरं ता इमीइ इय चित्तिउं समाहूया । विजयद्धनियामिनिया ममा-  
गया झत्ति तेऽपि तहिं ॥ १७ ॥ थंभसयसंनिविट्ठो लीलट्टियसालभंजियवरिट्ठो । अमरमणाणवि रइओ सयंवरामंडवो रइओ ॥ १८ ॥  
तो फणयफलसण्हाया वरहरिचंदणविलित्तसव्वंग्गा । वरवत्थाभरणधरा सिरउवरिं धरियसियलत्ता ॥ १९ ॥ वीइज्जंती नियचा-  
मराहिं करकलियविमलवरमाला । पडिहारदंसियपहा पत्ता सुमईवि तम्मज्जे ॥ २० ॥ इत्थ—वेहलियगरुयवन्नं चामीयरचारु-  
वेइयालंभं । धुव्वंनधयपडागं उज्जोर्वितं दसदिसागं ॥ २१ ॥ नयणमयपिच्छणिज्जं आगच्छंतं नहंमि म्मणिज्जं । पिच्छंति  
वरविमाणं ते रायाणो अट्टपमाणं ॥ २२ ॥ तंमज्जे वरमणिरयणजडियसीहामणंमि उवविट्ठं । एगं देवं नियकंतिपंनिउज्जोइयदि-  
यंतं ॥ २३ ॥ अह गा सुमई ते रामकेमवा भूमिवासवा ते उ । विम्हइयमणा उहुंकयवयणा जाय पिच्छंति ॥ २४ ॥ किणिकिणिर-

सुमतिक-  
न्याकया

॥३६७॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
घर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३६८॥

किंकिणीजालमालमागय विमाणमह तत्थ । तो देवी ओयरिया किंनरगिज्जंतविमलगुणा ॥२५॥ ठाउ सयंवरमंडवमज्जे सीहा-  
सणे तओ देवी । उक्खिविय कमलदलकोमलं करं दाहिणं भणइ ॥ २६ ॥ हे धणसिरि मुद्धे बुज्झ बुज्झ मा मुज्झ मज्झ निसु-  
णाहि । एगगमणा धणियं खणमेग हियंकरं वयणं ॥ २७ ॥ किंनु कहिस्सइ एसा उ भयवती इय निवावि ते जाया । सकल-  
कलाविहु असकलकला तहिं सावहाणमणा ॥२८॥ अह सा देवी जंपइ पुक्खरदीवडुपुव्वभरहंमि । नंदणवणमत्थि पुरं बहुप्पियं  
नंदणवणं व ॥२९॥ तत्थ पभूयसुरयणो अत्थि महिंदो निवो महिंदुव्व । तस्स पिया णंतमई न तम्मई सीलभरवहणे ॥३०॥ अंक-  
गयसुरहिवरकुसुमदामदुगसुमणसइया धूया । जाया तीइऽभिरामा कणयसिरी धणसिरी नाम ॥३१॥ अन्नसिणेहाओ गयाउ  
ताओ कयावि कीलेउं । सिरिपव्वयवरसेलं फुरंतकरुणं मुणिमणं व ॥३२॥ तत्थ सुहज्झाणठियं नियंति नंदणगिरंति अणगारं ।  
माणससरं व सञ्जासयं सया संवरसमेयं ॥३३॥ तं ददुत्तु तुट्टहियया हियावहं तिहुयणस्सवि मुणिंदं । वंदंति ताउ भत्तीइ इय धम्मं  
कइइ साहूवि ॥३४॥ “दुलहं लहिय नरभवं भविया ! भवियत्तयानिशोगेण । चिइवंदणाइधम्मं करेह जइ महह सिवसंमं ॥३५॥  
यतः—पूया जिणिंदेसु रई वएसु, जत्तो य सामाइयपोसहेसु । दाणं सुपत्ते सवणं सुत्तित्थे, सुमाहुसेवा मिवलोयमग्गो ॥३६॥” तो  
ताओ पडिवज्जिय संमं संमत्तमूलगिहिधम्मं । नमिय मुणिं गंतु गिहं कुणंति इय धम्ममपमत्ता ॥३७॥ पूयंति जिणे सेवंति मुणिगणे  
तह पढंति सिद्धंतं । पालंति वए सिद्धे नमंति चिंतंति तत्ताइं ॥३८॥ कीलंतीउ कयाविहु असोगवणिपाइ ताउ रागवसा । तिपुरा-  
हिववीरंगयखेयरपावेण अवहरिया ॥३९॥ अह सपियसामलाए भणिओ ता कहवि मुयइ स नहत्यो । वंसकुडंगीउवरिं भूयोऽवि  
चरुणनइतीरे ॥४०॥ पडिहारेणं पहयाउ ताउ दुन्निवि प अप्पणो तत्तो । मरणंतमावयं जाणिऊण चिंतंति इय चित्ते ॥४१॥ रे जीव !

सुमति-  
कन्याकथा

॥३६८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥३६९॥

कयं तुमए जं पुषिं तं उवागयं इण्हि । परितावेण न छुटसि सुहपरिणामेण सह सव्वं ॥४२॥ जइ पुषविहियदुकयवसेण तुह आगयं  
इमं दुक्खं । ता रे जिय ! मा कुप्पसु परेसु वीरंगयांसु ॥४३॥ तं पत्थियंपि जत्तेण होइ नहु इह न जं कयं पुषिं । तो दुहसुहाण  
नूणं निमित्तमित्तं परो होइ ॥ ४४ ॥ जं न कओ पुव्वभवे धंमो रे जीव ! सुंदरो विउलो । तेण तुहं इह दुक्खं संजायं दारुणं दुसहं  
॥४५॥ संविग्गभावियाओ इय ताओ अणसणं विहेऊण । जिणसिद्धसाहुधम्मे चउरो सरणं पवज्जंति ॥४६॥ नवकारसुमरणपरा कण-  
गसिरी मरिउ तत्थ उववन्ना । इंदस्स अग्गमहिसी नवमिया नाम सा य अहं ॥४७॥ वेसमणअग्गमहिसी धणसिरी नाम तं पुणुप्पन्ना ।  
तो चविय तुमं जाया बलदेवसुया सुमइ भदे ! ॥४८॥ इय आसी णे तइया संकेओ जा इओ चइ पढमा । इयरीहिं चोहियव्या  
सा भवसयदुलहजिणधम्मे ॥४९॥ ता तुह पडिवोहकए इहागया भइणि ! तुज्झ मा मुज्झ । इह विसयसुहलवेणं सरेसु पुव्वकय-  
सुकयाइं ॥५०॥ तथाहि-जिणजंमणमहिमाओ जा विहियाउ सुमेरुसिहरंमि । जं नंदीसरदीवे सासय इयराओ जचाओ ॥ ५१ ॥  
तथा चागमः-दो सासयजचाओ तत्थेगा होइ चित्तमासंमि । अट्टाहियाउ महिमा वीया पुण अस्सिणे मासे ॥५२॥ तह चउमासि-  
यतियगे पज्जोसवणाइ तह य इय छुणं । जिणजम्मदिकख्खेवलनिव्वाणाइसु असासइआ ॥ ५३ ॥ जे वंदिया य दुक्खरतवचरणा  
चारत्ताइरसमणा । जं तम्मुहाउ निसुयं वीयभवे सिज्झिहिह तुज्झे ॥ ५४ ॥ जं ण्हवियपइयाओ जयंतमुणिमाइसिद्धपडिमाओ ।  
जं भर्त्ताइ नमियं दुवालसंगंपि सिद्धंतं ॥५५॥ भदे ! धणसिरि बुज्झसु एयं सव्वंपि अहह मा मुज्झ । जंमंतरियाइ तए भो क्ह  
विस्नारियं नव्वं ? ॥५६॥ सा सद्धा तुह धम्मे ताइं तुमे जंपियाइं विविहाइं । किं वीसरियाइं तुमे जेणं मंदादरा धम्मे ? ॥५७॥  
जइ निज्जति पडिउं जे संनारमहासमुदमज्झंमि । वरजाणवत्ततुळं ता पव्वज्जं पव्वजेहि ॥५८॥ इय भणिउं उप्पइया देवी आरु-

सुमतिक-  
न्याकथा

॥३६९॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३७०॥

हिय नियविमाणंमि । मुञ्जानिमीलियच्छी पडिया धरणीइ ता सुमई ॥५९॥ हा किमिणंति ससंभमचंदणसित्ता पुणागयसच्चित्ता ।  
तो एवं सा सुमई तं निवनिवहं भणइ सुमई ॥६०॥ भो ! भो ! उत्तमनखरकुलणहयलविमलपुन्निममयंका । निसुणेह नखरिंदा !  
विन्नात्तिं मज्झ एगमणा ॥ ६१ ॥ जं जंपियं इमीए महाणुभावाइ सकदेवीए । तं जायं पच्चक्खं सव्वं मह जाइसरणेण ॥ ६२ ॥  
ता गिण्हिस्सं दिक्खं संपइ न रमइ मणं मह भवंमि । अणुजाणावेवि तुमे जमागया मह कए सव्वे ॥६३॥ तेऽवि भणंति नरिंदा  
होउ अविग्घं तुहं सुयणु धम्मे । अम्हेहिं अणुन्नाया पावेसु मणिच्छियं ठाणं ॥ ६४ ॥ तो तुट्ठा बलहरिणो सोउं तीए अणुत्तरं  
चरियं । दिक्खामहिमं परमं कारंति असेसनिवसहिया ॥६५॥ सकस्स अग्गमहिसी उ तहय वेसमणअग्गमहिसीओ । पूयं करिंति  
तीसे न तारिसे को णु पूइजा ? ॥६६॥ कन्नासएहिं सत्तहिं समन्निया सुव्वयज्जपासंमि । निक्खंता खायजसा गिण्हइ दुविहं च सा  
सिक्खं ॥६७॥ इगतीसं सिद्धगुणा ज्ञायंती जिणवरे य सुमरंती । पणविहसज्झायपरा बहुमाणा सा मुणिजणंमि ॥६८॥ उल्लसियसिय-  
ज्झाणानलदहियअसेसकम्मसंताणा । पडिबोहिय भवियजणे सिद्धा सुमई अणंतगुणा ॥६९॥ इति हि सुमतिकन्यावृत्तमाकर्ण्य धन्याः!,  
श्रुतजिनमुनिसिद्धान् विश्वविश्वप्रसिद्धान् । भवजलनिधिसेतून्मोक्षहेतून् समस्तान्, प्रतिदिनमसपत्नं वंदितुं धत्त यत्नम् ॥७०॥ इति  
सुमतिकन्याकथा ॥ इत्युक्तं चत्वारो वंदनीया इति त्रयोदशं द्वारं, संप्रति 'सरणिज्ज'त्तिं चतुर्दशं द्वारं गाथाद्वितीयपादाद्धेनाह—  
इह सुरा य सरणिज्जत्ति । इहशब्दः पूर्वद्वारे संयोजितोऽपि डमरुकमणिन्यायेनात्रापि संबध्यते, ततश्च इहेति संपूर्णचैत्यवंदनायां  
क्रियमाणायां सुराश्च मुर्यश्चेति 'पुरुषः स्त्रिये'त्येकशेषे सुरास्ते चात्र यक्षांबाप्रभृतयः सम्यग्दृष्टिदेवता ज्ञातव्याः, न त्वहंतः, तेषां प्राग्वंद-  
नीयत्वेनोक्तत्वाद् अनुशासकत्वात् स्मारकत्वाच्च, एते च किमित्याह—सरणिज्जत्ति, सरणीयास्तद्गुणानुचितनोत्कीर्तनादिनोपबृंहणीयाः,

सुमति-  
कन्याकथा

॥३७०॥



श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संया-  
चारविधौ  
॥३७१॥

स्तवनीया इत्यर्थः, श्लाघ्यश्च जिनप्रवचनस्थः स्वल्पगुणोऽपि, सम्यग्दृष्टिप्रशंसायाः कर्मक्षयकारणत्वात्, उक्तं च-“गुणपगरिस-  
वहुमाणो कम्मस्वयकारणं जेणं”ति, नैवं चेत् तदोत्तरसंयमस्थानवर्तिभिः साधुभिर्जघन्यनरादिसंयमस्थानवर्तिनः साधवोऽप्यनु-  
पयुंहणीयाः स्युः, तैश्च नियमादिषु दृढाः श्रावकाः, न चैतदागमे दृष्टमिष्टं वा यद् गुणिनां गुणा न प्रशस्याः, दर्शनमालिन्याद्य-  
वाप्तेः, आह च-“नो खलु अप्परिवडिण्णि निच्छयओऽमइल्लिए व सम्मत्ते । होइ तओ परिणामो जत्तो अणुववूहणाईय॥१॥”ति,  
देशविरतानां वा अविरतानां वा अविरतसम्यग्दृष्टयः श्राद्धाः सत्काराद्यर्हा न स्युः, तथा च सति “तम्हा सव्वपयत्तेणं, जो नमु-  
फारधारओ । सावओ सोऽवि दट्टच्चो, जहा परमबंधवो ॥१॥” इत्याद्यपार्थक्यं स्यात्, एवं च सकलागमव्यवहारलोपाद्, विमर्शनी-  
यमिदं दृक्ष्मधिषेति, यद्वा सारणीयाः-सरणादिषु प्रेरणार्हाः, तत्र पम्हुट्टे गाहा, अयमर्थः-वैयाघ्र्यादिकारका गीयंते, तत्र चाना-  
दरवतां भवतां तत् किं स्वकृत्यमपि विस्मृतं?, न युक्तमत्र प्रमादयितुं, दुर्लभा हि पुनरियं सामग्री, दुःखदः प्रमादारिर्दुरंतो भवो-  
दधिविनिपातः स्वनामैव सत्यापयतीत्यादिव्यंग्यार्थगर्भतद्विशेषणद्वारेण सारणादि क्रियते, अथवा सारणीयाः संघादिकृत्ये वैया-  
घ्र्यप्रभावनादावुभयलोकसुखावहे प्रेरणार्हास्तत्करणशक्तियुक्तत्वात्तेषां, इदमुक्तं भवति-यदाऽमुकं संघे प्रभावनादि करिष्यथ तदाऽहं  
कायोत्सर्गादिकं पारिष्यामीत्यादिना सुदर्शनप्रियामनोरमाया इव तत्र २ संवहृत्ये प्रवर्त्तयितव्याः, अत्र चायं निशीथचूर्ण्युक्तो  
विधिः-पुत्रं अणुसिद्धी किज्जइ, थुइत्ति भणियं होइ, अणुसिद्धी थुइत्ति एगट्टेति भाष्यवचनात्, साहु कयं ते एवं वुच्चइ, जहा चंपाए  
सुभदा नागरजणेण अणुसट्टा धन्ना सपुण्णा सत्ति, तओ उवालंभो दिज्जइ, साणुणओवएसपयाणं कीरत्तित्ति वुत्तं भवइ २ पच्छा सो उ  
उवग्गहो किज्जइ ३, भणियं च-दाणे दवावणे कारणे य करणे य कयमणुत्ताए । उवहियमणुवहियं वा जाणाहि उवग्गहं एय-

सुरस्मर-  
णादि

॥३७१॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० सघा  
चारविधौ  
॥३७२॥

॥१॥ न्ति, सुदर्शनश्रेष्ठिप्रियामनोरमाकथा त्वियं-चंपायां पुरि दधिग्राहनस्य नृपतेर्द्विधा दयितकीर्त्तः । अभयाख्याऽभूद्देवी देवीव  
मुरूपरूपधरा ॥१॥ तत्रैव ऋषभदासः श्रेष्ठी श्रेष्ठैरुक्कर्मकरणचणः । अर्हद्दासी भार्या महिपीरक्षाकरः सुभगः ॥२॥ सोऽन्येद्युः  
शिशिरतो दिनात्यये सैरिभीः समादाय । वनतो निवृत्त उत्सर्गसंस्थमैक्षिष्ट मुनिमेकम् ॥३॥ तमगणितहिमानीपातवेदनं क्षणमुपास्य  
सन्न ययौ । ध्यायंस्तमेव रात्रिं निनाय निद्रादरिद्रोऽसौ ॥४॥ गत्वा प्रगे मुनिं तं यावदयं नमति पर्युपास्ते च । स नमो अरिहंताणं  
इत्युक्त्वा स्व ययौ तावत् ॥५॥ नून रगामिनीयं विद्येति पपाठ मततमशठमनाः । तमपीपठदथ लष्टः श्रेष्ठी सकलं नमस्कारम् ॥६॥  
वर्षासमयेऽन्येद्युर्महिपीः परतीरगा निवारयितु । सरिदंतरदाज्जंषा गुणयन्नुच्चैर्नमस्कारम् ॥७॥ चिकणचिकखल्लचहुड्डीकीलपिद्रोदरः  
क्षणात् प्राप । मृत्यु पंचनमस्कारस्तुति गुणयन् सुभगाशयः सुभगः ॥८॥ तत्रैव ऋषभदासार्हदास्योः प्रवररूपलाग्न्यः । स्रुनुः  
सुदर्शनाख्योऽजनि रजनिऋवावदातयशाः ॥९॥ उपयेमे सुमनोमुकुलाकृतिं स तु मनोरमा कन्याम् । असपत्नशीलरत्नालंकारा जिनमते  
निपुणाम् ॥१०॥ कपिलः पुरोहितस्तस्य मित्रमभवत्ततो भृश श्रुत्वा । कपिलाख्या तद्भार्या सुदर्शगुणणान् सुरूपादीन् ॥११॥ अनुरक्ता  
ग्रामगते भर्त्सरि तत्तन्वपाटमिपेण । निन्ये तं निजसन्ननि रिरमुरथ तमार्थयत् बहुधा ॥१२॥ स तु मोचितवास्तस्या अपंडिते !  
पंडकोऽहमित्युक्त्वा । नैको गंता परगृहमित्यभिजग्रहे तटा सुमनाः ॥१३॥ कपिलसुदर्शनसहितो राजा रतुं गतोऽन्यदोघाने । कपिला  
पद्सुतसंयुतमनोरमायुगभयाऽपि मुदा ॥ १४ ॥ कपिला प्राक्षीदभया मनोरमा वीक्ष्य देव ! केयं स्त्री ? । साऽऽह सुदर्शनगृहिणी  
कपिलोचे तर्हि कथमस्याः ॥१५॥ एतावंतस्तनया ? यत्पतिरस्या नपुंसको राज्ञी । आह कथं बुबुधे त्वं ? कपिलाऽऽख्यत् पूर्ववृ-  
त्तान्तम् ॥१६॥ प्रोचे विहस्य राज्ञी सत्यं पंडोऽयमन्यवनितासु । नून विदग्धधुर्येण तेन त्रं वंचिता मुग्धे ! ॥१७॥ कपिला सम-

मनोरमा-  
कथा

॥३७२॥

धीदे०  
चैत्य०धी  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥३७३॥

न्युञ्जे मसि ! रमयति यद्यमुं विदग्धां त्वाम् । तन्मन्ये साऽप्युने लघु रमितमिमं मया विद्धि ॥ १८ ॥ इति ते त्रियादविशेषे  
क्रीडित्वा निजनिजं गते धाम । अथ पंडितया धात्र्या तद् ग्रात्वा राश्यदो जगदे ॥ १९ ॥ फणिकणरत्नं लातुं मटाकटप्रं हरेः  
ममुत्तनितुम् । गजपतिरदो ग्रहीतुं परं प्रतिजा कृता यत्नम् ॥ २० ॥ परमार्हतधौरयं सुदर्शनं रमयितुं न तु कदाचित् ।  
अदृढह हा ही मुन्ये ! तन्ननु वृहदंतरे मूढा ॥ २१ ॥ अभयाऽऽह सहृत्तं मे ममर्षयानीय तदनु भलिताऽहम् । तस्यानयनोयायान्  
सुवहन् मा चिंतयंत्यत्थात् ॥ २२ ॥ माऽथ निशि चतुर्मास्यां राज्ञी पूजामिपात् समानिन्ये । वेश्मन्यस्त्रलितमसनच्छा यक्षादिलेप्या-  
चाः ॥ २३ ॥ पश्चात् शून्यगृहस्थं सुदर्शनं विहितपौषधपतिमम् । आज्ञानुलंविभुजपुगमानीय पुरोऽमुचद् देव्याः ॥ २४ ॥ कुसुमशरश-  
रशरभिन्नहृदयया पापविभययाऽभयया । उपमर्गितः स बहुशोऽप्यचलन्न महामनाः शीलात् ॥ २५ ॥ अथ वीक्षापन्ना स्वतनुमत-  
नुकोपा विलिख्य नद्यपिशिरैः । पृच्छे कोऽपि यलात्कारममौ मयि चरीकृति ॥ २६ ॥ श्रुत्वेदं प्रादरिकास्तत्रागुर्वीक्ष्य सुदर्शनं नूनम् ।  
अत्रासंभ्रममिदमित्युक्त्वा रात्रे ममान्तरयुः ॥ २७ ॥ राजाऽभयं पृष्ट्वा जगदेऽरुस्मात् कुतोऽप्ययमिहैव । प्रकृतितचट्टकोटिमां रंतु-  
मयाचिष्ट पापिष्ठः ॥ २८ ॥ ऊचे मयैष मधीरमतीरिरे मतीरपि हताश ! किं चर्ष्यते चणका यथा तथा मूढ ! मरिचानि ॥ २९ ॥  
तदनु च बलिनाऽप्यमुना क्रतमेतत् पूच्छतं मयाऽप्युचैः । न घटत इह खल्विदमिति पुनः पुनस्तं नृपोऽपृच्छत् ॥ ३० ॥ न तु  
कृपया न किमप्याह नृपतिनाऽर्चिति न सत्तु शुद्धोऽयम् । यत्कृष्णमाद्यमिदं परललनालोलचौराणाम् ॥ ३१ ॥ कोपाटोपात्तलपर  
आदिष्टो विहितमध्यमंडनरुम् । खरयानं श्रेष्ठिरर प्रारंभे भ्रमयितुं नगरे ॥ ३२ ॥ कृतशुद्धांतागस्को निहन्यते न्यायचंचुना राज्ञा ।  
श्रेष्ठी सुदर्शनोऽमावित्युचैर्षोपयामाम् ॥ ३३ ॥ ध्रुमिह न घटत इदमिति पूच्छति पुरजने द्वाकारम् । स भ्रममाणो क्षेत्रं निजस-

मनोरमा-  
कथा

॥३७३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
परम० संपा  
चारविधौ  
॥३७४॥

दनद्वास्देशेऽगात् ॥३४॥ दृष्ट्वा मनोरमा तं दध्यौ खलु मम पतिः सदाचारः। दयिताचारश्च नृपो विधिर्ध्रुवं तदुराचारः ॥ ३५ ॥  
इदमप्यसदथवा ध्रुवमिदमस्य महात्मनः समुपतस्थे। प्रागशुभकर्म कर्मणः फलमत्रास्ति नहि प्रतीकारः ॥३६॥ एष तथाऽपि भवि-  
ष्यति निश्चित्येति प्रविश्य सदानातः। अभ्यर्च्य जिनेन्द्रार्चाः कृत्वा व्युत्सर्गमित्यूचे ॥ ३७ ॥ सुदृशां समाधिकर्ष्यः प्रवचनभक्ताः  
सुशातिकरणपराः। शाशनदेव्यो मद्भर्तुरस्ति नहि दोषलेशोऽपि ॥३८॥ श्राद्धजनमस्तकमणेः सानिध्यं यदि करिष्यथास्य लघु।  
कायोत्सर्गमिममहं तदा ध्रुवं पारयिष्यामि ॥३९॥ एतं व्यग्रस्थिताया ममान्यथाकारमनशनं भवतु। तलवरनरैरितश्च प्राक्षेपि सुद-  
र्शनः शूल्याम् ॥ ४० ॥ शाशनदेव्यनुभावात् सा सपदि स्वर्णकमलता मेजे। कौक्षेयकप्रहारास्तत्कंठे कुसुममालाऽभूत् ॥ ४१ ॥  
तं दृष्ट्वा तैर्विस्मितचकितैर्नरनाथ एत्य विज्ञप्तः। मंक्षु सुदर्शनपार्श्वं प्रययात्परिहृद्य वररुरिणीम् ॥४२॥ तं सरभसमालिङ्ग्यानुतापतप्तः  
क्षितीश इत्यूचे। श्रेष्ठिन्नासि विनष्टो दिष्ट्याऽऽस्मीयानुभावेन ॥४३॥ तावत्पापेन मया किं राज्ञा ? त्वं विनाशितोऽसि हहा। संचि-  
तसुकृतभराणां जागर्ति मत्तां परं धर्मः ॥४४॥ स्त्रीणां निकृतिगृहाणां प्रत्ययतस्त्रां निहंति यो मूढः। अविमृश्यकरः स  
पापो न परो दधिवाहनाजगति ॥४५॥ किं वाऽहमस्मि किञ्चित्पापमिदं कारितस्त्वया साधो !। यद् बहुधाऽपि हि पृष्टो न किम-  
प्याख्यस्तदा मह्यम् ॥४६॥ इत्यालपता राज्ञा करिणीमारोप्य मागधैरुचैः। व्याप्यमानशीलः श्रेष्ठी निजर्मदिरे निन्ये ॥४७॥ तदनु  
स्नातविलिप्तो वस्त्रालंकारभूषितो भुक्तः। राज्ञा पृष्टो रात्रेर्वृत्तं न्यगदद्यथावृत्तम् ॥ ४८ ॥ अभयाऽऽदिष्टा हंतुं विमोचिता श्रेष्ठिना  
नृपं प्रार्थ्य। उर्ध्वं तथापि मृता पचति हि खलु पापिनां पापम् ॥ ४९ ॥ तदनु तनुमतनुपुलकांकुरनिकरां विभ्रता महा-  
भूत्या। इभमारोह्य श्रेष्ठी राज्ञा तन्मंदिरे त्रैषि ॥५०॥ नष्टा दुश्चरितभैरकखंडिता पंडिताऽथ कुसुमपुरे। अगमत्तस्यौ पार्श्वे गणिकाया

मनोरमा-  
कथा

॥३७४॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३७५॥

देवदत्तायाः ॥५१॥ तत्रापि तथाऽशंसत् सुदर्शनं शुद्धदर्शनं नित्यम् । भृशमुत्सुका यथाऽभूत् सुदर्शने देवदत्ता सा ॥ ५२ ॥  
संस्तुतिविरक्त आचग्रतः सुदुस्तपःतपःकृशः क्रमशः । विहरन् सुदर्शनमुनिः कुसुमपुरं प्रापदेकाकी ॥ ५३ ॥ भैक्ष्यकृते स कृती  
तत्र पर्यटन् वीक्ष्य सपदि पंडितया । कथितोऽसौ देवदत्तां अजूहवत्तं तथा साऽपि ॥५४॥ भिक्षाव्याजात् स तथाऽऽहूतस्तत्राप्यगात्  
पिषायापि । द्वारं दिनं समग्रं कदर्थितो देवदत्तया बहुधा ॥५५॥ मुक्तः स तथा सायं प्रययावुद्यानमीक्षितस्तत्र । अभयाव्यंतर्याऽसौ  
बहुविधमुपसर्गितः कोपात् ॥५६॥ शुक्लध्यानवशेन प्राप सुदर्शनमुनिर्वरं ज्ञानम् । तस्य च केवलिमहिमा विधिना विदधे विबुध-  
वृन्दैः ॥५७॥ अथ तेन महामुनिना देशनया विहितया बहुलोकः । अभयादेवी धात्री प्रतिबुधुधे देवदत्ताऽपि ॥५८॥ मनोरमासं-  
स्मृतशुद्धदृष्टिदेवैः कृतं श्रेष्ठिवरस्य सम्यक् । सादिव्यभेवं विनिश्चय्य भव्यास्तेषां स्मृतौ धत्त सदाऽपि यत्नम् ॥५९॥ इति सुदर्शन-  
श्रेष्ठिकथा ॥ इति निगदितं 'सुरा य सरणिञ्ज'त्ति चतुर्दशं द्वारं, अथ 'चउह जिण'त्ति पंचदशं द्वारं विभावयिपुर्गाथोत्तरार्द्धमाह-

चउह जिणा नामद्ववणदव्वभावजिणभेएणं

चतुर्धा-चतुष्प्रकारा जिनाः, कथमित्याह-नामित्यादि, जिनशब्दोऽत्र पृथक् संबध्यते, ततश्च नामजिन १ स्थापनाजिन २-  
द्रव्यजिन ३ भावजिन ४ भेदेन-नामजिनादिप्रकारेणेति ॥ एतानेव भेदान् विभावयिपुराह—

नामजिणा जिणनामा ठवणजिणा पुण जिणिंदपडिमाओ ।

दव्वजिणा जिणजीवा भावजिणा समवसरणत्था ॥ ४ ॥

नामैव नामप्रधानतया वा जिना नामजिनाः, कथमित्याह-जिनः अर्हन् पारगत इत्यादिनामानि, यद्वा जिनानां-तीर्थकृतां

मनोरमा-  
कथा

॥३७५॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३७६॥

नामानि उसभ अजितेत्यादीनि, स्थापनया-लेप्यकर्मादिरूपया जिनाः स्थापनाजिना, जिनेन्द्राणां प्रतिमा, विचानीत्यर्थः ॥ पुनः-  
शब्दो हि न्यस्तानाकारस्थापनाजिनपरिग्रहार्थः । द्रव्यं-दलिकं भूतभाविभावकारणं तदाश्रित्य जिना द्रव्यजिना-ये अर्हत्पदवीं  
प्राप्य सिद्धा ये च तां प्राप्स्यन्ति ॥ इह रायपुरे रायासि ईसरो ईसरुव्व गयवसणो । कुसुमुजाणे पत्तो कयावि सो रायवाडीए ॥१॥  
तत्थ नवहत्थमाणं नीलुप्पलमामलं मलविमुक्कं । सच्छसिरिवच्छलंछियवच्छं वंछियपयाणपडुं ॥२॥ अदट्टत्तरअसरिससहसलक्खणं  
अस्ससेणवंसमणिं । निम्मियकाउस्सग्गं सिरियासपहुं नियच्छेइ ॥३॥ हरिसभरपुलइयंगो तुरियं ओयरिय तुरयरयणाओ । महि-  
मिलियमउलिकमलो भत्तीए नमिय पासजिणं ॥ ४ ॥ अमयमइपिव उस्मवमयं व तइल्लोयमित्तिमइयं वा । अणमिमनयणो राया  
पिच्छंतो पासपहुमुत्तिं ॥ ५ ॥ ईहापोहवसेणं च मुच्छिओ पुणवि लद्धचेयन्नो । जाइसरो सचिवेणं पुट्टो इय कहिउमारद्धो ॥ ६ ॥  
आसि वसंतपुरंमी दत्तो दियनंदणो स कइयावि । कुट्टभरविहुरदेहो गंगाइ गओ मरिउकामो ॥७॥ सुरसरिजले पडंतो चारणसमणेण  
जंपिओ एवं । किं दत्त ! दत्तहत्थो धम्मंमि मरेसि मुहयाए ? ॥८॥ किं पंचासवविरमणजणियं नीसेसरोगहरणखमं । सिरिजिण-  
यणरसायणमेयं न करेसि दढपूढ ! ॥ ९ ॥ तो दत्तो जंपइ पहु ! मं जाणावसु रसायणं एयं । तह चेव कए मुणिणा सो जाओ  
सावओ भवो ॥१०॥ अन्नदिणे गुणसाधरकेवलिनं नमिय पुच्छए एसो । किं सुलहवोहिओऽहं नवत्ति ? गुरुराह निमुणेसु ॥११॥  
भो भद ! भदपयगमणऊसुओ जइवि तांसि तहवि तुमं । तिरिगइनिकाइयाऊ धुवमंते दंसणा विमुहो ॥१२॥ यतः-संमत्तंमि उ लद्धे  
विमाणवज्जं न वंधए आउं । जइ न विगयसंमत्तो अहव न चट्टाउओ पुविं ॥१३॥ इय दत्तो गुरुवयणं सोऊण अणूणदुक्खसंपत्तो ।  
किह वोहिवज्जिओऽहं होहं इय रोइउं लग्गो ॥१४॥ जं बोहिरयणरहिओ चउदसरयणाहिवोऽवि रोरुव्व । बोहिरयणेण

ईश्वरराज-  
कथा

॥३७६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३७७॥

सहिओ नूणं रोरोऽवि चक्खि ॥ १५ ॥ किंच-चक्खित्तं इंदत्तं अहमिंदत्तं जणाण इह सुलहं । अकयसुकयाण न  
उणो जिणिंदवरसासणे बोही ॥ १६ ॥ तो गुरुकरुणारससायरेण गुणसायरेण मुणिवइणा । भणिओ सो महुरगिरा कीस  
परितप्पसे ? भइ ! ॥ १७ ॥ जं पुव्वभवज्जियकडुविवागकम्माण वेयणं मुत्तुं । अन्नो न अत्थि तक्खवणसंभवो किमिह रुत्तेण ?  
॥ १८ ॥ सोसिज्जइ चरममहोयहीवि चालिज्जइ सुरगिरीवि । नहु छुट्टिज्जइ पुव्वज्जियाउ ता किमिह रुत्तेण ? ॥ १९ ॥ किर चक्कि-  
णोऽवि चकं खलिज्जए वज्जिणोऽवि किर वज्जं । नहु पुव्वकयं कम्मं केणवि ता किमिह रुत्तेण ? ॥ २० ॥ तो रोयणा पधरिओ  
दत्तो पुच्छइ कहेसु मह भयवं ! । कत्थ कंहं वा बोही होही भुज्जो ? भणइ नाणी ॥ २१ ॥ तं मरिउं रायपुरे पुरोहिघरकुक्कुडीइ  
गम्भंमि । रुत्तेण उक्कडो होसि कुक्कुडो भो महाभाग ! ॥ २२ ॥ मुणिदंसणाउ पुव्विं जाइं सुमरिय करेवि संनासं । तत्थेव पुरे राया  
तं होही ईसरौ नाम ॥ २३ ॥ तत्थ य कुसुमुज्जाणे तमालदलसामलं नवकरुच्चं । सिरिआससेणतणयं वंमातणुसरसिकलहंसं ॥ २४ ॥  
फणिवइचिण्हियचलणं काउस्सग्गे ठियं जिणं पासं । दट्ठुं सरिउं जाइं भुज्जो होही तुहं बोही ॥ २५ ॥ एवं सुच्चा दत्तो पहिड्ड-  
चित्तो दुहेण परिचत्तो । सुमरंतो अहरीकयक्कप्पतरुं पासजिणनामं ॥ २६ ॥ पासजिणनामसुमरणवसेण खसखासकुट्टपरिमुक्को । पूयंतो  
य तिमञ्जं जहविहवं पासपहुपडिमं ॥ २७ ॥ निव्वाणगामिणं तिजयसाभिणं भाविणंपि पासजिणं । कयपाडिहेरसोहं चउत्तीसा-  
तिसयपरिकलियं ॥ २८ ॥ वाणीए जोयणगामिणीइ बोहं नयंति जयलोयं । एगग्गमणो सुमणो ज्ञायंतो निच्चमुवउत्तो ॥ २९ ॥  
वरनाणिकहियविहिणा भो मंतिम एसइहं इहं जाओ । सिरिपासदंसणाओ संपत्तो जाइसरणं च ॥ ३० ॥ पुव्वभवे नामठवणदव्वभावा-  
रिहंतसरणेण । अज्जियगुरुपुत्तेणं पत्तं मे बोहिवररयणं ॥ ३१ ॥ तो कुक्कुडेसराभिहमीसरराया पमोयभरभरिओ । कारावइ जिण-

ईश्वरराज-  
कथा

॥३७७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संभा-  
चारविधौ  
॥३७६॥

नामानि उसभ अजितेत्यादीनि, स्थापनया-लेप्यकर्मादिरूपया जिनाः स्थापनाजिना, जिनेन्द्राणां प्रतिमा, विंचानीत्यर्थः ॥ पुनः-  
शब्दो हि न्यस्तानाकारस्थापनाजिनपरिग्रहार्थः । द्रव्यं-दलिकं भूतभाविभावकारणं तदाश्रित्य जिना द्रव्यजिना-ये अर्हत्पदवीं  
प्राप्य सिद्धा ये च तां प्राप्स्यन्ति ॥ इह रायपुरे रायासि ईसरो ईसरुव्व गयवसणो । कुसुमुज्जाणे पत्तो कयावि सो रायवाडीए ॥१॥  
तत्थ नवहत्थमाणं नीलुप्पलसामलं मलविमुक्कं । सच्छसिरिवच्छलंछियवच्छं वंछियपयाणपडुं ॥२॥ अदट्टुत्तरअसरिससहसलक्खणं  
अस्ससेणवंसमणिं । निम्मियकाउस्सग्गं सिरिपासपहुं नियच्छेइ ॥३॥ हरिसभरपुलइयंगो तुरियं ओयरिय तुरयरयणाओ । महि-  
मिलियमडलिकमलो भत्तीए नमिय पासजिणं ॥ ४ ॥ अमयमइंपिव उस्सवमयं व तइल्लोयमित्तिमइयं वा । अणमित्तनयणो राया  
पिच्छंतो पासपहुमुत्ति ॥ ५ ॥ ईहापोहवसेणं च मुच्छिओ पुणवि लद्धचेयन्नो । जाइसरो सच्चिवेणं पुट्टो इय कहिउमारद्धो ॥ ६ ॥  
आसि वसंतपुरंमी दत्तो दियनंदणो स कइयावि । कुट्टभरविहुरदेहो गंगाइ गओ मरिउकामो ॥७॥ सुरसरिजले पडंतो चारणसमणेण  
जंपिओ एवं । किं दत्त ! दत्तहत्थो धम्मंमि मरेसि मुहयाए ? ॥८॥ किं पंवासवविरमणजणियं नीसेसरोगहरणखमं । सिरिजिण-  
वयणरसायणमेयं न करेसि दढमूढ ! ॥ ९ ॥ तो दत्तो जंपइ पहु ! मं जाणावसु रसायणं एयं । तह चेव कए मुणिणा सो जाओ  
सावओ भवो ॥१०॥ अन्नदिणे गुणसायरकेवल्लिणं नमिय पुच्छए एसो । किं सुलहवोहिओऽहं नवत्ति ? गुरुराह निमुणेसु ॥११॥  
भो भइ ! भइपयगमणऊसुओ जइवि तांसि तहवि तुमं । तिरिगइनिकाइयाऊ धुवमंते दंसणा विमुट्टो ॥१२॥ यतः-संमत्तंमि उ लद्धे  
विमाणवज्जं न बंधए आउं । जइ न विगयसंमत्तो अहव न बद्धाउओ पुवि ॥१३॥ इय दत्तो गुरुवयणं सोऊण अणूणदुक्खसंपत्तो ।  
किह वोहिवज्जिओऽहं होहं इय रोइउं लग्गो ॥१४॥ जं वोहिरयणरहिओ चउदसरयणाहिवोऽवि रोरुव्व । वोहिरयणेण

ईश्वरराज-  
कथा

॥३७६॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३७७॥

सहिओ नूणं रोरोऽवि चक्खि ॥ १५ ॥ किंच-चक्खित्तं इंदत्तं अहमिंदत्तं जणाण इह सुलहं । अकयसुकयाण न  
उणो जिणिंदवरसासणे बोही ॥ १६ ॥ तो गुरुकरुणारससायरेण गुणसायरेण मुणिवइणा । भणिओ सो महुरगिरा कीस  
परितप्पसे ? भइ ! ॥ १७ ॥ जं पुव्वभवज्जियकडुविवागकम्माण वेयणं मुत्तं । अन्नो न अत्थि तक्खवणसंभवो किमिह रुत्तेण ?  
॥ १८ ॥ सोसिअइ चरममहोयहीवि चालिअइ सुरगिरीवि । नहु छुट्ठिअइ पुव्वज्जियाउ ता किमिह रुत्तेण ? ॥ १९ ॥ किर चक्कि-  
णोऽवि चक्कं खलिअए वज्जिणोऽवि किर वज्जं । नहु पुव्वकयं कम्मं केणवि ता किमिह रुत्तेण ? ॥ २० ॥ तो रोयणा पधरिओ  
दत्तो पुच्छइ कहेसु मह भयवं ! । कत्थ कंहं वा बोही होही भुज्जो ? भणइ नाणी ॥ २१ ॥ तं मरिउं रायपुरे पुरोहिवरकुकुडीइ  
गम्भंमि । रुत्तेण उक्कडो होसि कुक्कडो भो महाभाग ! ॥ २२ ॥ मुणिदंसणाउ पुव्वि जाइं सुमरिय करेवि संनासं । तत्थेव पुरे राया  
तं होही ईसर्रो नाम ॥ २३ ॥ तत्थ य कुसुमुज्जाणे तमालदलसामलं नवकरुचं । सिरिआससेणतणयं वंमातणुसरसिकलहंसं ॥ २४ ॥  
फणिवइचिण्हियचलणं काउस्सग्गे ठियं जिणं पासं । दट्ठुं सरिउं जाइं भुज्जो होही तुहं बोही ॥ २५ ॥ एवं सुच्चा दत्तो पहिद्ध-  
चित्तो दुहेण परिचत्तो । सुमरंतो अहरीकयक्कप्पतरुं पासजिणनामं ॥ २६ ॥ पासजिणनाममुमरणवसेण खसखासकुट्टपरिमुक्को । पूयंतो  
य तिमञ्जं जहविहवं पासपहुपडिमं ॥ २७ ॥ निव्वाणगामिणं तिजयसामिणं भाविणंपि पासजिणं । कयपाडिहेरसोहं चउतीसा-  
तिसयपरिकलियं ॥ २८ ॥ वाणीए जोयणगामिणीइ बोहं नयंति जयलोयं । एगगमणो सुमणो ज्ञायंतो निच्चमुवउत्तो ॥ २९ ॥  
वरणाणिक्हियविहिणा भो मंतिस एसइहं इहं जाओ । सिरिपासदंसणाओ संपत्तो जाइसरणं च ॥ ३० ॥ पुव्वभवे नामठवणदव्वभावा-  
रिहंतसरणेण । अज्जियगुरुपुत्तेणं पत्तं मे बोहिवररयणं ॥ ३१ ॥ तो कुक्कडुडेसरामिहमीसरराया पमोयभरभरिओ । कारावइ जिण-

ईश्वरराज-  
कथा

॥३७७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥३७८॥

भवणं अलंकियं पासपडिमाए ॥३२॥ तत्थ य अब्भुयभूयं पूयं कारइ महाविभूर्इए । वायावइ आउजे सज्जो सज्जियमहापूओ ॥३३॥  
गोसे नियपासाए सिरिपासपहुस्स पूडुं पडिमं । सामंतमंतिसुद्धंतकुमरचउरंगवलकलिओ ॥३४॥ गयखंधगओ सिरिउपरिधरिय-  
छत्तो चलंतसियचमरो । कित्तिज्जंतो मागहगणेण परमारिहंतुत्ति ॥३५॥ कयपवयणवहुमाणण बोहिलाभं जणाण वडुंतो । सच्चिड्डीइ  
समेओ राया वचेइ चेइगिहे ॥३६॥ विहिणा पूएवि सुपुन्नपुन्नचिइवंदणाइ वंदित्ता । सिरिपासपहुं पत्थेइ होसु मह बोहिलाभाय  
॥ ३७ ॥ सुचिरं ईगरराया सिरिजिणवरपवयणं पभावित्ता । पासपहुपासगिण्हियपव्वज्जो सुगइमणुपत्तो ॥ ३८ ॥ इतीश्वरक्षोणि-  
भृतशरिरं, निशम्य सम्यग् भविकाः ! पवित्रम् । नामाकृतिद्रव्यसुभावभेदान्, चतुर्विधान् ध्यायत तज्जिनंद्रान् ॥ ३९ ॥ इती-  
श्वरनरेश्वरकथा ॥ उक्तं 'चउह जिण'त्ति पंचदशं द्वारं, एवं च द्वादशद्वारे उक्ता द्वादशाधिकाराः, त्रयोदशचतुर्दशपंचदशेतिद्वार-  
त्रयेऽधिकारिणश्च प्रतिपादिताः । अथ यत्राधिकारे यः स्तूयते तत्प्रतिपादनाय गाथात्रयमाह—

पढमहिगारे वंदे भावजिणे वीययंमि दव्वजिणे । इगचेइय ठवणजिणे तइय चउत्थंमि नामजिणे ॥३२॥

तिहुअण ठवणजिणे पुण पंचमए विहरमाणजिण छट्ठे । सत्तमए सुयनाणं अट्टमए सव्वसिद्धयुई ॥३३॥

तित्थाहियवीरयुई नवमे दसमे य उज्जयंतयुई । अट्टावयाइ इगदसि सुदिट्टिसुरसुमरणा चरिमे ॥ ३४ ॥

प्रथमे-आद्ये शक्रस्तवरूपेऽधिकारे-स्तोतव्यविशेषस्थाने वंदे-सद्भूतगुणोत्कीर्त्तनेन स्तवीमीति, भावजिनान्-भावार्हतश्वतुस्त्रि-  
शदतिशययादिमन्महद्भावं प्राप्तानुत्पन्नकेवलज्ञानान् समवमरणस्थांस्तीर्थकृत इत्यर्थः, तथैव संपूर्णमहद्भावभावात्, भणितं च-  
'भावजिणा समप्रसरणत्थ'त्ति १, तथा द्वितीये 'जे अ अईय'त्ति गाथालक्षणेऽधिकारे वंदे इति सर्वत्रापि योज्यं, द्रव्यजिनान्-

अधिकार-  
विषयः

॥३७८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३७९॥

द्रव्यार्हतो येऽष्टमहाप्रातिहार्यादिकां तीर्थकृच्छ्रमीं प्राप्य सिद्धाः ये च तस्मिन्नन्यस्मिन् वा भवे तां प्राप्स्यन्ति, न च तदानीं प्राप्त-  
वंतस्तान्, अर्हच्चद्रव्यान् जिनजीवानित्यर्थः, उक्तं च—“भूतस्य भाविनो वा भावस्य हि कारणं तु यल्लोके । तद् द्रव्यं तच्चज्ञैः  
सचेतनाचेतनं कथितं ॥२॥ तथा ‘एकचैत्यस्थापनाजिनान्’ यत्र देवगृहादौ चैत्यवन्दनं कर्तुमाख्यं तत्र स्थापितानि यानि जिन-  
विंशानि तानीत्यर्थः तृतीये ‘अरिहंत चेइयाण’मितिदंडकरूपे ३, तथा चतुर्थे—चतुर्विंशतिस्तवात्मके नामजिनान् जिननामानि,  
अस्यामवसर्पिण्यां भरतक्षेत्रमचित्तयाऽऽसन्नत्वादिनोपकारित्वाच्चतुर्विंशतिमपि जिनान्नामोत्कीर्तनेन स्तौमीत्यर्थः ४ ॥ ३२ ॥  
त्रिभुवने ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोके स्थापनाजिनान् शाश्वताशाश्वतश्चैत्यस्थापितार्हतसिद्धप्रतिमारूपान् पंचमके ‘सबलोए अरिहंतचेइया-  
ण’मितिक्रायोत्सर्गदंडकलक्षणेऽधिकारे वंदे इति योज्यं, अत्र चार्हत्सिद्धप्रतिमारूपानिति प्रकारांतरसूचकः पुनःशब्द इत्यायातं,  
भणितं चावश्यकचूर्णिकारेण सिद्धप्रतिमानामपि वंदनपूजनादि, तथा च प्रतिक्रमणाध्ययने ‘सब्वलोए अरिहंतचेइयाण’मिति  
दंडकचूर्णिः—जे सब्वलोए सिद्धाई अरिहंता चेइयाणि य तेसिं चैव प्रतिकृतिलक्षणानि, चित्ती संज्ञाने, संज्ञानमुत्पद्यते काष्ठकर्मा-  
दिषु प्रकृतिं दृष्ट्वा जहा अरिहंतपडिमा एसत्ति, सिद्धादिप्रतिमेत्यर्थः, अन्ने भणंति—अरिहंता तित्थयरा तेसिं चेइयाणि अरिहंत-  
चेइयाणि, अर्हत्प्रतिमेत्यर्थः अत्र च अन्ने भणंति अरहंता तित्थयरा इत्यादि भणता चूर्णिकृता पूर्वव्याख्याने सिद्धप्रतिमाः पृथक्  
स्पष्टं निष्टंकिताः, अन्यथा द्वितीयव्याख्यानं निष्फलं स्यात्, एवं च सिद्धप्रतिमासिद्धौ तामां वंदनपूजनाद्यपि करणीयपथायातं,  
तत्प्रत्ययं च कायोत्सर्गाद्यपि, उक्तं चैतदावश्यकचूर्णौ, तथाहि—‘पूज्यत्वात्तेषां पूजनार्थं कायोत्सर्गं करोमि श्रद्धादिभिर्वर्द्धमानैः,  
सद्गुणसमुत्कीर्तनपूर्वकं कायोत्सर्गस्थानेन पूजनं करोमीत्यर्थः, जहा कोइ गंधचूर्णवाममल्लाइएहिं समभ्यर्चनं करोतीति । एवं

अधिकार-  
विषयः

॥३७९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३८०॥

सकारवत्तियाए संमाणवत्तियाएवि भावेयद्वं, नवरं सकारो जहा वत्थाभरणाईएहिं सकारणं, संमाणो संमं मन्नणं'ति । एतावता च सिद्धप्रतिमानामप्यग्रे अरिहंतचेइयाणमित्यपि दंडकः पाठाय संगच्छते, शब्दार्थयोस्तत्रापि समानत्वात्, पर्युपास्या इहार्थे बहुश्रुताः, तथा श्रीजिनभद्रगणिक्षमाश्रमणैरपि विशेषावश्यकै साक्षेपं स्थापिता सिद्धपूजा, तथा च—कुञ्जा जिणाण पूया परिणाम-विसुद्धिहेउओ निच्चं । दाणादओ सम्मग्गप्पभावणाओ य कहणं व ॥१॥ तट्टीका—कार्या जिनसिद्धपूजा स्वपरिणामविशुद्धिहेतुत्वाद्दानादिक्रियावत्, अथवा कार्या जिनसिद्धपूजा मार्गप्रभावनात्मकत्वाद्धर्मकथावत् ॥१॥ चोयग—पूयाफलदो य न सो नहं व कोवप्पसायविरहाओ । दिट्ठंतो वेहंमेण माहम्मणेण निवाई य ॥२॥ आचार्यः—कोवप्पसायरहियंपि दीसए फलयमन्नपाणाई । कोवप्पसायरहियत्ति निष्फलत्ते अणेगंतो ॥३॥ इत्यादि । पूजिता च मरुदेवास्वामिनी प्रथमसिद्ध इतिकृत्वा देवैः, कारिताश्च सिद्धप्रतिमा भरतेनाष्टापदोपरि, एतयोः प्रबंधश्चायं—आर्यानार्येषु मौनेन, पिहत्याब्दसहस्रकम् । पुरे पुरिमतालाख्ये, ययौ श्रीवृषभोऽन्यदा ॥१॥ उद्याने तत्र शकटमुखे वटतरोरधः । उत्तरापादभे कृष्णैकादश्यां फाल्गुने विभुः ॥२॥ पूर्वाण्हेऽष्टमभक्तेन, केवलज्ञानमासदत् । महिमानं ततश्चक्रुः, सर्वे देवाः सुरादयः ॥३॥ भरतस्यायुधागारे, चक्ररत्नं तदाऽजनि । युगपत्केवलं तच्च, राज्ञे पुंभिर्निवेदितम् ॥४॥ अचिंतयत्ततो राजा, किं पूज्यं प्रथमं मया ? । क्षणान्निर्णीतवांस्तातः, पूज्यः प्रेत्यसुखावहः ॥५॥ रुदंती पुत्रशोकेन, नीलच्छन्नदृशं ततः । सिंधुरस्कंधमारोप्य, मरुदेवीं स्वयं नृपः ॥६॥ जिनं नंतुं व्रजन्नूचे, मातः ! पश्य प्रभोः श्रियम् । अनन्यसदृशीं देवासुराणामपि दुर्लभाम् ॥ ७ ॥ हर्षाश्रुप्रगलच्छाया सा पश्यंती प्रभुश्रियम् । क्षणात् कर्मक्षयं कृत्वा, निर्वृत्ता शुभभावतः ॥ ८ ॥ ततः प्रथमसिद्धोऽयमित्यभ्यर्च्य कलेवरम् । तस्याः क्षीरमहांभोधौ, चिक्षिपेऽनिमिषैर्मुदा ॥ ९ ॥ उक्तं चावश्यकचूर्णौ—'भयवओ य

सिद्धपूज

॥३८०॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३८१॥

छत्ताइच्छत्तं पिच्छंतीए चेव केवलनाणं उप्पन्नं, तंसमयं च णं आउयं खुट्ठं, सिद्धा, देवेहि य से पूया कया पढमसिद्धोत्तिकाऊणं'  
अथ छायातपाभ्यां हि, शरत्काल इव क्षणात् । नृपो हर्षविपादाभ्यां, युगपत् सस्तरजेतराम् ॥१०॥ ततः समवसृत्यंतर्गत्वा नत्था  
जगद्गुरुम् । निपद्य च यथास्थानमश्रीषीदेशनामिति ॥११॥ जीवाः सुखैपिणः सर्वे, तन्मोक्षे मुख्यमक्षयम् । स च ज्ञानक्रियाभ्यां  
हि, यतध्वं तत्र तज्जनाः ! ॥ १२ ॥ श्रुत्वेमां देशनां भर्तुः, प्रात्राजीझरतात्मजः । पुंडरीकस्तथाऽन्येऽपि, साधवो बहवोऽभवन्  
॥१३॥ साधव्यो ब्राह्म्यादिकाः श्राद्धा, भरताद्यास्तु सुंदरी । व्रताय तेन नो मुक्तास्तदाद्याः श्राधिकास्ततः ॥१४॥ कृत्वेत्याद्यं विभुः  
संपं, विजहेऽन्यत्र तीर्थकृत् । भरतस्तु गृहं गत्वा, चक्रमानर्च कृत्यवित् ॥१५॥ विहृत्याब्दसहस्रोत्तं, कैवल्ये पूर्वलक्षकम् । दिशन्  
पंच यमान् पंचधनुःशतमितिः प्रभुः ॥१६॥ नष्टापदग्रणीः शैलेऽष्टापदेऽष्टापदद्युतिः । कर्म्मभाष्टापदोऽष्टापदादिव्यसनहृद् ययौ ॥१७॥  
युग्मं ॥ तृतीयारे स सार्द्धाष्टमासव्यष्टावशेषके । माघकृष्णत्रयोदश्यां, पूर्वाण्डेऽभीचिगे विधौ ॥१८॥ चतुर्दशेन भक्तेन, दशसाधु-  
सहस्रयुक् । पुत्रैर्नवनवत्याऽमा, मोक्षं प्राप वृषध्वजः ॥ १९ ॥ सुरासुराश्च चक्रौ च, पूर्वायातास्ततः प्रभोः । विधिवच्चक्रिरे मोक्ष-  
महं कृत्वा चित्त्रयम् ॥२०॥ पूर्वापाच्यपराशास्वर्हत्तद्वंशजजन्मिनाम् । शेषाणां च क्रमाद् वृत्तां, त्रिकोणां चतुरस्रिकाम् ॥२१॥  
चैत्यं सिंहनिपद्याख्यं, वर्द्धकिं चक्रयकारयत् । चतुर्द्वारं चतुर्द्वित्रिकोशदीर्घपृथुच्चक्रम् ॥२२॥ तन्मध्ये वृषभाद्यर्चाः, स्वस्ववर्णप्रमा-  
पतः । चतुर्विंशतिमेकं च, बहिस्तूपं प्रभोर्वरम् ॥२३॥ स्तूपशतं तथैकोनभातृणां प्रतिमाशतम् । भक्त्या स्वार्चां च तत्रादौ, दंडेनाष्टौ  
पदानि च ॥२४॥ उक्तं चावश्यके श्रीभद्रबाहुस्यामिपादैः—“धूमसय भाउयाणं चउवीसं चेव जिणहरे कासी । सव्वजिणाणं पडि-  
मा वण्णयमाणेहिं संजुत्ता ॥१॥ एतच्चूर्णिः—भाउयसयस्स तत्थेय पडिमाओ कारवेइ, अप्पणो य पडिमं पज्जुवासंतियं, सयं च धूमाणं,

सिद्धपूजा

॥३८१॥

३०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
। ८२॥

एगं तित्थयरस्स अवसेसाण एगूणस्स भाउयसयस्स, मा तत्थ कोइ अइगम्मिस्सइत्ति लोहमणुया अइगंतुं न सकंतित्ति, अयमेव  
च स्तूपशतविपयोऽर्थो महापुरुषचरिताख्यग्रंथे श्रीऋषभदेवनिर्वाणोद्देशके व्यक्ततरमेवं भणितः, तथाहि-बड्डुइणा कारवियं तत्थुत्तुंगे  
नगंमि थूहसयं । मणिकणयरयणचित्तं कंचणपडिमाहि संपुन्नं ॥१॥ पंचधणूसयमाणा इक्किक्का पडिम तत्थ मज्झंमि । नाप्पाविहरय-  
णविभूसियत्ति इक्किक्कइक्किक्के ॥ २ ॥ अद्धमहापडिहेरा पडिमा उसहस्स पढममह धूवे । सेसा अणुकमेणं केवल्लिपडिमाओ कारेइ  
॥ ३ ॥ सकसहाओ राया सुमेरुसिहरेव्व कणयकलसेहिं । अहिसिंचिउं सयंचिय हरिचंदणचच्चए देइ ॥४॥ पुण्फोवयारवलिधूवचंदणं  
देवराय जोएवि । विम्हइओ चित्तेणं थूहा सेलो विभावेति ॥५॥ सयसिंगो इव सेलो दीसइ धयधूवमाणसिहरेहिं । रयणावलीसमु-  
ट्टिअगयणंगण सककचावेहिं ॥६॥ अन्यत्राप्युक्तं-‘चउत्रीसं तित्थयरा फुरंतवररयणपंचवन्नेहिं । एवं विहीइ भाउयसयस्स थूभाणि  
कारेइ ॥७॥ पडिमाउ तत्थ तेसिं पइट्टिया ण्हवणमाइ सककारं । पूयंतकयपणामो भत्तीइ सपरियणो भरहो ॥८॥’त्ति । कारयित्वेति  
तत्तीर्थं, चक्रथागत्य निजां पुरीम् । भेजे भोगान् चिरं पूर्वपुण्योपात्तान् यथासुखम् ॥९॥ श्रुत्वेति सिद्धप्रतिमार्चनाग्रं, विनिर्मितं श्रीभर-  
मरायैः । भो भव्यभावा भविकाः ! प्रयत्नमेतद्विधाने विधिना विधत्त ॥१०॥ इति मरुदेवादिप्रबंधः । तथा ‘विहरमाणजिनान्  
पंचदशकर्मभूमिषु विहारं कुर्वाणान् सूत्रार्थकथनपरायणान् भावार्हत इत्यर्थः, उक्तं च-‘पढमे छट्टे नत्रमे दसमे एगारसे य  
जिणे’ । वंद इति तत्र प्रकृतं, ते च जघन्यतो विंशतिरुत्कृष्टतः सप्ततिशतं भवति, आह च-‘सत्तरिसयमुक्कोसं जहन्नओ विरह-  
ण जिण वीसं । जम्मं पइ उक्कोसं वीसं दस हुंति उ जहन्नं ॥१॥’त्ति, आवश्यकचूर्णौ तु द्रव्यार्हतोऽप्यत्र व्याख्याताः, तथा-  
शुक्तं-उक्कोसपणं सत्तरिं तित्थयरसयं जहणपणं वीसं तित्थयरा, एए ताव एगकाले भवंति, अईया अणागया अणंता ते

सिद्धपूजा

॥३८२॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा  
चारविधौ  
॥३८३॥

तित्थगरे नमंसांमिति षष्ठे पुक्त्स्वरदीगद्धे इति गाथात्मके ६, तथा सप्तमे 'तिमिरे'त्यादिस्वरूपे श्रुतज्ञानम्-अंगानंगप्रविष्टं सिद्धांतं वंदे इति पूर्वगाथातो योज्यं ७, तथा अष्टमके सिद्धाणमिति गाथायां सर्वेषा तीर्थसिद्धादिभेदभिन्नानां नामस्थापनादिरूपाणां वा सिद्धानां-क्षपितकर्मशांना स्तुतिः क्रियत इति गम्यं ८ तीर्थाधिपस्य-वर्तमानतीर्थस्य प्रवर्तकत्वान्नाथस्य वीरस्य-वर्द्धमान-स्वामिनः स्तुतिर्विधीयते, आमन्नतरतया महोपकारित्वात् नमनेऽधिकारे 'जो देवाणगी'त्यादिगाथाद्वयरूपे ९, तथा दशमे च 'उज्जितसेले'तिगाथाप्रमाणे उज्जयंतचि 'तात्थ्वात्तद्व्यपदेश' इति न्यायात् उज्जयंतपर्वतालंकरणस्य श्रीनेमिनाथस्य स्तुतिर्विधीयते, च-शब्दो विशेषस्तेनायं जिनस्तुतित्वात् दर्शनमिशोधकत्वात् कर्मक्षयादिकारकत्वात् संवेगादिकारणत्वात् बहुबहुश्रुतानिश्चरितत्वात् जीतव्यवहारानुपातित्वात् भाष्यकारादिभिर्व्याख्यातत्वात् आवश्यकचूर्णिकृतोऽप्यनुमतत्वात् अनिपिद्धत्वात् पारपर्यागतस्यार्थस्य स्वमत्या निपेद्ध्युमशक्यत्वात् निपेधे निह्वयमार्गानुपातित्वात् आज्ञाप्रकारत्वाच्चेत्यतो युक्त एवायमेवमग्रेतनोऽपि १०, तथा एकादशे चत्वारि अष्ट दसेतिगाथास्वरूपे अष्टायचि सूचनात् अष्टापदपर्वतोपरिभरतनिर्मापितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनस्तुतिः क्रियते, निग-मार्थत्वात् अस्येति, यद्वा 'अष्टाय'चि उपलक्षणं तेनान्यनगा अपि जिना अनया गाथया बंधन्ते, तत्र यथेय वृद्धैर्व्याख्याता तथा भव्याना भागवृद्धये किंचिद् दर्श्यते-चत्वारि अष्ट दस दो य वदिवाजिणवरा चवीस । परमद्विनिद्विअष्टा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥१॥ दाहिण दुवारे चत्वारि पच्छिमे अष्ट उत्तरे दम पुव्वओ दो य एवं अष्टावए चउवीसं जिणवरा वदिजंति, अन्ने भणंति-उपरिममेहलाए चत्वारि, मज्झिमाए अष्ट, हिट्ठिमाए दस दो य १२, मिलिया चउवीसं जिणपडिमाओ अष्टायए वंदिजति १ चत्ता अरथो जेहिं ते चत्तारओ एयं विसेसणं, अष्ट ८ दस १० दो य २ एं वीसं, चतुश्शब्दौ विशेषज्ञापकाधर्थेषु यथायोगं

अष्टापदा-  
दिस्तुतिः

॥३८३॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०सद्या  
चारविधौ  
॥३८२॥

एगं तित्थयरस्स अवसेसाण एगूणस्स भाउयसयस्स, मा तत्थ कोइ अइगम्मिस्सइत्ति लोहमणुया अइगंतुं न मकंतित्ति, अयमेत  
च स्तूपगतविपयोऽर्थो महापुरुषचरितारुयग्रंथे श्रीरूपभदेवनिर्माणोद्देशके व्यक्ततरमेवं भणितः, तथाहि उड्डुइणा कारवियं तत्थुत्तुंगे  
नगमि धूहसय । मणिऊणयरयणचित्तं कंचणपडिमाहि संपुन्नं ॥१॥ पंचधणूसयमाणा इक्किक्का पडिम तत्थ मज्झंमि । नाणाविहरय-  
णविभूसियत्ति इक्किक्कइक्किक्के ॥ २ ॥ अड्डमहापडिहेरा पडिमा उसहस्स पढममह धूवे । सेसा अणुकमेणं केरलिपडिमाओ कारेइ  
॥ ३ ॥ सक्कसहाओ राया सुमेरुसिहरेव्व कणयकलसेहि । अहिसिचिउं सयंचिय हरिचदणचच्चए देइ ॥४॥ पुप्फोवयारवत्तिधूवचंदणं  
देवराय जोएवि । विम्हइओ चित्तेणं धूहा सेलो विभावेति ॥५॥ सयसिंगो इत्त सेलो दीसइ धयधूममाणसिहरेहि । रयणावलीसमु-  
ट्टिअगयणगण सक्कचावेहिं ॥६॥ अन्यत्राप्युक्तं—‘चउवीसं तित्थयरा फुरतवररयणपंचवच्चेहिं । एवं विहीइ भाउयसयस्स थूभाणि  
कारेइ ॥७॥ पडिमाउ तत्थ तेसिं पइट्टिया ष्हवणमाइ सक्कार । पूयंतकयपणामो भत्तीइ सपरियणो भरहो ॥८॥’त्ति । कारयित्त्वेति  
तत्तीर्थं, चक्रथागत्य निजा पुरीम् । भेजे भोगान् चिर पूर्वपुण्योपात्तान् यथासुखम् ॥९॥ श्रुत्वेति सिद्धप्रतिमार्चनाग्रं, त्रिनिर्मितं श्रीभर-  
तामराद्यैः । भो भव्यभागा भविक्लाः । प्रयत्नमेतद्प्रिधाने प्रिधिना विधत्त ॥१०॥ इति मरुदेवादिप्रबंधः । तथा ‘विहरमाणजिनान्  
पष्टे’ पंचदशकर्मभूमिषु विहार कुराणान् सुत्रार्थकथनपरायणान् भावार्हत इत्यर्थः, उक्तं च—‘पढमे छट्टे नवमे दसमे एगारसे य  
भावजिणे’ । वंद इति तत्र प्रकृतं, ते च जघन्यतो विंशतिरुत्कृष्टतः सप्ततिशतं भवति, आह च—‘सत्तरिसयमुक्कोसं जहन्नओ विरह-  
माण जिण वीसं । जम्मं पइ उक्कोसं वीसं दस हुंति उ जहन्नं ॥१॥’त्ति, आशयकचूर्णौ तु द्रव्यार्हतोऽप्यत्र व्याख्याताः, तथा  
चोक्तं—उक्कोसपण सत्तरिं तित्थयरमयं जहणपणं वीसं तित्थयरा, एए ताव एगकाले भवंति, अईया अणागया अणंता ते

सिद्धपूजा

॥३८२॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३८३॥

तित्यगरे नमंसाभिति षष्ठे पुक्खरवरदीवद्धे इति गाथात्मकेषु, तथा सप्तमे 'तिमिरे'त्यादिस्वरूपे श्रुतज्ञानम्-अंगानंगप्रविष्टं सिद्धांतं वंदे इति पूर्वगाथातो योज्यं ७, तथा अष्टमके सिद्धाणमिति गाथायां सर्वेषां तीर्थसिद्धादिभेदभिन्नानां नामस्थापनादिरूपाणां वा सिद्धानां-क्षपितकर्मशानां स्तुतिः क्रियत इति गम्यं ८ तीर्थाधिपस्य-वर्तमानतीर्थस्य प्रवर्तकत्वान्नाथस्य वीरस्य-वर्द्धमान-स्वामिनः स्तुतिर्विधीयते, आसन्नतरतया महोपकारित्वात् नवमेऽधिकारे 'जो देवाणवी'त्यादिगाथाद्वयरूपे, तथा दशमे च 'उज्जि-तसेले'तिगाथाप्रमाणे उज्जयंतत्ति 'तात्थ्यात्तद्व्यपदेश' इति न्यायात् उज्जयंतपर्वतालंकरणस्य श्रीनेमिनाथस्य स्तुतिर्विधीयते, च-शब्दो विशेषकस्तेनायं जिनस्तुतित्वात् दर्शनविशोधकत्वात् कर्मक्षयादिकारकत्वात् संवेगादिकारणत्वात् बहुबहुश्रुतानिचरितत्वात् जीतव्यवहारानुपातित्वात् भाष्यकारादिभिर्व्याख्यातत्वात् आवश्यकचूर्णिकृतोऽप्यनुमतत्वात् अनिपिद्धत्वात् पारंपर्यागतस्यार्थस्य स्वमत्या निषेद्धुमशक्यत्वात् निषेधे निह्वयमाग्नानुपातित्वात् आज्ञाप्रकारत्वाच्चेत्यतो युक्त एवायमेवमग्रेतनोऽपि १०, तथा एकादशे चत्वारि अष्ट दसेतिगाथास्वरूपे अष्टावयत्ति सूचनात् अष्टापदपर्वतोपरिभरतनिर्मापितवर्तमानचतुर्विंशतिजिनस्तुतिः क्रियते, निग-मार्थत्वात् अस्येति, यद्वा 'अष्टावय'त्ति उपलक्षणं तेनान्यत्रगा अपि जिना अनया गाथया वंद्यन्ते, तत्र यथेयं वृद्धैर्व्याख्याता तथा भव्यानां भाववृद्धये किंचिद् दर्श्यते-चत्वारि अष्ट दस दो य वंदिवाजिणवरा चव्वीसं । परमद्विनिद्विअष्टा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥१॥ दाहिण दुवारे चत्वारि पच्छिमे अष्ट उत्तरे दस पुव्वो दो य एवं अष्टावए चउवीसं जिणवरा वंदिजंति, अन्ने भणंति-उवरिममेहलाए चत्वारि, मज्झिमाए अष्ट, हिट्ठिमाए दस दो य १२, मिलिया चउवीसं जिणपडिमाओ अष्टावए वंदिजंति ? चत्ता अरओ जेहिं ते चत्तारओ एयं विसेसणं, अष्ट ८ दस १० दो य २ एनं वीसं, चतुथशब्दो विशेषज्ञापकाद्यर्थेषु यथायोगं

अष्टापदा-  
दिस्तुतिः

॥३८३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३८४॥

योन्यौ, एए संभेयपञ्चए वंदिया, परमद्वेण, न उपयारेण, निद्वियट्टा समाप्तप्रसोजनाः, सिद्धाः-शिवं गताः, 'पिधू गत्या'मिति वच-  
नात् २ चत्तारि पयं पुब्बं, अट्ट दमसु मिलिता १८ दोयत्ति घोपाः-स्वर्गपाः इंद्रा इत्यर्थः, चउहिं वीसं भइया लद्धा पंच, ते  
अट्टारसमु मेलिया तेरीसं, एए मित्तुञ्जे वंदिजंति, कंहं?, परा-पहाणा मा-लच्छी ममोमणाइया तत्थ ठिया, समोमगिया इत्यर्थः,  
निद्वियट्टा संपन्नफला केवलनाणसंपत्तीए, यदागमः-“जस्सट्टाए कीरइ नग्गभावे मुंडभावे अण्हाणए अर्दतण्णे इत्यादि”, सिद्धाः-  
ग्रास्तारो वधुतुः मंगलभूताश्च 'पिधू शास्त्रमागल्ययोरिति वचनात् ३, चउहिं अट्ट गुणिया ३२ दोहि य दस २०, मिलिया वान्ना  
नंदीसारजिणाययणा वंदिज्जंति, चउमदा मयंतरेण पुण वीसं, अहया चउरहिया वीसं १६, एए नंदीसरे सोहम्मीसाणिदग्गमहि-  
सीरायहाणीसुं संति, मयंतरे पुण चउरीसं पर अट्टमहिया ३०, एं नंदीसरे दीवे ५२-२० वा रायहाणीसु १६+३२ वा, परमद्वेण,  
न वर्णनामात्रेण, निद्विया-निष्ठां प्राप्ताः आस्था-आस्थानं रचनेत्यर्थः येषां ते तथा, सिद्धा-नित्या अपर्ययसानस्थितिकृत्वात् ४  
चत्तारि जंबुदीवे अट्ट धायइसंडे दम नजरं दो य रहिया पुक्खपररद्धे एं वीसं जिणा संपइ जहन्नओ विहरमाणा वंदिज्जति, जम्मं  
पइ उक्कोसओ वा, चतुश्चन्दौ प्राग्वत्, परमद्वनिद्विअट्टा भाविनि भूतपदुपचारात् सिद्धाः-प्रख्याता भव्यैरुपलब्धगुणसंदोहत्वात् ५  
चत्ता अरी जेहिं ते चत्तारि रुजमाणे कडे इत्यादि वचनात्, के अरी?-अट्ट रुम्माणि, के चत्तारि?-दस, ते उ दो यत्ति दुहिं मेएहिं  
हुंति, जहन्नम्मपयभरहेरयदमगविहरमाणजिणभेएहिं, च पूरणे, 'उब्बीसं'ति उब्बीशाः-पृथ्वीम्यामिनः शेषं प्राग्वत् ६,  
अट्ट दमहिं गुणिया ८० सा दोहिं गुणिया १६०, सेसं पुब्बं, एं सव्वविहरमाणजिणा वंदिया ७, अट्ट अट्टहिं गुणिया ६४  
दम दमहिं गुणिया १००, तओ चत्तारि ४ दो य २ मव्वे मेलिया जायं सत्तरिमयं १७०, एए पन्नरसकम्मभूमिनु उक्कोसओ

अष्टापदा-  
दिस्तुतिः

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
भर्म० संभा-  
चारविधौ  
॥३८५॥

अष्टापदा-  
दिस्तुतिः

विहरमाणा वंदिजंति ८, अष्टदस १८ चउहिं गुणिया ७२, एएहिं तिन्नि चउवीसीओ भवंति, ताओ य इह भरहे अतीयाणाग-  
यवदुमाणा चउवीसिगतिगस्त्ररूणी तित्थयरा वंदिजंति, चत्तारि अट्ट मिलिया १२ ते दसगुणिया १२० एए पंचचउवीसी  
पंचसु भरहेसु वदुमाणाउ वंदिज्जंति १०, अट्ट दसहिं गुणिया ८० ते चेव दसमिलिया ९० सा चउहिं गुणिया ३६०, एए पनरस  
चउवीसीओ पंचसु भरहेसु कालत्तयसंभगाउ वंदिज्जंति ११, एए चेव तिन्नि पगारा जहा ७२, १२०, ३६० दोहिं गुणिज्जंति जाया  
१४४, २४०, ७२० चउविसी फिज्जंति जाया ६, १०, ३० चउवीसीउ, ताओ कमसो पुण्णभणियत्थेण भरहेरवणसु समगं वंदिजंति  
१२, अणुत्तरेसु १ गेविज्जेसु २ कप्पेसु ३ जोइसिएसु य ४ एवं उहुं चत्तारि भैया, अहो य वंतरेसु अट्टभेएसु अट्ट ८ दस-  
भणवासीसु दस १० महियले सासयअसासयभेया दो य २ एवं तिष्ठुयणे जिणाययणेषु चउवीसजिणाययणेषु चउवीसं जिण-  
वरा वंदिया १३, जहा पुण जंघुदीवे ६३५ भायइसंढे १२७२ पुक्खारवरदे १२७६ मणुपलोयवहिं ९२ तिरियलोए वा सव्व-  
संत्ताए ३२७५ चेइयसायाइं ताइं ताइं समयमेव तहा नियसंत्ताए आणिऊण वंदेयञ्जा, विस्तारभयाच्च नोच्यंते, एवं अणेगहा एगा-  
संमि अदिगारे जिणवरा वंदिज्जंति, चत्तारि अट्टगुणिया ३२ ते दसगुणिया ३२० ते य दोहिं गुणिया ६४०, वीसं चउहिं  
भरया लद्धा ५तेहिं रदिया ६३५ एए जंघुदीवे ११॥ तथा सुट्टियुराणां-सम्यग्दृष्टिदेवतानां स्मरणात् तत्तत्प्रवचनादिविषयवैयाघ्र-  
णादिकार्यविधानोपयोगप्रभृतिगुणगणानुचिंतनाशोत्कीर्तनादिनोपबृंहणाय वा, धन्याः पुण्यवंतो लब्धजीवितादिफला भवंतो यदेवं  
पुण्यवानोपनाः, युक्तमेवेदं भवाद्दशां सुस्थानविनियोगफलत्वात् संपदः, उक्तं च-“तं नाणं तं च विन्नाणं, तं कलासु य कोसलं। सा  
१६१ गोरिं तं च, देयकज्जेण जं वए ॥१॥” इत्यादिप्रशंसाद्वारेण तत्तत्कृत्यप्रोत्साहनेत्यर्थः, अथवा स्मरणा संघादिविषये प्रमादिनां

॥३८५॥

शुद्धीभूतवैयावृत्त्यादितत्कृत्यानां संस्मरणा चरमे—द्वादशोऽधिकारे वैयावृत्तगाराणमित्यादिकायोत्सर्गकरणतदीयस्तुतिदानपर्यन्ते, क्रियते इति शेषः, औचित्यप्रवृत्तिरूपत्वात् धर्मस्य, अवस्थानुरूपव्यापाराभावे गुणाभावापत्तेः, यतः—“औचित्यमेकमेकत्र, गुणानां कोटिरेकतः। विपायते गुणग्राम, औचित्यपरिवर्जितः ॥ १ ॥” अपिच—अनौचित्यप्रवृत्तौ महानपि मथुराक्षपकवत् कुवेरदत्ताया भवत्यल्पानामपि प्रत्युच्चारणादिभाजनं, आह च—“आरंकाद् भूपतिं पावदौचित्यं न विदंति ये। स्पृहयंतः प्रभुत्वाय, खेलनं ते सुमेधसाम् ॥१॥” इदमत्र तात्पर्यं—सर्वदाऽपि स्वपरावस्थानुरूपचेष्टया सर्वत्र प्रवर्तितव्यमिति, उक्तं च—“सदौचित्यप्रवृत्त्या सर्वत्र प्रवर्तितव्यमित्येदंपर्यमस्ये”ति ॥ मथुराक्षपककुवेरदत्तादेव्योः संविधानकं त्विदं—इह कुसुमपुरे नयरे ददधम्मो ददरहो निवो आसि। उचियपडियत्तिवल्लीपह्वणणे सजलजलवाहो ॥१॥ सरए कयावि सो अब्भमंडलं गयणमंडले जाव। परिसप्पिरं समंता पामायतलद्धिओ नियइ ॥ २ ॥ ता सहसा तं पडुपवणपडिहयं ददुत्तु चितइ विरत्तो। खणदिट्टनट्टरूवा अहह कंहं सब्बभावठिई ? ॥ ३ ॥ तथाहि—संपन्नंपकपुष्परागति रतिर्मत्तांगनापांगति, स्वाम्यं पद्मदलाग्रवारिकणति प्रेमा तडिदंडति। लावण्यं करिकर्णतालति वपुः कल्पांतयातभ्रमदीपच्छायति यौवनं गिरिनदीवेगत्यहो देहिनाम् ॥ ४ ॥ इय चित्तिउं सविणयं विणयंधरसुगुरुपासगाहियवओ। गीयत्यो विहरंतो पत्तो स कयावि महुरपुरिं ॥ ५ ॥ तत्थ ठिओ चउमासं कुवेरदत्ताइ देवयाइ गिहे। दुत्तयतचरणरओ निरओ आयावणविहाणे ॥६॥ विगहानिदाइपमायवज्जिओ उज्जुओ सुहज्जाणे। वासीचंदणकप्पो समो य माणावमाणेसु ॥७॥ तं ददुत्तु इट्टतुट्ठा कुवेरदत्ताऽऽह भो! मृणिवरिट्ठ!। पसिय मह कहसु किं ते करेमि मणइच्छियं कज्जं? ॥ ८ ॥ मणइ मुणी उचियन्नु भावन्नु दच्चखित्तकालन्नु। मं वंदावसु महे! सुमेरुसिहरट्ठिए देवे ॥९॥ देवी भणेइ एवं करेमि करसंपुडे ठवेऊण। नेउं

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३८७॥

सुमेरुसिहरे लहु वंदावेमि तं देवे ॥ १० ॥ आह मुणी जइ हुज्जिह थीसंघट्टो वयाइयारकरो । ता मज्झ धम्मसीले ! अलमित्थ  
मणोरहेणिमिणा ॥११॥ तो सविसेसं तुडा कुवेरदत्ता वहि पिणिम्मेइ । गयणयलमणुलिहंतं सुकिंकिणीजालकयसोहं ॥ १२ ॥  
जिणपरसुपामअप्पडिमपडिमसमलंकियं अइपिसालं । उत्ताणनयणघणपिच्छणिज्जतियमेहलाकलियं ॥१३॥ वरसव्वरयणमइयं सुमेरु-  
नामंकियं महाधूमं । तं ददट्टु पिम्हियमणो स मुणी वंदइ तहिं देवे ॥१४॥ तं धूमरयणमव्भुयभूयं ददट्टुण मिच्छदिट्ठीवि । तइया  
हरिसुक्करिसा जाया जिणसासणे भत्ता ॥१५॥ इय तंमि धूमरयणे सुपागजिणकालसंभवंमि सया । सुरकिजमाणपिक्खणखणंमि  
सुबहू गभो कालो ॥ १६ ॥ इत्थंतरमि खणो सुदंसणो नाम उग्गतचरणो विहरइ वसुहावलए महुराखवगुत्ति सुपसिद्धो  
॥१७॥ भणणे कुवेरदत्ताइ संठिओ सो कयाइ चउमासे । आयारमाइनिरओ दुक्करतवचरणकिसियंगो ॥ १८ ॥ तत्तिव्वतवाकंपिय-  
हियया सा देवया भणइ सुमुणि ! । मह कइसु किंपि कज्जं जेणं तं लहु पसाहेमि ॥ १९ ॥ मुणिराह अणुचियन्नू किं मह कज्जं  
असंजईइ तए ? । साऽऽह मए तुह कज्जं असंजईइनि धुवं होही ॥२०॥ इय भणिउ अणुचियणपणसवणउप्पन्नमज्जुविवसमणा । देवी  
गया सठाणं मुणीवि अन्नत्थ विहरित्था ॥२१॥ अह तत्थ निरसहाए धूमकए सेयवुद्धमिक्खुणं । जाओ महं विवाओ छम्मासे  
जाम नहु छिन्नो ॥२२॥ संघेण तओ भणियं को छित्तुमलं विजायमेयं तु । हुं हुं मथुराएगो तत्थ इमो झत्ति आहूओ ॥२३॥ तेण  
तवेणाकंपियहियया पत्ता कुवेरदत्ताऽऽह । किं ते करेमि कज्जं ? स भणइ तं कज्जमाह इमा ॥२४॥ किं तुह असंजईएऽवि इण्हि मए  
नणु पओयणं जायं । तो अणुतागा साहू से मिच्छादुकड देइ ॥२५॥ सा भणइ खणगपुगव ! सेयपडागाइदंमणा धूमो । गोसे तहा  
जइस्सं जह जिणइ इमो निययसंघो ॥ २६ ॥ इइ देवयाइ वणण सोउं खणो कहेइ संघस्स । संघोऽवि गंतु माहइ एवं रत्तो जह

मधुराक्ष-  
पकथा

॥३८७॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
भर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥३८॥

नरिंद ! ॥ २७ ॥ जइ अम्ह एस धूमो तो इह होही पए सियपडागा । अह भिक्खुणं तत्तो रत्ता इय सुणिय नरनाहो ॥ २८ ॥  
तं धूमं रक्खायइ समंतओ नियनरेहिं अह देवी । पवयणभत्ता घट्टइ धूमे गोसे सियपडागं ॥ २९ ॥ तं पिच्छवि अच्छरियं अतु-  
च्छहरिसो निवो पुरीलोओ । उक्किट्टिकलयलरवं कुणमाणो भणइ वपणमिणं ॥ ३० ॥ जयउ जए सइ कालं एसो जिणनाहदेसिओ  
धम्मो । जयउ इमो जिणसंयो जयंतु जिणसासणे भत्ता ॥३१॥ ददुं सुदिट्टिसुरसुमरणे उच्छप्पणं पवयणस्स । थिरयरओ खवगो  
पालिउण चरणं गओ सुगयं ॥ ३२ ॥ मथुराक्षपकचरित्रं श्रुत्वेत्यौचित्यचंचवो भव्याः ! । प्रवचनसमुन्नतिकरीं सुदृष्टिसुरसंस्मृतिं  
कुरुय ॥३३॥ इति मथुराक्षपककथा । अथ येऽधिकारा यत्प्रमाणेन भण्यंते तदसंमोहार्थं प्रकटयन्नाह—

नव अहिगारा इह ललियवित्थरावित्तिमाइअणुसारा । तिन्नि सुयपरंपरया वीयो दसन्नो इगारसम्मो ॥ ३५ ॥  
इह द्वादशस्वधिकारेषु मध्ये नव अधिकाराः प्रथमचतुर्थचतुर्थपंचमषष्ठसप्तमाष्टमनवमद्वादशस्वरूपा या ललितविन्तराख्या  
चैत्यवंदनामूलवृत्तिस्तस्या अनुसारेण—तत्र व्याख्यातसूत्रप्रामाण्येन, भण्यंत इति शेषः, तथा च तत्रोक्तं “एतास्तिष्ठः स्तुतयो नियमे-  
नोच्यंते, केचिच्चन्या अपि पठंति, न च तत्र नियम इति न च तद्व्याख्यानक्रिया, एवमेतत्पठित्वा उपचितपुण्यसंभारा उचि-  
तेषूपयोगफलमेतदिति ज्ञापनार्थं पठंति—वेयावचगराणमित्यादि”, अत्र च एता इति सिद्धाणं बुद्धाणं १ जो देवाणऽपि २ इफोऽपि  
इति ३, अन्या अपीति उर्ज्जितसेल १ चत्तारि अट्ट २ तथा ‘जे अ अईये’त्यादि ३, अत एवात्र बहुवचनं संभाव्यते, अन्यथा  
द्विवचनं दद्यात्, ‘पठंति सेसा जहिच्छाए’ इत्यावश्यकचूर्णिवचनादित्यर्थः, न च तत्र नियम इति न तद्व्याख्यानक्रियेति तु  
भणंतः श्रीहरिभद्रयुरिपादा एवं ज्ञापयंति—यदत्र यदृच्छया भण्यते तन्न व्याख्यायते, यत्पुनर्नियमतो भणनीयं तद् व्याख्यायते,

मथुराक्ष-  
पककथा

॥३८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥३८९॥

तद्, व्याख्यातं च वेयावच्चगराणमित्यादियत्र, तथा चोक्तं—“एवमेतत्पठित्वेत्यादि यावत्पठंति वेयावच्चगराणमित्यादि”, ततश्च स्थि-  
तमेतत्—यद्दुत वेयावच्चगराणमित्यप्यधिकारोऽवश्यं भणनीय एव, अन्यथा व्याख्यानासंभवात्, यदि पुनरेषोऽपि वैयावृत्त्यकरा-  
धिकार उक्तयन्ताद्यधिकारवत् कैश्चिद् भणनीयतया यादृच्छिकः स्यात्तदा उज्जितसेलेत्यादिगाथावदयमपि न व्याख्यायेत, व्या-  
ख्यातश्च नियमभणनीयसिद्धादिगाथाभिः सहायमनुविद्धसंबन्धेनेत्यतोऽनुष्ठितसंबन्धायातत्वात् सिद्धाद्यधिकारवदनुस्यूत एव भण-  
नीयः, अथ न प्रमाणं तत्र व्याख्यातसूत्रमिति चेत् एतं तर्हि हत सकलचैत्यवन्दनाक्रमाभावप्रसंगः, तत्रैवास्या एतं क्रमस्य दर्शित-  
त्वात्, तदन्यत्र तथा तद्व्याख्यानाभावात्, व्याख्यानेऽप्येतदनुसारित्वात् तस्य, पश्चात्कालप्रभत्वात्, नव्यकरणस्य तु सुंदर-  
स्यापि भवनिबधनत्वात्, तत्रोक्तस्य तूपदेशायाततया स्वच्छंदकल्पितताऽभावादिति परिभाषनीयं बह्वत्र माध्यस्थ्यमनसा, विमर्श-  
नीयं सूक्ष्मधिया, विचिंतनीयं सिद्धातरहस्यं, पर्युपासनीयाः श्रुतवृद्धाः, प्रवर्तितव्यं अमदाग्रहविरहेण, यतितव्यं निजशक्त्यानुकू-  
ल्यमिति । एव द्वितीयदशमैकादशवर्जिताः शेषाः प्रथमाद्या द्वादशपर्यन्ता नत्र अधिकारा उपदेशायातल्लितविस्तराव्याख्यातसूत्र-  
सिद्ध्या इति सिद्धं, आदिशब्दात् पाक्षिकसूत्रचूर्ण्यादिग्रहः, तत्र सूत्रं—‘देवसक्तिपय’त्ति, अत्र चूर्णिणः—विरहपडिवत्तिकाले चिद्वंद-  
णाद्गणोवयारेण अवस्सं जहासंनिहिया देवया संनिहाणमि भवन्ति, अओ देवसक्तिव्यं भणियति, अयमत्र भावार्थः—ताम् गणधरै-  
र्दाढ्यार्थं पचसाक्षिकं धर्मानुष्ठानं प्रतिपादितं, लोकेऽपि व्यग्रहारदार्यस्य तथा दर्शनात्, तत्र देवा अपि साक्षिण उक्ताः, ते च  
चैत्यवन्दनाद्युपचारेणासन्नीभूता साक्षिता प्रतिपद्यते, चैत्यवन्दनामध्ये च तेषामुपचारः कायोत्सर्गस्तुतिदानादिः क्रियते, अन्यस्य  
त्रासंभवादश्रुतत्वाच्च, ततश्चैवमायातं—यथा चैत्यवन्दनामध्ये देवकायोत्सर्गादि करणीयमेव, अन्यथा तत्रान्यत्तदुपचाराभावे देव

सुरस्मरण-  
सिद्धिः

॥३८९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारिणी  
॥३९०॥

साक्षिकत्वासिद्धेः, चूर्णिकारेण तथैव व्याख्यातत्वान्निश्चीयते, तच्चैतद् देवसक्खियंतिस्त्रप्रामाण्यात्, एवमेव पूर्वापरविरोधाभावाद्, उक्तं च सूत्रकत्वं ललितविस्तरायामप्यस्य, तथा चोक्तं "व्याख्यातं सिद्धेभ्यः इत्यादि सूत्र"मिति, तथा इदमेव वचनं ज्ञापकमिति, वचनं सूत्रं च पर्यायी, एवं च सूत्रसिद्ध्या अप्येते नव अधिकारा इति सिद्धं, ननु च ज्ञातं तावत् प्रथमतृतीयचतुर्थपंचमपष्टमसप्तमाष्टमनवमद्वादशेति नवाधिकारा एवं सिद्धांताद्यनुसारेण भण्यंते, परं भवद्भिर्वारि अहिगारा इति प्राक् प्रतिज्ञातं ततः शेषाः कुतः प्रामाण्यात् पठ्यंते इत्याशंक्याह—'तिन्नि सुचे'त्यादि, त्रयोऽधिकाराः पुनः 'सुय'त्ति 'ते लुम्बे'ति पूर्वपदस्थवहुशब्दलोपात् ये बहुश्रुतास्तेषां पारंपर्येण—गीतार्थपूर्वाचार्यसंप्रदायेन भण्यंते, पारंपर्यागतस्यार्थस्य स्वमत्या निषेधयितुमशक्यत्वात्, तन्निषेधे निघ्नवमार्गानुयायितापत्तेः, उक्तं च द्वितीयांगनिर्युक्तौ—आयरियपरंपरणेण आगयं जो उ अप्पुद्धीए । कोवेइ छेयवाई जमालिनासं स नासिहिइ॥१॥त्ति, अशठाचरित्वेन च आज्ञारूपत्वात्, तथापि निषेधे जिनाशातनाप्रसंगात्, तथा च कल्पभाष्यं—आयरणाविहु आणा अकिरुद्धा चेव होइ आणत्ति । इहरा तित्थयरासायणत्ति तल्लक्खणं चेया॥१॥मित्यादि, अथवा सुयपरंपरयत्ति यथा श्रुतस्य व्याख्यानं निर्युक्तिस्ततोऽपि भाष्यचूर्ण्यादयः एवं श्रुतपारंपर्येण, अयमर्थः—यथा सूत्रे चैत्यवंदनात्पः श्रुतस्तवं यावदुक्तं, निर्युक्तौ तु सिद्धाण श्रुई य किइकम्मंति श्रुतस्तवस्योपरि सिद्धस्तुतिर्भणिता, चूर्णो तु सिद्धस्तुतेरप्युपरि श्रीवीरस्तुतिद्वयं व्याख्याय भणितं—'जहा एए तिन्नि सिलोगा भन्ति, सेसा जहिच्छाए'त्ति, ततश्च यथा निर्युक्त्यादिव्याख्याताः सिद्धादिगाथास्तिस्रो भण्यंते तथा उज्जयंताद्यपि भण्यते, चूर्णिकारेणानिषिद्धत्वादिच्छाद्वारेणानुज्ञातत्वाच्च, तथाहि—सेसत्ति, अनेन उज्जयंतादिगाथास्तिस्रो प्रतिपादिताः, असतो भणनाभावात्, जहिच्छाए इत्यनेन तु वंदनकरणेच्छावतां उज्जितादिगाथाभणने स्वाभिमतत्वं द-

सुरस्मरण-  
सिद्धिः

॥३९०॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३९१॥

दर्शयति, अनभिमतस्येच्छायोगाभावात्, येषां हि उज्जयंतादिवंदितुमिच्छातिशयस्ते भणंतु नाम उज्जयंतादिगाथाः, नात्र दोषो, जिनबहुमानतया कर्मक्षयहेतुत्वात् तत्प्रवृत्तेरित्यर्थः, अथ के ते त्रयोऽधिकारा एवं श्रुतपारंपर्येण भण्यंते इत्याह—'वीओ' इत्यादि, द्वितीयो 'जे अ अईये'त्यादिरूपः दशमः 'उज्जिते'त्यादिलक्षणः एकादशः 'चत्तारी'त्यादिस्वरूपः, एते त्रयः इत्यर्थः॥ अमुमेवार्थं भाष्यकृत् स्पष्टयन्नाह—

आवस्सयचुण्णीए जं भणियं सेसया जहिच्छाए । तेणं उज्जिताइवि अहिगारा सुयमया चेव ॥४९॥

आवश्यकचूण्णौ प्रतिक्रमणाध्ययने यद्—यस्माद् भणितमिदं, तद् भणितमेव दर्शयति—सेसया जहिच्छाए, भणंतीति प्रकृतं, शेषाः—सिद्धाणं १ जो देवाणवि २ एक्कोऽवीति ३ गाथाभ्यो अन्या गाथा उज्जितसेलेत्यादिका यदृच्छया, अयमर्थः—यस्य भावनातिशयतो नेमिनाथादि वंदितुं वांछा वर्त्तते स भणतु नामैतां गाथां, न दोषः, संवेगादिकारणत्वेन दर्शनविशुद्धिहेतुत्वात्, तस्याश्च मोक्षांगतया कर्त्तव्यत्वात्, मोक्षस्य चाक्षेपेण प्राप्तुमिष्टत्वात्, तदर्थमेव च सकलधर्मानुष्ठानप्रवृत्तेः, यत्तत्रैवं शेषा गाथा-  
चूर्णिणकृता भणितास्तेन कारणेनेदं निश्चीयते यदुत पूर्वोक्ता नवाधिकारास्तावत् सूत्रसिद्धा एव, येऽपि चोज्जंतादयोऽधिकारास्तेऽपि श्रुते—चूर्ण्यादिरूपे श्रुतविवरणे पदेऽपि पदसमुदायोपचारात् मता एव अभिमता एव, अनभिमते सतां प्रवर्त्तयितुं योगाभावात् इच्छायां भणितत्वात्, अन्यथाऽनाप्तत्वप्रसंगात्, अनिपिद्धत्वात् ॥३८॥ आह—उज्जिताइवित्यत्रादिशब्देन चत्तारीत्येकादश एवा-  
धिकारोऽनुमीयते क्रमानुविद्धत्वात् न पुनर्द्वितीयः, तस्यान्यत्र पाठाद्, अतः स कथं भण्यते इत्याशंक्याह—

वीओ सुयत्थयाइइ अत्थओ वण्णिओ तहिं चेव । सकत्थयंते पढिओ पुच्चायरिणहिं पयडत्थो ॥५०॥

अधिकारं  
श्रामाण्यम्

॥३९१॥

न केवलं दसमैकादशाधिकारौ चूर्णिकारभणितत्वात् भण्येते, किंतु द्वितीयोऽपीत्यपिर्गम्यः, जे य अईयेत्यादिलक्षणोऽप्यधि-  
कारः श्रुतस्तवस्य चतुर्थदंडकस्य आदौ पुक्खरवरदीतिगाथायां अर्थतो-अर्थमाश्रित्य वर्णिता-व्यावर्णितास्तत्रैव-आवश्यकचू-  
णविव, अयमत्र भावार्थः-द्वितीयाधिकारार्थो द्रव्याहर्ह्वंदना, सा च तत्र भणिता, तथाहि-उक्कोसपएणं सत्तरिं तित्थयरसयं  
जहण्णपएण वीसं तित्थयरा, एए ताव एगकालेणं भवंति, अईया अणागया अणंता ते तित्थयरे नमंसामित्ति एवं चूर्णिणव्याख्या-  
तार्थस्वरूपत्वेन चूर्ण्युक्त एवायमपीति भण्यते, ननु यद्येवं चूर्ण्युक्तार्थतयाऽयं भण्यते तर्हि तत्रैव भण्यतां, किमन्यत्र पाठेनेत्याह-  
शक्रस्तवांते-प्रणिपातदंडकानंतरं पठितो-भणितः पूर्वाचार्यैः-पूर्वैरनुयोगकृद्भिः, शक्रस्तवांतेऽस्य स्थानात्, भावाहर्ह्वंदनानंतरं  
द्रव्याहर्ह्वंदनायाः क्रमप्राप्तत्वात्, प्रथमाधिकारेऽपि नवमसंपदि किंचित्तद्भणनात्, अस्य तु तद्विस्तरार्थत्वाद्, इत्यमेव च बहुभ-  
व्योपकारदर्शनात् भावप्राधान्याश्रयेण च पश्चानुपूर्व्या चैत्यवंदनायाः प्रारंभात्, तस्या अप्यागमेऽनुज्ञातत्वात्, श्रुतस्तवादौ त्वस्य  
पाठेऽनानुपूर्व्या अप्यसंभवात् तन्मध्यपाठेऽपि व्यत्याग्रेडितदोषप्रसंगात्, शक्रस्तवांतभणने तु दोषासंभवात्, दंडकांतेऽन्यस्यापि  
स्तुतिस्तवादेर्भणनादित्येवं निर्दोषत्वेन पूर्ववृद्धैः शक्रस्तवांते अयं पठितस्तथैव भण्यते, वृद्धाचरितस्य जीतव्यवहाररूपत्वात्, उक्तं  
च-“जीयंति वा करणिज्जंति वा आयरणिज्जंति वा एगट्ठा” तथा “वत्तणुवत्तपवत्तो बहुसो जासेविओ महाणेण । एसो य जी-  
यकप्पो पंनमओ होइ ववहारो ॥१॥ वत्तो नामं इकसि अणुवत्तो जो पुणोवि वियवारं । तइयट्ठाण पवत्तो सुपरिग्गहिओ महा-  
णेण ॥२॥त्ति, वृत्त एकदा नवो जातः पात्रबंधग्रंथ्यादिवदित्यादि, तथा, प्रकटोऽर्थः-सुगमार्थः, कृत इति शेषः, बालादिनाऽप्येवं  
शुभभाववृद्धेः, चूर्ण्युक्तमर्थं हि केचदेव जानते, एवं तु पाठे मंदमतीनामपि भवति यथा वयं त्रिकालभाविनो जिनात्तधुना वंदामहे;

श्रीदे०  
वैद्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३९३॥

ततश्च सुलभ एव शुभभाववृद्धिः, बोधनिमित्तत्वात्तस्य इत्यलं प्रसंगेन ॥ ३७ ॥ एवं च द्वादशाधिकारस्वरूपं निरूप्य तद्भणने  
तात्पर्यार्थं प्ररूपयन्नाह—

असदाइन्द्रजणवज्जं गीयत्यअचारियंति मज्झत्था । आयरणाविहु आणत्तिवघणओ सुवहु मन्नंति ॥ ५१ ॥

अशठेन-निर्मायेन, एतेन चास्याविप्रतारकत्वमाह, आ इति मर्यादया सूत्रोक्तया गुरुलाघवचितयेत्यर्थः, अनेन चाचीर्णा-  
कर्तुः प्रमाणत्वं दर्शयति, अगीतार्थस्य प्रमाणत्वायोगात्, आचरितस्य तु सूत्रानुसारित्वं गुरुलाघवचितया कृतस्य सूत्रेण सहपूर्वा-  
परविरोभावात्, चीर्ण-चरितं देशकालाद्यपेक्षया गुणाधायित्वेन बहुभव्योपकारीतिकृत्वा अशठाचीर्णं, तथा अनवद्यं-निर्दोषं जिन-  
स्तुत्यादिरूपतया कर्मक्षयहेतुत्वात्, तथा गीतार्थैः-तदन्यैस्तत्कालवर्तिभिर्न निवारितं, शोभनत्वादेव, दर्शनादिविशोधकत्वाद्  
जिनस्तुत्यादेः इति-एवं यत् बहुबहुश्रुतसंविग्रपूर्वाचार्यसंमतमित्यर्थः, तत् सुवहु मन्यंते इति गाथांते संबन्धः, के इत्याह-मध्यस्थः  
कुग्रहकलंकाकलुपितचेतोवृत्तित्वेन रागाद्यस्पृष्टाः, उक्तं च-“जो नपि वड्ढे रागे नपि दोसे दुण्ह मज्झयारंमि । सो हवई मज्झत्यो  
सेसा सच्चे अमज्झत्था ॥१॥”ति, अन्यथा धर्मानर्हत्वाद्, आह-“रत्तो दुट्ठो मूढो पुण्वि बुग्गाहिओ य चत्तारि । एण धम्मअण-  
रिहा अरिहो पुण होइ मज्झत्यो ॥१॥”ति, आचरणापीति, न केवलं सूत्रोक्तमेवाज्ञा, किंतु आचरणापि संविग्रगीतार्थाचरितमपि  
आज्ञैव हुरेयार्थं, सूत्रोपदेश एव, आतीर्थानुसृतिजीताख्यपंचमव्यवहाररूपत्वात्, आह च-“बहुसुयकमाणुपत्ता आयरणा धरइ  
सुत्तविरहेऽपि । विज्झाएऽपि पईवे नअइ दिट्ठं सुदिट्ठीहिं ॥१॥ जीवियपुच्चं जीवइ जीविस्सइ जेण धंमियजणम्मि । जीयंति तेण  
भन्नइ आयरणा समयकुसलेहिं ॥२॥ तम्हा अनायमूला हिंसारहिया सुज्झाणजणणी य । सरिपरंपरत्ता सुत्तं य पमाणमायरणा ॥३॥

आचरणा-  
धिकारः

॥३९३॥

न केरलं दममैकादशाधिकारौ चूर्णिकारभणित्वात् भण्येते, किंतु द्वितीयोऽपीत्यपिर्गम्यः, जे य अईयेत्यादिलक्षणोऽप्यधि-  
कारः श्रुतस्तस्य चतुर्वदंडकस्य आदौ पुस्तखररदीतिगाथायां अर्थतो-अर्थमाश्रित्य वर्णिता-व्यावर्णितास्तत्रैव-आश्रयकचू-  
र्णारिण, अयमत्र भागार्थः-द्वितीयाधिकाराथो द्रव्याऽर्हद्वंदना, सा च तत्र भणिता, तथाहि-उक्कोमपएणं सत्तरिं तित्थयरसयं  
जहण्णपएण गीसं तित्थयरा, एए ताव एगकालेणं भवंत्ति, अईया अणागया अणंता ते तित्थयरे नमंमामित्ति एं चूर्णिणव्याख्या-  
नार्थस्वरूपत्वेन चूर्ण्युक्त एनायमपीति भण्यते, ननु यद्येवं चूर्ण्युक्तार्थतयाऽयं भण्यते तर्हि तत्रैव भण्यतां, किमन्यत्र पाठेनेत्याह-  
शक्रस्तवाने-प्रणिपातदंडकानंतर पठितो-भणितः पूर्वाचार्यैः-पूर्वेरनुयोगकृद्धि, शक्रस्तवांतेऽस्य स्थानात्, भागार्हद्वंदनानंतरं  
द्रव्यार्हद्वंदनायाः क्रमप्राप्तत्वात्, प्रथमाधिकारेऽपि नमसंपदि किञ्चित्तदुभणनात्, अस्य तु तद्विस्तरार्थत्वाद्, इत्थमेव च बहुभ-  
व्योपशारदर्शनात् भागप्राधान्याश्रयेण च पश्चानुपूर्व्या चेत्यद्वंदनायाः प्रारभात्, तस्या अप्यागमेऽनुज्ञातत्वात्, श्रुतस्तवादौ त्वस्य  
पाठेऽनानुपूर्व्या अप्यसंभवात् तन्मध्यपाठेऽपि व्यत्याग्रेडितदोषप्रसंगात्, शक्रस्तवांतभणने तु दोषासंभवात्, दंडकांतेऽन्यस्यापि  
स्तुतिसारादेर्भणनादित्येव निर्दोषत्वेन पूर्ववृद्धैः शक्रस्तवाते अयं पठितस्तथैव भण्यते, वृद्धाचरितस्य जीतव्यप्रहाररूपत्वात्, उक्तं  
च-“जीयंति वा करणिज्जंति वा आयरणिज्जंति वा एगट्टा” तथा “उत्तणुत्तपत्तो बहुसो जासेविओ महाणेण । एसो य जी-  
यरुप्पो पंचमओ होइ उवहारो ॥१॥ पत्तो नामं इकसि उणुत्तो जो पुणोवि वियवार । तइयट्टाण पवत्तो सुपरिग्गाहिओ महा-  
णेण ॥२॥त्ति, वृत्त एरुदा नवो जातः पात्रबंधग्रंथ्यादिरदित्यादि, तथा, प्रकटोऽर्थः-सुगमार्थः, कृत इति शेषः, बालादिनाऽप्येवं  
शुभभाष्यद्वैः, चूर्ण्युक्तमर्थं हि केचदेव जानते, एं तु पाठे मंदमतीनामपि भवति यथा यं त्रिकालभाषिनो जिनात्तधुना पंडामहे,

ततश्च सुलभ एव शुभभाववृद्धिः, बोधनिमित्तत्वात्तस्य इत्यलं प्रसंगेन ॥ ३७ ॥ एवं च द्वादशाधिकारस्वरूपं निरूप्य तद्भणने तात्पर्यार्थं प्ररूपयन्नाह—

असदाइन्द्राणवज्रं गीयत्यववारियंति मज्झत्था । आचरणाविहु आणत्तिवयणओ सुबहु मन्नंति ॥ ५१ ॥  
अशठेन-निर्म्मार्थेन, एतेन चास्याविप्रतारकत्वमाह, आ इति मर्यादया सूत्रोक्तया गुरुलाघवचिंतयेत्यर्थः, अनेन चाचीर्णा-  
कर्तुः प्रमाणत्वं दर्शयति, अगीतार्थस्य प्रमाणत्वायोगात्, आचरितस्य तु सूत्रानुसारित्वं गुरुलाघवचिंतया कृतस्य सूत्रेण सहपूर्वा-  
परविरोभावात्, चीर्णा-चरितं देशकालाद्यपेक्षया गुणाधायित्वेन बहुभव्योपकारीतिकृत्वा अशठाचीर्णं, तथा अनवद्यं-निर्दोषं जिन-  
स्तुत्यादिरूपतया कर्मक्षयहेतुत्वात्, तथा गीतार्थः-तदन्यैस्तत्कालवर्तिभिर्न निवारितं, शोभनत्वादेव, दर्शनादिविशोधकत्वाद्  
जिनस्तुत्यादेः इति-एवं यत् बहुबहुश्रुतसंविग्रपूर्वाचार्यसंमतमित्यर्थः, तत् सुबहु मन्यंते इति गाथांते संबन्धः, के इत्याह-मध्यस्थः  
कुग्रहकलंकाकलुपितचेतोवृत्तित्वेन रागाद्यस्पृष्टाः, उक्तं च-“जो नवि वट्टइ रागे नवि दोसे दुण्ह मज्झयारंमि । सो हवई मज्झत्थो  
सेसा सव्वे अमज्झत्था ॥१॥”त्ति, अन्यथा धर्म्मार्नहत्वाद्, आह-“रत्तो दुट्ठो मूढो पुत्तिव बुग्गाहिओ य चत्तारि । एए धम्मअण-  
रिहा अरिहो पुण होइ मज्झत्थो ॥१॥”त्ति, आचरणापीति, न केवलं सूत्रोक्तमेवाज्ञा, किंतु आचरणापि संविग्रगीतार्थाचरितमपि  
आज्ञैव हुरेवार्थे, सूत्रोपदेश एव, आतीर्थानुवर्तिजीताख्यपंचमव्यवहाररूपत्वात्, आह च-“बहुसुयकमाणुपत्ता आचरणा धरइ  
सुत्तविरहेऽवि । विज्झाएऽवि पईवे नज्जइ दिट्ठं सुदिट्ठीहिं ॥१॥ जीचियपुच्चं जीवइ जीविस्सइ जेण धंमियज्जणम्मि । जीयंति तेण  
भन्नइ आचरणा समयकुसलेहिं ॥२॥ तम्हा अनायमूला हिंसारहिपा सुज्जाणजणणी य । सरिपरंपरत्ता सुत्तं व पमाणमाचरणा ॥३॥

धीदे०  
पेल्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥३९४॥

इत्येवं यद् वचनं—सुखं तथा कल्पनिर्युक्तिः—आयणाविद्वा आणा अविरुद्धा चैव होइ आणत्ति । इहारा तित्थयरासायणात्ति तल्लक्खणं  
चेयं ॥१॥ असद्वेण समाइण्णं जं कत्थइ केणई अमावजं । न निवारियमत्तेहिं बहुमणुमयमेवमाइण्णं ॥२॥ न्ति, तस्मात्तद्वचनप्रामाण्यात्  
मुण्डु—यथातध्यम्य प्ररूपणाद्यतिशयेन 'बहुमानो मानसी प्रीति'रिति वचनात्, यत उक्तं—“अवलंविऊण कजं जं किंचिवि आय-  
रति गीयत्था । थोउपराहइहुगुण सव्वेसिं तं पमाणं ॥१॥”ति, यतः—“संविग्गा विहिरसिया गीयत्थतमा सूरिणो पुरिमा । न य ते  
सुत्तविरुद्धं सामायारिं परुत्ति ॥२॥ अविय—जं बहुखायं दीसइ न य दीसइ कहवि भासियं सुत्ते । पडिसेहोऽवि न दीसइ मोणं  
निय तत्थ गीयाणं ॥३॥” मित्यादि ॥ सांप्रतं चउरो थुइत्ति पोडशं द्वारं विवृण्वन्नाह—

अहिगायजिणपदमथुई वीया सव्ववाण तइय नाणस्स । वेयावच्चगराणं उवओगत्यं चउत्थथुई ॥ ५२ ॥

यस्य मूलनिवादेः पुरतश्चैत्यवंदना कर्तुमारभ्यतेऽसात्रविकृतजिन उच्यते तमाश्रित्य प्रथमा स्तुतिर्दातव्या, तन्नामादिगर्भा  
गामान्येन जिनगुणोत्कीर्त्तरूपा वेत्यर्थः, उक्तं च ललितविस्तरायां—“अत्रेवं बृद्धा वदंति—यत्र किलायतनादौ वंदनं चिकीर्षितं  
तत्र यस्य भगवतः संनिहितं स्थापनारूपं तं पुरस्कृत्य प्रथमः कायोत्सर्गः स्तुतिश्च, तथा शोभनभावजनकत्वेन तस्यैवोपकारित्वा”-  
दिति१, तथा द्वितीया स्तुतिः सर्वेषां जिनानां, प्रायो बहुवचनादिगर्भा सर्वजिनसाधारणेत्यर्थः, अन्यथाऽन्यकायोत्सर्गेऽन्या स्तु-  
तिरिति न सम्यग्, अतिप्रसंगादिति, तथा तृतीया स्तुतिर्ज्ञानस्य श्रुतज्ञानमाहात्म्यवर्णनपरेत्याम्नायः, तथा च ललितविस्तरा-  
“प्रेतिगमेतदि”ति वृत्तिः, पंजिरायां—संप्रदायश्चायं यदुत तृतीया स्तुतिः श्रुतस्ये”ति३, चतुर्थी स्तुतिः पुनर्वैयावृत्त्यकराणां—यक्षांवा-  
प्रभृतीनां सम्यग्दृष्टिदेवतानां, किमर्थमित्याह—उपयोगार्थं—स्मृत्येषु तेषां साधनतानिमित्तं, भवति च गुणोपवृंहणतस्तद्भाव-

स्तुति-  
चतुष्कम्

॥३९४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३९५॥

वृद्धिः, ततश्च स्वकार्यकारित्वोपयुक्तता, जगत्प्रसिद्धमेतत् यत्प्रशंसातः सोत्साहं कार्यकरणादर इति, तुशब्दो विशेषकस्तेन याः  
श्रुताङ्गीशासनदवतादिविषयाः स्तुतयस्ताः सर्वा अपि चतुर्थस्तुतौ निपतन्ति, गुणोपबृंहणद्वारेण तासामप्युपयुक्ततादिफलत्वात्,  
स्तुतियुगलेषु तथानिवंधनात्, गुणोत्कीर्तनस्य द्वितीयस्तुतिरूपत्वात्, तथाहि—जिनज्ञानस्तुतिर्वंदनाद्यात्मकत्वादेका गण्यते,  
वैयावृच्यकरादिस्तुतयस्तु द्वितीया गुणोत्कीर्तनादिरूपत्वाद्, एवमेव युगलत्वसिद्धेः, भावितं चैतत् पंचमे वंदनाद्वारे, अत एव  
फचित् युगले चतुर्था स्तुतिः 'सर्वे यक्षाविके'त्यादि वैयावृच्यकराणां, फापि च 'भूयासुः सर्वदा देवा देवीभि'रिति सामान्यतः  
सर्वदेवतानां, कुत्रापि 'गौरी सैरेभे'ति विद्यादेवतानां, अन्यत्र 'निष्कव्योमनीले'ति देवविशेषविषया 'एकत्र विकटदशने'ति देव्या  
एव, कुत्रचिच्च 'आमूलालोलधूली'त्यादि श्रुतदवतायाः, इत्यादि परिभाषनीयमिदं सूक्ष्मधिया कुग्रहविरहेण । कायोत्सर्गविषयेऽपि  
बहु विमर्शनीयं यतो देवसिकावश्यकमध्ये सामान्यतो वैयावृच्यकरान् विमुच्य केवलश्रुतदेवतादेः कायोत्सर्गकरणं, पाक्षिकादौ तु  
भुवनदेव्या, दीक्षादौ तु शासनदेव्यादीनामपि, इत्यलं प्रसंधेन, तच्चं तु परमर्पयो विदंतीति । स्तुतयश्चैताः—जिनं यशःप्रतापास्त-  
पुष्पदंतं समंततः । संस्तुवे यत्क्रमौ मोहपुष्पदंतं समंततः ॥१॥ प्रातस्तेऽंहिद्वयी येन, सरोजास्य समा ! नता । त्वयाऽस्तु जिनध-  
र्माब्जसरोजास्य समानता ॥२॥ वंदे देव । च्युतोत्पत्तिव्रतकेवलनिर्वृतिम् । विश्वाचित्च्युतोत्पत्तिव्रतकेवलनिर्वृतिम् ॥३॥ चतुरास्यं  
चतुष्कायं, चतुर्धावृषसेवितम् । प्रणमामि जिनाधीशं, चतुर्धावृषसेऽवितम् ॥४॥ जिनेन्द्रानंजनश्यामाकल्याणाब्जहिमप्रभान् । चतु-  
र्विंशतिमानौम्यकल्याणाब्जहिमप्रभान् ॥५॥ विलोक्य विकचांभोजकाननं नाभिनंदनम् । द्रष्टुमुक्कायते कोऽपि, काननं नाभिनंदनम्  
॥६॥ तवानीश ! सदा श्याजितनिष्कोप नाथति । अहितो न हि तं स्वाभाजितनिष्कोऽपनाथति ॥७॥ सदातनाय सेनागभव-

स्तुति-  
चतुष्कम्

॥३९५॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३९६॥

संभव संभव ! । भगवन् भविकानामभव शंभवसंभव ॥८॥ दुष्कृतं मे मनोहंसमानसस्याभिनंदन ! । श्रीसंवरधराधीशमानसस्याभि-  
नंदनः ॥९॥ अज्ञानतिमिरध्वंसे, सुमते ! सुमतेन ते । क्रियते न नमः केनसुमते ! सुमतेन ! ॥१०॥ त्वां नमस्यंति येऽंकस्थपद्मं पद्मप्रभेश !  
ते । त्रैलोक्यमनोहारिपद्मप्रभेशते ॥११॥ सद्भक्त्या यः सदा स्तौति, सुपार्श्वमपुनर्भवम् । सोऽस्तजातिमृतिर्याति, सुपार्श्वमपुनर्भवम्  
॥१२॥ सहर्षं ये सभीक्षंते, मुखं चंद्रप्रभांग ! ते । विदुः सकलसौख्यानां, मुखं चंद्रप्रभांगते ! ॥१३॥ सदा स्वपादसंलीनं, सुविधे !  
सुविधेहितम् । येन ते दर्शनं देव !, सुविधे ! सुविधेहितम् ॥१४॥ यथा त्वं शीतलस्वामिन् !, सोमः सोममनोऽहरः । भव्यानां न  
तथा भाति, सोमः सोममनोहरः ॥१५॥ तं वृणोति स्वयंभूष्णु, श्रेयांसं बहुमा नतः । जिनेशं नौति यो नित्यं, श्रेयांसं बहुमानतः  
॥१६॥ वाक्यं यस्तव शुश्राव, वासुपूज्य ! सनातनम् । भवे कुर्यात्तमोदाववाः सुपूज्य ! सनातनम् ॥ १७ ॥ कस्य प्रमोदमन्यत्र,  
विमलात् परमात्मनः । हृदयं भजते देवाद्, विमलात् परमात्मनः ॥१८॥ दृष्ट्वा त्वाऽनंतजिद् भावपराजितमनो भवम् । भविनां  
नाथ ! नमैत्यपराजिनमनोभवम् ॥१९॥ श्रीधर्मेण क्षमारामप्रकृष्टतरवारिणा । सनाथोऽसि तृपावल्लीप्रकृष्टतरवारिणा ॥२०॥ त्वया  
द्वेधाऽरिवर्गो यत्पदौ श्रीशांति नाथ ! ते । शरणं तद् भवध्वस्तापदौ श्रीशांतिनाथ ! ते ॥२१॥ वीतरागं स्तुवे कुंथुं, जिनं शंभुं  
स्वयंभुवम् । सरागत्वात् पुनर्नान्यं, जिनं शंभुं स्वयंभुवम् ॥२२॥ विजिग्ये लीलया येन, प्रद्युम्नो भवताऽदरः । भविनां भवनाशाय,  
प्रद्युम्नो भवतादरः ॥२३॥ यः स्यात् मल्ले नमल्लेखो, मल्लस्य प्रतिमल्ल ! ते । क्रमो मनसि यो देहमल्लस्य प्रतिमल्लते ॥२४॥ विधत्ते  
सर्वदा यत्ते, समुद्र(सु)व्रतसमुन्नतिम् । समासादयते स्वामिन् !, समुद्र(सु)व्रतसमुन्नतिम् ॥२५॥ दृष्ट्वा समवसृत्यंतर्नमीशं चतुराननम् ।  
पश्येत् कोऽजितस्वं धीमान्नमीशं चतुराननम् ॥२६॥ श्रीनेमिनाथमानौमि, समुद्रविजयांगजम् । हेलानिर्जितसंप्राप्तममुद्रविजयांगजम्

स्तुतयः

॥३९६॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३९७॥

शिरार्थो सेवते ते श्रीपार्थ ! नालीककोमलौ । न क्रमावनिशं नम्रपार्थ ! नालीककोऽमलौ ? ॥२८॥ वरिवस्यति यः श्रीमन्महावीरं  
महोदयम् । सोऽश्रुते जितसंमोहमहावीरं महोदयम् ॥ २९ ॥ श्रीसीमंधरतीर्थेशं, सादरं नुतनिर्जरम् । योऽज्ञानं भिन्ते भस्मसादरं  
नुतनिर्जरम् ॥३०॥ ये वंदंतेऽर्हतो भारतैरावतविदेहकान् । प्राप्यंते प्रवरोदफा, तै रा वत विदेहकान् ॥ ३१ ॥ सप्ततिशतं जिना-  
नामुत्कृष्टपदवर्तिनाम् । वंदे मनुष्यलोकेऽहमुत्कृष्टपदवर्तिनाम् ॥ ३२ ॥ श्रीमन्दीश्वरद्वीपेऽप्रतिमाः प्रणुताच्युताः । द्विपंचाशति  
चैत्येषु, प्रतिमाः प्रणुताच्युताः ! ॥ ३३ ॥ यथात्मनिच्छसि स्थानगृत्रिममकृत्रिमम् । जैनविद्यव्रजं तन्वोमकृत्रिममकृत्रिमम्  
॥३४॥ ये जिनेन्द्रान्नमस्यन्ति, सांप्रतातीतभाविनः । दुष्कृतात्ते विमुच्यंते, सांप्रतातीतभाविनः ॥३५॥ परात्मानो जिनेन्द्रा यैर्नी-  
यंतेऽमा न संप्रति । पदं यान्ति जगन्माननीयं तेऽमानसं प्रति ॥ ३६ ॥ सोऽस्तु मोक्षाय मे जैनो, नयसंगत आगमः । अपि यं  
बुध्यते विद्वानयसंगत आगमः ॥३७॥ त्वन्नामाज्ञानभिद्भ्रमं कीर्तये श्रुतदेवते ! । यन्न कोऽपि त्वदग्रे स्वकीर्तये श्रुतदेवते ॥३८॥  
यक्षांब्राह्मणाः सुराः सर्वे, वैयाच्यकरा जिने । भद्रं कुर्वन्तु संघाय, वैयाच्यकराजिने ॥ ३९ ॥—अभिवंद्य वंदनीयान् निःशेषान्  
भक्तितः समासेन । स्वोपशुपमयमकस्तुतिविषमपदानि विवृणोमि ॥१॥ तत्रादौ सामान्येन जिनेन्द्रानां सिद्धानां च स्तुतिमाह—‘जिनं  
घश’ इत्यादि, जिनं जितरागाधारं अर्हद्भद्वारकं सामान्येन पुंडरीकादिसिद्धं वा यशसा प्रपापेन चास्तौ—तिरस्कृतौ पुष्पदंतौ—  
शशिभास्करौ येन तं, समं—सश्रीकं, ततस्तं, ‘आद्यादिभ्य’ इति द्वितीयार्थे तस्, पुष्पदंतं—कुसुमरदनं समंतत—सम्यग् मोहं वध्नीत ।  
सिद्धार्हत्माधारणां प्राभातिकस्तुतिमाह—‘प्रातस्तेऽंही’त्यादि, सह मया—श्रिया या सा समा अज !—अजन्मान् ॥ कल्याणकैः स्तौति—  
‘वंदे देव’मित्यादि, च्युतोत्पत्तिः—गतजन्मा व्रतस्य कं—सुरसं तस्य ई—श्रीर्यस्य स व्रतके बला—पुण्या निवृत्तिर्यस्य सः व्रतकश्रिया

स्तुतयः

॥३९७॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥३९८॥

बलनिवृत्तिर्यस्य सः, ततो द्वंद्वः, च्युतं-व्यवनं । समवमरणस्थं स्तौति-‘चलुरास्य’मित्यादि, चतुष्प्रकारैर्युपभैः-इंद्रैः सेवितं, देवानां  
चतुर्विधत्वेन तत्स्वामिनामपि चातुर्विध्यमुक्तं, यद्वा देवानां वृषाणः-इंद्राः वृषाणः ‘ते लुग्वे’ति देवपदलोपः, चतुर्विधो धर्मो  
यस्य सः, सहेया-श्रिया यः स से अवितः-कांतिमान्, ततो द्वंद्वः॥ अष्टापदस्तुतिमाह-‘जिनेन्द्राणां जिने’त्यादि, श्यामा-प्रियंगुः  
कल्याणं-स्वर्णं अब्जं-रक्तोत्पलमत्र गार्ह्यं अकल्याणं-अशिवं हिमप्रभः-चंद्रः । प्रत्येकं चतुर्विंशतिं जिनेान् स्तौति-‘विलोक्य  
विरुलचांभोज’मित्यादि, विकचं-श्रमणभावेन लुंचितकेशं यद्वा विकचं-विकसितं अंभोजं-पद्मं तद्वत् कनति-शोभते यत्तदंभोज०  
ततो बहुव्रीहिः, उत्कायते-उत्सुको भवति॥ ‘तवानीशे’त्यादि, नाथति-नाथ इवाचरति योगक्षेमकारी भवति अहितो-वैरी स्वाभया-  
स्वदेहप्रभया जितं निष्कचूर्णं येन, अपनाथति-पीडयति । ‘सनातनाये’त्यादि, सनातनाय-शाश्वताय शश्वत्सुखाय अभव-असंसार  
शंभो असंभव-अजन्मन् ॥ ‘दुष्कृत’मित्यादि, स्य-छिद्धिः॥ ‘अज्ञानतिमिरध्वंसे’त्यादि, शुद्धमते-शासनमते इनते-इनवत् आदित्य-  
वचरतीति इनत् तस्मै, असुमता-प्राणिना इन-स्वामिन् ते-तुभ्यं । ‘त्वां नमस्यंती’त्यादि, मनोहारिणी प्रभा यस्य पद्मवत् प्रभा-  
रुचिर्पस्पाहणेत्यर्थः ईशते-नाथी भवति । ‘सद्भक्त्या य’ इत्यादि, शोभने पार्श्वे यस्य, न पुनर्भवः संसारस्य जन्म वा यस्य,  
अस्ते जन्ममरणे अगृह्णन्-मोक्षं । ‘सहर्षा’ इत्यादि, अंगेति कोमलामंत्रणे हे तव मुखं-उपायं चारित्र्याद्यात्मकं तन्मूलत्वात् स्व-  
र्गापवर्गादिसौख्यानां चंद्रप्रभापत् निर्मलं अंगं यस्य, ते भव्याः । ‘सदा स्वपादे’त्यादि, शोभनविधे सुष्ठु विधया-सुप्रकारेण  
ईदितं-शांछितं चेष्टितं वा क्रियाद्वारेण समाचरति । ‘यथा त्व’मित्यादि, सोमः-शीतलः, सह उमया-कीर्त्या सोमः अहरः-  
हतवान् सोमो-रौद्रः सोमो-गौरीयुतः । ‘तं वृणोती’त्यादि, स्वयंभुष्णु-अप्रार्थितमपि स्वयंभवनशीलं श्रेयो-भद्रं यस्य तं, बहु

स्तुतयः

॥३९८॥

श्रोदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥३९९॥

अत्यर्थं मा-लक्ष्मीः नतो-नम्रः आंतरप्रीतितः। 'वाक्यं यस्तवे'त्यादि, वाः-पानीयं अनंतं-अगमनं। 'कस्य प्रमोदे'त्यादि, विम-  
लात्-निर्मलात् परं-प्रकृष्टं त्वात्मनः। 'दृष्ट्वा त्वनंते'त्यादि, भावपरैः-आंतरवैरिभिः, भवं-हरं अपराजितमनोभवं। 'श्रीधर्मणे'-  
त्यादि, प्रकृष्टेन प्रकर्षेणापिनाशिना इत्यर्थः, तस्वारिः-खड्गविशेषः। 'त्वया द्वेधारी'त्यादि, द्वेधा वाद्यथांतरश्च आंति-बन्ध नाथसे-  
आशास्ते ते-तव। 'वीतराग'मित्यादि, जिने-कृष्णं शंभुं-शिवं स्वयंभुवं-ब्रह्माणं। 'विजिग्ये लीलये'त्यादि, प्रद्युम्नः-कामः अदर-  
निर्भय प्रयुक्तं द्युम्नं-द्रव्यं येन स त्वं भवतात्-भव अरजिन। 'स स्यान्मल्ले'त्यादि, नमंतो-नमनशीला लेखा-देवा यस्य सः 'मदैच  
हर्षे' मदनं मत् 'कुत्संपदादिभ्यः' फिप् मदं-हर्षं लाति-ददाति 'फचिङ्' मल्लः हर्ष इत्यर्थः, यद्वा मल्लस्य अहंकारभाववक्तव्यं  
प्रति मल्लते-धारयति ते-तव। 'विभत्ते' इत्यादि, सह शोभनैर्वर्तैर्यः स समुत्-सहर्षः। 'दृष्ट्वा समवे'त्यादि, नमीशं-नमिनाथं  
जितखं-जितेंद्रियं अजितखं-अजितेंद्रियं अविभुं ईशं-हरं चतुराननं-प्रजापतिं। 'श्रीनेमिनाथ'मित्यादि, संप्राप्त आसमुद्रं विजयो  
येन अंगजेन स हेलया निर्जितो येन नमिना। 'शिषार्थी'त्यादि, नालीकं-पद्मं नम्रः पार्श्वो यक्षो यस्य, नालीकः-असत्परहितः अमलौ-  
निर्मलौ। 'वरिवस्यती'त्यादि, महानुदयो यस्य तं अश्रुते-प्राप्नोति महोदयं-निर्वाणं। 'चे जिनेन्द्रा'नित्यादि, सुगमा (३५)  
'चे वंदंते' इत्यादि, भरतैराद्यतविदेहेषु वा कनंति-शोभंते 'फचिङ्' प्रवरोदर्का-शुभायतिफला पुण्यानुबंधिपुण्यफलेत्यर्थः, रा-लक्ष्मीः  
वतेत्यामंत्रणे। 'ससतिशान'मित्यादि, उत्कृष्टपदवर्तिनः-सर्वोत्कर्षतो युगपदेककालभाविनः उत्कृष्टपदे। 'श्रीमन्नंदीश्वरे'त्यादि,  
प्रणुताच्युताः-नतेन्द्राः अप्रतिमाः-प्रधानाः प्रणुत-स्तुत अच्युत-शाश्वत। 'यद्यात्मनिच्छसी'त्यादि, अकृत्रिमं-कौटिल्यादि-  
रहितं प्रशस्तभासमित्यर्थः तनु-'अमर्षभावेन यदृच्छया वा, परानुवृत्त्या चिकित्सया चे'त्यादिनेतियावत् भज-सेवस्वेत्युक्तं भवति।

स्तुतयः

॥३९९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० सपा  
चारविधौ  
॥४००॥

‘श्रीसीमंधरे’त्यादि, नतनिर्जर-प्रणतसुरं । ‘परात्मानो जिनेन्द्रा’ इत्यादि, परात्मानः-परमात्मस्वरूपाः ते भव्याः अमा-  
निःश्रिका न संप्रत्यपि, अपिर्गम्यः, यद्वा अमाना-अपरिमिता सा-श्रीः यत्र तदमानसं पदं तत्प्रति यांति । ‘सोऽस्तु मोक्षाय’  
इत्यादि, नयैः-नैगमादिभिः संगतः-संमतः समंतादनुगताः आ-समंतात् गमाः-सदृशपाठा यत्र स आगमः, चिद्वानपि-सुधीरपि  
अयः-शुभाग्रहं देवं तस्य संगत्-संयोगात् । ‘त्वन्नामा’ इत्यादि, अज्ञानभिद्धर्म-अज्ञानभेदभावं कीर्त्तये-सगुत्कीर्त्तयंतं प्रयुंजे  
ग्राहयामीतियायत् यं पुरुषं हे श्रुतदे अवते ! भेदप्रदो न कोऽपीति योगः स्वकीर्त्तये-निजस्फूर्त्तये । ‘यक्षांवाद्या’ इत्यादि, वै  
स्फुटं यद्यत्प्रकारादयः ॥ उक्त ‘चउरो शुइ’त्ति षोडशं द्वार, अधुना निमित्तमिति सप्तदशं द्वार विवृण्वन्नाह—

पावस्ववणत्थ इरियाइ वंदणवत्तिघाइ ञ्च निमित्ता । पवयणसुरसरणत्थं उस्सग्गो इय निमित्तऽह् ॥४२॥

पापानां-गमनागमनादिसमुत्थानां क्षपणार्थ-निर्घातनार्थमीर्यापथिक्याः कायोत्सर्ग इति योगः, यदागमः-“गमणागमण-  
विहारे सुत्ते वा सुमिणदंमणे राओ । नावानइसंतारे इरियहियाएँ पडिकमणं ॥१॥” गमनागमनादिममुत्थपापक्षयरूपं फलमीर्याप-  
थिनाकायोत्सर्गाद्भवति इति, तथा वंदनप्रत्ययादीनि पट् निमित्तानि-फलानि येभ्यस्तु, तथा त्रय उत्सर्गा इति शेषः, वंदन-  
पूजन-सत्कार-सन्मान-वोधिलाभ-निरुपसर्गेति पट् फलानि चैत्यवंदनादिकायोत्सर्गेभ्यः, तत्र-सुमरणशुद्धनमणाई सुभम-  
णइत्तणुपवित्ति वंदणयं १ । पुप्फाईहिं पूयणर मिह वत्थाईहिं सकारो ३ ॥ १ ॥ संमाणो मणपीईइ विणयपडित्ति ४ चोहिलामो  
उ । पेचजिणधम्मसंपत्ति ५ निरुपसग्गो उ निव्याणं ६ ॥२॥ अरिहाइवंदणाइसु जं पुन्नफलं हवेउ तं मज्झ । उस्सग्गाउइय तप्फलेहि  
चोही तओत्ति सिवो ॥ ३ ॥ तथा प्रवचनसुराः-सम्यग्दृष्टयो देवास्तेषां सरणार्थ-वैयावृत्त्यकरेत्यादिविशेषणद्वारेणोपबृंहणार्थ

उत्सर्ग-  
निमित्ताः

॥४००॥

क्षुद्रोपद्रवविद्रावणादिकृते तत्तद्गुणप्रशंसया प्रोत्साहनार्थमित्यर्थः, यद्वा तत्कर्त्तव्यानां वैयावृत्त्यादीनां प्रमारादिना श्लथीभूतानां प्रवृत्त्यर्थं अश्लथीभूतानां तु स्थाय्य च सारणा-ज्ञापना तदर्थं, सारणार्थं वा-प्रवचनप्रभावनादौ हितकार्ये प्रेरणार्थं, किं ?-उत्सर्गः-कायोत्सर्गः, चरम इति शेषः, इत्येतानि निमित्तानि-प्रयोजनानि फलानीतियावद्, अष्टौ चैत्यवन्दनायां भवन्तीति शेषः । इह च यद्यपि वैयावृत्त्यकरादयः स्वीयस्मरणार्थं क्रियमाणं कायोत्सर्गं न जानते तथापि तद्विषयकायोत्सर्गात् कर्तुः श्रीगुप्तश्रेष्ठिन इव विमोपशमादिषु श्रुतसिद्धत्वेन आप्तोपदिष्टत्वेनाव्यभिचारित्वात् यथा स्तंभनीयादिभिरपरिज्ञानेऽप्याप्तोपदेशेन स्तंभनादिकर्मकर्तुः स्तंभनाद्यभीष्टफलसिद्धिः, चूर्णौ-तेसिमविन्नाणेऽविद्बु तन्विसउत्सर्गओ फलं होई । विगघजयपुन्नबंधाइकारणं मंतनाएण॥१॥त्ति, ज्ञापयति चैतदिदमेव कायोत्सर्गप्रवर्त्तकं वेयावच्चगणराणमित्यादि सूत्रं, अन्यथाऽभीष्टफलासिद्धौ प्रवर्त्तकत्वायोगात्, उक्तं च ललितविस्तरायां-“तदपरिज्ञानेऽप्यसाचच्छुभसिद्धाविदमेव वचनं ज्ञापक”मिति । श्रीगुप्तश्रेष्ठिकथा त्वियं-इह भरहे सरहे इव रुद्ररुद्रपए पुरीइ विजयाए । अन्नयवणगहणदवानलो नलो नाम आसि निवो ॥१॥ सुपइट्टो वरवंसो महीधरो इव महीधरो सिट्टी । वसणित्ति बहु विगुत्तो सिरिगुत्तो नंदणो तस्स ॥२॥ कइयावि निवसमीवे पाहुडहत्थो महीधरो पत्तो । किं दीससि उव्विग्गुव्व सिट्टि इय निवइणा पुट्टो ॥३॥ साहइ सिट्टी सामिय ! सिरिगुत्तो नाम अत्थि मह पुत्तो । वेसाइवमणभवणं जूएणं पुण सया रमइ ॥४॥ हारेइ बहुं दव्वं नहु विरमइ वारिओऽवि वेसाहिं । मुत्तं भोयणमित्तं पडिसिद्धं से गिहे सव्वं ॥ ५ ॥ कल्ले पुण तेणं जूयवइयरे हारियंमि बहुदव्वे । इह सोमसिद्धिभरणे रयणीए पाडियं खित्तं ॥६॥ गहियं पभूयदव्वं दिन्नं जं जेसि आसि दायव्वं । तम्मित्तेहिं इमो मे कहिओ सव्वोऽवि चुत्तंतो ॥७॥ जावज्जवि न उ फुट्टइ इय चुत्तंतो जणंमि ताव सयं । कहिउं इहागओ पहु ! इत्तुच्चिय अग्नि

उच्चिग्गो ॥८॥ ता सामिसाल जो इह सुयावराहंमि हुज मह दंडो । तं कुणह आह राया सिद्धि ! तुमं होसु वीसत्यो ॥९॥ इय  
भणिय जाव सिद्धि विसज्जए ताव तत्थ सोमोऽवि । पत्तो केणऽवि अहयं मुट्ठो मुट्ठोचि जंपन्तो ॥१०॥ रायाऽऽह मा विसीयसु गयं  
घणं कहसु सोम ! सो भणइ । देव ! पणवीससहसा कणगस्स गिहा ममऽज्ज गयं ॥११॥ नियसिरिघराउ राया तच्चियमित्तं दवा-  
विउं दव्वं । जहउच्चियं सकारिय विसज्जिय तयं सठाणंमि ॥ १२ ॥ तेढाविय सिरिगुत्तं रोसारुणलोपणो पयंपेइ । रे सोमसिद्धि-  
दव्वं अवहरियं झत्ति अप्पेसु ॥ १३ ॥ सो आह देव ! एवंविहमवदुंतंयि कोऽवि किं भणइ ? । किं अम्ह कुले केणवि अकजमेवं  
विहियपुव्वं ? ॥१४॥ नत्थि खलु दुज्जणाणं किंपि अत्तच्चवयंति मन्नेमि । अहवा सामिय ! इत्तो जलंपि पाहामि सुद्धोऽहं ॥१५॥  
पच्चक्खनिहवुप्पन्नमच्चुणा तो निवेण कारणिया । पुरिसा एवं बुत्ता भो भो एयं दुरायारं ॥ १६ ॥ फालेण विहियसुद्धि लहु मह  
अप्पेह तेऽवि एवंति । बुत्तुं उच्चालंती दिव्वट्ठाणस्सुवरि एयं ॥ १७ ॥ सो आह गिण्हिहमहं फालं को पुण सिरंमि इह होही ? ।  
कोवकरालो राया जंपइ अहयं सिरे होहं ॥१८॥ बुद्धा तत्थ नयकहा जत्थ सयं नरवरो सिरे ठाइ । इय भणिरं निंति तयं कार-  
णिया दिव्वठाणंमि ॥१९॥ फालं फुलिंगजाले मुयमाणं सव्वलोपपच्चक्खं । काउं सचेल्हणं कामे सावित्तु सो लेइ ॥२०॥ पुव्व-  
पट्ठियग्गिथंभणमंतस्सरणा अदडुगत्तोवि । सत्तमए मंडलए फालं लहु मुयइ सिरिगुत्तो ॥२१॥ सुद्धो सुद्धत्ति तओ पडिया ताला  
निउत्तपुरिसेहिं । से कंठे पक्खिक्खा माला सियसुरहिकुसुमाणं ॥२२॥ इय बुत्तंतो रत्तो निवेइओ सेधक्किओ चित्ते । अविभाविय  
सि(म)त्थग्गहविहियपइत्तो विचित्तेइ ॥२३॥ दिव्वग्गहणेण सुद्धंमि तक्करे सिरयसंठिओ पुरिसो । चोरोविव दंडिअइ निवेण नय-  
धम्मकलिएण ॥२४॥ सयमेव सिरयपक्खं गहिय अहं सयललोपपच्चक्खं । जइ अप्पमप्पणच्चिय नेव निगिण्हामि चोरव्व ॥२५॥

तां सच्चवाङ्गो राइणुत्ति दिज्जइ इमीइ वाणीए । सलिलंजली तह जए आससिखरं भमउ अजसो ॥ २६ ॥ पयलं जाउ नयकहा  
कलुमउ कलिकालकलिलमखिलजणं । उत्तमज्जहमज्जिममग्गोऽवि समत्तणं लहउ ॥ २७ ॥ ता किं बहुणा मह जीविणण दीहेण नय-  
विहीणेणं ? । वरमिण्हि चिय मरणं पच्छावि अवस्समरियव्वे ॥ २८ ॥ इय निच्छिऊण राया मंतीण कहेइ नियमभिप्पायं । तेऽविहु  
विसायविहुरा एवं विन्नविउमादत्ता ॥ २९ ॥ देव ! न जुअइ कहमवि चित्तिउमवि अप्पणो अहियभाओ । जं अप्पणाऽमुणा खलु  
तायव्वा मेइणी सयला ॥ ३० ॥ किंच-अवितहवयणो सिट्ठी सुद्धो दिव्वेण उयह सिद्धिसुओ । ता अत्थि जलणथंभिणी कावि  
सत्ती धुवमिमस्म ॥ ३१ ॥ दिव्वस्स देवयाओ उवसंनिहियाओ कयाइ नहु हुआ । इत्तुचिय भणियमिणं दिव्वस्स गइ अहो दिव्वा ॥ ३२ ॥  
ता सामि ! इमस्स पुणो विसिद्धतरमंतवाइपचक्खं । दिव्वं दाउं जुअइ इय जाव मणंति मंतिवरा ॥ ३३ ॥ ता विन्नवेइ चित्ती पहु !  
दंसणउसुओ बहिं अत्थि । सिद्धबहुमंतततो जोगिवरो कुसलसिद्धित्ति ॥ ६४ ॥ रन्नोऽणुन्नाए वेत्तिणा तहिं आणियस्स तस्स  
लहुं । विद्धिओचियस्स कहिओ मंतीहिं फालबुत्ततो ॥ ३५ ॥ सो चित्तिय भणइ तयं फालं गाहेह मज्झ पचक्खं । मुणिहह सच्चम-  
सच्चपि वेत्ति मंतीवि एवंति ॥ ३६ ॥ तेडाविय मंतीहिं सिरिगुत्तो पभणिओ विइयदिनसे । जइ रे सुद्धो सच्च पुणरवि गिण्हेसु तो  
फालं ॥ ३७ ॥ गहिउं इमो पयद्धो अह चउदिसि तस्स अक्खए खिवइ । परविज्जाविच्छेयगमंतेणऽमिमंतिउं जोगी ॥ ३८ ॥ तम्म-  
हप्पेण इमस्स विगलिए सच्चहावि मंतबले । फालफुलिगुच्च जलणजालिया पाणिणो दद्दा ॥ ३९ ॥ खुद्धो खुद्धोत्ति जणेण सहरिसं  
पाडिया य से ताला । भुत्तुत्तरसुवणीओ मंतीहिं निवस्स सिद्धिसुओ ॥ ४० ॥ रन्ना भणिओ रे रे जहद्धियं कहसु पुव्वबुत्तंतं । अन्नह  
मरेसि नूणं भयमीओ भणइ तो एसो ॥ ४१ ॥ सामिय ! पुव्वाहियजलणथंभमंतेण दिव्वथंभो मे । आसि कओ संपइ पुण कत्तो-

धीदे०  
 धैत्य० धी-  
 धर्म० मंपा  
 चारपिपौ  
 ॥४०४॥

ऽविदु न फुरिओ मंतो ॥४२॥ तो रघा सफारिय संमाणित्ता विमज्जिओ जोगी । कुद्वेणं आणत्तो निव्विमओ इत्ति सिरिगुत्तो  
 ॥४३॥ दुस्सहणदुद्धदेहो गयपुरपत्तो कहंचि तं जोगिं । ददट्टु सुरुट्टो निदट्टुरट्टुरीइ लह्ठिउं छलं हणइ ॥४४॥ पत्तो निहणं जोगी  
 पलायमाणो इमो तलररेणं । वंधिय कारणियाणं समप्पिओ तेहि पुट्टो य ॥ ४५ ॥ साहइ मे एम वेरी चिराउ पत्तो विणासिओ  
 वेणं । तो झारणियनरेहिं युत्तं जइविय इमं तहवि ॥ ४६ ॥ त्रिजंते नरनाहे नायवियारंमि तह फुरंतंमि । सहसाकरणमजुत्तं सेसं-  
 पिदु किं पुण विणामो ? ॥ ४७ ॥ दोमाण संभवेऽविदु जणस्स नुचिओ परुप्परविणासो । सच्छंदं चिय इहरा अमाणुसं जायइ  
 जपंपि ॥४८॥ जइ रे तुहेम वेरी ता पार ! कहेसि कीम नो अह् ? । सयमेव कुणमि दंडं एवं मइ तंसि दोसिल्लो ॥४९॥ तो  
 दंडपाप्तिपुरिमा वहुं विडंविण पुरे भमाडित्ता । संज्ञाण उछंविण तरुंमि पत्ता सठाणेसु ॥५०॥ दिव्ववसेणं तुट्टो पामो सो निव-  
 ट्ठिओ महीवट्टे । पुण पाणियचेयत्तो नट्टो तत्तो पएमाओ ॥ ५१ ॥ एगंमि वणनिगुंजे भयमीओ जाव पविमए एसो । सज्झाय-  
 परस्स पुरिमस्स ताव वपणं इमं सुणइ ॥५२॥ जीवइअलिअभासण परधणहरणं परित्थिपरिहासो । निसिभत्तं महुमंमाण भक्खणं  
 मज्जपाणं च ॥५३॥ रमणं दुरोदरेणं संगो जूयारवेसमाईहिं । साहुवमणंमि तोसो रायाइविरुद्धमायरणं ॥५४॥ इत्ताइ यावपुंजं काउं  
 जीवा वयंति कुगईण । इत्तो पुणो नियत्ता लहंति सग्गापयग्गसुहं ॥ ५५ ॥ इय सोउ इमो चितइ अहो गुणी सुन्दरं पढइ किंपि ।  
 इत्तो य तत्थ पत्तो नरभासाभासिरो कीरो ॥ ५६ ॥ पुट्टो तेणं स गुणी पट्टु ! पसिय कहेसु मज्झ पुव्वभवं । कहइ इमोवि जयपुरे  
 वरुणो नामासि इव्वसुओ ॥ ५७ ॥ तेणऽन्नदिन्ने पुट्टो सागरचंदो गुरु कहसु भंते ! । समणाण सावयाण य किं मूलं मव्व-  
 किणेषु ? ॥५८॥ सामाइयाइछव्विहमारस्सयमिय गुरूहं कहिए सो । पुच्छेइ किं निमित्तं एयं कीरइ ? भणइ गुरी ॥ ५९ ॥ गावज-

श्रीश्रेष्ठि-  
 कथा

॥४०४॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४०५॥

जोगविरइनिमित्तमुत्तं जिणेहिं सामइयं । दंमणमुद्धिनिमित्त चउवीसथओ विणिदिट्ठो ॥ ६० ॥ गुणवंताण गुरूणं पडिचत्तिनिमित्त-  
मित्थ वंदणयं । अइयारविमुद्धिनिमित्तमाहियं फुडं पडिक्कमणं ॥ ६१ ॥ चारित्तनाणदंसणमुद्धिनिमित्तं तु निययउस्सग्गा । पाव-  
कखवणनिमित्तं कीरइ इरियाइउस्सग्गो ॥६२॥ वंदणमाइनिमित्तं सुदिट्ठिअमराण सुमरणनिमित्तं । चिइवंदणउस्सग्गा कीरंतउन्नेवि  
बहुहेऊ ॥६३॥ तण्हाछेयनिमित्तं पच्चक्खाणंति सोउ मुणिवयणं । वरुणो संवेगगओ तक्कस्सेऽभिग्गहं लेइ ॥६४॥ कइयावि पमा-  
इल्लो माइल्लो बहुपलोयपचक्खं । आवस्सयं विसुद्धं करेइ विवरीयमिहरा उ ॥ ६५ ॥ चिइवंदणाइ किच्चं सव्वंपि समायमायरिय  
वरुणो । पजंतेऽवि हु तदकयपडियारो वंतरो जाओ ॥६६॥ तो चविय तेण मायादोसेणं कीर भइ ! तं जाओ । इय सोउ सुओ  
सुमरियपुव्वभवो विन्नवइ साहुं ॥६७॥ भयवं ! किमिण्हि कीरइ ? कीरोऽहं तुम्ह पायसेवाए । दूरमजोगो नय सव्वविरइरयणस्स  
जुग्गमिह ॥६८॥ नय तिरियजीवियव्वे रमइ मई मज्झ नेव पहु ! सक्को । इमिणा तिरिदेहेणं अकलंको काउ जिणधम्मो ॥६९॥ ता  
पसिय कहसु पहु ! मज्झ किं तित्थं सुप्पस्सत्थमचत्थं । उज्झामि जत्थ जीयं ? भणइ मुणी भइ ! विमलगिरी ॥७०॥ जं तत्थ पढम-  
चफिस्स नंदणो पढमजिणवरविणेओ । सिद्धो पुंडरियरिसी सहिओ मुणिकोडिपणणेण ॥ ७१ ॥ नमिविनमिखेचरवरा जत्थ य  
सिद्धा दुकोडिमुणिजुत्ता । जत्थज्जाउवि सिद्धा असंखया समणकोडीओ ॥ ७२ ॥ जो रिसहाइजिणाहिवनिम्मलकमकमलजुअलफ-  
रिसेणं । सययं पवित्तसिहरो सो विमलगिरी महातित्थं ॥७३॥ (प्रत्यंतरे-अपरं च-सुयधम्मफित्थियं तं तित्थं देविदवंदियं पवरं ।  
पाहुडण विजाणं देसियमिगवीसनामं जं ॥१॥ विमलगिरि १ मुत्तिनिलओ २ सित्तुओ ३ सिद्धखित्तु ४ पुंडरिओ ५ । तिरिसिद्ध-  
सेहरो ६ सिद्धपव्वओ ७ सिद्धराओ यट ॥२॥ बाहुचली ९ मरुदेवो १० भगीरहो ११ महसपत्तु १२ सयवत्तो १३ । कूडसयदत्तुत्तरओ

श्रीदत्त-  
चरित्रम्

॥४०५॥

श्रीदे०  
पैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४०६॥

१४ नगाहिराओ १५ सहस्रकमलो १६ ॥३॥ ढंके १७ करडिनिवासो १८ लोहिचो १९ तालओ २० कयंबुचि २१ । सुरनरमुणिकय-  
नामो मिरिविमलगिरी जयउ तित्थं ॥ ४ ॥ रयणागरविवरोसहिरसकूबिजुया सदेवया जत्थ । ढंकाइ पंच कूडा सो विमलगिरी  
जयउ तित्थं ॥५॥ जोजरगछगम्मि असीइ सत्तरी सट्टी पनरवारजोयणए । सगरयणीविच्छिन्नो सो विमलगिरी जयउ तित्थं ॥६॥  
जो अट्टजोअणुचो पन्ना दस जोयणो उ मुलुवरिं । विच्छिन्नो रिसहजिणे सो विमलगिरी जयउ तित्थं ॥७॥ सिरिरिमहसेणए  
मुहा असंखतित्थंकरा समोसरिया । सिद्धा य जत्थ सेले सो विमलगिरी जयउ तित्थं ॥८॥ तह पउमनाहपमुहा समोसरिस्संति जत्थ  
भारजिणा । तं सिद्धस्सित्तनामं सिरिविमलगिरी जयउ तित्थं ॥९॥ सिरिनेमिनाहवजा जत्थ जिणा रिसहपमुहवीरंता । तेवीस समो-  
सरिया सो विमलगिरी जयउ तित्थं ॥ १० ॥ जहिं रुप्पकणयमणिपडिमतियमुसहचेइयं भरहविहियं । सदुवीसजिणाययणं सो  
विमलगिरी जयउ तित्थं ॥११॥ वाहुवल्लिणा उ रम्मं सिरिमरुदेवाइ कारियं भवणं । जत्थ समोसरणजुयं सो विमलगिरी जयउ  
तित्थं ॥ १२ ॥ उस्सपिणीइ पढमं सिद्धो इह पढमचक्खिपढमसुओ । पढमजिगस्स य पढमो गणहारी जत्थ पुंडरिओ ॥ १३ ॥  
चित्तस्म पुन्निमाए समणाणं पंचकोडिपरिअरिओ । निम्मलजसपुंडरिओ जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥ १४ ॥ सवत्थसिद्धिपत्थडअं-  
तरिया पन्नकोडि लक्ख दह । सेट्टीहिं असंखाहिं चउदसलक्खाहिं संखाहिं ॥ १५ ॥ जत्थाइचजसाई सगरंता रिसहवंसजनरिंदा ।  
सिद्धिं गया असंखा जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥१६॥ वासासु चउम्मासं जत्थ ठिया अजियसंतिजिणनाहा । वियसोलथम्मचक्खी  
जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥१७॥ दसकोडिसाहुमहिया जत्थ दविडवाल्लिखिल्लपमुहनिवा । सिद्धा नगाहिराए जयउ तयं पुंडरिय-  
तित्थं ॥१८॥ जहिं रामाइ तिकोडी इगनवई नारयाइ मुणिलक्खंता । जाया उ निद्वराया जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥१९ ॥ नेमि-

श्रीदत्त-  
चरित्रम्

॥४०६॥

धीदे०  
नेत्य० श्री-  
र्म० संपा-  
पारपिथो  
॥४०७॥

वयणेण जत्तागण जहि नंदिसेणगणवड्ढा । विहिओऽजियसंतिथओ तयं जयउ पुंडरियतित्थं ॥२०॥ पज्जुन्नसंवपमुहा कुमरवरा  
सड्डुअट्टकोडिजुया । जत्थ सिपं संपन्ना जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥ २१ ॥ अन्नेऽपि भरहसेलगथावचासुयसुयाइआऽसंखा । जहि  
कोडिकोडिसिद्धा जयउ तयं पुंडरियतित्थं ॥ २२ ॥ अस्संखा उद्वारा असंखपडिमाओ चेइयाऽसंखा । जहि जाया जयउ तयं  
सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥२३॥ कयजिणपडिसुद्धारा य पंडवा जत्थ वीसकोडिजुया । सिद्धिगया जयउ तयं सिरिसित्तुंजयमहा-  
तित्थं ॥२४॥ भरहकरावियपिंवे चिल्लतलाईगुहाठिए नगतो । जहि होइ इगज्वयारी तं सित्तुंजयमहातित्थं ॥२५॥ संपइ १ विक्कम  
२ अंपड ३ हाल ४ पल्लिप्पा ५ऽऽमवेदत्तरायाइ ७ । जं उद्धरिहंति तयं सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥२६॥ जं कालयस्सरिपुरो साहइ  
शुविडी सया पिदेहेपि । इणमिय (पणमइ) सकेणुत्तं तं सित्तुंजयमहातित्थं ॥२७॥ जावडविंदुद्वारे अणुवमसरमजियचेइयट्टाणे । जहि  
होडी जयउ तयं सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥२८॥ मरुदेविसंतिभयणं उद्धरिही जत्थ मेहघोत्तनियो । कफिपपुत्तो तं इह सिरिसित्तुंजय-  
महातित्थं ॥२९॥ पञ्चिमउत्तारकरो जस्स विमलयाहणो निवो होडी । दुप्पसहगुरुएसा तं सित्तुंजयमहातित्थं ॥३०॥ तुच्छिन्नेऽपि  
य तित्थे होडी पूजं अयंमुसइरूढं । जा पउमनाइतित्थं सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥ ३१ ॥ पावं पावविमुणा जत्थ निवासी उ जंति  
तिरियापि । सुगईए जयउ तयं सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥३२॥ जस्सऽइसयाइ कप्पे वक्खाए झाइए गुए सरिए । होइ सिपं तइय-  
भये सिरिसित्तुंजयमहातित्थं ॥ ३३ ॥ इय भइपादुरइया कप्पा सित्तुअकप्पमाहप्पं । सिरिवइरपहृद्धरियं जं पाल्लिचेण संखवियं  
॥ ३४ ॥ तं जइ सुयं धुयं मे पदेतनिसुणंतसंभरेताणं । सित्तुअकप्पधुत्तं देउ लहुं सत्तुजयसिद्धिं ॥ ३५ ॥ ) तं सोउ सुओ दिट्ठो  
मपए पणि जा गमिस्सइ कदिंनि । ता फुरियविवेएणं सिरिगुत्तेणं इमो वुत्तो ॥७४॥ भो कीर ! खीरगडुमडुरवयण ! धन्नो सि तं

श्रीदत्त-  
चरित्रम्

॥४०७॥

श्रीदे०  
नीत्य० श्री-  
धर्म० सांघा-  
चारविपी  
॥४०८॥

कयत्थो मि । जं तुह इय मणभवणे विवेयदीवो समुल्लसिओ ॥७५॥ दिज्जउ तुहेव रेहा धम्मधुरीणेषु सव्वपुरिसेसु । तुज्ज समी-  
हियमिद्वी भद् ! लहुं होइ निव्वियग्घा ॥७६॥ नमिय मुणि संभासिय तं च सुओ हिययइच्छिए ठाणे । पत्तो तो सिरिगुत्तो गुणिणो  
माहेपि नियचरियं ॥७७॥ नमिउं पुच्छइ धम्मं परहियनिरओ मुणीवि वज्जरइ । देवगुरुधम्मतत्ताइसंगयं समुचियं तस्स ॥ ७८ ॥  
भद् ! निमित्तविमुद्धे चिइवंदणपमूहनिघकिंमि । उज्जुत्तो होसु सया तहत्ति पडियज्जइ इमोऽवि ॥७९॥ नमिय मुणि भयतरलो  
ओमरिउं सिरिपुरं कमा पत्तो । गिहिधम्मं परिपालइ चिइवंदणकिचमाईअं ॥ ८० ॥ कइयावि रिसहभवणे देवे वंदंतओ इमो  
पिउणा । वरहारत्थं तत्यागएण दिट्ठो तहा नाओ ॥८१॥ सिरिगुत्तेणवि जणओ नाओ पडिओ य तस्स चलणेसु । पिउपुट्टेण य  
कहिओ जहाठिओ निययवुत्तंतो ॥ ८२ ॥ तो असरिसहरिसपरेण सिट्ठिणा धम्मउत्तिकाउमिमो । नलरन्नोऽणुत्ताए नीओ विज-  
याइ नयरीए ॥८३॥ मिट्ठी कुडुंभारं ठविय सुए धम्मउज्जुओ जाओ । लज्जा धम्मेसु य इमो थुरंधरो विजियवसणोऽवि ॥८४॥  
कपचिइवंदणआरस्मयाइकिरिओ कथाइ त निसाए । सुमरंतो सुयचरियं अभिभवउस्सग्गमल्लीणो ॥८५॥—इत्तो सो वरकीरो विमल-  
नगे काउ अणगणं धीरो । जाओ सणंकुमारे देवो तं नाउ ओहीए ॥८६॥ से धम्मथिरीकरणत्थमागओ भणइ भद् ! पारेसु । उस्सग्गं  
कीरजिओ मोऽइं चित्तेमि जं हियए ॥८७॥ पारइ काउस्सग्गं सिरिगुत्तो हरिसवसवियासिमुहो । कहइ सुरो नियचरियं तस्स तहा  
देइ भूरि धणं ॥ ८८ ॥ कओ पुण समरिज्जसु इय भणिय मुरो गओ सठाणंमि । इयरोऽवि विसेसरओ जिणधम्मे गमइ बहुकालं  
॥८९॥ कइयावि अइगिलाणो काउस्सग्गेण सरइ कीरमुरं । सोऽवि लहु तत्थ पत्तो कहेइ से आउ सत्तदिणे ॥ ९० ॥ तो सिरि-  
गुत्तो सिप्यं विनिओजिअ नियधणं सुरित्तेसु । जिणचेइयकयपूओ पुच्छिय रायाइनयरजणं ॥९१॥ सिरिविमलयोहगरुणो पासे

श्रीदत्त-  
चरित्रम्

॥४०८॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४१३॥

अचिरेण गमी विलयं सीयंपिव तरणिकिरणहयं ॥ ४५ ॥ इय सोउ पमुइयमणा मंतिनरिंदा पवन्नगिहिधम्मा । तं गुरुगिरं पडि-  
च्छंति सीसवीसंतकरकमला ॥४६॥ अह पच्छागयनियसिन्न परिथओ मंतिसंजुओ राया । केवलिकमकमलमलं पणमिय पत्तो सन-  
यरंमि ॥४७॥ मंत्तिनिवा य खवेउं पुव्वज्जियतिकखदुक्खरिंछोलिं । पूयंति सया देवे वंदंति य हेउसुविसुद्धं ॥ ४८ ॥ चिर पालिय  
गिहिधम्मं अणसणघणचूरिउग्गवहुकम्मा । अच्चुअकप्पंमि सुरा ते जाधा फुरियतेयभरा ॥ ४९ ॥ तयणु विदेहे नरजंम लहिय  
नयहेउसहसपरिसुद्धं । संमं जिणिंदधम्मं काउ लहिस्संति सिवसंमं ॥ ५० ॥ इत्यवेत्य भवदत्तमंत्रिणः, -श्रीसुदर्शननृपस्य वृत्तकम् ।  
व्योमरत्नमितहेतुसुंदरं, सञ्जनाः! कुरुत चैत्यवंदनम् ॥५१॥ इति भवदत्तमंत्रिसुदर्शननृपकथा । इति प्ररूपितं 'वारहेऊ य'त्ति  
अष्टादशं द्वारम्, इदानीं 'सोलस आकार'त्ति एकोनविंशतितमं द्वारमाविष्कुर्वन्नाह—

अन्नत्थुआइ धारस आगारा एवमाइआ चउरो । अगणि१ पणिंदिच्छिंदण२ वोहिक्खोभा य३ डक्को ४ य ॥४४॥

अन्नत्थुत्ति वचनात् अन्नत्थ ऊससिएणं १ आदिशब्दान्नीससिएणं इत्यादिग्रहो यावत् दिट्ठिसंचालेहिंति, एतदर्थः—अन्नत्थ  
य वावारे. काउस्सग्गं करेमि इय जोगो । ऊमासाईहिंतो करेमि नो अन्नवावारं ॥ १ ॥ इय पंचमीइ अत्थे तइया अहवा उसास-  
माईहिं । हुज्ज अभग्गो अविराहिओ य मह काउसग्गोत्ति ॥ २ ॥ तत्थ—ऊससियं सासग्गो १ नीससियं सासमोयणं २ पयडा ।  
खास ३ खुय ४ जंम ५ उइडुय ६ वायनिसग्गो अहोवाओ ॥३॥ भमलीइ अकम्हा उ सभंतमहिदंसणं निवडणं च । पित्तोदयाउ  
मुच्छा विचेयणत्तं भमणरहियं ॥ ४ ॥ सुहुमा लक्खालक्खा रोमुकंपाइअंगसंचारा १०। खेले कफाइ अंतो ११ दिट्ठीइ निमेसमा-  
ईया १२ ॥५॥ ऊसासाइनिरोहे मरणाई तेण सुहुमओससई । पवणमसगाइरक्खणहेउं खासाइसु य हत्थो ॥ ६ ॥ उइडुयवायनिस-

आकारा-  
धिकारः

॥४१३॥

धंदि०  
नेत्य० श्री-  
र्म० संपा-  
वारविधौ  
॥४१४॥

मोमु नदत्रयणावि भमलिमुच्छासु । निविसइं विराहणभया रोमुकंपाद् दुनिवारा ॥७॥ एते च द्वादश आकाराः-कायोत्सर्गापवाद-  
प्रकाराः साध्यात् श्ये प्रतिपादिताः, तथा 'एवमाइय'त्ति एवमाइएहीतिपदेन चत्वारः सूचिताः, तानेवाह-'अगणी'त्यादि, अग्नि-  
विपुहोपादिस्पर्शनं, प्रदीपनकमन्वे, पंनेन्द्रियैः-नरमार्जारादिभिः छिंदनं-तस्य कायोत्सर्गालंबनस्य च गुर्वादेरंतरालभुवोऽति-  
क्रमणं २ चोषिका-मानुषचौराः शोभः-स्वराष्ट्रपरराष्ट्रकृतः, आदिशब्दाद्वंदिकराजभयभित्तिपातादिग्रहणं ३ दष्टश्च सपर्पादिना  
स्यः परो वा साध्यादिः, चशब्दात् सपर्पादिरेव संस्रुत्वमासन्नं वा गच्छति ४, अत्र मतना-फुसणंमि बरथगहणाइ छिंदणे अग्गहत्थ-  
करणाई । पाणपलायणाई बोहियखोभाइ उक्को य ॥८॥ उभयेऽपि मीलिताः पोडश । इह कंचीनयरीए अहेसि नरसुंदरुत्ति नर-  
नाहो । कुग्गाहगाइजलही नाहियवाई किलिट्टमणो ॥१॥ गयमिच्छत्तकुवोहो सुविमुद्गागारधम्मअक्खोहो । सुमइत्ति तस्स मंती  
नियमइनिजिणियसुरमंती ॥ २ ॥ इत्तो चंदपुरंमी सामंतो चंडसेणअभिहाणो । अन्नदिणे नरसुंदरनरिंदसेवाइ निव्विन्नो ॥ ३ ॥  
नियवालमिच्चमिक्कं जोगिं चहुमंतंतकुसलमइं । भणइ मह हिययसल्लं निहणसु नरसुंदरनरिंदं ॥ ४ ॥ जंपइ जोगी एवं करेमि, तो  
तस्स चंडसेणनिवो । हिट्ठो वियरइ सच्चं नियंगलगं अलंकारं ॥ ५ ॥ तयणु स पत्तो कंचीपुरिमुत्तिन्नो मडंमि एगत्थ । मंतकुहे-  
दयमाईहि रंजए सयत्तपुरिलोयं ॥ ६ ॥ पत्तो परं पसिद्धिं तो रत्ता कोउगेण तेडेउं । उचियासणे निवेसिय सो पुट्ठो सविणयं एवं  
॥७॥ कत्तो जोगिंद ! तुमं इहागओ ? सो भणइ तुह भतिं । जोगिजणे सुणिय इहं पत्तो सिरिपव्वयाउ अहं ॥८॥ किं कावि दिव्व-  
सत्ती तुज्ज अक्खप्फला फुडं अत्थि ? । एवं निवेण भणिए जोगी वज्जइ चाटंति ॥९॥ तथाहि-रचीएवि दिणं दिणेऽवि रयणिं  
दंसेमि सेलेऽसिले, उप्पाडेमि नहंगणे गहगणं पाडेमि भूमीयले । पारावारमहं तरेमि जलणं थंमेमि कंमेमि वा, दुव्वारं परचक्कमत्थि

नरसुन्दर-  
कथा

॥४१४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४१५॥

न जए तं मज्झं जं दुक्करं ॥१०॥ अह भणइ नम्मसच्चिवो गुरुगलगडिं करेसि जोगिंद । किं पाडिएहिं उप्पाडिएहिं गहसेलमाईहिं  
॥११॥ किंतु मह रूसिऊणं विप्पी गामंमि कंमिवि पउत्था । जीइ विणा मे भवणं न केवलं भुवणमवि सुन्नं ॥१२॥ जइ तं आणेसि लहुं  
तोऽहं ते सदहेमि सव्वंपि । आगिद्धिमंतसरणेण जोगिणा झत्ति अह तत्थ ॥१३॥ समियाविलित्तहत्था कुणमाणी मंडए समाणीया ।  
सा माहणी पहिद्धो पणचिओ नम्मसच्चिवो तो ॥ १४ ॥ गिण्हसु दिक्खं जेणं तयंपि देमो तओ नियो मूढो । तपासे तं गिण्हइ  
उवइद्धं जोगिणा एवं ॥१५॥ नियदेहे बारसअंगुलाइं नीहरइ पविसइ दसेव । पवणो तन्विवरीयं जो कुणइ स वंचए कालं ॥१६॥  
इय कूडन्भममोहियमणस्स मिच्छत्ततिमिरल्लभस्स । जीववहपमुहआसवपरस्स परलोयविमुहस्स ॥ १७ ॥ विस्संभगयस्स निवस्स  
तस्स कइयावि भत्तमज्झंमि । विसमविसं दाउ लहुं नट्टो तुट्टो सयं जोगी ॥१८॥ तेणुग्गपिसेण निवोऽवि पीडिओ नट्टचेयणो जाओ ।  
हाहारवमुहलमुहा सव्वे मिलिवा पुरपहाणा ॥ १९ ॥ आहूया एएहिं सपच्चया मंतवाइणो बहवे । विसनिग्गहोवयारो सव्वपयत्तेण  
तेहिं कओ ॥२०॥ नवरि स जाओ विहलो तरुणिकडक्खुव्व वीयरयंमि । आदन्नो मंतिजणो मिसं विसन्नो पुरीलोओ ॥२१॥  
अकंदसदमुहलं सयलं अंतेउरं तहिं पत्तं । काउं मउत्ति नीओ सिवियं आरोविय मसाणे ॥ २२ ॥ ठविओ चंदणदारुपनिचियाइ  
चियाइ जाव ता सहसा । उम्भीलियनयणजुओ तक्कालुप्पन्नचेयन्नो ॥२३॥ चइउं चियं किमेयंति पभणिओ नरवई तओ सुमई ।  
भणइ तुह देव ! दाउं विसमविसं जोगिओ नट्टो ॥२४॥ विद्धिया बहूवयारा नय चेयन्नं कंहंपि णे जायं । तेण परं जं कीरइ तं  
काउमिणं समारद्धं ॥२५॥ वणपवणेणवि किह संपयं वयं निव्विसा इहं जाया । इह निवपुट्टो सुमई भणेइ दइवं वियाणेइ ॥२६॥  
किंतु तवुप्पन्नविसिट्ठलद्धिमुणिअंगलग्गपवणेण । अवि जंतूणं जिज्झंति आमया विसवियारा य ॥२७॥ एयं मे सुयपुव्वंति मंति-

धीदे०  
नेत्र० श्री-  
धर्म० संया-  
नरविधौ  
॥४१६॥

कुतो निरो भणइ सुहडा ! । उवरिमभागे पिच्छइ कंचण निःकंचणं समणं ॥२८॥ तेवि गवेसितु लहुं कहंति रत्तो जहा इहं देव ! ।  
पुष्करंडुजाणे सुरअसुरनसिंदनमियकमो ॥२९॥ निम्मलकेवलकलिओ बहुसमणजुओ अणेगलद्विनिही । अजेव समोसरिओ ससि-  
प्पहो नाम आयरियो ॥३०॥ राया तवप्पभावं एयं संभवाएभि जं इत्थ । जाओ म्हि निव्विसोऽहं ता तप्पासंमि गच्छामि ॥३१॥  
तो गो गपरीजारो गयो नमित्तु पुरो समुवविट्ठो । कहइ मुणी इय धम्मं नवजलहरगहिरसदेण ॥३२॥ “दुलहं लहिय नरभवं भविया !  
भवियच्चयानियोगेण । इहपरलोयहियकरं जहसत्तीए कुणह धम्मं ॥ ३३ ॥” इय सुणिय जंपइ निवो परभवगामी घडेइ कह जीवो ? ।  
जं भूयपणगमित्तं दीसइ नहु तदहियं किंपि ॥ ३४ ॥ भणइ गुरु जडपणभूयसमहिओ जइ जिओ न हुजा तो । भो सुहदुहाइ  
को मुणइ ? को व अहयंति उल्लवइ ? ॥३५॥ किंच-निसुयं दिट्ठं जिघियमासाइयपुट्टचित्तियाइ मए । इय इगकत्तारकया इमे विग-  
प्पेऽपि कह हुजा ? ॥३६॥ इचाइजुत्तिजुत्तं संसयरयहरणपवणपडिरूवं । गुरुणो वयणं सोउं बुद्धो राया इमं भणइ ॥३७॥ इचिरकालं  
कुग्गहगहगदियमणेण मे समणनाह ! । के के जिया न हणिया ? किं किं अलियं न मे भणियं ? ॥३८॥ किं किं न परस्स धणं  
गहियं ? किं किं न मइलियं सीलं ? । किं किं अतुच्छमुच्छावसेण न व मीलियं दविणं ? ॥३९॥ किं किं नहु निसि भुत्तं ? किं किं  
महुपिसियमाइ नहु असियं ? । किं बहुणा ? नत्थि जए तं पावं जं न मे विहियं ॥४०॥ इण्हि मिच्छत्तविसं पडुवयणामयरसेण नट्टं मे ।  
नवरं नाहियवायं कमागयं कह चएमि अहं ? ॥ ४१ ॥ आह मुणिंदो नरवर ! एयं नहु किंपि सइ विवेगंमि । वाही दारिहं वा  
कमागयं मुचए किं न ? ॥ ४२ ॥ तथाहि—केइ भमंता वणिणो धणत्थिणोऽणुक्कमेण दट्टण । लोहतउरुप्पकणए पुव्वगहिए  
पमुत्तण ॥ ४३ ॥ पिच्छूण पवररयणे पगरिसत्तिरिसुक्खभायणं जाया । अन्ने तहा अकारुण दुत्थिया सोअमणुपत्ता ॥ ४४ ॥ एवं

नरसुन्दर-  
कथा

॥४१६॥



श्रीदे०  
बैल्य० श्री  
र्म० संपा-  
सारविधौ  
॥४१७॥

तुमंपि निव ! कुलकमागयं कुग्गहं अमुंचंतो । मा पुञ्जिपिव इण्हिपि दुस्तदुदभारमजेसु ॥ ४५ ॥ आह नरिंदो कह पदु ! दुस्तह-  
दुदभरमहं सहियपुच्चो ? । भणइ गुरू निव ! नियुणसु नवगामो अत्थि वरगामो ॥४६॥ तत्थासी कुलपुत्तो ददमिच्छतो अधम्म-  
कयचित्तो । कयटुग्गहंपंकजलनिमज्जणो अज्जुणो नाम ॥४७॥ विन्नायसत्तत्तो ददसंमत्तो जिणिंदमुणिभत्तो । नियकुग्गहपरिचत्तो  
सुहंकरो नाम से मित्तो ॥४८॥ पत्ता सुहंमगुरूणो बहुआगमसंगया कयावि तहिं । मित्तेण पेरीओ अज्जुणोऽपि पासं गओ तेसिं  
॥४९॥ अह नमिय गुरुपयजुयं सुहंकरो अइसुहंकरं संमं । उवविसइ उचियठाणे इय भम्मं वागरइ सरी ॥५०॥ “पडिपुअपुअिमाचंद-  
सुमिणदंसणमिवेह अइदुलहं । भविया ! लहिय नरभयं करेह भम्मं निरइयारं ॥५१॥ एणुण्व जलभण्डलं गुरुगदुयाराण्य भंभणरा-  
मूहं । जं सुकयभरं भंजइ भम्मे भेवोऽपि अइयारो ॥५२॥ सताउण्व सत्तिं लोभुण्व गुणगणं मसित्तपुण्व.सियत्तं । भेवोऽपि अइयारो  
भम्मं रम्मंपि दूसेइ ॥५३॥ भेवोऽपि निरइयारो भम्मो सिग्गं जणेइ सिद्धिगुहं । सुवह्वि साइयारो भम्मो नदु इत्तत्तज्जणभो ॥५४॥  
इत्तुचिय जिणसमए आगारा तत्थ तत्थ निदिद्धा । भइयारं परिहरिं सुअं भम्मं च पाळेउं ॥ ५५ ॥ गदुत्तं-‘गयभणे गुरुदोगो  
भेवस्तपि पालणा गुणफरी य । गुरुत्ताणं च नेयं भंभेभिं अओ य आगारा ॥५६॥” तथाति-‘भवात्तथाइ भोलय आगारा भेइ-

नरसुन्दर-  
कथा

धीदे०  
वैत्य० धी-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४१८॥

पासे । पडिवजिय पव्वजं सुगईए भायणं जाओ ॥ ६२ ॥ आगमहीलामूलं अज्जुणओ अज्जिउं अतुहकमं । कालंमि काउ कालं  
छगलो तत्थेव उपवन्नो ॥ ६३ ॥ अन्नदिणे तणएणं मुल्लेअं किणिय पियरकजंमि । गह्मिओ दुहेण हणिओ कुंमारघरे खरो जाओ  
॥ ६४ ॥ सीउण्हरुप्पिनासावासाइसुतिक्खदुक्खरिंछोर्लिं । सो सहमाणो सययं बहुकालं दुत्थिओ गमइ ॥ ६५ ॥ कइयावि गुरु-  
भरेणं पडिओ भग्गेसु सयलभंडेसु । कुविएण कुलालेणं लउडेण हओ गओ निहणं ॥ ६६ ॥ विट्ठाभक्खणनिरओ तो गट्ठास्यरो  
समुप्पओ । आहेडयसुणएहिं विणासिओ करहओ जाओ ॥ ६७ ॥ गुरुभारवहणखिओ नइदुत्तडिपडणदलियसव्वंगो । अइविरस-  
मारसंतो दुस्सहपीडाइ मरिऊणं ॥ ६८ ॥ गुव्वरगामे जाओ गोधणवणियस्स नंदणो मूओ । अविवेयजणेहिं भिसं विनडिअंतो चहु-  
पयारं ॥ ६९ ॥ नियजीवियनिच्चिओ पडित्तु कूयंमि मरणमणुपत्तो । नंदिग्गामे जाओ ठक्कुरगेहंमि दासिसुओ ॥ ७० ॥ कइयावि  
मअमत्तो परमप्पर्यं तदुभयं च अणुणंतो । पुणरुत्तं अक्कोसइ असरिसवयणेहिं नियसामिं ॥ ७१ ॥ कुविएण ठकुरेणं जीहा छिंदा-  
विधा अहह तस्स । पीडाभरविट्ठुरंगो विरसंतो कंनकडुआइं ॥ ७२ ॥ केवलकरुणाठाणं तं भूमियले लुठंतयं दट्ठं । अइसयनाणी  
साह मडुरगिराए इमं भणइ ॥ ७३ ॥ किं भद ! कुणसि एवं खेयं अइदुसहदुहभरफंतो । जम्हा तइच्चिय कयं जं कम्मं तस्स फल-  
मेयं ॥ ७४ ॥ तथाहि—अज्जुणजम्मविणिम्मियआगमनिंदाफलेण जाओ सि । छयलो खरो वराहो करहो तह स्यरो दासो ॥ ७५ ॥  
इय सोउ सरिय जाइं सो भत्तीए नमेइ मुणिपवरं । पञ्जायावपरिगओ अप्पाणं सुवहु निंदंतो ॥ ७६ ॥ मरिऊणं सो जाओ तुम-  
मिह नरगुंदरो महीनाहो । पुव्वभवन्भासाओ नाहिययाए य तुह रंगो ॥ ७७ ॥ इय सुणिअ पुव्वभवे सरिउं निव्वेयपरिगओ राया ।  
कुमरंमि अमरसेणे रउभरं सत्ति संठविउं ॥ ७८ ॥ आगमहीलामूलस्स पावपुंजस्म निह्वणहेउं । कारेवि चेइएत्तुं आगमपुत्थेसु

नरसुन  
कथ

॥४१८॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥४१९॥

पूयाओ ॥७९॥ सुमइवरमंतिवइवइसामंतजुओ महाविभूर्इए । पडिवज्जइ पव्वञं ससिप्पहायरियपयमूले ॥ ८० ॥ नरसुंदरराय-  
रिसी सयागमे पदमआगमं गुणइ । आगमपुरस्तरं चिय करेइ सयलाउ किरियाओ ॥८१॥ आगमविहिणा बहुआगमाण भत्तीइ  
स बहु उट्टंतो । आगारुस्सग्गविऊ विऊण संगंमि गुरुहरिसो ॥८२॥ कमसो गुरुप्पसाया सयलागमजलहिपारगो जाओ । गुरुणा  
गुणगणकलिओत्ति जाप्पिउं नियपए ठविओ ॥८३॥ भवियाण उग्गकुग्गहविणिग्गहं नियपवयणमंतेहिं । कुव्वंतो सो भयवं सुइरं  
वसुहाइ विहरित्था ॥८४॥ निप्फाइऊण सीसे वरसीसं नियपयंमि ठविऊण । अंते काउ अणसणं पत्तो सव्वट्टसिद्धंमि ॥८५॥ तो  
चविय विदेहे निवपुत्तो होउं दुहावि दढधम्मो । नरसुंदरनिवजीवो धुयकम्मो पाविही मुक्खं ॥८६॥ श्रुत्वेति वृत्तं नरसुंदरस्य, सदा-  
गमाराधनसुंदरस्य । साकारशुद्धौ जिनवंदनायां, साकारसज्ज्ञानकृते यतध्वम् ॥८७॥ इति नरसुंदरनरेश्वरहृष्टांतः ॥ प्रकटितं  
'सोलस आगार'त्ति एकोनविंशे द्वारं, सांप्रतं 'गुणवीसदोस'त्ति विंशतितमं द्वारं प्रादुर्कुर्वन्नाह—

घोडग १ लया य २ खभे कुट्टे ३ माले य ४ सवरि ५ बहु ६ नियले ७ ।

लंबुत्तर ८ थण ९ उट्टी १० संजइ ११ खलिणे य १२ वायस १३ कविट्टे १४ ॥४५॥

सीसोकंपिय १५ नूर्इ १६ अंगुलिभमुहाइ १७ वारुणी १८ पेहा १९ । एगुणवीस दोसा काउस्सग्गंमि वज्जिज्जा ॥४६॥

एतदर्थः—आसुव्व कुणइ विसमं पय १ मनिलाहयलयव्व कंपेइ २ । थंभे कुट्टे अथंभइत्ति ३ माले य निहइ सिरं ४ ॥१॥ अव-  
सणसवरिव्व करे करइ पुरो ५ कुलउहुव्व नमइ सिर ६ । वित्थारइ मेलइ वा दुन्नियि पाए नियलिउव्व ७ ॥२॥ लंबुत्तरं च हवई  
जाणु अहो नाहिउवरि वा पट्टे ८ । पट्टेण छापइ थणे ममाइरक्खट्ट व अनाया ९ ॥३॥ वाहिरउट्टी मेलइ पण्हीउ पसारई पुरो पाए ।

कायोत्सर्ग-  
दोषाः

॥४१९॥

धीदे०  
धैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४२०॥

पण्डितमारणअंगुष्ठमिलणे अर्द्धभतरा उद्धी १० ॥४॥ पाउणइ संजईविव ११ पुरओ खलिणव्व धरइ रयहरणं १२ । चलचित्तवा-  
यसोविव चकरुं विरुखिवइ दिसिविदिसिं १३ ॥५॥ छप्पइयभया पट्टं कुणइ कविट्टं व१४ कंयइ य सीसं जक्खगहिउव्व १५  
मूयव्व हृहयइ छिंदणाईसु १६ ॥६॥ अंगुलिभमुहे चालइ आलावगगणणजोगठवणत्थं १७ । बुडुबुडुइ अहव सुरुव्व १८ वान-  
रोविव चलइ ओट्टे १९ ॥७॥ इह लंबुत्तर १ थण २ संजइइत्ति दोसा न हुंति समणीणं । लंबुत्तर १ थण २ संजइ ३ बहू य ४  
दोगा न सड्डीणो ॥ ८ ॥ खलिणकविट्टदुगं पुण अगीयसेहाइयाण संभवइ । संभवइ गिहत्थाणवि कयाइ एगत्तभावंमि ॥ ९ ॥  
इह देवदमउरपुरं दो मित्ता रामनागदत्तमिहा । हुत्था सयावि दुत्था अमुहदारिदविहगदुमा ॥ १ ॥ कयकट्टपाणविती कट्टाण  
कए कयावि ते पत्ता । मिवदेहे इव ससिवे सगुहे सेलंधसेलंमि ॥२॥ अज्झीणझाणलीणं थिमियं निव्वायजलनिहिजलं व । काउ-  
स्मग्गेण ठियं मंदरसिहरं व निक्कंपं ॥ ३ ॥ पावरयपसरहरणे महावलंपिव म्हावलं नाम । नामियअंतरसत्तुं तत्थ नियच्छंति  
मुणिपरं ॥ ४ ॥ जा रणमेगं ते कोउगेण उद्धट्टिया नियंति तयं । तावच्चिय कुहराओ घणकसिणो निग्गओ भुयगो ॥५॥ सो  
ममिय तुरिय तुरियं इओ तओ किंपि भक्त्वमलहंतो । गुरुकोवो तं साहुं दसिय पविट्टो सवम्मीए ॥ ६ ॥ सो तहवि मुणिनरिंदो  
तेण विसेणं मणंपि नकंतो । नय झाणाओ चलिओ तो गाढं विम्हिया एए ॥७॥ चिंतंति अदो एस मुणि अणप्पमाहप्पभवणमम्हेहिं ।  
दिट्टो दोगचहरो पुत्तेहिं कप्पक्खसुव्व ॥८॥ पारियकाउस्सग्गो जा भणिओ तेहिं गुणी कहसु भयवं ! । लंबंतभुया निचलदिट्टी  
कंयं अवत्था मे ? ॥९॥ एइ अवत्थाए न तु तुब्भं भुयगाइणोऽवि पहवंति । इय अम्ह दिट्टपुव्वं तो वजरए इमं साह ॥ १० ॥  
काउस्मग्गाएत्था भइ ! भदाण कारिणी सा उ । मिओसिआइमेएहिं पेगहा वन्निया समए ॥ ११ ॥ उस्सिओ १ उस्सिओ २

नागदत्त  
रामकथ

॥४२०॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥४२१॥

तइओ उसियनिसन्नओ चैव ३। निगन्नुसिओ४ निमन्नो५निसन्नगनिसन्नओ चैव६ ॥१२॥ निगन्नुसिओ७ निमन्नो८ निवन्नगनि-  
न्नो य नायव्वो ९। एएसिं तु पयाणं पत्तेयपरूणं युच्छं ॥१३॥ धम्मं सुकं च दुवे शायइ ज्ञाणाइं जो ठिओ संतो । एसो काउ-  
स्मग्गो उसिओसिअ होइ नायव्वो ॥ १४ ॥ धम्मं सुकं च दुवे नवि शायइ नविय अट्टरुदाइं । एसो काउस्मग्गो दब्बुसिओ होइ  
नायव्वो ॥१५॥ अट्टं रुदं च दुवे शायइ ज्ञाणाइं जो ठिओ संतो । एसो काउस्सग्गो दब्बुसिओ भावउ निसन्नो ॥ १६ ॥ धम्मं  
सुकं च दुवे शायइ ज्ञाणाइं जो निसन्नो उ । एसो काउस्सग्गो निसन्नसिओ होइ नायव्वो ॥ १७ ॥ धम्मं सुकं च दुवे न शायइ  
नविय अट्टरुदाइं । एसो काउस्सग्गो निमन्नओ होइ नायव्वो ॥१८॥ अट्टं रुदं च दुवे शायइ ज्ञाणाइं जो निमन्नो उ । एसो काउ-  
स्सग्गो निसन्नगनिसन्नओ चैव ॥१९॥ धम्मं सुकं च दुवे शायइ ज्ञाणाइं जो निमन्नो य । एसो काउस्सग्गो निमन्नसिओ होइ नायव्वो  
॥२०॥ धम्मं सुकं च दुवे नवि शायइ नविय अट्टरुदाइं । एसो काउस्सग्गो निवन्नओ होइ नायव्वो ॥२१॥ अट्टं रुदं च दुवे शायइ  
ज्ञाणाइं जो निमन्नो य । एसो काउस्सग्गो निवन्नगनिमन्नओ नाम ॥२२॥ निम्मियदुग्गइपोसा, दोसा घोडगलयाइया जत्थ । जत्तेण  
वज्जियव्वा जिणपडिकुट्टचिक्काऊणं ॥ २३ ॥ देहमइज्जसुद्धी सुहदुक्खतितिक्खया अणुप्पेहा । शायइ सुहं ज्ञाणं एग्गो काउ-  
स्मग्गंमि ॥२४॥ जह करग्गओ निकितइ दारुं इन्तो तहेय जंतो य । इय कत्तंति सुविहिया काउस्सग्गेण कम्माइं ॥२५॥ काउ-  
स्सग्गे जह सुट्टियस्स भजंति अगमंगाइं । इय भिंदंति सुविहिया अट्टविहं कम्मसंघायं ॥२६॥ दित्ततया तत्ततवा महातया काउ-  
स्सग्गथिरचित्ता । आमोसहिपमुहाहिं लद्धीहिं जुआ हवंति मुणी ॥ २७ ॥ गयगरयरुदसद्दूलसीहभुयगाइ दुट्टजंतुग्गा । थिरकय-  
काउस्सग्गस्स साहुणो नेय पभंति ॥ २८ ॥ काउस्सग्गमि ठिओ जिणविंवं सुत्तमत्थमुभयं च । सुहभायवुड्ढिहेउं अनंपि सुहं

नागदत्त-  
रामकथा

॥४२१॥

श्रीदे०  
वेद्य० श्री-  
धर्म० गंगा  
पारविधौ  
॥४२२॥

विंतिजा ॥२९॥ काउस्मग्गधिरमणा गिहिणोऽपि पद्दुमाणसुहृद्गणा । चंद्रवडिसयपमुहा भविया तियसालयं पत्ता ॥ ३० ॥  
गथादि-आसी साण्यपुरे चंद्रवडिसयनिरो परमसड्डो । स कयावि निपाइ मुहे अभिग्गहं गिण्हए एं ॥३१॥ एसो जात्र पईयो  
जनेर ता मे न पारियच्चोऽयं । काउस्मग्गो उग्गो लहुवियरियसग्गअपग्गो ॥ ३२ ॥ मा होउ सामिसालस्स तिमिरभरपस-  
रओ इहुन्नेओ । इय सिजापालीए तिहणेण स पूरियो दीयो ॥३३॥ एं चउसुवि जामेसु तीए दीवे पदीविए वाहं । लग्गो पइविउं  
ने साण्यपईयो निरस्सापि ॥३४॥ गोसे पुण पिज्झाए दीवे भणिउं नमोऽरिहंताणं । पारइ काउस्सग्गं निवो अविज्झायसुहृद्गणो  
॥३५॥ कुडरुडियसपिंधणत्तणुरत्तणुत्तुट्टंमपवभारो । चंडवंडिसो सुरसुंदरीण नयणातिही जाओ ॥३६॥ इय रामनागदत्ता काउ-  
स्मग्गस्मग्गण्यमाहप्प । सोउं पमुइयमणमा मुणिपवर विन्नरति इम ॥ ३७ ॥ दोगच्चदूमिया मो रयणनिहाणं व तुम्ह पयकमलं ।  
पच्चजागहणेणं इच्छामो सेविउं समं ॥३८॥ जंपेइ मुणी भदा ! न एगदोगच्चदोसनिम्महणी । एसा जिणिददिक्खा अपुव्वकप्पहु-  
मलयव्व ॥३९॥ सेमाणपि कित्तु मणिच्छियाण संपायणिकपत्तटा । दिट्ठा पच्चक्खं चिय तदेगचित्ताण सत्ताणं ॥४०॥ एयं चिय  
पडिअजिय निणगणहरन्निहलहरप्पमुहा । पुरिमजरा संपत्ता टाणं गयमयलदोगच्च ॥४१॥ तयणु घणहरिमपुन्ना ते दोऽवि मुणिस्स  
ग्गय पात्तमि । दिक्खं गिण्हति समज्जिणंति चहुचरणरुणधणं ॥ ४२ ॥ चित्ते चितंता पुव्वपिच्छियं काउसग्गमाहप्पं । अभिभव-  
काउस्मग्ग जया तया ते पयजंति ॥ ४३ ॥ नरर पमायभावेण नागदत्तो ठिओऽपि उस्मग्गे । घोडलयाई दोसे सुहमोसे आय-  
रइ पद्दुमो ॥४४॥ पच्चविओऽपि गुरुहिं पिट्ठो चट्टुत्तराई पकरेइ । चरणं विराहिय मओ भवणवईसु सुरो जाओ ॥ ४५ ॥ राम-  
मुणी उण निव्वणनरणो जाओ सुरो पदमकप्पे । ता नियनिषठाणाओ ते चविउ रामनागजिया ॥४६॥ इह भरहे कुसुमपुरमि दत्त-

नागदत्त-  
रामकथा

॥४२२॥

भीदे०  
नेत्र्य० भी  
धर्म० संपा  
चारिभौ  
॥४२३॥

सिद्धिस्त नंदना जाया । जयविजयति पसिद्धा अब्रुशं निविडपडिवंधा ॥ ४७ ॥ समसुहसुद्विया समदुक्खदुक्खिया ते कयावि  
उजाणे । ददुं नमंति तुष्टा केवलिनमणंतनामाणं ॥४८॥ तेणवि तेसि कदिओ दुहावि धंमो हिओ पंधेणं । जाओ जओ खणेणं  
विपरामदणिक्परिणामो ॥४९॥ विजयस्त उ पुट्टमवाइयारदुग्गम्मदूसियमणंमि । नहु लग्गइ मुणिवयणं कुंहुमरागुच्च मलिणंमि  
॥५०॥ जह जह केवलियवणं पविसइ विजयस्त सवणकुदरंमि । तह तह अणप्परसंक्कप्परसंकुलं अदह होइ मणं ॥५१॥ अहडणुअविओ  
पिउणा अनंतपरनाणिणो समीपंमि । विपसं गहिऊण जओ जाओ सुक्खताण आभागी ॥ ५२ ॥ विजओ पुण जिणभम्मं अमृणंतो  
कपपुरंतभारंभो । मरितं पतो कुगइं पुरओ भमिद्धी भक्कडिहे ॥ ५३ ॥ रामस्सेरं शतदलदलप्रोज्जालं धम्मंरंमं, पृथं श्रुत्वा  
प्रकृतिमलिनं नागदणस्य तद्वत् । भण्णाः ! लोकाः पुरुत रक्षितं पाहनक्कयादिदोपैः, कायोत्सर्गं स्फुटविपटितानंतदृष्कर्मजालम्  
॥५४॥ इति रामनागवराकथा ॥ व्याख्यातं 'गूणवीरादोस'पि विंशतितमं द्वारं, संप्रति 'काउस्तग्गमाण'पि एकविंशं द्वारं  
व्याखिल्यामुर्गापूर्वाभिमाह—

इतिउस्तग्गमाणं पणगीरुरतास अह सेसेसु ।

ईर्वापविषयाः कायोत्सर्गस्य प्रमाणं करणकालावधिः पंचविंशतिरुत्प्रासाः, चैत्यादिविषयमगनागनातिचारिभ्योभाकरणात्,  
पणा नाममः—“भयो पाणे सयणासणे य अरिहंतसमणसिआसु । उचारे पारतणे पणुतीसंं दूति उसासा ॥१॥” तथा भाष्ये ‘पण-  
नाममः इति पणनात्, गतथ नमस्तारेण पारयित्वा संपूर्णभतुर्विंशतिस्ततः पठ्यते इति वृत्ताः, एवं चास्य देवसिक्कप्रतिक्रमण-

नागद-  
रामकथा

॥४२३॥

त्पाद्यभाः, तेषां दिव्यमाद्यतिचारविशोधकृत्वादितथतुर्गुणायुच्छ्वासादिमानत्यान्नियतकायोत्सर्गत्वाद्, अस्य त्वनियतत्वात्, तथा  
नापं—“गाय मयं गोसदं तिन्नेव सया हवंति पक्खंमि । पंच य चाउम्मासे अट्टसदस्सं च वारिसिए ॥१॥ चत्तारि दो दुवालस  
यीसं चचा य हुंति उज्जोया । देसियराइयपक्खिय चाउम्मासे य वरिसे य ॥२॥ देसियराइयपक्खिय चाउम्मासे तहेव वरिसे य ।  
एग्गु हुंति नियया उस्सग्गा अनियया सेसा ॥ ३ ॥ शेषा-गमनागमनादिविषयाः, विचारणीयं बहुत्र सूक्ष्मधियेति, तथा अष्टौ  
उच्छ्वासाः शेषेषु—चैत्यवंदनाकायोत्सर्गेषु कालमानमिति, यदागमः—“अट्टेव य ऊसासा पट्टवणपडिकमणमाईसु” न चात्रामी न  
गृहीता इति वाच्यं, आदिशब्दाक्षिप्तत्वात्, उपन्यस्तगाथासूत्रस्योपलक्षणत्वात्, अन्यत्रापि चागम एवंविधसूत्रादनुक्तार्थसिद्धेः,  
उक्तं च—‘गोगमुहणंतगाई’त्यादि, अत्र मुखवह्निकामात्रोक्ते आदिशब्दाच्छेषोपकरणादिपरिग्रहोऽवसीयते, सुप्रसिद्धत्वात् प्रतिदि-  
यमोषयोगाच्च न भेदेनोक्त इति, इहोच्छ्वासमानमित्यं, न पुनर्ध्वेयनियमः, यथापरिणामेन हि तत्, स्थापनेशगुणतत्वानि वा  
स्थानवर्णार्थालंघनानि वा आत्मीयदोषप्रतिपक्षो वा, प्रतिविशिष्टध्येयध्यानं हि विवेकोत्पत्तिकारणमित्यलं प्रसंगेन । इह सिद्धपुरे  
नयरे आसी सूरप्पहो महीनाहो । कयकुवल्लयउक्करिसो ससिच्च पुत्तो सस्सी तस्म ॥१॥ स कयावि नियारामं भजंतं सोउ वण-  
वसाहेण । तं रक्खिउं हयगओ सपरियणो निग्गओ नयरा ॥२॥ सो कोलो दढदाढाकडप्पकप्परियतुरयचरणखरो । घणघोरघुरुघु-  
रारायपरभरभरियभुवणयलो ॥३॥ हयमहियं कुमरवलं इओ तओ अकभूललीलाए । पवणोविव क्खिखवंतो अडवीहुत्तं स उच्चलिओ  
॥४॥ कुमरोऽपि तस्म पुट्टीइ पट्टिओ वाउवेगतुरगेण । इक्कोवि चंडकोदंडकंडवरिसं करेमाणो ॥५॥ वणसूयरो उ कत्थवि गयरू-  
वधरो कहिंपि हरिस्सो । दूरं गंतु खणेणं कत्थवि लुक्को वणनिउंजे ॥६॥ जा तत्थ रायतणओ पविसइ ता नियइ मुणिवरं इक्कं ।



काउस्मग्गोवगयं न उणो तं वणजराहंति ॥७॥ किमिणंति चिंतिऊणं तुरियं तुरगाउ ओयरिचाणं । भत्तिभरनिन्मरो सो पडिओ  
 मुणिणो चरणजुयले ॥८॥ पारियउस्सग्गेणं उचिए समयंमि तेण वरमुणिणा । दत्तासीसो सीमुव्व तस्म पासे स आसीणो ॥९॥  
 तक्कहियं धम्मकहं सवित्थरं सोउ गुरुपमोयजुओ । मन्नंतो कयकिच्चं अप्पं गिण्हेइ गिहिधम्मं ॥ १० ॥ पुच्छेइ पुणो भयवं ! को  
 एसो सूयरुत्ति आह मुणी । पुव्वभरवेरिओ खुद्वंतरो तं छलिउकामो ॥११॥ कयवणवरादरूवो बहुरूवेभाइयं तु पयडित्था । इह  
 जा पत्तो अक्खुहियचित्तं नाउं निलुक्को य ॥ १२ ॥ पुण पुट्टं कुमरेणं हिट्ठामुहलंयमाणभुयजुयलो । को एस तवविसेसो भयवं !  
 किमिमस्स परिमाणं ? ॥१३॥ “भणइ मुणी भो निवसुय ! दव्वुसियप्पमुद्ववहुविहविगप्पो । एसंतरंगरूवो काउस्सग्गत्ति पवरतवो ॥१४॥  
 नवरमिमो दुविगप्पो चिट्ठाए अभिभवे य नायव्वो । चिट्ठाएऽणोगविहो कालपमाणं च से वहुहा ॥१५॥ तथाहि-देसिय राइयपक्खिय  
 चाउम्मासिय तहेव वरिसे य । नियया काउस्सग्गा इरियाइसु अनियया हुंति ॥१६॥ सायमयं गोसद्धं तिन्नि सया पक्खियंमि ऊमा-  
 सा । पंचसया चउमासे अट्टसहस्सं च वारिसिए ॥१७॥ अनिययउस्सग्गेसु य इरियाइसु पंचवीस ऊसासा । पट्टवणपडिक्कमणाइसु  
 उहेसाईसु सगवीसा ॥१८॥ अभिमविउं दुक्कम्मं कुद्वेण सुराइणा व अभिभविओ । जं कुणइ काउमग्गं सो अभिभवकाउसग्गत्ति  
 ॥१९॥ कालपमाणं च इहं उक्कोसं वरिसमवहिमाहंसु । बाहुवलिप्पगुहाणं जहन्नमंतोमुहुत्तं तु ॥२०॥ नवरं अभिभवउस्सग्गवत्तिणो  
 अगणिसप्पमाईहिं । खोभेऽवि अकयकज्जस्स जुअए नेव परिचइउं ॥२१॥ वासीचंदणक्कप्पो जो मरणे जीविए य समदरिसी । देहे  
 अ अपडिचद्धो काउस्सग्गो हवति तस्स ॥२२॥ तिविहाणुवसग्गाणं दिव्वाण य माणुमाण तिरियाणं । संममहियासणाए काउस्सग्गो  
 हवइ सुद्धो ॥२३॥” उदिओदयस्स रत्तो पच्चक्खं फलमिमस्स य तथाहि । इह पुरिमतालनयरे राया उदिओदओ आसी ॥२४॥

धीदे०  
वैत्य० श्री-  
वर्म० सां-  
चारविषी  
॥४२६॥

मो जिणमणए कुसलो आमस्मयमाइनिचकिचरओ । बाहिरवितीइ चिय रजं रडं च चितेइ ॥२५॥ सिरिकंता से कंता ओरोहग-  
याइ तीइ कइयावि । जिणमणए कुसलाए निम्मलसुइसीलसोयाए ॥२६॥ जलसोयकहणपवणा एगा पब्बाइया जिया वाए । दासीहिं  
निच्छदा ओरोदा सा तओ रुट्टा ॥२७॥ लहु चित्तपट्टियाए तीसे रूवं लिहेवि साइसयं । वाणारसीइ पत्ता धम्मरुइनिवस्स पासंभि  
॥२८॥ दंसेइ चित्तपट्टि मो तं रूवं निएवि पुच्छेइ । जियमणधरिणिरूवं नु कीइ रूवं इमं ? भदे ! ॥२९॥ सा जंपइ उदिओद-  
पनरिंदकंताइ पुरिमतालपुरे । सिरिकंताए रूवं लेसुदेसेण मे लिहियं ॥३०॥ अह राया थीलोलो सिरिकंतं मग्गए स दूएण । उदि-  
ओदओ न वियरइ धम्मरुई फुरियगुरुकोवो ॥ ३१ ॥ चउरंगवलसमेओ तं नयरं वेट्टिउं समंतेण । आवासिओ बहिं तो चितइ  
उदिओदओ एवं ॥३२॥ अहह सउत्ता केऽवि हु गिण्हंति वयं चएवि रजंपि । अन्ने तव्विवरीयं कुणंति एसुव्व ही मोहो ॥३३॥  
कुण्हपयइचित्ता नित्तियमत्थं कयावि न लहंति । एयंपि इमो न मुणइ इहा सया कामगहगहिओ ॥ ३४ ॥ अचंतधम्मवज्जेण  
जइविय अणुत्तियमिणं कयं इमिणा । मुणियतत्तस्स तहविहु नहु मह कप्पइ पडिकरेउं ॥३५॥ बहुमनसंघसंघायणाण संपाइयाण  
कउत्ताणं । फलमवि तप्पडिरूवं भापिधुवं ता कहिं ते हि ? ॥३६॥ सो अत्थो तं जीयं ते भोगा सो थ सयणसंबंधो । सा किती तं  
गलु पोरिसंपि तं हुज रजंपि ॥ ३७ ॥ जं धम्मस्स विरुद्धं न होइ कइयावि कहवि कत्थविय । तव्विवरीयत्ते पुण तल्लाभोऽविहु  
अलाभुत्ति ॥ ३८ ॥ इय निच्छिउण परिणामियाइ संमं मईइ स महप्पा । तट्टमराभिभवत्थं काउस्सग्गं पवजेइ ॥ ३९॥ तस्सत्तरं-  
जियमणो वेगमणो जलहलंतआहरणो । पच्चक्खीहोउ खणेण आह भो रागसद्दुल ॥ ४०॥ पारेसु काउसग्गं आदेसं देसु जेण  
तुह गतुं । निहणेमि सवलमेयं रसायले वा सिलेमि रुहुं ॥४१॥ तो पारिय उस्सग्गं निउई कारुत्तनीरनीरनिही । धम्मजुयं वयणमिणं

शशिनृप-  
कथा

॥४२६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संवा-  
चारविधौ  
॥४२७॥

कहेसि हे जकखरायवर ! ॥ ४२ ॥ एगस्स कए नियजीवियस्स बहुयाउ जीवकोडीओ । दुक्खे ठवंति जे केइ ताण किं सासयं  
जीयं ? ॥४३॥ जेऽवि सुभूमप्पमुहा तिसत्तखुत्तो करिंसु जीववहं । तेसिंपि दुग्गदुग्गइपडणाउ परं न किंपि फलं ॥४४॥ ता जह  
अहं धम्मो न हायइ मणंपि जह व सत्तुवलं । पावइ अपत्तपीडं नियठाणं कुणसु तह तुरियं ॥ ४५ ॥ एवंति भणेऊणं जं जत्तो  
आगयं तयं तत्थ । मुत्तुं परवलमखिलं गओ सठाणंमि जक्खपहू ॥ ४६ ॥ उदिओदपरायाऽविहु निचं उस्सग्गकरणउज्जुत्तो ।  
धम्मं काउ विमुद्धं जाओ सुक्खाण आभागी ॥४७॥ इय सोउं निवपुत्तो उस्सग्गुप्पन्नगाढपडिवंधो । पच्छा पहुत्तनियबलसमन्निओ  
नमियमुणिचरणो ॥४८॥ पत्तो नियंमि नयरे गिहिधम्मं पालए निरइयारं । अह सूरप्पहराया वेसावसणेणमभिभूओ ॥ ४९ ॥  
अइमअपाणमत्तो रआइअचित्तगो पहाणेहिं । कारेवि मअपाणं कयावि चत्तो अरन्नंमि ॥५०॥ ठविओ कुमरो रज्जे तेहिं सुविसुद्ध-  
धम्मकम्मपरो । दुक्कम्मक्खयहेउं उस्सग्गमभिकखणं कुणइ ॥५१॥ इत्तो सूरप्पहनरनाहो खणमित्तलद्धचेयन्नो । वेरगोवगयमणो  
तावसदिकखं पवज्जिता ॥५२॥ जाओ वंतरदेवो पउत्तओही निएवि नियपुत्तं । रिद्धिसमिद्धं रअं पालंतं वसणपरिहीणं ॥५३॥ तो  
फुरियपवलकोवानलो चित्तिउं समाढत्तो । पिच्छह मह विरहे हयसुयस्स सोगाइरेगत्तं ॥ ५४ ॥ मन्ने इमिणच्चिय पावपंकमलिणेण  
रअतिसिएण । अडवीनिवाडणं मह करावियं विगयलजेण ॥५५॥ जइविहु सपहुविहीणे रजे रायंतरं पयट्टंति । रआभिलासिणो  
हुंति मंतिणो तहवि नऽवराहो ॥५६॥ ता नत्थि ताण दोसो दोसो एयस्स चेव कुसुयस्स । इणमेव अओ पावं सओऽणज्जं निगिण्हामि  
॥५७॥ एवं चित्तिउ अंतो पसरंतमहंतअमरिसुफरिसो । सो वाणवंतरो ससिनिवस्स पासे लहुं पत्तो ॥५८॥ रायावि रआकआइं चि-  
त्तिउं विहियदेवगुरुपूओ । एगग्गमणो विजणे काउस्सग्गं समल्लीणो ॥ ५९ ॥ तस्संभुहमचयंतो ददुंतिपि झडत्ति तो पडिनियत्तो ।

शशिनृप-  
कथा

॥४२७॥

श्रीदे०  
पैल० श्री-  
धर्म० गंगा-  
वारविधौ  
॥४२८॥

कंमिवि काले पत्तो पुणोऽवि तद्द चेव तं ददुं ॥ ६० ॥ ज्ञत्ति नियत्तो स पुणोवि तद्दयवेलाइ तं तद्दुस्सग्गे । लीणमणं पासित्ता  
इय चित्तद्द वरगयामरिमो ॥६१॥ घत्तो एस नरिंदो जो एवं रज्जदंडपडिओऽवि । सययं सुधम्मकम्मे समुज्जुओ चिट्ठइ महप्पा  
॥६२॥ तो चवलकुंडलधरो पचक्खी होउ कहिय नियचरियं । बहुसो खामित्तु निवं पत्तो अमरो सठाणंमि ॥६३॥ ससिरायाविहु  
मरित्तेमकाउस्सग्गाइसुद्धधम्मपरो । इह परमवे य परमं कल्लाणपरंपरं पत्तो ॥६४॥ एवं भव्याः! शशधरकरश्लोकसंभारसारं, श्रुत्वा  
पूतं विप्रदमहमः श्रीशशिक्षमापतींदोः। कायोत्सर्गे प्रमितिकलिते क्लिष्टदुष्टाष्टभेदस्फूर्जत्कर्मप्रचयदलनप्रत्यले धत्त यत्नम् ॥६५॥  
इति शशिराजज्ञातं । प्रतिपादितं 'उस्सग्गमाणं'ति एकविंशं द्वारं, इदानीं 'श्रुतं च'ति द्वाविंशं द्वारमाविष्कुर्वन् गाथोत्तरार्द्धमाह-  
गंभीरमहुरसहं महत्थजुत्तं हवइ थुत्तं ॥ ५८ ॥

गंभीरा व्यंग्यार्थान्योक्तिप्रकोक्तिकठोरोक्त्यादिगर्भा मधुराः-सुश्लिष्टाक्षराः शब्दा यत्र तत्तथा, यद्वा मधुरो-मालवकैशिक्या-  
दिग्रामरागानुगतः शब्दः-भरो यत्र, अस्ति सकलामरहिता वररंभा हरिपुरीव चक्रपुगी । तत्थ निवो बलभद्दो पुरिसुत्तमहिय-  
यहरिमरुतो ॥१॥ दृढगाढप्रतिबंधः श्रीगुप्ताख्यः कुवेरसमविभवः । महपंसुकीलिओ तस्म आसि मित्तो महाकिविणो ॥ २ ॥ न  
ददाति स्वजनेभ्यः किंचिन्न व्ययति किंचिदापि धर्मे । धणमुच्छाए वज्जइ गमागमं सव्यठाणेसु ॥ ३ ॥ नवरं चिरपुरुपागतजिन-  
यरधर्मध्वणं यथावसरम् । जिणपूयणाइपमुहं जहापयहं कुणइ किंपि ॥४॥ उत्खननखननपरिवर्तनादिभिस्तद्वर्नं निर्जं नित्यम् । अव-  
हारसंक्रियमणो गोपंतो मो किलेसेइ ॥ ५ ॥ तस्यान्येद्युर्जने तनयः सुविनय उदारभावपुतः । तव्वयणमएण धणं सव्वंपि निहेइ  
मुवि मिट्ठी ॥६॥ अपरंद्युरुद्धतपनमूर्च्छः श्रेष्ठी जगाम परलोकम् । पिउणो मयकिचाइं कारइ विजओ ससोणमणो ॥ ७॥ सदनंतः

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
भर्म० सांगा-  
वारविधौ  
॥४२९॥

किंचिदपि द्रव्यमपश्यत्सौ बहुश्लेघैः । भोगणमपि अज्जंतो कयापि जणगीइ इयमुचो ॥८॥ वरसेह स्वानेऽष्टौ कोट्यः कनकरूप संति  
निशिखाः । तुह पिउणा ता गिण्हसु कयं किलेसेहिं सेसेहिं ॥९॥ विजयोऽथ निधिस्मानं विधिना खनितुं समारभत यावत् । ता उरल-  
वरिसामुलो उच्छलिओ तत्थ हलवोली ॥१०॥ अहह ममाभाग्यवशात् सन्नप्ययमर्थसंतनयो हि कथम् । समहिट्टिओ सुरेहिं? कह-  
मन्नह इह भवे विग्घो ? ॥११॥ एवं विजयः सुनिरं विचिंत्य निंदन्नभाग्यमात्मीयम् । तं वुत्तंतं नाउं लहु पत्तो केवलिसमीवे ॥१२॥  
तस्मिन् समये पलभद्रभूपतेर्मुनिपतिः कथयति स । जिण्णुद्धारस्सा फलं परमं सिवयुक्कलपजंतं ॥१३॥ विजयो ध्यनितयदथो गदि  
पितुरर्थोसयं लभेहमिमम् । तो कारेमि जिणगिहं जिपं पा उद्धरावेमि ॥१४॥ इति शुभमनोत्थगणः श्रेष्ठियुतो मुनिरं नमस्कृत्य ।  
पुच्छइ भयवं ! को मह निदाणलाभस्स विग्गकरो ? ॥१५॥ निजगाद मुनिवरिष्ठः सग पित्रा भद्र ! तीमगुत्थेन । पापियं वंतरभागेण  
एस समहिट्टिओ अत्थो ॥१६॥ विजयोऽथ फेवलिगुरुं नत्ता संभात्थ मातुरावासम् । उत्तरदेसंमि गओ ठिओ जयंतीपुरीइ पदि  
॥१७॥ तग व भूइलनामा वधुमंगः सन्नपादविद्यायुह । अत्थि विसिद्धो विप्पो जाया सह तेण से मिची ॥१८॥ अन्येशुरादर-  
पथान् तथैव निवासिना महेंद्रेण । आहूय महावणिणा कहियमिमं भूइलस्स जहा ॥१९॥ पूर्वापुरुषार्जितं मे ददते न द्यंतस्य भनं  
मात्तम् । अहं तुह अजं मह तल्लाभे कुणसु ता जयं ॥२०॥ पश्यान् विदधे मंग्रप्रभावतो ज्यंतरानसौ ह्यगिति । लिति निशिद्वय-  
मिपिने विमइय दिट्ठा इमे तयथु ॥२१॥ तं दप्पा विजयोऽपि प्रमोदभागभूदलं समाराध्य । गिण्हितु तस्स पासे तं मंतं नियपुरं  
पत्तं ॥२२॥ ता मेन परत्तएयं जिनिभूसमिभंविता पित्तुरोऽथ । तीए महीए संग्रहमपि पिच्छेउं अपारंतो ॥२३॥ उद्विगमना गाठं  
विमिगीपानवरीपामार्थो । एरंणे ताणफण पत्तो पलभइनिपासे ॥२४॥ अभजग भूप ! सोऽहं श्रीगुप्ताख्यस्तत्रासि वरमिग्रम् ।

धीरे  
नेत्र० धी-  
पने० मंपा-  
पाविधौ  
॥४३०॥

पत्तो रंरभारं नियनिहिभूमीइ चिह्नमि ॥ २५ ॥ तामधुना निधिलोभी विजयस्त्याजयति मामतो मित्र ! । वारसु जत्तण तयं इय  
भणिय तिरोहिओ देवो ॥२६॥ पृचांतमिमं राजा विजयस्याचष्ट सोऽप्युवाचैरम् । देव ! इममत्थसत्थं नियकजकए न गिण्हामि ॥२७॥  
रिंतु श्रीमचिनतानमंदिर सुंदर विधापयितुम् । मा अकयत्थो अत्थो भूमीमज्जे मुहा होउ ॥२८॥ इत्यादि युक्तमुक्तो राजा विज-  
नेन ममुदिउः प्राह । धत्तोऽमि विनय । जो चेइयत्थमिय उज्जमं कुणसि ॥२९॥ तद् विजय ! वांछितार्थः सिध्यतु तव शीघ्रमिति  
नृपानुमताः । नरुज्जरणपणो मरितेमयर इमो जाओ ॥३०॥ संध्याकृत्यं कृत्वा राजा शयनीयपरिगतो रजनौ । सुविसन्नमाण-  
तेणं इय भणियो तेण अमरेण ॥३१॥ एतद्धि मद्दापापं परो यदुत्थं इह क्षमानाथ ! । इत्तोवि इमं अहियं जं कीरइ तं  
पुणो विहल ॥३२॥ अय मरिपादो राजा जगाद तं भद्र ! मा सा वद एवम् । रुह जाणियजिणवयणो करेमि से धम्मविग्घमहं ॥३३॥  
किं वा नर विरुलेन द्रव्यग्रहणेन मुंन मोहमिमम् । अह तुमसि दग्धिणेहिं ता गिण्हसु मज्झ सयलनिही ॥३४॥ तदनु विहस्य स  
ऊणे गीक्षितुमपि नर निर्धनहं न लभे । तुह वंतरपायाओ किंया तुमए इमं न सुयं ? ॥३५॥ यादशि तादशि भूमिभुजि पंच पिशाच-  
त्राणि । महति तु यानि भवंति, वा तानि न परिकलितानि ॥३६॥ राजाऽऽह वयस्य ! मया किमितोऽपि परं विधातुमिह शक्यम् ।  
न हू नजइ म उवाओ जो लोगदुगेऽपि अविरुद्धो ॥३७॥ श्रुत्वेदं सविपादः न सुरः क्षिप्रं ततोऽपचक्राम । विजएणवि मंतवलेण  
उकरया क्षन्ति नियनिहिणो ॥३८॥ तत्रैव चंपओद्यानसंस्थितं तेन विभरनिग्रहेन । सयलंपि सडियपडियं समुद्धरइ संतिजिणभवणं  
॥३९॥ प्रहादितोत्सवमयो कृत्वा म्नुत्वा जिनं मदास्तरनैः । धन्नमन्नो विजओ सीहदुवारमि जा जाइ ॥ ४० ॥ तावदकर्णखरस्थं  
रूर्णमपीगैरिकैः क्वाभिभूयम् । यज्झं नीणिजंनं जिणगिहपुरओ नियइ चोर ॥४१॥ तं वीक्ष्य मनसि दष्यो विजयः श्रीशांतिदट्टि-

विजयकु-  
मारकथा

। ४३० ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४३१॥

पतितोऽपि । जइ मारिजइ एसो तो किं मम जीविण्णाविं ॥४२॥ एनमथ रक्षयित्वा क्षणमेकं सोऽगमन्नृपसमीपे । भालत्थलमि-  
लियकरो एवं विन्नविउमाढत्तो ॥४३॥ देव ! कृतभुवनशांतेः श्रीशांतेरपि पुरो वधार्थमसौ । निजइ चोरो अचंतमणुचिय वडुई एयं  
॥४४॥ तत् कुरु मम प्रसादं मुंच विभो ! तं वराकमतिदीनम् । गिण्हेवि दविणजायं अहवा मह जीवियव्वंपि ॥ ४५ ॥ तदनु  
भ्रूक्षेपवशात् नरपतिना प्रेरितोऽवदन्मंत्री । सो एस देव ! पावो जो तुह अंतेउरस्संतो ॥४६॥ स्वैरमदृश्यांजनगुरुवलतो व्यचरत्त-  
वाज्ञयाऽद्यासौ । जोगंधरसिद्धेणं पडिजोगवलेण विन्नाओ ॥४७॥ उपनिन्ये वः संप्रति देवेनादिष्टमंजनविधिं चेत् । साहेइ तओ  
निव्विसयकरणाओ तं विसज्जेह ॥४८॥ नो चेद्विडंब्य बहुधा भ्रमयित्वाऽसौ पुरे ध्रुवं घात्यः । पहु ! एसो हु हणिजइ आएसो पुण  
पमाणं मे ॥४९॥ राजाऽऽह विजय ! स पुमान् पापीयान् सर्व्वथा वधस्यार्हः । बहुतरविरोहकारिचि केवलं गरुपकरुणाए ॥५०॥  
अंजनकथनपणेनोन्मुक्तो यावन्न मन्यते तदपि । ता हंतुं चिय उचिओ ता अज्जवि भणसि तं वाढं ॥५१॥ तं मुंचत इति नाभ्यो  
मोक्षोपायोऽस्ति निश्चयो ह्येषः । अम्हारिसाणवि गिरो चलंति जइ ता गयं सव्वं ॥५२॥ विजयेन जल्पितं चेदिदं तदा देहि तं त्रि  
रात्रं मे । जेणुवलद्धतदिच्छो जहोचियं विन्नवेमि पहुं ॥ ५३ ॥ प्रतिपन्नमिदं राज्ञा नीतो विजयेन सोऽथ निजसदने । ण्हायवि-  
लेवणवरवत्थभोयणाईहिं उवयरिओ ॥५४॥ श्रेष्ठी द्वितीयदिवसे तेन युतः शांतिनाथभवनमगात् । विहिणा पूएवि जिणं एवं थोउं  
समाढत्तो ॥५५॥ तथाहि—“सुरराजसमाजनतांहियुगं, युगपज्जनजातविबोधकरम् । करणद्विपकुंभकठोरहरिं, हरिणांकितमर्जुनतुल्य-  
रुचिम् ॥ ५६ ॥ रुचिरागमसर्जनशंभुसमं, समभानविलोकितजंतुगणम् । गणनायकमुख्यमुनीन्द्रनतं, नतवांचितपूरणकल्पनगम्  
॥५७॥ नगराजविनिर्मितजन्ममहं, महनीयचरित्रपवित्रतनुम् । तनुकीकृतवैरिनरेशमदं, मदमत्तगजेन्द्रसदृग्गमनम् ॥ ५८ ॥

विजयकु-  
मारकथा

॥४३१॥

श्रीदे०  
वैद्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४३२॥

मनईहितमौख्यविधानपदं, पटुवाणिजनौघकृतस्तवनं । वनजोदरसोदरपाणिपदं, पदपद्मविलीनजगत्कमलम् ॥५९॥ मलमांघविमुक्त-  
पदप्रभवं, भवदुःखसुदारुणदानघनम् । घनसारसुगंधिमुखधसितं, सितसंयमशीलधुरैकवृषम् ॥६०॥ वृषकाननसेवननीरधरं, धरणी-  
धरंघमनिघगुणम् । गुणयजनताऽऽश्रितसचरणं, रणरंगविनिर्जितदेवनरम् ॥६१॥ नरकादिकदुःखसमूहहरं, हरहारतुपारसुकीर्तिभ-  
रम् । भरतक्षितिपामितचाहुवलं, बलशासनशंसितसाधुजनम् ॥६२॥ जनकाद्यनुरागविधौ विमुखं, मुखकांतिविनिर्जितचंद्रकलम् ।  
कलनातिगमिद्विगमृद्विपरं, परभक्तिजना नुत शांतिजिनम् ॥६३॥ जिनपुंगवनायक शिवसुखदायक नतदेवेन्द्रमुनीन्द्रवर । त्रिभु-  
वनजनबंधुर भवतरुसिधुर भवभविनां भव भीतिहर ॥६४॥” इत्यमुदारस्तवनं स भण्यमानं निश्चम्य विजयेन । सिरिसंतिनामधेयं  
गुणपुञ्जं कथयि महति ॥६५॥ ईहापोहगतमना मूर्च्छां प्राप्यास्तचेतनो भूयः । जाइसरो देवयदिन्नलिंगवेसो मुणी जाओ ॥६६॥  
अप्राक्षीदथ विजयो भगवन् । किं तव चरित्रमिदमममम् । पुन्वावरं विरुज्झइ ? तो इय साहूवि साहेइ ॥६७॥ अत्रैव पुरि पुराऽभूत्  
मुधाम्मिः श्रेष्ठिनंदनः सोमः । चक्रधराभिहरससिद्धमित्तसंनिज्जमाहप्पा ॥ ६८ ॥ अत्रैव शांतिभवने जीर्णोद्धारं व्यधापयद्  
मिधिना । दिन्ना दमग्गहारा ममामणा चेहए रत्ता ॥६९॥ जिनभवनवामपार्श्वे तिष्ठंत्यद्यापि शासनानि किल । सासणदेवीइ अहो  
रिजाणि तिहत्यमित्तेण ॥ ७० ॥ श्रीचारुदत्तमुनिवरपार्श्वेऽन्येद्युर्गृहीत्वान् दीक्षाम् । कासी य दुक्करतरं तवचरणं सुचिरमकलंकं  
॥७१॥ नरं च चरमसमये कृत्यांतरवर्त्तमानमिथुनगिरम् । सुचा सरागत्तित्तो मरिउं भूणसु जाओ सो ॥ ७२ ॥ च्युत्वा ततः  
नमभवन् कौशाम्ब्यां पुरि पुरोहितमुतोऽमौ । चंडो सयंभुदत्तो पत्तो य क्रमेण तारुन् ॥७३॥ व्यसनशतकेलिभवनं निरसार्यत  
मोऽथ निजगृहात्पित्रा । चहुनयरेमु भमंतो पत्तो कामरुयनयरंमि ॥ ७४ ॥ आकृष्टयंजनमोहनवशीकरणोचाटनादिकुशलमतिः ।

विजयकु-  
मारकथा

॥४३२॥



श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४३३॥

दिद्वो जोई तेणं पडिवन्नं तस्स सीसचं ॥ ७५ ॥ गाढग्लानोऽन्येषुस्तेन प्रगुणीकृतो ददौ मुदितः । अंजनसिद्धिं जोई तस्स य भो  
विजय ! सो अहयं ॥ ७६ ॥ नवरं तेनेइं मे कथितं कस्यापि मा स्स कथय इमाम् । इहरा तुब्भं सिद्धी विहडेही पिसुणमितुब्ब  
॥७७॥ अंजनबलेन राजेश्वरादिशुद्धांतसंचरणशीलः । भवियव्वयाइ केणवि नाओ नीओ इममवत्थं ॥७८॥ नवरं केणावि पुराकृतेन  
शुभसंचयेन तत्र दृष्टौ । अमयत्तमाए पडिओऽग्निं गोयरं जीविओ तेण ॥ ७९ ॥ त्वत्कृतशांतिजिनेशस्तयनस्तुतिविदितपूर्वभव-  
चरितः । जाओ समणो ता विजय ! होउ तुह धम्मलाभोत्ति ॥८०॥ विजयो विसयचेता इदमाख्यात् नरपतेरसौ प्राह । सिद्धिवर !  
चित्तचरिया पुरिसा को पच्चओ इत्थ ॥८१॥ शासनवृत्तांतमसौ प्रत्युनेऽचीखनन् नृपतिराशु । तट्ठाणं पत्ताइं च सासणाइं जहुत्ताइं  
॥८२॥ तदनु नृपः पुलकिततनुरतनुप्रमदः समेत्य तत्र मुनिम् । तं भत्तीइ नमित्था इय साहू कहइ धम्मकहं ॥८३॥ “आत्माऽय-  
मनल्पविकल्पकल्पनोत्पन्नपापपरिणामः । हरिकरिविसविमहरसत्तुणोऽवि दूरं विसेसेइ ॥८४॥ यस्मात् करिहरिमुख्या रुष्टा अपि  
ददति मरणमेकभयम् । अप्पा उ दुप्पउत्तो देइ अणंताइं मरणाइं ॥८५॥ किंच-अप्पा नई वेतरणी, अप्पा मे कूडसामली । अप्पा  
कामदुहा धेनु, अप्पा मे नंदनं वनं ॥८६॥ अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य । अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठियसुपट्ठियं  
॥८७॥ तद्भव्यैरयमात्मा जेतव्यो मुक्तिमिच्छुमिः सततम् । जेण जिओ चिय आया तेण जियं तिहुयणंपि जओ ॥८८॥ जो सहस्सं  
सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे । एगं जिणिज्ज अप्पाणं, एम से परमो जओ ॥८९॥” इत्थं वचः स्वयंभूदत्तस्य मुनेर्निशम्य साम्य-  
करम् । बुद्धा बहवो जीया जाया जिणसासणे भत्ता ॥९०॥ राजाऽपि देशविरतिं प्रतिपद्यैतान् दशाग्रहारांस्तु । सासणलिहिए सिरि-  
संतिपूयहेउं पणामेइ ॥९१॥ विजयोऽपि जिनायतने निजं कुटुम्बं विधाय सौस्थ्यमनाः । तस्स मुणिस्स समीवे पडिवज्जइ चारु-

विनय-  
श्रेष्ठियुत्तम्

॥४३३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥४३४॥

चारित्तं ॥९२॥ अन्यत्र चिर मुनिरपि विहृत्य भव्यान् विवोध्य जिनधर्मम् । उप्पन्नविमलनाणो सिद्धो संमैयसेलंमि ॥९३॥ एका-  
दशांगधारी विजयमुनिः स्मरिवैभवसमेतः । पालियवयमकलंकं जाओ अमरो पढमकप्पे ॥ ९४ ॥ तत्रामरगिरिनंदीश्वरादिचैत्येषु  
जिनवरान् स्तोत्रैः । भत्तीह संथुणंतो सुहेण पूरेवि निअआउं ॥९५॥ व्युत्वा ततो विदेहे जिनसंस्तवनैर्विधूतपापमलः। सपरोवया-  
रपवरो सिद्धं गमिहिइ विजयजीवो ॥९६॥ इति निशम्य जनाः ! करुणाकरं, विजयवृत्तकमेतदनुत्तरम् । स्वपरयोरुपकारकर सदा,  
भणत मार्वपुरः स्तवनं सदा ॥ ९७ ॥ इति विजयश्रेष्ठिदृष्टान्तः ॥ प्ररूपितं 'थुत्तं च'त्ति द्वाविंशं द्वार, सांप्रतं 'सग वेल'त्ति  
त्रयोविंशं द्वार प्रकटयन्नाह—

पडिकमणे चेइय जिमण चरिम पडिक्कमण सुयण पडिचोहे । चिइवंदणाइ जइणो सत्त उ वेला अहोरत्ते ॥४८॥

यतेः—साधोरिति—पूर्वाधोक्तरीत्या अहोरात्रमध्ये सप्त वेला जघन्यतोऽपि चैत्यवदना कर्तव्यैव, अन्यथाऽतिचारसंभवात्,  
तदकरणे प्रायश्चित्तस्य भणनाद्, आगमप्रामाण्यात् अधिकत्वनिषेधः, पर्वादिषु विशेषतो वंदनाभणनात् प्रतिषेधे तु प्रायश्चित्ताप-  
त्तेश्च, तथा चागमः—“जिणचेइए वंदमाणस्स वा संथवेमाणस्स वा पंचपयारं सज्झायं पयरेमाणस्स वा विग्घं करिजा पच्छित्तं”  
एतच्च तुशब्दो विशेषयति, तत्र 'पडिक्कमणे'त्ति प्राभातिकावश्यकावसाने एका चैत्यवंदना, तथा च मूलाऽऽवश्यकटीका  
“तओ तिन्नि थुईओ जहा पुव्वि, नवरमप्पसद्दगं दिंति, तओ देवे वंदंति, तओ बहुवेलं संदिसावंति”त्ति १ 'चेइय'त्ति  
द्वितीया चैत्यवंदना चैत्यगृहवेलाया, भक्तादिग्रहणार्थमुपयोगकरणपूर्वमित्यर्थः, उक्तं च महानिशीथे सप्तमाध्ययाने यत्तिदि-  
नचर्याप्रस्तावे 'चेइएहिं अरंदिएहिं उययोगं करिजा पच्छित्त' तथा मूलावश्यके कायोत्सर्गनिर्युक्तिवृत्त्योर्दिग्गमातिचारालोचना-

चैत्यवन्द-  
नसप्तकम्

॥४३४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४३५॥

धमुक्तं—“काउस्सग्गं मुखवपहदेसियं जाणिऊण तो धीरा । दिवसाइयारपरिजाणणट्टया ठंति उस्सग्गं ॥१॥ मोक्षपथः—तीर्थकरः,  
तदुपदेशकत्वेन कारणे कार्योपचारात्, सांप्रतं यदुक्तं ‘दिवसातिचारज्ञानार्थ’मिति तत्रोच्यते—विषयद्वारेण तमतिचारं दर्शयन्नाह—  
सयणासणऽन्नपाणे चेइय जइ सिज्ज कायउच्चारे । समिई भावणगुची वितहायरणे अ अइयारो ॥१॥ ‘चेइय’त्ति चैत्यवितथाचरणे  
सत्यतिचारः, चैत्यविषयं च वितथाचरणमविधिना वंदनकरणे अकरणे चेत्यादि, ‘जइ’त्ति यतिवितथाचरणे सत्यतिचारः, यति-  
विषयं वितथाचरणं यथाहं विनयाद्यकरणमिति, एषा च त्रिकालचैत्यवंदनामध्ये ग्राभातिकसंध्याकालवंदनोच्यते, यतो यतीनामपि  
दिवामध्ये त्रिसंध्यं चैत्यवंदनाया अवश्यं कर्तव्यतयोक्तत्वात्, तथा च महानिशीथस्तूत्रं “गोयमा ! जे केई भिक्खू वा  
भिक्खूणी वा संजयविरयपडिहयपच्चकूखायपावकम्मे दिवापमिईओ अणुदियहं जावजीवाभिग्गहेणं सुविसत्थे भत्तिनिब्भरे जहुत्त-  
विहीए सुत्तत्थमणुसरमाणे अणन्नमणे एग्गच्चित्ते तग्गयमणे ससुहज्जवसाए थयथुईहिं न तिकालियं चेइए वंदिजा तस्स णं पाय-  
च्छित्तं उवइसिजा २, ‘जिमण’त्ति चैत्यवंदनां कृत्वा भोक्तव्यं, तथा चोक्तं—“चेइएहिं साहूहि य अवंदिएहिं पाराविजा पच्छित्तं”  
एषा च मध्याह्नचैत्यवंदना गण्यते ३ ‘चरिम’त्ति संवरणप्रत्याख्यानानंतरं देवान् वंदेत, उक्तं च—“संवरित्ताणं चेइयसाहूणं वंदणं  
न करिज्जा पच्छित्तं” एषा सायसंध्याचैत्यवंदनायां निपतति, एवं च दिवामध्ये त्रिकालवंदना यतीनां भवति ४, ‘पडिकमण’त्ति  
दैवसिकप्रतिक्रमणात् पूर्वं देवा वंदनीयाः, तथा च महानिशीथे—“चिइवंदणपडिकमणं गाहा, चेइएहिं अवंदिएहिं पडिकमिज्जा  
पच्छित्तं” ५ ‘सुयण’त्ति देवान् वंदित्वा सुप्तव्यं, नान्यथा, यदागमः—“चेइएहिं अवंदिएहिं जाव संथारंमि ठाइज्जा पच्छित्तं” ६  
‘पडिचोहे’त्ति प्रभाते प्रतिबुद्धः सन् देवान् वंदते, उक्तं च—“इरिया कुसुमिणुसग्गो जिणगुणिवंदण तहेव सज्झाओ”त्ति ७ ॥ एवं

चैत्यवन्द-  
नसप्तकम्

॥४३५॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संपा  
चारविधौ  
॥४३६॥

च साधूनाथित्य वेलामप्रकनियमिता चैत्यवदना प्रदर्शिता, अथ गृहस्थानाथित्याह—

पडिकमओ गिहिणोऽविहु सगवेला पंचवेल इयरस्स । पूयासु तिसंझासु य होइ तिवेला जहनेणं ॥४९॥

प्रतिक्रामतः—उभयसंध्यमाश्रयक कुर्याणस्य गृहिणः—श्रावकादेः सप्त वेलाश्चैत्यवन्दना भ्रमंत्यहोरात्रमध्ये, यथा द्वे द्वयोरत्र श्यक्रयोः द्वे च स्वापावबोधयोः त्रिकालपूजानंतरं च तिस्रश्चेति सप्त, अपि संभाषने, संभाव्यते ह्येतदेवं, अन्यथा(एका)ऽऽश्रयक-करणे पद, स्वापादिसमयावदने पंचादिरपि, प्रभूतदेवगृहादौ वा अधिकाऽपि, पंचवेला इतरस्य—अप्रतिक्रामकस्य यथा द्वे स्वापावबोधयोस्तिष्ठः प्रतिसंध्य पूजानंतरं, तथा जघन्येन श्रावकस्य तिस्रो वेलाश्चैत्यवन्दना भवति कर्त्तव्येति शेषः, कथं?, त्रिसंध्यासु यास्तिष्ठः पूजास्तासु, तदनंतरमित्यर्थः, एतेन श्राद्धस्य त्रिकालपूजाऽप्यावेदिता, चशब्द उक्तानुक्तसमुच्चयार्थः, तेन यदाऽपि पूजा न सम्पत्ति तथाऽपि वेलात्रय देवा वदनीयाः, तथा याः पूर्वाह्णे गृहचैत्यचैत्यगृहादिषु वदनास्ताः प्रातःसंध्यावन्दनायां निपतन्ति, तदनंतरं माध्याह्निक्या, ततस्तु प्रदोषसंध्याया, तथा चागमः—“भो भो देवाणुप्पिया ! अज्जप्पभिईए जावजीवं तिकालिय अणु-चावलेग्गचिचेणं चेइए वदेयव्वे, इणमिव भो मणुयत्ताओ असुइअसासयखणभंगुराओ सारंति, तत्थ पुव्वण्हे ताव उदग्गपाणं न कायव्वं जाव चेइए साहू य न वदिए, तथा मज्झण्हे ताव असणकिरियं न कायव्वं जाव चेइए न वदिए, तथा अवरण्हे चेव तथा कायव्वं जहा अवदिएहिं चेइएहिं नो सेज्जायलमइकमिज्ज'त्ति । अत्र संप्रदायः—अत्थि सुरह्वाविसओ विसयसयविरायमाणनयविसरो । मरसफलकलियफलिओ लयलीणमुणिंदगिरिसिहरो ॥१॥ सत्तंजयसेलेसो सेलेसीकरणमालियो तत्थ । भवियाण निव्वुइकरो तह कयलहुपचसरमरणो ॥२॥ जो अट्ट जोयणाइ समुसिओ परओसहिसमिद्वो । दसजोयणविन्दिन्नो सिहरे मूले य पन्नासं ॥३॥ अविय

गृहचैत्य-  
वन्दना-  
संख्या

॥४३६॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४३७॥

गयणयलमणुलिहंत रुडकतकंतजिणभरणो । वणमज्जपहंतक्षरतनीरनिज्जरणनियरजुओ ॥ ४ ॥ जुयलट्टियसुरकिंनरसिद्धसमारद्व-  
सुद्धगंधव्यो । गंधव्वपणइणीजणमुच्छाविज्जंतवीणसरो ॥५॥ सरसहरिचंदणदुमसुगंधपूरंतसयलदिसिविवरो । परस्यणनिपरचिचइय-  
सिहरसयसंकुलो रम्मो ॥६॥ अह भरहनिवस्स सुओ पढमो पढमस्स तह जिणिदस्स । पुंडरियापरनामो गणहारी सिरिउसहसेणो  
॥७॥ विहडियजगजगडणमयणसुहडभडवीयपरमकोडीहि । परियरिओ सो पंचहि विहरतो समणकोडीहि ॥८॥ गामागरनगराइसु  
बोहंतो बहुयभवियपुंडरिए । पत्तो खमाधरो सो खमाधरे तंमि पुंडरिए ॥९॥ नमणागयवहुलोए अह वाहजलाउला बहुलसोया ।  
करगहियदुहियदुहिया समागया महिलिया एगा ॥१०॥ महिमिलियरिरा सा नमिय गणहरं करिय दारियं पुरओ । पभणइ किं  
पुव्वभवे भयवं ! दुक्कयमिमीइ कयं ? ॥११॥ चउचउरनाणउवओगजोगजोइयपयत्थसत्थगणो । भणइ गुणी सुण भदे ! जमिमीइ कयं  
दुक्कयं कम्मं ॥१२॥ असुहाण कम्मणं जं असुहो चव जायइ विवागो । नहि रोवियंमि निवे अंवफलं जायइ कयावि  
॥१३॥ किंच सवो पुव्वरूपाणं कम्मणं पावए फलविवागं । अवरहेसु गुणेसु य निमित्तमित्तं परो होइ ॥१४॥ तथाहि-  
पुव्वविदेहे हारुव्व परसिरीए अहेसि चंदपुरी । तत्थ धणावहसिद्धो भूरिधणो धम्मधणवुद्धी ॥१५॥ चिइचंदणाइसद्धम्मसंगया  
तस्स दुन्नि दइयाओ । चवसिरी मित्तसिरी एगंतरविहियमजाया ॥ १६ ॥ अन्नदिणे भंजती मज्जायं मयणपरससा धणियं ।  
चंदसिरी इंदुज्जलमइणा पइणा इमं भणिया ॥१७॥ उत्तमकुलुव्वभाण नय सुयणु मज्जायलंघणं जुत्तं । जलहीविहु सलहिअइ सजि-  
यअणवज्जमजाओ ॥ १८ ॥ किंच—चलति कुलाचलचक्रं मर्यादां लंघयन्ति जलनिधयः । प्रतिपन्नममलमनसां न  
चलति पुंसां युगात्तेऽपि ॥१९॥ तो सा तोसविरहिया अइरोसावेसक्खुसियमईया । चलिया विलक्खयणा मित्तसिरी उररि

कान्ति-  
श्रीकथा

॥४३७॥

सुपओसा ॥२०॥ कइया उ मयणअमरिसतवियाए तीइ तह वसीकरणं । पइणो कयं जहा सइ स सब्बहा तव्वसो जाओ ॥२१॥  
परिहरिया मित्तसिरी डज्झिज्जइ तत्तअंगवंगमणा । चंदसिरी तप्पचयमुग्गं दोहग्गमज्जेइ ॥ २२ ॥ चिइवंदणपरिणामा मरिउं  
कंतिमइ तुह सुया जाया । कंतिसिरी नयरे विजयवद्धणे विजयसिद्धिगिहे ॥२३॥ संपइ इमीइ उइयं कंमं भोगंतरायजणियं तं । जेण  
पई दिट्ठाइवि रूसइ से किंतु पुट्ठाए? ॥२४॥ एवं दुहियं दुहियं निएवि एयं तुमंपि दुहिया ता । सो विरलो कोऽवि जणो दुहियं  
जणिऊण जो सुहिओ ॥२५॥ यतः—“जातेति चिंता महतीति शोकः, कस्मै प्रदेयेति महान् विकल्पः। दत्ता सुखं  
स्थास्यति वा नवेति, कन्यापितृत्वं खलु नाम कष्टम् ॥२६॥ किंच-निरवचा दहइ मणं विणट्टसीलावि देइ दुक्खाइं।  
दोहग्गिणीवि दूमइ दुहिया पियराण हिययाइं ॥२७॥ अज्ज पुण दुसहदोहग्गउग्गदुहदूमिया इमा इत्थ । नियजीवियनिरविकखा  
गया अलक्खा मरणकंखा ॥२८॥ दरदिन्नकंठपासा एसा अणुमग्गआगयाइ तए । छिंदित्तु तयं पासं करे करेउं इहाणीया ॥२९॥ इय  
सोउं कंतिसिरी नंपइ संपइ पसीय मह भयवं ! । दोहग्गदरिइहरं चरित्तचिंतामणिं देहि ॥३०॥ सा भणिया मुणिपहुणा अहुणा भदे !  
न तं चरणउचिया । किंतु कुण संमरंमं चिइवंदणमाइगिहिधम्मं ॥३१॥ सा आह नाह ! फज्जं न मज्झ अन्नेण देहि पव्वज्जं । अज्जेव  
जेण सज्जो सज्जियऽणसणा मरामि अहं ॥३२॥ अह वाणवंतरसुरो कहेइ एगो अहो इह भवंमि । सत्ताण भमंताणं जायइ सरिसेण  
सह जोगो ॥३३॥ जमिमाविहु सच्छंदा असच्छतुच्छासया मह सरिच्छा । न पियइ अमयसमाणं गुरुवयणं समसुहनिहाणं ॥३४॥  
कंतिसिरी जणणीए कंतिमईए तओ कहं भयवं ॥ एसो इमीइ सरिसोत्ति पुच्छिए कहइ गणिनाहो ॥३५॥ संखउरनामगामे आसी  
कुलपुत्तओ धणो नाम । उच्छिन्नजणणिजणओ निरंगणो निद्धणो धणियं ॥३६॥ सो कइया सुयधम्मो आगंतुं दुक्खगवभवेरग्गे ।

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४३९॥

सिरिविजयसेणमुणिवरपासे पडिवज्जइ पवज्जं ॥३७॥ चोइज्जंतो रूसइ दुम्मेहो दुम्मुहो सयंमइओ । माणी छिइप्पेही निरो-  
वयारी अणुसइल्लो ॥ ३८ ॥ वंको अवन्नवाई न करेइ तवंपि मंदपरिणामो । विणयवहुमाणहीणो तो सो गुरुणा इमं भणिओ  
॥ ३९ ॥ “गुणरिद्धी दूरं चट्टियावि अविणयपवणपडिहणिया । इक्कपएचिय पुत्तय ! पणस्सए दीवयसिहव्व  
॥ ४० ॥ नीहारहारधवलोऽवि वच्च ! सच्छोऽवि सुगुणसमुदाओ । विणएण विणाऽवयणं व नयणरहियं न  
सोहेइ ॥४१॥ अचंतपियोऽवि वज्जिज्जइ पुरिसो विणयवज्जिओ दूरे । पवरमणिभूसणेवि य सुजणेहिं गुरुभुयं-  
गुव्व ॥ ४२ ॥ इय दुव्विणयत्तणदोसनिवहमवलोइऊण बुद्धीए । वच्च ! रमिज्जसु विणए समत्थकल्लाणकुल-  
भवणे ॥ ४३ ॥ विणयाओ हुंति गुणा गुणेहिं लोगोऽणुरागमुव्वहइ । अणुरत्तसयल्लोयस्स हुंति सव्वाउ  
सिद्धीओ ॥४४॥ किंच-विनया नाणं नाणाउ दंसणं दंसणाउ चारित्तं । चारित्ताओ सुक्खो सुक्खे सुक्खं अ-  
णावाहं ॥४५॥ तथा-चडइ नमंताण गुणो आरूढगुणाण होइ टंकारो । चावाणं व नराणं गुणटंकाराऽनवट्टाणा  
॥४६॥ इय सो गुरुणा करुणापरेण भणिओऽवि कम्मगुरुयाए । मुंचइ न निरोणामत्तणं सया निरणुतावित्ता ॥ ४७ ॥ अण्णदिणे  
सहसा तेण मग्गिए अणसणे गुरु भणइ । पायं न पायमुच्चियं असंलिहियदव्वभावाणं ॥४८॥ भणइ इमो संलेहियतणूण कीवाण  
सत्तरहियाणं । अणसणकरणं मयमारणंति नहु तेण मह कज्जं ॥ ४९ ॥ एयं दुगंपि समगं करेमि पिच्छंतया हवइ तुब्भे । इय  
भणिरो पुण गुरुणा करुणानिहिणा निसिद्धोवि ॥ ५० ॥ सयमेव चत्तभत्तो सहसा खिजंतधाउसंदोहो । तण्हाल्लुहसंतचो अप्पिड्डी  
पणयो जाओ ॥ ५१ ॥ भणियं च—“रज्जुग्गहणे विसमक्खणे य जलणे य जलपवेसे य । तण्हाल्लुहाकिलंता मरिऊण हवंति

कान्ति-  
श्रीकथा

॥४३९॥

वंतरिया ॥ ५२ ॥” दासं पेशं दीणं अन्नेसि सुराण पेमगतनं च । अप्पं निएति ईमावितायदूसियमणो तो सो ॥५३॥ आगं-  
तूणं अग्गे ताणं चिय विजयसेणसुरीणं । दीणो हीणो लग्गो कयंजली विन्नविउमेवं ॥ ५४ ॥ भयवं ! भवभयसंभंतसत्तसंताण-  
रक्खणसमत्थ ! । जं न कयं तुह वयणं तेणाहं एरिमो जाओ ॥५५॥ इण्हिपि किंपि ता मह उवइसह हियं गुरुहिं तो भणियं । सुर-  
वर ! सयावि मुणिचेइयाण सुस्समगो हुज्ज ॥ ५६ ॥ इच्छंति भणिय अह सो मुणिचेइयसंघकज्जकरणरओ । मंनमणत्थं इत्थं  
समागओ सो इमो भदे ! ॥५७॥ संघस्स काउ संतिं वेयावचं समाहिमेस इओ । चविउं होही राया राउव्व कलानिही सोमो ॥५८॥  
दुविहंपि तओ धम्मं काऊण भविस्सइ सुरवरो सो । तो उत्तरोत्तरसुहो सिज्झिस्सइ अट्टमभवंमि ॥५९॥ इय सोउं नियचरियं हरिस-  
वसुल्लसिरव्वहलरोमंचो । इय सो वंतरदेवो पुंडरियं गणहरं थुणइ ॥६०॥ “जय पणमिरविआहरदेविंदमुणिंद सिरिगणहरिंद । गुरु-  
करुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाण ॥६१॥ जय जय नाणकलानिहिपडिवोहियव्वहुयभवियपुंडरिय ! । गुरुकरुणारससायर !  
नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ६२ ॥ सग्गापवग्गमग्गाणुलग्गजणसत्थवाहपायाणं । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं  
॥६३॥ जय गुणगणहर गणहर ! सुयहरसंमोहकरडिपुंडरिय । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥६४॥ भवरुइअमुद्द-  
समुद्दमज्झमज्जंतजंतुपोयाणं । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥६५॥ दुस्सहदोहग्गदरिदतावतावियजियाण पुंडरिय ! ।  
गुरुकरुणासायर ! नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥६६॥ जय विगलियकलिमलभरनिम्मलतव चरणसाहुपुंडरिय ! । गुरुकरुणारससायर !  
नमो नमो तुब्भ पायाणं ॥ ६७ ॥ डिंटीरपिंडपंहुस्सुधम्मकित्तिभरभरियभुयणयल ! । गुरुकरुणारससायर ! नमो नमो तुब्भ  
पायाणं ॥६८॥ इय संथुओ सि गणहर ! देविंदमुणिंदपणयपयकमल ! । जिणसासणभत्ता मे(इहं)पहु ! हुज्ज सया तुह पसाया ॥६९॥”

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४४०॥



श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म० संधा  
चारविधौ  
॥४४१॥

इय थोउ सुरे विरए कंतिसिरी कहइ पहु ! कहं अहयं । अहुणा नहु वयउचियत्ति ? तो गुरु भणइ सुण भदे ! ॥७०॥ सोवकम-  
निरुवकमभेया कम्मं दुहा इहं तत्थ । परिणामत्रसेण भवे सोवकमकंमुणो नासो ॥७१॥ निरुवकम्मं तु कम्मं जिज्झइ जीवाण वेइयं  
चेव । दुकरत्तवचरणेणं निकाइयत्ता जओ भणियं ॥७२॥ "सव्यासिं पयडीणं परिणामवसादुवकमो भणियो । पायमनिकाइयाणं तवसा  
उ निकाइयाणंपि ॥७३॥" तथा "खलु भो कडाणं कम्माणं पुब्बिं दुचिन्नाणं दुप्परिकंताणं वेइत्ता मुफखो, नत्थि अवेइत्ता, तवसा वा  
शोसइत्त"त्ति । तुमए पुण कम्ममिणं विहियं सोवकमं तओ गमिही । मज्झिमवयंमि चिइवंदणाइसुकयाणुभावेण ॥ ७४ ॥ भणियं  
च-पुच्चभवविहियजहविहिचिइवंदणमाइसुकयउप्पन्नं । सुहभोगफलं पुन्नं उदइस्सइ तुह अमामन्नं ॥७६॥ तत्तो पइणो इट्ठा पहूय-  
रसुहभायणं बहुअवजा । होहिसि अवचसहिया य संमया पउरलोयस्स ॥७७॥ इय सोउ सहा सयला सहलं सह लायसंजया धम्मं ।  
गहिय सविसेसं चिइवंदणाइरम्मं गया सगिहं ॥७८॥ कंतिसिरीविहु गहिउं गगवेलाचेइवंदणासहिअं । गिहिधम्मं सा उजुया गया  
गिहं विजयसिट्ठिस्स ॥७९॥ डिंडीरपिंडपंडुरगुरुजसभरपंडुरीकयतिलोओ । भयवंतु पुंडरीओ काउं बहुलोयउवयारं ॥८०॥ बहु-  
समणकोडिजुत्तो पत्तो विमलायलंमि अयलपयं । मासपरिचत्तभत्तो पत्तो पुंनिमदिणे चित्ते ॥ ८१ ॥ निव्वाणगमणमहिमा हिट्ठेहिं  
सुरासुरेहिं तस्स कया । पुंडरियसिद्धिकाला सो भन्नइ पुंडरीयगिरी ॥८२॥ अह भरहचक्किणा पढमधम्मचक्किस्स पुंडरीयस्स । पडि-  
माइ अलंकरियं कारवियं पवरजिणभवणं ॥ ८३ ॥ पढमअिणपढमगणहरसिद्धीइ पवित्थियं तयं जायं । अनसप्पिणीइ भरहे तित्थं  
तित्थाण पढमंति ॥८४॥ कंतिसिरीवि तिसंझं पूयंती जिणवरं उभयसंझं । आवस्सयंमि निरया सुइरं पालेवि गिहिधम्मं ॥ ८५ ॥  
सिरिधम्मघोसखरिस्स चरणमूलंमि गहियपच्चआ । समवारं चिइवंदणकरणमणा विजियकरणमणा ॥८६॥ उप्पन्नविमलनाणा सार-

कान्ति-  
श्रीकथा

॥४४१॥

स्वियसयलजंतुसंताणा । निट्टविअअट्टकम्मा जाया संकलियसिवसंगां ॥ ८७ ॥ कांतिश्रीरिति चैत्यवंदनमहोरात्रस्य मध्ये सदा, वेलाः सप्त वितन्वती समभवत् श्रेयःश्रियामाश्रयः । तद् भो भव्यजनाः ! सनातनसुखप्राप्तप्रतिष्ठे यथाशक्त्येकादिकवारमंत्रं कुरुंत त्यक्तालसा उद्यमम् ॥८८॥ इति कांतिश्रीकथा ॥ इति व्याख्यातं 'सग्वेल'त्ति त्रयोविंशतितमं द्वारं, संप्रति 'दसआसायणचाउ'त्ति चतुर्विंशं द्वारं व्याचिख्यासुराह—

तंबोल१ पाण२ भोयणु३ पाणह४ मेहुन्न५ सुअण६ निट्टुवणं ७ ।

सुत्तु८ चारं९ जूअं १० वज्जे जिणणाहजगईए (मंदिरस्संतो) ॥ ६१ ॥

ताम्बूलं-पूगपत्रादि चैत्ये नाऽऽस्वादयेत् न च उद्गीर्यात्, एतेन स्वादिमाहारनिषेधः१, पानं जलादेर्न कार्यं, हस्तपादमुखांग-क्षालनाभ्यंगोद्वर्चनादेर्वा पानं-रक्षणं कार्यं, कुरुकुवादीनां च २ भोजनं-अभ्यवहरणमोदनादेर्भक्तौषधफलादेश्च न विधेयं ३ चैत्ये चतुर्विधोऽप्याहारस्त्याज्य इत्युक्तं भवति, एतेन चोपभोगो निषिद्धः, तस्य सकृद्भोग्यत्वाद् अंतरूपयोगिरूपं वा परिभोगं निषेधयति, उपानहौ-पन्नद्वे पादुके च न परिदध्यात् ४ मैथुनं-मिथुनकर्म सुरतं करस्पर्शादिकां हास्यक्रीडां नासेवेत् ५ स्वपनं भूमौ शय्या-दिषु च न कुर्यात् ६ निष्ठीवनं-धूत्करणं, दंताक्षिनखनासिकास्यशिरःश्रोत्रत्वगादिमलपंकाद्युपलक्षणं चैतत् ७ मूत्रोच्चारं-लघुनीति-वृहन्नीतिं नाचरेत्, आभ्यां च वातपित्तत्वगस्थिरक्ताद्यपवित्रवस्तुनिषेधमाह, धृतं चतुरंगशारिनालिकाष्टापदत्रिपदीनवत्रिकदुहागंदु-कादिकं वर्जयेज्जिनमन्दिरस्यांतः-देवगृहमध्ये१०॥ अत्र चैतैर्भोगाभिधानवृत्तीयाशातनाभेदैर्बृहद्भाष्योक्ता सप्रभेदाऽवज्ञादिका पंचप्रकाराऽप्याशातना प्रभावतीदेवीवद् व्याज्येति प्रदर्शितं, समानजातित्वात् मध्यग्रहणे आद्यंतयोरपि ग्रहणाच्च, तच्च भाष्यं "जिण-

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४४३॥

भवणमि अवण्णा १ पूयाइअणायारो २ तथा भोगो ३। दुप्पणिहाणं ४ अचियत्ती ५ एया आसायणा पंच ॥१॥ तत्थ अचनाऽऽसायण  
पल्हत्थियदेवपट्टिदाणं च । पुडुपुडिपायपसारणदुट्ठासणसेवण जिणग्गे ॥२॥ जारिसतारिसवेसो जहा तथा जंमि तंमि कालंमि । पूयाइ  
कुणइ पुत्तो अणायरासायणा एसा ॥३॥ भोगो तंचोलाई कीरंतो जिणगिहे कुणइऽवस्सं । नाणाइयाण आयस्स सायणं तो तमिह वज्जे  
॥४॥ रामेण च दोसेण च मोहेण च दूसिया मणोविची । दुप्पणिहाणं भन्नइ जिणविसए तं न कायव्वं ॥५॥ धरणरणरुपणविग्हाति-  
रिवंधणरंधणाइ गिहकिरिया । गावीविज्जवणिजाइ चेइए चउऽणुचियविची ॥६॥” प्रभावतीदेवीकथा त्वियं-चंपाए नयरीए  
सुवन्नगारो कुमारनंदित्ति । सो पुण जं जं पिच्छइ सुणइ य रूवस्सिणिं कन्नं ॥१॥ तं तं परिणइ दाउं कणगसए पंच पिंडिया  
एवं । पंच सया ताहिं समं विलसइ इगथंभपासाए ॥ २ ॥ अह पंचसेलदीवट्टियाओ हासप्पहासदेवीओ । नंदीसरजत्ताए जंतीओ  
सफआएसा ॥३॥ सपइंमि विद्युमालीसुरे चुए से कुमारनंदिस्स । बुग्गाहिउं सरुवं दरिसंति निएवि ताउ इमो ॥४॥ पुच्छइ काओ  
तुम्मे १ ता चित्ति वयं सुरीउ जइ कज्जं । तो इज्ज पंचसेले इय भणियं तिरोहिया ताओ ॥५॥ सोऽवि निवं विन्नविउं पडहं दावेइ  
सपलनपरंमि । पणसेले नेइ ममं जो से दाहं कणगकोडिं ॥६॥ एगो थेरो तं छिविय पडहयं दाउ नंदणाण धणं । पत्थयणभ-  
रियवहणो सो चलिओ तेण सह जलहिं ॥७॥ गंतुं सुदूर जंपइ जलहिंमि तदुग्भवो वडो रुक्खो । एयं विलगिज्ज तुमं पाए एयस्स  
हुआ तो ॥८॥ इह भारुंडा तिपया विहमा एहिति पंचसेलाओ । सुवेसु तेसु एगस्स मज्झ पाए तुमं अप्पं ॥९॥ वंधिज्ज पडेण ददं  
सो गोसे नीहिही तुमं तत्थ । जलहिजलावचंमि य पडियं पुण भज्जिही वहणं ॥१०॥ तह कुणइ सुन्नगारो नीओ भारुंडपक्खिणा  
तत्थ । दिट्ठो ताहिं वस्संगमूसुओ ताहि इय बुत्तो ॥११॥ इमिणा तणुणा नऽम्हे भुजामो काउ तो तुमं किंपि । अग्निपवेसाईयं होउ

प्रभावती-  
कथा

॥४४३॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४४४॥

तुमं पंचसेलेपहू ॥१२॥ किमहं करोमि ? कथञ्चयामि ? जंपंतओ इमो ताहिं । चंपुञ्जाणे नेउं मुक्को करसपुंढे काउं ॥१३॥ उव-  
लक्खिविय लोएणं पुट्टो सो कहइ निययवुत्तंतं । सुमरंतो ताओ अग्गिसाहणं काउमादत्तो ॥१४॥ जिणपवयणकुसलेणं नाइलसट्ठेण  
तस्स मित्तेणं । सो भणिओ धम्मंचिय कामत्थीऽविहु कुणसु भद् ! ॥१५॥ यतः-“धनदो धनार्थिनां धम्मः, कामदः सर्व्वकामि-  
नाम् । स्वग्गापवर्गयोर्धम्मः, पारंपर्येण साधकः ॥१६॥”इय चारिओवि तेणं सनियाणो इंगिणीइ सो मरिउं । जाओ पणसेलपहू  
पच्चज्जिय नाइलोऽवि मओ ॥१७॥ जाओ अच्चुयदेवो अह नंदीसरि सुराण जंताणं । पुरओ गायंतीओ हासपद्दासाओ चलियाओ  
॥१८॥ सो ताहिं भणिओ पडहवायणे इच्छए न दप्पेण । पडहो गले विसग्गो तस्स न उत्तरइ कहकहवि ॥१९॥ तो ताहिं सो  
भणिओ इहऽप्पणो सामि ! एस अहिगारो । अह वार्यंतो गच्छइ पडहं ताणं सुराण पुरो ॥२०॥ तं ददट्टु नाइलसुरो नियमित्तं ओहिणा  
नियं रूवं । तब्बोहकए दंसइ न चयइ निइउं स दट्टुं पि ॥२१॥ सो संहरिय सतेयं जंपइ भो भद् ! मं वियाणासि ? सो आह सक्कपमुहे  
देवे को नणु न याणेति ? ॥२२॥ अह सावगरूवं से दंसिय तं पइ सुरो भणइ मित्तं । जिणधम्मं अकरिय जलणसाहणं कासि तं  
मूढ ! ॥२३॥ तुह वेस्सगेण अहं जिणदिक्खं काउ अच्चुए जाओ । अमरो तं सोउ इमो अणुतावा भणइ नियमित्तं ॥२४॥ इण्हि  
मह कहसु किच्चं स आह गिहवासि चित्तसालाए । उस्सग्गठियस्स तुमं कारसु वीरस्स वरपडिमं ॥ २५ ॥ जेण तुमं अण्णभवे  
सुवोहिवीयं लहेसि भो भद् ! । दारिदं दोगच्चं दीणत्तं नेव पावेसि ॥२६॥ तं सोउ विज्जुमाली तुट्टो नाइलसुरस्स नमिय पए ।  
खत्तियकुंडग्गामे गंतुं ददट्टुं महावीरं ॥ २७ ॥ गंतुं महहिमवंते छित्तुं गोसीसचंदणं पवरं । वीरस्स काउ पडिमं खिविय सयं  
घडियसंपुडए ॥ २८ ॥ पत्तो जलहिंमि तथा पोयस्सुप्पायओ भमंतस्स । छम्मासा वोलीणा तो सो संहरिय उप्पायं ॥ २९ ॥

प्रभावती-  
कथा

॥४४४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४४५॥

पोयपहुस्स तमणिय खोडिं तं गच्छ वीयभयनयरे । देवाहिदेवपडिमा इहऽत्थि साहिज्ज इय मणिउं ॥ ३० ॥ अमरो गओ  
सठाणं वीयभयपुरे इमोऽवि लहु पत्तो । खोडिमुदायणरत्तो समप्पिउं कहइ सुरवयणं ॥ ३१ ॥ तावसभत्तो स निवो अत्तेऽवि हु  
दंसणी वह् मिलिया । नियनियदेवे संसाहिऊण देवाहिंदवत्तं ॥ ३२ ॥ वाहिति तत्थ परसुं न वहइ सो एव सुबहु सव्वेसि । किस्सं-  
ताणं ताणं जाओ मज्झण्हसमओत्ति ॥ ३३ ॥ अह चेडगनिवधूया उदायणनिवस्स वल्लहा देवी । जिणसमए लद्धट्टा पभावई नाम  
सुइसीला ॥ ३४ ॥ निवमाहोउं पेसइ चेडिं भोयणकए स पच्चाह । इय अम्हे किस्तामो सुहिया देवी न हु मुणेइ ॥ ३५ ॥ सा  
साइ देवीए सावि विचितेइ अहह मूढजणा । मिच्छत्तमोहिया नहु मुणंति देवाहिदेवंपि ॥ ३६ ॥ अथ निशीथचूर्णिणः—'ताहे पभावई  
प्याया कयकोउयमंगला सुक्खिवासपरिहाणपरिहिया चलिया, बलिधूवपुष्फकडुच्छुयहत्था गया, तओ पभावईए सव्वं बलिमाइ  
काउं भणिअं—देवाहिदेवो महावीरवद्धमाणसामी तस्स पडिमा कीरउत्ति पहराहि, पहरिओ कुहाडो, एगेण दुहा जायं, पिच्छंति य  
पुज्जनिज्जत्तिअं सञ्चालंकारविभूत्तिअं भगवओ पडिमं, आणेउं रत्ता घरसमीवे देवयाययणं काउं तत्थ ठविया, किण्हगुलिया  
नाम दासचेडी सुस्ससाकारिणी निउत्ता, अट्टमीचउइसीसु य पभावई देवी भत्तिराएण सममेव राओ नट्टोवयारं करेइ, रायावि  
तयाणुविचीए सुरवं चाएइ, अन्नया राओ पभावईए नट्टोवयारं करंतीए रत्ता सीसच्छाया न दिट्टा, उप्पाउत्तिकाउं आउलचित्तस्स  
रओ नट्टसमं सुरवक्खोडा न पडंति'त्ति ॥ रुट्टाऽऽह तओ देवी नहु जुत्ता देव ! देवहरयंमि । हासाइआउ आसाअणाउ देवा इहाहरणं  
॥ ३७ ॥ तयाहि—देवहरयंमि देवा विसयविसमोहिआवि न कयावि । अच्छरसाहिंपि समं हासक्खिडाइ हु कुणंति ॥ ३८ ॥ आसाय-  
॥ ३९ ॥ तदुक्तं—खेलं केलि कलिं

प्रभावती-  
कथा

॥४४५॥

कला कुललयं तंबोलमुग्गालयं, गाली कंगुलिया सरीरधुवणं केसे नहे लोहियं । भत्तोसं तयपित्तवंतदसणे विस्संभणं दामणं, दंत-  
च्छीनहगंडुनासियसिरोसोतच्छवीणं मलं ॥ १ ॥ मंतुमीलण लीखयं विभजणं भंडार दुट्टासणं, छाणीकप्पडदालिप्पडवडीवि-  
स्सारणं नासणं । अकंडं विगहं सरच्छवडणं तेरिच्छसंठावणं, अग्गीसेवणरंधणं परिखणं निस्सीहियाभंजणं ॥ ४० ॥ छत्तोत्राणह-  
सत्थचामरमणोऽणेगत्तमन्भंगणं, सच्चित्ताणमचाय चायमजिए दिट्ठीइ नो अंजलिं । साडेगुत्तरसंगभंग मउडं मौलिं सिरोसेहरं,  
हुंडा जिण्डुह गिड्डियाइरमणं जोहारभंडिककयं ॥ ४१ ॥ रिक्कारं धरणं रणं विवरणं बालाण पल्हत्थियं, पिंडी पायपसारणं पुडुपुडी  
पंकं रओ मेहुणं । जूयं जेमण दुब्भविज्ज वणिजं सिजा जलं मज्जणं, एमाई अणवज्जकज्जमुजुओ वज्जे जिणिंदालए ॥ ४२ ॥ तो  
आह निवो महे ! विकप्प न मए कओ इहं हासो । किंतु तुह नच्चमाणीइ नेव दिट्ठा सिरच्छाया ॥ ४३ ॥ अप्पाउत्ति कलिच्चा  
खलभलिओ वायणाउ तो चुक्को । तं सुणिय मुणियकयसुद्धरंमधंमा भंणइ देवी ॥ ४४ ॥ “लद्धं अलद्धपुच्चं जिणवयणसुभासियं  
अमयभूयं । गहिओ सुग्गइमग्गो नाहं मरणस्स वीहेमि ॥४५॥ पूयंति जे जिणिंदे वयाइं धारंति सुद्धसंमत्ता । साहूण दिन्नदाणा  
न हु ते मरणाउ वीहंति ॥४६॥” इअ भणिय मुणियतत्ता अविसाया सभवणं गया देवी । सट्ठाणमधम्मन्नु गओ निवो पुण क-  
सिणवयणो ॥४७॥ अन्नदिणे कयण्हाणा देवी पूयारिहाणि वत्थाणि । दासीए आणावइ उप्पाया ददुत्तु ते रत्ते ॥४८॥ इय समएऽणु-  
चियाइं इमाइं इय कोवपरवसा देवी । मुकुरेण हणइ चेडिं संखपएसे मया साऽवि ॥४९॥ पुण ताइं उज्जलाइं चेडीमरणं च ददुत्तु  
चित्तेइ । देवी मए अहाहा भग्गं चिरपालियं खु वयं ॥ ५० ॥ तं पुच्चं दुनिमित्तं साहिय रत्तो वयायऽणुन्नवइ । सोऽवि पयंपइ तं  
जिणधम्मे मे चे विवोहेसि ॥५१॥ तो तुह दावेमि वयं तीए एवंति मन्निए रत्ता । साऽणुन्नाया काउं वयं सुरो पढमदिवि जाओ

॥५२॥ बोहइ बहुहा स निवं बुज्जइ न उ सो तओ सुरो काउं । तावसरूवं रन्नो सभागयस्सऽप्पइ फलाइं ॥५३॥ वन्नरसगंधफा-  
सुक्किट्ठाइं फलाइं एरिसाइं कहिं । अत्थित्ति ? निवेणुत्ते स भणइ बहि तावसावसहे ॥५४॥ अह तप्फलगिद्धीए राया तेण सह जाइ  
जा बाहिं । ता नियइ तमुज्जाणं आइन्नं तावससएहिं ॥५५॥ तेहिं अरेऽरे गिण्हह गिण्हह एयंति जंपिरेहिं निवो । कुट्टिजंतो नट्टो पिच्छइ  
पुरओ जइणसमणे ॥ ५६ ॥ तेसिं सरणमुवगओ मुणीहिं से वित्थरेण परिकहिए । जिणधम्मे पडिबुद्धो जाओ राया महासद्धो  
॥५७॥ अह नियइ निवो अप्पं सट्ठाणे दंसियऽप्पयं अमरो । कज्जेसु मं सरिज्जत्ति वुत्तुं पत्तो नियं कप्पं ॥५८॥ इयो य-गंधार-  
जणवए सावगो पव्वइउकामो सव्वत्तित्थयराणं जंमणनिक्खमणकेवलुप्पायनिव्वाणभूमीउ ददुं पडिनियत्तो पव्वयामित्ति, ताहे सुयं-  
वेयडुगिरिगुहाए रिसहाइयाण सव्वत्तित्थयराणं सव्वरयणच्चिचइयाओ कणगपडिमाओ, साहुसगासे सुणित्ता ताव दच्छामित्ति तत्थ  
गओ, तत्थ देवयाराहणं करित्ता विहाडिया पडिमाओ, तत्थ सो सावगो थयथुईहिं थुणंतो अहोरत्तं निवसिओ, तस्स निम्मलरयणेसु न  
मणागमवि लोभो जाओ, देवया चित्तेइ-अहो माणुसमलुद्धंति, तुट्ठा देवया, बूहि वरं भणंती उवट्टिया, तओ सावगेण लवियं-नियत्तोऽहं  
माणुस्सएमुं कामभोगेमुं, किं कज्जंति, अमोहं देवयादरिसणंति भणित्ता देवया अट्टसयं गुलियाणं जहाचित्ति यमणोरहाणं पणामेइ, ताओ  
य गहिया सावगेण, तओ निग्गओ, सुयं च णेण-वीयभयनयरीए सव्वालंकारविभूसिया देवावयारिया पडिमा, तं दच्छामित्ति  
तत्थ गओ, वंदिया पडिमा, तत्थ ठिओ स गिलाणो जाओ पडिजग्गिओ य कुज्जाए । अट्टसयं गुलियाणं पव्वइओ तीइ सो दाउं  
॥५९॥ अह एगगुलियमक्खणपभावओ सा सुवन्नवन्नाभा । जाया तप्पभिइ जणे सुवन्नगुलियत्ति विक्खाया ॥६०॥ भक्खित्तु  
वीयगुलियं चित्तइ सा मे पिउव्व एस निवो । सेसा गोहममा तो मह भत्ता हवउ पज्जो प्रो ॥६१॥ सो देवयाणुभावा तीइऽणुरचो

विसज्जइ दूयं । सा भणइ दंससु निवं पज्जोयस्साह सो गंतुं ॥६२॥ नलगिरिमारुहिय इमो निसि पत्तो तत्थ तीइ अभिरुइओ ।  
जिणपडिमं संगिण्हसु एमि अहं अन्नहा नेव ॥६३॥ अह गंतु सो सनघरिं पडिरूवं कारिउं तहिं पत्तो । तं मुत्तुं जिणपडिमं दासिं  
गहिउं गओ सपुरिं ॥ ६४ ॥ गोसे सकरी सोउं नट्टमए चेडियं अवहडं च । कुविओ उदायणनिवो जा जीयावेइ जिणपडिमं  
॥६५॥ ता तं मिलाणमच्छं ददुं दसमउडवद्धनिवसहिओ । पज्जोयनिवस्सुवरिं चलिओ काले निदाघम्मि ॥ ६६ ॥ पत्ते मरुंमि  
सिन्ने मिसं तिसापीडिए सरइ राया । झत्ति पभावइदेवं स विउव्वइ पुक्खराण तिगं ॥६७॥ तं पाउ पाउ सलिलं सत्थे सिन्ने सुरो  
गओ सपयं । राया उदायणोऽविहु उज्जेणिपुरिं कमा पत्तो ॥६८॥ तत्थ उदायणरत्तो अवेतिनाहस्स दूयवयणेण । अचिरा परु-  
प्परेणं रहसंगरसंगरो जाओ ॥६९॥ तयणु धणुद्वरपवरो रहमारुहिउं उदायणो पत्तो । गुणटंकारमुदारं कुणमाणो समरभूमीए ॥७०॥  
नाउ रहाजेयमुदायणं निवं नलगिरिं चडिय पत्तो । रणभुवि पज्जोओऽविहु बलवंते का नणु पइन्ना ॥७१॥ नलगिरिगयमारूढं  
तं ददु उदायणो भणइ रुद्धो । पाविहु भट्टसंधोऽसि तहावि नट्टो सिरे धिट्ठ ! ॥ ७२ ॥ इय भणिय मंडलीए रएण सरहं निवो  
भमाडंतो । निसियसरेहि विंधइ वीसुं करिणो पयतलाइं ॥७३॥ तो लहु हत्थीपडिओ धरिऊण उदायणेण पज्जोओ । मम दासीवइं  
एसत्ति अंकिओ कीवविवसेणं ॥७४॥ गंतु तओ विदिसीए अत्थिअ देवाहिदेवपडिमं जा । उप्पाडइ नरनाहो ता भणइ सुरो अहो  
भूव ! ॥७५॥ मा नेसु तत्थ पडिमं वीअभए पंसुवइवो होही । तो राया सविसाओ नमिय तयं सपुरभभि चलिओ ॥७६॥ बुट्ठीइ  
अंतराले खलिओ सिविरं निहित्तु तत्थ ठिओ । काऊण धूलिवप्पे दसवि निवा तस्स रक्खट्ठा ॥७७॥ अह पज्जुसणादिवसे कय-  
उववासे उदायणे खूओ । पुच्छइ पज्जोयनिवं का तुह कीरउ रसवइत्ति ? ॥७८॥ सो चिंतइ नूनमहं मारिउकामो विसाइणा तत्तो ।



श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४४९॥

जंपइ छयं ! कीरइ किमज्ज मे वीसु आहारो ? ॥७९॥ सओ जंपइ सामी संतेउरपरियरो अंभत्तही । जं अज्ज पज्जुसवणा तो तुह  
साहेमि आहारं ॥८०॥ सो आह साहु तुभए पव्वमिणं मज्झ सारियं सुव ! । अज्जुववासो मज्झवि जं पियरो मह परमसड्ढा ॥८१॥  
तं सओ साहइ गंतु राइणो सोऽवि भणइ जाणेमि । से सट्ठत्तं जाणइ धुत्तो पुण वइसगं काउं ॥८२॥ काराइ ठिए एयंमि जारिसे  
तारिसे व नहु सुद्धा । मह होइ पज्जुसवणा इय तं भुंचेइ नरनाहो ॥८३॥ दाउं अवंतिदेसं स महप्पा कुणइ तेण खामणयं । भालं-  
कगोवणट्ठा विअइ वरकणयपट्टं च ॥८४॥ तप्पभिइ पट्टवद्धा निवा पुरा आसि मउडवद्धत्ति । वित्ते वरिसारत्ते उदायणो निय-  
पुरं पत्तो ॥८५॥ जे लाभत्थी वणिया समागया तत्थ ववहरणहेउं । तेहिं चिय वगमाणं खायं तं दसपुरं नयरं ॥८६॥ कइआवि  
पक्खियं पोसहं निवो लेइ वीयभयसामी । रयणीइ चरमजामे सुहलेसो इइ विचित्तेइ ॥ ८७ ॥ ते धन्ना गामपुरा विहरइ सिरि-  
वीरजिणवरो जत्थ । रायाई ते धन्ना सुणंति जे वीरधम्मकहं ॥ ८८ ॥ जे लिति देसविरइं तप्पयमूलंमि ते उ धन्नयरा । जे उ  
पवज्जंति वयं ते धुणिमो ते नमंतामो ॥ ८९ ॥ जइ अज्ज एइ वीरो तप्पयमूले गहेमिऽहं दिक्खं । अइ तत्थ समोमरिओ गोसे  
सिरिवीरजिणनाहो ॥९०॥ सच्चिव्हीए राया वंदिय वीरं सुणेवि धम्मकहं । पत्तो नियआवासे एवं चित्ते विचित्तेइ ॥९१॥ दिक्खत्थी  
खलु अहयं अभीइपुत्तस्स देमि जइ रज्जं । संसारनाडयनडो तो एस मइच्चिय कउत्ति ॥ ९२ ॥ चितिय नियजामेए केसिऽमिहाणे  
ठवेवि रज्जभरं । गिण्हइ उदायणनियो दिक्खं दुविहं तहा सिक्खं ॥९३॥ अंताहाराईहिं तस्सुप्पन्नो कयावि गुरुरोगो ! गुणरयणो-  
दहि ! दहियं भुंजसु विजेहिं इय भणिओ ॥९४॥ स सुणी तमुग्गरोगं वएसु विगईगणण जावंतो । पत्तो वीयभयपुरे मणिओ मंतीहिं  
केसिनिवो ॥९५॥ एम तुह गाउलो अइनिन्नियो आगओ मरज्जत्थी । आह निवो देमि अहं नियरज्जं लेउ लहु एसो ॥९६॥ तो

प्रभावती-  
कथा

॥४४९॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४५०॥

बहुदा मंतीहि केसी बुग्गाहिओ दवावेइ । पसुवालीए विसमीसियं दहिं तस्म वरमुणिणो ॥९७॥ तं हरिय विसं जंपइ देवया मा  
गहेसु मुणिपवर ! । सविसं दहिमित्थ जओ तयणु तयं चयइ रायरिसी ॥९८॥ अह वड्डइ से रोगो गिण्हइ स दहिं विसं हरइ अमरी ।  
वारतिगं तुरियाए वेलाए से पमत्ताए ॥९९॥ भुंजिय सविसं दहियं काउं आराहणं समयविहिणा । उप्पन्नविमलनाणो उदायण-  
मुणी सिवं पत्तो ॥१००॥ पुण तत्थ देवया सा पत्ता पिच्छिवि मुणिं तद्दाभूयं । रुद्धा वीयभयपुरं सव्यत्तो पिहइ पंझहिं ॥१०१॥  
सिज्जायरं कुलालं उदायणनिवस्स नेउ सिणवह्निं । कुंभारकडं नयरं तन्नामेणं ठवइ तत्थ ॥ १०२ ॥ इय खामणाइहेउं उदायण-  
निवस्स किच्चियं चरियं । आसायणाइचाए पभावरइए पुणो पगयं ॥१०३॥ श्रुत्वेति लोका विलगद्विवेकाः !, प्रभावतीवृत्तमिदं  
पवित्रम् । आशातनां संसृतिभाववल्लीग्रावृद्समा मा कृत जैनचैत्ये ॥ १०४ ॥ इति प्रभावतीदेवीकथा ॥ इति प्ररूपितं 'दस-  
आसायणचाओ'त्ति चतुर्विंशतितमं द्वारं, तन्निरूपणेन च प्रदर्शितं 'एवं चिइवंदणाइ ठाणाइं, चउवीप्रदुवारेहिं दुसहस्सा हुंति  
चउसयर'त्ति प्राक् प्रतिज्ञातं सप्रपंचमपि, चैत्यवंदनाकरणविधिक्रमप्रदर्शनार्थमाह—

इरि १ नमुकार २ नमुत्थुण ३ अरिहंत ४ थुइ ५ लोग सन्व ७ थुई ८ पुक्ख ९ ।

थुइ १० सिद्धा वेया १२ थुइ १३ नमुत्थु १४ जावंति १५ थय १६ जयवी १७ ॥६०॥

तत्र 'ता गोयमा ! अप्पडिकंताए इरियावहियाए न कप्पइ चेव किंचि चिइवंदणसज्झायझाणाइयं काउं फलासायमभिकं-  
खुगाण'मित्यागमप्रामाण्यात् 'इरिय'त्ति प्रथममीर्यापथिकीप्रतिक्रमणं तत्कायोत्सर्गं च चंदेसु निम्मलयरेतियावत् नामस्तवस्य  
पंचविंशत्युच्छ्वासमानं कृत्वा नमो अरिहंताणंति भणनतः पारयित्वा मुखेन सकलोऽपि चतुर्विंशतिस्तयो भणनीय इति वृद्धाः, ततः

प्रभावती-  
कथा

॥४५०॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४५१॥

क्षमाश्रमणपूर्वं इच्छाकारेण संदिसह भगवन्! चैत्यवन्दनं करोमीति भणित्वा 'नमुक्त्वा'ति-श्यामौ नेमिमुनी उभौ विमलतः पट्टपंच  
नाभेयतः, श्रेयोवीरसुपार्थशीतलनमिर्वैरोचिपः षोडश । द्वौ चंद्रप्रभसद्विधी सितरुची द्वौ पार्श्वमल्ली शिती, द्वौ प्रभप्रभवसुपूज्य-  
जिनपौ रक्तौ स्तुवे श्रेयसे ॥ १ ॥ देवेन्द्रादिभिरहितानरिहतः स्तौम्यर्हतः सन्मुदा, विद्यानंदमुखाद्यनंतसुगुणैः सिद्धान् समृद्धान्  
सदा । आचार्यान् यतिधर्मकीर्तितसमाचारादिचारून् महोपाध्यायान् श्रुतधर्मघोषणपरान् साधून् विधेः साधकान् ॥२॥ अर्हतो  
मम मंगलं विदधतां देवेन्द्रबंधक्रमा, विद्यानंदमयास्तु मंगलमलंकुर्वन्तु सिद्धा मम । महं मंगलमस्तु साधुनिकरः सद्धर्म-  
कीर्तिस्थितौ, मंगल्यं श्रुतधर्मघोषणपरं धर्मं सुदृग्भिः श्रेये ॥३॥ इत्यादिरूपा यथारुचि यथाप्रस्तावमेकद्विव्यादिनमस्कारा  
भणनीयाः, ततः 'कहं नमंति ?, सिरपंचमेणं काएण' मित्याचारांगचूर्णिवचनात् पंचांगप्रणामं कुर्वता 'तिकरुचो मुद्धानं धर-  
णितलंसि निवेसेइ' इत्यागमात् त्रीन् चारान् शिरसा भूमीं स्पृष्ट्वा 'नमोत्थुणं'ति 'भुवणिकगुरुजिणिंदपडिमाविणिवेसियनयणमाण-  
सेण धन्नोऽहं पुन्नोऽहंति जिणवंदणाए सहलीकयजम्मुत्ति मन्नमाणेण विरइयकरकमलंजलिणा हरिययतणवीपजंतुविरहियभूमीए  
निहिउभयजाणुणा सुपरिफुडसुविदियनिस्संकजहत्यसुत्तयोभयं पए पए भावेमाणेणं जाव चेइए वंदियच्चे'ति, तथा 'सकत्थपाई  
चेइवंदणं'ति महानिशीथत्तीयाध्ययनोक्तविधिप्रामाण्यात् भूनिहितोभयजानुना करभृत्तयोगमुद्रया शकस्तवदंडको भणनीयः, तदंते  
च पूर्ववत् प्रणामं कृत्वा समुत्थाय जिनमुद्रास्थितचलनो योगमुद्रया 'अरिहंत'ति अरिहंतचेइयाणमित्यादि चैत्यस्तपदंडकं पठति,  
उक्तं च-"उट्टिय जिणमुदाठियचरणो करधरियजोगमुद्दो य । चेइयगयथिरदिट्ठी ठयणाजिणदंडयं पढइ ॥ १ ॥' कायोत्तर्गं च  
'ऊगासा अट्ट सेसेसु'ति वचनात् अष्टोच्छासपूरणार्थमष्टसंपदं नपकारं चित्तयित्वा तं पारयति, ततः 'भुइ'ति अधिष्ठतजिनस्तुति

आशातनाः

॥४५१॥

ददाति, तत्रायं बृहद्भाष्योक्तो विधिः—अद्वैतसासपमाणा उस्सग्गा सव्व एव कांयव्वा । उस्सग्गसमत्तीए नवकारेणं तु पारिजा  
 ॥१॥ परमिद्धिनमुक्कारं सकयभासाइ पुण भणइ पुरिसो । चरिमाइमथुइपढमं पाइयभासाइवि न इत्थी ॥ २ ॥ जइ एगो देइ थुई  
 अह णेगो ता थुई पढइ एगो । सेसा उस्सग्गठिआ सुणंति जा सा परिसमत्ता ॥३॥ विंत्तस्स जस्स पुरओ पारद्धा वंदणा थुई तस्स ।  
 चेइयगेहे सामन्नवंदणे मूलविंत्तस्म ॥४॥ इत्थ य पुरिसथुईए वंदइ देवे चउव्विहो संघो । इत्थीथुईइ दुविहो समणीओ साविया चेव  
 ॥५॥ ततो 'लोग'त्ति 'लोगस्सुज्जोअगरे' भणंति, 'सव्व'त्ति 'सव्वलोए अरिहंतचेइयाण'मित्यादिना प्राग्बत् कायोत्सर्गः क्रियते,  
 पारयित्वा च 'थुइ'त्ति द्वितीया स्तुतिः सर्वजिनाश्रिता दीयते, ततः 'पुक्खर'त्ति 'पुक्खरवरदीवड्डे' दंडको भणनीयः, तत्कायो-  
 त्सर्गानंतरं च 'थुइ'त्ति तृतीया स्तुतिः सिद्धांतसत्का भणनीया, ततः 'सिद्ध'त्ति 'सिद्धाण'मित्यादि भणित्वा 'वेप'त्ति वेयावच-  
 गराणमित्यादिना कायोत्सर्गः कार्यः, ततः 'थुई'त्ति वैयावच्यकरादिविषयैव चतुर्थी स्तुतिर्दीयते, ततः प्राग्बत् प्रणामपूर्वकं ज-  
 नुद्धयं भूमौ विन्यस्य करपृथयोगमुद्रया 'नमुत्थु'त्ति पुनः शक्रस्तवदंडको भणनीयः, तदंते च प्रणामं कृत्वा 'जावंति'त्ति सर्व-  
 जिनवंदनाप्रणिधानरूपा 'जावंति चेइयाइ'इत्यादिगाथा भणनीया, उक्तं च पंचवस्तुके 'वंदित्वा द्वितीयप्रणिपातदंडकावसाने'  
 इत्यादि, ततः क्षमाश्रमणं दत्त्वा 'जावंति केवि साहू' इत्यादिना द्वितीयं मुनिवंदनास्वरूपं प्रणिधानं करणीयं, पुनः क्षमाश्रमणं दत्त्वा  
 इच्छाकारेण संदिसह भगवन् ! स्तवन भणउ इति भणित्वा इह स्तोत्रं भणनीयं, ततो मुक्ताशुक्तिमुद्रया 'जयवी'त्ति 'जय वीयरा-  
 ये'त्यादि तृतीयं प्रार्थनालक्षणं प्रणिधानं विधेयमिति 'पणदंड थुइचउक्कग थुइपणिहाणेहिं 'उक्कोस'त्ति प्रागुक्तक्रमप्रतिपादिकागा-  
 थाक्षरार्थः । अत्र भाष्यकृत्सद्गुरुबहुमानातिशयतः स्वगुरुनामज्ञापनापूर्वकं प्रकृष्टफलदर्शनद्वारेण निगमयन्नाह—

श्रीदे०  
चैत्य०श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४५३॥

सन्वोवाहिविसुद्धं एवं जो वंदए सया देवे । देविंदविंदमहियं परमपयं पावइ लहुं सो ॥ ६३ ॥  
सर्वे श्रायकादिविषया ऋद्धिमदनृद्धिमद्रोचरा देशकालाद्यनुगता द्रव्यस्तरभावस्तरस्वरूपा वंदनीयस्तरनीयादिविषयप्रणि-  
धानलक्षणाश्च उपाधयो-धर्मानुविद्धाश्चिंताः 'उपाधिर्धर्मचिंतन'मिति वचनात्, न पुनः सावधैहिकप्रयोजनविषयाः, लोके स्मभा-  
सिद्धा हि ते इति नोपदेशपराः, अप्राप्ते हि शास्त्रमर्थवत्, नहि मलिनः स्नायात् बुभुक्षितो वाऽश्रीयादित्यत्र शास्त्रमुपयुज्यते, अ-  
प्राप्ते त्वामुष्मिके मार्गे नैसर्गिकमोहान्धितस्य विलुप्तलोकस्य लोकस्य शास्त्रमेव परमचक्षुरित्येवं सर्वत्राप्यप्राप्ते विषये उपदेशः सफल  
इति चिंतनीयं, अथ साप्रधारभेषु शास्त्राणां वाचनिकाऽप्यनुमोदना न युक्ता, यदाहुः-“साप्रज्ञऽणवज्ञाणं वयणाणं जो न जाणऽ  
विसेसं । वोत्तुं पि तस्स न खमं किमग पुण देसणं काउ ? ॥१॥” तैर्विशुद्धं-अप्रदातं सर्वोपाधिविशुद्धं, यद्वा सर्वे-यथाप्रज्ञैपेविक्य-  
करणादिका दिगवग्रहानप्रस्थानात्मका जघन्यवंदनैकांगप्रणिपातैकनमस्कारादिविषया उच्छ्रासाद्याकारमोक्षादिलक्षणाश्च उपाधयः-  
अपवादप्रकारास्तैर्विशुद्ध-अकलकितमिति भावः, देशकालाद्यौचित्येन यथाप्रस्तावनियोजितस्याप्रादस्योत्सर्गफलदायितयोत्सर्गवि-  
शेषरूपत्वात्, 'दव्याऽएहिं जुत्तस्सुस्सगो तदुचिअ अणुट्ठाणं । तेहिं रहियमववाओ जहोचियं जुत्तमुभयंपि ॥१॥' एवं-पूर्वोक्तनी-  
त्या यो भव्यप्राणी वदते सदा-अहनिंश यावज्जीवाभिग्रहेण तथैवाप्रश्यकत्वयोगात्, तथा च महानिशीथसप्तमाध्ययनग्रं-“से भयां !  
केण अट्ठेणं एं वुचइ जहा णं आवस्सगाणि ? , गोयमा ! असेसकसिणट्ठं रुम्मक्खयकारिउत्तमसम्मदं मणचरित्तअच्चतघोरवीरुग्गरु-  
ट्ठगुदुकरतवसाहणट्ठाए नियनियविभत्तुदिट्ठपरिमिएणं कालसमएणं पयपएणं अहन्निसाणुसमयमाजंमं अपस्ममेव तित्थयसइसु क-  
रिंति अणुट्ठिअंति उअइसिअंति परुविज्जति सययं एएणं अत्थेणं एवं वुचइ गोयमा ! जहा आवस्सगाणि'ति, देवान्-जिनेन्द्रान्

देवन्दन-  
फलं

॥४५३॥

सिञ्जिज्जा ॥२॥" मेघरथकथा त्वियं-इह दीवे पुत्रविदेहमंडणे पुक्खलावईविजये । पुंडरिगिणीपुरीए आसी जिणो घणरहो राया  
॥१॥ पियमइमणोरमाओ तस्स पिया पियमईइ अह जाओ । ओहिजुओ संतिजिणो मेहरहो नाम वरपुत्तो ॥ २ ॥ तस्स पियपिय-  
मित्ताइ मेहसेणो सुओ कयाइ निवो । पुत्ताइजुओ चिट्ठइ अंतो अंतेउरे जाव ॥ ३ ॥ ताव सुसेणा गणिया कुकुडहत्था निरं भणइ  
देव ! । कस्सवि न कुकुडेणं जिप्पइ मह कुकुडो एसो ॥४॥ जइ जिप्पइ तो लक्खं दीणाराणं पणंमि से देमि । देवी मणोरमा  
अह जंपइ इमिणगिय पणेणं ॥५॥ एस वरकुक्कुडो मे जुज्झउ इय होउ जंपिए रत्ता । ते मुक्का जुज्झंति य नय जिप्पइ कोवि केणावि  
॥६॥ अह जंपइ मेहरहो किं केणं कोऽवि जिप्पइ न ताय ! । भणइ प्ह इह भरहे एरवए रयणपुरनयरे ॥७॥ दो मित्ता धणवसुदत्तनामया  
आसि विविहआरंभा । वसहाइवाहणपरा कूडतुला कूडमाणरया ॥ ८ ॥ कूडकूयकूडमाणयपरवंचणपवणमाणसा कूरा । मिच्छदिट्ठी  
अदया निस्सीला निचलोहिष्ठा ॥९॥ एफद्वभिलासा जुज्झय मरिऊण अट्टज्ञाणेण । जाया तत्थेव करी सुवन्नकूलानईतीरे ॥१०॥  
भवियव्वयाइ मिलिया ते जुज्झत्ता मया उज्झाए । जाया महिसा तत्थवि भिडिय मया मिट्टिया जाया ॥११॥ पुण जुज्झ-  
य तत्थ मया सरिसबला कुक्कुडा इहुप्पत्ता । पुत्रं व इयाणिपिट्ठु न जिप्पिही कोऽवि केणावि ॥ १२ ॥ अह मेहरहो जंपइ न  
केवलं पुत्रवेरविवसमणा । जुज्झंतिगे वराया विज्जाहरधिट्टियावि तहा ॥१३॥ घणरहनिवेण उन्नमिय एगभमुहेरिओ उ मेहरहो ।  
जंपइ भरइपियइडे सुवण्णनाभामिहे णयरे ॥१४॥ रायाऽऽसि गरुडवेगो तस्म सुया चंदस्तरनामाणो । ते अन्नदिणे पत्ता मेरु-  
गिरिं वंदिउं देवे ॥१५॥ ददुं सागरचंदं चारणसमणं नमेवि पुच्छंति । नियपुत्रभवे साह साहइ इय धायईसंडे ॥१६॥ एरवए  
वज्जपुरेऽभयघोसनिवस्म आसि दुन्नि मुया । विजओ य वेजयंतो तिन्निवि ते जइणधम्मरया ॥१७॥ कइयावि अभयघोसो

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा  
चारविधौ  
॥४५४॥

‘देवेन्द्रवृंदमहित’ पूजितं आकांक्षितं वा, अथवा, देवेन्द्रा-देवेन्द्रसुरिनामान आचार्याः विंदा-विचारका ‘विदिंप् विचारणे’ इति वच-  
नात्, विधिस्वरूपादिज्ञापका इत्यर्थः, यत्र तदेवेन्द्रविंदं, अयमर्थः-तीर्थकरप्रज्ञापितं गगधराद्युक्तं बहुश्रुतपारंपर्यायात् चैत्यवंद-  
नाया विधिस्वरूपादि श्रीदेवेन्द्रसुरिभिर्भाष्यतया प्रदर्शितं, न पुनः किमप्यत्र नूतनं विरचितमिति भावः। एवं च यत् प्राक् प्रति-  
ज्ञातं ‘बहुवित्तिभासचुण्णी सुयाणुसारेण वुच्छामि’ इति तदनेन समर्थितं भाष्यकृता स्वनाम च ज्ञापितं, कथं प्रदर्शितमित्याह—  
‘अधिकं’ कं-ज्ञानं तेन अधिगतं अधिकं, ‘विभक्ती’त्यव्ययीभावः, तेन अधिकं, ‘वा तृतीयाया’ इत्यमादेशः, यथा स्वबोधानुमा-  
नेनाधिगतं तथोपनिषद्य दर्शितमित्यर्थः, परमं-उत्तमं देवेन्द्रार्चितकाक्षितत्वात्, यद्वा परा-प्रकृष्टा मा-लक्ष्मीः बाह्या समवस-  
रणादिका अभ्यंतरा केवलज्ञानाद्या यत्र तत्परम तच्च तत्पदं च परमपदं, तीर्थकरपदवीमित्यर्थः, यदागमः—“सामंतो चक्रहरं  
चक्रहरो सुरवइत्तणं कंखे। इंदो तित्थयरत्ते तित्थयरे पुण तिजयसुहए ॥१॥ तम्हा जइ इंदेहिवि कंखिज्जइ एगवद्धलक्खेहिं। इय  
साणुरागसहिएहिं उत्तमं तं न संदेहो ॥२॥” प्राप्नोति-समासादयति लघु-शीघ्र सः-यथाविधिचैत्यवंदनाकर्त्ता, उक्तं चागमे-“जो  
पुण दुहउच्चिग्गो सुहनण्हात्तु अलिच्च कमलवणे। इय धुइमंगलजयसद्वावडो ज्ञणज्ञणे किंपि ॥१॥ भत्तिभरनिभरो जिणवरिंद  
पायारविंदजुगपुरओ। भूमीनिट्टुप्रियसिरो कयंजली वाउडो भत्तो ॥१॥ एकंपि गुणं हियए धरिज्ज संकाइसुद्धसंमतो। अक्खुद्धि-  
यवयनियमो तित्थयरत्ताइ सो सिज्जे ॥३॥” प्र-आदिकर्मणि, ततश्च यावत्तीर्थकरत्वं स्यात् तावत् मेघरथप्रचक्रीन्द्रत्वाद्यनुभवति,  
अथवा परमं पदं परमज्ञानादिचतुष्टययोगाच्छेष प्राग्वत्, तथा चागमः-“नामपि सयलकंमट्टमलकलंकेहिं विप्पमुक्काणं। तियसिंद-  
च्चियचलणाण जिणवरिंदाण जो सरइ ॥१॥ तिविहकरणोउत्तो खणे खणे सीलसंजमुज्जुत्तो। अविराहियवयनियमो सोऽविहु अइरेण

देववन्दन-  
फलं

॥४५४॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संपा-  
चारविधौ  
॥४५५॥

सिज्जिज्जा ॥२॥" मेघरथकथा त्वियं-इह दीवे पुत्रविदेहमंडणे पुत्रखलावईविजये । पुंडरिगिणीपुरीए आसी जिणो घणरहो राया  
॥१॥ पियमइमणोरमाओ तस्स पिया पियमईइ अह जाओ । ओहिजुओ संतिजिणो मेहरहो नाम वरपुत्तो ॥ २ ॥ तस्स पियपिय-  
मित्ताइ मेहसेणो सुओ कयाइ निवो । पुत्ताइजुओ चिट्ठइ अंतो अंतेउरे जाव ॥ ३ ॥ ताव सुसेणा गणिया कुकुडहत्था निवं भणइ  
देव ! । कस्सवि न कुकुडेणं जिप्पइ मह कुकुडो एसो ॥४॥ जइ जिप्पइ तो लक्खं दीणाराणं षणंमि से देमि । देवी मणोरमा  
अह जंपइ इमिणच्चिय षणेणे ॥५॥ एस वरकुक्कुडो मे जुज्झउ इय होउ जंपिए रत्ता । ते मुक्का जुज्झंति य नय जिप्पइ कोवि केणावि  
॥६॥ अह जंपइ मेहरहो किं केणं कोऽवि जिप्पइ न ताय ! । भणइ प्ह इह भरहे एरवए रयणपुरनयरे ॥७॥ दो मित्ता धणवसुदत्तनामया  
आसि विविहआरंभा । वसहाइवाहणपरा कूडतुला कूडमाणरया ॥ ८ ॥ कूडकयकूडमाणयपरवंचणपवणमाणसा कूरा । मिच्छदिट्ठी  
अदया निस्सीला निचलोहिह्ला ॥९॥ एकइव्वभिलासा जुज्झिय मरिऊण अट्टज्ञाणेण । जाया तत्थेव करी सुवन्नरूलानईतीरे ॥१०॥  
भवियव्वयाइ मिलिया ते जुज्झित्ता मया उवज्जाए । जाया महिसा तत्थवि मिडिय मया मिडिया जाया ॥११॥ पुण जुज्झि-  
य तत्थ मया सरिसवला कुक्कुडा इहुप्पत्ता । पुवं व इयाणिपिहु न जिप्पिही कोऽवि केणावि ॥ १२ ॥ अह मेहरहो जंपइ न  
केवलं पुत्रवेरविवसमणा । जुज्झंतिगे वराया विज्जाहरधिट्ठियावि तहा ॥१३॥ घणरहनिवेण उन्नमिय एगभमुहेरिओ उ मेहरहो ।  
जंपइ भरहवियट्ठे सुवण्णनाभामिहे णयरे ॥१४॥ रायाऽऽसि गरुडवेगो तस्म सुया चंदसूरनामाणो । ते अन्नदिणे पत्ता मेरु-  
गिरिं वंदिउं देवे ॥१५॥ दट्ठुं सागरचंदं चारणसमणं नमेवि पुच्छंति । नियपुत्रभवे साह साहइ इय धायईसंडे ॥१६॥ एरवए  
चज्जपुरेऽभयघोसनिवस्स आसि दुन्नि सुया । विजओ य वेजयंतो तिन्निवि ते जइणधम्मरया ॥१७॥ कइयावि अभयघोसो

मेघरथकथा

॥४५५॥



छउमत्थमणंतजिणवरं सगिहे । भिक्षुखट्टा पविसंतं ददुं अम्भुट्टए तुट्टो ॥१८॥ काउ पयाहिणतियगं पडिलाभइ फासुएण अन्नेण ।  
उकोसा वसुहारा तत्थ सुरेहिं तओ मुक्का ॥१९॥ घुट्टं अहो सुदाणं दिव्वाणि अ आहयाणि तूराणि । चेलुक्खेवो उ कंओ पणव-  
णा कुसुमवुट्ठी य ॥२०॥ कयपारणो विहरिओ अन्नत्थ जिणेसरो कयाइ पुणो । उप्पन्नदिव्वनाणो तत्थेव पहू समोसरिओ ॥२१॥  
भत्तीइ अभयघोसो राया वंदिय जिणं सुणिय धम्मं । तणयजुयलेण सहिओ पहुपयमूलंमि पव्वइओ ॥ २२ ॥ अरिहंतमाइएहिं  
वीसहिं ठाणेहिं तित्थयरकम्मं । तिव्वतवचरणनिरओ रायरिसी अज्जए सम्मं ॥२३॥ ते तिन्रिवि सामन्नं कालगया पालिउं निर-  
इयारं । चावीससागराऊ अच्चुयकप्पे सुरा जाया ॥२४॥ अह चविय अभयघोसो पुव्वविदेहंमि जंयुदीवस्स । पुक्खलवईइ वि-  
जये नयरीए पुंडरिगिणीए ॥ २५ ॥ हेमंगयरन्नो वज्जमालिणीपिययमाइ संजाओ । चउदससुमिणसुखइयजिणपहवो घणरहो  
पुत्तो ॥२६॥ तस्स य जम्मभिसेयं सुमेरुसिहरंमि सुरवरा कासि । सो अज्जवि परिपालइ पुहविं पुहवीससयनमिओ ॥ २७ ॥ ते  
विजयवेजयंता चविउं खयरा तुमे इहं जाया । तो चंदसूरकुमरा इय पुव्वभवे निए सोउं ॥ २८ ॥ ते ताय ! पुव्वतायं ददुं तुम-  
मिहागया उ उज्जलिउं । एएसु कुक्कुडेसुं संकमियऽप्यं नियंतिं तथा ॥२९॥ इत्तो गंतुं नियपुरि पयमूले भोगवद्धणगुरुस्स ।  
निम्मियनिव्वणचरणा परमपयं पाविहिंति इमे ॥ ३० ॥ इय सोउ होउ पयडा पुव्वंपिव पुत्तमाणिणो दोऽवि । ते खयरा घणरह-  
जिणचरणे वंदिय गया सरणे ॥ ३१ ॥ इय सोउ कुक्कुडा ते दुवेऽवि संजायजाइसरणा उ । नियभासाए विन्नविय घणरहं गहि-  
सम्मत्ता ॥ ३२ ॥ अणसणविहिणा मरिऊण रयणापुढवीइ अहय सुमहिइठी । जायाउ तंवचूलो सुवन्नचूलित्ति भूयपहू ॥३३॥ ते  
पुव्वभवं-नाउं ओहीइ विउव्विउं वरविमाणं । मेहरहपासमुवगम्म सम्मं नमिआहु भत्तीए ॥३४॥ मणुया करिणो महिसा मेसा तह

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
घर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४५७॥

कुक्कुडा भविय मवे । तुह पायपसाएणं जाया इण्हि वरसुरेसा ॥ ३५ ॥ जइ तुह चरणे सरणं न लहंती सामि ! कुक्कुडभवे तो ।  
दणिय बहुकिमिकुलाइं कं कं कुगइं न गच्छंता ? ॥ ३६ ॥ ता पसिय विमाणमिणं आरुहिउं नियसु पहु ! जयाभोयं । मेहरहो कुणइ  
तहेव पुन्नकारुन्नजलजलही ॥ ३७ ॥ पवरविमाणारूढो भुवणाभोयं नियंतओ कुमरो । दुसए कणगगिरीसुं जिणभवणे वंदए विहिणा  
॥ ३८ ॥ जंबूरुक्खे सिवलितरुंमि सतरमहियं सयं वीसा । वावत्तरिकुंडेसुं वट्टवियड्डेसु चत्तारि ॥ ३९ ॥ चउरो गयदंतेसुं कुरूगु  
दो चउर जमलसेलेसुं । वक्खारेसु य सोलस दीहवियड्डेसु चउतीसा ॥ ४० ॥ सुरगिरिवणेसु सोलस इक्कं चूलाइ सोलस दहेसु ।  
चउदस महानईसुं अट्ट य दिग्गयवरगिरीसुं ॥ ४१ ॥ छक्कुलगिरीसु एवं छप्पणतीसे सए जिणहराइं । वंदइ जंबुदीवे तहुगुणे धा-  
यईसंडे ॥ ४२ ॥ पुक्खरवरदीवड्डे दुगुणेच्चिय माणुसुत्तरे चउरो । इसुयारगिरिसु चउरो चउ रुयगे कुंडले चउरो ॥ ४३ ॥ चउ  
अंजणायलेसुं सोलस दहिधवलदहिमुहनगेसु । वत्तीसरइकरेसुं इय नंदिसरे दुपचासं ॥ ४४ ॥ इय कयसामयजिणचेइवंदणं दिट्ठ-  
विट्ठवाभोयं । मेहरहं तो देवा आणेउं पुंडरगिणीए ॥ ४५ ॥ मुत्तुं नरिंदभवणे पुणो पुणो नमिय तस्स पयकमलं । काऊण रयण-  
वुट्ठि पत्ता हिट्ठा सए ठाणे ॥ ४६ ॥ अह लोयंतियसुरविसरबोहिओ घणरहो जिणवरिंदो । मेहरहदिन्नरज्जो वरिसं वियरियमहादाणो  
॥ ४७ ॥ गहियवओ उप्पाडियवरनाणो बोहए धरावलयं । मेहरहधरानाहोऽवि पालए तं पुण नएण ॥ ४८ ॥ अन्नदिणे मेहरहो  
पियाइ पुत्तेण बहुपरिगरेणं । संजुत्तो संपत्तो उज्जाणे देवरमणंमि ॥ ४९ ॥ पारद्धे पिच्छणए तप्पुरओ तंनिउत्तलोएहिं । इत्थंतरंमि भूया  
करिंति अइविग्घियकरं तं ॥ ५० ॥ जा ते नच्चिंति तहिं पवरविमाणं नहेण ता पत्तं । तत्थेगवरं पुरिसं वरजुवईसंजुयं ददंत्तुं ॥ ५१ ॥  
पियमित्ता भणइ निरं देव ! इमा का मणोहरा नारी ? । को व इमो वरपुरिसो ? केण व कज्जेण इह पत्तो ? ॥ ५२ ॥ अह जंपइ मेहरहो

मेघरथकथा

॥४५७॥

श्रीदे०  
वैत्य० श्री  
धर्म० सघा  
चारविधौ  
॥४५८॥

इह दीवे भारहंमि खिचंमि । मलयानामेण पुरी उत्तरसेठीइ वेपइहे ॥५३॥ विज्जुरहो तत्थ निवो माणसवेगा पिया य से  
ताण । सीहरहो नाम सुओ वेगवई तस्स ररभजा ॥५४॥ कइयावि भवविरत्तो पुत्तं रज्जे ठगित्तु सीहरह । गुरुपासे निकुख-  
मिओ रिज्जुरहो सिवपयं पत्तो ॥५५॥ विजाहरत्तवई कयाइ चित्तइ निसाइ सीहरहो । जंमो मह अरुयत्थो जह रत्ते मालईकुसुमं  
॥५६॥ ज न जिणो दिट्ठो मे कयाइ नय पूइओ विहरमाणो । तह तमुहकमलभगा अमयसमा देसणा न सुया ॥५७॥ तो गंतुं  
सकलत्तो धायइसडंमि वरविमाणगओ । अवरविदेहे रिजए सुवग्गुनामंमि खग्गपुरे ॥ ५८ ॥ नामेण अमियवाहणजिणं तहिं  
पणमिउं तह निसत्तो । धम्म सोउ तुट्ठो वंदिय सामिं पडिनियत्तो ॥५९॥ जा एइ इत्थ उवरिं ता खलियं तस्स तं वरविमाणं ।  
तो तेण नियतेणं हिट्ठा सहसत्ति दिट्ठोऽहं ॥६०॥ तो सो सव्ववलेणं कुट्ठो उप्पाडिउ ममं लग्गो । ता अकंतो वामो वामकरेणं  
मए सणिय ॥६१॥ तो विरसमागसंतो सिंहवरुत्तं गयंत्तं दइत्तु । सरण म पडियत्ता तन्भजा सपरिगाराणि ॥६२॥ करुणाइ मए  
मुक्को सो तुट्ठो काउ विविहरूवाणि । भूयाण सकलत्तो पिए ! इमो कुणइ पिच्छणयं ॥ ६३ ॥ इय सोउ विम्हइया पियमित्ता  
पुणवि पुच्छए राय । किमणेण कय मुकयं पुब्बि जेणेरिसी रिद्धी ॥ ६४ ॥ अह पभणइ मेहरहो भरहे पुक्खवरइत्तुपुव्वंमि ।  
संघपुरं कुलपुत्तो नामेण रज्जुगुत्तत्ति ॥ ६५ ॥ दुत्थो परकम्मकरो पइभत्ता तस्स संखिया माया । अन्नदिणे संवनगे फल  
हेउं ताइ पत्ताइ ॥६६॥ पिच्छति सव्वगुत्तं नाम मुणिं खयरपरिसभज्जत्तय । भत्तीइ तयं नमिउं तो तप्पुरओ निमब्बाइ ॥ ६७ ॥  
मुणिणावि तेमि धम्मो विसेसओ साहिओ वपहाणो । ज दुत्थिएसु गुरुयाण होइ वच्छल्लयं गुरुयं ॥६८॥ भत्तीइ पुणो  
नमिउ भवभयमीयाइ ताइं पुच्छति । अम्हारिसाण जोगो पाणाणवि अत्थि कोऽवि ततो ? ॥ ६९ ॥ वत्तीसइकल्लाणो नाम

मेघरथकथा

॥४५८॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४५९॥

तवो तेसि तेणमुवदिसिओ । ताई तयं पडिउजिय गयाइं गेहे गुरुं नमिउं ॥७०॥ तो ताईं पडिवाइं अट्टमभत्ताइं दुन्नि कुवंति ।  
वत्तीस चउत्थाइ पसन्नचित्ताइं तंमि भवे ॥ ७१ ॥ पारणयदिणे दुन्निवि निप्फन्ने भोयणंमि पइदियहं । चक्खुं खिवंति बाहिं जइ  
अतिही कोऽवि इह एइ ॥७२॥ तो तत्थागच्छंतं धिइधरनामं तवोहणं दइउं । पडिलाभयंति तुट्ठाइं भत्तपाणेहिं सुद्धेहिं ॥७३॥  
अह सब्बगुत्तसाहू पुणोऽवि पत्तो कयाइ तंमि पुरे । तप्पासे सुयधम्माइं ताईं दिक्खुं पवन्नाइं ॥७४॥ सो रज्जुगुत्तसाहू तवमंवि-  
ल्लयद्धमाणनामाणं । काउं अणसणविहिणा मरिउं वंभे सुरो जाओ ॥ ७५ ॥ दससागरोवमाइं दाणपभावेण भुत्तु भोगाइं । चविउं  
सो उप्पन्नो सीहरहो एम खयरपहू ॥७६॥ सा संखियावि ममणी कयतिव्वतवा मया गया वंभे । चविउं इमस्स जाया वेगवई  
नाम भज्जेसा ॥७७॥ एयाण देवि ! तेणं सुपत्तदाणेण सुरभवे रिद्धी । पुन्नाणुवंधिपुन्नप्पभावओ इहवि संजाया ॥ ७८ ॥ इत्तो  
इमाइं सपुरे गंतुं पुत्तं निवेसिउं रज्जे । दुन्निवि चिप्पंति वयं मम पिउजिणघणरहसमीवे ॥ ७९ ॥ तत्संजमजोगेहिं अणुत्तरेहिं  
खवित्तु कंममलं । उप्पन्नकेवल्लाइं दुन्निवि गमिहंति निव्वाणं ॥ ८० ॥ इय सोउं सीहरहो मेहरहं नमिय नियपुरे गंतुं । पुत्तं रज्जे  
ठविउं निक्खंतो तीइ सह सिद्धो ॥१॥-अह मेहरहो राया उज्जाणाओ गिहागओ कइया । पोसहिओ पोसहसालसंठिओ कहइ जिण-  
धम्मं ॥८२॥ अह गगणमंडलाओ भयसंभंतो पकंपिरो दीणो । पारेओ रडंतो पडिओ रायम्म उच्छंगे ॥८३॥ अभयं च जाय-  
माणं माणुमभासाइ तं खगं राया । करुणारसनीरनिही मा भाइ पुणो पुणो भणइ ॥८४॥ एअं वुत्तो रत्ता पसंतमुत्ती विहंगमो एसो ।  
पिउउच्छंगे वालुव्व निव्वभओ चिट्ठए जाव ॥८५॥ मम भक्खं मुंच इमं राय ! न जुत्तं इमं तु जंपंतो । तप्पट्ठीए सेणो पत्तो सप्प-  
स्स गरुडुव्व ॥८६॥ तो भणइ भूमिनाहो सेण ! इमं तुह कहं समप्पेभि ? । एम न खत्तियधम्मो सरणागयअप्पणं जमिह ॥८७॥

मेघरथकथा

॥४५९॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४६०॥

किंच न तुम्भवि जुत्तं जुत्ताजुत्तोवएसकुमलस्त । परपाणपहाणेणं मपाणपरिपोसणं एवं ॥८८॥ जह उक्खणिज्जमाणे पीडा पिच्छेऽवि  
होज्ज तुह गुरुई । अन्नस्सपवि किं न तथा ? मारिज्जंतस्म का वत्ता ? ॥८९॥ अन्नं च भक्खिखणं खणमित्ताऽणेण तुह भवे तिती ।  
एयस्स पुणो वच्चइ जंमो सयलोऽवि एमेव ॥ ९० ॥ पंचिदियघाएणं नरए जंतूहिं गंमए तम्हा । खगमित्तसुहनिमित्तं को जीवे  
हणइ छुहिओऽवि ? ॥९१॥ सा पुण छुहा निवत्तइ अवरणेवि भोयणेण जह पित्तं । पवरसियासमणिज्जंपि किं न पयसा उवसमेइ ?  
॥९२॥ न य उवसमंति केणवि जियवहपहवाउ नरयवियणाओ । ता मुंचसु जीववहं कुणसु दयं सयलसुहजणयं ॥९३॥ सेणोऽवि  
भणइ नरवर ! सरणं तुह एस आगओ भीओ ! किमहं करेमि सरणं कहसु महाभाग ! छुहगलिओ ? ॥९४॥ जह रक्खसि दुक्खत्तं  
एयं करुणाइ तह ममंपि न किं ? । अइदुक्खिअस्स पांणा नूणमिमे मज्झ वच्चंति ॥९५॥ धम्ममाधम्मविचिंनावि चिट्ठए सुट्ठिए  
परिंरंमि । तं नत्थि जं न कुणई वुभुक्खिओ कूरमवि कंमं ॥९६॥ तद्धम्मवत्तयाऽलं अप्पसु मह भक्खभूयमिणमइरा ।  
इम्मो जं इक्को रक्खिखज्जइ हंमए अवरो ? ॥९७॥ न य मज्झ हुज्ज तिती कहमवि मुज्जंतरेहिं जं सययं । सज्जो सयं हयं-  
रंतमंसासणो अहयं ॥ ९८ ॥ भणइ निवो जइ एवं ता तुह वियरेमि भो नियं मंसं । पारेवएण तुलियं होसु सुही मा तुमं  
मुत्तिपरे सेणे तुलाइ एगत्थ ठावइ कपोयं । अन्नत्थ खिवइ राया छित्तुं छित्तुं नियं मंसं ॥१००॥ जह जह खिवेइ  
ऊण नियतणुणो । तह तइ भारेण इमो वड्डइ पारेवओ अहियं ॥ १ ॥ भारेण वद्धमाणं तं पक्खिख पेक्खिखऊण  
इमेवारुहइ तहिं तुलाइ राया अतुलसत्तो ॥ २ ॥ तूलारूढं सहसा रायाणं ददट्टु परिदणो सयलो । हाहारवं कुणंतो  
लाए ॥ ३ ॥ सामंतमंतिपमुहा सव्वेऽवि भणंति भूवइं एवं । अम्हाण अभग्गेणं नाह ! किमेयं समारद्धं ? ॥ ४ ॥

श्रीदे०  
चैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥४६१॥

सिन्धेणिसिणा निखिला रक्सेयव्वा पयाउ खलु खोणी । तं कह खणेण सुन्नसि खखंतो पखिखणं रु इमं ? ॥ ५ ॥ किं च इमो  
लखिखजइ माणुमभाभापयंपिरो पक्खी । देवो व दाणवो वा कोइ धुवं तुम्ह पडिक्खलो ॥ ६ ॥ तो भणइ निरो भो भो दीणमुहो  
एस दीणवयणो य । अच्छउ जो वा सो वा रक्सेयव्वो मएज्वस्सं ॥७॥ इय निच्छयमवगच्छिय निवस्स एगो अमच्छरो अमरो ।  
वरमउडकुंडलवरो पयडीहोउं भणइ एवं ॥८॥ इकोचिय तं धन्नो सुपुरिस ! चूडामणी तिहुयणंमि । चालिज्जसि न सुरेहिवि सट्ठा-  
णाओ सुरगिरिच्च ॥९॥ इय ईसाणि सुरिंदे यन्निज्जंते तुमं निसुणिऊण । तुह सत्तपरिक्खत्थं इहागओ असहमाणोऽहं ॥१०॥ ता  
जुज्झंते ददुं वेराउ इमे रग्गे अहिट्टित्ता । तुह उवसग्गमकाहं तं सव्वं खमसु पसिऊणं ॥ ११ ॥ इय भणिय निरं सज्जं काउं  
नमिउं सुरो गओ सग्गं । सामंतमतिपमुहा निरमह पुच्छंति विम्हइया ॥१२॥ देव ! इमे पुव्वभवे विहंगमा केरिमा किमेसिं वा ।  
वेरनिमित्तं ? को वा देवोऽयं आसि पुव्वभवे ? ॥१३॥ राया जंपइ दीवे इह एखयंमि पउमिणीसंडे । नयरे सागरदत्तो महि-  
ट्टिओ आसि वरमिट्ठी ॥१४॥ तस्स य भज्जा नामेण विजयसेणा विमुद्दगुणकलिया । ताणं च दुन्नि पुत्ता धणो य पद्दमंदणो  
नाम ॥१५॥ ते अन्नदिणे जणयं पुच्छिय बहुपणियमत्थसंजुत्ता । देसंतरंमि चलिया ता पत्ता नागपुरयंमि ॥१६॥ तत्थ तहा  
पणयंतेहिं कुओपि तेहिं महारयणमेगं । पत्तं सुमहामुल्लं भक्खंपिअ मारमेण्हिं ॥१७॥ तस्स कए जुज्झंता संसनेए तडंमि ते रुट्ठा ।  
महिमाविय दुदंता कुट्ठा सहसा दहे पडिया ॥१८॥ मरिऊण समुप्पन्ना सेणो पारेअओ य ते विहगा । पुव्वभवेअमओ इत्थपि  
जुज्झंति एअमिमे ॥ १९॥ अन्नं च इत्थ दीवे पुव्वविदेहे नईइ सीयाए । तीरे रमणीयक्खे विजए खुभगापुरी अत्थि ॥ २० ॥  
तत्थासि थिमियसागरनामनरिंदो भयाउ एयाउ । अहमासि पंचमभवे पुत्तो अपराजिओ तस्म ॥२१॥ रामोऽहं तह भाया  
अणंतचिरिओ हरी तथा मज्झ । अम्हेहिं तहिं निहओ दमियारी नाम पडिविण्ह ॥ २२ ॥ सो भमिय भवं अट्ठावयस्स

मेपरथरूया

॥४६१॥

श्रीदे०  
चैत्य० श्री-  
धर्म० संघा-  
चारविधौ  
॥४६०॥

किंच न तुभवि जुचं जुत्ताजुत्तोवएसकुसलस्त । परपाणपहाणेणं सपाणपरिपोसणं एवं ॥८८॥ जह उक्खणिज्जमाणे पीडा पिच्छेऽवि  
होज्ज तुह गुरुई । अन्नस्मवि किं न तहा ? मारिजंतस्स का वत्ता ? ॥८९॥ अन्नं च भक्खिण्णं खणमिताऽणेण तुह भवे तिची ।  
एयस्स पुणो वच्चइ जंमो सयलोऽवि एमेव ॥ ९० ॥ पंचिदियघाएणं नरए जंतूहिं गंमए तम्हा । खणमित्तसुहनिमित्तं को जीवे  
हणइ छुहिओऽवि ? ॥९१॥ सा पुण छुहा निवत्तइ अवरणेवि भोयणेण जह पित्तं । पवरसियासमणिज्जंपि किं न पयसा उवसमेइ ?  
॥९२॥ न य उवसमंति केणवि जियवहपहवाउ नरयवियणाओ । ता मुंचसु जीववहं कुणसु दयं सयलसुहजणयं ॥९३॥ सेणोऽवि  
भणइ नरवर ! सरणं तुह एस आगओ भीओ । किमहं करेमि सरणं क्कहसु महाभाग ! छुहगलिओ ? ॥९४॥ जह रक्खसि दुक्खत्तं  
एयं करुणाइ तह ममंपि न किं ? । अइदुक्खिअस्स पाणा नूणमिमे मज्झ वचंति ॥९५॥ धम्ममाधम्मविचिंतावि चिट्ठए सुट्ठिए  
सरीरंमि । तं नत्थि जं न कुणई बुभुक्खिओ कूरमवि कंमं ॥९६॥ तद्धम्मवत्तयाऽलं अप्पसु मह भक्खभूयमिणमइरा ।  
को धम्मो जं इक्को रक्खिज्जइ हंमए अवरो ? ॥९७॥ न य मज्झ हुज्ज तिची क्कहमवि भुजंतरेहिं जं सययं । सज्जो सयं हयं-  
जियफुरंतमंसाखणो अहयं ॥ ९८ ॥ भणइ निवो जइ एवं ता तुह वियरेमि भो नियं मंसं । पारेवएण तुलियं होसु सुही मा तुमं  
मरसु ॥९९॥ आमत्तिपरे सेणे तुलाइ एगत्थ ठावइ कपोयं । अन्नत्थ खिवइ राया छित्तुं छित्तुं नियं मंसं ॥१००॥ जह जह खिवेइ  
मंसं राया उक्कत्तिऊण नियतणुणो । तह तइ भारेण इमो वडूइ पारेवओ अहियं ॥ १ ॥ भारेण वद्धमाणं तं पक्खि पेक्खिऊण  
अक्खुहिओ । सयमेवारुहइ तहिं तुलाइ राया अतुलसत्तो ॥ २ ॥ तूलारूढं सहसा रायाणं ददुठु परिदणो सयलो । हाहारवं कुणंतो  
आरूढो संसयतुलाए ॥ ३ ॥ सामंतमंतिपमुहा सव्वेऽवि भणंति भूवइ एवं । अम्हाण अभग्गेणं नाह ! किमेयं समारद्धं ? ॥ ४ ॥

श्रीदे०  
वैत्य०श्री-  
धर्म०संघा-  
चारविधौ  
॥४६१॥

खित्तेणिमिणा निखिला रक्खेयव्या पयाउ खलु खोणी । तं कह खणेण सुन्नसि रक्खंतो पक्खिणं गु इमं ? ॥ ५ ॥ किं च इमो  
लक्खिज्जइ माणुमभामापयंपिरो पक्खी । देवो व दाणो वा कोइ धुयं तुम्ह पडिक्खलो ॥ ६ ॥ तो भणइ निरो भो भो दीणमुहो  
एस दीणयणो य । अच्छउ जो वा सो वा रक्खेयव्वो मएऽवस्सं ॥७॥ इय निच्छयमग्गच्छिय निरस्स एगो अमच्छरो अमरो ।  
वरमउडडुंडलवरो पयडीहोउं भणइ एवं ॥८॥ इक्कोच्चिय तं धन्नो सुपुरिस ! चूडामणी तिहुयणंमि । चालिज्जसि न सुरेहिवि सट्ठा-  
णाओ सुरगिरिव्व ॥९॥ इय ईसाणि सुरिंदे वन्निज्जंते तुमं निसुणिऊण । तुह सत्तपरिक्खत्थं इहागओ असहमाणोऽहं ॥१०॥ ता  
जुज्झते ददु वेराउ इमे एगे अहिट्टित्ता । तुह उरसग्गमकाहं त सव्वं समसु पसिऊणं ॥ ११ ॥ इय भणिय निरं सज्जं काउं  
नमिउं सुरो गओ सग्गं । सामतमतिपमुहा निरमह पुच्छंति विम्हइया ॥१२॥ देव ! इमे पुव्वभवे विहंगमा केरिमा किमेसिं वा ।  
वेरनिमित्तं ? को वा देवोऽयं आसि पुव्वभवे ? ॥१३॥ राया जंपइ दीये इह एखयंमि पउमिणीसंडे । नयरे सागरदत्तो महि-  
ट्टिओ आसि वरसिट्ठी ॥१४॥ तस्स य भज्जा नामेण विजयसेणा त्रिभुद्धगुणकलिया । ताणं च दुत्ति पुत्ता धणो य पद्दमंदणो  
नाम ॥१५॥ ते अन्नदिणे जणयं पुच्छिय बहुपणियसत्थसंजुत्ता । देसंतरमि चलिया ता पत्ता नागपुरयंमि ॥१६॥ तत्थ तद्दा  
पणयंतेहि कुओवि तेहिं महारयणमेग । पत्तं सुमहामुल्लं भक्खंपिय सारमेण्हि ॥१७॥ तस्स कए जुज्झंता संसनईए तडंमि ते रुट्ठा ।  
महिसाविव दुहंता पुट्ठा सहसा दहे पडिया ॥१८॥ मरिऊण समुप्पन्ना सेणो पारेओ य ते विहगा । पुव्वभववेरवमओ इत्थयि  
जुज्झंति ण्वमिमे ॥ १९॥ अन्नं च इत्थ दीवे पुव्वविदेहे नईइ सीयाण् । तीरे रमणीयक्खे त्रिजण् सुभगापुरी अत्थि ॥ २० ॥  
तत्थासि धिमियसागरनामनरिंदो भवाउ एयाउ । अहमासि पंचमभवे पुत्तो अपराजिओ तस्म ॥२१॥ रामोऽहं तद्द भाया  
अणंतविरिओ हरी तथा मज्झ । अम्हेहिं तहिं निहओ दमियारी नाम पडिविण्ह ॥ २२ ॥ सो भमिय मयं अट्ठावयस्स

मेघरथरुथा

॥४६१॥



नियडंगि नियडिनइतीरे । सोमण्णहकुलवइणो सुख्वनामो सुरो जाओ ॥ २३ ॥ सो एस सुरो संपइ ईसाणिदेण मह पसंसाए ।  
 विहियाइ मच्छरेणं इहागओ मह परिकुखत्थं ॥ २४ ॥ इय निवकहियं सोउं ते विहगा मुच्चिया महीपडिया । लोएण कया सत्था  
 जाईसरणं समणुपत्ता ॥ २५ ॥ अह पभणंति सभासाए अम्हेहिं न केवलं तथा रयणं । लोभाओ जुज्झमाणेहिं नाह ! हरियं मणुस-  
 जंमं ॥ २६ ॥ इह जंमे नरयदुहं नियडंपि निसेहियं तए अम्ह । किं करणिज्जं अम्हेहिं नाह ! इण्हिं गगणगग ॥ २७ ॥ तेसिं देह सयं अणसणं इमेऽवि तयं । पडिवज्जिय मरिऊणं उववन्ना भवणवासीसु ॥ २८ ॥ रायाऽवि  
 मुइरं । मुमरंतो खगचरियं वच्चइ परमं च वेरगं ॥ २९ ॥ अह विहरंतो भयवं घणरहतिस्थं करो ।  
 मेहरहनियो सपरिवारो ॥ ३० ॥ वंदिथ पहुं नित्तन्नो धम्मं सोउं तओ गिहे गंतुं । रज्जमि मेहसेणं ट  
 पट्टपासे निकुखंतो संजमजीगेमु निचमुज्जुत्तो । इकार

समज्जेइ । सुयविहिणा कुणइ तवं च सीहनिकीलियं ।  
 तत्थ अणसणं मरिउं सव्वट्टमणुपत्तो ॥ ३४ ॥ तत्तो चविउं जाओ इह भरहे हत्थिणाउरे एसो । निवविस्तसेणअइरादेवीए संति-  
 नामसुओ ॥ ३५ ॥ पंचमचक्रहरपयं पालिय कालेण गठियमामण्णो । सोलसमधम्मचकी होऊण इमो सिवं पत्तो ॥ ३६ ॥ एवं मेघ-  
 रथक्षितीशतिलकः श्रीचैत्यसद्वंदने, प्रोद्यच्छन्नहर्मिद्रचक्रिपदवीमुच्चैर्जिनाधीशताम् । भुक्त्या प्राप सुधर्मकीर्तिसुभगग्रामाग्रणी-  
 स्तत्पदं, तद् भो भव्यजना ! जिनार्चनमिह प्रागल्भ्यमभ्यस्यताम् ॥ ३७ ॥ इति श्रीसंधस्य प्रतिदिनमवश्यं कृतिविधौ, सुधर्मानु-  
 ष्ठाने प्रकटमधिकारः प्रथमकः । सदाऽर्हचैत्यानां विहितविधिवद्वंदनपरः, श्रुतादाम्नायाच्च प्रकृतविवृतिः पारमगभत् ॥ ३८ ॥

इति श्रीदेवेन्द्रसूरिशिष्यश्रीधर्मकीर्तिद्वारिविरचितायां श्रीसंधाचारटीकायां चैत्यवंदनाविकारः प्रथमः समाप्तः

तीदे०  
 चैत्य०श्री-  
 धर्म०संधा-  
 चारविधौ  
 ॥४६२॥